# भगवती सूत्र

## सप्तम भाग

## शतक २५-४१

प्रकाशक

श्री अखिल भारतीय सुधर्म जैन
संस्कृति रक्षक संघ, जोधपुर
शाखा-नेहरू गेट बाहर, ब्यावर-305901
(01462) 251216, 257699, 250328

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

श्री अखिल भारतीय सुधर्म जैन संस्कृति रक्षक संघ साहित्य रत्न माला का ४६ वाँ रत्न

गणधर भगवान् सुधर्मस्वामि प्रणीत

# भगवती सूत्र

(व्याख्याप्रज्ञप्ति सूत्र)

## सप्तम भाग

(शतक १५ से ४१ तक सम्पूर्ण)

सम्पादक

पं. श्री घेवरचन्दजी बांठिया "वीरपुत्र"
(स्वर्गीय पंडित श्री वीरपुत्र जी महाराज)
न्याय व्याकरणतीर्थ, जैन सिद्धांत शास्त्री

प्रकाशक

श्री अखिल भारतीय सुधर्म जैन संस्कृति रक्षक संघ, जोधपुर
शाखा-नेहरू गेट बाहर, ब्यावर-305901
(01462) 251216, 257699 Fax No. 250328

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# द्रव्य सहायक

## उदारमना श्रीमान् सेठ जशवंतलाल भाई शाह, बम्बई

# प्राप्ति स्थान

१. श्री अ. भा. सुधर्म जैन संस्कृति रक्षक संघ, सिटी पुलिस, **जोधपुर** ☎ 2626145
२. शाखा-अ. भा. सुधर्म जैन संस्कृति रक्षक संघ, नेहरू गेट बाहर, **ब्यावर** ☎ 251216
३. महाराष्ट्र शाखा-माणके कंपाउंड, दूसरी मंजिल आंबेड़कर पुतले के बाजू में, **मनमाड़**
४. श्री जशवन्तभाई शाह एदुन बिल्डिंग पहली धोबी तलावलेन पो० बॉ० नं० 2217, **बम्बई-2**
५. श्रीमान् हस्तीमल जी किशनलालजी जैन प्रीतम हाऊ० कॉ० सोसा० ब्लॉक नं० १० स्टेट बैंक के सामने, **मालेगांव (नासिक)** ☎ 252097
६. श्री एच. आर. डोशी जी-३९ बस्ती नारनौल अजमेरी गेट, **दिल्ली-६** ☎ 23233521
७. श्री अशोकजी एस. छाजेड़, १२१ महावीर क्लॉथ मार्केट, **अहमदाबाद** ☎ 5461234
८. श्री सुधर्म सेवा समिति भगवान् महावीर मार्ग, **बुलडाणा**
९. श्री श्रुतज्ञान स्वाध्याय समिति सांगानेरी गेट, **भीलवाड़ा** ☎ 236108
१०. श्री सुधर्म जैन आराधना भवन २४ ग्रीन पार्क कॉलोनी साउथ तुकोगंज, **इन्दौर**
११. श्री विद्या प्रकाशन मन्दिर, ट्रांसपोर्ट नगर, **मेरठ** (उ. प्र.)
१२. श्री अमरचन्दजी छाजेड़, १०३ वाल टेक्स रोड़, **चैन्नई** ☎ 25357775
१३. श्री संतोषकुमार बोथरा वर्द्धमान स्वर्ण अलंकार ३९४, शांपिंग सेन्टर, **कोटा** ☎ 2360950

# सम्पूर्ण सेट मूल्य : ३००-००


**चतुर्थ आवृत्ति** — **वीर संवत् २५३२**
१००० — **विक्रम संवत् २०६३**
**अप्रेल २००६**

**मुद्रक** - स्वास्तिक प्रिन्टर्स प्रेम भवन हाथी भाटा, अजमेर ☎ 2423295



Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रथमावृत्ति पर-

# प्रस्तावना

भगवती सूत्र का यह सातवाँ—अंतिम—भाग, निर्ग्रंथ-प्रवचन-प्रिय भव्यात्माओं के समक्ष उपस्थित करते हुए हमें हर्ष हो रहा है। प्रथम भाग विक्रम संवत् २०२१ में प्रकाशित हुआ था और यह अन्तिम भाग अब प्रकाशित हो रहा है। इसके पूर्ण होने में आठ वर्ष लग गये।

इस संस्करण में मूलपाठ का अनुवाद है। विवेचन अधिकांश टीका के अनुसार हैं। कहीं-कहीं कुछ विशेष विचार भी हुआ है। पाठकों की सुगमता के लिये कठिन शब्दार्थ ही दिये गये हैं। वे भी अंतिम दो भागों में तो बहुत ही कम दिये गये हैं।

यह संस्करण एक सामान्य प्रकार का है। मैं चाहता था कि स्थान-स्थान पर विशेष टिप्पण दिये जायँ और प्रत्येक भाग की भूमिका, मुख्य विषयों का हार्द स्पष्ट करते हुए लिखी जाय। प्रथम भाग की प्रस्तावना में तो मैंने कुछ लिखा भी था, किंतु बाद में नहीं लिख सका। इस बार भी अवकाश कहाँ है, फिर भी कुछ खास बातों पर लिख रहा हूँ।

## जीव भोगी और अजीव भोग्य

एकान्तवादी कहते हैं कि जीव भोगी नहीं, जीव, अजीव को ग्रहण नहीं कर सकता भोग नहीं कर सकता। उनका ऐसा कथन असत्य है। भगवती सूत्र श. २५ उ. २ पृ. ३२०८ में स्पष्ट विधान है कि—'अजीव-द्रव्य, जीव-द्रव्य के परिभोग में आता है।' जीव-द्रव्य ही अजीव को शरीर इन्द्रियाँ एवं आहार आदि रूप से ग्रहण करता और परिभोग में लाता है। श. ७ उ. ७ भा. ३ पृ. ११७० में भी काम और भोग जीव के ही होना बतलाया है।

एकान्तवादी मत, जीव की विभिन्न स्थितियाँ नहीं मानता। इतना ही नहीं, वह जीव की प्रत्यक्ष दिखाई देने वाली और अनुभव में आने वाली दशा का लोप कर के एक अंश को ही पकड़े हुए है, जब कि जिनागमों में जीव की सभी स्थितियों का वर्णन है।

भगवती सूत्र श. १ उ. १ में दो प्रकार के जीव बतलाये हैं—संसार-समापन्नक और असंसार-समापन्नक (भा. १ पृ. ८४) असंसार-समापन्नक जीव सिद्ध भगवंत हैं। इनके

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

न तो शरीर है, न इन्द्रियाँ, न कर्म, न भोग और न परिभ्रमण । ये सादि-अपर्यवसित एक ही स्थिति में स्थिर, अचल, अडोल, अकम्प और अवस्थित रहते हैं ।

जो संसार-समापन्नक—संसार में परिभ्रमण करने वाले—जीव हैं, वे ही विविध भावों एवं परिणामों में परिवर्तित होते रहते हैं । इनके शरीर हैं, इन्द्रियाँ हैं, कर्म हैं और भोग है । अजीव से सम्बन्ध, वेदना, निर्जरादि इन्हीं के हैं और पाप-पुण्य, धर्म-अधर्म, संयम-तप आदि भी संसारी जीवों के ही है । इसीसे तो कहा है कि—"जीवों के आधार से अजीव हैं और जीव, कर्म-प्रतिष्ठित = कर्मों के आधार पर हैं, अजीव को जीव ने संग्रहित किया है और जीव को कर्मों ने संग्रहित किया है" ( श. १ उ. ६ भा. १ पृ. २७६ ) । संसारी जीवों का अजीव से सम्बन्ध होने के कारण ही उनमें कम्पन होता है (श. ३ उ. ३ भा. २ पृ. ६५६) ।

एकान्तवादी मत जो जीव का स्वरूप बतलाता है, वह 'असंसार-समापन्नक' जीवों का है । वे अजीव के सम्बन्धादि से रहित हैं। सिद्ध भगवंतों में मात्र उपयोग—ज्ञान-दर्शनोपयोग ही है । इसी को लक्ष्य कर एकान्तवादी कहा करते हैं कि—'आत्मा तो मात्र ज्ञाता-दृष्टा ही है, कर्त्ता-भोक्तादि नहीं । वह ज्ञान ही कर सकता है, कर्म नहीं ?' यह इनका एकान्तवाद है । परन्तु वे इस स्थिति पर भी स्थिर नहीं रहते । जब उनके सामने संसार-समापन्नक जीवों की स्थिति आती है, तो इसका कारण वे अज्ञान भाव—मिथ्या उपयोग बतलाते हैं । यहीं उनकी गाड़ी अटक जाती है । यदि वे अज्ञान को भी आत्मा का गुण मानते हैं, तो उनके सामने प्रश्न खड़ा होता है कि—

जब अज्ञान को भी आत्मा का गुण मानते हो, तो गुण को भी परिवर्तित मानना होगा, अन्यथा जो अज्ञानी है, वह सदैव अज्ञानी ही रहेगा । वह कभी ज्ञानी हो ही नहीं सकेगा । क्योंकि ज्ञान गुण तो जीव द्रव्य का ही है । द्रव्य में ही गुण है और गुण में पर्याय हैं (उत्तरा. २८—६) ।

यदि द्रव्य के गुण में परिवर्तन मानो, तो कर्म-परिणाम भी मानना ही पड़ेगा, जिसके उदय से अज्ञानी बना और क्षयोपशम से ज्ञानी हुआ । यदि कहा जाय कि ज्ञान-अज्ञान तो पर्याय है, गुण नहीं, तो प्रश्न होगा कि पर्याय आई कहाँ से ? गुणों में से ही पर्याय उत्पन्न हुई । गुण से पर्याय सर्वथा भिन्न नहीं हो सकती ।

द्रव्य में गुण दो प्रकार के होते हैं, एक द्रव्य-सापेक्ष और दूसरे संयोगजन्य । द्रव्य-सापेक्ष गुण, द्रव्य में सदा विद्यमान रहते हैं । ज्ञानादि गुण द्रव्य-सापेक्ष है । संयोगजन्य गुण अन्य द्रव्य के संयोग से होते हैं और संयोग सम्बन्ध रहने तक रहते हैं । ये संयोगजन्य गुण

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पुद्गल में परस्पर भी होते हैं तथा जीव और पुद्गल में भी। दोनों द्रव्य सक्रिय हैं। परमाणु से द्वयणुकादि स्कन्ध बनना पुद्गल का परस्पर संयोग है और जीव के साथ शरीर, इन्द्रियादि रूप से जुड़ना, जीव-द्रव्य और पुद्गल-द्रव्य का संयोग सम्बन्ध है। इस सम्बन्ध को भगवती सूत्र श. ८ उ. ६ में 'प्रयोग बन्ध' कहा है और उसके भेद-प्रभेद बतलाये हैं (भा. ३ पृ. १४७५) इसी से जीव को 'पुद्गली' भी कहा है (श. ८ उ. १० पृ. १५६६)।

आत्मा में ही पाप, धर्म, बुद्धि, मति, उत्थानादि, गति, कर्म, लेश्या, दृष्टि, दर्शन, मत्यादि ज्ञान-अज्ञान, औदारिकादि शरीर, योग और उपयोगादि सब आत्मा में ही होते हैं, आत्मा के अतिरिक्त अन्य अजीव-द्रव्य में नहीं होते (श. २० उ. ३ भा. ६ पृ. २८४१ तथा श. १८ उ. ४ पृ. २६९२)।

जीव अपनी आत्म-ऋद्धि, आत्म-कर्म एवं आत्म-प्रयोग से ही परभव में उत्पन्न होता है, पराई ऋद्धि से नहीं (श. २५ उ. ८ पृ. ३५४२)।

जब तक जीव का पुद्गल के साथ सम्बन्ध है, तब तक वह कामी-भोगी भी है ही। जीव स्वयं प्रेरक है, प्रयोग करने वाला है, गाहक है---संग्राहक है। यह प्रत्यक्ष में भी दिखाई दे रहा है। अजीव का भोग-परिभोग करते हुए भी अपने आपको सिद्ध के समान अशरीरी, अकर्मक, अभोगी आदि मानना असत्य है।

# रुचक प्रदेश

श. २५ उ. ४ पृ. ३३३३ में अस्तिकाय के आठ मध्य (रुचक) प्रदेशों का उल्लेख है। इनमें जीवास्तिकाय के आठ मध्य प्रदेशों का भी उल्लेख है। इनके विषय में एक मत-भेद चल रहा है। कहा जाता है कि---'ये रुचक प्रदेश कर्म-बन्धनों से सर्वथा रहित निर्मल एवं स्वच्छ हैं।' किन्तु यह बात आगम-विधान से प्रमाणित नहीं होती। इसी भगवती सूत्र के श. १ उ. ३ (भा. १ पृ. १६३) में कांक्षामोहनीय कर्म-बन्ध के स्वरूप निरूपण में प्रश्न है कि---

(१) 'कांक्षा-मोहनीय कर्म-दलिक---१ देश से देशकृत है २ देश से सर्वकृत है ३ सर्व से देशकृत है या ४ सर्व से सर्वकृत है?' भगवान् का उत्तर है कि---

"गौतम! न तो देश से देशकृत है, न देश से सर्वकृत है और न सर्व से देशकृत

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

है, किन्तु सर्व से सर्वकृत है।"

तात्पर्य यह कि समस्त कर्म-दलिक, समस्त आत्म-प्रदेशों से ग्रहण किये जाते (बँधते) हैं। ऐसा नहीं होता कि कर्मों का कुछ अंश, आत्मा के कुछ अंशों---प्रदेशों से किया (बाँधा) जाता है और शेष कर्म आत्मा के शेष प्रदेशों से नहीं किये जाते, या आत्मा के कुछ प्रदेशों से ही समस्त कर्म किये जाते हैं, या समस्त आत्म-प्रदेशों से कुछ ही कर्म बाँधे जाते हैं। नहीं, ऐसा नहीं होता। सभी कर्म, सभी आत्म-प्रदेशों से बाँधे जाते हैं। भगवान् का यह उत्तर स्पष्ट बता रहा है कि कर्म के समस्त स्कन्ध, आत्मा के समस्त प्रदेशों से कृत एवं बद्ध होते हैं। इनमें से एक भी प्रदेश वंचित नहीं रहता।

यदि कहा जाय कि—भगवती सूत्र श. ८ उ. ९ के प्रयोग बन्ध (भा. ३ पृ. १४७५) में जीव के आठ मध्य-प्रदेशों का प्रयोग-बन्ध अनादि-अपर्यवसित बताया है। इससे लगता है कि ये आठ आत्म-प्रदेश सदैव यथावत् ही रहते हैं। इनमें कोई परिवर्तन नहीं आता। शेष प्रदेश इधर-उधर आ-जा सकते हैं, तो यह कथन भी समीचीन नहीं है। यह अनादि अपर्यवसित बन्ध, आठ मध्य-प्रदेशों का पारस्परिक है। वहाँ स्पष्ट लिखा है कि---**"तत्थ णं तिण्हं तिण्हं अणाईए अपज्जवसिए सेसाणं साईए।"** अर्थात् इनमें से तीन-तीन प्रदेशों का बन्ध अनादि-अपर्यवसित है, शेष का सादि-सपर्यवसित। अनादि-अपर्यवसित बन्ध सदाकाल वैसा ही रहता है---किसी भी अवस्था में, चाहे संसारी जीव हो या सिद्ध परमात्मा हो। शेष आत्म-प्रदेश आगे-पीछे, ऊपर-नीचे होते रहते हैं। आठ रुचक प्रदेश केन्द्र स्थानीय हैं। इन आठ प्रदेशों में चार ऊपर हैं और चार नीचे। इनमें का प्रत्येक प्रदेश अन्य तीन-तीन प्रदेशों से बद्ध है। इनका सम्बन्ध ध्रुव है। किन्तु इसका अर्थ यह नहीं लगाना चाहिए कि इन आठ प्रदेशों पर कर्मों का बन्ध नहीं होता और ये पूर्णरूप से निर्मल रहते हैं। "सव्वेणं सव्वे कडे"---यह आप्त-वाक्य सभी आत्म-प्रदेशों को बद्ध बतला रहा है।

(२) उत्तराध्ययन सूत्र अ. ३३ गा. १८ में भी स्पष्ट लिखा है कि—

**"सव्वजीवाण कम्मं तु, संगहे छद्दिसागयं।**
**सव्वेसु वि पएसे सु सव्वं सव्वेण बद्धगं॥"**

सभी जीवों के कर्म, छहों दिशाओं से संग्रहित हैं और जीव के समस्त प्रदेश सभी प्रकार के कर्मों से बँधे हुए हैं।

(३) विशेष स्पष्टता के लिए भगवती सूत्र श. ८ उ. १० का निम्न विधान अवलोकनीय है। श्री गौतम स्वामी ने पूछा—"भगवन्! प्रत्येक जीव का प्रत्येक आत्म-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रदेश, ज्ञानावरणीय कर्म के कितने अविभाग पलिच्छेद से आवेष्टित-परिवेष्टित है--
**"एगमेगेणं भंते ! णेरइयस्स एगमेगे जीवपएसे णाणावरणिज्ज.....**भगवान् फरमाते हैं—

**"गोयमा ! णीयमं अणंतेहिं"**--नियम से--निश्चय ही अनन्त अविभाग-पलिच्छेद से आवेष्टित-परिवेष्टित हैं।

भगवान् का यह उत्तर इतना स्पष्ट है कि इससे विपरीत किसी की कोई बात टिक ही नहीं सकती।

(४) भगवती के इस अंतिम भाग श. २५ उ. ४ पृ. ३३३४ में गणधर महाराज ने पूछा--"भगवान् ! जीवास्तिकाय के आठ मध्य-प्रदेश आकाश के कितने प्रदेशों का अवगाहन करते हैं ?" भगवान् फरमाते हैं—"जघन्य एक, दो, तीन, चार, पाँच, छह और आठ प्रदेशों का अवगाहन करते हैं, परन्तु सात प्रदेशों का अवगाहन नहीं करते।"

यह विधान स्पष्ट बता रहा है कि जिन आठ मध्य-प्रदेशों को निर्बन्ध बताया जा रहा है, वे निर्बन्ध नहीं है। उनमें संकोच-विस्तार भी होता है। कभी वे एक ही आकाश प्रदेश पर टिक जाते हैं और कभी दो से लगा कर छः और आठ पर भी रह जाते हैं। यह संकोच-विस्तार ही उन्हें कर्मबद्ध बता रहा है। निगोद के सूक्ष्म शरीर में होने पर वे सुकड़ कर एक आकाश-प्रदेश पर भी रह जाते हैं और बादर शरीर अथवा केवली-समुद्घात के समय यावत् आठ प्रदेशों पर स्थित हो जाते हैं। संकोच-विस्तार कर्मबद्ध अवस्था में ही होता है, मुक्त अवस्था में नहीं।

यह भी तर्क दिया जाता है कि—'जीव के ज्ञान का अक्षर का अनन्तवाँ भाग खुला रहता है, वह अनन्तवाँ भाग इन आठ प्रदेशों का ही है।' परन्तु यह तर्क भी उचित नहीं लगता। अक्षर का अनन्तवाँ भाग जो सदैव खुला रहता है, वह समस्त आत्म-प्रदेशों का खुला रहता है, केवल आठ प्रदेशों का ही नहीं। नन्दी सूत्रकार ने इस विधान के आगे बादलों से छुपे हुए चन्द्र-सूर्य की प्रभा का जो उदाहरण दिया है (श्रुतज्ञानाधिकार सू. ३६) वह समस्त आत्म-प्रदेशों की अपेक्षा है। चन्द्र-सूर्य पर बादलों का काला आवरण छा जाने पर भी जो प्रभा निकलती है, वह समस्त चन्द्र-सूर्य से निकलती है, किसी एक अंश या मध्य के अंश से नहीं। इसी प्रकार अक्षर का अनन्तवाँ भाग जो खुला है, वह भी समस्त प्रदेशों का। इसीसे हमें शरीर के किसी भी प्रदेश पर कोई स्पर्श होता है, तो वहाँ के आत्म-प्रदेश से हमें ज्ञात हो जाता है। यदि अक्षर का अनन्तवाँ अनावरित भाग वहाँ नहीं होता, तो हमें मालूम

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ही नहीं हो सकता, पाँवों में लगे काँटे आदि का कष्ट नहीं हो सकता । अतएव आत्मा के आठ मध्य-प्रदेशों को अनावरित बताना उचित नहीं है ।

# निर्ग्रंथ-दर्शन

निर्ग्रंथों का विषय श. २५ उ. ६ में है । निर्ग्रंथों में कषाय-कुशील का चारित्र निर्दोष होता है । उनके चारित्र में किसी प्रकार का दोष नहीं होता (पृ. ३३६७) निर्ग्रंथ और स्नातक भगवंतों का चारित्र भी सर्वथा निर्दोष होता है । दोष लगता है—पुलाक, बकुश और प्रतिसेवना-कुशील निर्ग्रंथों के चारित्र में । इनके स्वरूप के विषय में कुछ भ्रम जैसा चल रहा है ।

पुलाकपन तो संयमी जीवन में अन्तर्मुहूर्त से अधिक नहीं रहता ( पृ. ३४२६ ) । जब तक रहता है, तब तक ही दोष लगता है । इसके बाद या तो वे शुद्ध हो कर कषाय-कुशील रूप उच्च श्रेणी में प्रविष्ट हो जाते हैं, या असंयमी बन जाते हैं(पृ. ३४१३)इनके विषय में व्याख्याकारों का मत है कि पुलाक-निर्ग्रंथ उस समय पुलाक-लब्धि को सक्रिय करते हैं, जब कि कोई प्रचण्ड धर्म-द्वेषी, जिनधर्म एवं संघ पर क्रूर बन कर भयंकर क्षति पहुँचाने को तत्पर हो और किसी प्रकार समझना एवं शान्त होना नहीं चाहता हो, तब उस उपद्रव से संघ की रक्षा करने के लिए वे इस शक्ति का उपयोग कर के उस क्रूर की शक्ति नष्ट करते हैं । पुलाक-लब्धि में इतनी शक्ति होती है कि वह शक्तिशाली महात्मा अपनी क्रुद्ध दृष्टि से लाखों मनुष्यों की सेना का भी निरोध कर सकते हैं । उनकी शक्ति के आगे शस्त्रबल व्यर्थ हो जाता है ।

पुलाक-लब्धि, निर्दोष साधना करने वाले कषाय-कुशील संयतों में से ही किसी विशिष्ट साधक को अनायास प्राप्त होती है(पृ. ३४१६) बकुश या प्रतिसेवना-कुशील को नहीं होती (पृ. ३४१५) । तात्पर्य यह कि निर्दोष चारित्र के सद्भाव में ही किसी को पुलाक-लब्धि उत्पन्न होती है। कठिन परिस्थिति में अन्य कोई मार्ग नहीं देख कर वे लब्धि का प्रयोग करते हैं, तब भी उनमें तीन शुभ लेश्या में से कोई लेश्या रहती है, अशुभ लेश्या नहीं रहती(पृ. ३४०२)और आहारादि संज्ञा के उपयोग युक्त भी नहीं होते(पृ. ३४१८) किन्तु उस समय उनका चारित्र हीनकोटि का हो जाता है (पृ. ३३१०)। उनका चारित्र दूषित होता है, बकुश और प्रतिसेवना-कुशील से भी हीन (पृ. ३३६५) । यदि वे सावधान हो कर अपने दोष की शुद्धि कर लें, तो पुनः कषाय-कुशील निर्ग्रंथ हो कर निर्दोष

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चारित्री हो सकते हैं। यदि उस पुलाक भाव से नहीं लौटे और आत्मा में कलुषितता बनी रहे, तो असंयम में आ गिरें। उनके लिये दो ही स्थान रहते हैं—विशुद्ध संयम या असंयम। संयमी रहेंगे, तो कषाय-कुशील—निर्दोष संयमी, अन्यथा असंयमी। बकुश नहीं, प्रतिसेवना-कुशील नहीं और संयमासंयमी भी नहीं।

× × × ×

बकुश-निर्ग्रंथ का चारित्र भी दूषित रहता है। वे प्राणातिपातादि मूल गुणों में तो दोष नहीं लगाते, किंतु उनके उत्तरगुणों में से किसी में दोष लगता है (पृ. ३३६६)।

बकुश का अर्थ है—चारित्र रूपी स्वच्छ चद्दर में दोष रूपी धब्बे लगाने वाला। प्रतिसेवना-कुशील मूलगुण और उत्तरगुण में दोष लगाने वाला।

पुलाक निर्ग्रंथ तो इस समय नहीं होते और न निर्ग्रंथ और स्नातक ही होते हैं। इस काल में बकुश, कषाय-कुशील और प्रतिसेवना-कुशील ही होते हैं। कषाय-कुशील निर्ग्रंथ का चारित्र तो निर्दोष ही होता है। वे मूलगुणों और उत्तर गुणों में किञ्चित् भी दोष नहीं लगाते। संज्वलन कषाय के उदय के कारण उन्हें 'कुशील' कहा गया है। यदि इनमें से कषाय-भाव निकल जाय, तो तत्काल यथाख्यात-चारित्री वीतराग एवं सर्वज्ञ-सर्वदर्शी बन जाय। वे महात्मा कषाय को नष्ट करने में प्रयत्नशील रहते हैं।

बकुश और प्रतिसेवना-कुशील के विषय में कुछ विशेष स्पष्ट करना प्रसंग एवं समयानुकूल लगता है। इस विषय में वर्तमान में कई प्रकार के विचार-भेद उत्पन्न हुए हैं।

कुछ विचारक सोचते हैं कि बकुश-निर्ग्रंथ शिथिलाचारी होते हैं। वे उत्तर गुणों में दोष लगाते रहते हैं और प्रतिसेवना-कुशील के तो मूलगुणों में भी क्षति होती है और उत्तर गुणों में भी। इन दोनों का संयम निर्दोष नहीं होता। ये जीवनभर सुखशीलिये रहते हैं, फिर भी इनमें संयम होता है। आगमों में इन्हें 'निर्ग्रंथ' माना है और ये छठे-सातवें गुणस्थान में रहते हैं। अतएव शिथिल आचार वाले साधुओं को भी निर्ग्रंथ ही मानना चाहिए।

उपरोक्त विचार ठीक नहीं लगता। शिथिलाचारी बना ही रहने वाला व्यक्ति निर्ग्रंथों की गणना में नहीं आ सकता। भगवती सूत्र में जिन्हें 'बकुश' और 'प्रतिसेवना-कुशील' कहा गया, वह अपेक्षा विशेष से है। जिस निर्ग्रंथ को किसी समय बकुश या प्रतिसेवनापन की प्राप्ति हुई और दोष का सेवन हुआ, वह कुछ देर बाद सम्भल कर पुनः कषाय-कुशीलपन में आ गया और साधना यथावत् करने लगा। किंतु उसने जो दोष सेवन किया,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उस दोष की शुद्धि नहीं की और आगे बढ़ गया। ज्ञानादि के उत्तरगुण में बकुश ने या मूलोत्तरगुण में प्रतिसेवी ने जो दोष लगाये, उनकी शुद्धि नहीं कर के यों ही छोड़ कर साधना करता रहा। जैसे किसी साधु ने पात्र को सुशोभित बनाया। बनाते समय उनकी भावना दूषित हुई और बनाने के बाद भी उनकी सुन्दरता से तुष्टि की भावना कुछ काल रही, लेकिन बाद में वह भावना हट गई और संयम में रमण करने लगे। इस प्रकार की स्थिति में ही निर्ग्रंथता सुरक्षित रह सकती है, अन्यथा नहीं। उन्हें बकुश इसलिये कहा कि उनमें उस अवस्था का दोष विद्यमान है। वे शुद्धि कर के निर्दोष नहीं हुए।

पाँव में काँटा लगा हो, उसकी हलकी-सी टीस हो, किन्तु उसकी उपेक्षा कर के चलते रहे। काँटा नहीं निकाला और यात्रा आगे बढ़ती रही। यही स्थिति बकुश और कुशील की है। यदि काँटा लगे, वहीं पथिक बैठ जाय और आगे नहीं बढ़े, तो उसका न तो आगे बढ़ना होता है और न वह 'पथिक' ही रहता है, फिर तो उसका स्थायी निवास वहाँ हो जाता है। इसी प्रकार यदि बकुश और कुशील, उस दूषित अवस्था के भावों में ही रमे रहें, तो वे 'निर्ग्रंथ' नहीं रह कर 'सग्रंथ' हो जाते हैं। उनकी स्थिति संयतासंयती अथवा असंयती की हो जाती है।

भगवती सूत्र बतलाता है कि बकुश और प्रतिसेवना कुशील की स्थिति वैसी नहीं है। वे दूषित भावों से ऊपर उठ कर साधना करते हैं और उनमें से कई आराधक भी होते हैं (पृ. ३३८३) उनमें से कोई विराधक हो, तो भी वे कम-से-कम प्रथम स्वर्ग में तो जाते ही हैं, अन्यथा बकुश और प्रति-सेवना कुशील उत्कृष्ट बारहवें स्वर्ग—अच्युत कल्प तक जा सकते हैं (पृ. ३३८२) यहाँ तक पहुँचने वाला बकुश और प्रतिसेवना कुशील को शिथिलाचारी एवं जीवन भर दोष सेवन करने वाला कैसे माना जा सकता है? जो संयम की विराधना करने वाला है, वह तो जघन्य भवनपति में और उत्कृष्ट सौधर्म स्वर्ग में जाता है (भ. श. १ उ. २ भा. १ पृ. १५३) ऐसी स्थिति में इन्हें विराधना करने वाला कैसे माना जाय?

बकुश और प्रतिसेवना कुशील छठे और सातवें गुणस्थान में होते हैं। जो साधु अप्रमत्त होता है, उसे शिथिलाचार में ही रत कैसे माना जाय?

बकुश और प्रतिसेवना कुशील केवल स्थविर-कल्प में ही नहीं होते, जिनकल्प में भी होते हैं (पृ. ३३६२) जिनकल्पी को शिथिलाचारी मानना तो किसी भी प्रकार उचित नहीं हो सकता।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इस प्रकार की स्थिति में जिनका जीवन शिथिलाचार या दुराचार पूर्ण बन गया है और जो उस दूषित जीवन में ही संतुष्ट रहते हैं, उत्सूत्रभाषी एवं स्वच्छन्द बन चुके हैं, वे तो निर्ग्रंथ के किसी भी भेद में नहीं आते, नहीं आ सकते । उन्हे पासत्थादि पाँच प्रकार के कुशीलियों में से किसी में गिनना चाहिए ।

शंका—भगवती सूत्र कुशीलियों को भी 'निर्ग्रंथ' मानता है, तब आप क्यों नहीं मानते ?

समाधान—कषाय-कुशील निर्ग्रंथ और पासत्थादि कुशील में महान् अन्तर है । निर्ग्रंथ तो केवल कषायोदय के कारण कुशील कहलाये, किन्तु ये तो चारित्र-हीन होते हैं । एक ही शब्द का अपेक्षा भेद से अर्थ भेद हो जाता है । भगवती सूत्र का कषाय-कुशील शुद्धाचारी महात्मा है । दीक्षित होने के समय से केवलज्ञान-केवलदर्शन प्राप्त होने के कुछ समय पूर्व तक (वर्षों तक) तीर्थंकर भगवंत भी कषाय-कुशील निर्ग्रंथ रहते हैं । कषाय-कुशील के गुणस्थान ६ से १० पर्यंत पाँच गुणस्थान हैं । उन महात्माओं का चारित्राचार तो शुद्ध है, किन्तु दबते या नष्ट होते हुए कषाय के उदय के कारण पूर्ण विशुद्ध—यथाख्यात नहीं हो सके । पुलाक, बकुश और प्रतिसेवना से अच्छे, उत्तम एवं प्रशंसनीय होते हुए भी यथाख्यात से हीन कोटि के हैं । कषाय के कारण ही वे 'कुशील' माने गये हैं, आचरण या पालन की अपेक्षा नहीं । परन्तु पासत्थादि कुशीलिये तो दुराचारी हैं (उत्तरा. १७–२०) और प्रतिसेवना-कुशील निर्ग्रंथ से भी अत्यंत हीन हैं । इन निर्ग्रंथों की, उन पापश्रमण कुशीलियों से बराबरी नहीं हो सकती । ये भगवती सूत्र श. १ उ. २ के विराधक की कोटि के हैं । यदि उनकी देवगति हो भी तो जघन्य भवनपति की हो ।

उपरोक्त कारणों से स्पष्ट है कि बकुश और प्रतिसेवना कुशील निर्ग्रंथों का संयमी-जीवन शिथिलाचार वाला नहीं होता । किसी समय लगे हुए दोष की शुद्धि नहीं कर के आगे बढ़ने के कारण वे बकुश और कुशील कहलाते हैं ।

× × × ×

निर्ग्रंथ का गुणस्थान ग्यारहवाँ और बारहवाँ होता है । ग्यारहवें गुणस्थानी महात्मा 'उपशांत-मोह वीतराग' होते हैं और बारहवें गुणस्थानी 'क्षीण-मोह वीतराग ।' क्षीण-मोह वीतराग तो स्नातक बन कर मुक्ति प्राप्त कर लेते हैं, किन्तु उपशांत-मोह वीतराग, अपने गुणस्थान की स्थिति पूरी होने पर गिरते हैं और पुनः कषाय-कुशील हो जाते हैं । यदि यहाँ भी नहीं सम्भले, तो संयमासंयमी या असंयमी तक हो सकते हैं । यदि उपशांत-मोह गुणस्थान में ही मृत्यु हो जाय, तो सर्वार्थ सिद्ध महाविमान में देव हो जाते हैं । एक समय

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

के उपशांत-मोह वीतराग भगवान् यदि मिथ्यात्व में चले जायें और उत्कृष्ट काल तक संसार परिभ्रमण करे, तो अर्ध पुद्गल-परावर्तन तक जन्म-मरण करने के बाद मुक्त होते हैं (पृ. ३४२७)।

# निर्ग्रंथ और संयत में लेश्या

निर्ग्रंथ और संयत में लेश्या कितनी होती है ? इस विषय में प्रथम भाग की प्रस्तावना में कुछ विचार किया गया है। विशेष में;—

भगवती सूत्र श. ८ उ. २ पृ. १३४७ में ९६ वां प्रश्न है—"कृष्ण-लेश्या वाले ज्ञानी हैं या अज्ञानी ?" उत्तर है—"यथा सइन्द्रिय।" सइन्द्रिय सूत्र है—पृ. १३३२ का ८६ वां। उसमें सइन्द्रिय में चार ज्ञान और तीन अज्ञान—भजना से बताये हैं। जब मनः-पर्यव ज्ञान में भी कृष्णलेश्या हो सकती है, तो निर्ग्रंथ संयत में भी छह लेश्या माननी चाहिये। *मनःपर्यवज्ञानी तो साधु ही है, क्योंकि मनःपर्यवज्ञान साधु को ही होता है, गृहस्थ को नहीं।*

(२) कषाय-कुशील निर्ग्रंथ में भी छह लेश्या होने का स्पष्ट उल्लेख पृ. ३४०३ में हुआ है, यहाँ तक कि—"**कण्हलेस्साए जाव सुक्कलेस्साए।**"

(३) सामायिक और छेदोपस्थापनीय संयत अधिकार पृ. ३४६६ के ४९ वें प्रश्न के उत्तर में भी उपरोक्त कषाय-कुशील निर्ग्रंथ के समान छह लेश्या होना बतलाया है।

यद्यपि साधुओं के प्रमत्त-संयत गुणस्थान में छहों लेश्याओं का सद्भाव माना है, तथापि मुख्यता तीन शुभ लेश्याओं की रहती है और सम्यक्त्व देशविरति और सर्वविरति की प्राप्ति भी शुभ लेश्याओं में ही होती है। प्राप्ति के बाद कभी अशुभ निमित्त से अशुभ लेश्या उत्पन्न होने की संभावना भी संयमी अवस्था में रहती है। तथा संभावना यह भी है कि जिस आत्मा ने मिथ्यात्व अवस्था में नरकायु का बंध कर लिया, उसे कालान्तर में सम्यक्त्व देशविरति और सर्वविरति भी प्राप्त हो सकती है। इतना होते हुए भी मृत्यु के समय उनमें अशुभ लेश्या आ ही जाती है और उसी अशुभ लेश्या में मृत्यु प्राप्त कर के वे नरक में उत्पन्न होते हैं। ऐसे साधुओं में कोई-कोई तो आहारक-लब्धि और मनःपर्यवज्ञानी भी होते हैं (भगवती श. २४ उ. १ भाग ६ पृ. ३०२६ प्रश्न ९२)।

जब तीर्थंकर नामकर्म के बन्धक जैसी उच्च आत्माओं में से भी कोई तीसरे नरक तक जा सकते हैं और उनमें श्रावक और साधु भी होते हैं, तथा नरक में जाते समय अशुभ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

लेश्या होती ही है, तब मानना चाहिए कि संयत अवस्था में कभी अशुभ लेश्या का आ जाना असंभव नहीं है। ऐसे प्रसंग किसी संयत के जीवन में आ भी सकते हैं कि किसी दुष्ट के द्वारा अत्यंत पीडित हो कर वे क्रुद्ध हो जायँ, इतने क्रुद्ध कि उस दुष्ट को भस्म ही कर दें। जैसे कि तपस्वी संत श्री सुमंगल अनगार ने गोशालक के जीव विमलवाहन को रथ, घोड़े और सारथि सहित तेजोलेश्या से भस्म करने का उल्लेख है (भ. श. १५ भा. ५ पृ. २४८६)

अतएव श्रमण अवस्था में कभी अशुभ लेश्या का आ जाना असम्भव नहीं है।

चतुर्थ कर्मग्रंथ के, मार्गणाओं के अल्प-बहुत्व अधिकार गा. ३७ में निरूपण है कि—यथाख्यात चारित्र, सूक्ष्म-सम्पराय चारित्र और केवलज्ञान-केवलदर्शन, इन चार मार्गणाओं में एक शुक्ल लेश्या है। शेष ४१ मार्गणाओं में छहों लेश्या हैं। वे ४१ मार्गणाएँ ये हैं;—

१ देवगति १ मनुष्यगति १ तिर्यंचगति १ पंचेन्द्रिय जाति १ त्रसकाय ३ योग ३ वेद ४ कषाय ४ ज्ञान ३ अज्ञान ३ चारित्र (सामायिक, छेदोपस्थापनीय और परिहार-विशुद्धि) १ देशविरति १ अविरति ३ दर्शन १ भव्यत्व १ अभव्यत्व ३ सम्यक्त्व (क्षायिक, क्षायोपशमिक और औपशमिक) १ सास्वादन १ मिश्र १ मिथ्यात्व १ संज्ञित्व १ आहारकत्व और १ अनाहारकत्व।

उपरोक्त ४१ मार्गणाओं में सामायिक और छेदोपस्थापनीय चारित्र भी है, जिसमें छहों लेश्या है। (परिहारविशुद्धि में भी छहों लेश्या बताई, यह आगम-विरुद्ध है। भगवती श. २५ उ. ७ पृ. ३४६६)।

# अप्रशस्त विनय

शतक २५ उ. ७ पृ. ३५१७ में 'मन-विनय' प्रशस्त के साथ अप्रशस्त भी बताया है। इसी प्रकार वचन और काय-विनय भी। अप्रशस्त मन-वचन को 'विनय' नामक 'आभ्यंतर तप' में गिना। इसका तात्पर्य है—'अप्रशस्त मन-वचन नहीं होने देना'—बचे रहना। कुछ लोग इसका अर्थ करते हैं कि अपवाद-मार्ग में पापकारी सावद्य आदि मन-वचन धारण करना भी 'विनय' नामक तप है। किंतु ऐसा मानना सत्य नहीं है। इस सूत्र में तो केवल नाम ही बताये हैं, स्वीकार या अस्वीकार करने का उल्लेख नहीं है। किन्तु उववाई सूत्र २० में स्पष्ट रूप से अप्रशस्त मन-विनय के १२ भेद बतलाने के बाद मूलपाठ में ही लिखा है कि—**"तहप्पगारं मणो णो धारेज्जा"**—इस प्रकार के मन को धारण

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नहीं करना। इस मूलपाठ से स्पष्ट हो गया कि भगवती के पाठ का भी यही अर्थ है। इसके अतिरिक्त व्यवहार सूत्र के भाष्य पीठिका गा. ७७ में भी लिखा है कि—

"माणसिओ पुण विणओ, दुविहो उ समासओ मुणीयव्वो।
अकुसलमणोनिरोहो, कुसलमणउदीरणं चेव ॥"

टीका—"मानसिकः पुनर्विनयः समासतः संक्षेपेण द्विविधो द्विप्रकारो मुणितव्यो ज्ञातव्यः, तदेव द्वैविध्यमुपदर्शयति, अकुशलस्य आर्त्तध्यानाद्युपगतस्य मनसो निरोधः अकुशलमनोनिरोधः, कुशलस्य धर्मध्यानाद्युत्थितस्य मनस उदीरणं।"

इससे भी अप्रशस्त मन का निरोध अर्थ ही प्रमाणित होता है।

यही बात अप्रशस्त वचन और काय-विनय के विषय में भी जाननी चाहिए।

(२) भगवती सूत्र के इस पाठ के समान स्थानांग सूत्र स्था. ७ में भी पाठ है और इनमें सात भेद ही किये हैं, किन्तु उववाइ सूत्र में विशेष भेद हैं। यथा—

१ सावद्यकारी २ सक्रिय ३ कर्कश ४ कटु ५ निष्ठुर ६ परुष (स्नेह रहित) ७ आस्रवकारी ८ छेद कर ९ भेदकर १० परितापकारी ११ उपद्रवकारी और १२ भूतोपघातक।

# लोकोपचार विनय

विनय का सातवाँ भेद 'लोकोपचार विनय' है। यह लोकोपचार विनय भी विवाद का कारण बन गया है। लोकोपचार का क्षेत्र विशाल है। गृहस्थ भी लोकोपचार का पालन करते हैं। किन्तु आभ्यंतर तप के भेद में यह भेद गृहस्थ-निरपेक्ष है। इसका सम्बन्ध संयतों के साथ है। इसके पूर्व के छह भेद तो प्रायः स्वतः से सम्बन्धित थे, परंतु यह सातवाँ भेद विशेषतः अन्य साधुओं से सम्बन्ध रखता है। इसलिए इसका नाम 'लोकोपचार विनय' दिया है। इसके अभ्यासवर्तिक आदि भेद ही अपना सम्बन्ध बता रहे हैं। अतएव लोकोपचार विनय का सम्बन्ध साधुओं का गृहस्थों के साथ जोड़ना अनुचित है। साधु द्वारा गृहस्थ की विनय तो प्रायश्चित्त का कारण है। एक सर्वविरत निर्दोष संयमी का असंयत अविरत गृहस्थ-वर्ग के साथ सम्बन्ध नहीं हो सकता। जनता की इच्छानुसार श्रमण चले—"परछंदाणुवत्तिय" यह कैसे हो सकता है? 'व्यवहार सूत्र के भाष्य की गाथा ८५

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

में स्पष्ट किया है कि—"लोगोवयार विणओ, इय एसो वण्णितो सपक्खम्मि ।"

टीका—"इति एव भवतेन प्रकारेण एष लोकोपचार विनयः स्वपक्षे सुविहित लक्षणे वर्णितः ।"

स्पष्ट हुआ कि लोकोपचार विनय, लौकिक मनुष्यों के साथ नहीं है ।

इस लोकोपचार-विनय का सातवां भेद है—'सर्वत्र अप्रतिलोमता ।' इसका अर्थ भी यों किया जाने लगा है कि 'समस्त जनता के अनुकूल रहना,' 'लोगों की अनुकूलता के अनुसार प्रवृत्ति करना ।' किंतु इस प्रकार का अर्थ भी असत्य है ।

व्यवहार सूत्र के भाष्य की पीठिका गाथा ८४ में 'सर्वत्र अप्रतिलोमता' का अर्थ बताते हुए लिखा है कि—

"समायारीपरूवणणिद्देसे चेव बहुविहे गुरुओ ।
एमेयत्ति तहत्तिय सव्वत्थणुलोमया एसा ॥ ८४ ॥"

टीका—"गुरोः समाचारी प्ररूपणे किमुक्तं भवति, इच्छामिच्छादि-रूपायां तस्यां समाचार्यां गुरुणा प्ररूप्यमाणायां एवमेतत् यथा भगवतो वदंति नान्यथेति प्रतिपत्तिस्तथा बहुविधे बहुप्रकारे निर्देशे तत्कर्त्तव्यता ज्ञापनलक्षणे गुरोर्गुरुणा क्रियमाणे या तथेति वचनतः कर्त्तव्यतया च प्रतिप्रति रेषा सर्वापि सर्वानुलोमता नाम विनय ।"

इच्छामिच्छाकारादि समाचारी सिद्धांतानुकूल प्ररूपणा गुरु आदि के निर्देशानुसार आज्ञा-पालक होना भगवदाज्ञा से अन्यथा वर्तन नहीं करना इत्यादि अनेक प्रकार से कर्त्तव्य का पालन करना, गुरु के अनुकूल वर्तना आदि सर्वानुलोमता = सर्वत्र अप्रतिलोमता है ।

तात्पर्य यही कि 'लोकोपचार विनय' और उसका भेद 'सर्वत्र अप्रतिलोमता' का सम्बन्ध भी गुर्वादि साधुओं से सम्बन्धित है और इसीसे यह वैयावृत्य तप के समान आभ्यन्तर तप हो सकता है। जो गृहस्थ, साधु का सहचारी नहीं, सांभोगिक नहीं और आभ्यन्तर भी नहीं, बाह्य है । उसके विनय को आभ्यन्तर तप में माना ही कैसे जा सकता है ?

# धर्मध्यान के भेद-प्रभेद

धर्म-साधना का सही स्वरूप जैन तत्त्वज्ञान में परिपूर्ण भरा है । किन्तु धार्मिकजनों में पूरी जानकारी नहीं हो, या अन्य भावना का असर हो, तो धर्म-भावना में भी विकृति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आ जाती है। समय का परिवर्तन और उदय-भाव की विचित्रता से कई तत्त्वज्ञ माने जाने वाले भी अधर्म को धर्म मान कर भ्रम फैलाते हैं। तत्त्वज्ञ लोग समझते हैं कि धर्म है, वह पाप के निरोध (आस्रव त्याग) रूप संवर और आत्म-शुद्धि रूप निर्जरा के पालन में है। धर्म-साधना का सम्बन्ध इन्हीं दो तत्त्वों से है, जिससे मोक्ष तत्त्व की प्राप्ति होती है।

भगवती सूत्र श. २५ उ. ७ पृ. ३५३० में धर्मध्यान और इसके लक्षण, अवलम्बन और अनुप्रेक्षा का विधान हुआ है। इस पर विचार करते स्पष्ट लगता है कि धर्म कितना उत्तम, पवित्र एवं विशुद्ध है, जिसकी साधना से आत्मा मुक्ति की ओर बढ़ती ही जाती है। जो धर्मसाधना करना चाहता है और धर्म का चिन्तन करने का इच्छुक है, उसे आज्ञा-विचय आदि चारों भदों, उसके लक्षण, अवलम्बन और अनुप्रेक्षा (चिन्तन—भावना) पर ध्यान देना चाहिए। यदि साधना में इनका पूरा उपयोग किया जाय, तो संवर और निर्जरा में उत्तरोत्तर वृद्धि होती जाती है। यह साधना आत्म-लक्षी है। वर्तमान युग में आत्म-लक्ष गौण और पर-लक्ष मुख्य हो गया है और यह पर-लक्ष भी द्रव्योपकारक है, भावोपकार (भाव-दया) नहीं। पर-लक्ष प्रायः बन्ध प्रधान है, भले ही वह शुभ बन्ध हो।

द्रव्य-परोपकार की भावना बन्ध-प्रधान—पुण्य-प्रधान है और आत्म-साधना के समस्त विधान एवं तत्त्व, विशुद्धियुक्त मोक्ष-प्रधान है। धर्मध्यान के प्रकार, लक्षण, रुचि और अनुप्रेक्षा इन सब में आत्म-संरक्षण और आत्म-शुद्धि के विधान ही दिखाई देते हैं। कहा है—"चरित्तेण णिगिण्हाइ, तवेण परिसुज्झइ" (उत्तरा. २८–३५) संवर और निर्जरा के सभी भेद-प्रभेद आत्म-साधना को ही प्रधानता देते हैं। इसके अतिरिक्त द्रव्य-परोपकार के जितने भी कार्य हैं, वे आत्म-धर्म की सीमा से परे हैं।

उत्तराध्ययन सूत्र अ. २९ में धर्मध्यान के अवलम्बन और अनुप्रेक्षा के प्रश्न नं. १९ से २३ तक का फल आत्म-शुद्धि ही बताया है। इनमें शुभबन्ध का उल्लेख ही नहीं है। इतना ही नहीं, इस २९ वें अध्ययन के साधना सम्बन्धी सभी प्रश्नों में से केवल चार प्रश्नों के उत्तर में ही निर्जरा के साथ शुभ बन्ध भी बतलाया है, शेष में बन्ध का विधान नहीं है। वे प्रश्न है, क्रमांक—४ गुरुसाधर्मी शुश्रूषा, १० वां वन्दना, २३ वां धर्म-कथा और ४३ वां वेयावृत्य सम्बन्धी है।

तात्पर्य यह कि धर्म की साधना तो आत्म-रक्षा और शुद्धि करते हुए मुक्ति प्राप्त करने की ही है। शेष सभी विचार, चिन्तन, प्रचार एवं प्रवृत्ति बन्ध-प्रधान है, भले ही उससे पुण्य-बन्ध विशेष मात्रा में होता हो।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

परोपकार में शुभ राग मुख्य रहता है। इसमें प्राणी-दया, पर दुःख-कातरतादि भाव होता है। विचार होता है कि ऐसे भावों का समावेश क्या धर्मध्यान के अन्तर्गत हो सकता है ?

जब हम धर्मध्यान के स्वरूप और भेदों को देखते हैं, तो ऐसा नहीं लगता। तब इस प्रकार के भावों का समावेश किसमें हो ? विचार होता है कि इस प्रकार की भावना का समावेश 'शुभ आर्त्त' में होना उपयुक्त है। आगम में जो आर्तध्यान का स्वरूप बतलाया है, वह अशुभ है और स्वार्थ-प्रधान है, साथ ही पाप-बन्धक है। किंतु परहितकारी विचारणा शुभ है और पुण्य प्रकृति की बन्धक है। भगवती सूत्र श. ७ उ. ६ में **"पाणाणुकंपयाए"** आदि का फल सातावेदनीय नामक पुण्य-प्रकृति का बन्ध माना है। शुभराग की प्रमुखता में पुण्य-बन्ध प्रमुख रहता है और विराग की मुख्यता में कर्म-निर्जरा की मुख्यता रहती है। धर्मध्यान में विराग की प्रबलता है, परोपकार की नहीं। यह अन्तर ध्यान देने योग्य है।

यह मेरा अपना विचार है। आगम-मर्मज्ञ इस पर विचार कर के योग्य निर्णय करें, वही सत्य होगा।

# संयम से बन्ध नहीं होता

सम्यक्त्व युक्त व्रत प्रत्याख्यान संयम एवं तप का फल पुण्य-बन्ध नहीं, संवर-निर्जरा ही है।

प्रश्न—धर्म-साधना से कर्म-बन्ध होता ही नहीं, ऐसा कैसे कहा जा सकता है ? जब कि श्रमण-निर्ग्रंथों को धर्म की साधना करते हुए भी बन्ध होता है। सतत सात कर्मों का बन्ध होता रहता है ?

उत्तर—बन्ध का कारण मुख्यतया कषाय है। श्रमण निर्ग्रंथों के भी संज्वलन कषायी चौक का उदय होता है। जब तक कषाय रहता है, तब तक साधना करते हुए भी बन्ध होता रहता है। साधना करते हुए कषाय के सद्भाव में जो बन्ध होता है, उसमें पुण्य-बन्ध की प्रचुरता रहती है। ज्यों-ज्यों साधना बढ़ती जाती है और गुणस्थान बढ़ते जाते हैं, त्यों-त्यों बन्ध की प्रकृतियाँ कम होती जाती हैं। बन्ध का मुख्य कारण है कषाय और सहकारी कारण है योग। संवर-निर्जरा की साधना से कर्म-बन्ध नहीं होता। इसी सूत्र श. ४१ उ. १

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पृ. ३७९१ उत्तर ९ में बताया है कि "**जीव आत्म-यश (संयम) से उत्पन्न नहीं होते, आत्म-अयश (असंयम) से उत्पन्न होते हैं।**" इसका तात्पर्य यही है कि संयम, बन्धोदय का कारण नहीं है। इसके अतिरिक्त भगवती सूत्र श. २ उ. ५ भा. १ पृ. ४८० में तुंगिया नगरी के श्रमणोपासकों के प्रश्न और स्थविर भगवंतों के उत्तर का उल्लेख है। श्रमणोपासकों ने पूछा;—

"**भगवन्! संयम और तप का क्या फल है?**"

"**आर्यो! संयम का फल अनास्रव और तप का फल व्यवदान (कर्मों का उन्मूलन) है?**"

**स्थविर भगवंतों के इस उत्तर पर से श्रमणोपासकों ने पुनः पूछा—**

"**भगवन्! यदि संयम का फल अनास्रव और तप का फल व्यवदान है, तो देवलोक में उत्पन्न होने का क्या कारण है? अर्थात् संयमी एवं तपस्वी संत, देवलोक में क्यों उत्पन्न होते हैं?**"

**स्थविर कालिकपुत्र ने उत्तर दिया—"पूर्वतप (सराग तप) के कारण देवलोक में उत्पन्न होते हैं?"**

**मेधिल स्थविर ने कहा—"पूर्वसंयम (सराग संयम) से देवलोक में उत्पत्ति होती है।"**

**आनन्दरक्षित स्थविर ने कहा—"कर्मोदय से देव में उत्पत्ति होती है?**

**काश्यप स्थविर ने कहा—ससंगता (द्रव्यादि से रागात्मक सम्बन्ध) के कारण देवलोक में उत्पन्न होते हैं।"**

स्थविर भगवंतों के उत्तरों का समर्थन भ. महावीर ने भी किया और कहा;—"मैं भी कहता हूँ कि पूर्व तप, पूर्व संयम, सकर्मिता और संगीपन के कारण देवलोक में उत्पत्ति होती है।" (पृ. ४९०)।

इसके अतिरिक्त श. ७ उ. ७ भा. ३ पृ. ११७६ में लिखा है कि—

"**भोगी जीव, भोगों का त्याग करता हुआ, महानिर्जरा और महापर्यवसान (कर्मों के महान् अन्त) को प्राप्त होता है।**"

प्रश्न—भगवती सूत्र श. ७ उ. ६ में स्पष्ट लिखा है कि—जीव प्राणातिपातादि पापकर्म करने से कर्कश-वेदनीय (दुःखद) कर्म बाँधते हैं और प्राणातिपातादि अठारह पाप

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

का त्याग करने से अकर्कश-वेदनीय (जो दुःखद नहीं — सुखद हो) कर्म बाँधता है (भाग ३ पृ. ११५३) इससे सिद्ध हो रहा है कि विरति = संयम से पुण्य-बन्ध होता है।

उत्तर—यह विधान अपेक्षापूर्वक हुआ है। ऐसा ही विधान श. ५ उ. ६ भा. २ पृ. ८३९ तथा ८४३ तथा श. ७ उ. १० पृ. १२२४ में भी हुआ है। प्रश्नकार ने कर्म-बन्ध की मुख्यता से प्रश्न पूछा है। प्रश्न है—दुःखदायक कर्म किस आचरण से बन्धता है और सुख-दायक कर्म बाँधने का क्या उपाय है? इसके उत्तर में उपरोक्त विधान है, सो यह भी पूर्व-तप पूर्व-संयमवत् ठीक ही है। क्योंकि सराग-दशा में राग के कारण कर्म-बन्ध होता रहता है।

पुण्य-प्रकृति तो प्रथम गुणस्थान में भी बन्धती है और चतुर्थादि गुणस्थानों में भी। फिर विरति एवं संयम और तप का महत्त्व ही क्या रहा? इसी सूत्र के आगे पृ. ११५६ में साता-वेदनीय कर्म-बन्धने का कारण—"**पाणाणुकंपयाए भूयाणुकंपयाए**..... आदि भी बतलाया है। प्राणानुकम्पा तो प्रथम गुणस्थान में भी हो सकती है और आगे, अविरत के भी और विरत के भी। फिर विरति का महत्त्व ही क्या? प्राणानुकम्पा में प्रशस्त राग और पर-दृष्टि मुख्य रहती है और विरति में विराग—निर्वेद मुख्य रहता है। इसीसे वीतरागता की ओर गति होती है।

भगवती सूत्र के उपरोक्त विधान 'बन्ध-सापेक्ष' हैं। प्रश्न भी बन्ध की अपेक्षा से ही पूछा गया है। जब तक कषायोदय रहता है, तब तक बन्ध (साम्परायिकी-क्रिया जन्य बन्ध) होता रहता है। निर्दोष-संयमी के भी बन्ध होता है। संयम निर्दोष हो, तो संवर-निर्जरा विशेष होती है, परन्तु कषायोदय के कारण बन्ध तो होता रहता है। इसीलिए निर्दोष संयमी को '**कषाय-कुशील**' कहा है (श. २५ उ. ६ पृ. ३३६७) और इनके ६, ७ या ८ कर्मों का बन्ध होता है (पृ. ३४०९)।

प्रश्न—कषाय ही नहीं, योग से भी बन्ध होता है। आप कषाय से ही बन्ध कैसे बताते हैं?

उत्तर—हाँ, बन्ध कषाय और योग—दोनों से होता है, किन्तु मुख्यता कषाय की है। योग तो कर्मवर्गणा को आकर्षित कर के आत्म-प्रदेशों से जोड़ते हैं और प्रकृति बन्ध तक रह जाते हैं। किंतु उनमें रस और स्थिति तो कषाय के अनुसार ही बन्धती है। अतएव योग महत्त्वपूर्ण नहीं है। अकषायी भगवान् के कषायोदय नहीं होता, केवल योग ही होता है—ग्यारहवें से तेरहवें गुणस्थान तक। उनके केवल स्पर्श मात्र—दो समय की स्थिति वाला ही बन्ध होता है। अतएव योग महत्त्वपूर्ण नहीं है। योग का काम राजा या उच्चा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

धिकारी के सेवक जैसा है, जो आज्ञा पा कर किसी को ला कर योग्य स्थान पर बिठा देता है। आज्ञा देने वाला अधिकारी है---स्वामी है और बुला कर लाने वाला सेवक है। तात्पर्य यह कि योग, कषाय का सेवक है और महत्त्वहीन है।

प्रश्न---क्रोधादि कषायें तो पाप रूप है। अठारह पाप में इनका स्थान महत्वपूर्ण है। इनसे पाप-प्रकृति का ही बन्ध हो सकता है, पुण्य का नहीं। पुण्य-प्रकृति का बन्ध धर्म-साधना से ही हो सकता है अतएव कषाय से पुण्य-प्रकृति का बन्ध बताना कैसे उचित हो सकता है ?

उत्तर---यदि आत्मा पाप परिणति (क्रोधादि भावना) युक्त है तो उसमें पाप-प्रकृति का बन्ध मुख्य होता है और परापकारादि पुण्य-भाव अथवा संवर-निर्जरादि धर्म परिणति युक्त है, तो तदनुसार उच्च पुण्य-प्रकृति का बन्ध होता है। किन्तु सत्ता में रहा हुआ और संयम-साधना के समय अव्यक्त उदय में रहा हुआ कषाय विवशता युक्त है। इसमें संयम की मुख्यता है, इसलिये बन्ध भी शुभ अधिक होता है।

कषाय पाप-प्रकृति में ही गिनी गई है, इसका कारण यह कि एक तो इनमें पाप की प्रधानता रही हुई है---बहुत अधिक। अनन्तानन्त प्राणी इसके प्रभाव से भव-भ्रमण कर के दुःख-परम्परा के चक्कर में पड़े हुए हैं, तथा अनन्तानन्त जीवों को पाप, प्रिय लगा हुआ है। दूसरी बात यह कि पाप-पुण्य भी बन्ध के बेटे हैं। मोक्षार्थियों के लिए तो बन्ध-मात्र हेय है। बन्ध का मूल है---राग और द्वेष। कहा है कि---

"रागो य दोसो वि य कम्मबीयं" (उत्तरा. ३२-७)।

राग और द्वेष में क्रोधादि चारों कषायें रही हुई है। राग में माया और लोभ तथा द्वेष में क्रोध और मान। कर्म-बन्ध इन्हीं से होता है।

उग्र-तीव्र कषाय पाप-बन्ध करवाती है और मन्द कषाय में पुण्य-बन्ध की प्रमुखता रहती है। जिस प्रकार तीव्र विष भी, शोधित हो कर मारकपन छोड़ कर रोग-शामक हो जाता है। तीव्रतम एवं अशोभनीय काला रंग, अन्य प्रयोग से हलका होता हुआ शोभनीय एवं आकर्षक बन जाता है, उसी प्रकार पाप-प्रकृति भी पुण्य-परिणति अथवा धर्म-भावना के योग से पापीपन छोड़ कर पुण्यमय बन जाती है। इसीलिये देव-गुरु-धर्म के प्रति होने वाले राग को 'शुभ राग' कहा है।

योग की क्रिया पच्चीस प्रकार की है। इनमें से २४ साम्परायिकी है और एक ईर्यापथिकी। ईर्यापथिकी तो मात्र योग से ही सम्बन्धित रहती है, परन्तु साम्परायिकी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

क्रियाएँ कषाय से अनुप्राणित है। इन सब में योग-प्रवृत्ति रहते हुए भी इन्हें "साम्परायिक" नाम दिया है। बन्ध के ये दो ही भेद किये हैं—ऐर्यापथिक और साम्परायिक (श. ८ उ. ८ भा. ३ पृ. १४३५) आठों कर्म इस साम्परायिक बन्ध के अंतर्गत हैं। प्रथम गुणस्थान से लगा कर नौवें गुणस्थान पर्यंत साम्परायिक कर्म-बन्ध होता है और दसवें गुणस्थान तक उदय रहता है। यह सिद्धांत है कि क्रोध-मान-माया और लोभ के उदय में साम्परायिक क्रिया ही लगती है (श. ७ उ. १ भा. ३ पृ. १०९३)। इन गुणस्थानों में जो भी बन्ध होता है, वह कषाय से अनुप्राणित रहता ही है। इसीसे तो संयम के साथ भी कषाय-राग का उल्लेख आगम में हुआ है। यथा—**"संयम दो प्रकार का—१ सराग संयम और २ वीतराग संयम। सराग-संयम भी दो प्रकार का—१ सूक्ष्म सम्पराय सराग-संयम और बादर-सम्पराय सराग-संयम"** (ठाणांग ठा. २–१) जो रागोदय युक्त संयम है, वह सूक्ष्म-सम्पराय संयम या बादर-सम्पराय संयम है। इस प्रकार संयम के साथ सरागता रहने से बन्ध होता है।

कषाय के सद्भाव में चारित्रात्माओं के भी पुण्य-प्रकृति बन्धती है और ज्यों-ज्यों चारित्र की विशुद्धि बढ़ती जाती है, त्यों-त्यों पुण्य-बंध भी रुकता जाता है। जैसे—

पुण्य-प्रकृतियाँ ४२ हैं, +इनमें से सप्तम गुणस्थानी मनुष्य के—मनुष्यत्रिक, आतप, उद्योत तथा औदारिक द्विक और प्रथम संहनन नहीं बंधता, आयु-बन्ध भी प्रारंभ नहीं होता। आहारक-द्विक बन्धती है, वह भी अपूर्वकरण गुणस्थान में रुक जाती है, साथ ही, देवगति, देवानुपूर्वी, पंचेन्द्रिय जाति, शुभ विहायोगति आदि अनेक पुण्य-प्रकृतियाँ रुक जाती है। इतना ही नहीं, तीर्थंकर नामकर्म की उत्तमोत्तम पुण्य-प्रकृति का बन्ध भी रुक जाता है। इससे स्पष्ट हो रहा है कि ज्यों-ज्यों कषाय कम होती जाती है, त्यों-त्यों पुण्य-प्रकृतियों का बन्ध भी रुक जाता है और कषायोदय रुका कि तज्जन्य सभी पुण्य-प्रकृतियाँ रुक जाती है। फिर वह चारित्र भी वीतराग चारित्र हो जाता है, जिसमें ऐर्यापथिकी का दो समय

---

+ नोकषाय-मोहनीय में स्त्री-वेद और नपुंसक-वेद भी है। मोहनीय की सभी प्रकृतियाँ पाप जन्य ही मानी है, किंतु इनमें भी तरतमता है। नपुंसक-वेद का बन्ध प्रथम गुणस्थान तक ही होता है और स्त्रीवेद का बन्ध दूसरे गुणस्थान तक। किंतु पुरुषवेद का बन्ध नौवें गुणस्थान के प्रथम विभाग तक होता है। मिथ्यात्व-मोहनीय का बन्ध और उदय प्रथम गुणस्थान तक है, किंतु सम्यक्त्व-मोहनीय का सातवें गुणस्थान तक। यद्यपि ये पाप-प्रकृतियाँ हैं, परन्तु अपेक्षा से इन्हें पुण्य-प्रकृति भी किन्हीं आचार्य ने मानी है—ऐसा मैंने किसी स्थल पर पढ़ा है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

का सातावेदनीय का बन्ध होता है।

औदारिकादि पाँचों शरीर का बन्ध पुण्य-प्रकृति है। इनमें से औदारिक और वैक्रिय शरीर बन्ध तो अविरत के भी होता है किन्तु आहारक-शरीर का बन्ध तो अप्रमत्त-संयती के ही होता है और इस बन्ध का कारण भगवती सूत्र श. ८ उ. ९ में लिखा है—"सवीर्यता, सद्रव्यता, कर्मोदय, योग, भाव, आयुष्य यावत् लब्धि से और आहारक शरीर प्रयोग नाम-कर्म के उदय से बन्ध होता है (भा. ३ पृ. १५१३)।

सातावेदनीय कर्म, प्राणियों पर अनुकम्पा करने आदि से बन्धता है (पृ. १५२१ तथा श. ७ उ. ६ पृ. ११५६) देवायु का बन्ध सराग-संयम, संयमासंयम, बाल तप और अकाम निर्जरा से होता है। (पृ. १५२३)।

प्रज्ञापना सूत्र पद २३ उ. २ में स्पष्ट विधान है कि सातावेदनीय कर्म यदि ऐर्यापथिक हो, तो दो समय की स्थिति का और साम्परायिक हो, तो जघन्य १२ मुहूर्त और उत्कृष्ट पन्द्रह कोटाकोटि सागरोपम का बन्धता है। यह साम्परायिक कर्म पुण्य-प्रकृति रूप है और 'सूक्ष्म-संपराय' नामक दसवें गुणस्थान में बन्धता है।

इन आगम प्रमाणों से सिद्ध है कि सरागता और सकर्मकतादि कारणों से पुण्य-प्रकृति का बन्ध होता है, संयम, व्रत, त्याग-तपादि से नहीं। संयम-तप तो कर्म-क्षय कर आत्म-शुद्धि के ही कारण है। कहा है कि—

"खवित्ता पुव्वकम्माइं संजमेण तवेण य" (उत्तरा. २८ दशवै. ३)

और सूत्रकृतांग श्रु. १ अ. ८ गा. १४ से संयम तप को **'अकर्मक वीर्य'** कहा है।

—जिससे कर्म का बन्ध नहीं हो। संवर तत्त्व कर्म-बन्ध रोकता है और निर्जरा कर्म काटती है। इन्हें बन्धनकारक नहीं माना जा सकता।

# जन्म नपुंसक की मुक्ति

आगमों में नपुंसक मनुष्य के सिद्ध होने का उल्लेख है। इसकी व्याख्या में टीकाकार कृत्रिम नपुंसक होना लिखते हैं। यही धारणा विशेष रूप से प्रचलित है। किन्तु ऐसा मानना उचित नहीं लगता। यह बात भगवती सूत्र के मूलपाठ से सिद्ध है।

भगवती सूत्र का २६ वाँ शतक 'बन्धी शतक' कहलाता है। इसमें जीव के कर्म-बन्ध के विषय में भूत, वर्तमान और भविष्यकाल की अपेक्षा विचार हुआ है। यह विचारणा निम्नलिखित चार भंगों से हुई है—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१ जीव ने पहले पाप-कर्म बाँधा था, अभी बाँधता है और आगे भी बाँधेगा।

२ बाँधा था, अभी भी बाँधता है, परंतु भविष्य में नहीं बाँधेगा।

३ बाँधा था, नहीं बाँधता है, किन्तु आगे बाँधेगा।

४ बाँधा था, अभी नहीं बाँधता है और आगे भी नहीं बाँधेगा।

उपरोक्त चार भंगों से जीव आदि ४७ भेदों से विचार किया गया है। ये भेद इस प्रकार हैं;--

समुच्चय जीव, सलेशी कृष्णादि छह लेश्या और अलेशी, इस प्रकार लेश्या के
१ ८
कृष्णपक्ष शुक्लपक्ष, दृष्टि, ज्ञानी और पाँच ज्ञान, अज्ञानी और तीन अज्ञान, आहारादि
२ ३ ६ ४
संज्ञोपयुक्त और नोसंज्ञोपयुक्त, सवेदक तीन वेद और अवेदक, सकषायी चार कषाय और
५ ५
अकषाय, सयोगी तीन योग और अयोग, साकार और अनाकार उपयोग।
६ ५ २

इन ४७ भेदों पर प्रथम उद्देशक में विचार हुआ है।

दूसरे उद्देशक में 'अनन्तरोपपन्नक' (तत्काल के--एक सूक्ष्म समय के अन्तर बिना ही उत्पन्न होने वाले) जीवों के विषय में निर्णय हुआ है। पृ. ३५७३ में प्रश्नोत्तर चौथा इस प्रकार है;--

प्रश्न--हे भगवन्! अनन्तरोपपन्नक सलेशी नैरयिक ने पाप-कर्म बाँधा था?

उत्तर--हे गौतम! पूर्ववत् तीसरा भंग जानो। इसी प्रकार यावत् अनाकारोपयुक्त पर्यन्त सर्वत्र तीसरा ही भंग है। मनुष्य से लगा कर वैमानिक तक भी इसी प्रकार है। मनुष्यों के विषय में सभी स्थानों पर तीसरा-चौथा भंग होता है। कृष्णपक्षी के लिए तीसरा भंग ही है। भिन्नता सभी स्थानों में पूर्ववत् है।

उपरोक्त निर्णय में मनुष्य के लिए सर्वत्र तीसरा और चौथा, ये दो भंग ही बतलाये हैं।

तीसरा भंग है--अनन्तरोपपन्नक मनुष्य ने आयु-कर्म का बन्ध किया था, अभी नहीं करता, किंतु आगे बन्ध करेगा।

चौथा भंग है--आयु का बन्ध पहले तो किया था, किन्तु अभी नहीं करता और भविष्य में भी नहीं करेगा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ये दोनों भंग अनन्तरोपपन्नक मनुष्य पर घटित होते है। अनन्तरोपपन्नक कोई भी जीव वर्तमान में आयु-बन्ध करता ही नहीं। तीसरे भंग वाला भविष्य में आयु का बंध करेगा, परन्तु चौथे भंग वाला नहीं करेगा। यह चौथे भंग वाला मनुष्य आयु का बन्ध नहीं करेगा, तो मर कर कहाँ उत्पन्न होगा? स्पष्ट है कि वह मर कर मुक्ति ही प्राप्त करेगा। जिसके आगामी भव का आयुष्य नहीं बंधा, वह मर कर सिद्ध भगवान् ही हो सकता है, यह निश्चित् तथ्य है। मनुष्य में यह अनन्तरोपपन्नक भंग कृष्णपक्षी छोड़ कर मनुष्य में पाये जाने वाले पैंतीस भेदों में तीसरा और चौथा भंग ही पाया जाता है।

समुच्चय मनुष्य में पूर्वोक्त ४७ बोल पाये जाते हैं। इनमें से अनन्तरोपपन्नक मनुष्य में एक तो कृष्ण-पाक्षिक और अनन्तरोपपन्नक में न घटित होने वाले अलेशी आदि ११ बोल छोड़ कर शेष ३५ में तीसरा और चौथा भंग घटित होता है। इनमें नपुंसकवेदी अनन्तरोपपन्नक मनुष्य भी सम्मिलित है। प्रथम उद्देशक में दिये मूल पाठ को इस दूसरे उद्देशक में संकुचित करते हुए मात्र इतना ही लिखा है कि--

**"मणुस्साणं सव्वत्थ तइय-चउत्था भंगा, णवरं कण्हपक्खिएसु तइओ भंगो, सव्वेसिं णाणत्ताइं ताइं चेव।"**

अर्थात्--मनुष्य में सर्वत्र तीसरा और चौथा भंग है, किंतु कृष्णपाक्षिक में तीसरा भंग है और भिन्नता तो सभी में पूर्ववत् है।

उपरोक्त मूलपाठ में स्पष्ट बताया है कि ऊपर बताये ४७ भेदों में से कृष्ण-पाक्षिक को छोड़ कर शेष सभी में, भिन्नतापूर्वक तीसरा और चौथा--ये दो भंग पाया जाता है। इन ४७ भेदों में ३३ वाँ भेद नपुंसकवेद का है। इसमें भी तीसरा और चौथा--ये दो भेद हैं। चौथा भेद है--

"अनन्तरोपपन्नक नपुंसकवेदी मनुष्य ने भूतकाल में आयुष्य का बन्ध किया था, किंतु वर्तमान में नहीं कर रहा है और भविष्य में भी नहीं करेगा।" इसका मूलपाठ इस प्रकार हो सकता है--

**"णपुंसएणं भंते! अणंतरोववण्णए मणुस्से आउयं कम्मं किं बंधी--पुच्छा। गोयमा! अत्थेगइए बंधी, ण बंधइ, बंधिस्सइ। अत्थेगइए बंधी ण बंधइ ण बंधिस्सइ।"**

भगवती का यह विधान-तत्काल उत्पन्न हुए नपुंसकवेदी मनुष्य में चौथा भंग भी स्वीकार करता है और तत्काल उत्पन्न नपुंसक-वेदी मनुष्य तो नपुंसक-वेद के साथ ही

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उत्पन्न होता है। वह कृत्रिम हो ही नहीं सकता। अतएव सिद्ध है कि जन्म-नपुंसक भी सिद्ध हो सकता है यह भगवती सूत्र का अभिप्राय है।

**शंका**--स्थानांग सूत्र ३-४ तथा बृहत्कल्प सूत्र के चौथे उद्देशक में नपुंसक को दीक्षा देने का निषेध किया है। जब नपुंसक दीक्षित ही नहीं हो सकता, तो मुक्ति कैसे प्राप्त कर सकता है ?

**समाधान**--उपरोक्त निषेध अनतिशय ज्ञानियों के लिये है, किन्तु जो अतिशय ज्ञानी है, वे प्रव्रजित कर सकते हैं। जैसे कि भिक्षु-प्रतिमा लगभग ३० वर्ष की दीक्षा पर्याय वाले और पूर्वधर आदि विशेषता वाले साधु ही स्वीकार कर सकते हैं। किन्तु भगवान् अरिष्टनेमिजी ने श्री गजसुकुमाल मुनि को दीक्षित होते ही भिक्षु की महाप्रतिमा की आराधना करने की अनुमति दे दी। इसी प्रकार नपुंसकवेदी को अतिशयज्ञानी दीक्षा दे सकते हैं और मुक्ति भी प्राप्त कर सकते हैं। इसमें किसी प्रकार की बाधा नहीं है।

टीकाकार ने नपुंसक लिंग के विधान का अर्थ 'कृत्रिम नपुंसक' किया, यह भगवती सूत्र के इस विधान से बाधित होता है। अनन्तरोपपन्नक नपुंसकवेदी तो जन्म-नपुंसक ही होता है, कृत्रिम नहीं और आगमों के मूलपाठों में तो कहीं कृत्रिम-अकृत्रिम का उल्लेख ही नहीं है। कृत्रिम-नपुंसक ही मानने पर यह आगम-विधान खण्डित होता है, जो नहीं होना चाहिये।

वेद का उदय भी विचित्र प्रकार का होता है। कई तीव्रतर वेदोदय वाले होते हैं, तो कई मन्दतम। वैमानिक देवों में प्रथम-द्वितीय स्वर्ग की अपेक्षा तृतीय-चतुर्थ स्वर्ग में कम उदय। यों ऊपर-ऊपर के देवलोकों में क्रमशः कम होते-होते अनुत्तर विमानों में तो अत्यंत मंद होता है। यही बात मनुष्यों में भी है। कई पुरुष और स्त्रियाँ तीव्र वेदोदय वाले भी होते हैं और मन्द उदय वाले भी। प्रथम गुणस्थान स्थित गृहस्थ भी कोई मंद उदय वाले मिल सकते हैं और कई चतुर्थ गुणस्थानी भी तीव्र वेदोदयी होते हैं। जिनका वेदोदय मंद हो, वे क्रमशः देशविरत, सर्वविरत एवं अप्रमत्तादि होते हुए कोई अवेदी भी हो सकते हैं। यह स्थिति तीनों वेदों में होती है। फिर पुरुष और स्त्री-वेदी को तो अवेदी होना मानना और नपुंसकवेदी को नहीं मानना यह कैसे उचित हो सकता है ? और ऐसा मानना तो अनुचित ही होगा कि नपुंसकवेदी मन्दोदयी एवं अनुदयी हो ही नहीं सकता।

**शंका**--निर्ग्रंथों के प्रकरण में पुलाक-निर्ग्रंथ को 'पुरुष-नपुंसकवेदी' बताया। इसका अर्थ ही यह है कि वह कृत्रिम-नपुंसक है, अन्यथा केवल 'नपुंसकवेदी' ही लिखा होता ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

**समाधान**—नपुंसकवेदी दो प्रकार के होते हैं—१ स्त्री-नपुंसक और २ पुरुष-नपुंसक। 'पंच संग्रह' ग्रन्थ के प्रथम द्वार गाथा २४ और इसकी टीका से भी स्पष्ट है कि असन्नी पंचेंद्रिय (जो वेद की दृष्टि से केवल नपुंसकवेदी ही होते हैं) भी पुरुष-लिंगी और स्त्री-लिंगी होते हैं। इस गाथा के मूलपाठ में लिखा है कि —"**चउ-चउ पुमित्थिवेए, सव्वाणि नपुंससंपराएसु।**"

अर्थात् जीव के १४ भेदों में से पुरुष और स्त्री-वेद असंज्ञी और संज्ञी अपर्याप्त और पर्याप्त पंचेंद्रिय—इन चारों में होता है और नपुंसकवेद तो सभी में होता है।

भगवती के विधान का तात्पर्य इतना ही है कि पुलाक-निर्ग्रंथ न तो स्त्रीवेदी होते हैं और न स्त्री-नपुंसकवेदी। इसमें कृत्रिम-अकृत्रिम का भेद करने की आवश्यकता नहीं रहती। यहाँ यही समझना चाहिये कि पुलाक-निर्ग्रंथ, पुरुषवेदयुक्त पुरुषलिंगी अथवा नपुंसकवेदयुक्त पुरुषलिंगी होते हैं। पुलाक-निर्ग्रंथ के अतिरिक्त बकुश, प्रतिसेवना-कुशील और कषाय-कुशील निर्ग्रंथ तथा सामायिक संयत और छेदोपस्थापनीय संयत तथा नपुंसक-लिंग-सिद्ध जन्म-नपुंसक भी हो सकते हैं। यदि ऐसा नहीं माने, तो बताना चाहिये कि अनन्तरोपपन्नक नपुंसकवेदी मनुष्य के चतुर्थ भंग—"**बंधी, ण बंधइ, ण बंधिस्सइ**" की संगति किस प्रकार करेंगे ?? सूत्रकार स्वयं अपने शब्दों में अनन्तरोपपन्नक नपुंसकवेदी मनुष्य के लिये—"**मणुस्साणं सव्वत्थ तइय-चउत्था भंगा**" स्पष्ट रूप से बतला रहे हैं। इसकी संगति वे ४७ भेदों में से ३३ वें भेद में आयु-बन्ध के साथ चतुर्थ भंग के साथ किस प्रकार करेंगे ?? निश्चय ही यहाँ उन्हें यह स्वीकार करना पड़ेगा कि चतुर्थ भेद का पात्र अनन्तरोपपन्नक नपुंसकवेदी मनुष्य, जन्म-नपुंसक ही है और वह एकमात्र सिद्धगति ही प्राप्त करेगा।

# सम्यक्त्व में आयु-बन्ध

सम्यक्त्व प्राप्त होने के पूर्व ही आयु का बन्ध हो जाय, तो वह सम्यक्त्वी आत्मा अपने बन्ध के अनुसार नरकादि चार गतियों में से किसी भी गति में जा सकती है। किंतु सम्यक्त्व प्राप्त होने के पश्चात् आयुष्य का बन्ध हो, तो मनुष्य और तिर्यंच तो देव गति का आयुष्य ही बाँध सकते हैं और वह भी भवनपति, व्यंतर और ज्योतिषी का नहीं, किंतु एकमात्र वैमानिक देव के आयु का ही बन्ध कर सकते हैं, अन्य नहीं। और नारक तथा देव, एकमात्र मनुष्य आयु का ही बंध कर सकते हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवती सूत्र शतक ३० में 'समवसरण' की प्ररूपणा है। क्रियावादी आदि चार प्रकार के समवसरण की अपेक्षा प्रश्नोत्तर है। यों तो चारों वादी मिथ्यादृष्टि के रूप में प्रसिद्ध हैं, किन्तु इस स्थान पर क्रियावादी को मुख्य रूप से सम्यग्दृष्टि आदि मान कर प्ररूपणा की गई है। अलेशी—लेश्या-रहित अयोगी-केवली और सिद्धों को भी क्रियावादी (पृ. ३६०६ उत्तर ४) और सम्यग्दृष्टि के लिये—"**सम्मदिट्ठी जहा अलेस्सा, मिच्छादिट्ठी जहा कण्हपक्खिया**" (पृ. ३६१० उत्तर ५) बताया है। इसके आगे उत्तर ६ में ज्ञानी यावत् केवलज्ञानी, अवेदक, अकषायी और अयोगी को भी अलेशी के समान क्रियावादी लिखा है। इससे स्पष्ट हो जाता है कि सम्यग्दृष्टि का क्रियावादी मान कर ही विचार किया गया है। आचारांग सूत्र श्रु. १ अ. १ उ. १ सूत्र ७ में भी ऐसा ही निरूपण हुआ है। इसका आशय यही है कि जो व्यक्ति और जो विचारधारा, आत्मा को कर्म का कर्त्ता-भोक्ता और आत्म-शुद्धि के योग्य ज्ञान-दर्शनादि क्रिया में श्रद्धा करे, वह क्रियावादी है। अतएव इस प्रकरण में क्रियावादी सम्बन्धी विधान सम्यग्दृष्टि विषयक समझ कर विचार किया जा रहा है।

(१) समुच्चय जीव सम्बंधी प्रश्न के उत्तर (पृ. ३६१६ उत्तर १०) में बताया है कि—"क्रियावादी जीव, नैरयिक और तिर्यंच आयु का बन्ध नहीं करते, मनुष्यायु और देवायु का ही बन्ध करते हैं। यह ठीक है। क्योंकि नारक जीव, न तो पुनः नरकायु बांध सकते हैं और न देवायु का ही बन्ध कर सकते हैं। वे मनुष्यायु और तिर्यंच आयु का ही बंध करते हैं। इसी प्रकार देव भी नरक और देवायु का बन्ध नहीं करते। इनके लिए मनुष्य और तिर्यंच आयु का बन्ध ही शेष रहता है। जो क्रियावादी नारक और देव हैं, वे तिर्यंचायु का बन्ध नहीं कर के एक मनुष्यायु का ही बन्ध करते हैं। इसलिये मनुष्यायु का विधान, देव और नारक जीवों की अपेक्षा हुआ है (पृ. ३६२३ उ. २३-२५ और पृ. ३६३१ का अंतिम उत्तर) और देवायु का विधान मनुष्य और तिर्यंच की अपेक्षा से हुआ है।

इसके आगे ग्यारहवें प्रश्न के उत्तर में बताया है कि देवायु भी भवनपति का नहीं, व्यंतर का नहीं और ज्योतिषी देवों का भी नहीं, एकमात्र वैमानिक देव का आयुष्य ही बांधते हैं।

(२) कृष्ण, नील और कापोत लेश्या वाले नैरयिक जीवों सम्बन्धी १४ वें प्रश्न के उत्तर (पृ. ३६१७) में स्पष्ट लिखा है कि वे देव, नारक और तिर्यंच आयु का बन्ध नहीं कर के मात्र मनुष्यायु का ही बंध करते हैं। नारकों में ये तीन लेश्या ही है।

समुच्चय तेजोलेशी क्रियावादी जीवों के लिये मनुष्य और देवायु का बन्ध (पृष्ठ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

३६१८ उ. १५) है। वह देवों और मनुष्य-तिर्यंच की अपेक्षा है। देव, मनुष्यायु और मनुष्य तथा तिर्यंच देवायु का बन्ध करते हैं--वैमानिक देवायु का। यही बात पद्म और शुक्ल लेश्या के विषय में भी समझनी चाहिए (उ. १६)।

(३) तिर्यंच पंचेंद्रिय क्रियावादी के विषय में पृ. ३६२६ उ. २८ में लिखा है कि- **"जहा मणपज्जवणाणी"**--मनःपर्यय ज्ञानी के समान, और मनःपर्यवज्ञानी तो मात्र वैमानिक देव का ही आयु बाँधते हैं (पृ. ३६२१ उ. २१-२२) यही विधान मनुष्य के लिए भी है--**"जहा पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं वत्तव्वया भणिया एवं मणुस्साण वि भाणियव्वा"** (पृ. ३६२७ उ. २९)। अतएव निश्चित हो गया कि सम्यग्दृष्टि मनुष्य और तिर्यंच एकमात्र वैमानिक देव का ही आयुष्य बाँधते हैं, दूसरा नहीं।

प्रश्न--वैमानिक देवों में तेजो, पद्म और शुक्ल, ये तीन शुभ लेश्या ही है। जो सम्यग्दृष्टि मनुष्य-तिर्यंच, इन शुभ लेश्या में आयु-बन्ध करे, तो वैमानिक देवों का कर सकते हैं, किंतु जो कृष्णादि तीन अशुभ लेश्या में हों, तो वे वैमानिक देव का आयुष्य कैसे बाँध सकते हैं ?

उत्तर--कृष्ण, नील और कापोत लेश्या वाले सम्यग्दृष्टि मनुष्य और तिर्यंच, देव आयुष्य का बंध नहीं कर सकते। यह बात इसी २९ वें प्रश्न के उत्तर पृ. ३६२६ में स्पष्ट लिखी है। प्रश्न है;--

"हे भगवन् ! कृष्णलेशी क्रियावादी पंचेन्द्रिय तिर्यंच जीव, नैरयिक तिर्यंच, मनुष्य अथवा देव आयु का बन्ध कर सकता है ?" इसके उत्तर में स्पष्ट लिखा है कि--

"नहीं, नैरयिक तिर्यंच, मनुष्य और देव का आयु नहीं बाँध सकता"--**"गोयमा! णो णेरइयाउयं पकरेइ, णो तिरिक्ख० णो मणुस्साउयं० णो देवाउयं पकरेइ।"** आगे लिखा है-"जैसा कृष्णलेश्या का विधान है, वैसा ही नील और कापोत लेश्या का है- **"जहा कण्हलेस्सा एवं णीललेस्सा वि काउलेस्सावि।"** इसी सूत्र में आगे चल कर विशेष स्पष्ट किया है कि--**"सम्मदिट्ठी जहा मणपज्जवणाणी तहेव वेमाणियाउयं पकरेइ"**--अर्थात् सम्यग्दृष्टि जीव, मनःपर्यव ज्ञानी के समान वैमानिक देवायु का ही बंध करता है (पृ. ३६२६)।

(४) उपरोक्त समवसरण प्ररूपणा के अतिरिक्त भगवती श. १ उ. ८ के प्रश्न २५९ से २६३ पर्यंत (भाग १ पृ. ३११-१२) में बताया है कि एकान्त बाल तो चारों गति के आयुष्य का बन्ध कर सकता है, किन्तु एकान्त पंडित और बाल-पंडित तो वैमानिक

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

देव का ही आयुष्य बाँध सकता है। बाल पंडित वैमानिक देव का आयुष्य क्यों बाँधता है ? इसके उत्तर में बताया है कि--

"बालपंडित मनुष्य तथारूप के श्रमण-ब्राह्मण से एक भी धार्मिक आर्यवचन सुन कर धारण करता है और देशविरत होता है, देश-प्रत्याख्यानी होता है। इसलिये वह वैमानिक देव का ही आयुष्य बाँधता है।

इस स्थल की टीका में श्री अभयदेवाचार्य, अविरत सम्यग्दृष्टि के विषय में लिखते हैं कि--

**"बालत्वे समानेऽपि अविरत-सम्यग्दृष्टिर्मनुष्यो देवायुरेव प्रकरोति न शेषाणि।"**

अर्थात् बालत्व की अपेक्षा समान होते हुए भी अविरत सम्यग्दृष्टि मनुष्य भी देवायु का ही बन्ध करता है, अन्य नहीं।

(५) शतक ६ उ. ४ के अन्तिम सूत्र (भाग २ पृ. ९९८ उ. १०) में बताया है कि "वैमानिक देवों में ही प्रत्याख्यान, प्रत्याख्याना-प्रत्याख्यान देशविरत) और अप्रत्याख्यान से बद्ध आयु वाले होते हैं, शेष नरकादि तीन गति में 'अप्रत्याख्यान निबद्धायु' ही जाते हैं।"

इसका तात्पर्य यह है कि सर्वप्रत्याख्यानी और देशप्रत्याख्याना (श्रावक) आयु का बन्ध करते हैं, तो एक वैमानिक का ही, क्योंकि देश या सर्वप्रत्याख्यान में केवल देवायु का ही बन्ध होता है, शेष तीन गति के आयु का बन्ध नहीं होता।

उपरोक्त सूत्र से यह भी स्पष्ट होता है कि--अप्रत्याख्यानी भी देवायु का बंध करते हैं, उसमें सम्यग्दृष्टि युक्त बद्धायु भी होते ही हैं। जब मिथ्यादृष्टि भी देवायु का बन्ध कर सकते हैं, तो जिसने अनन्तानुबन्धी कषाय-चतुष्क और मिथ्यात्व एवं मिश्र-मोहनीय का क्षयोपशम या क्षय कर दिया, वह वैमानिक देव का आयु-बन्ध करे, इसमें तो सन्देह ही नहीं होना चाहिए।

(६) शतक २६ उ. १ बन्धी शतक के अंतिम सूत्र (पृ. ३५६६) में लिखा है कि-पंचेन्द्रिय तिर्यंच सम्यक्त्व, ज्ञान, आभिनिबोधिक ज्ञान, श्रुत ज्ञान और अवधिज्ञान, इन पांच के आयु बन्ध में दूसरा भंग छोड़ कर पहला, तीसरा और चौथा भंग होता है। यथा—

१ पूर्वभव में आयु बन्ध किया था, वर्तमान में (देवायु) बाँधता है और भविष्य (देवभव) में मनुष्यायु बन्ध करगा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

३ पूर्व में आयु बाँधा था, वर्तमान में नहीं बाँधता, किन्तु भविष्य में बाँधेगा।

यह तीसरा भंग यों घटित होता है कि उसने पहले आयु बाँधा था, वर्तमान उपशम सम्यक्त्व में या अबन्ध काल में नहीं बाँधता है, किन्तु भविष्य में बाँधेगा।

चौथा भंग उस दशा में घटित होता है कि उस पंचेन्द्रिय तिर्यंच ने पहले मनुष्यायु का बन्ध कर लिया, उसके बाद सम्यक्त्वी हुआ। अब वह आयु का बन्ध नहीं करेगा और पूर्वबद्ध मनुष्यायु से मनुष्य भव पा कर सिद्ध हो जायगा। इसलिए वह न तो अब आयु का बन्ध करता है और न आगे ही करेगा।

मनुष्य के लिए भी सम्यक्त्व आदि पाँच बोलों में इसी प्रकार जानना चाहिए। विशेष में चौथे भंग में चरम शरीरी क्षपक भी हो सकता है।

इस प्रकार सम्यक्त्व में मनुष्य-तिर्यंच के आयु-बन्ध हो, तो एक देव-भव का ही हो सकता है, अन्य नहीं।

(७) भगवती सूत्र श. २ उ. १ (भाग १ पृ. ४१०) में मनुष्य मर कर पुनः मनुष्य हो, तो उसे 'तद्भव-मरण' माना है और यह बाल-मरण के १२ भेदों में का चौथा भेद है। तद्भव मरण मिथ्यात्व दशा में होता है इस दृष्टि से भी कोई मनुष्य यदि मनुष्यायु का बन्ध करे, तो वह मिथ्यात्व दशा में ही करता है, जिसका फल स्वयं सूत्रकार ने अनंत संसार-परिभ्रमण बताया है (पृ. ४११) ऐसा सम्यक्त्वी के लिए नहीं कहा जाता।

(८) तीसरे कर्मग्रंथ गाथा ८ में पंचेन्द्रिय तिर्यंच के चौथे गुणस्थान में "**सुराउ सयरि संमे**"--सूर--देव आयु सहित ७० प्रकृतियों का बन्ध बताया है। आयु-बन्ध में केवल देवायु ही बन्धना इससे भी सिद्ध है और गाथा ९ में मनुष्य के लिए भी तिर्यंच के समान देव आयु सहित ७० और विशेष में एक जिन नामकर्म, यों ७१ प्रकृतियों का बन्ध होना लिखा है।

गाथा १३ में औदारिक मन वचन और काय-योग के बन्ध में भी मनुष्य के समान चौथे गुणस्थान में ७१ प्रकृतियों का बंध होना स्वीकार किया है, जिसमें आयुष्य-कर्म की प्रकृति तो एकमात्र देवगति की ही है।

प्रश्न--सुमुख गाथापति (सुखविपाक) ने संसार-परिमित किया, वे सम्यग्दृष्टि थे, फिर उन्होंने मनुष्यायु का बन्ध क्यों किया ?

उत्तर--आयु तो पूरे जीवन में केवल एक बार ही बंधता है और सम्यक्त्व तो एक जीवन में प्रत्येक हजार बार आ-जा सकती है (अनुयोग द्वार) तब यह कैसे माना जाय कि सुमुख गाथापति ने मनुष्य का आयुष्य, सम्यक्त्व के सद्भाव में बाँधा ? और आयु-बन्ध

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

करते समय सुमुख में सम्यक्त्व थी ही ? यह सत्य है कि संसार-परिमित करते समय वह अवश्य ही समकिती था, परन्तु आयु-बन्ध के समय सम्यक्त्व का वमन हो कर मिथ्यात्व आ चुका था। इसी प्रकार मेघकुमार के हाथी-भव के विषय में भी समझना चाहिए।

प्रश्न–दशाश्रुतस्कन्ध अ. ६ में सम्यग्दृष्टि क्रियावादी के नरक में जाने का उल्लेख है। इस विषय में आप क्या कहेंगे ?

उत्तर-यह प्रश्न ही व्यर्थ है। सम्यक्त्व प्राप्ति के पूर्व या सम्यक्त्व वमन के पश्चात् नरकादि किसी भी गति का आयुष्य बांधा जा सकता है और तदनुसार उत्पन्न होते हैं। इसमें तो मतभेद है ही नहीं। सम्यक्त्व युक्त छठे नरक तक जाने का सिद्धांत वचन है (श. १३ उ. १ भाग ५ पृ. २१५२) तथा सम्यग्दृष्टि ही नहीं, मनःपर्यव ज्ञान वाले संत भी मृत्यु पा कर कोई सम्यक्त्व युक्त छठे नरक तक उत्पन्न हो सकते हैं (श. २४ उ. १ भाग ६ पृ. ३०२६) यही बात पृथ्वीकाय के विषय में भी है, (श. २४ उ. १२ पृ. ३०९४) अतएव मिथ्यात्व अवस्था में बांधे हुए आयुष्य के अनुसार सम्यग्दृष्टि नरकादि किसी भी गति में जा सकते हैं। दशाश्रुतस्कन्ध में ऐसे ही सम्यग्दृष्टियों का उल्लेख है। किन्तु यहाँ विचार हो रहा है–सम्यक्त्व के सद्भाव में आयु-बन्ध करने के विषय में। अतएव इससे उनका कोई सम्बन्ध नहीं है।

प्रश्न–यदि यह मान लिया जाय कि सम्यक्त्व युक्त वैमानिक देव का आयु-बन्ध करने वाले मनुष्य-तिर्यंच, विशिष्ट कोटि के क्रियावादी हैं और उन्हीं का भगवती सूत्रादि में उल्लेख हुआ है, सामान्य कोटि के क्रियावादी मनुष्य-तिर्यंच तो मनुष्यायु का बन्ध भी कर सकते हैं, तो ऐसा मानने पर मतभेद नहीं रहेगा।

उत्तर–एक अप्रामाणिक बात का समन्वय करना, सिद्धांत के लिए बाधक हो जाता है। वैसे सामान्य विशेष के बन्ध का उल्लेख भी आगम में है ही (श. १ उ. २ पृ. १५३ तथा उववाई सूत्र ४१ और प्रज्ञापना पद २०) में अविराधक श्रमण की जघन्य सौधर्म देव-लोक और उत्कृष्ट सर्वार्थसिद्ध महाविमान की, तथा श्रावक की जघन्य सौधर्म स्वर्ग उत्कृष्ट अच्युत कल्प की गति बताई। श. ८ उ. १० जघन्य ज्ञान और दर्शन आराधक के लिए भी जघन्य तीन और उत्कृष्ट ७–८ भव बताये हैं। उत्कृष्ट तो सर्वोच्च है ही, जघन्य-उत्कृष्ट गति आदि के विधान में सामान्य और विशेष सभी का समावेश हो जाता है। जघन्य से बाहर कोई सामान्य रह ही नहीं सकता। सामान्य सम्यग्दृष्टि मनुष्य-तिर्यंच भी सौधर्म स्वर्ग से कम अन्य गति का आयुष्य नहीं बांध सकता। अतएव तर्क व्यर्थ है।

आज से ४०–४२ वर्ष पूर्व तक समस्त जैन समाज और उसके विभिन्न समुदायों

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

का इसमें कोई मतभेद नहीं था । यह मतभेद हुआ ४०–४२ वर्ष पूर्व ही और एक आचार्य की स्वयं की विचारणा से । इसके पीछे कल्पना के अतिरिक्त सैद्धांतिक आधार कुछ भी नहीं है । अतएव सैद्धांतिक धारणा यही है कि सम्यक्त्व के सद्भाव में मनुष्य और तिर्यंच एक वैमानिक देव की आयु का ही बंध करते हैं ।

# अंतिम निवेदन

भगवती सूत्र का आदि से अंत तक का प्रकाशन कर के स्वाध्याय प्रेमियों तक पहुँचाने का कार्य पूर्ण करते हुए मुझ संतोष का अनुभव हो रहा है । इस विशाल आगम का अनुवाद, समाज के जाने-माने और अनुभवी विद्वान् पं. श्री घेवरचंदजी बांठिया वीर-पुत्र ने किया और समाज के धर्म-रसिक, श्रुतज्ञान प्रचार के प्रेमी, उदार हृदयी दानवीर महानुभावों के द्रव्य सहयोग से अ. भा. साधुमार्गी जैन संस्कृति रक्षक संघ से इसका प्रकाशन हुआ । मैं तो प्रूफ देखने वाला और छपाई आदि प्रकाशन की व्यवस्था करने वाला रहा । प्रूफ देखने में भी मुझ से अनेक प्रकार की भूलें रह गई है । यही काम यदि कोई अनुभवी अधिकारी विद्वान् करता, तो बहुत अच्छा होता । फिर भी जैसी-तैसी सेवा बन गई, उससे एक अभाव की पूर्ति तो हो गई है और यही संतोष है । मेरी अल्पज्ञता, असावधानी एवं प्रतिकूल परिस्थिति से जो भी भूलें रही, उसका मैं भगवद् साक्षी से मिच्छामि-दुक्कडं देता हुआ क्षमायाचना करता हूँ ।

परिशिष्ट में भगवती सूत्र की हुंडी भी दी जा रही है । यह हुंडी धर्म-रसिक उत्साही युवक श्री घीसूलालजी पितलिया ने भेजी थी । जैसी आई वैसी छपने को दे दी गई । उस समय यदि मैं स्वस्थ होता और अवकाश मिलता तो स्वयं भी कुछ परिश्रम कर के दूसरे रूप में उपस्थित करता । फिर भी श्री पितलियाजी का परिश्रम पाठकों को विशेष सुविधा प्रदान कर ही देगा ।

कार्तिक शुक्ला ज्ञानपंचमी
वीर सं. २४९९, वि. सं. २०२९ —रतनलाल डोशी
दिनांक ११–११–७२

---

नोट–– उपरोक्त प्रस्तावना में पृष्ठ क्रमांक इस नयी आवृत्ति के अनुसार कर दिये गये है ताकि पाठकों को वह आगम स्थल देखने में सुविधा रहे––स. सं. ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# निवेदन

हमारी श्वेताम्बर परम्परा के मान्य बत्तीस आगम साहित्य में भगवती सूत्र (व्याख्या प्रज्ञप्ति सूत्र) का स्थान बहुत ही महत्वपूर्ण है। जैन दर्शन को विशेष रूप से समझने एवं तत्त्व ज्ञान की दृष्टि से यह सूत्र जितना गंभीर है, उतना ही सामग्री की विशालता लिए हुए है। वर्तमान में उपलब्ध सभी सूत्रों में इसकी सामग्री विशाल एवं सर्वाधिक है। नंदी सूत्र के निम्न पाठ के अनुसार यह सूत्रराज ३६००० प्रश्नोत्तरों का श्रुतभंडार है।

**"छत्तीसं वागरणसहस्साइं, दो लक्खा अट्ठी सीइं पयसहस्साइं पयग्गेणं संखिज्जा अक्खरा, अणंता गमा, अणंता पज्जवा, परित्ता तसा, अणंता थावरा"**

**अर्थ** - ३६००० प्रश्नोत्तर है, २ लाख ८८ सहस्र पद है। संख्येय अक्षर है। (वर्तमान में १५७५ श्लोक परिमाण अक्षर है) अनन्त गम है, अनन्त पर्यव है, परित्त त्रस है, अनन्त स्थावर है।

सभी ३६००० प्रश्न भगवान् के प्रथम गणधर गौतम स्वामी द्वारा पूछे गए हैं एवं प्रभु महावीर के मुखारविन्द से उनके उत्तर फरमाये गए हैं। यह सूत्रराज द्रव्यानुयोग, चरणानुयोग गणितानुयोग एवं धर्मकथानुयोग चारों अनुयोगों के संमिश्रण की सामग्री संजोये हुए हैं।

जैन समाज की अनेक संस्थाओं द्वारा भगवती सूत्र का अनुवाद प्रकाशित हो चुका है। किन्तु संघ द्वारा प्रकाशित यह भगवती सूत्र क्या-क्या विशेषता लिए हुए है, इसका विषद विवेचन आदरणीय डोशी सा. द्वारा लिखित प्रस्तावना में दिया गया है। उसकी पुनरावृत्ति करना उचित नहीं है। सुज्ञ पाठक वर्ग को इस सूत्रराज का स्वाध्याय आरम्भ करने से पूर्व उस प्रस्तावना को अवश्य पढ़ लेना चाहिए, ताकि सम्बन्धित भाग की विषय सामग्री के साथ संघ के इस प्रकाशन की विशेषताओं की भी जानकारी हो जाय।

संघ की आगम बत्तीसी प्रकाशन में आदरणीय ***श्री जशवंतभाई शाह, मुम्बई*** निवासी का मुख्य सहयोग रहा है। आप एवं आपकी धर्म सहायिका ***श्रीमती मंगलाबेनशाह***

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

की सम्यग्ज्ञान के प्रचार-प्रसार में गहरी रुचि है। आपकी भावना है कि संघ द्वारा प्रकाशित सभी आगम **अर्द्ध मूल्य** में पाठकों को उपलब्ध हो तदनुसार आप इस योजना के अंतर्गत सहयोग प्रदान करते रहे हैं। अतः संघ आपका आभारी है।

आदरणीय शाह साहब तत्त्वज्ञ एवं आगमों के अच्छे ज्ञाता हैं। आप का अधिकांश समय धर्म साधना, आराधना में बीतता है। प्रसन्नता एवं गर्व तो इस बात का है कि आप स्वयं तो आगमों का पठन-पाठन करते ही हैं, साथ ही आपके सम्पर्क में आने वाले चतुर्विध संघ के सदस्यों को भी आगम की वाचनादि देकर जिनशासन की खूब प्रभावना करते हैं। आज के इस हीयमान युग में आप जैसे तत्त्वज्ञ श्रावक रत्न का मिलना जिनशासन के लिए गौरव की बात है। आपके पुत्र रत्न ***मयंकभाई शाह एवं श्रेयांसभाई शाह*** भी आपके पद चिह्नों पर चलने वाले हैं। आप सभी को आगमों एवं थोकड़ों का गहन अभ्यास है। आपके धार्मिक जीवन को देख कर प्रमोद होता है। आप चिरायु हों एवं शासन की प्रभावना करते रहें, इसी शुभ भावना के साथ।

इसके प्रकाशन में जो कागज काम में लिया गया है वह उच्च कोटि का मेफलिथो है साथ ही पक्की सेक्शन बाईडिंग है बावजूद *आदरणीय शाह साहब* के आर्थिक सहयोग के कारण **अर्द्ध मूल्य** ही रखा गया है। जो अन्य संस्थानों के प्रकाशनों की अपेक्षा अल्प है।

संघ की आगम बत्तीसी प्रकाशन योजना के अन्तर्गत भगवती सूत्र भाग ७ की यह चतुर्थ आवृत्ति **श्रीमान् जशवंतलाल भाई शाह, मुम्बई** निवासी के अर्थ सहयोग से ही प्रकाशित हो रही है। आपके अर्थ सहयोग के कारण इस आवृत्ति के मूल्य में किसी प्रकार की वृद्धि नहीं की गयी है। संघ आपका आभारी है। पाठक बन्धुओं से निवेदन है कि वे इस चतुर्थ आवृत्ति का अधिक से अधिक लाभ उठावें।

**ब्यावर (राज.)**
**दिनांक: ४-४-२००६**

**संघ सेवक**
**नेमीचन्द बांठिया**
अ. भा. सुधर्म जैन संस्कृति रक्षक संघ, जोधपुर

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# शुद्धि-पत्र

| पृष्ठ | पंक्ति | अशुद्ध | शुद्ध |
|---|---|---|---|
| ३१९५ | १३ | नरयि- | नैरयि- |
| ३२१३ | ४ | असंखेज्जपएसोगढाइं | असंखेज्जपएसोगाढ़ाइं |
| ३२२८ | १३ | है है | है |
| ३२५७ | १२ | णिज्जुत्तिमीसआ | णिज्जुत्तिमीसओ |
| ३२६७ | १ | अणोएाढे | अणोगाढे |
| ३२८१ | ६ | निकम्प | निष्कम्प |
| ३२८७ | ७ | दसएसियाखंधा | दसपएसियाखंधा |
| ३२९२ | ९ | दव्वट्ठयाए | दव्वट्ठयाए |
| ३३१४ | १४ | परस्थानश्रयी | परस्थानाश्रयी |
| ३३१७ | १ | स्कन्ध | स्कन्ध |
| ३३३० | १७ | उगसे | उनसे |
| ३३३१ | १९ | भविष्गत् | भविष्यत् |
| ३३३७ | १६ | णालिणांगे | णलिणंगे |
| ३३४५ | १७ | ज्जओ | ज्जाओ |
| ३३६८ | १७ | होज्जा ? | होज्जा ? एवं णियंठे वि.। |
| ३३७० | १ | वकुश | बकुश |
| ३३८३ | ४ | अनृतर | अनुत्तर |
| ३४०३ | १९ | होज्जा । | होज्जा, णो अलेस्से होज्जा । |
| ३४४३ | ५ | वाले—आनु हुआ | हुआ |
| ३४४३ | २२ | हाज्जा | होज्जा |
| ३४५६ | ७ | छेओवट्ठावणिए | छेओवट्ठावणिए वि |
| ३४५८ | १७ | अहक्खायसंजमस्स | अहक्खायसंजयस्स |
| ३४६३ | १७ | चारित्र | चारित्र |
| ३४७२ | ७ | जस | जब |
| ३४७६ | १८ | सिद्धिगति | सिद्धगति |
| ३४८० | १६ | संयत | संयत के |

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

| पृष्ठ | पंक्ति | अशुद्ध | शुद्ध |
|---|---|---|---|
| ३४९१ | ७ | यथाख्यास | यथाख्यात |
| ३५०८ | १० | प्रणीतररस | प्रणीत रस |
| ३५०९ | २ | उक्कुडुयसाणिए | उक्कुडुयासणिए |
| ३५१८ | १२ | अण्णहयकरे | अण्हयकरे |
| ३५३५ | ४ | स्परूप | स्वरूप |
| ३५४७ | १४ | मिथ्याद्दष्टि | मिथ्यादृष्टि |
| ३५५४ | १४ | अणगारोवउत्ते | अणागारोवउत्ते |
| ३५५६ | ८ | वांधेगे | बांधेगे |
| ३५६५ | १० | बंधो | बंधी |
| ३५६७ | १४ | ज्ञानवरणीय कर्म | ज्ञानावरणीयकर्म |
| ३५७१ | १४ | वयजोगोण | वयजोगो ण |
| ३५७३ | १८ | अणंतराववण्णए | अणंतरोववण्णए |
| ३६०२ | १८ | अणगारोवउत्ता | अणागारोवउत्ता |
| ३६०४ | ३ | विषय | विषम |
| ३६१० | १५ | लोभकसायी जाव | लोभकसायी जहा |
| ३६१९ | १४ | का | का आयु |
| ३६९२ | १७ | चरमान्त में | चरमान्त से |
| ३७१० | १० | हना | कहना |
| ३७३४ | १६ | यहान् | महान् |
| ३७४० | ४ | एकेद्रिन्य | एकेन्द्रिय |
| ३७४१ | १३ | १५ उत्तर | १५ प्रश्न |
| ३७६२ | १२ | संचिट्ठाणा | संचिट्ठणा |
| ३८१३ | २० | बांचन | वांचन |

**नोट**—टाइप घिसे होने के कारण मुद्रण दोष से कहीं-कहीं मात्राएँ ( ु, ा, ि, ी, ो, े, ॅ, ै, ॅ,) अनुस्वार ( ं ) रेफ ( ँ ) और अक्षर (श, भ, प, त्र, क, य, ट, स, न्, त आदि) साफ नहीं उठे हैं। किन्तु पूर्वापर संबंध के साथ पढ़ने से इनमें भूल होने की संभावना नहीं है। पाठकगण कृपया अपनी प्रति ठीक कर लेवें—स. सं.।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# विषयानुक्रमणिका

## शतक २५


| क्रमांक | विषय | पृष्ठ |
|---|---|---|
| | **उद्देशक १** | |
| ७२२ | लेश्या का उल्लेख | ३१९६ |
| ७२३ | संसारी जीवों के चौदह भेद | ३१९७ |
| ७२४ | योगों का अल्प-बहुत्व | ३१९८ |
| ७२५ | योग पन्द्रह | ३२०२ |
| | **उद्देशक २** | |
| ७२६ | द्रव्य प्ररूपणा | ३२०६ |
| ७२७ | जीव, अजीव का परिभोग | ३२०८ |
| ७२८ | असंख्य लोक में अनन्त द्रव्य | ३२१० |
| ७२९ | जीव, स्थित द्रव्य ग्रहण करता है या अस्थित | ३२१२ |
| | **उद्देशक ३** | |
| ७३० | संस्थान के भेद और अल्प-बहुत्व | ३२१७ |
| ७३१ | संस्थान पाँच | ३२२१ |
| ७३२ | संस्थान के प्रदेश | ३२२६ |
| ७३३ | श्रेणियों के भेद और परमाणु की गति | ३२५३ |
| ७३४ | गणिपिटक के भेद | ३२५७ |
| ७३५ | गति आदि का अल्प-बहुत्व | ३२५८ |
| | **उद्देशक ४** | |
| ७३६ | द्रव्यादि की अपेक्षा युग्म प्ररूपणा | ३२६२ |
| ७३७ | सकम्प-निष्कम्प | ३२८० |
| ७३८ | परमाणु आदि का अल्प-बहुत्व | ३२८३ |
| ७३९ | पुद्गल और युग्म | ३२९७ |
| ७४० | परमाणु आदि सार्द्ध है या अनर्द्ध | ३३०९ |
| ७४१ | पुद्गल सकम्प-निष्कम्प | ३३१० |
| ७४२ | अस्तिकाय के मध्य-प्रदेश | ३३३३ |
| | **उद्देशक ५** | |
| ७४३ | पर्यव के भेद | ३३३६ |
| ७४४ | आवलिका यावत् पुद्गल-परिवर्तन के समय | ,, |
| ७४५ | निगोद के भेद | ३३४८ |
| ७४६ | औदयिकादि नाम | ,, |
| | **उद्देशक ६** | |
| ७४७ | निर्ग्रन्थों का स्वरूप | ३३५१ |
| ७४८ | वेद द्वार | ३३५७ |
| ७४९ | राग द्वार | ३३६० |
| ७५० | कल्प द्वार | ३३६१ |
| ७५१ | चारित्र द्वार | ३३६४ |
| ७५२ | प्रतिसेवना द्वार | ३३६५ |
| ७५३ | ज्ञान द्वार | ३३६७ |
| ७५४ | श्रुत द्वार | ३३६९ |
| ७५५ | तीर्थ द्वार | ३३७० |
| ७५६ | लिंग द्वार | ३३७२ |


Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

| क्रमांक | विषय | पृष्ठ |
|---|---|---|
| ७५७ | शरीर द्वार | ३३७२ |
| ७५८ | क्षेत्र द्वार | ३३७४ |
| ७५९ | काल द्वार | ३३७५ |
| ७६० | गति द्वार | ३३८१ |
| ७६१ | संयम-स्थान | ३३८६ |
| ७६२ | सन्निकर्ष-द्वार | ३३८८ |
| ७६३ | योग द्वार | ३३९८ |
| ७६४ | उपयोग द्वार | ३३९९ |
| ७६५ | कषाय द्वार | ३४०० |
| ७६६ | लेश्या द्वार | ३४०२ |
| ७६७ | परिणाम द्वार | ३४०५ |
| ७६८ | कर्म-बन्ध द्वार | ३४०९ |
| ७६९ | कर्म-वेदना द्वार | ३४११ |
| ७७० | कर्म उदीरणा द्वार | ३४१२ |
| ७७१ | उपसंपद हान द्वार | ३४१५ |
| ७७२ | संज्ञा द्वार | ३४१८ |
| ७७३ | आहार द्वार | ३४१९ |
| ७७४ | भव द्वार | ३४२० |
| ७७५ | आकर्ष द्वार | ३४२१ |
| ७७६ | काल द्वार | ३४२४ |
| ७७७ | अन्तर द्वार | ३४२७ |
| ७७८ | समुद्घात द्वार | ३४२९ |
| ७७९ | क्षेत्रावगाहन द्वार | ३४३१ |
| ७८० | क्षेत्र-स्पर्शना द्वार | ३४३२ |
| ७८१ | भाव द्वार | ३४३३ |
| ७८२ | परिमाण द्वार | ३४३४ |
| ७८३ | अल्प-बहुत्व द्वार | ३४३७ |

## उद्देशक ७

| | | |
|---|---|---|
| ७८४ | संयत के भेद | ३४३९ |
| ७८५ | संयतों का स्वरूप | ३४४१ |
| ७८६ | सवेदी अवेदी | ३४४३ |
| ७८७ | सराग-वीतराग | ३४४४ |
| ७८८ | स्थित-कल्प अस्थित-कल्प | ३४४५ |
| ७८९ | संयत पुलाकादि निर्ग्रंथ होते हैं ? | ३४४६ |
| ७९० | प्रतिसेवना | ३४४८ |
| ७९१ | ज्ञान द्वार | ३४४९ |
| ७९२ | श्रुत द्वार | " |
| ७९३ | तीर्थ द्वार | ३४५१ |
| ७९४ | लिंग द्वार | " |
| ७९५ | शरीर द्वार | ३४५२ |
| ७९६ | क्षेत्र द्वार | ३४५३ |
| ७९७ | काल द्वार | " |
| ७९८ | गति द्वार | ३४५४ |
| ७९९ | देवायु स्थिति | ३४५६ |
| ८०० | संयम-स्थान | ३४५७ |
| ८०१ | चारित्र-पर्यव | ३४५९ |
| ८०२ | योग द्वार | ३४६४ |
| ८०३ | उपयोग द्वार | " |
| ८०४ | कषाय द्वार | ३४६५ |
| ८०५ | लेश्या द्वार | ३४६६ |
| ८०६ | परिणाम द्वार | ३४६७ |
| ८०७ | कर्म-बन्ध | ३४७० |


Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

| क्रमांक | विषय | पृष्ठ |
|---|---|---|
| ८०८ | कर्म-वेदन | ३४७१ |
| ८०९ | कर्म-उदीरणा | ३४७२ |
| ८१० | उपसंपद-हान | ३४७३ |
| ८११ | संज्ञा द्वार | ३४७६ |
| ८१२ | भव द्वार | ३४७७ |
| ८१३ | आकर्ष द्वार | ३४७८ |
| ८१४ | स्थिति द्वार | ३४८१ |
| ८१५ | अन्तर काल द्वार | ३४८४ |
| ८१६ | समुद्घात द्वार | ३४८६ |
| ८१७ | लोक स्पर्श द्वार | ३४८७ |
| ८१८ | भाव द्वार | ३४८८ |
| ८१९ | परिमाण द्वार | ३४८९ |
| ८२० | अल्प-बहुत्व द्वार | ३४९० |
| ८२१ | प्रतिसेवना | ३४९२ |
| ८२२ | आलोचना के दोष | ३४९३ |
| ८२३ | आलोचना के योग्य | ३४९४ |
| ८२४ | आलोचना देने योग्य | ३४९६ |
| ८२५ | समाचारी के भेद | ३४९६ |
| ८२६ | प्रायश्चित्त के भेद | ३४९८ |
| ८२७ | तप के भेद | ३५०० |
| ८२८ | अनशन तप | ३५०१ |
| ८२९ | उनोदरी तप | ३५०४ |
| ८३० | भिक्षाचरी तप | ३५०७ |
| ८३१ | रस परित्याग तप | ३५०८ |
| ८३२ | काय-क्लेश तप | " |
| ८३३ | प्रतिसंलीनता तप | ३५०९ |
| ८३४ | प्रायश्चित्त तप | ३५१३ |
| ८३५ | विनय तप | ३५१४ |
| ८३६ | वैयावृत्य तप | ३५२४ |
| ८३७ | स्वाध्याय तप | ३५२५ |
| ८३८ | ध्यान के भेद | " |
| ८३९ | आर्त्त ध्यान | ३५२६ |
| ८४० | रौद्र ध्यान | ३५२८ |
| ८४१ | धर्म ध्यान | ३५३० |
| ८४२ | शुक्ल ध्यान | ३५३३ |
| ८४३ | व्युत्सर्ग | ३५३७ |
| | **उद्देशक ८** | |
| ८४४ | जीवों के उत्पन्न होने का उदाहरण | ३५४० |
| ८४५ | आत्म-ऋद्धि से उत्पत्ति | ३५४२ |
| | **उद्देशक ९** | |
| ८४६ | भवसिद्धिक जीवों की उत्पत्ति | ३५४५ |
| | **उद्देशक १०** | |
| ८४७ | अभव्य जीवों की उत्पत्ति | ३५४६ |
| | **उद्देशक ११** | |
| ८४८ | सम्यग्दृष्टि जीवों की उत्पत्ति | " |
| | **उद्देशक १२** | |
| ८४९ | मिथ्यादृष्टि जीवों की उत्पत्ति | ३५४७ |
| | ***(शतक २६ बन्धी शतक)*** | |
| | **उद्देशक १** | |
| ८५० | जीव ने कर्म का बन्ध किया, करता है, करेगा ? | ३५५० |
| ८५१ | नैरयिक के पाप-बन्ध | ३५५७ |


Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

| क्रमांक | विषय | पृष्ठ |
|---|---|---|
| | **उद्देशक २** | |
| ८५२ | अनन्तरोपपन्नक के बन्ध | ३५७१ |
| | **उद्देशक ३** | |
| ८५३ | परम्परोपपन्नक के बन्ध | ३५७५ |
| | **उद्देशक ४** | |
| ८५४ | अनन्तरावगाढ़ के बन्ध | ३५७७ |
| | **उद्देशक ५** | |
| ८५५ | परम्परावगाढ़ बन्धक | ३५७८ |
| | **उद्देशक ६** | |
| ८५६ | अनन्तराहारक बन्धक | ३५७९ |
| | **उद्देशक ७** | |
| ८५७ | परम्पराहारक बन्धक | ३५८० |
| | **उद्देशक ८** | |
| ८५८ | अनन्तर पर्याप्तक बन्धक | ३५८१ |
| | **उद्देशक ९** | |
| ८५९ | परम्पर पर्याप्तक बन्धक | ३५८२ |
| | **उद्देशक १०** | |
| ८६० | चरम बन्धक | ३५८३ |
| | **उद्देशक ११** | |
| ८६१ | अचरम बन्धक | ३५८४ |
| | **शतक २७** | |
| ८६२ | (करिसु शतक) | ३५९० |
| | **शतक २८** | |
| ८६३ | (कर्म समर्जक शतक) | ३५९३ |
| | **शतक २९** | |
| ८६४ | (कर्म प्रस्थापन शतक) | ३६०० |
| | **शतक ३०** | |
| ८६५ | (समवसरण) | ३६०८ |
| | **शतक ३१** | |
| ८६६ | (उपपात शतक) | ३६४० |
| | **शतक ३२** | |
| ८६७ | (उद्वर्तन शतक) | ३६५८ |
| | **शतक ३३** | |
| ८६८ | (एकेन्द्रिय शतक) | ३६६१ |
| | **शतक ३४** | |
| ८६९ | (श्रेणी शतक) | ३६८४ |
| | **शतक ३५** | |
| ८७० | (महायुग्म शतक) | ३७३० |
| | **शतक ३६** | |
| ८७१ | (बेइन्द्रिय महायुग्म शतक) | ३७५९ |
| | **शतक ३७** | |
| ८७२ | (तेइन्द्रिय महायुग्म शतक) | ३७६५ |
| | **शतक ३८** | |
| ८७३ | (चौरिन्द्रिय महायुग्म शतक) | ३७६६ |
| | **शतक ३९** | |
| ८७४ | (असंज्ञी पंचेन्द्रिय महायुग्म शतक) | ३७६७ |
| | **शतक ४०** | |
| ८७५ | (संज्ञी महायुग्म शतक) | ३७६८ |
| | **शतक ४१** | |
| ८७६ | (राशि-युग्म शतक) | ३७८७ |
| ८७७ | उपसंहार | ३८१० |
| ८७८ | भगवती सूत्र की हुण्डी | १-२८ |


Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# अस्वाध्याय

निम्नलिखित बत्तीस कारण टालकर स्वाध्याय करना चाहिये।

| **आकाश सम्बन्धी १० अस्वाध्याय** | **काल मर्यादा** |
|---|---|
| १. बड़ा तारा टूटे तो- | एक प्रहर |
| २. दिशा-दाह * | जब तक रहे |
| ३. अकाल में मेघ गर्जना हो तो- | दो प्रहर |
| ४. अकाल में बिजली चमके तो- | एक प्रहर |
| ५. बिजली कड़के तो- | आठ प्रहर |
| ६. शुक्ल पक्ष की १, २, ३ की रात- | प्रहर रात्रि तक |
| ७. आकाश में यक्ष का चिह्न हो- | जब तक दिखाई दे |
| ८-९. काली और सफेद धूंअर- | जब तक रहे |
| १०. आकाश मंडल धूलि से आच्छादित हो- | जब तक रहे |
| **औदारिक सम्बन्धी १० अस्वाध्याय** | |
| ११-१३. हड्डी, रक्त और मांस, | ये तिर्यंच के ६० हाथ के भीतर हो। मनुष्य के हो, तो १०० हाथ के भीतर हो। मनुष्य की हड्डी यदि जली या धुली न हो, तो १२ वर्ष तक। |
| १४. अशुचि की दुर्गंध आवे या दिखाई दे- | तब तक |
| १५. श्मशान भूमि- | सौ हाथ से कम दूर हो, तो। |

* आकाश में किसी दिशा में नगर जलने या अग्नि की लपटें उठने जैसा दिखाई दे और प्रकाश हो तथा नीचे अंधकार हो, वह दिशा-दाह है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

| | |
|---|---|
| १६. चन्द्र ग्रहण- | खंड ग्रहण में ८ प्रहर, पूर्ण हो तो १२ प्रहर |

(चन्द्र ग्रहण जिस रात्रि में लगा हो उस रात्रि के प्रारम्भ से ही अस्वाध्याय गिनना चाहिये।)

| | |
|---|---|
| १७. सूर्य ग्रहण- | खंड ग्रहण में १२ प्रहर, पूर्ण हो तो १६ प्रहर |

(सूर्य ग्रहण जिस दिन में कभी भी लगे उस दिन के प्रारंभ से ही उसका अस्वाध्याय गिनना चाहिये।)

| | |
|---|---|
| १८. राजा का अवसान होने पर, | जब तक नया राजा घोषित न हो |
| १९. युद्ध स्थान के निकट | जब तक युद्ध चले |
| २०. उपाश्रय में पंचेन्द्रिय का शव पड़ा हो, | जब तक पड़ा रहे |

(सीमा तिर्यंच पंचेन्द्रिय के लिए ६० हाथ, मनुष्य के लिए १०० हाथ। उपाश्रय बड़ा होने पर इतनी सीमा के बाद उपाश्रय में भी अस्वाध्याय नहीं होता। उपाश्रय की सीमा के बाहर हो तो यदि दुर्गन्ध न आवे या दिखाई न देवे तो अस्वाध्याय नहीं होता।)

| | |
|---|---|
| २१-२४. आषाढ़, आश्विन, कार्तिक और चैत्र की पूर्णिमा | दिन रात |
| २५-२८. इन पूर्णिमाओं के बाद की प्रतिपदा- | दिन रात |
| २९-३२. प्रातः, मध्याह्न, संध्या और अर्द्ध रात्रि- इन चार सन्धिकालों में- | १-१ मुहूर्त्त |

उपरोक्त अस्वाध्याय को टालकर स्वाध्याय करना चाहिए। खुले मुंह नहीं बोलना तथा सामायिक, पौषध में दीपक के उजाले में नहीं वांचना चाहिए।

**नोट** - नक्षत्र २८ होते हैं उनमें से आर्द्रा नक्षत्र से स्वाति नक्षत्र तक नौ नक्षत्र वर्षा के गिने गये हैं। इनमें होने वाली मेघ की गर्जना और बिजली का चमकना स्वाभाविक है। अतः इसका अस्वाध्याय नहीं गिना गया है।



Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णमोत्थुणं समणस्स भगवओ महावीरस्स

गणधर भगवत्सुधर्मस्वामि प्रणीत

# भगवती सूत्र

## शतक २५

१ लेसा य २ दव्व ३ संठाण ४ जुम्म ५ पज्जव ६ णियंठ ७ समणा य।
८ ओहे ९–१० भवियाभविए ११ सम्मा १२ मिच्छे य उद्देसा ॥

भावार्थ–१ लेश्या आदि के विषय में प्रथम उद्देशक है, २ द्रव्य के विषय में दूसरा उद्देशक है, ३ संस्थान आदि के सम्बन्ध में तीसरा, ४ युग्म (कृतयुग्म) आदि राशि के विषय में चौथा, ५ पर्यव आदि के विषय में पाँचवाँ, ६ पुलाक आदि निर्ग्रन्थ के विषय में छठा, ७ सामायिकादि संयत आदि के विषय में सातवाँ, ८ ओघ (सामान्य अर्थात् भव्याभव्यादि विशेषण रहित सामान्य नैरयिक आदि की उत्पत्ति) के विषय में आठवाँ, ९ भव्य नैरयिकादि की उत्पत्ति के विषय में नौवाँ, १० अभव्य नैरयिकादि के विषय में दसवाँ, ११ सम्यग्दृष्टि नरयिकादि के विषय में ग्यारहवाँ और १२ मिथ्यादृष्टि नैरयिकादि के विषय में बारहवाँ उद्देशक है। इस प्रकार इस पच्चीसवें शतक में बारह उद्देशक हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# शतक २५ उद्देशक १

## लेश्या का उल्लेख

१ प्रश्न–तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे जाव एवं वयासी–कइ णं भंते ! लेस्साओ पण्णत्ताओ ?

१ उत्तर–गोयमा ! छल्लेसाओ पण्णत्ताओ, तं जहा–कण्हलेस्सा जहा पढमसए बिइए उद्देसए तहेव लेस्साविभागो । अप्पाबहुगं च जाव चउव्विहाणं देवाणं चउव्विहाणं देवीणं मीसगं अप्पाबहुगं ति ।

कठिन शब्दार्थ–मीसगं–मिश्रक–सम्मिलित ।

भावार्थ–१ प्रश्न–उस काल उस समय में गौतम स्वामी ने यावत् इस प्रकार पूछा–'हे भगवन् ! लेश्याएँ कितनी कही गई हैं ?'

१ उत्तर–हे गौतम ! छह लेश्याएँ कही गई हैं । यथा–कृष्णलेश्या इत्यादि प्रथम शतक के दूसरे उद्देशक के अनुसार । लेश्याओं का विभाग और उनका अल्पबहुत्व यावत् चार प्रकार के देव और चार प्रकार की देवियों का मिश्रित (सम्मिलित) अल्प-बहुत्व पर्यन्त ।

विवेचन–यद्यपि लेश्याओं के नाम और स्वरूप का कथन प्रथम शतक में किया जा चुका है, तथापि अन्य प्रकरण के साथ इनका सम्बन्ध होने से लेश्या और उनके अल्प-बहुत्व का कथन फिर किया है । यहाँ संसार-समापन्नक जीवों के योगों के अल्प-बहुत्व का कथन किया जा रहा है । इस प्रकरण से लेश्या का अल्प-बहुत्व भी कहा है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# संसारी जीवों के चौदह भेद

२ प्रश्न–कइविहा णं भंते ! संसारसमावण्णगा जीवा पण्णत्ता ?

२ उत्तर–गोयमा ! चोद्दसविहा संसारसमावण्णगा जीवा पण्णत्ता, तं जहा–१ सुहुमअपज्जत्तगा २ सुहुमपज्जत्तगा ३ बायरअपज्जत्तगा ४ बायरपज्जत्तगा ५ बेइंदिया अपज्जत्तगा ६ बेइंदिया पज्जत्तगा ७–८ एवं तेइंदिया ९–१० एवं चउरिंदिया ११ असण्णिपंचिंदिया अपज्जत्तगा १२ असण्णिपंचिंदिया पज्जत्तगा १३ सण्णिपंचिंदिया अपज्जत्तगा १४ सण्णिपंचिंदिया पज्जत्तगा ।

भावार्थ–२ प्रश्न–हे भगवन् ! संसारसमापन्नक (संसारी) जीव कितने प्रकार के कहे हैं ?

२ उत्तर–हे गौतम ! संसारसमापन्नक जीव चौदह प्रकार के कहे हैं। यथा–१ अपर्याप्त सूक्ष्म एकेन्द्रिय २ पर्याप्त सूक्ष्म एकेन्द्रिय ३ अपर्याप्त बादर एकेन्द्रिय ४ पर्याप्त बादर एकेन्द्रिय ५ अपर्याप्त बेइंद्रिय ६ पर्याप्त बेइंद्रिय ७ अपर्याप्त तेइंद्रिय ८ पर्याप्त तेइंद्रिय ९ अपर्याप्त चौरिन्द्रिय १० पर्याप्त चौरिन्द्रिय ११ अपर्याप्त असन्नी पंचेन्द्रिय १२ पर्याप्त असंज्ञी पंचेन्द्रिय १३ अपर्याप्त संज्ञी पञ्चेन्द्रिय और १४ पर्याप्त संज्ञी पञ्चेन्द्रिय ।

विवेचन–'सूक्ष्म'–सूक्ष्म नाम-कर्म के उदय से जिन जीवों का शरीर अत्यन्त सूक्ष्म अर्थात् असंख्य शरीर इकट्ठे होने पर भी जो चक्षु आदि इन्द्रियों का विषय न हो, उसे 'सूक्ष्म' कहते हैं।

'बादर'–बादर नाम-कर्म के उदय से बादर अर्थात् स्थूल शरीर वाले जीव बादर कहलाते हैं।

'पर्याप्तक'–जिस जीव में जितनी पर्याप्तियाँ सम्भव हैं, वह जब उतनी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पर्याप्तियाँ पूरी कर लेता है, या करने की योग्यता हो, उसे 'पर्याप्त' कहते हैं। एकेंद्रिय जीव आहार, शरीर, इन्द्रिय और श्वासोच्छ्वास–इन चार पर्याप्तियों को पूरी करने पर, बेइंद्रिय, तेइन्द्रिय, चौरिन्द्रिय और असंज्ञी पंचेन्द्रिय, उपर्युक्त चार पर्याप्तियों और पाँचवीं भाषा पर्याप्ति पूरी करने पर तथा संज्ञी पञ्चेन्द्रिय उपर्युक्त पाँच और छठी मनःपर्याप्ति पूरी करने पर 'पर्याप्तक' कहे जाते हैं।

'**अपर्याप्तक**'– जिस जीव की पर्याप्तियाँ पूरी न हुई हों अर्थात् जिस जीव ने स्वयोग्य पर्याप्तियों को पूरा न बाँध लिया हो और जो स्वयोग्य पर्याप्तियाँ पूरी होने से पहले ही मरने वाला हो, वह 'अपर्याप्तक' कहलाता है। अपर्याप्त अवस्था में मरने वाले जीव तीन पर्याप्तियाँ पूर्ण कर के चौथी (श्वासोच्छ्वास) पर्याप्ति अधूरी रहने पर ही मरते हैं, पहले नहीं। क्योंकि आगामी भव की आयु बाँध कर ही जीव मृत्यु प्राप्त करते हैं और आयु का बन्ध उन्हीं जीवों के होता है, जिन्होंने आहार, शरीर और इन्द्रिय–ये तीन पर्याप्तियाँ पूर्ण कर ली हों।

सूक्ष्म, बादर, अपर्याप्त और पर्याप्त–ये चार भेद एकेन्द्रिय जीवों के हैं। बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौरिन्द्रिय, असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय और संज्ञी पञ्चेन्द्रिय, इनके पर्याप्त और अपर्याप्त, ये दो-दो भेद होते हैं। इस प्रकार जीवों के चौदह भेद होते हैं।

## योगों का अल्प-बहुत्व

**३ प्रश्न–एएसि णं भंते ! चोद्दसविहाणं संसारसमावण्णगाणं जीवाणं जहण्णुक्कोसगस्स जोगस्स कयरे कयरे० जाव विसेसाहिया वा ?**

**३ उत्तर–गोयमा ! १ सव्वत्थोवे सुहुमस्स अपज्जत्तगस्स जहण्णए जोए २ बायरस्स अपज्जत्तगस्स जहण्णए जोए असंखेज्जगुणे ३ बेइंदियस्स अपज्जत्तगस्स जहण्णए जोए असंखेज्जगुणे ४ एवं तेइंदियस्स**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

५ एवं चउरिंदियस्स ६ असण्णिस्स पंचिंदियस्स अपज्जत्तगस्स जहण्णए जोए असंखेज्जगुणे ७ सण्णिस्स पंचिंदियस्स अपज्जत्तगस्स जहण्णए जोए असंखेज्जगुणे ८ सुहुमस्स पज्जत्तगस्स जहण्णए जोए असंखेज्जगुणे ९ बायरस्स पज्जत्तगस्स जहण्ण जोए असंखेज्जगुणे १० सुहुमस्स अपज्जत्तगस्स उक्कोसए जोए असंखेज्जगुणे ११ बायरस्स अपज्जतगस्स उक्कोसए जोए असंखेज्जगुणे १२ सुहुमस्स पज्जत्तगस्स उक्कोसए जोए असंखेज्जगुणे १३ बायरस्स पज्जत्तगस्स उक्कोसए जोए असंखेज्जगुणे १४ बेइंदियस्स पज्जत्तगस्स जहण्णए जोए असंखेज्जगुणे १५ एवं तेइंदियस्स वि १८ एवं जाव सण्णिपंचिंदियस्स पज्जत्तगस्स जहण्णए जोए असंखेज्जगुणे १९ बेइंदियस्स अपज्जत्तगस्स उक्कोसए जोए असंखेज्जगुणे २० एवं तेइंदियस्स वि २१ एवं चउरिंदियस्स वि २३ एवं जाव सण्णिपंचिंदियस्स अपज्जत्तगस्स उक्कोसए जोए असंखेज्जगुणे २४ बेइंदियस्स पज्जत्तगस्स उक्कोसए जोए असंखेज्जगुणे २५ एवं तेइंदियस्स वि पज्जत्तगस्स उक्कोसए जोए असंखेज्जगुणे २६ चउरिंदियस्स पज्जत्तगस्स उक्कोसए जोए असंखेज्जगुणे २७ असण्णिपंचिंदियस्स पज्जत्तगस्स उक्कोसए जोए असंखेज्जगुणे २८ एवं सण्णिपंचिंदियस्स पज्जत्तगस्स उक्कोसए जोए असंखेज्जगुणे ।

भावार्थ—३ प्रश्न—हे भगवन् ! इन चौवह प्रकार के संसारसमापन्नक

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जीवों के जघन्य और उत्कृष्ट योग से कौन जीव, किन से अल्प, बहुत, तुल्य और विशेषाधिक हैं ?

३ उत्तर–हे गौतम ! १ अपर्याप्त सूक्ष्म एकेन्द्रिय का जघन्य योग सब से अल्प है। २ उससे अपर्याप्त बादर एकेन्द्रिय का जघन्य योग असंख्यात गुण है। ३ उससे अपर्याप्त बेइन्द्रिय का जघन्य योग असंख्यात गुण है। ४ उससे अपर्याप्त तेइन्द्रिय का जघन्य योग असंख्यात गुण है। ५ उससे अपर्याप्त चौरिन्द्रिय का जघन्य योग असंख्यात गुण है। ६ उससे अपर्याप्त असंज्ञी पंचेन्द्रिय का जघन्य योग असंख्यात गुण है। ७ उससे अपर्याप्त संज्ञी पञ्चेन्द्रिय का जघन्य योग असंख्यात गुण है। ८ उससे पर्याप्त सूक्ष्म एकेन्द्रिय का जघन्य योग असंख्यात गुण है। ९ उससे पर्याप्त बादर एकेन्द्रिय का जघन्य योग असंख्यात गुण है। १० उससे अपर्याप्त सूक्ष्म एकेन्द्रिय का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुण है। ११ उससे अपर्याप्त बादर एकेन्द्रिय का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुण है। १२ उससे पर्याप्त सूक्ष्म एकेन्द्रिय का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुण है। १३ उससे पर्याप्त बादर एकेन्द्रिय का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुण है। १४ उससे पर्याप्त बेइन्द्रिय का जघन्य योग असंख्यात गुण है। १५–१८ उससे पर्याप्त तेइन्द्रिय, पर्याप्त चौरिन्द्रिय, पर्याप्त असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय और पर्याप्त संज्ञी पंचेन्द्रिय का जघन्य योग उत्तरोत्तर असंख्यात गुण है। १९ उससे अपर्याप्त बेइन्द्रिय का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुण है। २०–२३ इसी प्रकार अपर्याप्त तेइन्द्रिय, अपर्याप्त चौरिन्द्रिय, अपर्याप्त असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय और अपर्याप्त संज्ञी पंचेन्द्रिय का उत्कृष्ट योग उत्तरोत्तर असंख्यात गुण है। २४ उससे पर्याप्त बेइन्द्रिय का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुण है। २५ इसी प्रकार अपर्याप्त तेइन्द्रिय का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुण है। २६ उससे पर्याप्त चौरिन्द्रिय का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुण है। २७ उससे पर्याप्त असंज्ञी पंचेन्द्रिय का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुण है। २८ उससे पर्याप्त संज्ञी पंचेन्द्रिय का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुण है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

४ प्रश्न–दो भंते ! णेरइया पढमसमयोववण्णगा किं समजोगी, किं विसमजोगी ?

४ उत्तर–गोयमा ! सिय समजोगी, सिय विसमजोगी ।

प्रश्न–से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ–'सिय समजोगी, सिय विसमजोगी' ?

उत्तर–गोयमा ! आहारयाओ वा से अणाहारए, अणाहारयाओ वा से आहारए सिय हीणे, सिय तुल्ले, सिय अब्भहिए । जइ हीणे असंखेज्जइभागहीणे वा, संखेज्जइभागहीणे वा, असंखेज्जगुणहीणे वा, संखेज्जगुणहीणे वा । अह अब्भहिए असंखेज्जइभागमब्भहिए वा, संखेज्जइभागमब्भहिए वा, संखेज्जगुणमब्भहिए वा, असंखेज्जगुण-मब्भहिए वा, से तेणट्ठेणं जाव सिय 'विसमजोगी' । एवं जाव वेमाणियाणं ।

भावार्थ–४ प्रश्न–हे भगवन् ! प्रथम समय उत्पन्न दो नैरयिक समयोगी होते हैं या विषमयोगी ?

४ उत्तर–हे गौतम ! कदाचित् समयोगी और कदाचित् विषमयोगी होते हैं ।

प्रश्न–हे भगवन् ! ऐसा क्यों कहा गया कि–कदाचित् समयोगी और कदाचित् विषमयोगी होते हैं ?

उत्तर–हे गौतम ! आहारक नारक से अनाहारक नारक और अनाहारक से आहारक नारक कदाचित् हीन-योगी, कदाचित् तुल्य-योगी और कदाचित् अधिक-योगी होता है । यदि वह हीन-योगी होता है, तो असंख्यातवें

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भाग हीन, संख्यातवें भाग हीन, संख्यात गुण हीन या असंख्यात गुण हीन होता है। यदि अधिक योगी होता है, तो असंख्यातवें भाग अधिक, संख्यातवें भाग अधिक, संख्यात गुण अधिक या असंख्यात गुण अधिक होता है। इस कारण कहा गया है कि कदाचित् समयोगी और कदाचित् विषमयोगी होता है। इस प्रकार यावत् वैमानिक तक जानना चाहिए।

## योग पन्द्रह

५ प्रश्न-कइविहे णं भंते ! जोए पण्णत्ते ?

५ उत्तर-गोयमा ! पण्णरसविहे जोए पण्णत्ते, तं जहा-१ सच्चमणजोए २ मोसमणजोए ३ सच्चामोसमणजोए ४ असच्चामोसमणजोए ५ सच्चवइजोए ६ मोसवइजोए ७ सच्चामोसवइजोए ८ असच्चामोसवइजोए ९ ओरालियसरीरकायजोए १० ओरालियमीसासरीरकायजोए ११ वेउव्वियसरीरकायजोए १२ वेउव्वियमीसासरीरकायजोए १३ आहारगसरीरकायजोए १४ आहारगमीसासरीरकायजोए १५ कम्मासरीरकायजोए।

भावार्थ-५ प्रश्न-हे भगवन् ! योग कितने प्रकार के कहे गये हैं ?

५ उत्तर-हे गौतम ! योग पन्द्रह प्रकार के कहे गये हैं। यथा-१ सत्य मनयोग २ मृषा मनयोग ३ सत्यमृषा मनयोग ४ असत्यामृषा मनयोग ५ सत्य वचनयोग ६ मृषा वचनयोग ७ सत्यमृषा वचनयोग ८ असत्यामृषा वचनयोग ९ औदारिक-शरीर काययोग १० औदारिकमिश्र-शरीर काययोग

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

११ वैक्रिय-शरीर काययोग, १२ वैक्रियमिश्र-शरीर काययोग, १३ आहारक-शरीर काययोग, १४ आहारकमिश्र-शरीर काययोग, १५ कार्मण-शरीर काययोग ।

६ प्रश्न–एयस्स णं भंते ! पण्णरसविहस्स जहण्णुक्कोसगस्स जोगस्स कयरे कयरे० जाव विसेसाहिया वा ?

६ उत्तर–गोयमा ! १ सव्वत्थोवे कम्मगसरीरगस्स जहण्णए जोए २ ओरालियमीसगस्स जहण्णए जोए असंखेज्जगुणे ३ वेउव्वियमीसगस्स जहण्णए जोए असंखेज्जगुणे ४ ओरालियसरीरगस्स जहण्णए जोए असंखेज्जगुणे ५ वेउव्वियसरीरस्स जहण्णए जोए असंखेज्जगुणे ६ कम्मगसरीरस्स उक्कोसए जोए असंखेज्जगुणे ७ आहारगमीसस्स जहण्णए जोए असंखेज्जगुणे ८ तस्स चेव उक्कोसए जोए असंखेज्ज-गुणे ९–१०, ओरालियमीसगस्स, वेउव्वियमीसगस्स य एएसि णं उक्कोसए जोए दोण्ह वि तुल्ले असंखेज्जगुणे असच्चामोसमणजोगस्स जहण्णए जोए असंखेज्जगुणे १२ आहारगसरीरस्स जहण्णए जोए असंखेज्जगुणे १३–१९ तिविहस्स मणजोगस्स चउव्विहस्स वयजोगस्स–एएसि णं सत्तण्ह वि तुल्ले जहण्णए जोए असंखेज्जगुणे २० आहारग-सरीरस्स उक्कोसए जोए असंखेज्जगुणे २१–३० ओरालियसरीरस्स, वेउव्वियसरीरस्स चउव्विहस्स य मणजोगस्स, चउव्विहस्स य वइ-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जोगस्स–एएसि णं दसण्ह वि तुल्ले उक्कोसए जोए असंखेज्जगुणे ।

❀ 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति । ❀

॥ पणवीसइमे सए पढमो उद्देसो समत्तो ॥

भावार्थ–६ प्रश्न–हे भगवन् ! इन पन्द्रह प्रकार के योगों में कौन योग किस योग से जघन्य और उत्कृष्ट रूप से अल्प, बहुत, तुल्य या विशेषाधिक है ?

६ उत्तर–हे गौतम ! १ कार्मण-शरीर का जघन्य काय योग सब से अल्प है, २ उससे औदारिक-मिश्र का जघन्य योग असंख्यात गुण है, ३ उससे वैक्रिय-मिश्र का जघन्य योग असंख्यात गुण है । ४ उससे औदारिक शरीर का जघन्य योग असंख्य गुण है । ५ उससे वैक्रिय-शरीर का जघन्य योग असंख्य गुण है । ६ उससे कार्मण-शरीर का उत्कृष्ट योग असंख्येय गुण है । ७ उससे आहारक-मिश्र का जघन्य योग असंख्यात गुण है । ८ उससे आहारक-मिश्र का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुण है । ९–१० उससे औदारिक-मिश्र और वैक्रिय-मिश्र का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुण है और परस्पर तुल्य है । ११ उससे असत्यामृषा मनोयोग का जघन्य योग असंख्यात गुण है । १२ उससे आहारक-शरीर का जघन्य योग असंख्यात गुण है । १३–१९ उससे तीन प्रकार का मनोयोग और चार प्रकार का वचनयोग, इन सात का जघन्य योग असंख्यात गुण है और परस्पर तुल्य है । २० उससे आहारक-शरीर का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुण है । २१–३० उससे औदारिक-शरीर, वैक्रिय-शरीर, चार प्रकार का मनोयोग और चार प्रकार का वचन योग, इन दस का उत्कृष्ट योग असंख्यात गुण है और परस्पर तुल्य है ।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'–कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

विवेचन––योग–आत्म-प्रदेशों के परिस्पन्दन (कम्पन) को 'योग' कहते हैं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वीर्यान्तराय कर्म के क्षयोपशमादि की विचित्रता से योग के पन्द्रह भेद होते हैं। किसी जीव का योग दूसरे जीव की अपेक्षा जघन्य (अल्प) होता है और किसी जीव की अपेक्षा उत्कृष्ट होता है। उपर्युक्त जीवों के चौदह भेदों सम्बन्धी प्रत्येक के जघन्य और उत्कृष्ट भेद होने से अट्ठाईस भेद होते हैं। वहां योगों के अल्प-बहुत्व का कथन किया है। इनमें सूक्ष्म, अपर्याप्त एकेन्द्रिय का जघन्य योग सब से अल्प है, क्योंकि उनका शरीर सूक्ष्म और अपर्याप्त होने से (अपूर्ण होने के कारण) दूसरे सभी जीवों के योगों की अपेक्षा उसका योग सब से अल्प होता है और यह कार्मण-शरीर के व्यापार के समय में होता है। तत्पश्चात् समय-समय योगों की वृद्धि होती है और उत्कृष्ट योग तक बढ़ता है। अपर्याप्त बादर एकेन्द्रिय जीव का जघन्य योग, पूर्वोक्त की अपेक्षा असंख्यात गुण होता है। बादर होने के कारण उसका योग असंख्यात गुण बड़ा होता है। इसी प्रकार आगे भी जानना चाहिये।

यद्यपि पर्याप्त तेइन्द्रिय की उत्कृष्ट काया की अपेक्षा पर्याप्तक बेइन्द्रियों की काया तथा संज्ञी पञ्चेन्द्रिय और असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय की उत्कृष्ट काया, संख्यात योजन होने से संख्यात गुण ही होती है, तथापि यहाँ परिस्पन्दन (कम्पन-हलन चलन) रूप योग की विवक्षा होने से तथा क्षयोपशम विशेष की सामर्थ्य से असंख्यात गुण होने का कथन विरुद्ध नहीं है, क्योंकि यह कोई नियम नहीं है कि अल्पकाय वाले का परिस्पन्दन अल्प ही होता है, और महाकाय वाले का परिस्पन्दन बहुत ही होता है, क्योंकि इससे विपरीतता भी देखी जाती है। जैसे-अल्पकाय वाले का परिस्पन्दन महान् भी होता है और महाकाय वाले का परिस्पंदन अल्प भी होता है।

नरक क्षेत्र में प्रथम समय में उत्पन्न नैरयिक 'प्रथम समयोत्पन्नक' कहलाता है। इस प्रकार के दो नैरयिक जीव जिनकी उत्पत्ति विग्रहगति से अथवा ऋजुगति से आ कर अथवा एक की विग्रहगति से और दूसरे की ऋजुगति से आ कर हुई है, वे 'प्रथम समयोत्पन्नक' कहलाते हैं। जिन दोनों के योग समान हों, वे 'समयोगी' कहलाते हैं और जिनके विषम हों, वे 'विषमयोगी' कहलाते हैं।

आहारक नारक की अपेक्षा अनाहारक नैरयिक हीन-योग वाला होता है, क्योंकि जो नैरयिक ऋजुगति से आ कर आहारकपने उत्पन्न होता है, वह निरन्तर आहारक होने के कारण पुद्गलों से उपचित (बढ़ा हुआ) होता है। इसलिये वह अधिक योग वाला होता है। जो नैरयिक विग्रहगति से आ कर अनाहारकपने उत्पन्न होता है, वह अनाहारक होने से पुद्गलों से अनुपचित होता है, अतः हीन-योग वाला होता है। जो समान समय

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

की विग्रहगति से आ कर अनाहारकपने उत्पन्न होते हैं अथवा ऋजुगति से आ कर आहारकपने उत्पन्न होते हैं, वे दोनों एक दूसरे की अपेक्षा समान योग वाले होते हैं। जो ऋजुगति से आ कर आहारक उत्पन्न हुआ हैं और दूसरा विग्रहगति से आ कर अनाहारक उत्पन्न हुआ है, वह उसकी अपेक्षा उपचित होने से अत्यधिक विषम-योगी होता है। सूत्र में हीनता और अधिकता का कथन कर दिया गया है। समान धर्मता रूप तुल्यता प्रसिद्ध होने के कारण उसका पृथक् उल्लेख नहीं किया है।

आगे प्रकारान्तर से पन्द्रह प्रकार के योग का कथन कर के उसका अल्प-बहुत्व बताया गया है। यहाँ परिस्पन्दन रूप योग की विवक्षा की गई है।

## ॥ पच्चीसवें शतक का पहला उद्देशक सम्पूर्ण ॥

# शतक २५ उद्देशक २

## द्रव्य प्ररूपणा

१ प्रश्न–कइविहा णं भंते ! दव्वा पण्णत्ता ?

१ उत्तर–गोयमा ! दुविहा दव्वा पण्णत्ता, तं जहा–जीवदव्वा य अजीवदव्वा य।

२ प्रश्न–अजीवदव्वा णं भंते ! कइविहा पण्णत्ता ?

२ उत्तर–गोयमा ! दुविहा पण्णत्ता, तं जहा–रूविअजीवदव्वा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

य अरूविअजीवदव्वा य। एवं एएणं अभिलावेणं जहा अजीवपज्जवा जाव से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ–'ते णं णो संखेज्जा, णो असंखेज्जा, अणंता'।

३ प्रश्न–जीवदव्वा णं भंते ! किं संखेज्जा, असंखेज्जा, अणंता?

३ उत्तर–गोयमा ! णो संखेज्जा, णो असंखेज्जा, अणंता।

प्रश्न–केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ–'जीवदव्वा णं णो संखेज्जा, णो असंखेज्जा, अणंता'?

उत्तर–गोयमा ! असंखेज्जा णेरइया जाव असंखेज्जा वाउकाइया अणंता वणस्सइकाइया, असंखेज्जा बेइंदिया, एवं जाव वेमाणिया, अणंता सिद्धा, से तेणट्ठेणं जाव 'अणंता'।

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! द्रव्य कितने प्रकार के कहे गये हैं ?

१ उत्तर–हे गौतम ! द्रव्य दो प्रकार के कहे गये हैं। यथा–जीव-द्रव्य और अजीव-द्रव्य।

२ प्रश्न–हे भगवन् ! अजीव द्रव्य कितने प्रकार के कहे गये हैं ?

२ उत्तर–हे गौतम ! दो प्रकार के कहे गये हैं। यथा–रूपी अजीव-द्रव्य और अरूपी अजीव-द्रव्य। इस अभिलाप (सूत्रपाठ) द्वारा प्रज्ञापना सूत्र के पांचवें पद में कथित अजीव पर्यायों के अनुसार, यावत् हे गौतम ! इस कारण कहा जाता है कि अजीव-द्रव्य संख्यात नहीं, असंख्यात नहीं, किंतु अनन्त हैं।

३ प्रश्न–हे भगवन् ! जीव-द्रव्य संख्यात हैं, असंख्यात हैं या अनन्त हैं ?

३ उत्तर–हे गौतम ! जीव-द्रव्य संख्यात नहीं, असंख्यात नहीं, अनन्त हैं।

प्रश्न–हे भगवन् ! क्या कारण है कि जीव-द्रव्य संख्यात नहीं, असंख्यात

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नहीं, अनन्त हैं ?

उत्तर–हे गौतम ! नैरयिक असंख्यात हैं यावत् वायुकायिक असंख्यात हैं और वनस्पतिकायिक अनन्त हैं। बेइन्द्रिय यावत् वैमानिक असंख्यात हैं तथा सिद्ध अनन्त हैं। इस कारण यावत् जीव अनन्त हैं।

## जीव, अजीव का परिभोग

४ प्रश्न–जीवदव्वा णं भंते ! अजीवदव्वा परिभोगत्ताए हव्वमागच्छंति, अजीवदव्वाणं जीवदव्वा परिभोगत्ताए हव्वमागच्छंति ?

४ उत्तर–गोयमा ! जीवदव्वाणं अजीवदव्वा परिभोगत्ताए हव्वमागच्छंति, णो अजीवदव्वाणं जीवदव्वा परिभोगत्ताए हव्वमागच्छंति।

प्रश्न–से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ–जाव 'हव्वमागच्छंति' ?

उत्तर–गोयमा ! जीवदव्वा णं अजीवदव्वे परियाइयंति, अजीवदव्वे परियाइइत्ता ओरालियं वेउव्वियं आहारगं तेयगं कम्मगं, सोइंदियं जाव फासिंदियं, मणजोगं, वइजोगं, कायजोगं, आणापाणुत्तं च णिव्वत्तयंति, से तेणट्ठेणं जाव 'हव्वमागच्छंति'।

कठिन शब्दार्थ–परिभोगत्ताए–परिभोग रूप से, हव्वं–शीघ्र, परियाइयंति–ग्रहण करते हैं।

भावार्थ–४ प्रश्न–हे भगवन् ! अजीव-द्रव्य, जीव-द्रव्यों के परिभोग में आते हैं या जीव-द्रव्य, अजीव-द्रव्यों के परिभोग में आते हैं ?

४ उत्तर–हे गौतम ! अजीव-द्रव्य, जीव-द्रव्यों के परिभोग में आते हैं,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

परन्तु जीव-द्रव्य, अजीव-द्रव्यों के परिभोग में नहीं आते ।

प्रश्न–हे भगवन् ! क्या कारण है कि यावत् 'जीव-द्रव्य, अजीव-द्रव्यों के परिभोग में नहीं आते ?'

उत्तर–हे गौतम ! जीव-द्रव्य, अजीव-द्रव्यों को ग्रहण करते हैं । ग्रहण कर के उनको औदारिक, वैक्रिय, आहारक, तैजस् और कार्मण––इन पाँच शरीर और श्रोत्रेन्द्रिय यावत् स्पर्शनेन्द्रिय––इन पाँच इन्द्रिय, मनयोग, वचन-योग, काययोग और श्वासोच्छ्वास में परिणमाते हैं । इस कारण अजीव-द्रव्य, जीव-द्रव्यों के परिभोग में आते हैं, किन्तु जीव-द्रव्य, अजीव-द्रव्यों के परिभोग में नहीं आते ।

५ प्रश्न–णेरइयाणं भंते ! अजीवदव्वा परिभोगत्ताए हव्वमागच्छंति, अजीवदव्वाणं णेरइया परिभोगत्ताए० ?

५ उत्तर–गोयमा ! णेरइयाणं अजीवदव्वा जाव हव्वमागच्छंति, णो अजीवदव्वाणं णेरइया हव्वमागच्छंति ।

प्रश्न–से केणट्ठेणं० ?

उत्तर–गोयमा ! णेरइया अजीवदव्वे परियाइयंति, अजीवदव्वे परियाइइत्ता वेउव्विय-तेयग-कम्मगं सोइंदियं जाव फासिंदियं आणापाणुत्तं च णिव्वत्तयंति, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ––एवं जाव वेमाणिया । णवरं सरीरइंदियजोगा भाणियव्वा जस्स जे अत्थि ।

भावार्थ–५ प्रश्न–हे भगवन् ! अजीव-द्रव्य, नैरयिकों के परिभोग में आते हैं, या नैरयिक अजीव-द्रव्यों के परिभोग में आते हैं ?

५ उत्तर–हे गौतम ! अजीव-द्रव्य, नैरयिकों के परिभोग में आते हैं, परंतु

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नैरयिक, अजीव-द्रव्यों के परिभोग में नहीं आते।

प्रश्न–हे भगवन् ! क्या कारण कि यावत् परिभोग में नहीं आते ?

उत्तर–हे गौतम ! नैरयिक, अजीव-द्रव्यों को ग्रहण करते हैं, ग्रहण कर के उन्हें वैक्रिय, तेजस् और कार्मण शरीर, श्रोत्रेन्द्रिय यावत् स्पर्शनेन्द्रिय, तीन योग और श्वासोच्छ्वास में परिणत करते हैं। इस कारण हे गौतम ! पूर्वोक्त कथन है। इसी प्रकार यावत् वैमानिक पर्यन्त, किंतु जिसके जितने शरीर, इन्द्रिय और योग हों, उसके उतने जानना चाहिये।

विवेचन–प्रज्ञापना सूत्र के पाँचवें पद में जीव-द्रव्य और अजीव-द्रव्यों के पर्यायों का कथन किया गया है, उसी प्रकार यहाँ भी जानना चाहिये। जीव-द्रव्य सचेतन है और अजीव-द्रव्य अचेतन है। इसलिये जीव-द्रव्य, अजीव-द्रव्यों को ग्रहण कर के उनको अपने शरीरादि रूप में परिणत करते हैं। यह उनका परिभोग है। जीव-द्रव्य परिभोक्ता है और अजीव-द्रव्य अचेतन होने से ग्रहण करने योग्य है, अतः वे भोग्य हैं। इस प्रकार जीव-द्रव्य और अजीव-द्रव्यों में भोक्तृ-भोग्य भाव है।

## असंख्य लोक में अनन्त द्रव्य

६ प्रश्न–से णूणं भंते ! असंखेज्जे लोए अणंताइं दव्वाइं आगासे भइयव्वाइं ?

६ उत्तर–हंता गोयमा ! असंखेज्जे लोए जाव भइयव्वाइं।

७ प्रश्न–लोगस्स णं भंते ! एगंमि आगासपएसे कइदिसिं पोग्गला चिज्जंति ?

७ उत्तर–गोयमा ! णिव्वाघाएणं छद्दिसिं, वाघायं पडुच्च सिय

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तिदिसिं, सिय चउदिसिं, सिय पंचदिसिं ।

८ प्रश्न–लोगस्स णं भंते ! एगंमि आगासपएसे कइदिसिं पोग्गला छिज्जंति ?

८ उत्तर–एवं चेव, एवं उवचिज्जंति, एवं अवचिज्जंति ?

कठिन शब्दार्थ–चिज्जंति–एकत्रित होते हैं, छिज्जंति–पृथक् होते हैं ।

भावार्थ–६ प्रश्न–हे भगवन् ! असंख्य लोक में अनन्त द्रव्य रह सकते हैं ?

६ उत्तर–हे गौतम ! असंख्य प्रदेशात्मक लोकाकाश में अनन्त द्रव्य रह सकते हैं ।

७ प्रश्न–हे भगवन् ! लोक के एक आकाश-प्रदेश में पुद्गल कितनी दिशाओं से आ कर एकत्रित होते हैं ?

७ उत्तर–हे गौतम ! निर्व्याघात से (व्याघात–प्रतिबन्ध न हो, तो) छहों दिशाओं से और व्याघात हो, तो कदाचित् तीन दिशाओं से, कदाचित् चार दिशाओं से और कदाचित् पांच दिशाओं से पुद्गल आ कर एकत्रित होते हैं ।

८ प्रश्न हे–भगवन् ! लोक के एक आकाश-प्रदेश में एकत्रित पुद्गल कितनी दिशाओं में पृथक् होते हैं ?

८ उत्तर–हे गौतम ! पूर्ववत् । इस प्रकार (अन्य पुद्गलों के मिलने से) पुद्गल स्कन्ध रूप में उपचित होते हैं और पृथक् होने पर अपचित होते हैं ।

विवेचन–असंख्य प्रदेशात्मक लोकाकाश में अनन्त द्रव्य समा सकते हैं । इस विषय में प्रश्न पूछने का आशय यह है कि असंख्य प्रदेशात्मक लोकाकाश में अनन्त द्रव्य कैसे समा सकते हैं ? इसका समाधान यह है कि जैसे–एक कमरा एक दीपक के प्रकाश से परिपूर्ण है, उसमें दो, चार, दस आदि दीपक विशेष रखने पर उनके प्रकाश के पुद्गल भी उसी कमरे में समा जाते हैं, क्योंकि पुद्गल परिणाम की विचित्रता है । इसी प्रकार असंख्य प्रदेशात्मक लोक में अनन्त द्रव्य समा जाते हैं । इसमें किसी प्रकार का विरोध नहीं है । पुद्गलों का परिणाम इसी प्रकार का है । असंख्य प्रदेशात्मक लोक में अनन्त द्रव्य रह जाते हैं, अतः एक-एक प्रदेश में उनका चयापचय होता हैं । बहुत-सी दिशाओं से आ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कर एक स्थान पर इकट्ठा होना (एक आकाश-प्रदेश में समा जाना) 'चय' कहलाता है। वहां से पृथक् होना 'छेद' कहलाता है। स्कन्ध रूप पुद्गल, दूसरे पुद्गलों के सम्पर्क से बढ़ जाते हैं, यह 'उपचय' कहलाता है और स्कन्ध रूप पुद्गलों में से प्रदेशों के पृथक् हो जाने से वह स्कन्ध कम हो जाता है, इसे 'अपचय' कहते हैं। इन चार बातों को बताने के लिये शास्त्रकार ने चार शब्द दिये हैं, वे क्रमशः इस प्रकार हैं–'चिज्जंति, छिज्जंति, उवचिज्जंति, अवचिज्जंति'।

## जीव, स्थित द्रव्य ग्रहण करता है या अस्थित

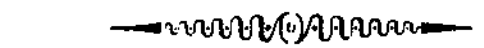

**९ प्रश्न–जीवे णं भंते ! जाइं दव्वाइं ओरालियसरीरत्ताए गेण्हइ ताइं किं ठियाइं गेण्हइ, अठियाइं गेण्हइ ?**

**९ उत्तर–गोयमा ! ठियाइं पि गेण्हइ, अठियाइं पि गेण्हइ।**

**भावार्थ–९ प्रश्न–हे भगवन् ! जीव जिन पुद्गल द्रव्यों को औदारिक शरीरपने ग्रहण करता है, वह स्थित द्रव्यों को ग्रहण करता है या अस्थित द्रव्यों को ?**

**९ उत्तर–हे गौतम ! वह स्थित द्रव्यों को भी ग्रहण करता है और अस्थित द्रव्यों को भी।**

**विवेचन**–जितने आकाश क्षेत्र में जीव रहा हुआ है, उस क्षेत्र के अन्दर रहे हुए, जो पुद्गल द्रव्य हैं, वे 'स्थित द्रव्य' कहलाते हैं और उससे बाहर के क्षेत्र में रहे हुए पुद्गल द्रव्य अस्थित द्रव्य' कहलाते हैं। वहां से खींच कर जीव उनको ग्रहण करता है। इस विषय में किन्हीं आचार्यों का ऐसा कहना है कि जो गति रहित द्रव्य हैं, वे 'स्थित द्रव्य' कहलाते है और जो गति सहित द्रव्य हैं, वे 'अस्थित द्रव्य' कहलाते हैं।

**१० प्रश्न–ताइं भंते ! किं दव्वओ गेण्हइ, खेत्तओ गेण्हइ,**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कालओ गेण्हइ, भावओ गेण्हइ ?

१० उत्तर-गोयमा ! दव्वओ वि गेण्हइ, खेत्तओ वि गेण्हइ, कालओ वि गेण्हइ भावओ वि गेण्हइ । ताइं दव्वओ अणंतपएसियाइं दव्वाइं, खेत्तओ असंखेज्जपएसोगाढाइं-एवं जहा पण्णवणाए पढमे आहारुद्देसए, जाव णिव्वाघाएणं छद्दिसिं, वाघायं पडुच्च सिय तिदिसिं सिय चउदिसिं, सिय पंचदिसिं ।

भावार्थ-१० प्रश्न-हे भगवन् ! क्या वह उन द्रव्यों को द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से और भाव से ग्रहण करता है ?

१० उत्तर-हे गौतम ! वह उन द्रव्यों को द्रव्य से भी, क्षेत्र, काल और भाव से भी ग्रहण करता है । वह द्रव्य से अनन्त प्रदेशी द्रव्यों को ग्रहण करता है । क्षेत्र से असंख्य प्रदेशावगाढ द्रव्यों को ग्रहण करता है । इस प्रकार प्रज्ञापना सूत्र के अट्ठाईसवें पद के पथम आहारोद्देशक के अनुसार, यावत् निर्व्याघात से छहों दिशाओं से और व्याघात हो, तो कदाचित् तीन, कदाचित् चार और कदाचित् पांच दिशाओं से आये हुए पुद्गलों को ग्रहण करता है ।

११ प्रश्न-जीवे णं भंते ! जाइं दव्वाइं वेउव्वियसरीरत्ताए गेण्हइ ताइं किं ठियाइं गेण्हइ, अठियाइं गेण्हइ ?

११ उत्तर-एवं चेव, णवरं णियमं छद्दिसिं, एवं आहारगसरीरत्ताए वि ।

भावार्थ-११ प्रश्न-हे भगवन् ! जीव, जिन द्रव्यों को वैक्रिय शरीरपने ग्रहण करता है, तो क्या स्थित द्रव्यों को ग्रहण करता है या अस्थित द्रव्यों को ?

११ उत्तर-हे गौतम ! पूर्ववत् । विशेष में जिन द्रव्यों को वैक्रिय

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शरीरपने ग्रहण करता है, वे नियम से छहों दिशाओं से आये हुए होते हैं। इसी प्रकार आहारक शरीर के विषय में भी समझना चाहिये।

**विवेचन**–वैक्रिय-शरीर वाला, वैक्रिय-शरीर के योग्य छहों दिशाओं से आये हुए द्रव्यों को ग्रहण करता है, इस कथन का अभिप्राय यह है कि उपयोग पूर्वक वैक्रिय-शरीर करने वाला प्रायः पञ्चेन्द्रिय ही होता है और वह त्रसनाड़ी के मध्यभाग में होता है। इसलिए उसके छहों दिशाओं का आहार संभव है। कुछ आचार्यों का ऐसा मत है कि–– त्रसनाड़ी के बाहर भी वायुकाय के वैक्रिय शरीर होता है, किन्तु अप्रधानता के कारण उसकी यहाँ विवक्षा नहीं की गई है। तथा कुछ आचार्यों का ऐसा मत है कि–– लोकान्त के निष्कुटों (कोणों) में वैक्रिय-शरीरी वायु नहीं होती। यह पिछला अभिप्राय ठीक मालूम होता है।

१२ प्रश्न–जीवे णं भंते ! जाइं दव्वाइं तेयगसरीरत्ताए गिण्हइ-पुच्छा।

१२ उत्तर–गोयमा ! ठियाइं गेण्हइ, णो अठियाइं गेण्हइ, सेसं जहा ओरालियसरीरस्स। कम्मगसरीरे एवं चेव। एवं जाव भावओ वि गिण्हइ।

**भावार्थ**–१२ प्रश्न–हे भगवन् ! जीव, जिन द्रव्यों को तेजस् शरीरपने ग्रहण करता है, इत्यादि ?

१२ उत्तर–हे गौतम ! वह स्थित द्रव्यों को ग्रहण करता है, अस्थित को नहीं। शेष कथन औदारिक-शरीरवत्। कार्मण-शरीर के विषय में भी इसी प्रकार। इस प्रकार यावत् 'भाव से भी ग्रहण करता है' पर्यन्त।

१३ प्रश्न–जाइं दव्वाइं दव्वओ गेण्हइ ताइं किं एगपएसियाइं गेण्हइ, दुपएसियाइं गेण्हइ ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१३ उत्तर–एवं जहा भासापए, जाव 'आणुपुव्विं गेण्हइ, णो अणाणुपुव्विं गेण्हइ'।

भावार्थ–१३ प्रश्न–हे भगवन् ! जिन द्रव्यों को जीव ग्रहण करता है, वे एक प्रदेश वाले होते हैं, या दो प्रदेशी, इत्यादि ?

१३ उत्तर–हे गौतम ! प्रज्ञापना सूत्र के 'भाषा' नामक ग्यारहवें पद के अनुसार, यावत् आनुपूर्वी (क्रमपूर्वक) ग्रहण करता है, अनानुपूर्वी (क्रम रहित) नहीं।

१४ प्रश्न–ताइं भंते ! कइदिसिं गेण्हइ ?

१४ उत्तर–गोयमा ! णिव्वाघाएणं० जहा ओरालियस्स।

भावार्थ–१४ प्रश्न–हे भगवन् ! जीव कितनी दिशाओं से आये हुए द्रव्य ग्रहण करता है ?

१४ उत्तर–हे गौतम ! निर्व्याघात हो तो छहों दिशाओं से आये हुए द्रव्यों को ग्रहण करता है, इत्यादि औदारिक-शरीरवत्।

१५ प्रश्न–जीवे णं भंते ! जाइं दव्वाइं सोइंदियत्ताए गेण्हइ०?

१५ उत्तर–जहा वेउव्वियसरीरं, एवं जाव जिब्भिंदियत्ताए, फासिंदियत्ताए जहा ओरालियसरीरं, मणजोगत्ताए जहा कम्मग-सरीरं। णवरं णियमं छद्दिसिं, एवं वइजोगत्ताए वि, कायजोगत्ताए जहा ओरालियसरीरस्स।

भावार्थ–१५ प्रश्न–हे भगवन् ! जीव जिन द्रव्यों को श्रोत्रेन्द्रियपने ग्रहण करता है, इत्यादि ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१५ उत्तर-हे गौतम ! वैक्रिय-शरीरवत् यावत् जिव्हेन्द्रिय पर्यन्त। स्पर्शनेन्द्रिय के विषय में औदारिक-शरीर के समान। मनोयोग के विषय में कार्मण-शरीरवत्। यह नियम से छहों दिशाओं से आये हुए द्रव्यों को ग्रहण करता है। इसी प्रकार वचन योग के द्रव्य भी। काययोग के द्रव्य औदारिक-शरीर के समान हैं।

१६ प्रश्न-जीवे णं भंते ! जाइं दव्वाइं आणापाणुत्ताए गेण्हइ। जहेव ओरालियसरीरत्ताए, जाव सिय पंचदिसिं।

१६ उत्तर-केइ चउवीसदंडएणं एयाणि पयाणिभण्णंति-'जस्स जं अत्थि'।

❀ 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति। ❀

॥ पणवीसइमे सए बीओ उद्देसो समत्तो ॥

भावार्थ-१६ प्रश्न-हे भगवन् ! जीव, जिन द्रव्यों को श्वासोच्छ्वासपने ग्रहण करता है, इत्यादि० ?

१६ उत्तर-हे गौतम ! औदारिक-शरीरवत् यावत् कदाचित् तीन, चार या पांच दिशा से आये हुए द्रव्य ग्रहण करता है। कोई-कोई आचार्य-इन पदों को चौबीस दण्डक में कहते है। यावत् '*जस्स जं अत्थि*' अर्थात् 'जिसके जो हो, उसके लिये वही कहना चाहिये'-

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है। हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'-कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं।

**विवेचन**—तेजस्-शरीर जीव के अवगाह क्षेत्र के भीतर रहे हुए द्रव्यों को ही ग्रहण करता है, उससे बाहर रहे हुए द्रव्यों को ग्रहण नहीं करता। क्योंकि उन्हें खीचने का स्वभाव उसमें नहीं है। अथवा यह स्थित द्रव्यों को ग्रहण करता है, अस्थित को नहीं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

क्योंकि उसका इसी प्रकार का स्वभाव होता है ।

आगे जिन शरीरों के लिये जिनका अतिदेश किया गया है, तदनुसार ' स्थित या अस्थित आदि द्रव्यों को ग्रहण करता है'––यह जानना चाहिये । यहां पाँच शरीर, पाँच इन्द्रियां, तीन योग और श्वासोच्छ्वास, ये चौदह पद हैं । इन चौदह पद सम्बन्धी चौदह दण्डक हैं, जिनका कथन यथा-योग्य रूप से किया गया है ।

॥ पच्चीसवें शतक का दूसरा उद्देशक सम्पूर्ण ॥

# शतक २५ उद्देशक ३

## संस्थान के भेद और अल्प-बहुत्व

**१ प्रश्न–कइ णं भंते ! संठाणा पण्णत्ता ?**

**१ उत्तर–गोयमा ! छ संठाणा पण्णत्ता, तं जहा–१ परिमंडले, २ वट्टे, ३ तंसे, ४ चउरंसे, ५ आयते, ६ अणित्थंथे ।**

**कठिन शब्दार्थ––अणित्थंथे**––अनित्थंस्थ––अर्थात् परिमण्डल आदि संस्थानों से अतिरिक्त संस्थान ।

**भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! संस्थान कितने प्रकार के कहे हैं ?**

**१ उत्तर–हे गौतम ! संस्थान छह प्रकार के कहे हैं । यथा–परिमण्डल, वृत्त, त्र्यस्र, चतुरस्र, आयत और अनित्थंस्थ ।**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२ प्रश्न-परिमंडला णं भंते ! संठाणा दव्वट्ठयाए किं संखेज्जा, असंखेज्जा, अणंता ?

२ उत्तर-गोयमा ! णो संखेज्जा, णो असंखेज्जा, अणंता ।

भावार्थ-२ प्रश्न-हे भगवन् ! परिमण्डल संस्थान द्रव्यार्थ रूप से संख्यात हैं, असंख्यात हैं, या अनन्त हैं ?

२ उत्तर-हे गौतम ! संख्यात नहीं, असंख्यात भी नहीं, किन्तु अनन्त हैं ।

३ प्रश्न-वट्टा णं भंते ! संठाणा० ?

३ उत्तर-एवं चेव, एवं जाव अणित्थंथा, एवं पएसट्ठयाए वि, एवं दव्वट्ठपएसट्ठयाए वि ।

भावार्थ-३ प्रश्न-हे भगवन् ! वृत्त संस्थान द्रव्यार्थ रूप से संख्यात हैं, असंख्यात हैं या अनन्त हैं ?

३ उत्तर-हे गौतम ! संख्यात नहीं, असंख्यात भी नहीं, अनन्त हैं । इसी प्रकार यावत् अनित्थंस्थ संस्थान पर्यन्त । इसी प्रकार प्रदेशार्थ रूप से और द्रव्यार्थप्रदेशार्थ रूप से भी जानना चाहिये ।

४ प्रश्न-एएसि णं भंते ! परिमंडल-वट्ट-तंस-चउरंस आयत-अणित्थंथाणं संठाणाणं दव्वट्ठयाए पएसट्ठयाए दव्वट्ठपएसट्ठयाए कयरे कयरेहिंतो जाव विसेसाहिया वा ?

४ उत्तर-गोयमा ! सव्वत्थोवा परिमंडलसंठाणा दव्वट्ठयाए, वट्टा संठाणा दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा, चउरंसा संठाणा दव्वट्ठयाए संखेज्ज-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गुणा, तंसा संठाणा दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा, आयतसंठाणा दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा, अणित्थंथा संठाणा दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा। पएसट्ठयाए सव्वत्थोवा परिमंडला संठाणा पएसट्ठयाए, वट्टा संठाणा पएसट्ठयाए संखेज्जगुणा, जहा दव्वट्ठयाए तहा पएसट्ठयाए वि, जाव अणित्थंथा संठाणा पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा । दव्वट्ठ-पएसट्ठयाए सव्वत्थोवा परिमंडला संठाणा दव्वट्ठयाए, सो चेव गमओ भाणियव्वो, जाव अणित्थंथा संठाणा दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा, अणित्थंथेहिंतो संठाणेहिंतो दव्वट्ठयाए परिमंडला संठाणा पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा, वट्टा संठाणा पएसट्ठयाए संखेज्जगुणा सो, चेव पएसट्ठयाए गमओ भाणियव्वो जाव अणित्थंथा संठाणा पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा।

भावार्थ-४ प्रश्न-हे भगवन् ! परिमण्डल, वृत्त, त्र्यस्र, चतुरस्र, आयत और अनित्थंस्थ, इन संस्थानों में द्रव्यार्थ, प्रदेशार्थ और द्रव्यार्थ-प्रदेशार्थ रूप से कौन संस्थान किन संस्थानों से अल्प, बहुत, तुल्य या विशेषाधिक हैं ?

४ उत्तर-हे गौतम ! १ द्रव्यार्थ रूप से परिमण्डल संस्थान सभी से अल्प है, २ उससे वृत्त संस्थान द्रव्यार्थ रूप से संख्यात गुण है, ३ उससे चतुरस्र संस्थान द्रव्यार्थ रूप से संख्यात गुण है, ४ उससे त्र्यस्र संस्थान द्रव्यार्थ रूप से संख्यात गुण है, ५ उससे आयत संस्थान द्रव्यार्थ रूप से संख्यात गुण है, ६ उससे अनित्थंस्थ संस्थान द्रव्यार्थ रूप से असंख्यात गुण है ।

प्रदेशार्थ रूप-१ परिमण्डल संस्थान प्रदेशार्थ रूप से सभी से अल्प है, २ उससे वृत्त संस्थान प्रदेशार्थ रूप से संख्यात गुण है, इत्यादि जिस प्रकार द्रव्यार्थ रूप से कहा है, उसी प्रकार प्रदेशार्थ रूप से भी यावत् अनित्थंस्थ संस्थान प्रदेशार्थ रूप से असंख्यात गुण है पर्यंत ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

**द्रव्यार्थ प्रदेशार्थ रूप से-परिमण्डल संस्थान सभी से अल्प है, इत्यादि द्रव्यार्थ सम्बन्धी पूर्वोक्त गमक (पाठ) जानना चाहिये, यावत् 'अनित्थंस्थ संस्थान द्रव्यार्थ रूप से असंख्यात गुण है। द्रव्यार्थ रूप अनित्थंस्थ संस्थान से परिमण्डल संस्थान प्रदेशार्थ रूप से असंख्यात गुण है, उससे वृत्त संस्थान प्रदेशार्थ रूप से संख्यात गुण है' इत्यादि पूर्वोक्त प्रदेशार्थ रूप का गमक यावत् 'अनित्थंस्थ संस्थान प्रदेशार्थ रूप से असंख्यात गुण है' पर्यन्त।**

**विवेचन**-आकार को 'संस्थान' कहते हैं। जीव के छह संस्थान होते हैं और अजीव के भी छह संस्थान होते हैं। यहां अजीव के छह संस्थान कहे गये है। यथा-

**परिमण्डल**-चूड़ी जैसा गोल आकार।

**वृत्त**-कुम्भकार के चक्र जैसा गोल आकार।

**त्र्यस्र**-सिंघाड़े जैसा त्रिकोण आकार।

**चतुरस्र**-बाजोट जैसा चतुष्कोण आकार।

**आयत**-लकड़ी जैसा लम्बा आकार।

**अनित्थंस्थ**-अनियत आकार अर्थात् परिमण्डल आदि से भिन्न विचित्र प्रकार का आकार। संस्थान द्रव्यार्थ रूप से, प्रदेशार्थ रूप से और उभय रूप से (द्रव्यार्थ प्रदेशार्थ रूप से) अनन्त हैं। इसके पश्चात् संस्थानों की अवगाहना का विचार किया है। जो संस्थान जिस संस्थान की अपेक्षा बहु प्रदेशावगाही होता हैं, वह स्वाभाविक रूप से थोड़ा होता है। परिमण्डल संस्थान जघन्य बीस प्रदेशावगाही होता है और वृत्त, चतुरस्र और आयत संस्थान जघन्य से अनुक्रमशः पांच, चार, तीन और दो प्रदेशावगाही होता है। अतः परिमण्डल संस्थान बहुतर प्रदेशावगाही होने के कारण सब से थोड़ा है। उससे वृत्त आदि संस्थान अल्प-अल्प प्रदेशावगाही होने से संख्यात गुण अधिक-अधिक होते हैं। अनित्थंस्थ संस्थान वाले पदार्थ, परिमण्डलादि द्वयादि संयोग वाले होने से उनसे बहुत अधिक हैं। इसलिये यह उन सब से असंख्यात गुण अधिक है। प्रदेश की अपेक्षा अल्प-बहुत्व भी इसी प्रकार है। क्योंकि प्रदेश द्रव्यों के अनुसार होते हैं और इसी प्रकार द्रव्यार्थ-प्रदेशार्थ रूप से भी अल्प-बहुत्व जानना चाहिये। किन्तु द्रव्यार्थ रूप के अनित्थंस्थ संस्थान से परिमण्डल प्रदेशार्थ रूप से असंख्यात गुण है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# संस्थान पाँच

५ प्रश्न–कइ णं भंते ! संठाणा पण्णत्ता ?

५ उत्तर–गोयमा ! पंच संठाणा पण्णत्ता, तं जहा–परिमंडले, जाव आयये ।

६ प्रश्न–परिमंडला णं भंते ! संठाणा किं संखेज्जा, असंखेज्जा, अणंता ?

६ उत्तर–गोयमा ! णो संखेज्जा, णो असंखेज्जा, अणंता ।

७ प्रश्न–वट्टा णं भंते ! संठाणा किं संखेज्जा० ?

७ उत्तर–एवं चेव, एवं जाव आयया ।

भावार्थ–५ प्रश्न–हे भगवन् ! संस्थान कितने प्रकार के कहे हैं ?

५ उत्तर–हे गौतम ! संस्थान पांच कहे हैं । यथा–परिमण्डल यावत् आयत ।

६ प्रश्न–हे भगवन् ! परिमण्डल संस्थान संख्यात हैं, असंख्यात हैं, या अनन्त हैं ?

६ उत्तर–हे गौतम ! संख्यात नहीं, असंख्यात भी नहीं, परन्तु अनन्त हैं ।

७ प्रश्न–हे भगवन् ! वृत्त संस्थान संख्यात हैं, असंख्यात हैं, या अनन्त हैं ?

७ उत्तर–हे गौतम ! पूर्ववत् । यावत् आयत संस्थान पर्यंत ।

८ प्रश्न–इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए परिमंडला संठाणा किं संखेज्जा, असंखेज्जा, अणंता ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

८ उत्तर-गोयमा ! णो संखेज्जा, णो असंखेज्जा, अणंता ।

९ प्रश्न-वट्टा णं भंते ! संठाणा किं संखेज्जा, असंखेज्जा० ?

९ उत्तर-एवं चेव, एवं जाव आयया ।

१० प्रश्न-सक्करप्पभाए णं भंते ! पुढवीए परिमंडला संठाणा०?

१० उत्तर-एवं चेव, एवं जाव आयया । एवं जाव अहेसत्तमाए ।

११ प्रश्न-सोहम्मे णं भंते ! कप्पे परिमंडला संठाणा० ?

११ उत्तर-एवं चेव, एवं जाव अच्चुए ।

१२ प्रश्न-गेवेज्जविमाणा णं भंते ! परिमंडलसंठाणा० ?

१२ उत्तर-एवं चेव, एवं अणुत्तरविमाणेसु वि, एवं ईसिपब्भाराए वि ।

भावार्थ-८ प्रश्न-हे भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी में परिमण्डल संस्थान संख्यात हैं, असंख्यात है, या अनन्त हैं ?

८ उत्तर-हे गौतम ! संख्यात नहीं, असंख्यात भी नहीं, किन्तु अनन्त हैं ।

९ प्रश्न-हे भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी में वृत्त संस्थान संख्यात हैं, असंख्यात हैं, या अनन्त हैं ?

९ उत्तर-हे गौतम ! पूर्ववत् यावत् आयत संस्थान पर्यंत ।

१० प्रश्न-हे भगवन् ! शर्कराप्रभा पृथ्वी में परिमण्डल संस्थान संख्यात हैं, इत्यादि ?

१० उत्तर-हे गौतम ! पूर्ववत् यावत् आयत संस्थान तक और अधः-सप्तम पृथ्वी पर्यंत ।

११ प्रश्न-हे भगवन् ! सौधर्मकल्प में परिमण्डल संस्थान संख्यात हैं, इत्यादि ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

११ उत्तर-हे गौतम ! पूर्ववत्, यावत् आयत संस्थान तक और अच्युत-कल्प पर्यन्त ।

१२ प्रश्न-हे भगवन् ! ग्रैवेयक विमानों में परिमण्डल संस्थान संख्यात है, इत्यादि ?

१२ उत्तर-हे गौतम ! पूर्ववत्, अनुत्तर विमान तथा ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी पर्यन्त ।

विवेचन--संस्थान की प्ररूपणा इसके पूर्व भी की जा चुकी है, किंतु यहाँ रत्न-प्रभादि के विषय में प्ररूपणा करने की इच्छा से पुनः संस्थान सम्बन्धी प्रश्न किया है । जिसके उत्तर में पाँच संस्थानों का ही नाम निर्देश किया है । यहाँ अनित्थंस्थ संस्थान का कथन नहीं करने का कारण यह है कि वह परिमण्डल आदि दूसरे संस्थानों के संयोग से बनता है । अतः उसकी विवक्षा नहीं की गई ।

१३ प्रश्न-जत्थ णं भंते ! एगे परिमंडले संठाणे जवमज्झे तत्थ परिमंडला संठाणा किं संखेज्जा, असंखेज्जा, अणंता ?

१३ उत्तर-गोयमा ! णो संखेज्जा, णो असंखेज्जा, अणंता ।

१४ प्रश्न-वट्टा णं भंते ! संठाणा किं संखेज्जा, असंखेज्जा० ?

१४ उत्तर-एवं चेव, एवं जाव आयया ।

१५ प्रश्न-जत्थ णं भंते ! एगे वट्टे संठाणे जवमज्झे तत्थ परिमंडला संठाणा० ?

१५ उत्तर-एवं चेव, वट्टा संठाणा एवं चेव, एवं जाव आयया । एवं एक्केक्केणं संठाणेणं पंच वि चारेयव्वा ।

कठिन शब्दार्थ-जवमज्झे-यवमध्य, चारेयव्वा-विचार करना चाहिए ।

भावार्थ-१३ प्रश्न-हे भगवन् ! जहाँ एक यवाकार (जौ के आकार)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

परिमण्डल संस्थान है, वहाँ अन्य परिमण्डल संस्थान संख्यात हैं, असंख्यात हैं, या अनन्त हैं ?

१३ उत्तर–हे गौतम ! संख्यात नहीं, असंख्यात भी नहीं, अनन्त हैं ।

१४ प्रश्न–हे भगवन् ! वहाँ वृत्त संस्थान संख्यात हैं० ?

१४ उत्तर–हे गौतम ! पूर्ववत्, यावत् आयत संस्थान तक ।

१५ प्रश्न–हे भगवन् ! जहाँ यवाकार एक वृत्त संस्थान है, वहाँ परिमण्डल संस्थान कितने हैं ?

१५ उत्तर–हे गौतम ! पूर्ववत् । वहाँ वृत्त संस्थान यावत् आयत संस्थान भी इसी प्रकार अनन्त हैं । प्रत्येक संस्थान के साथ पाँचों संस्थानों के सम्बन्ध का विचार करना चाहिये ।

१६ प्रश्न–जत्थ णं भंते ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवी एगे परिमंडले संठाणे जवमज्झे तत्थ णं परिमंडला संठाणा किं संखेज्जा–पुच्छा ।

१६ उत्तर–गोयमा ! णो संखेज्जा, णो असंखेज्जा, अणंता ।

प्रश्न–वट्टा णं भंते ! संठाणा किं संखेज्जा ?

उत्तर–एवं चेव, एवं जाव आयया ।

१७ प्रश्न–जत्थ णं भंते ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए एगे वट्टे संठाणे जवमज्झे तत्थ णं परिमंडला संठाणा किं संखेज्जा–पुच्छा ।

१७ उत्तर–गोयमा ! णो संखेज्जा, णो असंखेज्जा, अणंता । वट्टा संठाणा एवं चेव, एवं जाव आयया । एवं पुणरवि एक्केक्केणं संठा·

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णेणं पंच वि चारेयव्वा जहेव हेट्ठिल्ला जाव आयएणं, एवं जाव अहेसत्तमाए, एवं कप्पेसु वि, जाव ईसीपब्भाराए पुढवीए ।

भावार्थ–१६ प्रश्न–हे भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी में जहाँ यवमध्य, यवमध्याकार परिमण्डल संस्थान है, वहाँ दूसरे परिमण्डल संस्थान संख्यात हैं, इत्यादि ?

१६ उत्तर–हे गौतम ! संख्यात नहीं, असंख्यात भी नहीं, अनन्त हैं ।

प्रश्न–हे भगवन् ! वहाँ वृत्त संस्थान संख्यात हैं, इत्यादि ?

उत्तर–हे गौतम ! पूर्ववत्, यावत् आयत पर्यन्त ।

१७ प्रश्न–हे भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी में जहाँ यवाकार एक वृत्त संस्थान है, वहाँ परिमण्डल संस्थान संख्यात हैं, इत्यादि ?

१७ उत्तर–हे गौतम ! संख्यात नहीं, असंख्यात भी नहीं, अनन्त हैं । वृत्त यावत् आयत संस्थान तक। यहाँ भी पूर्ववत् प्रत्येक संस्थान के साथ पांचों संस्थानों का विचार करना चाहिये तथा आगे अधःसप्तम पृथ्वी, कल्प यावत् ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी पर्यन्त ।

**विवेचन**–यह सम्पूर्ण लोक परिमण्डल संस्थान वाले पुद्गल-स्कन्धों से निरन्तर व्याप्त है । उनमें से तुल्य प्रदेश वाले, तुल्य प्रदेशावगाही और तुल्य वर्णादि पर्याय वाले जो-जो परिमण्डल द्रव्य हैं, उन सब को कल्पना से एक-एक पंक्ति में स्थापित करना चाहिये । उसके ऊपर और नीचे एक-एक जाति वाले परिमण्डल द्रव्यों को एक-एक पंक्ति में स्थापित करना चाहिये। इस प्रकार इनमें अल्प-बहुत्व होने से परिमण्डल संस्थान का समुदाय यवाकार बनता है । इनमें जघन्य प्रदेशिक द्रव्य स्वभाव से ही अल्प होने के कारण प्रथम पंक्ति छोटी होती है और उसके बाद की पंक्तियाँ अधिक-अधिकतर प्रदेश वाली होने से अनुक्रम से बड़ी-बड़ी होती हैं । इसके पश्चात् क्रम से घटते-घटते अन्त में उत्कृष्ट प्रदेश वाले द्रव्य अत्यन्त अल्प होने से अन्तिम पंक्ति अत्यन्त छोटी होती है । इस प्रकार तुल्य प्रदेश वाले और उससे भिन्न परिमण्डल द्रव्यों द्वारा यवाकार क्षेत्र बनता है ।

जहाँ एक यवाकार निष्पादक परिमण्डल संस्थान समुदाय होता है, उस क्षेत्र में यवाकार निष्पादक परिमण्डल के सिवाय दूसरे परिमण्डल संस्थान कितने होते हैं, यह प्रश्न किया गया है, जिसका उत्तर दिया गया है कि वे परिमण्डल संस्थान अनन्त होते हैं ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इसी प्रकार वृत्तादि संस्थानों के विषय में भी समझना चाहिये।

## संस्थान के प्रदेश

१८ प्रश्न–वट्टे णं भंते ! संठाणे कइपएसिए कइपएसोगाढे पण्णत्ते ?

१८ उत्तर–गोयमा ! वट्टे संठाणे दुविहे पण्णत्ते, तं जहा–घणवट्टे य पयरवट्टे य। तत्थ णं जे से पयरवट्टे से दुविहे पण्णत्ते, तं जहा–ओयपएसिए य जुम्मपएसिए य। तत्थ णं जे से ओयपएसिए से जहण्णेणं पंचपएसिए, पंचपएसोगाढे, उक्कोसेणं अणंतपएसिए, असंखेज्जपएसोगाढे। तत्थ णं जे से जुम्मपएसिए से जहण्णेणं बारसपएसिए, बारसपएसोगाढे, उक्कोसेणं अणंतपएसिए, असंखेज्जपएसोगाढे। तत्थ णं जे से घणवट्टे से दुविहे पण्णत्ते, तं जहा–ओयपएसिए य जुम्मपएसिए य। तत्थ णं जे से ओयपएसिए से जहण्णेणं सत्तपएसिए, सत्तपएसोगाढे पण्णत्ते, उक्कोसेणं अणंतपएसिए असंखेज्जपएसोगाढे पण्णत्ते। तत्थ णं जे से जुम्मपएसिए से जहण्णेणं बत्तीसपएसिए, बत्तीसपएसोगाढे पण्णत्ते, उक्कोसेणं अणंतपएसिए असंखेज्जपएसोगाढे पण्णत्ते।

कठिन शब्दार्थ—घणवट्टे—घनवृत्त।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ–१८ प्रश्न–हे भगवन् ! वृत्त संस्थान कितने प्रदेश और कितने प्रदेशावगाढ़ कहा है?

१८ उत्तर–हे गौतम ! वृत्त संस्थान दो प्रकार का कहा है। यथा–घनवृत्त और प्रतरवृत्त। प्रतरवृत्त के दो भेद कहे हैं। यथा–ओजप्रदेशिक और युग्मप्रदेशिक। इनमें से ओजप्रदेशिक प्रतरवृत्त जघन्य पंच प्रदेशिक और पंच प्रदेशावगाढ़ तथा उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशिक और असंख्येय प्रदेशावगाढ़ होता है। युग्मप्रदेशिक प्रतरवृत्त जघन्य बारह प्रदेशिक और बारह प्रदेशावगाढ़ तथा उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशिक और असंख्येय प्रदेशावगाढ़ होता है।

घनवृत्त संस्थान दो प्रकार का कहा है। यथा–ओजप्रदेशिक और युग्मप्रदेशिक। ओजप्रदेशिक जघन्य सप्त प्रदेशिक और सप्त प्रदेशावगाढ़ तथा उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशिक और असंख्येय प्रदेशावगाढ़ होता है। युग्म प्रदेशिक घनवृत्त संस्थान जघन्य बत्तीस प्रदेशिक और बत्तीस प्रदेशावगाढ़ तथा उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशिक और असंख्येय प्रदेशावगाढ़ होता है।

१९ प्रश्न–तंसे णं भंते ! संठाणे कइपएसिए कइपएसोगाढे पण्णत्ते ?

१९ उत्तर–गोयमा ! तंसे णं संठाणे दुविहे पण्णत्ते। तं जहा–घणतंसे य पयरतंसे य। तत्थ णं जे से पयरतंसे से दुविहे पण्णत्ते, तं जहा–ओयपएसिए य जुम्मपएसिए य। तत्थ णं जे से ओयपएसिए से जहण्णेणं तिपएसिए तिपएसोगाढे पण्णत्ते, उक्कोसेणं अणंतपएसिए असंखेज्जपएसोगाढे पण्णत्ते। तत्थ णं जे से जुम्मपएसिए से जहण्णेणं छप्पएसिए छप्पएसोगाढे पण्णत्ते, उक्कोसेणं अणंतपएसिए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

असंखेज्जपएसोगाढे पण्णत्ते । तत्थ णं जे से घणतंसे से दुविहे पण्णत्ते, तं जहा–ओयपएसिए य जुम्मपएसिए य । तत्थ णं जे से ओयपएसिए से जहण्णेणं पणतीसपएसिए पणतीसपएसोगाढे, उक्कोसेणं अणंतपएसिए–तं चेव । तत्थ णं जे से जुम्मपएसिए से जहण्णेणं चउप्पएसिए, चउप्पएसोगाढे पण्णत्ते, उक्कोसेणं अणंतपएसिए–तं चेव ।

भावार्थ–१९ प्रश्न–हे भगवन् ! त्र्यस्र संस्थान कितने प्रदेशिक और कितने प्रदेशावगाढ़ होता है ?

१९ उत्तर–हे गौतम ! त्र्यस्र संस्थान दो प्रकार का कहा है । यथा–घनत्र्यस्र और प्रतरत्र्यस्र । प्रतरत्र्यस्र दो प्रकार का कहा है । यथा–ओजप्रदेशिक और युग्मप्रदेशिक । ओजप्रदेशिक जघन्य तीन प्रदेश वाला और तीन प्रदेशावगाढ़ तथा उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशिक और असंख्येय प्रदेशावगाढ़ होता है । युग्मप्रदेशिक प्रतरत्र्यस्र जघन्य छह प्रदेशिक और छह प्रदेशावगाढ़ तथा उत्कृष्ट अनन्त प्रदेश वाला और असंख्येय प्रदेशावगाढ़ होता है है । घनत्र्यस्र दो प्रकार का है । यथा–ओजप्रदेशिक और युग्मप्रदेशिक । ओजप्रदेशिक घनत्र्यस्र जघन्य पैंतीस प्रदेश और पैंतीस प्रदेशावगाढ़ तथा उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशिक और असंख्येय प्रदेशावगाढ़ होता है । युग्मप्रदेशिक घनत्र्यस्र जघन्य चतुष्प्रदेशिक और चतुष्प्रदेशावगाढ़ तथा उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशिक और असंख्येय प्रदेशावगाढ़ होता है ।

२० प्रश्न–चउरंसे णं भंते ! संठाणे कइपएसिए–पुच्छा ।

२० उत्तर–गोयमा ! चउरंसे संठाणे दुविहे पण्णत्ते, भेदो जहेव वट्टस्स जाव तत्थ णं जे से ओयपएसिए से जहण्णेणं णवपएसिए णवपएसोगाढे पण्णत्ते, उक्कोसेणं अणंतपएसिए असंखेज्जपएसोगाढे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पण्णत्ते । तत्थ णं जे से जुम्मपएसिए से जहण्णेणं चउपएसिए चउपएसोगाढे पण्णत्ते, उक्कोसेणं अणंतपएसिए-तं चेव । तत्थ णं जे से घणचउरंसे से दुविहे पण्णत्ते, तं जहा–ओयपएसिए य जुम्मपएसिए य । तत्थ णं जे से ओयपएसिए से जहण्णेणं सत्तावीसइपएसिए सत्तावीसइपएसोगाढे, उक्कोसेणं अणंतपएसिए तहेव । तत्थ णं जे से जुम्मपएसिए से जहण्णेणं अट्ठपएसिए अट्ठपएसोगाढे पण्णत्ते, उक्कोसेणं अणंतपएसिए तहेव ।

भावार्थ–२० प्रश्न–हे भगवन् ! चतुरस्र संस्थान कितने प्रदेश का और कितने प्रदेशावगाढ़ कहा है ?

२० उत्तर–हे गौतम ! वृत्त संस्थान के समान चतुरस्र संस्थान दो प्रकार का कहा है । यथा–घनचतुरस्र और प्रतरचतुरस्र । प्रतरचतुरस्र के दो भेद हैं–ओजप्रदेशिक और युग्मप्रदेशिक । ओजप्रदेशिक जघन्य नव प्रदेश और नव प्रदेशावगाढ़ तथा उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशिक और असंख्येय प्रदेशावगाढ़ होता है । युग्मप्रदेशिक जघन्य चतुष्प्रदेशिक और चतुष्प्रदेशावगाढ़ तथा उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशिक और असंख्येय प्रदेशावगाढ़ होता है । घनचतुरस्र दो प्रकार का कहा है । यथा–ओजप्रदेशिक और युग्मप्रदेशिक । ओजप्रदेशिक घनचतुरस्र जघन्य सत्ताईस प्रदेश और सत्ताईस प्रदेशावगाढ़ होता है तथा उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशिक और असंख्येय प्रदेशावगाढ़ होता है । युग्मप्रदेशिक घनचतुरस्र जघन्य अष्ट प्रदेश और अष्ट प्रदेशावगाढ़ तथा उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशिक और असंख्येय प्रदेशावगाढ़ होता है ।

२१ प्रश्न–आयए णं भंते ! संठाणे कइपएसिए कइपएसोगाढे पण्णत्ते ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२१ उत्तर-गोयमा ! आयए णं संठाणे तिविहे पण्णत्ते । तं जहा-सेढिआयए, पयरायए, घणायए । तत्थ णं जे से सेढिआयए से दुविहे पण्णत्ते, तं जहा-ओयपएसिए य जुम्मपएसिए य । तत्थ णं जे से ओयपएसिए से जहण्णेणं तिपएसिए तिपएसोगाढे, उक्कोसेणं अणंतपएसिए-तं चेव । तत्थ णं जे से जुग्मपएसिए से जहण्णेणं दुपएसिए दुपएसोगाढे, उक्कोसेणं अणंत० तहेव । तत्थ णं जे से पयरायए से दुविहे पण्णत्ते, तं जहा-ओयपएसिए य जुम्मपएसिए य। तत्थ णं जे से ओयपएसिए से जहण्णेणं पण्णरसपएसिए पण्णरसपएसोगाढे, उक्कोसेणं अणंत० तहेव । तत्थ णं जे से जुम्मपएसिए से जहण्णेणं छप्पएसिए छप्पएसोगाढे, उक्कोसेणं अणंत० तहेव । तत्थ णं जे से घणायए से दुविहे पण्णत्ते, तं जहा-ओयपएसिए य जुम्मपएसिए य । तत्थ णं जे से ओयपएसिए से जहण्णेणं पणयालीसपएसिए पणयालीसपएसोगाढे, उक्कोसेणं अणंत० तहेव । तत्थ णं जे से जुम्मपएसिए से जहण्णेणं बारसपएसिए बारसपएसोगाढे, उक्कोसेणं अणंत० तहेव ।

भावार्थ-२१ प्रश्न-हे भगवन् ! आयात संस्थान कितने प्रदेश का और कितने प्रदेशावगाढ़ होता है ?

२१ उत्तर-हे गौतम ! आयत संस्थान तीन प्रकार का है-श्रेणी-आयत, प्रतरआयत और घनआयत । श्रेणीआयत के दो भेद हैं । यथा-ओज-प्रदेश और युग्मप्रदेश । ओजप्रदेश श्रेणीआयत, जघन्य तीन प्रदेश और तीन

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रदेशावगाढ़ और उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशिक असंख्य प्रदेशावगाढ़ होता है। युग्म-प्रदेशिक श्रेणीआयत जघन्य द्विप्रदेशिक, द्विप्रदेशावगाढ़ तथा उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशिक और असंख्येय प्रदेशावगाढ़ होता है। प्रतर-आयत दो प्रकार का है–ओजप्रदेशिक और युग्मप्रदेशिक। ओजप्रदेशिकप्रतर-आयत जघन्य पन्द्रह प्रदेश, पन्द्रह प्रदेशावगाढ़ तथा उत्कृष्ट अनन्त प्रदेश असंख्येय प्रदेशावगाढ़ होता है। युग्मप्रदेशिक प्रतर-आयत जघन्य छह प्रदेश, छह प्रदेशावगाढ़ तथा उत्कृष्ट अनन्त प्रदेश और असंख्येय प्रदेशावगाढ़ होता है। घनआयत दो प्रकार का है–ओजप्रदेशिक और युग्मप्रदेशिक। ओजप्रदेशिक घनआयत जघन्य पैंतालीस प्रदेश, पैंतालीस प्रदेशावगाढ़ और उत्कृष्ट अनन्त प्रदेश असंख्येय प्रदेशावगाढ़ होता है। युग्मप्रदेशिक-घनआयत जघन्य बारह प्रदेश, बारह प्रदेशावगाढ़ तथा उत्कृष्ट अनन्त प्रदेश और असंख्येय प्रदेशावगाढ़ होता है।

२२ प्रश्न–परिमंडले णं भंते ! संठाणे कइपएसिए–पुच्छा।

२२ उत्तर–गोयमा ! परिमंडले णं संठाणे दुविहे पण्णत्ते, तं जहा–घणपरिमंडले य पयरपरिमंडले य। तत्थ णं जे से पयरपरिमंडले से जहण्णेणं वीसइपएसिए वीसइपएसोगाढे, उक्कोसेणं अणंतपएसिए तहेव। तत्थ णं जे से घणपरिमंडले से जहण्णेणं चत्तालीसइपएसिए चत्तालीसपएसोगाढे पण्णत्ते, उक्कोसेणं अणंतपएसिए असंखेज्जपएसोगाढे पण्णत्ते।

भावार्थ–२२ प्रश्न–हे भगवन् ! परिमण्डल संस्थान कितने प्रदेश और कितने प्रदेशावगाढ़ कहा है ?

२२ उत्तर–हे गौतम ! परिमण्डल संस्थान दो प्रकार का है–घन परिमण्डल और प्रतर परिमण्डल। प्रतर परिमण्डल जघन्य बीस प्रदेश, बीस

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

**प्रदेशावगाढ़ तथा उत्कृष्ट अनन्त प्रदेश और असंख्येय प्रदेशावगाढ़ होता है। घनपरिमण्डल जघन्य चालीस प्रदेश, चालीस प्रदेशावगाढ़ और उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशक, असंख्येय प्रदेशावगाढ़ होता है।**

**विवेचन**–पाँच संस्थानों में प्रथम 'परिमण्डल' संस्थान है, अतः उसका कथन पहले किया जाना चाहिये, किन्तु यहाँ परिमण्डल को छोड़ कर 'वृत्त' व्यस्र आदि क्रम से कथन किया है, इसका कारण यह है कि इन चारों में सम प्रदेश और विषम प्रदेशों का कथन होने से सभी में प्रायः समानता है। इसलिये पहले इनका कथन किया है और परिमण्डल का पीछे कथन किया है, अथवा सूत्र का क्रम विचित्र होने से इस प्रकार कथन किया है।

एक, तीन, पाँच आदि विषम (एकी वाली) संख्या को 'ओज' कहते हैं और दो चार, छह आदि सम (जोड़े वाली) संख्या को 'युग्म' कहते हैं।

लड्डू अथवा गेन्द के समान जो गोल हो, उसे 'घनवृत्त' कहते हैं और मण्डक–(पकाया हुआ एक प्रकार का अन्न घेवर) के समान, जो गोल होने पर भी मोटाई में कम हो, उसे 'प्रतरवृत्त' कहते हैं।

ओज-प्रदेशी प्रतरवृत्त में दो प्रदेश ऊपर, एक प्रदेश बीच में और दो प्रदेश नीचे होते हैं।

युग्म-प्रदेशी प्रतरवृत्त में बारह प्रदेश होते हैं। ऊपर दो प्रदेश, उसके नीचे चार प्रदेश, उसके नीचे फिर चार प्रदेश और उसके नीचे दो प्रदेश होते हैं।

ओज-प्रदेशिक घनवृत्त में सात प्रदेश होते हैं। एक मध्य परमाणु के ऊपर एक परमाणु और नीचे एक परमाणु तथा उसके चारों ओर चार परमाणु होते हैं।

युग्मप्रदेशिक घनवृत्त में बत्तीस प्रदेश होते हैं। उनमें से दो ऊपर, चार नीचे, फिर चार नीचे और उनके नीचे दो प्रदेशी स्थापित करना चाहिये। उसके ऊपर इसी प्रकार का बारह प्रदेशों का दूसरा प्रतर रखना चाहिये और दोनों प्रतरों के मध्य भाग के चार प्रदेशों के ऊपर दूसरे चार प्रदेश ऊपर और चार प्रदेश नीचे रखना चाहिये। इस प्रकार बत्तीस प्रदेशों का युग्मप्रदेशिक घनवृत्त होता है।

ओजप्रदेशिक घनत्र्यस्र जघन्य पैंतीस प्रदेशों का होता है, जिनमें से पहले पन्द्रह प्रदेशों का प्रतर रखना चाहिये। उसके ऊपर दस प्रदेशों का प्रतर, उसके ऊपर तीसरा छह प्रदेशों का प्रतर, उसके ऊपर चौथा तीन प्रदेशों का प्रतर और उसके ऊपर एक प्रदेश रखना चाहिये। इस प्रकार ये पैंतीस प्रदेश होते हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

घनत्र्यस्र के चार भेदों में से तीसरे भेद का आकार वृत्त संस्थान स्थापना में दिया है। शेष तीन भेदों का कथन भावार्थ में दे दिया है।

ओजप्रदेशिक घनचतुरस्र सत्ताईस प्रदेशों का होता है। नौ प्रदेशों का प्रतर रख कर उसके ऊपर उसी प्रकार के दो प्रतर और रखने चाहिये। चतुष्प्रदेशी प्रतर के ऊपर दूसरा चतुष्प्रदेशी प्रतर रखने से आठ प्रदेशों का युग्मप्रदेशिक घनचतुरस्र होता है। यह तीसरा और चौथा भेद है। इनके ऊपर न रखने से क्रमशः पहला और दूसरा भेद बन जाता है।

प्रदेशों की लम्बी श्रेणी को 'श्रेणीआयत' कहते हैं। जघन्य ओजप्रदेशिक श्रेणी-आयत तीन प्रदेशात्मक होता है और युग्मप्रदेशिक श्रेणीआयत दो प्रदेशों का होता है।

दो, तीन इत्यादि विष्कम्भ श्रेणी रूप 'प्रतरआयत' कहलाता है। मोटाई और विष्कम्भ सहित अनेक श्रेणियों को 'घनआयत' कहते हैं। ओजप्रदेशिक श्रेणीआयत जघन्य तीन प्रदेशों का होता है और युग्मप्रदेशिक श्रेणीआयत द्विप्रदेशिक होता हैं।

ओजप्रदेशिक प्रतरआयत जघन्य पन्द्रह प्रदेशों का होता है। युग्मप्रदेशिक प्रतर आयत छह प्रदेशों का होता है। पन्द्रह प्रदेशों के प्रतरआयत पर दूसरे दो उसी प्रकार के प्रतरआयत रखने से जघन्य पैंतालीस प्रदेशों का ओजप्रदेशिक घनआयत होता है। छह प्रदेशों के युग्मप्रदेशिक प्रतरआयत के ऊपर उसी प्रकार का दूसरा प्रतरआयत रखने से बारह प्रदेशों का युग्मप्रदेशिक घनआयत होता है।

परिमण्डल संस्थान केवल युग्मप्रदेशिक होता है। इनमें से प्रतरपरिमण्डल जघन्य बीस प्रदेशों का होता है। उसके ऊपर दूसरा प्रतरपरिमण्डल रखने से जघन्य चालीस प्रदेशों का घनपरिमण्डल होता है। आकार निम्नानुसार है—

## वृत संस्थान स्थापना

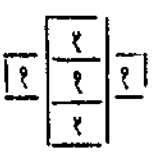


ओज प्रदेशी प्रतर

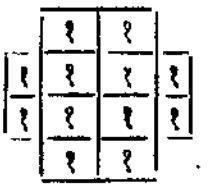


युग्म प्रदेशी प्रतर

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

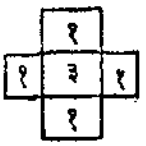


ओज प्रदेशी घनवृत्त

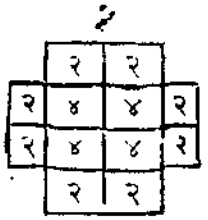


युग्म प्रदेशी घनवृत्त

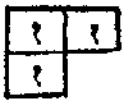


ओज प्रदेशी प्रतर व्यस्र

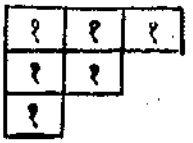


युग्म प्रदेशी प्रतर व्यस्र

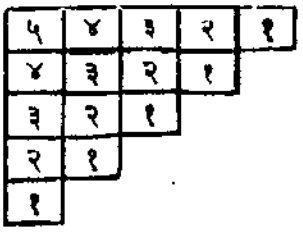


ओज प्रदेशी घन व्यस्र

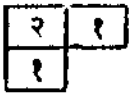


युग्म प्रदेशी घन व्यस्र

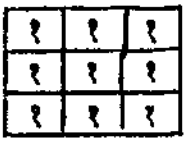


ओज प्रदेशी प्रतर चतुरस्र

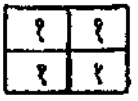


युग्म प्रदेशी प्रतर चतुरस्र

ओज प्रदेशी घन चतुरस्र

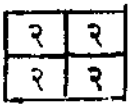


युग्म प्रदेशी घन चतुरस्र

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

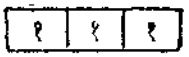


ओज प्रदेशी श्रेणी आयत

युग्म प्रदेशी श्रेणी आयत

ओज प्रदेशी प्रतर आयत

युग्म प्रदेशी प्रतर आयत

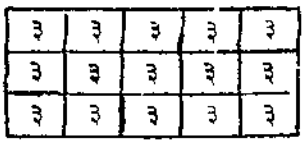


ओज प्रदेशी घन आयत

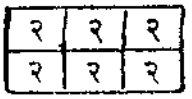


युग्म प्रदेशी घन आयत

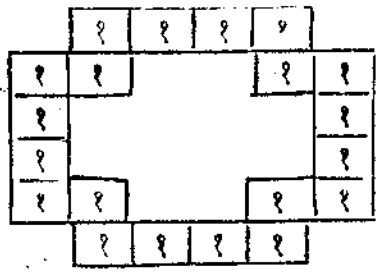


युग्म प्रदेशी प्रतर परिमंडल

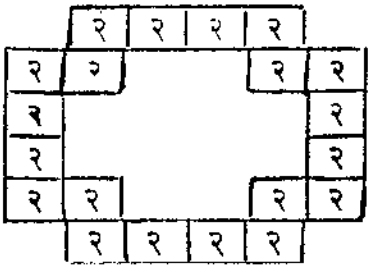


युग्म प्रदेशी घन परिमन्डल

नोट–इनमें जो अंक रखे गये हैं उतने प्रदेश ऊंची, नीची, घनता (जाडाई) समझनी चाहिए।

**२२ प्रश्न–परिमंडले णं भंते ! संठाणे दव्वट्ठयाए किं कडजुम्मे, तेयोए, दावरजुम्मे, कलियोए ?**

**२२ उत्तर–गोयमा ! णो कडजुम्मे, णो तेयोए, णो दावरजुम्मे, कलियोए।**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रश्न-वट्टे णं भंते ! संठाणे दव्वट्ठयाए० ?
उत्तर-एवं चेव, एवं जाव आयए ।

भावार्थ-२३ प्रश्न-हे भगवन् ! परिमण्डल संस्थान द्रव्यार्थ रूप से कृतयुग्म है, त्र्योज है, द्वापरयुग्म है अथवा कल्योज है ?

२३ उत्तर-हे गौतम ! कृतयुग्म नहीं, त्र्योज नहीं, द्वापरयुग्म भी नहीं, परन्तु कल्योज है ।

प्रश्न-हे भगवन् ! वृत्त संस्थान द्रव्यार्थ रूप से कृतयुग्म है, इत्यादि ?
उत्तर-हे गौतम ! पूर्ववत् ! इसी प्रकार यावत् आयत संस्थान पर्यंत ।

२४ प्रश्न-परिमंडला णं भंते ! संठाणा दव्वट्ठयाए किं कडजुम्मा, तेयोया-पुच्छा ।

२४ उत्तर-गोयमा ! ओघादेसेणं सिय कडजुम्मा, सिय तेयोगा, सिय दावरजुम्मा, सिय कलियोगा, विहाणादेसेणं णो कडजुम्मा, णो तेयोगा, णो दावरजुम्मा, कलियोगा एवं जाव आयया ।

भावार्थ-२४ प्रश्न-हे भगवन् ! परिमण्डल संस्थान द्रव्यार्थ रूप से कृतयुग्म है, त्र्योज है, द्वापरयुग्म है या कल्योज है ?

२४ उत्तर-हे गौतम ! ओघादेश से-सामान्यतः सर्व समुदित रूप में कदाचित् कृतयुग्म, कदाचित् त्र्योज, कदाचित् द्वापरयुग्म और कदाचित् कल्योज होते हैं । विधानादेश---प्रत्येक की अपेक्षा कृतयुग्म नहीं, त्र्योज नहीं, द्वापरयुग्म नहीं, किन्तु कल्योज हैं, यावत् आयत संस्थान पर्यन्त ।

२५ प्रश्न-परिमंडले णं भंते ! संठाणे पएसट्ठयाए किं कडजुम्मे-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पुच्छा ।

२५ उत्तर-गोयमा ! सिय कडजुम्मे, सिय तेयोगे, सिय दावर-जुम्मे, सिय कलियोए । एवं जाव आयए ।

भावार्थ-२५ प्रश्न-हे भगवन् ! परिमण्डल संस्थान प्रदेशार्थ रूप से कृतयुग्म है ० ?

२५ उत्तर-हे गौतम ! कदाचित् कृतयुग्म, त्र्योज, द्वापरयुग्म और कदाचित् कल्योज है, यावत् आयत संस्थान पर्यन्त ।

२६ प्रश्न-परिमंडला णं भंते ! संठाणा पएसट्ठयाए किं कड-जुम्मा-पुच्छा ।

२६ उत्तर-गोयमा ! ओघादेसेणं सिय कडजुम्मा जाव सिय कलियोगा, विहाणादेसेणं कडजुम्मा वि, तेयोगा वि, दावरजुम्मा वि, कलियोगा वि । एवं जाव आयया ।

कठिन शब्दार्थ-ओघादेसेणं-ओघादेश--सामान्य रूप से, विहाणादेसेणं-विधानादेश--प्रत्येक की अपेक्षा से ।

भावार्थ-२६ प्रश्न-हे भगवन् ! परिमण्डल संस्थान प्रदेशार्थ रूप से कृतयुग्म है० ?

२६ उत्तर-हे गौतम ! ओघादेश से कदाचित् कृतयुग्म यावत् कदाचित् कल्योज होते हैं । विधानादेश से कृतयुग्म भी होते हैं, त्र्योज भी, द्वापरयुग्म भी और कल्योज भी होते हैं, यावत् आयत संस्थान तक ।

२७ प्रश्न-परिमंडले णं भंते ! संठाणे किं कडजुम्मपएसोगाढे जाव कलियोगपएसोगाढे ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२७ उत्तर–गोयमा ! कडजुम्मपएसोगाढे, णो तेयोगपएसोगाढे, णो दावरजुम्मपएसोगाढे, णो कलियोगपएसोगाढे ।

भावार्थ–२७ प्रश्न–हे भगवन् ! परिमण्डल संस्थान कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़ है, यावत् कल्योज प्रदेशावगाढ़ है ?

२७ उत्तर–हे गौतम ! वह कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़ है, किन्तु त्र्योज प्रदेशावगाढ़ नहीं, द्वापरयुग्म प्रदेशावगाढ़ भी नहीं और कल्योज प्रदेशावगाढ़ भी नहीं है ।

२८ प्रश्न–वट्टे णं भंते ! संठाणे किं कडजुम्मे–पुच्छा ।

२८ उत्तर–गोयमा ! सिय कडजुम्मपएसोगाढे, सिय तेयोगपएसोगाढे, णो दावरजुम्मपएसोगाढे, सिय कलियोगपएसोगाढे ।

भावार्थ–२८ प्रश्न–हे भगवन् ! वृत्त संस्थान कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़ है, इत्यादि ?

२८ उत्तर–हे गौतम ! कदाचित् कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़ है, कदाचित् त्र्योज प्रदेशावगाढ़ है, किन्तु द्वापरयुग्म प्रदेशावगाढ़ नहीं होता, हां, कदाचित् कल्योज प्रदेशावगाढ़ होता है ।

२९ प्रश्न–तंसे णं भंते ! संठाणे–पुच्छा ।

२९ उत्तर–गोयमा ! सिय कडजुम्मपएसोगाढे, सिय तेयोगपएसोगाढे, सिय दावरजुम्मपएसोगाढे, णो कलियोगपएसोगाढे ।

भावार्थ–२९ प्रश्न–हे भगवन् ! त्र्यस्र संस्थान कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़ है० ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२९ उत्तर-हे गौतम ! कदाचित् कृतयुग्म प्रदेशावगाढ, कदाचित् त्र्योज प्रदेशावगाढ़ और कदाचित् द्वापरयुग्म प्रदेशावगाढ़ होता है, किन्तु कल्योज प्रदेशावगाढ़ नहीं होता ।

३० प्रश्न-चउरंसे णं भंते ! संठाणे० ?

३० उत्तर-जहा वट्टे तहा चउरंसे वि ।

भावार्थ-३० प्रश्न-हे भगवन्! चतुरस्र संस्थान कृतयुग्म प्रदेशावगाढ है० ?

३० उत्तर-हे गौतम ! वृत्त संस्थान के समान चतुरस्र संस्थान भी जानना चाहिये ।

३१ प्रश्न-आयए णं भंते !०-पुच्छा ।

३१ उत्तर-गोयमा ! सिय कडजुम्मपएसोगाढे जाव सिय कलियोगपएसोगाढे ।

भावार्थ-३१ प्रश्न-हे भगवन् ! आयत संस्थान० ?

३१ उत्तर-हे गौतम ! कदाचित् कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़ और यावत् कदाचित् कल्योज प्रदेशावगाढ़ होता है ।

३२ प्रश्न-परिमंडला णं भंते ! संठाणा किं कडजुम्मपएसोगाढा, तेयोगपएसोगाढा-पुच्छा ।

३२ उत्तर-गोयमा । ओघादेसेण वि विहाणादेसेण वि कडजुम्म पएसोगाढा, णो तेयोगपएसोगाढा, णो दावरजुम्मपएसोगाढा, णो कलियोगपएसोगाढा ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ-३२ प्रश्न-हे भगवन् ! परिमण्डल संस्थान कृतयुग्मप्रदेशावगाढ़ है या त्र्योजप्रदेशावगाढ़ है० ?

३२ उत्तर-हे गौतम ! ओघादेश और विधानादेश से भी कृतयुग्मप्रदेशावगाढ़ है, किन्तु त्र्योजप्रदेशावगाढ़ नहीं है, द्वापरयुग्मप्रदेशावगाढ़ नहीं है और कल्योजप्रदेशावगाढ़ भी नहीं हैं।

३३ प्रश्न-वट्टा णं भंते ! संठाणा किं कडजुम्मपएसोगाढा-पुच्छा।

३३ उत्तर-गोयमा ! ओघादेसेणं कडजुम्मपएसोगाढा, णो तेयोगपएसोगाढा, णो दावरजुम्मपएसोगाढा, णो कलियोगपएसोगाढा। विहाणादेसेणं कडजुम्मपएसोगाढा वि, तेयोगपएसोगाढा वि, णो दावरजुम्मपएसोगाढा, कलियोगपएसोगाढा वि।

भावार्थ-३३ प्रश्न-हे भगवन् ! वृत्त संस्थान कृतयुग्मप्रदेशावगाढ़ है० ?

३३ उत्तर-हे गौतम ! ओघादेश से कृतयुग्मप्रदेशावगाढ़ है, किन्तु त्र्योजप्रदेशावगाढ़ नहीं हैं, द्वापरयुग्मप्रदेशावगाढ़ नहीं हैं और कल्योजप्रदेशावगाढ़ भी नहीं हैं। विधानादेश से कृतयुग्मप्रदेशावगाढ़ भी हैं, त्र्योजप्रदेशावगाढ़ भी है, किन्तु द्वापरयुग्मप्रदेशावगाढ़ नहीं हैं। हाँ, कल्योजप्रदेशावगाढ़ हैं।

३४ प्रश्न-तंसा णं भंते ! संठाणा किं कडजुम्म०-पुच्छा ?

३४ उत्तर-गोयमा ! ओघादेसेणं कडजुम्मपएसोगाढा, णो तेयोगपएसोगाढा, णो दावरजुम्मपएसोगाढा, णो कलियोगपएसोगाढा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विहाणादेसेणं कडजुम्मपएसोगाढा वि, तेयोगपएसोगाढा वि, दावर-जुम्मपएसोगाढा वि, णो कलियोगपएसोगाढा। चउरंसा जहा वट्टा।

भावार्थ-३४ प्रश्न-हे भगवन्! त्र्यस्र संस्थान कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़ हैं०?

३४ उत्तर-हे गौतम! ओघादेश से कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़ हैं, किन्तु त्र्योज, द्वापरयुग्म और कल्योज प्रदेशावगाढ़ नहीं हैं। विधानादेश से कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़ भी हैं, त्र्योज प्रदेशावगाढ़ भी हैं और द्वापरयुग्म प्रदेशावगाढ़ भी हैं, परन्तु कल्योज प्रदेशावगाढ़ नहीं हैं। वृत संस्थान के समान चतुरस्र संस्थान भी जानना चाहिए।

३५ प्रश्न-आयया णं भंते! संठाणा-पुच्छा।

३५ उत्तर-गोयमा! ओघादेसेणं कडजुम्मपएसोगाढा, णो तेयोगपएसोगाढा, णो दावरजुम्मपएसोगाढा, णो कलियोगपएसोगाढा। विहाणादेसेणं कडजुम्मपएसोगाढा वि जाव कलियोगपएसोगाढा वि।

भावार्थ-३५ प्रश्न-हे भगवन्! आयत संस्थान कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़ हैं०?

३५ उत्तर-हे गौतम! ओघादेश से कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़ हैं, परन्तु त्र्योज, द्वापरयुग्म और कल्योज प्रदेशावगाढ़ नहीं हैं। विधानादेश से कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़ भी हैं यावत् कल्योज प्रदेशावगाढ़ भी हैं।

३६ प्रश्न-परिमंडले णं भंते! संठाणे किं कडजुम्मसमयठिईए तेयोगसमयठिईए, दावरजुम्मसमयठिईए, कलियोगसमयठिईए?

३६ उत्तर-गोयमा! सिय कडजुम्मसमयठिईए जाव सिय कलि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

योगसमयठिईए एवं जाव आयए ।

भावार्थ–३६ प्रश्न–हे भगवन् ! परिमण्डल संस्थान कृतयुग्म समय की स्थिति वाला है, त्र्योज समय की स्थिति वाला है, द्वापरयुग्म समय की स्थिति वाला है या कल्योज समय की स्थिति वाला है ?

३६ उत्तर–हे गौतम ! कदाचित् कृतयुग्म समय की स्थिति वाला है यावत् कदाचित् कल्योज समय की स्थिति वाला है । इस प्रकार यावत् आयत संस्थान पर्यन्त ।

३७ प्रश्न–परिमंडला णं भंते ! संठाणा किं कडजुम्मसमय-ठिईया–पुच्छा ।

३७ उत्तर–गोयमा ! ओघादेसेणं सिय कडजुम्मसमयठिईया जाव सिय कलियोगसमयठिईया । विहाणादेसेणं कडजुम्मसमयठिईया वि जाव कलियोगसमयठिईया वि एवं जाव आयया ।

भावार्थ–३७ प्रश्न–हे भगवन् ! परिमण्डल संस्थान कृतयुग्म समय की स्थिति वाले हैं० ?

३७ उत्तर–हे गौतम ! ओघादेश से कदाचित् कृतयुग्म समय की स्थिति वाले हैं, यावत् कदाचित् कल्योज समय की स्थिति वाले हैं । विधानादेश से कृतयुग्म समय की स्थिति वाले भी हैं, यावत् कल्योज समय की स्थिति वाले भी हैं । इस प्रकार यावत् आयत संस्थान पर्यन्त ।

३८ प्रश्न–परिमंडले णं भंते ! संठाणे कालवण्णपज्जवेहिं किं कडजुम्मे जाव कलियोगे ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

३८ उत्तर–गोयमा ! सिय कडजुम्मे, एवं एएणं अभिलावेणं जहेव ठिईए, एवं णीलवण्णपज्जवेहिं, एवं पंचहिं वण्णेहिं, दोहिं गंधेहिं, पंचहिं रसेहिं, अट्ठहिं फासेहिं जाव लुक्खफासपज्जवेहिं ।

भावार्थ–३८ प्रश्न–हे भगवन् ! परिमण्डल संस्थान के काले वर्ण के पर्याय कृतयुग्म है, यावत् कल्योज हैं ?

३८ उत्तर–हे गौतम ! कदाचित् कृतयुग्म रूप होते हैं, इत्यादि पूर्वोक्त स्थिति पाठ के अनुसार । इसी प्रकार नीला, लाल आदि पाँच वर्ण, दो गन्ध, पाँच रस और आठ स्पर्श के विषय में, यावत् रूक्ष स्पर्श पर्याय तक।

विवेचन–परिमण्डल संस्थान द्रव्य रूप से एक है । एक वस्तु में चार-चार का अपहार (भाग) नहीं होता । वह एक ही शेष रहता है । इसलिये वह कल्योज है । इस प्रकार वृत्त आदि संस्थान भी जानना चाहिये । परन्तु सामान्य रूप से यदि सभी परिमण्डल संस्थानों का विचार किया जाय, तब उनका चार-चार से अपहार करते हुए, किसी समय कुछ भी शेष नहीं रहता, कदाचित् तीन, कदाचित् दो और कदाचित् एक शेष रहता है । इसलिये कदाचित् कृतयुग्म होते है और यावत् कदाचित् कल्योज भी होते है । जब विधानादेश से अर्थात् विशेष दृष्टि से प्रत्येक संस्थान का विचार किया जाता है, तब चार से अपहार न होने के कारण एक ही शेष रहता है । अतः वह कल्योज होता है ।

जब परिमण्डल संस्थान का प्रदेशार्थ रूप से विचार किया जाता है, तब बीस आदि क्षेत्र प्रदेशों में जो प्रदेश परिमण्डल संस्थान रूप से व्यवस्थित होते हैं, उनकी अपेक्षा से बीस आदि प्रदेशों का कथन किया गया है । उन प्रदेशों में चार-चार का अपहार करते हुए जब चार शेष रह जाते हैं, तब कृतयुग्म होते हैं । जब तीन शेष रहते हैं, तब त्र्योज होते हैं, दो शेष रहने पर द्वापरयुग्म और एक शेष रहने पर कल्योज होता है, क्योंकि एक प्रदेश पर भी बहुत-से परमाणु अवगाढ़ होते हैं ।

अवगाह के विषय में कथन करते हुए परिमण्डल संस्थान बीस प्रदेशावगाढ़ बताया गया है । बीस में चार का अपहार करते हुए चार शेष रहते हैं, अतः वह कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़ ही होता है । इसी प्रकार आगे भी कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़, त्र्योज प्रदेशावगाढ़, द्वापरयुग्म प्रदेशावगाढ़ और कल्योज प्रदेशावगाढ़ के विषय में यथायोग्य विचार करना चाहिये ।

परिमण्डल आदि संस्थानों का पहले एक वचन सम्बन्धी विचार किया है,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पश्चात् बहुवचन सम्बन्धी विचार किया है। उसमें ओघादेश और विधानादेश-ये दो भेद किये हैं। सामान्यतः सर्व समुदाय रूप का कथन 'ओघादेश' है और पृथक्-पृथक् विचार 'विधानादेश' है। इनके कथन में जो कृतयुग्म आदि परिमाण बनता है, वह वस्तु-स्वभाव होने से उस-उस प्रकार का कृतयुग्म, त्र्योज आदि परिमाण बनता है। इस प्रकार क्षेत्र विषयक विचार कर के काल और भाव से विचार किया है, जिसका अर्थ यह है कि--परिमण्डलादि संस्थानों से परिणत स्कन्ध कितने काल तक ठहरते हैं और उन समयों में चतुष्कादि का अपहार करने पर कितने शेष बचते हैं, जिससे वे कृतयुग्मादि संख्या वाले बनते हैं। इसी प्रकार पाँच वर्ण, दो गन्ध, पाँच रस और आठ स्पर्श, इन बीस बोलों की अपेक्षा भी कृतयुग्मादि का विचार किया है।

**३९ प्रश्न-सेढीओ णं भंते ! दव्वट्ठयाए किं संखेज्जाओ, असंखेज्जाओ, अणंताओ ?**

**३९ उत्तर-गोयमा ! णो संखेज्जाओ, णो असंखेज्जाओ, अणंताओ।**

भावार्थ-३९ प्रश्न-हे भगवन् ! आकाश-प्रदेश की श्रेणियाँ द्रव्यार्थ रूप से संख्यात हैं, असंख्यात हैं, या अनन्त हैं ?

३९ उत्तर-हे गौतम ! संख्यात नहीं, असंख्यात भी नहीं, अनन्त हैं।

**४० प्रश्न-पाईणपडीणायताओ णं भंते ! सेढीओ दव्वट्ठयाए किं संखेज्जाओ० ?**

**४० उत्तर-एवं चेव। एवं दाहिणुत्तरायताओ वि, एवं उड्ढमहायताओ वि।**

कठिन शब्दार्थ-पाईण-पूर्व दिशा, पडीण-पश्चिम दिशा।

भावार्थ-४० प्रश्न-हे भगवन् ! पूर्व और पश्चिम लम्बी श्रेणियाँ द्रव्यार्थ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रूप से संख्यात हैं ?

४० उत्तर-हे गौतम ! पूर्ववत् । इसी प्रकार दक्षिण और उत्तर लम्बी तथा ऊर्ध्व और अधो लम्बी श्रेणियों के विषय में भी जानना चाहिये ।

४१ प्रश्न-लोगागाससेढीओ णं भंते ! दव्वट्ठयाए किं संखेज्जाओ, असंखेज्जाओ, अणंताओ ?

४१ उत्तर-गोयमा ! णो संखेज्जाओ, असंखेज्जाओ, णो अणंताओ ।

भावार्थ-४१ प्रश्न-हे भगवन् ! लोकाकाश की श्रेणियां द्रव्यार्थ रूप से संख्यात हैं, असंख्यात हैं या अनन्त हैं ?

४१ उत्तर-हे गौतम ! संख्यात नहीं, अनन्त भी नहीं, किन्तु असंख्यात हैं ।

४२ प्रश्न-पाईणपडीणायया ओ णं भंते ! लोगागाससेढीओ दव्वट्ठयाए किं संखेज्जाओ० ?

४२ उत्तर-एवं चेव, एवं दाहिणुत्तरायया ओ वि, एवं उड्ढमहायया ओ वि ।

भावार्थ-४२ प्रश्न-हे भगवन् ! पूर्व-पश्चिम लम्बी लोकाकाश की श्रेणियां द्रव्यार्थ रूप से संख्यात हैं ?

४२ उत्तर-हे गौतम ! पूर्ववत् । इसी प्रकार दक्षिण-उत्तर लम्बी तथा ऊर्ध्व अधो लम्बी लोकाकाश की श्रेणियां भी हैं ।

४३ प्रश्न-अलोगागाससेढीओ णं भंते ! दव्वट्ठयाए किं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संखेज्जाओ, असंखेज्जाओ, अणंताओ ?

४३ उत्तर–गोयमा ! णो संखेज्जाओ, णो असंखेज्जाओ, अणंताओ। एवं पाईणपडीणायायाओ वि, एवं दाहिणुत्तरायायाओ वि, एवं उड्ढमहायायाओ वि।

भावार्थ–४३ प्रश्न–हे भगवन् ! अलोकाकाश की श्रेणियां द्रव्यार्थ रूप से संख्यात हैं, असंख्यात हैं या अनन्त हैं ?

४३ उत्तर–हे गौतम ! संख्यात नहीं और असंख्यात भी नहीं, अनन्त हैं। इसी प्रकार पूर्व-पश्चिम लम्बी, दक्षिण-उत्तर लम्बी तथा ऊर्ध्व-अधो लम्बी अलोकाकाश की श्रेणियां भी हैं।

४४ प्रश्न–सेढीओ णं भंते ! पएसट्ठयाए किं संखेज्जाओ ?

४४ उत्तर–जहा दव्वट्ठयाए तहा पएसट्ठयाए वि जाव उड्ढमहायायाओ वि सव्वाओ अणंताओ।

भावार्थ–४४ प्रश्न–हे भगवन् ! आकाश की श्रेणियां प्रदेशार्थ रूप से संख्यात हैं,० ?

४४ उत्तर–हे गौतम ! द्रव्यार्थवत्, यावत् ऊर्ध्व और अधो लम्बी सभी श्रेणियां अनन्त हैं।

४५ प्रश्न–लोगागाससेढीओ णं भंते ! पएसट्ठयाए किं संखेज्जाओ–पुच्छा।

४५ उत्तर–गोयमा ! सिय संखेज्जाओ, सिय असंखेज्जाओ, णो अणंताओ। एवं पाईणपडीणायायाओ वि, दाहिणुत्तरायायाओ वि एवं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चेव, उड्ढमहाययाओ णो संखेज्जाओ, असंखेज्जाओ, णो अणंताओ।

भावार्थ–४५ प्रश्न–हे भगवन् ! लोकाकाश की श्रेणियां प्रदेशार्थ से संख्यात हैं० ?

४५ उत्तर–हे गौतम ! कदाचित् संख्यात और कदाचित् असंख्यात प्रदेश हैं, किन्तु अनन्त नहीं। इसी प्रकार पूर्व-पश्चिम लम्बी तथा उत्तरदक्षिण लम्बी श्रेणियां भी हैं। ऊर्ध्व-अधो लम्बी लोकाकाश की श्रेणियां संख्यात नहीं और अनन्त भी नहीं, किन्तु असंख्यात हैं।

४६ प्रश्न–अलोगागाससेढीओ णं भंते ! पएसट्ठयाए–पुच्छा ?

४६ उत्तर–गोयमा ! सिय संखेज्जाओ, सिय असंखेज्जाओ, सिय अणंताओ।

भावार्थ–४६ प्रश्न–हे भगवन् ! अलोकाकाश की श्रेणियां प्रदेशार्थ से संख्यात हैं० ?

४६ उत्तर–हे गौतम ! कदाचित् संख्यात, कदाचित् असंख्यात और कदाचित् अनन्त हैं।

४७ प्रश्न–पाईणपडीणाययाओ णं भंते ! अलोगा०–पुच्छा ?

४७ उत्तर–गोयमा ! णो संखेज्जाओ, णो असंखेज्जाओ, अणंताओ। एवं दाहिणुत्तराययाओ वि।

भावार्थ–४७ प्रश्न–हे भगवन् ! पूर्व-पश्चिम लम्बी अलोकाकाश की श्रेणियां प्रदेशार्थ से संख्यात हैं० ?

४७ उत्तर–हे गौतम ! संख्यात नहीं और असंख्यात भी नहीं, किन्तु

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अनन्त हैं। इस प्रकार दक्षिण-उत्तर लम्बी श्रेणियों के विषय में भी जानना चाहिये।

**४८ प्रश्न-उड्ढमहाययाओ-पुच्छा ?**

**४८ उत्तर-गोयमा ! सिय संखेज्जाओ, सिय असंखेज्जाओ, सिय अणंताओ।**

**भावार्थ-४८ प्रश्न-हे भगवन् ! ऊर्ध्व और अधो लम्बी अलोकाकाश की श्रेणियां प्रदेशार्थ से संख्यात हैं० ?**

**४८ उत्तर-हे गौतम ! कदाचित् संख्यात, कदाचित् असंख्यात और कदाचित् अनन्त हैं।**

**विवेचन**--यद्यपि पंक्ति मात्र को 'श्रेणी' कहते हैं, तथापि यहाँ आकाश-प्रदेश की पंक्तियाँ श्रेणी शब्द से कही है। श्रेणी के सामान्यतः चार भेद होते हैं। यथा-लोकालोक की विवक्षा किये बिना सामान्य श्रेणी, पूर्व और पश्चिम लम्बी श्रेणी, दक्षिण और उत्तर लम्बी श्रेणी और ऊर्ध्व और अधो लम्बी श्रेणी। इस प्रकार लोक सम्बन्धी चार और अलोक सम्बन्धी चार श्रेणियाँ होती हैं। सामान्य आकाशास्तिकाय की श्रेणियाँ अनन्त है और लोकाकाश की श्रेणियाँ असंख्यात। क्योंकि लोकाकाश असंख्यात प्रदेशात्मक ही है। अलोकाकाश की श्रेणियाँ अनन्त हैं, क्योंकि अलोकाकाश अनन्त प्रदेशात्मक है।

लोकाकाश की पूर्व-पश्चिम लम्बी और उत्तर-दक्षिण लम्बी श्रेणियाँ संख्यात प्रदेश रूप हैं। इस विषय में चूर्णिकार का कथन है कि वृत्ताकार लोक के दन्तक जो अलोक में गये हुए हैं, उनकी श्रेणियाँ संख्यात प्रदेशात्मक हैं और अन्य श्रेणियाँ असंख्यात प्रदेशात्मक हैं। प्राचीन टीकाकार ने इस विषय में शंका-समाधान पूर्वक कथन किया है और निष्कर्ष निकालते हुए कहा है कि लोकाकाश वृत्ताकार होने से पर्यन्तवर्त्ती श्रेणियाँ संख्यात प्रदेश की हैं, अनन्त नहीं, क्योंकि लोकाकाश के प्रदेश अनन्त नहीं है।

लोकाकाश की ऊर्ध्व और अधो लम्बी श्रेणी असंख्यात प्रदेश की है, संख्यात या अनन्त प्रदेश की नहीं है। अधोलोक के कोण से अथवा ब्रह्म देवलोक के तिरछे प्रान्त भाग से जो श्रेणियाँ निकली हैं, वे भी इस सूत्र के कथन से संख्यात प्रदेश की या अनन्त प्रदेश

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

की नहीं, असंख्यात प्रदेश की ही हैं।

अलोकाकाश की संख्यात और असंख्यात प्रदेश की जो श्रेणियाँ कही हैं, वे लोक मध्यवर्ती क्षुल्लक प्रतर के पास में आई हुई ऊर्ध्व-अधो लम्बी, अधोलोक की श्रेणियों की अपेक्षा समझना चाहिये। इनमें से प्रारम्भ की श्रेणियाँ संख्यात प्रदेशी हैं और उसके बाद की श्रेणियाँ असंख्यात प्रदेशी हैं। तिरछी लम्बी अलोकाकाश की श्रेणियाँ तो निश्चित् रूप से अनन्त प्रदेशी ही है।

**४९ प्रश्न-सेढीओ णं भंते ! १ किं साइयाओ सपज्जवसियाओ २ साइयाओ अपज्जवसियाओ ३ अणाइयाओ सपज्जवसियाओ ४ अणाइयाओ अपज्जवसियाओ ?**

**४९ उत्तर-गोयमा ! णो साइयाओ सपज्जवसियाओ, णो साइयाओ अपज्जवसियाओ, णो अणाइयाओ सपज्जवसियाओ, अणाइयाओ अपज्जवसियाओ। एवं जाव उड्ढमहाययाओ।**

कठिन शब्दार्थ--साइयाओ-आदि-प्रारंभयुक्त, सपज्जवसियाओ--सपर्यवसित-अन्त सहित।

भावार्थ-४९ प्रश्न-हे भगवन् ! श्रेणियां सादि-सपर्यवसित (आदि और अन्त सहित) हैं, सादि अपर्यवसित (आदि सहित और अन्त रहित) हैं, अनादि-सपर्यवसित (आदि रहित और अन्त सहित) हैं, अनादि-अपर्यवसित (आदि और अन्त रहित) हैं ?

४९ उत्तर-हे गौतम ! सादि-सपर्यवसित नहीं, सादि-अपर्यवसित नहीं और अनादि-सपर्यवसित भी नहीं हैं किन्तु अनादि-अपर्यवसित हैं। इस प्रकार यावत् ऊर्ध्व और अधो लम्बी श्रेणियों के विषय में भी जानना चाहिये।

**५० प्रश्न-लोगागाससेढीओ णं भंते ! किं साइयाओ सपज्ज-**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वसियाओ–पुच्छा !

५० उत्तर–गोयमा ! साइयाओ सपज्जवसियाओ, णो साइयाओ अपज्जवसियाओ, णो अणाइयाओ सपज्जवसियाओ, णो अणाइयाओ अपज्जवसियाओ । एवं जाव उड्ढमहाययाओ ।

भावार्थ–५० प्रश्न–हे भगवन् ! लोकाकाश की श्रेणियाँ क्या सादि-सपर्यवसित हैं० ?

५० उत्तर–हे गौतम ! सादि-सपर्यवसित हैं, किन्तु सादि-अपर्यवसित नहीं, अनादि-सपर्यवसित नहीं और अनादि-अपर्यवसित भी नहीं हैं । इस प्रकार यावत् ऊर्ध्व और अधो लम्बी लोकाकाश श्रेणियाँ भी जाननी चाहिए ।

५१ प्रश्न–अलोगागाससेढीओ णं भंते ! किं साइयाओ०–पुच्छा ?

५१ उत्तर–गोयमा ! १ सिय साइयाओ सपज्जवसियाओ २ सिय साइयाओ अपज्जवसियाओ ३ सिय अणाइयाओ सपज्जवसियाओ ४ सिय अणाइयाओ अपज्जवसियाओ । पाईणपडीणायययाओ दाहिणुत्तरायययाओ य एवं चेव । णवरं णो साइयाओ सपज्जवसियाओ, सिय साइयाओ अपज्जवसियाओ, सेसं तं चेव । उड्ढमहाययाओ जहा ओहियाओ तहेव चउभंगो ।

भावार्थ–५१ प्रश्न–हे भगवन् ! अलोकाकाश की श्रेणियां सादि-सपर्यवसित है०?

५१ उत्तर–हे गौतम ! कदाचित् सादि-सपर्यवसित हैं, कदाचित् सादि-अपर्यवसित हैं, कदाचित् अनादि-सपर्यवसित हैं और कदाचित् अनादि-अपर्यवसित हैं । पूर्व-पश्चिम लम्बी तथा दक्षिण-उत्तर लम्बी श्रेणियाँ भी इसी प्रकार, किंतु वे सादि-सपर्यवसित नहीं हैं । कदाचित् सादि-अपर्यवसित हे, शेष पूर्ववत् । ऊर्ध्व और अधो लम्बी श्रेणियों के विषय में औधिक कथित चार भंग जानना चाहिये ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

५२ प्रश्न-सेढीओ णं भंते ! दव्वट्ठयाए किं कडजुम्माओ, तेओयाओ-पुच्छा ।

५२ उत्तर-गोयमा ! कडजुम्माओ, णो तेओयाओ, णो दावर-जुम्माओ, णो कलिओगाओ । एवं जाव उड्ढमहाययाओ । लोगा-गाससेढीओ एवं चेव । एवं अलोगागाससेढीओ वि ।

भावार्थ-५२ प्रश्न-हे भगवन् ! आकाश की श्रेणियां द्रव्यार्थ से कृत-युग्म हैं, त्र्योज हैं० ?

५२ उत्तर-हे गौतम ! वे कृतयुग्म हैं, किन्तु त्र्योज, द्वापरयुग्म और कल्योज नहीं हैं । इसी प्रकार ऊर्ध्व-अधो लम्बी श्रेणियां भी जाननी चाहिये । लोकाकाश की श्रेणियां और अलोकाकाश की श्रेणियां भी इसी प्रकार हैं ।

५३ प्रश्न-सेढीओ णं भंते ! पएसट्ठयाए किं कडजुम्माओ०-पुच्छा ।

५३ उत्तर-एवं चेव, एवं जाव उड्ढमहाययाओ ।

भावार्थ-५३ प्रश्न-हे भगवन् ! प्रदेशार्थ से श्रेणियां कृतयुग्म हैं० ?

५३ उत्तर-हे गौतम ! पूर्ववत्, यावत् ऊर्ध्व-अधो लम्बी श्रेणियां भी है ।

५४ प्रश्न-लोगागाससेढीओ णं भंते ! पएसट्ठयाए-पुच्छा ?

५४ उत्तर-गोयमा ! सिय कडजुम्माओ, णो तेओयाओ, सिय दावरजुम्माओ, णो कलिओगाओ । एवं पाईणपडीणाययाओ वि, दाहिणुत्तराययाओ वि ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ-५४ प्रश्न-हे भगवन् ! लोकाकाश की श्रेणियां प्रदेशार्थ से कृतयुग्म हैं० ?

५४ उत्तर-हे गौतम ! कदाचित् कृतयुग्म है, त्र्योज नहीं है, कदाचित् द्वापरयुग्म है, परन्तु कल्योज नहीं है। इस प्रकार पूर्व-पश्चिम लम्बी तथा दक्षिण-उत्तर लम्बी श्रेणियां भी हैं।

**५५ प्रश्न-उड्ढमहाययाओ णं०-पुच्छा ?**

**५५ उत्तर-गोयमा ! कडजुम्माओ, णो तेओयाओ, णो दावर-जुम्माओ, णो कलिओगाओ।**

भावार्थ-५५ प्रश्न-हे भगवन् ! ऊर्ध्व-अधो लम्बी लोकाकाश की श्रेणियां प्रदेशार्थ से कृतयुग्म हैं० ?

५५ उत्तर-हे गौतम ! वे कृतयुग्म हैं, किन्तु त्र्योज, द्वापरयुग्म और कल्योज नहीं हैं।

**५६ प्रश्न-अलोगागाससेढीओ णं भंते ! पएसट्ठयाए-पुच्छा ?**

**५६ उत्तर-गोयमा ! सिय कडजुम्माओ जाव सिय कलि-ओगाओ। एवं पाईणपडीणाययाओ वि, एवं दाहिणुत्तराययाओ वि, उड्ढमहाययाओ वि एवं चेव। णवरं णो कलिओगाओ, सेसं तं चेव।**

भावार्थ-५६ प्रश्न-हे भगवन् ! प्रदेशार्थ से अलोकाकाश की श्रेणियां कृतयुग्म हैं० ?

५६ उत्तर-हे गौतम ! कदाचित् कृतयुग्म यावत् कदाचित् कल्योज है। इसी प्रकार पूर्व-पश्चिम लम्बी तथा दक्षिण-उत्तर लम्बी तथा ऊर्ध्व-अधो लम्बी श्रेणियां भी हैं, परन्तु वे कल्योज नहीं हैं, शेष पूर्ववत्।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

**विवेचन**-किसी भी प्रकार का विशेषण लगाये बिना सामान्य श्रेणियों में अनादि-अपर्यवसित भंग पाया जाता है, शेष तीन भंग नहीं पाये जाते। लोकाकाश की श्रेणियों में 'सादि-सपर्यवसित' भंग पाया जाता है, शेष नहीं। क्योंकि लोकाकाश परिमित है। अलोकाकाश की श्रेणियों के विषय में चारों भंगों का सद्भाव बताया है, वह इस प्रकार घटित होता है कि-मध्यलोकवर्ती क्षुल्लक प्रतर के समीप आई हुई ऊर्ध्व-अधो लम्बी श्रेणियों की अपेक्षा 'सादि-सान्त' प्रथम भंग बनता है। लोकान्त से प्रारम्भ हो कर चारों ओर जाती हुई श्रेणियों की अपेक्षा 'सादि-अनन्त' दूसरा भंग घटित होता है। लोकान्त के निकट सभी श्रेणियों का अन्त होने से उनकी अपेक्षा 'अनादिसान्त' तीसरा भंग घटित होता है और लोक को छोड़ कर जो श्रेणियाँ हैं, उनकी अपेक्षा 'अनादि-अनन्त' चौथा भंग घटित होता है।

अलोक में तिरछी श्रेणियों का सादित्व होने पर भी सपर्यवसितपन (सान्त) न होने से प्रथम भंग नहीं बनता, शेष तीन भंग बनते हैं।

रुचक-प्रदेशों से प्रारम्भ हो कर जो पूर्व और दक्षिण लोकार्द्ध है, वह पश्चिम और उत्तर लोकार्द्ध के बराबर है। इसलिये पूर्व-पश्चिम श्रेणियाँ और दक्षिण-उत्तर श्रेणियाँ सम-संख्यक प्रदेशों वाली हैं। उनमें से कोई कृतयुग्म प्रदेशों वाली हैं और कोई द्वापरयुग्म प्रदेशों वाली हैं, किन्तु त्र्योज और कल्योज प्रदेशों वाली नहीं हैं। इसके लिये प्रदेशों की असद्भाव स्थापना बता कर इसी बात को स्पष्ट कर दिया है।

अलोकाकाश की श्रेणियों के प्रदेशों में कृतयुग्मादि चारों भेद पाये जाते हैं। इसमें वस्तु-स्वभाव ही मुख्य है।

## श्रेणियों के भेद और परमाणु की गति

**५७ प्रश्न-कइ णं भंते ! सेढीओ पण्णत्ताओ ?**

**५७ उत्तर-गोयमा ! सत्त सेढीओ पण्णत्ताओ, तं जहा-१ उज्जु-**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आयया २ एगओवंका ३ दुहओवंका ४ एगओखहा ५ दुहओखहा ६ चक्कवाला ७ अद्धचक्कवाला ।

भावार्थ-५७ प्रश्न-हे भगवन् ! श्रेणियाँ कितनी कही गई हैं ?

५७ उत्तर-हे गौतम ! श्रेणियाँ सात कहीं हैं । यथा-ऋज्वायत, एकतोवक्रा, उभयतोवक्रा, एकतःखा, उभयतःखा, चक्रवाल और अर्द्धचक्रवाल ।

५८ प्रश्न-परमाणुपोग्गलाणं भंते ! किं अणुसेढिं गई पवत्तइ, विसेढिं गई पवत्तइ ?

५८ उत्तर-गोयमा ! अणुसेढिं गई पवत्तइ, णो विसेढिं गई पवत्तइ ।

कठिन शब्दार्थ-अणुसेढि-अनुश्रेणी-आकाश-प्रदेशों की श्रेणी के अनुसार, विसेढि-विश्रेणी ।

भावार्थ-५८ प्रश्न-हे भगवन् ! 'परमाणु-पुद्गल' की गति अनुश्रेणी (आकाशप्रदेशों की श्रेणी के अनुसार) होती है या विश्रेणी (आकाश-प्रदेशों की श्रेणी के विपरीत) होती है ?

५८ उत्तर-हे गौतम ! परमाणु-पुद्गल की गति अनुश्रेणी होती है, विश्रेणी नहीं होती ।

५९ प्रश्न-दुपएसियाणं भंते ! खंधाणं अणुसेढिं गई पवत्तइ, विसेढिं गई पवत्तइ ?

५९ उत्तर-एवं चेव, एवं जाव अणंतपएसियाणं खंधाणं ।

भावार्थ-५९ प्रश्न-हे भगवन् ! द्विप्रदेशी स्कन्ध की गति अनुश्रेणी होती है

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

या विश्रेणी ?

५९ उत्तर-हे गौतम ! पूर्ववत्, यावत् अनन्तप्रदेशी स्कन्ध पर्यन्त ।

६० प्रश्न-णेरइयाणं भंते ! किं अणुसेढिं गई पवत्तइ, विसेढिं गई पवत्तइ ?

६० उत्तर-एवं चेव, एवं जाव वेमाणियाणं ।

भावार्थ-६० प्रश्न-हे भगवन् ! नैरयिक जीवों की अनुश्रेणी गति होती है या विश्रेणी ?

६० उत्तर-हे गौतम ! पूर्ववत्, यावत् वैमानिक पर्यन्त ।

६१ प्रश्न-इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए केवइया णिरयावाससयसहस्सा पण्णत्ता ?

६१ उत्तर-गोयमा ! तीसं णिरयावाससयसहस्सा पण्णत्ता, एवं जहा पढमसए पंचमुद्देसगे जाव 'अणुत्तरविमाण' त्ति ।

भावार्थ-६१ प्रश्न-हे भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी में कितने लाख नरकावास कहे हैं ?

६१ उत्तर-हे गौतम ! तीस लाख नरकावास कहे हैं, इत्यादि प्रथम शतक के पांचवें उद्देशक के अनुसार, यावत् विमान पर्यन्त ।

विवेचन-श्रेणियों का वर्णन पहले किया गया है । अब दूसरी प्रकार से वर्णन करते हुए श्रेणी के सात भेद बताये हैं । जिसके द्वारा जीव और पुद्गलों की गति होती है, उस आकाश-प्रदेश की पंक्ति को 'श्रेणी' कहते हैं । जीव और पुद्गल एक स्थान से दूसरे स्थान, श्रेणी के अनुसार ही जाते हैं । विश्रेणी (विरुद्ध श्रेणी) से गति नहीं होती ।

१ ऋजुआयता-जिस श्रेणी से जीव ऊर्ध्वलोक आदि से अधोलोक आदि में सीधे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चले जाते हैं, उसे 'ऋज्वायता श्रेणी' कहते हैं। इस श्रेणी के अनुसार जाने वाला जीव एक ही समय में गन्तव्य स्थान पर पहुँच जाता है।

२ एकतोवक्रा-जिस श्रेणी से जीव, पहले सीधा जा कर फिर वक्र-गति प्राप्त करे (दूसरी श्रेणी में प्रवेश करे) उसे 'एकतोवक्रा श्रेणी' कहते हैं। इसके द्वारा जाने वाले जीव को दो समय लगते हैं।

३ उभयतोवक्रा-जिस श्रेणी से जाता हुआ जीव, दो बार वक्र-गति करे। इस श्रेणी से जाने वाले जीव को तीन समय लगते हैं। यह श्रेणी ऊर्ध्वलोक की आग्नेयी (पूर्व-दक्षिण के मध्य का कोण) दिशा से अधोलोक की वायव्य (उत्तर-पश्चिम कोण) दिशा में उत्पन्न होने वाले जीव के होती है। पहले समय में वह आग्नेयी दिशा से नीचे की ओर आग्नेयी दिशा में जाता है। दूसरे समय में आग्नेयी दिशा से तिरछा पश्चिम की ओर दक्षिण-दिशा के-नैऋत्य कोण की ओर जाता है। तीसरे समय में वहाँ से तिरछा हो कर उत्तर-पश्चिम-वायव्य कोण की ओर जाता है। यह तीन समय की गति त्रसनाड़ी अथवा उससे बाहर के भाग में होती है।

४ एकतःखा-जिस श्रेणी से जीव या पुद्गल त्रसनाड़ी के बायें पक्ष से त्रसनाड़ी में प्रवेश करे और फिर त्रसनाड़ी से जा कर उसके बायीं ओर वाले भाग में उत्पन्न होते हैं, उसे 'एकतःखा श्रेणी' कहते हैं। इस श्रेणी की एक ओर त्रसनाड़ी के बाहर का 'ख' अर्थात् आकाश आया हुआ है, इसलिये इसका नाम 'एकतःखा' है। इस श्रेणी में दो, तीन या चार समय की वक्र-गति होने पर भी क्षेत्र की अपेक्षा से इसे पृथक् कहा है।

५ उभयतःखा-जीव, त्रसनाड़ी के बाहर से बायें पक्ष से प्रवेश कर के त्रसनाड़ी से जाते हुए, दाहिने पक्ष में जिस श्रेणी से उत्पन्न होते हैं, उसे 'उभयतःखा श्रेणी' कहते हैं, क्योंकि उसको त्रसनाड़ी के बाहर बायीं और दाहिनी ओर आकाश का स्पर्श होता है।

६ चक्रवाल-जिस श्रेणी से परमाणु आदि गोल चक्कर लगा कर उत्पन्न होते हैं।

७ अर्द्ध चक्रवाल-जिस श्रेणी से परमाणु आदि आधा चक्कर लगा कर उत्पन्न होते हैं, उसे 'अर्द्ध चक्रवाल' कहते हैं।

श्रेणियों के कथन के पश्चात् परमाणु-पुद्गलादि तथा जीवों की गति का वर्णन किया है। उनकी गति, श्रेणी के अनुसार होती है, विश्रेणी से नहीं होती।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# गणिपिटक के भेद

६२ प्रश्न–कइविहे णं भंते ! गणिपिडए पण्णत्ते ?

६२ उत्तर–गोयमा ! दुवालसंगे गणिपिडए पण्णत्ते, तं जहा–आयारो जाव दिट्ठिवाओ ।

कठिन शब्दार्थ––गणिपिडए––गणिपिटक––आचार्य की पेटी ।

भावार्थ–६२ प्रश्न–हे भगवन् ! गणिपिटक कितने प्रकार का कहा है ?

६२ उत्तर–हे गौतम ! गणिपिटक बारह अंग रूप कहा है । यथा–आचारांग यावत् दृष्टिवाद ।

६३ प्रश्न–से किं तं आयारो ?

६३ उत्तर–आयारे णं समणाणं णिग्गंथाणं आयार–गोयर०–एवं अंगपरूवणा भाणियव्वा जहा णंदीए जाव–

"सुत्तत्थो खलु पढमो बीओ णिज्जुत्तिमीसओ भणिओ ।
तइओ य णिरवसेसो एस विही होइ अणुओगे ।"

भावार्थ–६३ प्रश्न–हे भगवन् ! आचारांग किसे कहते हैं ?

६३ उत्तर–हे गौतम ! आचारांग सूत्र में श्रमण-निर्ग्रन्थों का आचार, गोचर विधि (भिक्षाविधि) आदि चारित्र-धर्म की प्ररूपणा की गई है, नन्दीसूत्र के अनुसार सभी अंग सूत्रों का वर्णन जानना चाहिये, यावत्–"*सुत्तत्थो खलु पढमो*" इस गाथा पर्यन्त । इस गाथा का अर्थ इस प्रकार है–सर्व प्रथम सूत्र का अर्थ कहना चाहिये, दूसरे में निर्युक्ति मिश्रित अर्थ कहना चाहिये और फिर तीसरे में निरवशेष अर्थात् सम्पूर्ण अर्थ का कथन कहना चाहिये । यह अनुयोग (सूत्रानुसार अर्थ) की विधि है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

**विवेचन**—रत्नकरण्ड के समान आचार्य के लिये जो पिटक (आचार करण्डक—आचार की पेटी) हो, उसे 'गणिपिटक' कहते हैं। गणिपिटक के आचारांग से ले कर दृष्टिवाद तक बारह भेद कहे हैं। आचारांग सूत्र में श्रमण-निर्ग्रन्थों के अनेकविध आचार, गोचर (भिक्षा विधि), विनय विनयफल, ग्रहण, आसेवन शिक्षा आदि का वर्णन किया है। नन्दी सूत्र में अंग सूत्रों की प्ररूपणा 'सुत्तत्थो' इत्यादि गाथा पर्यन्त जानना चाहिये। गुरु महाराज द्वारा शिष्य को दी जाने वाली वाचना के विषय में बताया है कि सर्व-प्रथम मूल सूत्र और उसका अर्थ मात्र कहना चाहिये। विशेष विस्तार से कहने में प्राथमिक शिष्यों को मतिसम्मोह न हो जाय, इसलिये प्रथम सूत्रार्थ मात्र कहना चाहिये। इसके बाद सूत्र को स्पर्श करने वाली—निर्युक्ति (टीका आदि व्याख्या) सहित अर्थ कहना चाहिये। यह दूसरा अनुयोग है। तदनन्तर प्रसंगानुप्रसंग के कथन से सम्पूर्ण व्याख्या कहनी चाहिये। यह तीसरा अनुयोग है। मूल सूत्र का अनुकूल अर्थ के साथ संयोजन करना 'अनुयोग' कहलाता है। यह अनुयोग की विधि है।

## गति आदि का अल्प-बहुत्व

**६४ प्रश्न—एएसि णं भंते ! णेरइयाणं जाव देवाणं, सिद्धाण य पंचगइसमासेणं कयरे कयरे०—पुच्छा।**

**६४ उत्तर—गोयमा ! अप्पाबहुयं जहा बहुवत्तव्वयाए, अट्ठगइसमासअप्पाबहुगं च।**

**भावार्थ—६४ प्रश्न—हे भगवन् ! नैरयिक यावत् देव और सिद्ध, इन पांच गति के समुदाय में कौन जीव, किन जीवों से अल्प, बहुत, तुल्य या विशेषाधिक हैं ?**

**६४ उत्तर—हे गौतम ! प्रज्ञापना सूत्र के तीसरे बहुवक्तव्यता पद के अनुसार तथा आठ गति के समुदाय का भी अल्प-बहुत्व जानना चाहिये।**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

६५ प्रश्न-एएसि णं भंते ! सइंदियाणं, एगिंदियाणं जाव अणिंदियाण य कयरे कयरे० ?

६५ उत्तर-एयं पि जहा बहुवत्तव्वयाए तहेव ओहियं पयं भाणियव्वं, सकाइयअप्पाबहुगं तहेव ओहियं भाणियव्वं ।

भावार्थ-६५ प्रश्न-हे भगवन् ! सइन्द्रिय, एकेन्द्रिय यावत् अनिन्द्रिय जीवों में कौन जीव, किन जीवों से अल्प, बहुत, तुल्य या विशेषाधिक हैं ?

६५ उत्तर-हे गौतम ! प्रज्ञापना सूत्र के तीसरे बहुवक्तव्यता पद के औधिक पद के अनुसार जानना चाहिये । सकायिक जीवों का अल्प-बहुत्व भी बहुवक्तव्यता के औधिक पद के अनुसार है ।

६६ प्रश्न-एएसि णं भंते ! जीवाणं, पोग्गलाणं जाव सव्वपज्जवाण य कयरे कयरे० ?

६६ उत्तर-जाव बहुवत्तव्वयाए ।

भावार्थ-६६ प्रश्न-हे भगवन् ! जीव और पुद्गल यावत् सर्व पर्यायों में कौन किससे अल्प, बहुत, तुल्य या विशेषाधिक हैं ?

६६ उत्तर-हे गौतम ! प्रज्ञापना सूत्र के तीसरे बहुवक्तव्यता पद के अनुसार जानो ।

६७ प्रश्न-एएसि णं भंते ! जीवाणं, आउयस्स कम्मस्स बंधगाणं अबंधगाणं ?

६७ उत्तर-जहा बहुवत्तव्वयाए जाव आउयस्स कम्मस्स अबंधगा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विसेसाहिया ।

❀ 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति । ❀

॥ पणवीसइमे सए तईओ उद्देसो समत्तो ॥

**भावार्थ**–६७ प्रश्न–हे भगवन् ! आयु-कर्म के बन्धक और अबन्धक जीवों में कौन किससे अल्प, बहुत, तुल्य या विशेषाधिक हैं ?

६७ उत्तर–हे गौतम ! प्रज्ञापना सूत्र के तीसरे बहुवक्तव्यता पद के अनुसार, यावत् 'आयु-कर्म के अबन्धक जीव विशेषाधिक हैं' तक ।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'– कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

**विवेचन**–नैरयिक, तिर्यंच, मनुष्य, देव और सिद्ध–इन पांच की अल्प-बहुत्व के लिये प्रज्ञापना सूत्र के तीसरे पद का अतिदेश किया है । वहां का संक्षिप्त सार इस गाथा में बताया है––

**नर नेरइया देवा सिद्धा तिरिया कमेण इह होंति ।**
**थोवमसंखअसंखा अणंतगुणिया अणंतगुणा ।।**

अर्थात् सब से थोड़े मनुष्य हैं । उनसे नैरयिक असंख्यात गुण हैं । उनसे देव असंख्यात गुण हैं । उनसे सिद्ध अनन्त गुण हैं और उनसे तिर्यंच अनन्त गुण हैं ।

आठ गति के अल्प-बहुत्व के लिये भी प्रज्ञापना सूत्र के तीसरे पद का अतिदेश किया है । वहाँ का सारांश इस प्रकार है–पहले आठ गतियाँ (जिनका कि अल्प-बहुत्व बताया जा रहा है) के नाम बताये जाते हैं । यथा––

**नरकगतिस्तथा तिर्यग् नरामरगतयः ।**
**स्त्री पुरुष भेदाद्द्वेधा, सिद्धिगतिश्चेत्यष्टौ ।।**

अर्थात्––१ नरकगति २ पुरुष तिर्यंच ३ स्त्री तिर्यंच (तिर्यंचणी) ४ पुरुष मनुष्य गति ५ स्त्री मनुष्य गति ६ पुरुष देव गति ७ स्त्री देव गति और ८ सिद्ध गति ।

इनका अल्प-बहुत्व इस प्रकार है––

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नारी नर नेरइया तिरिक्ख सुर देवि सिद्ध तिरिया य ।
थोव असंखगुणा चउ संखगुणाणंतगुण दोण्णि ।।

अर्थात्–सब से अल्प मनुष्यिनी (स्त्रियां) हैं, उनसे मनुष्य असंख्यात गुण हैं, उनसे नैरयिक असंख्यात गुण है, उनसे तिर्यंचिनी असंख्यात गुण हैं, उनसे देव असंख्यात गुण हैं, उनसे देवियां संख्यात गुण हैं, उनसे सिद्ध अनन्त गुण हैं और उनसे तिर्यंच अनन्त गुण हैं।

इसके पश्चात् सइन्द्रिय, एकेन्द्रिय आदि का अल्प-बहुत्व बताया है । इसके लिये भी प्रज्ञापना सूत्र के तीसरे पद का अतिदेश किया है । उसका सारांश इस प्रकार है–

पण-चउ-ति-दुय अणिंदिय, एगिंदिय, सइंदिया, कमा हुंति ।
थोवा तिण्णि य अहिया, दो णंतगुणा विसेसाहिया ।।

अर्थ–सब से अल्प पञ्चेन्द्रिय जीव हैं, उनसे चतुरिन्द्रिय विशेषाधिक हैं, उनसे तेइन्द्रिय विशेषाधिक है, उनसे बेइन्द्रिय विशेषाधिक हैं, उनसे अनिन्द्रिय अनन्त गुण हैं, उनसे एकेन्द्रिय अनन्त गुण हैं और उनसे सइन्द्रिय विशेषाधिक हैं ।

सकायिक जीवों के अल्प-बहुत्व के लिये भी प्रज्ञापना सूत्र के तीसरे पद का अतिदेश किया है । सारांश इस प्रकार है–

तस-तेउ-पुढवि,जल-वाउ-काय अकाय-वणस्सइ सकाया ।
थोव असंखगुणाहिय तिण्णि उ दोणंतगुण अहिया ।।

अर्थ–सब से थोड़े त्रसकायिक हैं, उनसे तेउकायिक जीव असंख्यात गुण हैं, उनसे पृथ्वीकायिक, अप्कायिक और वायुकायिक उत्तरोत्तर विशेषाधिक हैं, उनसे अकायिक अनन्त गुण हैं, उनसे वनस्पतिकायिक अनन्त गुण हैं और उनसे सकायिक विशेषाधिक हैं ।

इसके पश्चात् जीव, पुद्गल, अद्धा समय, सर्व द्रव्य, सर्व प्रदेश और सर्व पर्यायों के अल्प-बहुत्व का कथन किया है । यथा–

जीवा पोग्गल-समया दव्व पएसा य पज्जवा चेव ।
थोवा णंताणंता विसेसाअहिया दुवेऽणंता ।।

अर्थ–सब से थोड़े जीव हैं, उनसे पुद्गल अनन्त गुण हैं, उनसे अद्धासमय अनन्त गुण हैं, उनसे सर्व द्रव्य विशेषाधिक हैं, उनसे सर्व प्रदेश अनन्त गुण हैं और उनसे सर्व पर्याय अनन्त गुण हैं । प्रज्ञापना सूत्र में इनके अल्प-बहुत्व के कारण का भी कथन किया है ।

इसके पश्चात् आयु-कर्म के बन्धक, अबन्धक, पर्याप्त, अपर्याप्त, सुप्त, जाग्रत,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समवहत (समुद्घात को प्राप्त), असमवहत, सातावेदक, असातावेदक, इन्द्रियोपयुक्त (इन्द्रियों के उपयोग वाले), नो-इन्द्रियोपयुक्त, साकारोपयुक्त और अनाकारोपयुक्त जीवों के अल्प-बहुत्व का कथन किया है। इसके लिये प्रज्ञापना सूत्र के तीसरे पद का अतिदेश किया है।

॥ पच्चीसवें शतक का तीसरा उद्देशक सम्पूर्ण ॥

# शतक २५ उद्देशक ४

## द्रव्यादि की अपेक्षा युग्म प्ररूपणा

१ प्रश्न-कइ णं भंते ! जुम्मा पण्णत्ता ?

१ उत्तर-गोयमा ! चत्तारि जुम्मा पण्णत्ता, तं जहा-कडजुम्मे, जाव कलिओगे।

प्रश्न-से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ-'चत्तारि जुम्मा, पण्णत्ता-कडजुम्मे जाव कलिओगे' ?

उत्तर-एवं जहा अट्ठारसमसए चउत्थे उद्देसए तहेव जाव से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ।

भावार्थ-१ प्रश्न-हे भगवन् ! युग्म कितने कहे हैं ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१ उत्तर-हे गौतम ! युग्म (राशि) चार प्रकार के कहे हैं। यथा-कृतयुग्म यावत् कल्योज।

प्रश्न-हे भगवन् ! चार युग्म क्यों कहे हैं ?

उत्तर-हे गौतम ! अठारहवें शतक के चौथे उद्देशकानुसार, यावत् इसलिये हे गौतम ! इस प्रकार कहा है।

२ प्रश्न-णेरइयाणं भंते ! कइ जुम्मा पण्णत्ता ?

२ उत्तर-गोयमा चत्तारि जुम्मा पण्णत्ता, तं जहा-कडजुम्मे जाव कलिओए।

प्रश्न-से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ-'णेरइयाणं चत्तारि जुम्मा पण्णत्ता, तं जहा-कडजुम्मे'० ?

उत्तर-अट्ठो तहेव। एवं जाव वाउकाइयाणं।

भावार्थ-२ प्रश्न-हे भगवन् ! नैरयिकों में कितने युग्म कहे हैं ?

२ उत्तर-हे गौतम ! चार युग्म कहे हैं। यथा-कृतयुग्म यावत् कल्योज।

प्रश्न-हे भगवन् ! क्या कारण है कि नैरयिकों के चार युग्म कहे हैं ?

उत्तर-हे गौतम ! पूर्ववत्, यावत् वायुकायिक पर्यन्त।

३ प्रश्न-वणस्सइकाइयाणं भंते !-पुच्छा।

३ उत्तर-गोयमा ! वणस्सइकाइया सिय कडजुम्मा, सिय तेओगा, सिय दावरजुम्मा, सिय कलिओगा।

प्रश्न-से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ-'वणस्सइकाइया जाव कलिओगा' ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उत्तर-गोयमा ! उववायं पडुच्च, से तेणट्ठेणं तं चेव। बेइंदियाणं जहा णेरइयाणं। एवं जाव वेमाणियाणं, सिद्धाणं जहा वणस्सइकाइयाणं।

भावार्थ-३ प्रश्न-हे भगवन् ! वनस्पतिकायिक जीवों में कितने युग्म कहे हैं ?

३ उत्तर-हे गौतम ! वनस्पतिकायिक जीव कदाचित् कृतयुग्म होते हैं, कदाचित् त्र्योज, द्वापरयुग्म और कदाचित् कल्योज होते हैं।

प्रश्न-हे भगवन् ! क्या कारण है कि 'वनस्पतिकायिक यावत् कदाचित् कल्योज होते हैं ?

उत्तर-हे गौतम ! उपपात (जन्म) की अपेक्षा ऐसा कहा है कि यावत् कल्योज होते हैं। बेइन्द्रिय के विषय में नैरयिकों के समान, यावत् वैमानिक पर्यन्त। सिद्ध वनस्पतिकायिक जीवों के समान है।

विवेचन-राशि अर्थात् संख्या को 'युग्म' कहते हैं। जिस राशि में से चार-चार का अपहार करने पर अन्त में चार शेष रहें, उस राशि को 'कृतयुग्म' कहते हैं, तीन शेष रहें, उसे 'त्र्योज,' दो शेष रहें, उसे 'द्वापरयुग्म' और एक शेष रहें, उसे 'कल्योज' कहते हैं।

वनस्पतिकायिक जीव अनन्त हैं। इसलिए वे स्वाभाविक रूप से कृतयुग्म ही होते हैं, तथापि दूसरी गति से आ कर एक-दो इत्यादि जीव, उनमें उत्पन्न होते हैं, इसलिए वे जीव कृतयुग्म आदि चारों राशि रूप होते हैं। इसी प्रकार वनस्पतिकायिक जीव मरण की अपेक्षा भी कृतयुग्मादि चारों राशि होते हैं, किंतु उसकी यहाँ विवक्षा नहीं की है।

४ प्रश्न-कइविहा णं भंते ! सव्वदव्वा पण्णत्ता ?

४ उत्तर-गोयमा ! छव्विहा सव्वदव्वा पण्णत्ता, तं जहा-धम्मत्थिकाए, अधम्मत्थिकाए जाव अद्धासमए।

भावार्थ-४ प्रश्न-हे भगवन् ! सर्व द्रव्य कितने प्रकार के कहे हैं ?

४ उत्तर-हे गौतम ! सर्व द्रव्य छह प्रकार के कहे हैं। यथा-धर्मास्ति-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

काय, अधर्मास्तिकाय यावत् अद्धासमय (काल)।

५ प्रश्न–धम्मत्थिकाए णं भंते ! दव्वट्ठयाए किं कडजुम्मे जाव कलिओगे ?

५ उत्तर–गोयमा ! णो कडजुम्मे, णो तेयोए, णो दावरजुम्मे, कलिओए। एवं अहम्मत्थिकाए वि, एवं आगासत्थिकाए वि।

भावार्थ–५ प्रश्न–हे भगवन् ! धर्मास्तिकाय द्रव्यार्थ से कृतयुग्म, यावत् कल्योज रूप है?'

५ उत्तर–हे गौतम ! धर्मास्तिकाय द्रव्यार्थ से कृतयुग्म नहीं, त्र्योज नहीं और द्वापरयुग्म भी नहीं है, किन्तु कल्योज रूप है। इसी प्रकार अधर्मास्तिकाय और आकाशास्तिकाय भी जानना चाहिये।

६ प्रश्न–जीवत्थिकाए णं भंते ! पुच्छा।

६ उत्तर–गोयमा ! कडजुम्मे, णो तेओए, णो दावरजुम्मे, णो कलिओए।

भावार्थ–६ प्रश्न–हे भगवन् ! जीवास्तिकाय द्रव्यार्थ से कृतयुग्म है० ?

६ उत्तर–हे गौतम ! जीवास्तिकाय द्रव्यार्थ से कृतयुग्म है, परन्तु त्र्योज, द्वापरयुग्म और कल्योज नहीं है।

७ प्रश्न–पोग्गलत्थिकाए णं भंते ! पुच्छा।

७ उत्तर–गोयमा ! सिय कडजुम्मे जाव सिय कलिओगे। अद्धा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समए जहा जीवत्थिकाए ।

भावार्थ–७ प्रश्न–हे भगवन् ! पुद्गलास्तिकाय द्रव्यार्थ से कृतयुग्म० ?

७ उत्तर–हे गौतम ! कदाचित् कृतयुग्म यावत् कदाचित् कल्योज भी होता है । अद्धासमय का कथन जीवास्तिकाय के समान है ।

८ प्रश्न–धम्मत्थिकाए णं भंते ! पएसट्ठयाए किं कडजुम्मे–पुच्छा ।

८ उत्तर–गोयमा ! कडजुम्मे, णो तेओए, णो दावरजुम्मे, णो कलिओगे । एवं जाव अद्धासमए ।

भावार्थ–८ प्रश्न–हे भगवन् ! धर्मास्तिकाय प्रदेशार्थ से कृतयुग्म है० ?

८ उत्तर–हे गौतम ! कृतयुग्म है, किन्तु त्र्योज, द्वापरयुग्म और कल्योज नहीं है । इसी प्रकार यावत् अद्धासमय पर्यंत ।

९ प्रश्न–एएसि णं भंते ! धम्मत्थिकाय अधम्मत्थिकाय० जाव अद्धासमयाणं दव्वट्ठयाए० ?

९ उत्तर–एएसि णं अप्पाबहुगं जहा बहुवत्तव्वयाए तहेव णिरवसेसं ।

भावार्थ–९ प्रश्न–हे भगवन् ! धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय यावत् अद्धासमय, इनमें द्रव्यार्थ से कौन किससे अल्प यावत् विशेषाधिक है ?

९ उत्तर–हे गौतम ! प्रज्ञापना सूत्र के तीसरे बहुवक्तव्यता पद के अनुसार इन सब का अल्प-बहुत्व है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१० प्रश्न–धम्मत्थिकाए णं भंते ! किं ओगाढे, अणोगाढे ?

१० उत्तर–गोयमा ! ओगाढे, णो अणोगाढे ।

भावार्थ–१० प्रश्न–हे भगवन् ! धर्मास्तिकाय अवगाढ़ (आश्रित) है या अनवगाढ़ है ?

१० उत्तर–हे गौतम ! अवगाढ़ है, अनवगाढ़ नहीं ।

११ प्रश्न–जइ ओगाढे किं संखेज्जपएसोगाढे, असंखेज्जपएसोगाढे, अणंतपएसोगाढे ?

११ उत्तर–गोयमा ! णो संखेज्जपएसोगाढे, असंखेज्जपएसोगाढे, णो अणंतपएसोगाढे ।

भावार्थ–११ प्रश्न–हे भगवन् ! यदि अवगाढ़ है, तो क्या संख्यात प्रदेशावगाढ़ है, असंख्यात प्रदेशावगाढ़ है या अनन्त प्रदेशावगाढ़ है ?

११ उत्तर–हे गौतम ! संख्यात प्रदेशावगाढ़ नहीं और अनन्त प्रदेशावगाढ़ भी नहीं, किन्तु असंख्यात प्रदेशावगाढ़ है ।

१२ प्रश्न–जइ असंखेज्जपएसोगाढे किं कडजुम्मपएसोगाढे–पुच्छा ।

१२ उत्तर–गोयमा ! कडजुम्मपएसोगाढे, णो तेओग०, णो दावरजुम्म०, णो कलिओगपएसोगाढे । एवं अधम्मत्थिकाए वि, एवं आगासत्थिकाए वि, जीवत्थिकाए, पुग्गलत्थिकाए, अद्धासमए एवं चेव ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ-१२ प्रश्न-हे भगवन् ! यदि असंख्यात प्रदेशावगाढ़ है, तो कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़ है० ?

१२ उत्तर-हे गौतम ! कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़ है, किन्तु त्र्योज, द्वापरयुग्म और कल्योज प्रदेशावगाढ़ नहीं हैं। इसी प्रकार अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय और अद्धासमय भी।

**१३ प्रश्न-इमा णं भंते ! रयणप्पभा पुढवी किं ओगाढा, अणोगाढा ?**

**१३ उत्तर-जहेव धम्मत्थिकाए, एवं जाव अहेसत्तमा, सोहम्मे एवं चेव, एवं जाव ईसिपब्भारा पुढवी।**

भावार्थ-१३ प्रश्न-हे भगवन् ! यह रत्न प्रभा पृथ्वी अवगाढ़ है या अनवगाढ़ ?

१३ उत्तर-हे गौतम ! धर्मास्तिकाय के समान, यावत् अधःसप्तम पृथ्वी पर्यन्त तथा सौधर्म यावत् ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी के विषय में भी इसी प्रकार जानना चाहिये।

विवेचन-धर्मास्तिकाय द्रव्य रूप से एक है। इसलिये उसमें चार का अपहार नहीं होता, एक ही अवस्थित रहता है। जीवास्तिकाय अनन्त होने से कृतयुग्म है। पुद्गलास्तिकाय यद्यपि अनन्त है, तथापि उसके संघात (मिलने) और भेद (पृथक् होने) के कारण उसका अनन्तपन अनवस्थित है. इसलिये वह कृतयुग्मादि चारों राशि रूप होता है। अद्धासमय में अतीत-अनागत काल में अवस्थित अनन्तपन होने से कृतयुग्मता है, प्रदेशार्थ रूप से सभी द्रव्य कृतयुग्म हैं, क्योंकि इनमें यथायोग्य असंख्यातपन और अनन्तपन अवस्थित है।

धर्मास्तिकायादि तीन एक-एक द्रव्य होने से द्रव्यार्थ से तुल्य हैं और दूसरे द्रव्यों की अपेक्षा अल्प हैं। उनसे जीवास्तिकाय अनन्त गुण हैं। उनसे पुद्गलास्तिकाय और अद्धासमय उत्तरोत्तर अनन्त गुण हैं। प्रदेश रूप से धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय के प्रदेश असंख्यात हैं, वे परस्पर तुल्य हैं और दूसरे प्रदेशों की अपेक्षा अल्प हैं। उससे जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय, अद्धासमय और आकाशास्तिकाय उत्तरोत्तर अनन्त गुण हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

धर्मास्तिकाय लोकाकाश प्रमाण है। इसलिये वह लोकाकाश के असंख्यात प्रदेशों में अवगाढ़ है। लोक के असंख्यात प्रदेश अवस्थित होने से उनमें कृतयुग्मता है। धर्मास्तिकाय भी लोक प्रमाण होने से उसमें भी कृतयुग्मता है। इस प्रकार सभी अस्तिकाय लोक प्रमाण होने से उनमें कृतयुग्मता है किन्तु आकाशास्तिकाय के अवस्थित अनन्त प्रदेश होने से तथा आत्मावगाही होने से कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़ता है और अद्धासमय अवस्थित असंख्येय प्रदेशात्मक मनुष्य क्षेत्रावगाही होने से कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़ता है।

**१४ प्रश्न-जीवे णं भंते ! दव्वट्ठयाए किं कडजुम्मे-पुच्छा।**

**१४ उत्तर-गोयमा ! णो कडजुम्मे, णो तेओगे, णो दावरजुम्मे, कलिओए। एवं णेरइए वि, एवं जाव सिद्धे।**

भावार्थ-१४ प्रश्न-हे भगवन् ! जीव द्रव्यार्थ से कृतयुग्म है० ?

१४ उत्तर-हे गौतम ! कृतयुग्म, त्र्योज या द्वापरयुग्म नहीं, परन्तु कल्योज है। इस प्रकार नैरयिक यावत् सिद्ध पर्यंत।

**१५ प्रश्न-जीवा णं भंते ! दव्वट्ठयाए किं कडजुम्मा-पुच्छा।**

**१५ उत्तर-गोयमा ! ओघादेसेणं कडजुम्मा, णो तेओगा, णो दावरजुम्मा, णो कलिओगा। विहाणादेसेणं णो कडजुम्मा, णो तेओगा, णो दावरजुम्मा, कलिओगा।**

भावार्थ-१५ प्रश्न-हे भगवन् ! जीव (बहुत जीव) द्रव्यार्थ से कृतयुग्म हैं० ?

१५ उत्तर-हे गौतम ! जीव ओघादेश (सामान्य) से कृतयुग्म हैं, किंतु त्र्योज, द्वापरयुग्म और कल्योज नहीं हैं। विधानादेश (प्रत्येक की अपेक्षा) कृतयुग्म, त्र्योज और द्वापरयुग्म नहीं, किन्तु कल्योज हैं।

**१६ प्रश्न-णेरइया णं भंते ! दव्वट्ठयाए-पुच्छा।**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१६ उत्तर-गोयमा ! ओघादेसेणं सिय कडजुम्मा जाव सिय कलिओगा । विहाणादेसेणं णो कडजुम्मा, णो तेओगा, णो दावर-जुम्मा, कलिओगा । एवं जाव सिद्धा ।

भावार्थ-१६ प्रश्न-हे भगवन् ! नैरयिक जीव द्रव्यार्थ से कृतयुग्म है० ?

१६ उत्तर-हे गौतम ! ओघादेश से कदाचित् कृतयुग्म यावत् कल्योज हैं, विधानादेश से कृतयुग्म, त्र्योज और द्वापरयुग्म नहीं, किन्तु कल्योज हैं । इस प्रकार यावत् सिद्ध पर्यंत ।

१७ प्रश्न-जीवे णं भंते ! पएसट्ठयाए किं कडजुम्मे-पुच्छा ।

१७ उत्तर-गोयमा ! जीवपएसे पडुच्च कडजुम्मे, णो तेओगे, णो दावरजुम्मे, णो कलिओगे । सरीरपएसे पडुच्च सिय कडजुम्मे जाव सिय कलिओगे । एवं जाव वेमाणिए ।

भावार्थ-१७ प्रश्न-हे भगवन् ! जीव, प्रदेशार्थ से कृतयुग्म है० ?

१७ उत्तर-हे गौतम ! आत्म-प्रदेशों की अपेक्षा जीव, कृतयुग्म है, परन्तु त्र्योज, द्वापरयुग्म और कल्योज नहीं है । शरीर-प्रदेशों की अपेक्षा जीव कदाचित् कृतयुग्म यावत् कदाचित् कल्योज भी होता है । इसी प्रकार यावत् वैमानिक पर्यंत ।

१८ प्रश्न-सिद्धे णं भंते ! पएसट्ठयाए किं कडजुम्मे-पुच्छा ।

१८ उत्तर-गोयमा ! कडजुम्मे, णो तेओगे, णो दावरजुम्मे, णो कलिओगे ।

भावार्थ-१८ प्रश्न-हे भगवन् ! सिद्ध, आत्म-प्रदेशार्थ से कृतयुग्म है० ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१८ उत्तर-हे गौतम ! कृतयुग्म है, किन्तु त्र्योज, द्वापरयुग्म और कल्योज नहीं है ।

१९ प्रश्न-जीवा णं भंते ! पएसट्ठयाए किं कडजुम्मा०-पुच्छा ।

१९ उत्तर-गोयमा ! जीवपएसे पडुच्च ओघादेसेण वि विहाणादेसेण वि कडजुम्मा, णो तेओगा, णो दावरजुम्मा, णो कलिओगा । सरीरपएसे पडुच्च ओघादेसेणं सिय कडजुम्मा जाव सिय कलिओगा, विहाणादेसेणं कडजुम्मा वि जाव कलिओगा वि । एवं णेरइया वि, एवं जाव वेमाणिया ।

प्रश्न-सिद्धा णं भंते !-पुच्छा ।

उत्तर-गोयमा ! ओघादेसेण वि विहाणादेसेण वि कडजुम्मा, णो तेओगा, णो दावरजुम्मा, णो कलिओगा ।

भावार्थ-१९ प्रश्न-हे भगवन् ! जीव (बहुत जीव) प्रदेशार्थ से कृतयुग्म हैं०?

१९ उत्तर-हे गौतम ! प्रदेशों की अपेक्षा जीव ओघादेश से और विधानादेश से भी कृतयुग्म हैं, किन्तु त्र्योज, द्वापरयुग्म और कल्योज नहीं हैं । शरीरप्रदेशों की अपेक्षा जीव ओघादेश से कदाचित् कृतयुग्म यावत् कल्योज हैं, विधानादेश से कृतयुग्म भी हैं यावत् कल्योज भी हैं । इसी प्रकार नैरयिक यावत् वैमानिक पर्यन्त ।

प्रश्न-हे भगवन् ! सिद्ध, प्रदेशार्थ से कृतयुग्म है० ?

उत्तर-हे गौतम ! ओघादेश से और विधानादेश से भी वे कृतयुग्म हैं, किन्तु त्र्योज, द्वापरयुग्म और कल्योज नहीं हैं ।

विवेचन-जीव, द्रव्य रूप से एक द्रव्य है, इसलिये वह कल्योज है और बहुत से

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जीव, द्रव्य रूप से अनन्त अवस्थित होने से कृतयुग्म हैं और विधानादेश से अर्थात् प्रत्येक की अपेक्षा वे कल्योज हैं।

जीव-प्रदेशों की अपेक्षा समस्त जीवों के प्रदेश अवस्थित अनन्त होने से और प्रत्येक जीव के प्रदेश अवस्थित असंख्यात होने से चार-चार का अपहार करते हुए अन्त में चार शेष रहते हैं। अतः कृतयुग्म होते हैं। शरीर-प्रदेशों की अपेक्षा—सामान्य से सभी जीवों के शरीर-प्रदेश संघात और भेद से अनवस्थित अनन्त होने से भिन्न-भिन्न समय में उनमें कृतयुग्मादि चार राशि बन सकती है। विशेष में प्रत्येक जीव, शरीर के प्रदेशों में एक समय में भी चारों राशि पाई जा सकती है, क्योंकि किसी जीव-शरीर के प्रदेश कृतयुग्म होते हैं, तो किसी अन्य जीव-शरीर के प्रदेश व्योजादि राशि रूप होते हैं। इस प्रकार चारों राशि पाई जाती हैं।

**२० प्रश्न—जीवे णं भंते ! किं कडजुम्मपएसोगाढे—पुच्छा।**

**२० उत्तर—गोयमा ! सिय कडजुम्मपएसोगाढे जाव सिय कलिओगपएसोगाढे। एवं जाव सिद्धे।**

भावार्थ—२० प्रश्न—हे भगवन् ! जीव कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़ है० ?

२० उत्तर—हे गौतम ! कदाचित् कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़ यावत् कल्योज प्रदेशावगाढ़ होता है, यावत् सिद्ध पर्यन्त।

**२१ प्रश्न—जीवा णं भंते ! किं कडजुम्मपएसोगाढा—पुच्छा।**

**२१ उत्तर—गोयमा ! ओघादेसेणं कडजुम्मपएसोगाढा, णो तेओग०, णो दावर०, णो कलिओग०। विहाणादेसेणं कडजुम्मपएसोगाढा वि जाव कलिओगपएसोगाढा वि।**

भावार्थ—२१ प्रश्न—हे भगवन् ! जीव (बहुत जीव) कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़ हैं० ?

२१ उत्तर—हे गौतम ! ओघादेश से कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़ हैं, किन्तु

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

त्र्योज, द्वापरयुग्म और कल्योज प्रदेशावगाढ़ नहीं हैं। विधानादेश से कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़ यावत् कल्योज प्रदेशावगाढ़ हैं।

२२ प्रश्न–णेरइयाणं–पुच्छा।

२२ उत्तर–गोयमा! ओघादेसेणं सिय कडजुम्मपएसोगाढा जाव सिय कलिओगपएसोगाढा। विहाणादेसेणं कडजुम्मपएसोगाढा वि जाव कलिओगपएसोगाढा वि। एवं एगिंदिय-सिद्धवज्जा सव्वे वि, सिद्धा एगिंदिया य जहा जीवा।

भावार्थ–२२ प्रश्न–हे भगवन्! नैरयिक कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़ है०?

२२ उत्तर–हे गौतम! ओघादेश से कदाचित् कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़ यावत् कल्योज प्रदेशावगाढ़ है। विधानादेश से कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़ यावत् कल्योज प्रदेशावगाढ़ है। इसी प्रकार एकेन्द्रिय और सिद्धों को छोड़ कर सभी जीव हैं। सिद्ध और एकेन्द्रिय जीवों का कथन सामान्य जीवों के समान है।

२३ प्रश्न–जीवे णं भंते! किं कडजुम्मसमयट्ठिईए–पुच्छा।

२३ उत्तर–गोयमा! कडजुम्मसमयट्ठिईए, णो तेओग०, णो दावर०, णो कलिओगसमयट्ठिईए।

भावार्थ–२३ प्रश्न–हे भगवन्! जीव कृतयुग्म समय की स्थिति वाला है०?

२३ उत्तर–हे गौतम! जीव कृतयुग्म समय की स्थिति वाला है, किन्तु त्र्योज, द्वापरयुग्म और कल्योज समय की स्थिति वाला नहीं है।

२४ प्रश्न–णेरइए णं भंते! पुच्छा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२४ उत्तर-गोयमा ! सिय कडजुम्मसमयट्ठिईए जाव सिय कलिओगसमयट्ठिईए । एवं जाव वेमाणिए, सिद्धे जहा जीवे ।

भावार्थ-२४ प्रश्न-हे भगवन् ! नैरयिक कृतयुग्म समय की स्थिति वाला है० ?

२४ उत्तर-हे गौतम ! कदाचित् कृतयुग्म समय की स्थिति वाला यावत् कदाचित् कल्योज समय की स्थिति वाला है, यावत् वैमानिक पर्यन्त । सिद्ध तो जीव के समान है ।

२५ प्रश्न-जीवा णं भंते ! पुच्छा ।

२५ उत्तर-गोयमा ! ओघादेसेण वि विहाणादेसेण वि कडजुम्मसमयट्ठिईया, णो तेओग०, णो दावर०, णो कलिओग० ।

भावार्थ-२५ प्रश्न-हे भगवन् ! जीव (बहुत जीव) कृतयुग्म समय की स्थिति वाले हैं० ?

२५ उत्तर-हे गौतम ! ओघादेश और विधानादेश से कृतयुग्म समय की स्थिति वाले हैं, किन्तु त्र्योज, द्वापरयुग्म और कल्योज समय की स्थिति वाले नहीं हैं ?

२६ प्रश्न-णेरइयाणं-पुच्छा ।

२६ उत्तर-गोयमा ! ओघादेसेणं सिय कडजुम्मसमयट्ठिईया जाव सिय कलिओगसमयट्ठिईया वि । विहाणादेसेणं कडजुम्मसमयट्ठिईया वि जाव कलिओगसमयट्ठिईया वि । एवं जाव वेमाणिया, सिद्धा जहा जीवा ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

**भावार्थ**-२६ प्रश्न-हे भगवन् ! नैरयिक (बहुत नैरयिक) कृतयुग्म समय की स्थिति वाले हैं० ?

२६ उत्तर-हे गौतम ! ओघादेश से कदाचित् कृतयुग्म समय की स्थिति वाले यावत् कल्योज समय की स्थिति वाले हैं। विधानादेश से कृतयुग्म समय की स्थिति वाले यावत् कल्योज समय की स्थिति वाले हैं। इसी प्रकार यावत् वैमानिक पर्यंत। सिद्ध जीवों का कथन सामान्य जीवों के समान है।

**विवेचन**-औदारिक आदि शरीरों की विचित्र अवगाहना होने से उनमें कृतयुग्मादि चारों भेद पाये जाते है। इसी प्रकार आगे भी कृतयुग्मतादि को स्वयं घटित करना चाहिये।

सामान्य जीव की स्थिति सर्वकाल में शाश्वत और सर्वकाल नियत, अनन्त समयात्मक होने से जीव कृतयुग्म समय की स्थिति वाला है। नैरयिक आदि की भिन्न-भिन्न स्थिति होने से किसी समय कृतयुग्म समय की स्थिति वाला होता है, तो किसी समय यावत् कल्योज समय की स्थिति वाला होता है।

सामान्यादेश से और विशेषादेश से जीवों की स्थिति अनादि-अनन्त काल की होने से वे कृतयुग्म समय की स्थिति वाले हैं।

सभी नैरयिकादि जीवों की स्थिति के समयों को एकत्रित किया जाय और उनमें चार-चार का अपहार किया जाय, तो सभी नैरयिक सामान्यादेश से कृतयुग्म समय यावत् कल्योज समय की स्थिति वाले होते हैं और विशेषादेश से एक समय में कृतयुग्मादि चारों प्रकार के है।

**२७ प्रश्न-जीवे णं भंते ! कालवण्णपज्जवेहिं किं कडजुम्मे-पुच्छा।**

**२७ उत्तर-गोयमा ! जीवपएसे पडुच्च णो कडजुम्मे जाव णो कलिओगे। सरीरपएसे पडुच्च सिय कडजुम्मे जाव सिय कलिओगे। एवं जाव वेमाणिए। सिद्धो चेव ण पुच्छिज्जइ।**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ-२७ प्रश्न-हे भगवन् ! जीव काले वर्ण के पर्यायों की अपेक्षा कृतयुग्म है० ?

२७ उत्तर-हे गौतम ! जीव-प्रदेशों की अपेक्षा वह कृतयुग्म, यावत् कल्योज नहीं है। शरीर-प्रदेशों की अपेक्षा वह कदाचित् कृतयुग्म यावत् कल्योज है, यावत् वैमानिक पर्यंत। यहां सिद्ध के विषय में प्रश्न नहीं करना चाहिये।

२८ प्रश्न-जीवा णं भंते ! कालवण्णपज्जवेहिं-पुच्छा।

२८ उत्तर-गोयमा ! जीवपएसे पडुच्च ओघादेसेण वि विहाणादेसेण वि णो कडजुम्मा जाव णो कलिओगा। सरीरपएसे पडुच्च ओघादेसेणं सिय कडजुम्मा जाव सिय कलिओगा, विहाणादेसेणं कडजुम्मा वि जाव कलिओगा वि। एवं जाव वेमाणिया। एवं णीलवण्णपज्जवेहिं दंडओ भाणियव्वो एगत्तपुहत्तेणं, एवं जाव लुक्ख-फासपज्जवेहिं।

भावार्थ-२८ प्रश्न-हे भगवन् ! जीव (बहुत जीव) काले वर्ण के पर्यायों की अपेक्षा कृतयुग्म हैं० ?

२८ उत्तर-हे गौतम ! प्रदेशों की अपेक्षा जीव ओघादेश और विधानादेश से कृतयुग्म यावत् कल्योज नहीं हैं, किंतु शरीर-प्रदेशों की अपेक्षा ओघादेश से कदाचित् कृतयुग्म यावत् कल्योज है। विधानादेश से कृतयुग्म भी हैं यावत् कल्योज भी हैं। इस प्रकार यावत् वैमानिक तक। इसी प्रकार एकवचन और बहुवचन से नीले वर्ण के पर्यायों का दण्डक तथा इसी प्रकार यावत् रूक्ष स्पर्श के पर्यायों तक जानना चाहिये।

२९ प्रश्न-जीवे णं भंते ! आभिणिबोहियणाणपज्जवेहिं किं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कडजुम्मे-पुच्छा ।

२९ उत्तर-गोयमा ! सिय कडजुम्मे जाव सिय कलिओगे । एवं एगिंदियवज्जं जाव वेमाणिए ।

भावार्थ-२९ प्रश्न-हे भगवन् ! जीव आभिनिबोधिक ज्ञान-पर्यायों की अपेक्षा कृतयुग्म है० ?

२९ उत्तर-हे गौतम ! कदाचित् कृतयुग्म यावत् कल्योज है । इस प्रकार एकेन्द्रिय को छोड़ कर वैमानिक तक ।

३० प्रश्न-जीवा णं भंते ! आभिणिबोहियणाणपज्जवेहिं-पुच्छा ।

३० उत्तर-गोयमा ! ओघादेसेणं सिय कडजुम्मा जाव सिय कलिओगा । विहाणादेसेणं कडजुम्मा वि जाव कलिओगा वि । एवं एगिंदियवज्जं जाव वेमाणिया । एवं सुयणाणपज्जवेहि वि । ओहिणाणपज्जवेहि वि एवं चेव । णवरं विगलिंदियाणं णत्थि ओहिणाणं । मणपज्जवणाणं पि एवं चेव, णवरं जीवाणं मणुस्साण य, सेसाणं णत्थि ।

भावार्थ-३० प्रश्न-हे भगवन् ! जीव (बहुत जीव) आभिनिबोधिक ज्ञान-पर्यायों की अपेक्षा कृतयुग्म है० ?

३० उत्तर-हे गौतम ! ओघादेश से कदाचित् कृतयुग्म यावत् कल्योज हैं । विधानादेश से कृतयुग्म भी यावत् कल्योज भी होते हैं । इस प्रकार एकेन्द्रियों को छोड़ कर वैमानिक तक । इसी प्रकार श्रुतज्ञान और अवधिज्ञान के पर्यायों से भी है । भेद यह है कि विकलेन्द्रिय जीवों के अवधिज्ञान नहीं होता।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मनःपर्ययज्ञान के पर्यायों के विषय में भी इसी प्रकार है, परन्तु वह ओघिक जीवों और मनुष्यों को ही होता है, शेष दण्डकों में नहीं होता ।

३१ प्रश्न-जीवे णं भंते ! केवलणाणपज्जवेहिं किं कडजुम्मे-पुच्छा ।

३१ उत्तर-गोयमा ! कडजुम्मे, णो तेओगे, णो दावरजुम्मे, णो कलिओगे । एवं मणुस्से वि. एवं सिद्धे वि ।

भावार्थ-३१ प्रश्न-हे भगवन् ! जीव, केवलज्ञान के पर्यायों की अपेक्षा कृतयुग्म है० ?

३१ उत्तर-हे गौतम ! कृतयुग्म तो है, किन्तु त्र्योज, द्वापरयुग्म और कल्योज नहीं है । इसी प्रकार मनुष्य और सिद्ध के विषय में भी है ।

३२ प्रश्न-जीवा णं भंते ! केवलणाण-पुच्छा ।

३२ उत्तर-गोयमा ! ओघादेसेण वि विहाणादेसेण वि कडजुम्मा, णो तेओगा, णो दावरजुम्मा, णो कलिओगा । एवं मणुस्सा वि, एवं सिद्धा वि ।

भावार्थ-३२ प्रश्न-हे भगवन् ! जीव (बहुत जीव) केवलज्ञान के पर्यायों की अपेक्षा कृतयुग्म हैं० ?

३२ उत्तर-हे गौतम ! ओघादेश और विधानादेश से कृतयुग्म हैं, किन्तु त्र्योज, द्वापरयुग्म और कल्योज नहीं हैं । इसी प्रकार मनुष्य और सिद्धों के विषय में भी है ।

३३ प्रश्न-जीवे णं भंते ! मइअण्णाणपज्जवेहिं कडजुम्मे० ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

३३ उत्तर—जहा आभिणिबोहियणाणपज्जवेहिं तहेव दो दंडगा। एवं सुयण्णाणपज्जवेहि वि, एवं विभंगणाणपज्जवेहि वि। चक्खुदंसण-अचक्खुदंसण-ओहिदंसणपज्जवेहि वि एवं चेव, णवरं जस्स जं अत्थि तं भाणियव्वं। केवलदंसणपज्जवेहिं जहा केवलणाणपज्जवेहिं।

**भावार्थ**—३३ प्रश्न—हे भगवन्! जीव मतिअज्ञान के पर्यायों की अपेक्षा कृतयुग्म है० ?

३३ उत्तर—हे गौतम! आभिनिबोधिक ज्ञान के पर्यायों के दो दण्डक के अनुसार। श्रुतअज्ञान, विभंगज्ञान, चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन और अवधि-दर्शन के पर्याय भी इसी प्रकार हैं, किन्तु श्रुतअज्ञानादि में से जिसके जो हो, उसके वह जानना चाहिये। केवलदर्शन के पर्याय, केवलज्ञान के पर्याय के समान हैं।

**विवेचन**—जीव-प्रदेश अमूर्त्त होते हैं। इसलिये उनके कालादि वर्ण के पर्याय नहीं होते, परन्तु शरीर-विशिष्ट जीव का ग्रहण होने से शरीर के वर्ण की अपेक्षा क्रम से कृत-युग्मादि चारों प्रकार की राशि का व्यवहार हो सकता है। यहाँ सिद्ध जीव के विषय में प्रश्न का जो निषेध किया है, इसका कारण यह है कि सिद्ध भगवान् अमूर्त्त हैं। इसलिये उनमें वर्णादि नहीं होते।

आवरण के क्षयोपशम की विचित्रता से आभिनिबोधिक ज्ञान की विशेषताओं को और उसके सूक्ष्म अविभाज्य अंशों को 'आभिनिबोधिक ज्ञान के पर्याय' कहते हैं। वे अनन्त हैं, परन्तु क्षयोपशम की विचित्रता के कारण उनका अनन्तपना अवस्थित नहीं हैं। इसलिये भिन्न-भिन्न समय की अपेक्षा वे चारों राशि रूप होते हैं। एकेन्द्रिय जीव में सम्यक्त्व न होने से आभिनिबोधिक ज्ञान नहीं होता, इसलिये एकेन्द्रिय के अतिरिक्त दूसरे जीवों का कथन किया है।

सभी जीवों की अपेक्षा, सभी आभिनिबोधिक ज्ञान के पर्यायों को एकत्रित किया जाय, तो सामान्यादेश से भिन्न-भिन्न काल की अपेक्षा वे चारों राशि रूप होते हैं, क्योंकि क्षयोपशम की विचित्रता से उसके पर्याय अनवस्थित अनन्त होते हैं। विशेषादेश से एक काल में भी चारों राशि रूप होते हैं। केवलज्ञान के पर्यायों का अनन्तपन अवस्थित होने से

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वे कृतयुग्म राशि रूप ही होते हैं। केवलज्ञान के पर्याय अविभागपलिच्छेद (अविभाज्य अंश) रूप होते हैं, इसलिये वे एक ही प्रकार के होते हैं। उनमें विशेषता नहीं होती।

३४ प्रश्न–कइ णं भंते ! सरीरगा पण्णत्ता ?

३४ उत्तर–गोयमा ! पंच सरीरगा पण्णत्ता, तं जहा–ओरालिए, जाव कम्मए। एत्थ सरीरगपयं णिरवसेसं भाणियव्वं जहा पण्णवणाए।

भावार्थ–३४ प्रश्न–हे भगवन् ! शरीर कितने कहे हैं ?

३४ उत्तर–हे गौतम ! शरीर पांच कहे हैं। यथा–औदारिक-शरीर यावत् कार्मण-शरीर। यहां प्रज्ञापना सूत्र का बारहवां शरीर-पद सम्पूर्ण जानना चाहिये।

## सकम्प निष्कंप

३५ प्रश्न–जीवा णं भंते ! किं सेया णिरेया ?

३५ उत्तर–गोयमा ! जीवा सेया वि, णिरेया वि।

प्रश्न–से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ–'जीवा सेया वि णिरेया वि' ?

उत्तर–गोयमा ! जीवा दुविहा पण्णत्ता, तं जहा–संसारसमावण्णगा य असंसारसमावण्णगा य। तत्थ णं जे ते असंसारसमा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वण्णगा ते णं सिद्धा । सिद्धा णं दुविहा पण्णत्ता, तं जहा-अणंतर-सिद्धा य परंपरसिद्धा य । तत्थ णं जे ते परंपरसिद्धा ते णं णिरेया, तत्थ णं जे ते अणंतरसिद्धा ते णं सेया ।

कठिन शब्दार्थ-सेया-सैज-कम्पन सहित, णिरेया-निरेज-कम्पन रहित ।

भावार्थ-३५ प्रश्न-हे भगवन् ! जीव सकम्प हैं या निष्कम्प ?

३५ उत्तर-हे गौतम ! जीव सकम्प भी हैं और निकम्प भी ।

प्रश्न-हे भगवन् ! क्या कारण है कि 'जीव सकम्प भी हैं और निष्कम्प भी ?'

उत्तर-हे गौतम ! जीव दो प्रकार के कहे हैं-१ संसारसमापन्नक और २ असंसारसमापन्नक (मुक्त) । असंसारसमापन्नक सिद्ध दो प्रकार के कहे हैं-१ अनन्तर सिद्ध और २ परम्पर सिद्ध । जो परम्पर सिद्ध हैं, वे निष्कम्प हैं और जो अनन्तर-सिद्ध हैं, वे सकम्प हैं ।

३६ प्रश्न-ते णं भंते ! किं देसेया सव्वेया ?

३६ उत्तर-गोयमा ! णो देसेया, सव्वेया । तत्थ णं जे ते संसार-समावण्णगा ते दुविहा पण्णत्ता, तं जहा-सेलेसिपडिवण्णगा य असेलेसिपडिवण्णगा य । तत्थ णं जे ते सेलेसिपडिवण्णगा ते णं णिरेया, तत्थ णं जे ते असेलेसिपडिवण्णगा ते णं सेया ।

प्रश्न-ते णं भंते ! किं देसेया सव्वेया ?

उत्तर-गोयमा ! देसेया वि, सव्वेया वि, से तेणट्ठेणं जाव णिरेया वि ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ—३६ प्रश्न—हे भगवन् ! अन्तर सिद्ध देश-कम्पक हैं या सर्व-कम्पक ?

३६ उत्तर—हे गौतम ! वे देश-कम्पक नहीं, सर्व-कम्पक हैं। जो संसार समापन्नक हैं, वे भी दो प्रकार के हैं—१ शैलेशीप्रतिपन्नक (शैलेशी अवस्था को प्राप्त) और २ अशैलेशीप्रतिपन्नक (शैलेशी अवस्था को अप्राप्त)। शैलेशी-प्रतिपन्नक निष्कम्प होते हैं और अशैलेशीप्रतिपन्नक सकम्प होते हैं।

प्रश्न—हे भगवन् ! अशैलेशीप्रतिपन्नक देश-कम्पक हैं, या सर्व-कम्पक ?

उत्तर—हे गौतम ! वे देश (अंशतः) कम्पक भी हैं और सर्व-कम्पक भी। इस कारण से हे गौतम ! यावत् वे निष्कम्प भी हैं।

३७ प्रश्न—णेरइया णं भंते ! किं देसेया सव्वेया ?

३७ उत्तर—गोयमा ! देसेया वि सव्वेया वि।

प्रश्न—से केणट्ठेणं जाव सव्वेया वि ?

उत्तर—गोयमा ! णेरइया दुविहा पण्णत्ता, तं जहा—विग्गहगइ-समावण्णगा य अविग्गहगइसमावण्णगा य तत्थ णं जे ते विग्गह-गइसमावण्णगा ते णं सव्वेया, तत्थ णं जे ते अविग्गहगइसमा-वण्णगा ते णं देसेया, से तेणट्ठेणं जाव 'सव्वेया वि'। एवं जाव वेमाणिया।

भावार्थ—३७ प्रश्न—हे भगवन् ! नैरयिक देश-कम्पक हैं या सर्व-कम्पक ?

३७ उत्तर—हे गौतम ! वे देश-कम्पक भी हैं और सर्व-कम्पक भी।

प्रश्न—हे भगवन् ! क्या कारण है कि यावत् सर्व-कम्पक भी हैं ?

उत्तर—हे गौतम ! नैरयिक दो प्रकार के कहे हैं। यथा—१ विग्रहगति समापन्नक और २ अविग्रहगति समापन्नक। विग्रहगति समापन्नक सर्व-कम्पक हैं और अविग्रहगति समापन्नक देश-कम्पक हैं। इसलिए हे गौतम ! यावत्

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

**सर्वकम्पक भी हैं, वैमानिक पर्यन्त ।**

**विवेचन**–सिद्धत्व की प्राप्ति के प्रथम समयवर्ती जीव, 'अनन्तर सिद्ध' कहलाते हैं, क्योंकि उस समय एक समय का भी अन्तर नहीं होता । जो सिद्धत्व के प्रथम समय में वर्तमान सिद्ध जीव हैं, उनमें कम्पन होता हैं, क्योंकि सिद्धि गमन का समय और सिद्धत्व प्राप्ति का समय एक ही होने से और सिद्धि गमन के समय गमन क्रिया होने से उस समय वे सकम्प होते हैं । जिन्हें सिद्धत्व प्राप्ति होने के पश्चात् समयादि का अन्तर पड़ता है, वे 'परम्पर सिद्ध' कहलाते हैं । वे निष्कम्प होते हैं ।

जो जीव मोक्ष जाने के पहले शैलेशी अवस्था को प्राप्त होते हैं, वे योगों का सर्वथा निरोध कर देते हैं । अतः वे उस समय निष्कम्प होते हैं ।

जो संसारी जीव मर कर ईलिका गति से उत्पत्ति स्थान में जाते हैं, वे देशतः सकम्प होते हैं । क्योंकि उनका पूर्व शरीर में रहा हुआ अंश, गति-क्रिया रहित होने से निष्कम्प (निश्चल) होता है और जो गति-क्रिया सहित है, वह अंश सकम्प है । इस कारण वह देशतः सकम्प कहा गया है ।

विग्रह गति को प्राप्त जीव अर्थात् जो मर कर विग्रहगति से या ऋजुगति से उत्पत्ति स्थान को जाता है, वह गेंद की गति के समान सर्वात्म रूप से उत्पन्न होता है । इसलिये वह सर्वतः सकम्प होता है । जो विग्रह-गति को प्राप्त नहीं है, वे गति में अवस्थित हैं । वे शरीर में रहते हुए मरण-समुद्घात कर के ईलिका गति से उत्पत्ति क्षेत्र को अंशतः स्पर्श करते हैं । इसलिये वे देशतः सकम्पक होते हैं । अथवा स्वक्षेत्र में रहे हुए जीव अपने हाथ, पैर आदि अवयवों को इधर-उधर चलाते हैं, इस कारण वे देशतः सकम्पक हैं ।

# परमाणु आदि का अल्प-बहुत्व

**३८ प्रश्न–परमाणुपोग्गला णं भंते ! किं संखेज्जा असंखेज्जा अणंता ?**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

३८ उत्तर–गोयमा ! णो संखेज्जा, णो असंखेज्जा, अणंता । एवं जाव अणंतपएसिया खंधा ।

भावार्थ–३८ प्रश्न–हे भगवन् ! परमाणु-पुद्गल संख्यात हैं, असंख्यात हैं, या अनन्त हैं ?

३८ उत्तर–हे गौतम ! संख्यात नहीं, असंख्यात भी नहीं, किन्तु अनन्त हैं । इस प्रकार यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध पर्यंत ।

३९ प्रश्न–एगपएसोगाढा णं भंते ! पोग्गला किं संखेज्जा, असंखेज्जा, अणंता ?

३९ उत्तर–एवं चेव । एवं जाव असंखेज्जपएसोगाढा ।

भावार्थ–३९ प्रश्न–हे भगवन् ! आकाश के एक प्रदेश में रहे हुए पुद्गल संख्यात हैं, असंख्यात हैं या अनन्त हैं ?

३९ उत्तर–हे गौतम ! पूर्ववत् । इसी प्रकार यावत् असंख्यात प्रदेश में रहे हुए पुद्गल पर्यंत ।

४० प्रश्न–एगसमयठिईया णं भंते ! पोग्गला किं संखेज्जा ?

४० उत्तर–एवं चेव, एवं जाव असंखेज्जसमयट्ठिईया ।

भावार्थ–४० प्रश्न–हे भगवन् ! एक समय की स्थिति वाले पुद्गल संख्यात हैं० ?

४० उत्तर–हे गौतम ! पूर्ववत्, यावत् असंख्यात समय की स्थिति वाले पुद्गल भी ।

४१ प्रश्न–एगगुणकालगा णं भंते ! पोग्गला किं संखेज्जा ०?

४१ उत्तर–एवं चेव, एवं जाव अणंतगुणकालगा, एवं अवसेसा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वि वण्णगंधरसफासा णेयव्वा जाव 'अणंतगुणलुक्खे' त्ति ।

भावार्थ–४१ प्रश्न–हे भगवन् ! एक गुण काले पुद्गल संख्यात हैं० ?

४१ उत्तर–हे गौतम ! पूर्ववत् यावत् अनन्त गुण काले पुद्गल भी पूर्ववत्, शेष वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श भी, यावत् अनन्तगुण रूक्ष पर्यन्त ।

४२ प्रश्न–एएसि णं भंते ! परमाणुपोग्गलाणं, दुपएसियाण य खंधाणं दव्वट्ठयाए कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा, बहुया वा, तुल्ला वा, विसेसाहिया वा ?

४२ उत्तर–गोयमा ! दुपएसिएहिंतो खंधेहिंतो परमाणुपोग्गला दव्वट्ठयाए बहुगा ।

भावार्थ–४२ प्रश्न–हे भगवन् ! परमाणु-पुद्गल और द्वि प्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से कौन-किससे अल्प, बहुत, तुल्य या विशेषाधिक है ?

४२ उत्तर–हे गौतम ! द्वि प्रदेशी स्कन्धों से परमाणु-पुद्गल द्रव्यार्थ से बहुत हैं ।

४३ प्रश्न–एएसि णं भंते ! दुपएसियाणं तिप्पएसियाण य खंधाणं दव्वट्ठयाए कयरे कयरेहिंतो बहुया ?

४३ उत्तर–गोयमा ! तिपएसिएहिंतो खंधेहिंतो दुपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए बहुया, एवं एएणं गमएणं जाव दसपएसिएहिंतो खंधेहिंतो णवपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए बहुया ।

भावार्थ–४३ प्रश्न–हे भगवन् ! द्विप्रदेशी स्कन्ध से त्रिप्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से कौन-किससे यावत् विशेषाधिक हैं ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

४३ उत्तर-हे गौतम ! त्रिप्रदेशी स्कन्धों से द्विप्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से बहुत हैं। इस गमक (पाठ) से यावत् दस प्रदेशी स्कन्धों से नव प्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से बहुत हैं।

४४ प्रश्न-एएसि णं भंते ! दसपएसिए०-पुच्छा ?

४४ उत्तर-गोयमा ! दसपएसिएहिंतो खंधेहिंतो संखेज्जपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए बहुया।

भावार्थ-४४ प्रश्न-हे भगवन् ! दस प्रदेशी स्कन्धों से० ?

४४ उत्तर-हे गौतम ! दस प्रदेशी स्कन्धों से संख्यात प्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से बहुत हैं।

४५ प्रश्न-एएसि णं भंते ! संखेज्ज०-पुच्छा ?

४५ उत्तर-गोयमा ! संखेज्जपएसिएहिंतो खंधेहिंतो असंखेज्जपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए बहुया।

भावार्थ-४५ प्रश्न-हे भगवन् ! संख्यात प्रदेशी स्कन्धों से० ?

४५ उत्तर-हे गौतम ! संख्यात प्रदेशी स्कन्धों से असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से बहुत हैं।

४६ प्रश्न-एएसि णं भंते ! असंखेज्ज०-पुच्छा ?

४६ उत्तर-गोयमा ! अणंतपएसिएहिंतो खंधेहिंतो असंखेज्जपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए बहुया।

भावार्थ-४६ प्रश्न-हे भगवन् ! असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध० ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

४६ उत्तर–हे गौतम ! अनन्त प्रदेशी स्कन्धों से असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से बहुत हैं ।

४७ प्रश्न–एएसि णं भंते ! परमाणुपोग्गलाणं दुपएसियाण य खंधाणं पएसट्ठयाए कयरे कयरेहिंतो बहुया ?

४७ उत्तर–गोयमा ! परमाणुपोग्गलेहिंतो दुपएसिया खंधा पएसट्ठयाए बहुया । एवं एएणं गमएणं जाव णवपएसिएहिंतो खंधेहिंतो दसएसियाखंधा पएसट्ठयाए बहुया, एवं सव्वत्थ पुच्छियव्वं । दसपएसिएहिंतो खंधेहिंतो संखेज्जपएसिया खंधा पएसट्ठयाए बहुया । संखेज्जपएसिएहिंतो खंधेहिंतो असंखेज्जपएसिया खंधा पएसट्ठयाए बहुया ।

भावार्थ–४७ प्रश्न–हे भगवन् ! परमाणु-पुद्गल और द्विप्रदेशी-स्कन्धों में प्रदेशार्थ से कौन-किससे बहुत हैं ?

४७ उत्तर–हे गौतम ! परमाणु-पुद्गलों से द्विप्रदेशी-स्कन्ध प्रदेशार्थ से बहुत हैं, यावत् नव प्रदेशी स्कन्धों से दस प्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थ से बहुत हैं, इसी प्रकार सर्वत्र प्रश्न करना चाहिये । दस प्रदेशी स्कन्धों से संख्यात प्रदेशी स्कंध प्रदेशार्थ से बहुत है । संख्यात प्रदेशी स्कंधों से असंख्यात प्रदेशी स्कंध प्रदेशार्थ से बहुत हैं ।

४८ प्रश्न–एएसि णं भंते ! असंखेज्जपएसियाणं–पुच्छा ।

४८ उत्तर–गोयमा ! अणंतपएसिएहिंतो खंधेहिंतो असंखेज्जपएसिया खंधा पएसट्ठयाए बहुया ।

भावार्थ–४८ प्रश्न–हे भगवन् ! असंख्यात प्रदेशी स्कन्धों० ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

४८ उत्तर–हे गौतम ! अनन्त प्रदेशी स्कन्धों से असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थ से बहुत है ।

४९ प्रश्न–एएसि णं भंते ! एगपएसोगाढाणं दुपएसोगाढाण य पोग्गलाणं दव्वट्ठयाए कयरे कयरेहिंतो जाव विसेसाहिया वा ?

४९ उत्तर–गोयमा ! दुपएसोगाढेहिंतो पोग्गलेहिंतो एगपएसोगाढा पोग्गला दव्वट्ठयाए विसेसाहिया । एवं एएणं गमएणं तिपएसोगाढेहिंतो पोग्गलेहिंतो दुपएसोगाढा पोग्गला दव्वट्ठयाए विसेसाहिया जाव दसपएसोगाढेहिंतो पोग्गलेहिंतो णवपएसोगाढा पोग्गला दव्वट्ठयाए विसेसाहिया । दसपएसोगाढेहिंतो पोग्गलेहिंतो संखेज्जपएसोगाढा पोग्गला दव्वट्ठयाए बहुया, संखेज्जपएसोगाढेहिंतो पोग्गलेहिंतो असंखेज्जपएसोगाढा पोग्गला दव्वट्ठयाए बहुया । पुच्छा सव्वत्थ भाणियव्वा ।

भावार्थ–४९ प्रश्न–हे भगवन् ! एक प्रदेशावगाढ़ और द्वि प्रदेशावगाढ़ पुद्गलों में द्रव्यार्थ से कौन-किससे यावत् विशेषाधिक है ?

४९ उत्तर–हे गौतम ! द्वि प्रदेशावगाढ़ पुद्गलों से एक प्रदेशावगाढ़ पुद्गल द्रव्यार्थ से विशेषाधिक हैं । इसी गमक से त्रि प्रदेशावगाढ़ पुद्गलों से द्वि प्रदेशावगाढ़ पुद्गल द्रव्यार्थ से विशेषाधिक हैं, यावत् दस प्रदेशावगाढ़ पुद्गलों से नव प्रदेशावगाढ़ पुद्गल द्रव्यार्थ से विशेषाधिक है । दस प्रदेशावगाढ़ पुद्गलों से संख्यात प्रदेशावगाढ़ पुद्गल द्रव्यार्थ से बहुत हैं । संख्यात प्रदेशावगाढ़ पुद्गलों से असंख्यात प्रदेशावगाढ़ पुद्गल द्रव्यार्थ से बहुत हैं । सर्वत्र प्रश्न करना चाहिये ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

५० प्रश्न—एएसि णं भंते ! एगपएसोगाढाणं दुपएसोगाढाण य पोग्गलाणं पएसट्ठयाए कयरे कयरेहिंतो जाव विसेसाहिया वा ?

५० उत्तर—गोयमा ! एगपएसोगाढेहिंतो पोग्गलेहिंतो दुपएसोगाढा पोग्गला पएसट्ठयाए विसेसाहिया, एवं जाव णवपएसोगाढेहिंतो पोग्गलेहिंतो दसपएसोगाढा पोग्गला पएसट्ठयाए विसेसाहिया, दसपएसोगाढेहिंतो पोग्गलेहिंतो संखेज्जपएसोगाढा पोग्गला पएसट्ठयाए बहुया, संखेज्जपएसोगाढेहिंतो पोग्गलेहिंतो असंखेज्जपएसोगाढा पोग्गलापएसट्ठयाए बहुया ।

भावार्थ—५० प्रश्न—हे भगवन् ! एक प्रदेशावगाढ और द्विप्रदेशावगाढ़ पुद्गलों में प्रदेशार्थ से कौन किससे यावत् विशेषाधिक हैं ?

५० उत्तर—हे गौतम ! एक प्रदेशावगाढ़ पुद्गलों से द्विप्रदेशावगाढ़ पुद्गल प्रदेशार्थ रूप से विशेषाधिक हैं, यावत् नव प्रदेशावगाढ़ पुद्गलों से दस प्रदेशावगाढ़ पुद्गल प्रदेशार्थ से विशेषाधिक हैं । दस प्रदेशावगाढ़ पुद्गलों से संख्यात प्रदेशावगाढ़ पुद्गल प्रदेशार्थ से बहुत हैं । संख्यात प्रदेशावगाढ़ पुद्गलों से असंख्यात प्रदेशावगाढ़ पुद्गल प्रदेशार्थ से बहुत हैं ।

५१ प्रश्न—एएसि णं भंते ! एगसमयट्ठिईयाणं दुसमयट्ठिईयाण य पोग्गलाणं दव्वट्ठयाए० ?

५१ उत्तर—जहा ओगाहणाए वत्तव्वया एवं ठिईए वि ।

भावार्थ—५१ प्रश्न—हे भगवन् ! एक समय की स्थिति वाले और दो समय की स्थिति वाले पुद्गलों में द्रव्यार्थ से कौन किससे यावत् विशेषाधिक हैं ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

५१ उत्तर-हे गौतम ! अवगाहना की वक्तव्यता के अनुसार स्थिति भी जाननी चाहिए ।

५२ प्रश्न-एएसि णं भंते ! एगगुणकालयाणं दुगुणकालयाण य पोग्गलाणं दव्वट्ठयाए० ?

५२ उत्तर-एएसि णं जहा परमाणुपोग्गलाईणं तहेव वत्तव्वया णिरवसेसा, एवं सव्वेसिं वण्ण-गंध-रसाणं ।

भावार्थ-५२ प्रश्न-हे भगवन् ! एक गुण काला और द्वि गुण काला पुद्गलों में द्रव्यार्थ से कौन किससे यावत् विशेषाधिक हैं ?

५२ उत्तर-हे गौतम ! परमाणु-पुद्गल आदि की वक्तव्यता के अनुसार । इसी प्रकार सभी वर्ण, गन्ध और रस के विषय में भी जानना चाहिये ।

५३ प्रश्न-एएसि णं भंते ! एगगुणकक्खडाणं दुगुणकक्खडाण य पोग्गलाणं दव्वट्ठयाए कयरे कयरेहिंतो जाव विसेसाहिया वा ?

५३ उत्तर-गोयमा ! एगगुणकक्खडेहिंतो पोग्गलेहिंतो दुगुण-कक्खडा पोग्गला दव्वट्ठयाए विसेसाहिया, एव जाव णवगुणकक्ख-डेहिंतो पोग्गलेहिंतो दसगुणकक्खडा पोग्गला दव्वट्ठयाए विसेसाहिया. दसगुणकक्खडेहिंतो पोग्गलेहिंतो संखेज्जगुणकक्खडा पोग्गला दव्व-ट्ठयाए बहुया, संखेज्जगुणकक्खडेहिंतो पोग्गलेहिंतो असंखेज्जगुण-कक्खडा पोग्गला दव्वट्ठयाए बहुया, असंखेज्जगुणकक्खडेहिंतो पोग्गले-हिंतो अणंतगुणकक्खडा पोग्गला दव्वट्ठयाए बहुया । एवं पएसट्ठ-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

याए । सव्वत्थ पुच्छा भाणियव्वा । जहा कक्खडा एवं मउय-गरुय-लहुया वि । सीय-उसिण-णिद्ध लुक्खा जहा वण्णा ।

कठिन शब्दार्थ-कक्खडा-कर्कश, लहुया-लघु, णिद्ध-स्निग्ध ।

भावार्थ-५३ प्रश्न-हे भगवन् ! एक गुण कर्कश और द्वि गुण कर्कश पुद्गलों में द्रव्यार्थ से कौन-किससे यावत् विशेषाधिक हैं ?

५३ उत्तर-हे गौतम ! एक गुण कर्कश पुद्गलों से द्वि गुण कर्कश पुद्गल द्रव्यार्थ से विशेषाधिक हैं । इसी प्रकार यावत् नव गुण कर्कश पुद्गलों से दस गुण कर्कश पुद्गल द्रव्यार्थ से विशेषाधिक हैं । दस गुण कर्कश पुद्गलों से संख्यात गुण कर्कश पुद्गल द्रव्यार्थ से बहुत हैं । संख्यात गुण कर्कश पुद्गलों से असंख्यात गुण कर्कश पुद्गल द्रव्यार्थ से बहुत हैं । असंख्यात गुण कर्कश पुद्गलों से अनन्त गुण कर्कश पुद्गल द्रव्यार्थ से बहुत हैं । इसी प्रकार प्रदेशार्थ से भी हैं । सर्वत्र प्रश्न करना चाहिये । कर्कश स्पर्श के अनुसार मृदु (कोमल), गुरु (भारी) और लघु (हलका) स्पर्श भी समझना चाहिये । शीत (ठण्डा) उष्ण (गर्म) स्निग्ध (चिकना) और रूक्ष (रुखा-लूखा) स्पर्श, वर्ण के समान हैं ।

विवेचन-द्वयणुकों से परमाणु सूक्ष्म तथा एकत्व होने के कारण बहुत हैं और द्वि प्रदेशी स्कन्ध परमाणुओं से स्थूल होने से अल्प हैं । इसी प्रकार आगे-आगे के सूत्रों के विषय में भी जानना चाहिये । पूर्व-पूर्व की संख्या बहुत है और पीछे की संख्या अल्प है । दस प्रदेशिक स्कन्धों से संख्यात प्रदेशी स्कन्ध बहुत है, क्योंकि संख्यात के स्थान बहुत हैं । संख्यात-प्रदेशी स्कन्धों से असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध बहुत हैं, क्योंकि संख्यात प्रदेशी स्कन्धों की अपेक्षा असंख्यात के स्थान बहुत हैं, परन्तु असंख्यात-प्रदेशी स्कन्धों से अनन्त प्रदेशी स्कन्ध अल्प हैं, क्योंकि उनका तथाविध सूक्ष्म परिणाम होता है ।

प्रदेशार्थ से विचार करते हुए बताया गया है कि परमाणुओं से द्विप्रदेशी स्कन्ध बहुत हैं । जैसे कल्पना की जाय कि द्रव्य रूप से सौ परमाणु और द्विप्रदेशी स्कन्ध साठ हैं, तो प्रदेशार्थ से परमाणु तो सौ ही है, परन्तु द्वयणुक १२० हैं । इस प्रकार ये बहुत हैं । यही विचारणा आगे भी समझनी चाहिये ।

परमाणु से ले कर अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक एक प्रदेशावगाढ़ होते हैं और द्वयणुक

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

से ले कर अनन्त अणु स्कन्ध तक द्विप्रदेशावगाढ़ होते हैं। इस प्रकार त्रिप्रदेशी स्कन्ध से ले कर अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक त्रिप्रदेशावगाढ़ होते हैं। इस प्रकार चतुष्प्रदेशावगाढ़ यावत् असंख्य प्रदेशावगाढ़ स्कन्ध तक जानना चाहिये।

५४ प्रश्न-एएसि णं भंते ! परमाणुपोग्गलाणं, संखेज्जपएसियाणं, असंखेज्जपएसियाणं, अणंतपएसियाण य खंधाणं दव्वट्ठयाए पएसट्ठयाए दव्वट्ठपएसट्ठयाए कयरे कयरे० जाव विसेसाहिया वा ?

५४ उत्तर-गोयमा ! सव्वत्थोवा अणंतपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए, परमाणुपोग्गला दव्वट्ठयाए अणंतगुणा, संखेज्जपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा, असंखेज्जपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा, पएसट्ठयाए-सव्वत्थोवा अणंतपएसिया खंधा पएसट्ठयाए, परमाणुपोग्गला अपएसट्ठयाए अणंतगुणा, संखेज्जपएसिया खंधा पएसट्ठयाए संखेज्जगुणा, असंखेज्जपएसिया खंधा पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा, दव्वट्ठपएसट्ठयाए-सव्वत्थोवा अणंतपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए, ते चेव पएसट्ठयाए अणंतगुणा, परमाणुपोग्गला दव्वट्ठपएसट्ठयाए अणंतगुणा, संखेज्जपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा, ते चेव पएसट्ठयाए संखेज्जगुणा, असंखेज्जपएसिया खंधा दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा, ते चेव पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा।

भावार्थ-५४ प्रश्न-हे भगवन् ! परमाणु-पुद्गल, संख्यात प्रदेशी, असंख्यात प्रदेशी और अनन्त प्रदेशी स्कन्धों में द्रव्यार्थ, प्रदेशार्थ और द्रव्यार्थ प्रदेशार्थ से कौन-से पुद्गल-स्कन्ध, किन पुद्गल-स्कन्धों से यावत् विशेषाधिक हैं ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

५४ उत्तर–हे गौतम ! द्रव्यार्थ से––सब से थोड़े अनन्त प्रदेशी स्कन्ध हैं। उनसे परमाणु पुद्गल अनन्त गुण हैं। उनसे संख्यात प्रदेशी स्कन्ध संख्यात गुण हैं। उनसे असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध असंख्यात गुण हैं। प्रदेशार्थ से–अनन्त प्रदेशी स्कन्ध सब से थोड़े हैं, उनसे परमाणु पुद्गल (अप्रदेशार्थ) अनन्त गुण हैं। उनसे संख्यात प्रदेशी स्कन्ध संख्यात गुण हैं। उनसे असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध असंख्यात गुण हैं। द्रव्यार्थ-प्रदेशार्थ से–अनन्त प्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से सब से थोड़े हैं। उनसे अनन्त प्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थ से अनन्त गुण हैं। उनसे परमाणु-पुद्गल द्रव्यार्थ अप्रदेशार्थ से अनन्त गुण हैं। उनसे संख्यात प्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से संख्यात गुण हैं। उनसे संख्यात प्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थ से संख्यात गुण हैं। उनसे असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से असंख्यात गुण हैं। उनसे असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थ से असंख्यात गुण हैं।

५५ प्रश्न-एएसि णं भंते ! एगपएसोगाढाणं, संखेज्जपएसोगाढाणं, असंखेज्जपएसोगाढाण य पोग्गलाणं दव्वट्ठयाए पएसट्ठयाए दव्वट्ठपएसट्ठयाए कयरे कयरे० जाव विसेसाहिया वा ?

५५ उत्तर–गोयमा ! सव्वत्थोवा एगपएसोगाढा पोग्गला दव्वट्ठयाए, संखेज्जपएसोगाढा पोग्गला दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा, असंखेज्जपएसोगाढा पोग्गला दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा, पएसट्ठयाए-सव्वत्थोवा एगपएसोगाढा पोग्गला अपएसट्ठयाए, संखेज्जपएसोगाढा पोग्गला पएसट्ठयाए संखेज्जगुणा, असंखेज्जपएसोगाढा पोग्गला पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा, दव्वट्ठपएसट्ठयाए-सव्वत्थोवा एगपएसोगाढा पोग्गला दव्वट्ठअपएसट्ठयाए, संखेज्जपएसोगाढा पोग्गला दव्वट्ठयाए संखेज्ज-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गुणा, ते चेव पएसट्ठयाए संखेज्जगुणा, असंखेज्जपएसोगाढा पोग्गला दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा, ते चेव पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा ।

भावार्थ-५५ प्रश्न-हे भगवन् ! एक प्रदेशावगाढ़ संख्यात प्रदेशावगाढ़ और असंख्यात प्रदेशावगाढ़ पुद्गलों में द्रव्यार्थ, प्रदेशार्थ और द्रव्यार्थ प्रदेशार्थ से कौन-से पुद्गल किनसे यावत् विशेषाधिक हैं ?

५५ उत्तर--हे गौतम ! द्रव्यार्थ से--एक प्रदेशावगाढ़ पुद्गल सब से थोड़े हैं । उनसे संख्यात प्रदेशावगाढ़ पुद्गल संख्यात गुण हैं । उनसे असंख्यात प्रदेशावगाढ़ पुद्गल असंख्यात गुण हैं । प्रदेशार्थ से--एक प्रदेशावगाढ़ पुद्गल अप्रदेशार्थ से सब से थोड़े हैं । उनसे संख्यात प्रदेशावगाढ़ पुद्गल प्रदेशार्थ से+ संख्यात गुण हैं । उनसे असंख्यात प्रदेशावगाढ़ पुद्गल प्रदेशार्थ से असंख्यात गुण हैं । द्रव्यार्थ-प्रदेशार्थ से--एक प्रदेशावगाढ़ पुद्गल द्रव्यार्थ अप्रदेशार्थ से सब से थोड़े हैं । उनसे संख्यात प्रदेशावगाढ़ पुद्गल द्रव्यार्थ से संख्यात गुण हैं । उनसे संख्यात प्रदेशावगाढ़ पुद्गल प्रदेशार्थ से संख्यात गुण हैं । उनसे असंख्यात प्रदेशावगाढ़ पुद्गल द्रव्यार्थ से असंख्यात गुण हैं । उनसे असंख्यात प्रदेशावगाढ़ पुद्गल प्रदेशार्थ से असंख्यात गुण हैं ।

५६ प्रश्न-एएसि णं भंते ! एगसमयट्ठिईयाणं, संखेज्जसमयट्ठिईयाणं, असंखेज्जसमयट्ठिईयाण य पोग्गलाणं० ?

५६ उत्तर-जहा ओगाहणाए तहा ठिईए वि भाणियव्वं अप्पाबहुगं ।

भावार्थ-५६ प्रश्न-हे भगवन् ! एक समय की स्थिति, संख्यात समय की स्थिति

+ किसी-किसी प्रति में 'असंख्यात गुण' पाठ है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

और असंख्यात समय की स्थिति वाले पुद्गलों में कौन-किससे यावत् विशेषाधिक हैं ?

५६ उत्तर–हे गौतम ! अवगाहना की अल्प-बहुत्व के अनुसार स्थिति के विषय में भी है ।

५७ प्रश्न–एएसि णं भंते ! एगगुणकालगाणं, संखेज्जगुणकालगाणं, असंखेज्जगुणकालगाणं, अणंतगुणकालगाण य पोग्गलाणं दव्वट्ठयाए, पएसट्ठयाए, दव्वट्ठपएसट्ठयाए० ?

५७ उत्तर–एएसिं जहा परमाणुपोग्गलाणं अप्पाबहुगं तहा एएसिं पि अप्पाबहुगं, एवं सेसाण वि वण्ण-गंध-रसाणं ।

भावार्थ–५७ प्रश्न–हे भगवन् ! एक गुण काला, संख्यात गुण काला, असंख्यात गुण काला और अनन्त गुण काला, इन पुद्गलों में द्रव्यार्थ, प्रदेशार्थ और द्रव्यार्थ-प्रदेशार्थ से कौन पुद्गल किन पुद्गलों से यावत् विशेषाधिक हैं ?

५७ उत्तर–हे गौतम ! परमाणु-पुद्गल के अल्प-बहुत्व (सूत्र ५३) के अनुसार । इसी प्रकार सभी वर्ण, गन्ध और रस सम्बन्धी अल्प-बहुत्व भी ।

५८ प्रश्न–एएसिं णं भंते ! एगगुणकक्खडाणं, संखेज्जगुणकक्खडाणं, असंखेज्जगुणकक्खडाणं, अणंतगुणकक्खडाण य पोग्गलाणं दव्वट्ठयाए, पएसट्ठयाए, दव्वट्ठपएसट्ठयाए कयरे कयरे० जाव विसेसाहिया वा ?

५८ उत्तर–गोयमा ! सव्वत्थोवा एगगुणकक्खडा पोग्गला दव्वट्ठ-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

याए, संखेज्जगुणकक्खडा पोग्गला दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा, असंखेज्जगुणकक्खडा पोग्गला दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा, अणंतगुणकक्खडा पोग्गला दव्वट्ठयाए अणंतगुणा, पएसट्ठयाए एवं चेव, णवरं संखेज्जगुणकक्खडा पोग्गला पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा, सेसं तं चेव। दव्वट्ठपएसट्ठयाए-सव्वत्थोवा एगगुणकक्खडा पोग्गला दव्वट्ठपएसट्ठयाए, संखेज्जगुणकक्खडा पोग्गला दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा, ते चेव पएसट्ठयाए संखेज्जगुणा, असंखेज्जगुणकक्खडा दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा, ते चेव पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा, अणंतगुणकक्खडा दव्वट्ठयाए अणंतगुणा, ते चेव पएसट्ठयाए अणंतगुणा। एवं मउय-गरुय-लहुयाण वि अप्पाबहुयं। सीय-उसिण-णिद्ध-लुक्खाणं जहा वण्णाणं तहेव।

भावार्थ–५८ प्रश्न–हे भगवन्! एक गुण कर्कश, संख्यात गुण कर्कश, असंख्यात गुण कर्कश और अनन्त गुण कर्कश पुद्गलों में द्रव्यार्थ, प्रदेशार्थ और द्रव्यार्थ-प्रदेशार्थ से कौन पुद्गल किन पुद्गलों से यावत् विशेषाधिक हैं?

५८ उत्तर–हे गौतम! एक गुण कर्कश पुद्गल द्रव्यार्थ से सब से थोड़े हैं। उनसे संख्यात गुण कर्कश पुद्गल द्रव्यार्थ से संख्यात गुण हैं। उनसे असंख्यात गुण कर्कश पुद्गल द्रव्यार्थ से असंख्यात गुण हैं। उनसे अनन्त गुण कर्कश पुद्गल द्रव्यार्थ से अनन्त गुण हैं। प्रदेशार्थ से भी इसी प्रकार समझना चाहिये, परन्तु संख्यात गुण कर्कश पुद्गल, प्रदेशार्थ से असंख्यात गुण हैं। शेष पूर्ववत्। द्रव्यार्थ-प्रदेशार्थ से–एक गुण कर्कश पुद्गल द्रव्यार्थ-प्रदेशार्थ से सब से थोड़े हैं। उनसे संख्यात गुण कर्कश पुद्गल द्रव्यार्थ से संख्यात गुण हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उनसे संख्यात गुण कर्कश पुद्गल, प्रदेशार्थ से संख्यात गुण हैं। उनसे असंख्यात गुण कर्कश पुद्गल, द्रव्यार्थ से असंख्यात गुण हैं। उनसे असंख्यात गुण कर्कश पुद्गल, प्रदेशार्थ से असंख्यात गुण हैं। उनसे अनन्त गुण कर्कश पुद्गल, द्रव्यार्थ से अनन्त गुण हैं। उनसे अनन्त गुण कर्कश पुद्गल, प्रदेशार्थ से अनन्त गुण हैं। इसी प्रकार मृदु, गुरु और लघु स्पर्श भी। शीत, उष्ण, स्निग्ध और रूक्ष स्पर्शों का अल्प-बहुत्व वर्णों के अल्पबहुत्व के समान है।

**विवेचन**–प्रदेशार्थता के प्रकरण में परमाणु के लिये जो 'अप्रदेशार्थता' कहीं है, इसका कारण यह है कि परमाणु के प्रदेश नहीं होते, इसलिये अप्रदेशार्थ रूप से अनन्त गुण कहा है। द्रव्य की विवक्षा में परमाणु द्रव्य है, और प्रदेश की विवक्षा में उसके प्रदेश नहीं होने से अप्रदेश है। इस प्रकार परमाणु की द्रव्यार्थ-अप्रदेशार्थता कही है।

क्षेत्राधिकार में क्षेत्र की प्रधानता है। इसलिये परमाणु, द्विप्रदेशी स्कन्ध से ले कर अनन्त प्रदेशी स्कन्ध भी, किसी विवक्षित एक क्षेत्रावगाढ़ होते हैं। वहाँ आधार और आधेय में अभेद की विवक्षा करने से वे एक प्रदेशावगाढ़ कहे जाते हैं। इसलिये एक प्रदेशावगाढ़ पुद्गल द्रव्यार्थ से सब से थोड़े हैं, क्योंकि वे लोकाकाश के प्रदेश प्रमाण ही हैं। कोई भी ऐसा आकाश प्रदेश नहीं है, जो एक प्रदेशावगाही परमाणु आदि को अवकाश देने रूप परिणाम से परिणत न हो। इसी प्रकार आगे संख्यात प्रदेशावगाढ़ आदि पुद्गलों के विषय में भी विचारना करना चाहिये।

## पुद्गल और युग्म

**५९ प्रश्न**–परमाणुपोग्गले णं भंते ! दव्वट्ठयाए किं कडजुम्मे, तेओए, दावरजुम्मे, कलिओगे ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

५९ उत्तर-गोयमा ! णो कडजुम्मे, णो तेओए, णो दावरजुम्मे, कलिओगे । एवं जाव अणंतपएसिए खंधे ।

भावार्थ-५९ प्रश्न-हे भगवन् ! परमाणु-पुद्गल द्रव्यार्थ से कृतयुग्म है, त्र्योज है, द्वापरयुग्म है या कल्योज है ?

५९ उत्तर-हे गौतम ! कृतयुग्म, त्र्योज और द्वापरयुग्म नहीं है, कल्योज है । इसी प्रकार यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक ।

६० प्रश्न-परमाणुपोग्गला णं भंते ! दव्वट्ठयाए किं कडजुम्मा-पुच्छा ।

६० उत्तर-गोयमा ! ओघादेसेणं सिय कडजुम्मा जाव सिय कलिओगा, विहाणादेसेणं णो कडजुम्मा, णो तेओगा, णो दावरजुम्मा, कलिओगा । एवं जाव अणंतपएसिया खंधा ।

भावार्थ-६० प्रश्न-हे भगवन् ! परमाणु-पुद्गल (बहुत परमाणु-पुद्गल) द्रव्यार्थ से कृतयुग्मादि हैं० ?

६० उत्तर-हे गौतम ! ओघादेश से कदाचित् कृतयुग्म यावत् कल्योज हैं । विधानादेश से कृतयुग्म, त्र्योज और द्वापरयुग्म नहीं हैं, किन्तु कल्योज हैं । इसी प्रकार यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध पर्यन्त ।

६१ प्रश्न-परमाणुपोग्गले णं भंते ! पएसट्ठयाए किं कडजुम्मे० पुच्छा ।

६१ उत्तर-गोयमा ! णो कडजुम्मे, णो तेओगे, णो दावरजुम्मे, कलिओगे ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ-६१ प्रश्न-हे भगवन् ! परमाणु-पुद्गल, प्रदेशार्थ से कृतयुग्मादि है ?

६१ उत्तर-हे गौतम ! कृतयुग्म, त्र्योज और द्वापरयुग्म नहीं है, कल्योज है ।

६२ प्रश्न-दुपएसिए-पुच्छा ।

६२ उत्तर-गोयमा ! णो कडजुम्मे, णो तेओगे, दावरजुम्मे, णो कलिओगे ।

भावार्थ-६२ प्रश्न-हे भगवन् ! द्वि प्रदेशी स्कन्ध० ?

६२ उत्तर-हे गौतम ! कृतयुग्म, त्र्योज और कल्योज नहीं है, द्वापर-युग्म है ।

६३ प्रश्न-तिपएसिए-पुच्छा ।

६३ उत्तर-गोयमा ! णो कडजुम्मे, तेओए, णो दावरजुम्मे, णो कलिओगे ।

भावार्थ-६३ प्रश्न-हे भगवन् ! त्रि प्रदेशी स्कन्ध० ?

६३ उत्तर-हे गौतम ! कृतयुग्म, द्वापरयुग्म और कल्योज नहीं है, त्र्योज है ।

६४ प्रश्न-चउप्पएसिए-पुच्छा ।

६४ उत्तर-गोयमा ! कडजुम्मे, णो तेओगे, णो दावरजुम्मे, णो कलिओगे । पंचपएसिए जहा परमाणुपोग्गले । छप्पएसिए जहा दुप्पएसिए । सत्तपएसिए जहा तिपएसिए । अट्ठपएसिए जहा चउप्पए-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सिए। णवपएसिए जहा परमाणुपोग्गले। दसपएसिए जहा दुप्पएसिए।

भावार्थ–६४ प्रश्न–हे भगवन् ! चतुष्प्रदेशी स्कन्ध० ?

६४ उत्तर–हे गौतम ! कृतयुग्म है, किन्तु त्र्योज, द्वापरयुग्म और कल्योज नहीं है। परमाणु-पुद्गल के समान पञ्चप्रदेशी स्कन्ध, द्विप्रदेशी स्कन्ध के समान छह प्रदेशी स्कन्ध, त्रिप्रदेशी स्कन्धवत् सप्त प्रदेशी स्कन्ध, चतुष्प्रदेशी स्कन्धवत् अष्टप्रदेशी स्कन्ध, परमाणु-पुद्गल के समान नौ प्रदेशी स्कन्ध और द्विप्रदेशी स्कन्ध जैसा दस प्रदेशी स्कन्ध जानना चाहिए।

६५ प्रश्न–संखेज्जपएसिए णं भंते ! पोग्गले–पुच्छा।

६५ उत्तर–गोयमा ! सिय कडजुम्मे जाव सिय कलिओए। एवं असंखेज्जपएसिए वि, अणंतपएसिए वि।

भावार्थ–६५ प्रश्न–हे भगवन् ! संख्यात प्रदेशी स्कन्ध० ?

६५ उत्तर–हे गौतम ! कदाचित् कृतयुग्म यावत् कल्योज है। इस प्रकार असंख्यात प्रदेशी और अनन्त प्रदेशी स्कन्ध भी है।

६६ प्रश्न–परमाणुपोग्गला णं भंते ! पएसट्ठयाए किं कडजुम्मा–पुच्छा।

६६ उत्तर–गोयमा ! ओघादेसेणं सिय कडजुम्मा जाव सिय कलिओगा विहाणादेसेणं णो कडजुम्मा, णो तेओगा, णो दावरजुम्मा, कलिओगा।

भावार्थ–६६ प्रश्न–हे भगवन् ! परमाणु-पुद्गल, (बहुत) प्रदेशार्थ से कृतयुग्मादि हैं ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

६६ उत्तर-हे गौतम ! ओघादेश से कदाचित् कृतयुग्म यावत् कल्योज हैं। विधानादेश से कृतयुग्म, त्र्योज और द्वापरयुग्म नहीं हैं, किंतु कल्योज हैं।

६७ प्रश्न-दुप्पएसिया णं-पुच्छा।

६७ उत्तर-गोयमा ! ओघादेसेणं सिय कडजुम्मा, णो तेओगा, सिय दावरजुम्मा, णो कलिओगा। विहाणादेसेणं णो कडजुम्मा, णो तेओगा, दावरजुम्मा, णो कलिओगा।

भावार्थ-६७ प्रश्न-हे भगवन् ! द्विप्रदेशी स्कन्ध० ?

६७ उत्तर-हे गौतम ! ओघादेश से कदाचित् कृतयुग्म और कदाचित् द्वापरयुग्म हैं, किन्तु त्र्योज और कल्योज नहीं हैं। विधानादेश से कृतयुग्म, त्र्योज और कल्योज नहीं, द्वापरयुग्म हैं।

६८ प्रश्न-तिपएसिया णं-पुच्छा।

६८ उत्तर-गोयमा ! ओघादेसेणं सिय कडजुम्मा जाव सिय कलिओगा। विहाणादेसेणं णो कडजुम्मा, तेओगा, णो दावरजुम्मा, णो कलिओगा।

भावार्थ-६८ प्रश्न-हे भगवन् ! त्रिप्रदेशी स्कन्ध० ?

६८ उत्तर-हे गौतम ! ओघादेश से कदाचित् कृतयुग्म यावत् कल्योज हैं। विधानादेश से कृतयुग्म, द्वापरयुग्म और कल्योज नहीं, किन्तु त्र्योज हैं।

६९ प्रश्न-चउप्पएसिया णं-पुच्छा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

६९ उत्तर–गोयमा ! ओघादेसेण वि विहाणादेसेण वि कड-जुम्मा, णो तेओगा, णो दावरजुम्मा, णो कलिओगा । पंचपएसिया जहा परमाणुपोग्गला । छप्पएसिया जहा दुप्पएसिया । सत्तपएसिया जहा तिपएसिया । अट्ठपएसिया जहा चउपएसिया । णवपएसिया जहा परमाणुपोग्गला । दसपएसिया जहा दुपएसिया ।

भावार्थ–६९ प्रश्न–हे भगवन् ! चतुष्प्रदेशी स्कन्ध० ?

६९ उत्तर–हे गौतम ! ओघादेश से भी और विधानादेश से भी कृत-युग्म हैं, त्र्योज, द्वापरयुग्म और कल्योज नहीं होते । पञ्चप्रदेशी स्कन्धों का स्वरूप परमाणु-पुद्गलों के समान, छह प्रदेशी स्कन्धों का कथन द्विप्रदेशी स्कन्धों जैसा, सप्त प्रदेशी स्कन्धों का वर्णन त्रिप्रदेशी स्कन्धवत्, अष्ट प्रदेशी स्कन्धों का विधान चतुष्प्रदेशी स्कन्धों के समान, नौ प्रदेशी स्कन्धों का कथन परमाणु-पुद्गलों के समान और दस प्रदेशी स्कन्धों का कथन द्विप्रदेशी स्कन्धों के समान है ।

७० प्रश्न–संखेज्जपएसिया णं–पुच्छा ।

७० उत्तर–गोयमा ! ओघादेसेणं सिय कडजुम्मा जाव सिय कलिओगा । विहाणादेसेणं कडजुम्मा वि जाव कलिओगा वि । एवं असंखेज्जपएसिया वि, अणंतपएसिया वि ।

भावार्थ–७० प्रश्न–हे भगवन् ! संख्यात प्रदेशी स्कन्ध० ?

७० उत्तर–हे गौतम ! ओघादेश से कदाचित् कृतयुग्म यावत् कल्योज हैं । विधानादेश से कृतयुग्म भी हैं यावत् कल्योज भी हैं । इसी प्रकार असंख्यात प्रदेशी और अनन्त प्रदेशी स्कन्धों के विषय में भी जानना चाहिये ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

७१ प्रश्न-परमाणुपोग्गले णं भंते ! किं कडजुम्मपएसोगाढे-पुच्छा ।

७१ उत्तर-गोयमा ! णो कडजुम्मपएसोगाढे, णो तेओग०, णो दावरजुम्म०, कलिओगपएसोगाढे ।

भावार्थ-७१ प्रश्न-हे भगवन् ! परमाणु-पुद्गल कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़ है०?

७१ उत्तर-हे गौतम ! कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़, त्र्योज प्रदेशावगाढ़ और द्वापरयुग्म प्रदेशावगाढ़ नहीं होता, कल्योज प्रदेशावगाढ़ होता है ।

७२ प्रश्न-दुपएसिए णं-पुच्छा ।

७२ उत्तर-गोयमा ! णो कडजुम्मपएसोगाढे, णो तेओग०, सिय दावरजुम्मपएसोगाढे, सिय कलिओगपएसोगाढे ।

भावार्थ-७२ प्रश्न-हे भगवन् ! द्विप्रदेशी स्कन्ध० ?

७२ उत्तर-हे गौतम ! कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़ और त्र्योज प्रदेशावगाढ़ नहीं, कदाचित् द्वापरयुग्म प्रदेशावगाढ़ और कदाचित् कल्योज प्रदेशावगाढ़ है ।

७३ प्रश्न-तिपएसिए णं-पुच्छा ।

७३ उत्तर-गोयमा ! णो कडजुम्मपएसोगाढे, सिय तेओगपएसोगाढे सिय दावरजुम्मपएसोगाढे, सिय कलिओगपएसोगाढे ३ ।

भावार्थ-७३ प्रश्न-हे भगवन् ! त्रिप्रदेशी स्कन्ध० ?

७३ उत्तर-हे गौतम ! कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़ नहीं, किन्तु कदाचित् त्र्योज प्रदेशावगाढ़, द्वापरयुग्म प्रदेशावगाढ़ और कदाचित् कल्योज प्रदेशावगाढ़ है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

७४ प्रश्न-चउप्पएसिए णं-पुच्छा।

७४ उत्तर-गोयमा ! सिय कडजुम्मपएसोगाढे जाव सिय कलिओगपएसोगाढे ४। एवं जाव अणंतपएसिए।

भावार्थ-७४ प्रश्न-हे भगवन् ! चतुष्प्रदेशी स्कन्ध० ?

७४ उत्तर-हे गौतम ! कदाचित् कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़ यावत् कदाचित् कल्योज प्रदेशावगाढ़ होता है। इसी प्रकार यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध पर्यंत।

७५ प्रश्न-परमाणुपोग्गला णं भंते ! किं कडजुम्म-पुच्छा।

७५ उत्तर-गोयमा ! ओघादेसेणं कडजुम्मपएसोगाढा, णो तेओग०, णो दावर०, णो कलिओग०। विहाणादेसेणं णो कडजुम्मपएसोगाढा, णो तेयोग०, णो दावर०, कलिओगपएसोगाढा।

भावार्थ-७५ प्रश्न-हे भगवन् ! परमाणु-पुद्गल (बहुत) कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़ हैं० ?

७५ उत्तर-हे गौतम ! ओघादेश से कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़ हैं, त्र्योज, द्वापरयुग्म और कल्योज प्रदेशावगाढ़ नहीं होते। विधानादेश से कृतयुग्म, त्र्योज और द्वापरयुग्म प्रदेशावगाढ़ नहीं होते, कल्योज प्रदेशावगाढ़ होते हैं।

७६ प्रश्न-दुप्पएसिया णं-पुच्छा ?

७६ उत्तर-गोयमा ! ओघादेसेणं कडजुम्मपएसोगाढा, णो तेओग०, णो दावर०, णो कलिओग०। विहाणादेसेणं णो कडजुम्मपएसोगाढा, णो तेओगपएसोगाढा, दावरजुम्मपएसोगाढा वि कलिओगपएसोगाढा वि।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ-७६ प्रश्न-हे भगवन् ! द्वि प्रदेशी स्कन्ध० ?

७६ उत्तर-हे गौतम ! ओघादेश से कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़ हैं, त्र्योज द्वापरयुग्म और कल्योज प्रदेशावगाढ़ नहीं। विधानादेश से कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़ और त्र्योज प्रदेशावगाढ़ नहीं होते, द्वापरयुग्म प्रदेशावगाढ़ और कल्योज प्रदेशावगाढ़ हैं।

७७ प्रश्न-तिप्पएसिया णं-पुच्छा।

७७ उत्तर-गोयमा ! ओघादेसेणं कडजुम्मपएसोगाढा, णो तेओग०, णो दावर०, णो कलि०। विहाणादेसेणं णो कडजुम्मपएसोगाढा, तेओगपएसोगाढा वि, दावरजुम्मपएसोगाढा वि, कलिओगपएसोगाढा वि ३।

भावार्थ-७७ प्रश्न-हे भगवन् ! त्रिप्रदेशी स्कन्ध० ?

७७ उत्तर-हे गौतम ! ओघादेश से कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़ हैं, त्र्योज, द्वापरयुग्म और कल्योज प्रदेशावगाढ़ नहीं। विधानादेश से कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़ नहीं, किंतु त्र्योज प्रदेशावगाढ़, द्वापरयुग्म प्रदेशावगाढ़ और कल्योज प्रदेशावगाढ़ हैं।

७८ प्रश्न-चउप्पएसिया णं-पुच्छा।

७८ उत्तर-गोयमा ! ओघादेसेणं कडजुम्मपएसोगाढा, णो तेओग०, णो दावर०, णो कलिओग०। विहाणादेसेणं कडजुम्मपएसोगाढा वि जाव कलिओगपएसोगाढा वि ४। एवं जाव अणंतपएसिया।

भावार्थ-७८ प्रश्न-हे भगवन् ! चतुष्प्रदेशी स्कन्ध० ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

७८ उत्तर–हे गौतम ! ओघादेश से कृतयुग्म पदेशावगाढ़ हैं, त्र्योज, द्वापरयुग्म और कल्योज प्रदेशावगाढ़ नहीं। विधानादेश से कृतयुग्म प्रदेशावगाढ़ यावत् कल्योज प्रदेशावगाढ़ भी हैं। इस प्रकार यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक ।

७९ प्रश्न–परमाणुपोग्गले णं भंते ! किं कडजुम्मसमयट्ठिईए–पुच्छा ।

७९ उत्तर–गोयमा ! सिय कडजुम्मसमयट्ठिईए जाव सिय कलिओगसमयट्ठिईए । एवं जाव अणंतपएसिए ।

भावार्थ–७९ प्रश्न–हे भगवन् ! परमाणु-पुद्गल कृतयुग्म समय की स्थिति वाला है० ?

७९ उत्तर–हे गौतम ! कदाचित् कृतयुग्म समय की स्थिति यावत् कदाचित् कल्योज समय की स्थिति वाला होता है । इस प्रकार यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक ।

८० प्रश्न–परमाणुपोग्गला णं भंते ! किं कडजुम्म०–पुच्छा ।

८० उत्तर–गोयमा ! ओघादेसेणं सिय कडजुम्मसमयट्ठिईया जाव सिय कलिओगसमयट्ठिईया ४ । विहाणादेसेणं कडजुम्मसमयट्ठिईया वि जाव कलिओगसमयट्ठिईया वि । एवं जाव अणंतपएसिया ।

भावार्थ–८० प्रश्न–हे भगवन् ! परमाणु-पुद्गल (बहुत) कृतयुग्म समय की स्थिति वाले हैं०?

८० उत्तर–हे गौतम! ओघादेश से कदाचित् कृतयुग्म समय की स्थिति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

यावत् कल्योज समय की स्थिति वाले हैं। विधानादेश से कृतयुग्म समय की स्थिति के भी यावत् कल्योज समय की स्थिति के भी हैं। इसी प्रकार यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध पर्यंत।

८१ प्रश्न–परमाणुपोग्गले णं भंते! कालवण्णपज्जवेहिं किं कडजुम्मे तेओगे?

८१ उत्तर–जहा ठिईए वत्तव्वया एवं वण्णेसु वि सव्वेसु, गंधेसु वि एवं चेव, (एवं) रसेसु वि जाव 'महुरो रसो' त्ति।

भावार्थ–८१ प्रश्न–हे भगवन्! परमाणु-पुद्गल काले वर्ण के पर्यायों की अपेक्षा कृतयुग्म है या ज्योज है०?

८१ उत्तर–हे गौतम! स्थिति की वक्तव्यतानुसार। सभी वर्ण, गन्ध, और रस यावत् मधुर रस पर्यंत जानना चाहिए।

८२ प्रश्न–अणंतपएसिया णं भंते! खंधे कक्खडफासपज्जवेहिं किं कडजुम्मे–पुच्छा।

८२ उत्तर–गोयमा! सिय कडजुम्मे जाव सिय कलिओगे।

भावार्थ–८२ प्रश्न–हे भगवन्! अनन्त प्रदेशी स्कन्ध कर्कश स्पर्श के पर्यायों की अपेक्षा कृतयुग्मादि हैं?

८२ उत्तर–हे गौतम! ओघादेश से कदाचित् कृतयुग्म यावत् कल्योज है।

८३ प्रश्न–अणंतपएसिया णं भंते! खंधा कक्खडफासपज्जवेहिं कडजुम्मा–पुच्छा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

८३ उत्तर-गोयमा ! ओघादेसेणं सिय कडजुम्मा जाव सिय कलिओगा ४ । विहाणादेसेणं कडजुम्मा वि, जाव कलिओगा वि । एवं मउय-गरुय-लहुया वि भाणियव्वा । सीय-उसिण-णिद्ध-लुक्खा जहा वण्णा ।

भावार्थ-८३ प्रश्न-हे भगवन् ! अनन्त प्रदेशी स्कन्ध (बहुत) कर्कश स्पर्श के पर्यायों की अपेक्षा कृतयुग्मादि हैं ?

८३ उत्तर-हे गौतम ! ओघादेश से कदाचित् कृतयुग्म यावत् कल्योज हैं । विधानादेश से कृतयुग्म भी हैं यावत् कल्योज भी हैं । इस प्रकार मृदु, गुरु और लघु के विषय में भी जानना चाहिये । शीत, उष्ण, स्निग्ध और रूक्ष स्पर्शों का कथन भी वर्णों के समान है ।

**विवेचन**-परमाणु-पुद्गल अनन्त होने पर भी उनमें संघात और भेद के कारण अनवस्थित स्वरूप होने से वे ओघादेश से कृतयुग्मादि होते हैं । विधानादेश से अर्थात् प्रत्येक की अपेक्षा तो वे कल्योज ही होते हैं । इसी प्रकार आगे के सूत्रों में भी कृतयुग्मादि संख्या को स्वयमेव घटित कर लेना चाहिये ।

कर्कश स्पर्श के अधिकार में जो अनन्त प्रदेशी स्कन्ध के विषय में ही प्रश्न किया, इसका कारण यह है कि बादर अनन्त प्रदेशी स्कन्ध ही कर्कश आदि चार स्पर्श वाला होता है, परमाणु आदि नहीं । शीत, उष्ण, स्निग्ध और रूक्ष स्पर्श के विषय में जो वर्ण का अतिदेश किया है इसका कारण यह है कि परमाणु आदि भी शीत स्पर्शादि वाले होते हैं ।

## परमाणु आदि सार्द्ध है या अनर्द्ध

८४ प्रश्न-परमाणुपोग्गले णं भंते ! किं सड्ढे अणड्ढे ?

८४ उत्तर-गोयमा ! णो सड्ढे, अणड्ढे ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कठिन शब्दार्थ––सड्ढे––सार्द्ध––आधा भाग सहित, अणड्ढे––अनर्द्ध––आधा भाग रहित ।

भावार्थ–८४ प्रश्न–हे भगवन् ! परमाणु-पुद्गल सार्द्ध (आधा भाग सहित) है या अनर्द्ध (आधा भाग रहित) ?

८४ उत्तर–हे गौतम ! सार्द्ध नहीं, अनर्द्ध है ।

८५ प्रश्न–दुपएसिए णं–पुच्छा ।

८५ उत्तर–गोयमा ! सड्ढे, णो अणड्ढे । तिपएसिए जहा परमाणुपोग्गले । चउपएसिए जहा दुपएसिए । पंचपएसिए जहा तिपएसिए । छप्पएसिए जहा दुपएसिए । सत्तपएसिए जहा तिपएसिए । अट्ठपएसिए जहा दुपएसिए । णवपएसिए जहा तिपएसिए । दसपएसिए जहा दुपएसिए ।

भावार्थ–८५ प्रश्न–हे भगवन् ! द्विप्रदेशी स्कन्ध सार्द्ध है या अनर्द्ध ?

८५ उत्तर–हे गौतम ! सार्द्ध है, अनर्द्ध नहीं । त्रिप्रदेशी स्कन्ध, परमाणु-पुद्गल के समान है । चतुष्प्रदेशी स्कन्ध, द्विप्रदेशी के समान है । पञ्च प्रदेशी स्कन्ध, त्रिप्रदेशी स्कन्धवत् है । छह प्रदेशी स्कन्ध, द्विप्रदेशी जैसा है । सप्त प्रदेशी स्कन्ध, त्रिप्रदेशी जैसा है । अष्ट प्रदेशी स्कन्ध, द्विप्रदेशी स्कन्ध के समान है । नव प्रदेशी स्कन्ध, त्रिप्रदेशी स्कन्धवत् है और दस प्रदेशी स्कन्ध, द्विप्रदेशी स्कन्ध के समान है ।

८६ प्रश्न–संखेज्जपएसिए णं भंते ! खंधे–पुच्छा ?

८६ उत्तर–गोयमा ! सिय सड्ढे, सिय अणड्ढे, एवं असंखेज्ज-पएसिए वि, एवं अणंतपएसिए वि ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ- ८६ प्रश्न-हे भगवन् ! संख्यात प्रदेशी स्कन्ध, सार्द्ध है या अनर्द्ध ?

८६ उत्तर-हे गौतम ! कदाचित् सार्द्ध और कदाचित् अनर्द्ध है । इसी प्रकार असंख्यात प्रदेशी और अनन्त प्रदेशी भी है

८७ प्रश्न-परमाणुपोग्गला णं भंते ! किं सड्ढा अणड्ढा ?

८७ उत्तर-गोयमा ! सड्ढा वा, अणड्ढा वा । एवं जाव अणंत-पएसिया ।

भावार्थ-८७ प्रश्न-हे भगवन् ! परमाणु-पुद्गल (बहुत) सार्द्ध हैं या अनर्द्ध ?

८७ उत्तर-हे गौतम ! सार्द्ध हैं या अनर्द्ध हैं । इसी प्रकार यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध पर्यन्त ।

विवेचन-सम संख्या वाले प्रदेशों के जो स्कन्ध होते हैं, वे सार्द्ध होते हैं । क्योंकि उनके बराबर दो भाग हो सकते हैं । विषम संख्या वाले प्रदेशों के जो स्कन्ध होते हैं, वे अनर्द्ध होते हैं, क्योंकि उनके दो बराबर भाग नहीं हो सकते ।

जब बहुत परमाणु सम संख्या वाले होते हैं, तब वे सार्द्ध होते हैं और जब विषम संख्या वाले होते हैं, तब अनर्द्ध होते हैं । क्योंकि संघात (परस्पर मिलना) और भेद (पृथक् होना) से उनकी संख्या अवस्थित नहीं होती । इसलिये वे सार्द्ध और अनर्द्ध दोनों प्रकार के होते हैं ।

## पुद्गल सकम्प-निष्कम्प

८८ प्रश्न-परमाणुपोग्गले णं भंते ! किं सेए, णिरेए ?

८८ उत्तर-गोयमा ! सिय सेए, सिय णिरेए । एवं जाव अणंत-पएसिए ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ–८८ प्रश्न–हे भगवन् ! परमाणु-पुद्गल सकम्प है या निष्कम्प ?

८८ उत्तर–हे गौतम ! कदाचित् सकम्प और कदाचित् निष्कम्प है। इस प्रकार यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक जानना चाहिये।

८९ प्रश्न–परमाणुपोग्गला णं भंते ! किं सेया, णिरेया ?

८९ उत्तर–गोयमा ! सेया वि णिरेया वि। एवं जाव अणंत-पएसिया।

भावार्थ–८९ प्रश्न–हे भगवन् ! परमाणु-पुद्गल (बहुत) सकम्प होते हैं या निष्कम्प ?

८९ उत्तर–हे गौतम ! सकम्प भी होते हैं और निष्कम्प भी। इसी प्रकार यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक।

९० प्रश्न–परमाणुपोग्गले णं भंते ! सेए कालओ केवचिरं होइ ?

९० उत्तर–गोयमा ! जहण्णेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं आवलियाए असंखेज्जइभागं।

भावार्थ–९० प्रश्न–हे भगवन् ! परमाणु-पुद्गल सकम्प कितने काल तक रहता है ?

९० उत्तर–हे गौतम ! जघन्य एक समय और उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग तक सकम्प रहता है।

९१ प्रश्न–परमाणुपोग्गले णं भंते ! णिरेए कालओ केवचिरं होइ ?

९१ उत्तर–गोयमा ! जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं असं-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

खेज्जं कालं । एवं जाव अणंतपएसिए ।

भावार्थ-९१ प्रश्न-हे भगवन् ! परमाणु-पुद्गल निष्कम्प कितने काल तक रहता है ?

९१ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य एक समय और उत्कृष्ट असंख्यात काल तक निष्कम्प रहता है । इस प्रकार यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक ।

९२ प्रश्न-परमाणुपोग्गला णं भंते ! सेया कालओ केवचिरं होंति ?

९२ उत्तर-गोयमा ! सव्वद्धं ।

भावार्थ-९२ प्रश्न-हे भगवन् ! परमाणु-पुद्गल (बहुत) कितने काल तक सकम्प रहते हैं ?

९२ उत्तर-हे गौतम ! सदाकाल सकम्प रहते हैं ।

९३ प्रश्न-परमाणुपोग्गला णं भंते ! णिरेया कालओ केवचिरं होंति ?

९३ उत्तर-गोयमा ! सव्वद्धं । एवं जाव अणंतपएसिया ।

भावार्थ-९३ प्रश्न-हे भगवन् ! परमाणु-पुद्गल (बहुत) निष्कम्प कितने काल तक रहते हैं ?

९३ उत्तर-हे गौतम ! सदाकाल निष्कम्प रहते हैं । इस प्रकार यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध पर्यंत ।

९४ प्रश्न-परमाणुपोग्गलस्स णं भंते ! सेयस्स केवइयं कालं अंतरं होइ ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

९४ उत्तर-गोयमा ! सट्ठाणंतरं पडुच्च जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं, परट्ठाणंतरं पडुच्च जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं ।

भावार्थ-९४ प्रश्न-हे भगवन् ! सकम्प परमाणु-पुद्गल का कितने काल का अन्तर होता है ?

९४ उत्तर-हे गौतम ! स्वस्थान की अपेक्षा जघन्य एक समय और उत्कृष्ट असंख्य काल और परस्थान से जघन्य एक समय और उत्कृष्ट असंख्यात काल का अन्तर होता है ।

९५ प्रश्न-णिरेयस्स केवइयं कालं अंतरं होइ ?

९५ उत्तर-गोयमा ! सट्ठाणंतरं पडुच्च जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं आवलियाए असंखेज्जइभागं, परट्ठाणंतरं पडुच्च जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं ।

भावार्थ-९५ प्रश्न-हे भगवन् ! निष्कम्प परमाणु-पुद्गल का कितने काल का अन्तर होता है ?

९५ उत्तर-हे गौतम ! स्वस्थान की अपेक्षा जघन्य एक समय और उत्कृष्ट आवलिका का असंख्यातवां भाग का अन्तर होता है । परस्थान आश्रयी जघन्य एक समय और उत्कृष्ट असंख्य काल का अन्तर होता है ।

९६ प्रश्न-दुपएसियस्स णं भंते ! खंधस्स सेयस्स पुच्छा ।

९६ उत्तर-गोयमा ! सट्ठाणंतरं पडुच्च जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं, परट्ठाणंतरं पडुच्च जहण्णेणं एक्कं समयं,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उक्कोसेणं अणंतं कालं ।

प्रश्न-णिरेयस्स केवइयं कालं अंतरं होइ ?

उत्तर-गोयमा ! सट्ठाणंतरं पडुच्च जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं आवलियाए असंखेज्जइभागं, परट्ठाणंतरं पडुच्च जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं अणंतं कालं । एवं जाव अणंतपएसियस्स ।

भावार्थ-९६ प्रश्न-हे भगवन् ! सकम्प द्विप्रदेशी स्कन्ध का अन्तर कितने काल का होता है ?

९६ उत्तर-हे गौतम ! स्वस्थान की अपेक्षा जघन्य एक समय और उत्कृष्ट असंख्यात काल तथा परस्थान आश्रयी जघन्य एक समय और उत्कृष्ट अनन्त काल का अन्तर होता है ।

प्रश्न-हे भगवन् ! निष्कम्प द्विप्रदेशी स्कन्ध का अन्तर कितने काल का होता है ?

उत्तर-हे गौतम ! स्वस्थानाश्रयी अन्तर जघन्य एक समय और उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग का तथा परस्थानश्रयी जघन्य एक समय और उत्कृष्ट अनंत काल का अन्तर होता है । इस प्रकार यावत् अनंत प्रदेशी स्कन्ध तक जानना चाहिये ।

९७ प्रश्न-परमाणुपोग्गलाणं भंते ! सेयाणं केवइयं कालं अंतरं होइ ?

९७ उत्तर-गोयमा ! णत्थि अंतरं ।

प्रश्न-णिरेया णं केवइयं कालं अंतरं होइ ?

उत्तर-गोयमा ! णत्थि अंतरं । एवं जाव अणंतपएसियाणं खंधाणं ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ-९७ प्रश्न-हे भगवन् ! सकम्प परमाणु-पुद्गलों का अन्तर कितने काल का होता है ?

९७ उत्तर-हे गौतम ! अन्तर नहीं होता ।

प्रश्न-हे भगवन् ! निष्कम्प परमाणु-पुद्गलों का अन्तर कितने काल का होता है ?

उत्तर-हे गौतम ! अन्तर नहीं होता । इस प्रकार यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध पर्यंत ।

९८ प्रश्न-एएसि णं भंते ! परमाणुपोग्गला णं सेयाणं, णिरेयाण य कयरे कयरेहिंतो जाव विसेसाहिया वा ?

९८ उत्तर-गोयमा ! सव्वत्थोवा परमाणुपोग्गला सेया, णिरेया असंखेज्जगुणा, एवं जाव असंखेज्जपएसियाणं खंधाणं ।

भावार्थ-९८ प्रश्न-हे भगवन् ! पूर्वोक्त सकम्प और निष्कम्प परमाणु-पुद्गलों में कौन किनसे यावत् विशेषाधिक होते हैं ?

९८ उत्तर-हे गौतम ! सकम्प परमाणु-पुद्गल सब से थोड़े होते हैं और निष्कम्प परमाणु-पुद्गल असंख्यात गुण होते हैं । इस प्रकार यावत् असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध तक ।

९९ प्रश्न-एएसि णं भंते ! अणंतपएसियाणं खंधाणं सेयाणं, णिरेयाण य कयरे कयरे० जाव विसेसाहिया वा ?

९९ उत्तर-गोयमा ! सव्वत्थोवा अणंतपएसिया खंधा णिरेया, सेया अणंतगुणा ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ—९९ प्रश्न—हे भगवन् ! पूर्वोक्त सकम्प और निष्कम्प अनन्त प्रदेशी स्कन्ध में कौन किससे यावत् विशेषाधिक हैं ?

९९ उत्तर—हे गौतम ! अनन्त प्रदेशी निष्कम्प स्कन्ध सब से थोड़े हैं। उनसे सकम्प अनन्त प्रदेशी स्कन्ध अनन्त गुण है।

१०० प्रश्न—एएसि णं भंते ! परमाणुपोग्गलाणं संखेज्जपएसियाणं, असंखेज्जपएसियाणं, अणंतपएसियाण य खंधाणं सेयाणं णिरेयाण य दव्वट्ठयाए पएसट्ठयाए दव्वट्ठपएसट्ठयाए कयरे कयरे० जाव विसेसाहिया वा ?

१०० उत्तर—गोयमा ! १ सव्वत्थोवा अणंतपएसिया खंधा णिरेया दव्वट्ठयाए २ अणंतपएसिया खंधा सेया दव्वट्ठयाए अणंतगुणा ३ परमाणुपोग्गला सेया दव्वट्ठयाए अणंतगुणा ४ संखेज्जपएसिया खंधा सेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ५ असंखेज्जपएसिया खंधा सेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ६ परमाणुपोग्गला णिरेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ७ संखेज्जपएसिया खंधा णिरेया दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा ८ असंखेज्जपएसिया खंधा णिरेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा। पएसट्ठयाए एवं चेव। णवरं परमाणुपोग्गला अपएसट्ठयाए भाणियव्वा। संखेज्जपएसिया खंधा णिरेया पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा, सेसं तं चेव।

भावार्थ—१०० प्रश्न—हे भगवन् ! सकम्प और निष्कम्प परमाणु-पुद्गल,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संख्यात प्रदेशी स्कन्ध, असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध और अनन्त प्रदेशी स्कन्ध में द्रव्यार्थ, प्रदेशार्थ और द्रव्यार्थ-प्रदेशार्थ से कौन पुद्गल किन पुद्गलों से अल्प, बहुत, तुल्य या विशेषाधिक हैं ?

१०० उत्तर–हे गौतम ! निष्कम्प अनन्त प्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से सब से थोड़े हैं। २ उनसे सकम्प अनन्त प्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से अनन्त गुण हैं। ३ उनसे सकम्प परमाणु-पुद्गल द्रव्यार्थ से अनन्त गुण हैं। ४ उनसे सकम्प संख्यात प्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से असंख्यात गुण हैं। ५ उनसे सकम्प असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से असंख्यात गुण हैं। ६ उनसे निष्कम्प परमाणु-पुद्गल द्रव्यार्थ से असंख्यात गुण हैं। ७ उनसे निष्कम्प संख्यात प्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से संख्यात गुण हैं। ८ उनसे निष्कम्प असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से असंख्यात गुण हैं। जिस प्रकार द्रव्यार्थ से आठ बोल कहे हैं, उसी प्रकार प्रदेशार्थ से भी आठ बोल जानना चाहिये, किन्तु परमाणु-पुद्गल में 'प्रदेशार्थ' के बदले 'अप्रदेशार्थ' कहना चाहिये तथा 'निष्कम्प संख्यात प्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थ से असंख्यात गुण जानना चाहिये। शेष पूर्ववत्।

१ दव्वट्ठपएसट्ठयाए–सव्वत्थोवा अणंतपएसिया खंधा णिरेया दव्वट्ठयाए २ ते चेव पएसट्ठयाए अणंतगुणा ३ अणंतपएसिया खंधा सेया दव्वट्ठयाए अणंतगुणा ४ ते चेव पएसट्ठयाए अणंतगुणा ५ परमाणुपोग्गला सेया दव्वट्ठअपएसट्ठयाए अणंतगुणा ६ संखेज्जपएसिया खंधा सेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ७ ते चेव पएसट्ठयाए संखेज्जगुणा ८ असंखेज्जपएसिया खंधा सेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ९ ते चेव पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा १० परमाणुपोग्गला णिरेया दव्वट्ठअपएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा ११ संखेज्जपएसिया

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

खंधा णिरेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा १२ ते चेव पएसट्ठयाए संखेज्जगुणा १३ असंखेज्जपएसिया खंधा णिरेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा १४ ते चेव पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा ।

भावार्थ-द्रव्यार्थ-प्रदेशार्थ से-१ निष्कम्प अनन्त प्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से सब से थोड़े हैं, २ उनसे निष्कम्प अनन्त प्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थ से अनन्त गुण हैं, ३ उनसे सकम्प अनन्त प्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से अनन्त गुण हैं, ४ उनसे सकम्प अनन्त प्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थ से अनन्त गुण हैं, ५ उनसे सकम्प परमाणु-पुद्गल द्रव्यार्थ अप्रदेशार्थ से अनन्त गुण हैं, ६ उनसे सकम्प संख्यात प्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से असंख्यात गुण हैं, ७ उनसे सकम्प संख्यात प्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थ से संख्यात गुण हैं, ८ उनसे सकम्प असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से संख्यात गुण हैं, ९ उनसे सकम्प असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थ से असंख्यात गुण हैं, १० उनसे निष्कम्प परमाणु-पुद्गल द्रव्यार्थ अप्रदेशार्थ से असंख्यात गुण हैं, ११ उनसे निष्कम्प संख्यात प्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से असंख्यात गुण हैं, १२ उनसे निष्कम्प संख्यात प्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थ से संख्यात गुण हैं, १३ उनसे निष्कम्प असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से असंख्यात गुण हैं, १४ उनसे निष्कम्प असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थ से असंख्यात गुण हैं ।

१०१ प्रश्न-परमाणुपोग्गले णं भंते ! किं देसेए सव्वेए णिरेए ?

१०१ उत्तर-गोयमा ! णो देसेए, सिय सव्वेए, सिय णिरेए ।

भावार्थ-१०१ प्रश्न-हे भगवन् ! परमाणु-पुद्गल देश कम्पक (कुछ अंश में कम्पित होने वाला) है, सर्व कम्पक (सम्पूर्ण कम्पित होने वाला) है या निष्कम्पक है ?

१०१ उत्तर-हे गौतम ! परमाणु-पुद्गल देश कम्पक नही है, किन्तु कदाचित् सर्व कम्पक है और कदाचित् निष्कम्पक है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१०२ प्रश्न--दुपएसिए णं भंते ! खंधे--पुच्छा ।

१०२ उत्तर--गोयमा ! सिय देसेए, सिय सव्वेए, सिय णिरेए । एवं जाव अणंतपएसिए ।

भावार्थ--१०२ प्रश्न--हे भगवन् ! द्विप्रदेशी स्कन्ध० ?

१०२ उत्तर--हे गौतम ! कदाचित् देश कम्पक, कदाचित् सर्व कम्पक और कदाचित् निष्कम्पक होता है । इस प्रकार यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध पर्यंत ।

१०३ प्रश्न--परमाणुपोग्गला णं भंते ! किं देसेया, सव्वेया, णिरेया ?

१०३ उत्तर--गोयमा ! णो देसेया, सव्वेया वि, णिरेया वि ।

भावार्थ--१०३ प्रश्न--हे भगवन् ! परमाणु-पुद्गल (बहुत) देश कम्पक, सर्व कम्पक या निष्कम्पक होते हैं ?

१०३ उत्तर--हे गौतम ! देश कम्पक नहीं होते, वे सर्व कम्पक भी होते हैं और निष्कम्पक भी ।

१०४ प्रश्न--दुपएसिया णं भंते ! खंधा--पुच्छा ।

१०४ उत्तर--गोयमा ! देसेया वि, सव्वेया वि, णिरेया वि । एवं जाव अणंतपएसिया ।

भावार्थ--१०४ प्रश्न--हे भगवन् ! द्विप्रदेशी स्कन्ध० ?

१०४ उत्तर--हे गौतम ! देश कम्पक भी होते हैं, सर्व कम्पक भी होते हैं और निष्कम्पक भी होते हैं । इस प्रकार यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध पर्यंत ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१०५ प्रश्न-परमाणुपोग्गले णं भंते ! सव्वेए कालओ केवचिरं होइ ?

१०५ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं आवलियाए असंखेज्जइभागं ।

भावार्थ-१०५ प्रश्न-हे भगवन् ! परमाणु-पुद्गल सर्व कम्पक कितने काल तक रहता है ?

१०५ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य एक समय और उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग तक ।

१०६ प्रश्न-णिरेए कालओ केवचिरं होइ ?

१०६ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं ।

भावार्थ-१०६ प्रश्न-हे भगवन् ! परमाणु-पुद्गल निष्कम्पक कितने काल तक रहता है ?

१०६ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य एक समय और उत्कृष्ट असंख्यात काल तक ।

१०७ प्रश्न-दुपएसिए णं भंते ! खंधे देसेए कालओ केवचिरं होइ ?

१०७ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं आवलियाए असंखेज्जइभागं ।

भावार्थ-१०७ प्रश्न-हे भगवन् ! द्विप्रदेशी स्कन्ध देश कम्पक कितने काल तक रहता है

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१०७ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य एक समय और उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग तक ।

१०८ प्रश्न-सव्वेए कालओ केवचिरं होइ ?

१०८ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं आवलियाए असंखेज्जइभागं ।

भावार्थ-१०८ प्रश्न-हे भगवन् ! द्विप्रदेशी स्कन्ध सर्व-कम्पक कितने काल तक रहता है ?

१०८ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य एक समय और उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग तक ।

१०९ प्रश्न-णिरेए कालओ केवचिरं होइ ?

१०९ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं । एवं जाव अणंतपएसिए ।

भावार्थ-१०९ प्रश्न-हे भगवन् ! द्विप्रदेशी स्कन्ध निष्कम्पक कितने काल तक रहता है ?

१०९ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य एक समय और उत्कृष्ट असंख्यात काल तक निष्कम्पक रहता है । इसी प्रकार यावत् अनंत प्रदेशी स्कन्ध तक ।

११० प्रश्न-परमाणुपोग्गला णं भंते ! सव्वेया कालओ केवचिरं होंति ?

११० उत्तर-गोयमा ! सव्वद्धं ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ–११० प्रश्न–हे भगवन् ! परमाणु-पुद्गल (बहुत) सर्व कम्पक कितने काल तक रहते हैं ?

११० उत्तर–हे गौतम ! सर्वाद्धा (सदा काल) ।

१११ प्रश्न–णिरेया कालओ केवचिरं होंति ?

१११ उत्तर–सव्वद्धं ।

भावार्थ–१११ प्रश्न–हे भगवन् ! निष्कम्पक कितने काल तक रहते हैं ?

१११ उत्तर–हे गौतम ! सर्व काल ।

११२ प्रश्न–दुप्पएसिया णं भंते ! खंधा देसेया कालओ केवचिरं० ?

११२ उत्तर–सव्वद्धं ।

भावार्थ–११२ प्रश्न–हे भगवन् ! द्विप्रदेशी स्कंध देश कम्पक कितने काल तक रहते हैं ?

११३ उत्तर–हे गौतम ! सभी काल ।

११३ प्रश्न–सव्वेया कालओ केवचिरं० ?

११३ उत्तर–सव्वद्धं ।

भावार्थ–११३ प्रश्न–हे भगवन् ! द्विप्रदेशी स्कंध सर्व कम्पक कितने काल तक रहते हैं ?

११३ उत्तर–हे गौतम ! सभी काल ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

११४ प्रश्न–णिरेया कालओ केवचिरं० ?

११४ उत्तर–सव्वद्धं । एवं जाव अणंतपएसिया ।

भावार्थ–११४ प्रश्न–हे भगवन् ! द्विप्रदेशी स्कन्ध कितने काल तक निष्कम्पक रहते हैं ?

११४ उत्तर–हे गौतम ! समस्त काल, यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक ।

११५ प्रश्न–परमाणुपोग्गलस्स णं भंते ! सव्वेयस्स केवइयं कालं अंतरं होइ ?

११५ उत्तर–गोयमा ! सट्ठाणंतरं पडुच्च जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं, परट्ठाणंतरं पडुच्च जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं एवं चेव ।

भावार्थ–११५ प्रश्न–हे भगवन्! सर्व कम्पक परमाणु-पुद्गल का कितने काल का अन्तर होता है ?

११५ उत्तर–हे गौतम ! स्वस्थान में जघन्य एक समय और उत्कृष्ट असंख्यात काल, तथा परस्थान की अपेक्षा जघन्य एक समय और उत्कृष्ट असंख्यात काल का अन्तर होता है ।

११६ प्रश्न–णिरेयस्स केवइयं अंतरं होइ ?

११६ उत्तर–सट्ठाणंतरं पडुच्च जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं आवलियाए असंखेज्जइभागं, परट्ठाणंतरं पडुच्च जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ-११६ प्रश्न-हे भगवन् ! निष्कम्पक परमाणु-पुद्गल का अन्तर कितने काल का होता है ?

११६ उत्तर-हे गौतम ! स्वस्थान की अपेक्षा जघन्य एक समय और उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग, तथा परस्थान की अपेक्षा जघन्य एक समय और उत्कृष्ट असंख्यात काल ।

११७ प्रश्न-दुपएसियस्स णं भंते ! खंधस्स देसेयस्स केवइयं कालं अंतरं होइ ?

११७ उत्तर-सट्ठाणंतरं पडुच्च जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं, परट्ठाणंतरं पडुच्च जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं अणंतं कालं ।

भावार्थ-११७ प्रश्न-हे भगवन् ! देश-कम्पक द्विप्रदेशी स्कन्ध का अंतर कितने काल का होता है ?

११७ उत्तर-हे गौतम ! स्वस्थान की अपेक्षा जघन्य एक समय और उत्कृष्ट असंख्यात काल, तथा परस्थान की अपेक्षा जघन्य एक समय और उत्कृष्ट अनन्त काल ।

११८ प्रश्न-सव्वेयस्स केवइयं कालं० ?

११८ उत्तर-एवं चेव जहा देसेयस्स ।

भावार्थ-११८ प्रश्न-हे भगवन् ! सर्व-कम्पक द्विप्रदेशी स्कंध का अंतर कितने काल का होता है ?

११८ उत्तर-हे गौतम ! जिस प्रकार देश-कम्पक द्विप्रदेशी का अंतर कहा है, उसी प्रकार सर्व-कम्पक का भी जानना चाहिये ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

११९ प्रश्न-णिरेयस्स केवइयं० ?

११९ उत्तर-सट्ठाणंतरं पडुच्च जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं आवलियाए असंखेज्जइभागं, परट्ठाणंतरं पडुच्च जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं अणंतं कालं। एवं जाव अणंतपएसियस्स।

भावार्थ-११९ प्रश्न-हे भगवन् ! निष्कम्पक द्विप्रदेशी स्कंध का अंतर कितने काल का होता है ?

११९ उत्तर-हे गौतम ! स्वस्थान में जघन्य एक समय और उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग तथा परस्थान में जघन्य एक समय और उत्कृष्ट अनंत काल का अंतर होता है। इस प्रकार यावत् अनंत प्रदेशी स्कन्ध तक।

१२० प्रश्न-परमाणुपोग्गलाणं भंते ! सव्वेयाणं केवइयं कालं अंतरं होइ ?

१२० उत्तर-णत्थि अंतरं।

भावार्थ-१२० प्रश्न-हे भगवन् ! सर्व-कम्पक परमाणु-पुद्गलों का अंतर कितने काल का होता है ?

१२० उत्तर-हे गौतम ! अन्तर नहीं होता।

१२१ प्रश्न-णिरेयाणं केवइयं० ?

१२१ उत्तर-णत्थि अंतरं।

भावार्थ-१२१ प्रश्न-हे भगवन् ! निष्कम्पक परमाणु-पुद्गलों का अन्तर कितने काल का होता है ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१२१ उत्तर-हे गौतम ! कोई अन्तर नहीं ।

१२२ प्रश्न-दुपएसियाणं भंते ! खंधाणं देसेयाणं केवइयं कालं० ?

१२२ उत्तर-णत्थि अंतरं।

भावार्थ-१२२ प्रश्न-हे भगवन् ! देश-कम्पक द्विप्रदेशी स्कन्ध का अंतर कितने काल का होता है ?

१२२ उत्तर-हे गौतम ! अन्तर नहीं होता ।

१२३ प्रश्न-सव्वेयाणं केवइयं कालं० ?

१२३ उत्तर-णत्थि अंतरं ।

भावार्थ-१२३ प्रश्न-हे भगवन् ! सर्व-कम्पक द्विप्रदेशी स्कन्ध का अंतर कितने काल का होता है ?

१२३ उत्तर-हे गौतम ! अन्तर नहीं होता ।

१२४ प्रश्न-णिरेयाणं केवइयं कालं० ?

१२४ उत्तर-णत्थि अंतरं । एवं जाव अणंतपएसियाणं ।

भावार्थ-१२४ प्रश्न-हे भगवन् ! सर्व-कम्पक द्विप्रदेशी स्कन्ध का अंतर कितने काल का होता है ?

१२४ उत्तर-हे गौतम ! अन्तर नहीं होता । इस प्रकार यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक ।

१२५ प्रश्न-एएसि णं भंते ! परमाणुपोग्गलाणं सव्वेयाणं णिरे-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

याण य कयरे कयरे० जाव विसेसाहिया वा ?

१२५ उत्तर–गोयमा ! सव्वत्थोवा परमाणुपोग्गला सव्वेया, णिरेया असंखेज्जगुणा ।

भावार्थ–१२५ प्रश्न–हे भगवन् ! सर्व-कम्पक और निष्कम्पक परमाणु-पुद्गलों में कौन किससे यावत् विशेषाधिक हैं ?

१२५ उत्तर–हे गौतम ! सर्व-कम्पक परमाणु-पुद्गल सब से थोड़े हैं, उनसे निष्कम्पक परमाणु-पुद्गल असंख्यात गुण हैं ।

१२६ प्रश्न–एएसि णं भंते ! दुपएसियाणं खंधाणं देसेयाणं, सव्वेयाणं, णिरेयाण य कयरे कयरे० जाव विसेसाहिया वा ?

१२६ उत्तर–गोयमा ! सव्वत्थोवा दुपएसिया खंधा सव्वेया, देसेया असंखेज्जगुणा, णिरेया असंखेज्जगुणा । एवं जाव असंखेज्ज-पएसियाणं खंधाणं ।

भावार्थ–१२६ प्रश्न–हे भगवन् ! देश-कम्पक, सर्व-कम्पक और निष्क-म्पक द्विप्रदेशी स्कन्ध में कौन किससे यावत् विशेषाधिक हैं ?

१२६ उत्तर–हे गौतम ! सर्व-कम्पक द्विप्रदेशी स्कन्ध सब से थोड़े हैं । उनसे देश-कम्पक असंख्यात गुण हैं और उनसे निष्कम्पक असंख्यात गुण हैं । इस प्रकार यावत् असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध तक ।

१२७ प्रश्न–एएसि णं भंते ! अणंतपएसियाणं खंधाणं देसेयाणं, सव्वेयाणं, णिरेयाण य कयरे कयरे० जाव विसेसाहिया वा ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१२७ उत्तर–गोयमा ! सव्वत्थोवा अणंतपएसिया खंधा सव्वेया, णिरेया अणंतगुणा, देसेया अणंतगुणा ।

भावार्थ–१२७ प्रश्न–हे भगवन् ! देश-कम्पक, सर्व-कम्पक और निष्कम्पक अनन्त प्रदेशी स्कन्धों में कौन किससे यावत् विशेषाधिक हैं ?

१२७ उत्तर–हे गौतम ! सर्व-कम्पक अनन्त प्रदेशी स्कन्ध सब से थोड़े हैं, उनसे निष्कम्पक अनन्त गुण हैं और उनसे देश-कम्पक अनन्त गुण हैं ।

१२८ प्रश्न–एएसि णं भंते ! परमाणुपोग्गलाणं संखेज्जपएसियाणं, असंखेज्जपएसियाणं, अणंतपएसियाण य खंधाणं देसेयाणं, सव्वेयाणं, णिरेयाणं दव्वट्ठयाए, पएसट्ठयाए, दव्वट्ठपएसट्ठयाए कयरे कयरे जाव विसेसाहिया वा ?

१२८ उत्तर–गोयमा ! १ सव्वत्थोवा अणंतपएसिया खंधा सव्वेया दव्वट्ठयाए २ अणंतपएसिया खंधा णिरेया दव्वट्ठयाए अणंतगुणा ३ अणंतपएसिया खंधा देसेया दव्वट्ठयाए अणंतगुणा ४ असंखेज्ज पएसिया खंधा सव्वेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ५ संखेज्जपएसिया खंधा सव्वेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ६ परमाणुपोग्गला सव्वेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ७ संखेज्जपएसिया खंधा देसेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ८ असंखेज्जपएसिया खंधा देसेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ९ परमाणुपोग्गला णिरेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा १०

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संखेज्जपएसिया खंधा णिरेया दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा ११ असंखेज्ज-पएसिया खंधा णिरेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा ।

पएसट्ठयाए—सव्वत्थोवा अणंतपएसिया० । एवं पएसट्ठयाए वि । णवरं परमाणुपोग्गला अपएसट्ठयाए भाणियव्वा । संखेज्जपएसिया खंधा णिरेया पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा, सेसं तं चेव ।

भावार्थ—१२८ प्रश्न—हे भगवन् ! देश-कम्पक, सर्व-कम्पक और निष्कम्पक परमाणु-पुद्गल, संख्यात प्रदेशी स्कन्ध, असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध और अनन्त प्रदेशी स्कन्ध में द्रव्यार्थ, प्रदेशार्थ और द्रव्य-प्रदेशार्थ से कौन किससे यावत् विशेषाधिक हैं ?

१२८ उत्तर—हे गौतम ! १ सर्व-कम्पक अनन्त प्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से सब से थोड़े हैं, २ उनसे निष्कम्पक अनन्त प्रदेशी स्कंध, द्रव्यार्थ से अनन्त गुण हैं, ३ उनसे देश-कम्पक अनन्त प्रदेशी स्कंध द्रव्यार्थ से अनन्त गुण हैं, ४ उनसे सर्व-कम्पक असंख्यात प्रदेशी स्कंध, द्रव्यार्थ से असंख्यात गुण हैं ५ उनसे सर्व-कम्पक संख्यात प्रदेशी स्कंध द्रव्यार्थ से असंख्यात गुण है, ६ उनसे सर्व-कम्पक परमाणु-पुद्गल द्रव्यार्थ से असंख्यात गुण है, ७ उनसे देश-कम्पक संख्यात प्रदेशी स्कंध द्रव्यार्थ से असंख्यात गुण हैं, ८ उनसे देश-कम्पक असंख्यात प्रदेशी स्कंध द्रव्यार्थ से असंख्यात गुण हैं, ९ उनसे निष्कम्पक परमाणु-पुद्गल द्रव्यार्थ से असंख्यात गुण हैं, १० उनसे निष्कम्पक संख्यात प्रदेशी स्कंध द्रव्यार्थ से संख्यात गुण हैं, ११ उनसे निष्कम्पक असंख्यात प्रदेशी स्कंध द्रव्यार्थ से असंख्यात गुण हैं ।

प्रदेशार्थ से—सर्व-कम्पक अनन्त प्रदेशी स्कंध प्रदेशार्थ से सब से थोड़े हैं । इस प्रकार प्रदेशार्थ से भी अल्प बहुत्व जानना चाहिये । किन्तु परमाणु-पुद्गल के लिये 'अप्रदेशार्थ' कहना चाहिये तथा निष्कम्पक संख्यात प्रदेशी-स्कंध, प्रदेशार्थ से असंख्यात गुण है—ऐसा कहना चाहिये । शेष पूर्ववत् ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१ दव्वट्ठपएसट्ठयाए-सव्वत्थोवा अणंतपएसिया खंधा सव्वेया दव्वट्ठयाए २ ते चेव पएसट्ठयाए अणंतगुणा ३ अणंतपएसिया खंधा णिरेया दव्वट्ठयाए अणंतगुणा ४ ते चेव पएसट्ठयाए अणंतगुणा ५ अणंतपएसिया खधा देसेया दव्वट्ठयाए अणंतगुणा ६ ते चेव पएसट्ठयाए अणंतगुणा ७ असंखेज्जपएसिया खंधा सव्वेया दव्वट्ठयाए अणंतगुणा ८ ते चेव पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा ९ संखेज्जपएसिया खंधा सव्वेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा १० ते चेव पएसट्ठयाए संखेज्जगुणा ११ परमाणुपोग्गला सव्वेया दव्वट्ठअपएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा १२ संखेज्जपएसिया खंधा देसेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा १३ ते चेव पएसट्ठयाए संखेज्जगुणा १४ असंखेज्जपएसिया खंधा देसेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा १५ ते चेव पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा १६ परमाणुपोग्गला णिरेया दव्वट्ठअपएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा १७ संखेज्जपएसिया खंधा णिरेया दव्वट्ठयाए संखेज्जगुणा १८ ते चेव पएसट्ठयाए संखेज्जगुणा १९ असंखेज्जपएसिया णिरेया दव्वट्ठयाए असंखेज्जगुणा २० ते चेव पएसट्ठयाए असंखेज्जगुणा ।

भावार्थ-द्रव्यार्थ-प्रदेशार्थ से-१ सर्व-कम्पक अनन्त प्रदेशी-स्कंध द्रव्यार्थ से सब से थोड़े हैं, २ उनसे सर्व-कम्पक अनन्त प्रदेशी स्कंध प्रदेशार्थ से अनन्त गुण हैं, ३ उनसे निष्कम्पक अनन्त प्रदेशी स्कंध द्रव्यार्थ से अनन्त गुण हैं, ४ उनसे निष्कम्पक अनन्त प्रदेशी स्कंध प्रदेशार्थ से अनन्त गुण है, ५ उनसे देश-कम्पक अनन्त प्रदेशी स्कंध द्रव्यार्थ से अनन्त गुण हैं, ६ उनसे देश-कम्पक

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अनन्त प्रदेशी स्कंध प्रदेशार्थ से अनन्त गुण हैं, ७ उनसे सर्व-कम्पक असंख्यात प्रदेशी स्कंध द्रव्यार्थ से अनन्त गुण हैं, ८ उनसे सर्व-कम्पक असंख्यात प्रदेशी स्कंध प्रदेशार्थ से असंख्यात गुण हैं, ९ उनसे सर्व-कम्पक संख्यात प्रदेशी स्कंध द्रव्यार्थ से असंख्यात गुण हैं, १० उनसे सर्व-कम्पक संख्यात प्रदेशी स्कंध प्रदेशार्थ से संख्यात गुण हैं, ११ उनसे सर्व-कम्पक परमाणु-पुद्गल द्रव्यार्थ अप्रदेशार्थ से असंख्यात गुण हैं, १२ उनसे देश-कम्पक संख्यात प्रदेशी स्कंध द्रव्यार्थ से असंख्यात गुण हैं, १३ उनसे देश-कम्पक संख्यात प्रदेशी स्कंध प्रदेशार्थ से संख्यात गुण हैं, १४ उनसे देश-कम्पक असंख्यात प्रदेशी स्कंध द्रव्यार्थ से असंख्यात गुण हैं, १५ उनसे देश-कम्पक असंख्यात प्रदेशी स्कंध प्रदेशार्थ से असंख्यात गुण हैं, १६ उनसे निष्कम्पक परमाणु पुद्गल द्रव्यार्थ अप्रदेशार्थ से असंख्यात गुण हैं, १७ उनसे निष्कम्पक संख्यात प्रदेशी स्कंध द्रव्यार्थ से संख्यात गुण है, १८ उनसे निष्कम्पक संख्यात प्रदेशी स्कंध प्रदेशार्थ से संख्यात गुण हैं, १९ उनसे निष्कम्पक असंख्यात प्रदेशी स्कंध द्रव्यार्थ से असंख्यात गुण है और २० उनसे निष्कम्पक असंख्यात प्रदेशी स्कंध प्रदेशार्थ से असंख्यात गुण हैं।

**विवेचन**--परमाणु की निष्कम्प दशा औत्सर्गिक (स्वाभाविक) है। इसलिये उसका उत्कृष्ट काल असंख्यात है। सकम्प दशा आपवादिक (अस्वाभाविक--कभी-कभी होने वाली) है। इसलिये वह उत्कृष्ट से भी आवलिका के असंख्यातवें भाग मात्र काल तक ही रहती है। बहुत परमाणु की अपेक्षा सकम्प दशा सर्व काल रहती है, क्योंकि भूत, भविष्यत् और वर्तमान, इन तीनों कालों में भी कोई ऐसा समय नहीं था, नहीं है और नहीं होगा, जिसमें सभी परमाणु निष्कम्प रहते हों और यही बात निष्कम्प दशा के लिये भी समझनी चाहिये अर्थात् सभी परमाणु सदाकाल निष्कम्प रहते हो, ऐसी बात भी नहीं है।

अन्तर के विषय में स्वस्थान और परस्थान का जो कथन किया है, उसका अभिप्राय यह है कि जब परमाणु, परमाणु अवस्था में (स्कन्ध से पृथक्) रहता है, तब स्वस्थान कहलाता है और जब स्कन्ध अवस्था में होता है, तब परस्थान कहलाता है। एक परमाणु एक समय तक चलन क्रिया से बन्द रह कर फिर चलता है, तब स्वस्थान की अपेक्षा अन्तर जघन्य एक समय का होता है और उत्कृष्ट से वही परमाणु असंख्यात काल तक

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

किसी स्थान रह कर फिर चलता है, तब अन्तर असंख्यात काल का होता है। जब परमाणु द्विप्रदेशादि स्कन्ध के अन्तर्गत होता है और जघन्य से एक समय चलन क्रिया से निवृत्त रह कर फिर पृथक् होकर चलित होता है, तब परस्थान की अपेक्षा अन्तर जघन्य एक समय का होता है। परन्तु जब वह परमाणु असंख्यात काल तक द्विप्रदेशादिक स्कन्ध रूप में रह कर पुनः उस स्कन्ध से पृथक् हो कर चलित होता हैं, तब परस्थान की अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात काल का होता है।

जब परमाणु निश्चल (स्थिर) हो कर जघन्य एक समय तक परिभ्रमण कर के पुनः स्थिर होता है और उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग रूप असंख्य समय तक परिभ्रमण कर के पुनः स्थिर होता है, तब अन्तर स्वस्थान की अपेक्षा जघन्य एक समय और उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग का होता है। परमाणु निश्चल हो कर स्वस्थान से चलित हो और जघन्य एक समय पर्यंत द्विप्रदेशादि स्कन्ध के रूप में रह कर पुनः पृथक् हो कर निश्चल हो और उत्कृष्ट असंख्यात काल तक द्विप्रदेशादि स्कन्ध रूप में रह कर फिर उससे पृथक् हो कर स्थिर हो, तब परस्थान की अपेक्षा अन्तर जघन्य और उत्कृष्ट होता है।

द्विप्रदेशी स्कन्ध चलित हो कर अनन्त काल तक उत्तरोत्तर दूसरे अनन्त पुद्गलों के साथ सम्बन्ध करता हुआ पुनः उसी परमाणु के साथ सम्बद्ध हो कर पुनः चलित हो, तब परस्थान की अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल का होता है।

सकम्प परमाणु-पुद्गल लोक में सदा पाये जाते है, इसलिये उनका अन्तर नहीं होता।

परमाणु-पुद्गल संख्यात प्रदेशी, असंख्यात प्रदेशी और अनन्त प्रदेशी स्कन्धों की सकम्पता और निष्कम्पता के द्रव्यार्थ से आठ पद होते हैं। इसी प्रकार प्रदेशार्थ से भी आठ पद होते हैं। द्रव्यार्थ से उभय पक्ष में चौदह पद होते हैं, क्योंकि सकम्प और निष्कम्प परमाणुओं के द्रव्यार्थता और प्रदेशार्थता—इन दो पदों के स्थान में 'द्रव्यार्थ अप्रदेशार्थता' यह एक ही पद कहना चाहिये। इसलिये सोलह बोलों के स्थान में चौदह बोल ही होते हैं।

द्रव्यार्थता सूत्र में निष्कम्प संख्यात प्रदेशी स्कन्ध, निष्कम्प परमाणुओं से संख्यात गुण कहे गये हैं और प्रदेशार्थता सूत्र में वे परमाणुओं से असंख्यात गुण कहे गये हैं, इसका कारण यह है कि निष्कम्प परमाणुओं से निष्कम्प संख्यात प्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से संख्यात गुण होते हैं। उनमें के बहुत से स्कन्धों में उत्कृष्ट संख्या वाले प्रदेश होने से वे निष्कम्प परमाणुओं से प्रदेशार्थ से असंख्यात गुण होते हैं, क्योंकि उत्कृष्ट संख्या में एक संख्या की वृद्धि होने पर असंख्य हो जाते हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

परमाणु-पुद्गल आदि सभी के अल्प-बहुत्व अधिकार में द्रव्यार्थ के विचार में परमाणु-पुद्गल के साथ सर्व-कम्पक और निष्कम्पक—ये दो विशेषण लगाये हैं तथा संख्यात प्रदेशी, असंख्यात प्रदेशी और अनन्त प्रदेशी, इन तीनों के साथ देश-कम्पक, सर्व-कम्पक और निष्कम्पक–ये तीन विशेषण लगाये हैं। इस प्रकार य ग्यारह पद होते हैं। प्रदेशार्थ के विषय में भी ये ही ग्यारह पद होते हैं। द्रव्यार्थ–प्रदेशार्थ उभय के विचार में बाईस पद न बता कर बीस ही पद बताये हैं, इसका कारण यह है कि सकम्प और निष्कम्प परमाणुओं के द्रव्यार्थ और प्रदेशार्थ, इन दो पदों के स्थान में 'द्रव्यार्थ-अप्रदेशार्थ' यह एक ही पद बनता है। इस प्रकार द्रव्यार्थ-प्रदेशार्थ इस उभय पक्ष में बीस ही पद बनते हैं।

# आस्तिकाय के मध्य-प्रदेश

१२९ प्रश्न–कइ णं भंते! धम्मत्थिकायस्स मज्झपएसा पण्णत्ता?

१२९ उत्तर–गोयमा! अट्ठ धम्मत्थिकायस्स मज्झपएसा पण्णत्ता।

कठिन शब्दार्थ—मज्झपएसा—मध्य-प्रदेश—बीच के प्रदेश।

भावार्थ–१२९ प्रश्न–हे भगवन्! धर्मास्तिकाय के मध्य-प्रदेश कितने कहे हैं?

१२९ उत्तर–हे गौतम! धर्मास्तिकाय के मध्य-प्रदेश आठ कहे हैं।

१३० प्रश्न–कइ णं भंते! अधम्मत्थिकायस्स मज्झपएसा पण्णत्ता?

१३० उत्तर–एवं चेव।

भावार्थ–१३० प्रश्न–हे भगवन्! अधर्मास्तिकाय के मध्य-प्रदेश कितने कहे हैं?

१३० उत्तर–हे गौतम! इसी प्रकार आठ कहे हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१३१ प्रश्न–कइ णं भंते ! आगासत्थिकायस्स मज्झपएसा पण्णत्ता ?

१३१ उत्तर–एवं चेव ।

भावार्थ–१३१ प्रश्न–हे भगवन् ! आकाशास्तिकाय के मध्य-प्रदेश कितने कहे हैं ?

१३१ उत्तर–हे गौतम ! इसी प्रकार आठ कहे हैं ।

१३२ प्रश्न–कइ णं भंते ! जीवत्थिकायस्स मज्झपएसा पण्णत्ता ?

१३२ उत्तर–गोयमा ! अट्ठ जीवत्थिकायस्स मज्झपएसा पण्णत्ता ।

भावार्थ–१३२ प्रश्न–हे भगवन् ! जीवास्तिकाय के मध्य-प्रदेश कितने कहे हैं ?

१३२ उत्तर–हे गौतम ! जीवास्तिकाय के मध्य-प्रदेश आठ कहे हैं ।

१३३ प्रश्न–एए णं भंते ! अट्ठ जीवत्थिकायस्स मज्झपएसा कइसु आगासपएसेसु ओगाहंति ?

१३३ उत्तर–गोयमा ! जहण्णेणं एक्कंसि वा दोहिं वा तीहिं वा चउहिं वा पंचहिं वा छहिं वा उक्कोसेणं अट्ठसु, णो चेव णं सत्तसु ।

॥ 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति ॥

॥ पणवीसइमेसए चउत्थो उद्देसो समत्तो ॥

भावार्थ–१३३ प्रश्न–हे भगवन् ! जीवास्तिकाय के ये आठ मध्य-प्रदेश आकाशास्तिकाय के कितने प्रदेशों में समा सकते हैं ?

१३३ उत्तर–हे गौतम ! जघन्य एक, दो, तीन, चार, पांच, छह और

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उत्कृष्ट आठ प्रदेश में समा सकते हैं, किन्तु सात प्रदेशों में नहीं समाते ।

'हे भगवन ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन ! यह इसी प्रकार है'– कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

**विवेचन**––धर्मास्तिकाय के आठ मध्य-प्रदेश, आठ रुचक-प्रदेशवर्ती होते हैं–ऐसा चूर्णिकार कहते हैं । वे रुचक-प्रदेश मेरु के मूलभाग के मध्यवर्ती हैं । यद्यपि धर्मास्तिकाय आदि लोक प्रमाण होने से उनका मध्यभाग रुचक-प्रदेशों से असंख्यात योजन दूर रत्नप्रभा के अवकाशान्तर में आया हुआ है रुचकवर्ती नहीं है, तथापि दिशा और विदिशाओं के उत्पत्ति स्थान रुचक-प्रदेश होने से धर्मास्तिकायादि के मध्य रूप से उनकी विवक्षा की हो– ऐसा संभवित है ।

प्रत्येक जीव के आठ रुचक-प्रदेश होते हैं । वे उस जीव के शरीर के ठीक मध्य-भाग में होते हैं । इसलिये वे मध्य-प्रदेश कहलाते हैं । संकोच और विकाश (विस्तार) जीव-प्रदेशों का धर्म होने से उनके मध्यवर्ती आठ प्रदेश एक आकाश प्रदेश से ले कर छह आकाश-प्रदेशों में रह सकते हैं और उत्कृष्ट आठ आकाश-प्रदेशों में रहते हैं । परन्तु सात आकाश-प्रदेशों में नहीं रहते, क्योंकि वस्तु-स्वभाव ही इस प्रकार का है ।

## ॥ पच्चीसवें शतक का चौथा उद्देशक सम्पूर्ण ॥

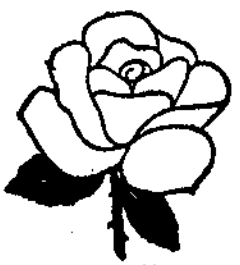

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# शतक २५ उद्देशक ४

## पर्यव के भेद

१ प्रश्न–कइविहा णं भंते ! पज्जवा पण्णत्ता ?

१ उत्तर–गोयमा ! दुविहा पज्जवा पण्णत्ता, तं जहा–जीव-पज्जवा य अजीवपज्जवा य। पज्जवपयं णिरवसेसं भाणियव्वं जहा पण्णवणाए।

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! पर्यव कितने प्रकार के कहे हैं ?

१ उत्तर–हे गौतम ! पर्यव दो प्रकार के कहे हैं। यथा–जीवपर्यव और अजीवपर्यव। यहां प्रज्ञापना सूत्र का पांचवां पर्यव पद सम्पूर्ण कहना।

विवेचन–पर्यव, गुण, धर्म, विशेष, पर्यय और पर्याय, ये सब शब्द एकार्थवाची (पर्यायवाची) हैं। जीवपर्यव और अजीवपर्यव के लिये प्रज्ञापना सूत्र के पांचवें पद का अतिदेश किया गया है। जीव के पर्यव अनन्त होते हैं।

## आवलिका यावत् पुद्गल-परिवर्तन के समय

२ प्रश्न–आवलिया णं भंते ! किं संखेज्जा समया, असंखेज्जा समया, अणंता समया ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२ उत्तर-गोयमा ! णो संखेज्जा समया, असंखेज्जा समया, णो अणंता समया ?

भावार्थ-२ प्रश्न-हे भगवन् ! आवलिका संख्यात समय की है, असंख्यात समय की है, या अनन्त समय की है ?

२ उत्तर-हे गौतम ! आवलिका संख्यात समय की नहीं और अनन्त समय की भी नहीं, किन्तु असंख्य समय की है।

३ प्रश्न-आणापाणू णं भंते ! किं संखेज्जा० ?

३ उत्तर-एवं चेव।

भावार्थ-३ प्रश्न-हे भगवन् ! आनप्राण (श्वासोच्छ्वास) संख्यात समय का है० ?

३ उत्तर-हे गौतम ! पूर्ववत्।

४ प्रश्न-थोवे णं भंते ! किं संखेज्जा० ?

४ उत्तर-एवं चेव। एवं लवे वि, मुहुत्ते वि, एवं अहोरत्ते, एवं पक्खे, मासे, उऊ, अयणे, संवच्छरे, जुगे, वाससये, वाससहस्से, वाससयसहस्से, पुव्वंगे, पुव्वे, तुडियंगे, तुडिए, अडडंगे, अडडे, अववंगे, अववे, हूहुयंगे, हूहुए, उप्पलंगे, उप्पले, पउमंगे, पउमे, णलिणांगे, णलिणे, अत्थणिउरंगे, अत्थणिउरे, अउयंगे, अउये, णउयंगे, णउए, पउयंगे, पउए, चूलियंगे, चूलिए, सीसपहेलियगे, सीसपहेलिया, पलिओवमे, सागरोवमे, ओसप्पिणी, एवं उस्सप्पिणी वि।

भावार्थ-४ प्रश्न-हे भगवन् ! स्तोक संख्यात समय० ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

४ उत्तर–हे गौतम ! पूर्ववत् । इसी प्रकार लव, मुहूर्त, अहोरात्र, पक्ष, मास, ऋतु, अयन, संवत्सर, युग, वर्षशत, (सौ वर्ष), वर्षसहस्र (हजार वर्ष), वर्षशतसहस्र (लाख वर्ष), पूर्वांग, पूर्व, त्रुटितांग, त्रुटित, अटटांग, अटट, अववांग, अवव, हूहूकांग, हूहूक, उत्पलांग, उत्पल, पद्मांग, पद्म, नलिनांग, नलिन, अर्थ-निपूरांग, अर्थनिपूर, अयुतांग, अयुत, नयुतांग, नयुत, प्रयुतांग, प्रयुत, चूलिकांग, चूलिका, शीर्षप्रहेलिकांग, शीर्षप्रहेलिका, पल्योपम, सागरोपम, अवसर्पिणी और उत्सर्पिणी, इन सब के समय जानना चाहिये । इनमें से प्रत्येक में असंख्यात समय होते हैं ।

५ प्रश्न–पोग्गलपरियट्टे णं भंते ! किं संखेज्जा समया, असंखेज्जा समया, अणंता समया–पुच्छा ।

५ उत्तर–गोयमा ! णो संखेज्जा समया, णो असंखेज्जा समया, अणंता समया । एवं तीयद्धा, अणागयद्धा, सव्वद्धा ।

कठिन शब्दार्थ–तीयद्धा–भूतकाल, अणागयद्धा–भविष्यत् काल ।

भावार्थ–५ प्रश्न–हे भगवन् ! पुद्गल-परिवर्तन संख्यात समय का है, असंख्यात समय का है या अनन्त समय का है ?

५ उत्तर–हे गौतम ! संख्यात समय का नहीं, असंख्यात समय का भी नहीं, परन्तु अनन्त समय का है । इसी प्रकार भूतकाल, भविष्यत्काल तथा सर्व-काल भी है ।

६ प्रश्न–आवलियाओ णं भंते ! किं संखेज्जा समया–पुच्छा ।

६ उत्तर–गोयमा ! णो संखेज्जा समया, सिय असंखेज्जा समया, सिय अणंता समया ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ–६ प्रश्न–हे भगवन् ! आवलिकाएँ संख्यात समय की हैं० ?

६ उत्तर–हे गौतम ! आवलिकाएँ संख्यात समय की नहीं, कदाचित् असंख्यात समय और कदाचित् अनन्त समय की होती हैं।

७ प्रश्न–आणापाणू णं भंते ! किं संखेज्जा समया ? ?

७ उत्तर–एवं चेव।

भावार्थ–७ प्रश्न–हे भगवन् ! आनप्राण संख्यात समय के हैं० ?

७ उत्तर–हे गौतम ! पूर्ववत्।

८ प्रश्न–थोवा णं भंते ! किं संखेज्जा समया ? ?

८ उत्तर–एवं चेव। एवं जाव 'ओसप्पिणीओ' त्ति।

भावार्थ–८ प्रश्न–हे भगवन् ! स्तोक संख्यात समय रूप हैं० ?

८ उत्तर–हे गौतम ! पूर्ववत्। इसी प्रकार यावत् अवसर्पिणी काल तक।

९ प्रश्न–पोग्गलपरियट्टा णं भंते ! किं संखेज्जा समया–पुच्छा।

९ उत्तर–गोयमा ! णो संखेज्जा समया, णो असंखेज्जा समया, अणंता समया।

भावार्थ–९ प्रश्न–हे भगवन् ! पुद्गल-परिवर्तन संख्यात समय० ?

९ उत्तर–हे गौतम ! संख्यात समय का नहीं और असंख्यात समय का भी नहीं, किन्तु अनन्त समय का हैं।

१० प्रश्न–आणापाणूणं भंते ! किं संखेज्जाओ आवलियाओ–पुच्छा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१० उत्तर-गोयमा ! संखेज्जाओ आवलियाओ, णो असंखेज्जाओ आवलियाओ, णो अणंताओ आवलियाओ। एवं थोवे वि एवं जाव 'सीसपहेलिय' त्ति।

भावार्थ-१० प्रश्न-हे भगवन् ! आनप्राण संख्यात आवलिका रूप है०?

१० उत्तर-हे गौतम ! संख्यात आवलिका का है, असंख्यात या अनन्त आवलिका का नहीं है। इस प्रकार स्तोक यावत् शीर्षप्रहेलिका पर्यन्त।

११ प्रश्न-पलिओवमे णं भंते ! किं संखेज्जा ३-पुच्छा।

११ उत्तर-गोयमा ! णो संखेज्जाओ आवलियाओ, असंखेज्जाओ आवलियाओ, णो अणंताओ आवलियाओ। एवं सागरोवमे वि एवं ओसप्पिणी वि उस्सप्पिणी वि।

भावार्थ-११ प्रश्न-हे भगवन् ! पल्योपम संख्यात आवलिका रूप हैं०?

११ उत्तर-हे गौतम ! संख्यात आवलिका का भी नहीं और अनन्त आवलिका का भी नहीं, किन्तु असंख्यात आवलिका का है। इसी प्रकार सागरोपम, अवसर्पिणी और उत्सर्पिणी भी हैं।

१२ प्रश्न-पोग्गलपरियट्टे-पुच्छा।

१२ उत्तर-गोयमा ! णो संखेज्जाओ आवलियाओ, णो असंखेज्जाओ आवलियाओ, अणंताओ आवलियाओ। एवं जाव सव्वद्धा।

भावार्थ-१२ प्रश्न-हे भगवन् ! पुद्गल-परिवर्तन कितने आवलिका का है०?

१२ उत्तर-हे गौतम ! संख्यात आवलिका और असंख्यात आवलिका का नहीं है, अनन्त आवलिका का है। इसी प्रकार यावत् सर्वाद्धा पर्यन्त।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१३ प्रश्न–आणापाणू णं भंते ! किं संखेज्जाओ आवलियाओ–पुच्छा ।

१३ उत्तर–गोयमा ! सिय संखेज्जाओ आवलियाओ, सिय असंखेज्जाओ, सिय अणंताओ । एवं जाव सीसपहेलियाओ ।

भावार्थ–१३ प्रश्न–हे भगवन् ! आनप्राण संख्यात आवलिका के हैं० ?

१३ उत्तर–हे गौतम ! कदाचित् संख्यात आवलिका, असंख्यात आवलिका और कदाचित् अनन्त आवलिका के हैं । इस प्रकार यावत् शीर्षप्रहेलिका तक ।

१४ प्रश्न–पलिओवमा णं–पुच्छा ।

१४ उत्तर–गोयमा ! णो संखेज्जाओ आवलियाओ, सिय असंखेज्जाओ आवलियाओ, सिय अणंताओ आवलियाओ । एवं जाव उस्सप्पिणीओ ।

भावार्थ–१४ प्रश्न–हे भगवन् ! पल्योपम संख्यात आवलिका के हैं० ?

१४ उत्तर–हे गौतम ! संख्यात आवलिका के नहीं है, किन्तु कदाचित् असंख्यात आवलिका और कदाचित् अनन्त आवलिका रूप हैं । इस प्रकार यावत् उत्सर्पिणी पर्यंत ।

१५ प्रश्न–पोग्गलपरियट्टा णं–पुच्छा ।

१५ उत्तर–गोयमा ! णो संखेज्जाओ आवलियाओ, णो असंखेज्जाओ आवलियाओ, अणंताओ आवलियाओ ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ–१५ प्रश्न–हे भगवन् ! पुद्गल-परिवर्तन संख्यात आवलिका० ?

१५ उत्तर–हे गौतम ! संख्यात आवलिका और असंख्यात आवलिका के नहीं, किंतु अनन्त आवलिका के हैं ।

१६ प्रश्न–थोवे णं भंते ! किं संखेज्जाओ आणापाणूओ, असंखेज्जाओ० ?

१६ उत्तर–जहा आवलियाए वत्तव्वया एवं आणापाणूओ, वि णिरवसेसा । एवं एएणं गमएणं जाव सीसपहेलिया भाणियव्वा ।

भावार्थ–१६ प्रश्न–हे भगवन् ! स्तोक संख्यात आनप्राण का है या असंख्यात आनप्राण रूप है० ?

१६ उत्तर–हे गौतम ! आवलिका के समान आनप्राण भी है । इसी प्रकार पूर्वोक्त गमक से यावत् शीर्षप्रहेलिका तक समझना चाहिये ।

१७ प्रश्न–सागरोवमे णं भंते ! किं संखेज्जा पलिओवमा–पुच्छा ।

१७ उत्तर–गोयमा ! संखेज्जा पलिओवमा, णो असंखेज्जा पलिओवमा, णो अणंता पलिओवमा । एवं ओसप्पिणीए वि उस्सप्पिणीए वि ।

भावार्थ–१७ प्रश्न–हे भगवन् ! सागरोपम संख्यात पल्योपम का है० ?

१७ उत्तर–हे गौतम ! संख्यात पल्योपम का है, असंख्यात और अनन्त पल्योपम का नहीं । इसी प्रकार अवसर्पिणी और उत्सर्पिणी भी है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१८ प्रश्न-पोग्गलपरियट्टे णं-पुच्छा ।

१८ उत्तर-गोयमा ! णो संखेज्जा पलिओवमा, णो असंखेज्जा पलिओवमा, अणंता पलिओवमा । एवं जाव सव्वद्धा ।

भावार्थ-१८ प्रश्न-हे भगवन् ! पुद्गल-परिवतन संख्यात पल्योपम का है० ?

१८ उत्तर-हे गौतम ! संख्यात और असंख्यात पल्योपम का नहीं, अनन्त पल्योपम का है । इसी प्रकार यावत् सर्वाद्धा पर्यन्त ।

१९ प्रश्न-सागरोवमा णं भंते ! किं संखेज्जा पलिओवमा-पुच्छा ।

१९ उत्तर-गोयमा ! सिय संखेज्जा पलिओवमा, सिय असंखेज्जा पलिओवमा, सिय अणंता पलिओवमा । एवं जाव ओसप्पिणी वि, उस्सप्पिणी वि ।

भावार्थ-१९ प्रश्न-हे भगवन् ! सागरोपम संख्यात पल्योपम रूप हैं०?

१९ उत्तर-हे गौतम ! कदाचित् संख्यात पल्योपम, असंख्यात पल्योपम और कदाचित् अनन्त पल्योपम के हैं । इस प्रकार यावत् अवसर्पिणी और उत्सर्पिणी भी हैं ।

२० प्रश्न-पोग्गलपरियट्टा णं-पुच्छा ।

२० उत्तर-गोयमा ! णो संखेज्जा पलिओवमा, णो असंखेज्जा पलिओवमा, अणंता पलिओवमा ।

भावार्थ-२० प्रश्न-हे भगवन् ! पुद्गल-परिवर्तन संख्यात पल्योपम रूप हैं०?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२० उत्तर-हे गौतम ! संख्यात पल्योपम और असंख्यात पल्योपम नहीं, अनन्त पल्योपम के है ।

२१ प्रश्न-ओसप्पिणी णं भंते ! किं संखेज्जा सागरोवमा० ?

२१ उत्तर-जहा पलिओवमस्स वत्तव्वया तहा सागरोवमस्स वि।

भावार्थ-२१ प्रश्न-हे भगवन् ! अवसर्पिणी संख्यात सागरोपम की है० ?

२१ उत्तर-हे गौतम ! पल्योपम के समान सागरोपम भी है ।

२२ प्रश्न-पोग्गलपरियट्टे णं भंते ! किं संखेज्जाओ ओसप्पिणी-उस्सप्पिणीओ-पुच्छा ।

२२ उत्तर-गोयमा ! णो संखेज्जाओ ओसप्पिणी-उस्सप्पिणीओ, णो असंखेज्जाओ, अणंताओ ओसप्पिणि-उस्सप्पिणीओ । एवं जाव सव्वद्धा ।

भावार्थ-२२ प्रश्न-हे भगवन् ! पुद्गल-परिवर्तन संख्यात अवसर्पिणी और उत्सर्पिणी का है० ?

२२ उत्तर-हे गौतम ! संख्यात और असंख्यात अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी का नहीं, अनन्त अवसर्पिणी और उत्सर्पिणी रूप है। इस प्रकार यावत् सर्वाद्धा पर्यंत ।

२३ प्रश्न-पोग्गलपरियट्टा णं भंते ! किं संखेज्जाओ ओसप्पिणी-उस्सप्पिणीओ-पुच्छा ।

२३ उत्तर-गोयमा ! णो संखेज्जाओ ओसप्पिणी-उस्सप्पिणीओ, णो असंखेज्जाओ, अणंताओ ओसप्पिणी-उस्सप्पिणीओ ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ–२३ प्रश्न–हे भगवन् ! पुद्गल-परिवर्तन संख्यात अवसर्पिणी और उत्सर्पिणी रूप हैं० ?

२३ उत्तर–हे गौतम ! संख्यात और असंख्यात अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी रूप नहीं, अनन्त अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी रूप है ।

२४ प्रश्न–तीयद्धा णं भंते ! किं संखेज्जा पोग्गलपरियट्टा–पुच्छा ।

२४ उत्तर–गोयमा ! णो संखेज्जा पोग्गलपरियट्टा, णो असंखेज्जा, अणंता पोग्गलपरियट्टा । एवं अणागयद्धा वि, एवं सव्वद्धा वि ।

भावार्थ–२४ प्रश्न–हे भगवन् ! अतीताद्धा (भूतकाल) संख्यात पुद्गल-परिवर्तन का है० ?

२४ उत्तर–हे गौतम ! संख्यात और असंख्यात पुद्गल-परिवर्तन नहीं, अनन्त पुद्गल-परिवर्तनमय है । इस प्रकार अनागताद्धा और सर्वाद्धा भी ।

२५ प्रश्न–अणागयद्धा णं भंते ! किं संखेज्जाओ तीयद्धाओ, असंखेज्जाओ, अणंताओ ?

२५ उत्तर–गोयमा ! णो संखेज्जाओ तीयद्धाओ, णो असंखेज्जओ तीयद्धाओ, णो अणंताओ तीयद्धाओ । अणागयद्धा णं तीयद्धाओ समयाहिया, तीयद्धा णं अणागयद्धाओ समयूणा ।

भावार्थ–२५ प्रश्न–हे भगवन् ! अनागताद्धा (भविष्यत्काल) संख्यात अतीताद्धा (भूतकाल,), असंख्यात अतीताद्धामय है या अनन्त अतीताद्धामय है ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२५ उत्तर-हे गौतम ! अनागताद्धा (भविष्यत्काल) संख्यात अतीताद्धा, असंख्यात अतीताद्धा और अनन्त अतीताद्धामय नहीं, किन्तु अतीताद्धा काल से अनागताद्धाकाल एक समय अधिक है और अनागताद्धाकाल से अतीताद्धा एक समय न्यून है।

२६ प्रश्न-सव्वद्धा णं भंते ! किं संखेज्जाओ तीयद्धाओ-पुच्छा।

२६ उत्तर-गोयमा ! णो संखेज्जाओ तीयद्धाओ, णो असंखेज्जाओ, णो अणंताओ तीयद्धाओ। सव्वद्धा णं तीयद्धाओ साइरेगदुगुणा, तीयद्धा णं सव्वद्धाओ थोवूणए अद्धे।

भावार्थ-२६ प्रश्न-हे भगवन् ! सर्वाद्धा संख्यात अतीताद्धा रूप है० ?

२६ उत्तर-हे गौतम ! संख्यात, असंख्यात और अनन्त अतीताद्धा रूप नहीं, किन्तु अतीताद्धा काल से सर्वाद्धा कुछ अधिक द्विगुण है और अतीताद्धा काल, सर्वाद्धा से कुछ न्यून अर्द्धभाग है।

२७ प्रश्न-सव्वद्धा णं भंते ! किं संखेज्जाओ अणागयद्धाओ-पुच्छा।

२७ उत्तर-गोयमा ! णो संखेज्जाओ अणागयद्धाओ, णो असंखेज्जाओ, अणागयद्धाओ णो अणंताओ अणागयद्धाओ। सव्वद्धा णं अणागयद्धाओ थोवूणगदुगुणा, अणागयद्धा णं सव्वद्धाओ साइरेगे अद्धे।

भावार्थ-२७ प्रश्न-हे भगवन् ! सर्वाद्धा संख्यात अनागताद्धा काल का है० ?

२७ उत्तर-हे गौतम ! संख्यात, असंख्यात और अनन्त अनागताद्धा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

**नहीं, किन्तु अनागताद्धा काल से सर्वाद्धा कुछ न्यून दुगुना है और अनागताद्धा काल सर्वाद्धा से सातिरेक (कुछ अधिक) अर्द्ध है।**

**विवेचन**–समय से ले कर शीर्षप्रहेलिका तक ४६ भेद हैं। यहाँ तक का काल परिमाण, गणित के योग्य है। शीर्षप्रहेलिका में १९४ अंकों की संख्या आती है। इसके आगे भी काल परिमाण बताया गया है, परन्तु वह उपमा का विषय है, गणित का नहीं। समय से ले कर शीर्षप्रहेलिका तक की संख्या का अर्थ पहले लिखा जा चुका है। इसी प्रकार उपमा के विषयभूत पल्योपम, सागरोपम आदि का अर्थ भी पहले लिखा जा चुका है।

भूतकाल से भविष्यत्काल एक समय अधिक है, क्योंकि भूतकाल और भविष्यत्-काल अनादि और अनन्तपन की अपेक्षा दोनों समान हैं। इसके बीच में गौतमस्वामी के प्रश्न का समय है। वह अविनष्ट होने से भूतकाल में समाविष्ट नहीं किया जा सकता, किंतु अविनष्ट धर्म की साधर्म्यता से उसका समावेश भविष्यत्काल में होता हैं। इसलिये भविष्यत्काल, भूतकाल से एक समय अधिक है और भूतकाल, भविष्यत्काल से एक समय कम है।

सर्वाद्धा अर्थात् सर्वकाल, अतीतकाल से एक समय अधिक दुगुना है और अतीतकाल, सर्वाद्धा काल से एक समय कम अर्द्धभाग रूप है। यहाँ कोई आचार्य कहते हैं कि भूतकाल से भविष्यत्काल अनन्त गुण हैं, जैसा कि कहा है–**'ते णंता तीअद्धा अणागयद्धा अणंतगुणा'** अर्थात् अनन्त पुद्गल परावर्तन रूप अतीताद्धा (भूतकाल) है। उससे अनन्त गुण अनागताद्धा (भविष्यत्काल) है। यदि वर्तमान समय में भूतकाल और भविष्यत्काल बराबर हों, तो वर्तमान समय व्यतीत हो जाने पर भविष्यत्काल एक समय कम हो जायगा और इसके बाद दो, तीन, चार इत्यादि समय कम होने पर भूतकाल और भविष्यत्काल का समानपना नहीं रहेगा। इसलिये ये दोनों काल समान नहीं है, परन्तु भूतकाल से भविष्यत्काल अनन्त गुण है। इसलिये अनन्त काल बीत जाने पर भी उसका क्षय नहीं होता है।

इस शंका का समाधान यह है कि भूतकाल और भविष्यत्काल की जो समानता बताई जाती है, वह अनादिपन और अनन्तपन की अपेक्षा से है अर्थात् जिस प्रकार भूत-काल की आदि नहीं है, वह अनादि है, इसी प्रकार भविष्यत्काल का भी अन्त नहीं है, वह भी अनन्त है। इस प्रकार अनादि और अनन्तता की अपेक्षा भूतकाल और भविष्यत्-काल की समानता बताई है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

## निगोद के भेद

२८ प्रश्न–कइविहा णं भंते ! णिओया पण्णत्ता ?

२८ उत्तर–गोयमा ! दुविहा णिओया पण्णत्ता । तं जहा–णिओयगा य णिओयगजीवा य ।

कठिन शब्दार्थ––णिओया––निगोद ।

भावार्थ–२८ प्रश्न–हे भगवन् ! निगोद कितने प्रकार के कहे हैं ?

२८ उत्तर–हे गौतम ! निगोद दो प्रकार के कहे हैं । यथा–निगोद और निगोद जीव ।

२९ प्रश्न–णिओया णं भंते ! कइविहा पण्णत्ता ?

२९ उत्तर–गोयमा ! दुविहा पण्णत्ता, तं जहा–सुहुमणिओया य बायरणिओया य, एवं णिओया भाणियव्वा जहा जीवाभिगमे तहेव णिरवसेसं ।

भावार्थ–२९ प्रश्न–हे भगवन् ! निगोद कितने प्रकार के कहे हैं ?

२९ उत्तर–हे गौतम ! निगोद दो प्रकार के कहे हैं । यथा–सूक्ष्मनिगोद और बादरनिगोद । जीवाभिगम सूत्र के अनुसार सम्पूर्ण कहना चाहिये ।

विवेचन–अनन्तकायिक जीवों के शरीर को 'निगोद' कहते हैं और अनन्तकायिक जीवों को 'निगोद के जीव' कहते हैं । चर्मचक्षुओं से जिनके असंख्य शरीर इकट्ठे होने पर दृष्टिगोचर हो सकें, वे 'बादर निगोद' कहे जाते हैं और जो कितने ही शरीर इकट्ठे होने पर भी चर्मचक्षुओं से दृष्टिगोचर न हों, उन्हें 'सूक्ष्म निगोद' कहते हैं ।

## औदयिकादि नाम

३० प्रश्न–कइविहे णं भंते ! णामे पण्णत्ते ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

३० उत्तर-गोयमा ! छव्विहे णामे पण्णत्ते, तं जहा-१ उदइए जाव ६ सण्णिवाइए ।

प्रश्न-से किं तं उदइए णामे ?

उत्तर-उदइए णामे दुविहे पण्णत्ते, तं जहा-उदए य उदयणिप्फण्णे य एवं जहा सत्तरसमसए पढमे उद्देसए भावो तहेव इह वि। णवरं इमं णामणाणत्तं, सेसं तहेव जाव सण्णिवाइए ।

॥ 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति ॥

॥ पणवीसइमेसए पंचमो उद्देसो समत्तो ॥

भावार्थ-३० प्रश्न-हे भगवन् ! नाम (भाव) कितने प्रकार के कहे हैं ?

३० उत्तर-हे गौतम ! नाम छह प्रकार के कहे हैं । यथा-औदयिक यावत् सान्निपातिक ।

प्रश्न-हे भगवन् ! औदयिक नाम कितने प्रकार का कहा है ?

उत्तर-हे गौतम ! औदयिक नाम दो प्रकार का कहा है । यथा-उदय और उदयनिष्पन्न । सत्रहवें शतक के प्रथम उद्देशकानुसार । किन्तु वहां भाव के विषय में कहा है और यहां नाम के विषय में यावत् सान्निपातिक पर्यंत ।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'-कह कर गौतमस्वामी यावत् विचरते हैं ।

विवेचन-नाम परिणाम और भाव, ये सभी शब्द एकार्थक हैं । सत्रहवें शतक के प्रथम उद्देशक में 'भाव' की अपेक्षा औदयिक आदि का कथन किया था और यहां पर 'नाम' शब्द की अपेक्षा यह कथन किया है ।

## ॥ पच्चीसवें शतक का पाँचवाँ उद्देशक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# शतक २५ उद्देशक ६

१ पण्णवण २ वेद ३ रागे,
४ कप्प ५ चरित्त ६ पडिसेवणा ७ णाणे ।
८ तित्थे ९ लिंग १० सरीरे,
११ खेत्ते १२ काल १३ गइ १४ संजम १५ णिगासे ॥१॥
१६ जोगु १७ वओग १८ कसाए,
१९ लेसा २० परिणाम २१ बंध २२ वेदे य ।
२३ कम्मोदीरण २४ उवसंपजहण्ण,
२५ सण्णा २६ य आहारे ॥२॥
२७ भव २८ आगरिसे २९ कालं ३० तरे य,
३१ समुग्घाय ३२ खेत्त ३३ फुसणा य ।
३४ भावे ३५ परिमाणे ३६ वि य, अप्पाबहुयं णियंठाणं ॥३॥

भावार्थ–छठे उद्देशक में निर्ग्रन्थों के विषय में ३६ द्वारों से कथन किया जायगा । १ प्रज्ञापन २ वेद ३ राग ४ कल्प ५ चारित्र ६ प्रतिसेवना ७ ज्ञान ८ तीर्थ ९ लिंग १० शरीर ११ क्षेत्र १२ काल १३ गति १४ संयम १५ निकाश (सन्निकर्ष) १६ योग १७ उपयोग १८ कषाय १९ लेश्या २० परिणाम २१ बन्ध २२ वेद २३ कर्मों की उदीरणा २४ उपसंपत् हान २५ संज्ञा २६ आहार २७ भव २८ आकर्ष २९ काल ३० अन्तर ३१ समुद्घात ३२ क्षेत्र ३३ स्पर्शना ३४ भाव ३५ परिमाण और ३६ अल्प-बहुत्व ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# निर्ग्रंथों का स्वरूप

१ प्रश्न–रायगिहे जाव एवं वयासी–कइ णं भंते ! णियंठा पण्णत्ता ?

१ उत्तर–गोयमा ! पंच णियंठा पण्णत्ता, तं जहा–१ पुलाए २ बउसे ३ कुसीले ४ णियंठे ५ सिणाए ।

कठिन शब्दार्थ––णियंठे––निर्ग्रंथ ।

भावार्थ–१ प्रश्न–राजगृह नगर में गौतमस्वामी ने यावत् इस प्रकार पूछा–"हे भगवन् ! निर्ग्रंथ कितने प्रकार के कहे हैं ?"

१ उत्तर–हे गौतम ! निर्ग्रंथ पाँच प्रकार के कहे हैं । यथा–१ पुलाक २ बकुश ३ कुशील ४ निर्ग्रंथ और ५ स्नातक ।

२ प्रश्न–पुलाए णं भंते ! कइविहे पण्णत्ते ?

२ उत्तर–गोयमा ! पंचविहे पण्णत्ते, तं जहा–१ णाणपुलाए २ दंसणपुलाए ३ चरित्तपुलाए ४ लिंगपुलाए ५ अहासुहुमपुलाए णामं पंचमे ।

भावार्थ–२ प्रश्न–हे भगवन् ! पुलाक कितने प्रकार के कहे हैं ?

२ उत्तर–हे गौतम ! पुलाक पाँच प्रकार के कहे हैं । यथा–१ ज्ञान-पुलाक २ दर्शनपुलाक ३ चारित्रपुलाक ४ लिंगपुलाक और ५ यथासूक्ष्मपुलाक ।

३ प्रश्न–बउसे णं भंते ! कइविहे पण्णत्ते ?

३ उत्तर–गोयमा ! पंचविहे पण्णत्ते, तं जहा–१ आभोगबउसे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२ अणाभोगबउसे ३ संवुडबउसे ४ असंवुडबउसे ५ अहासुहुमबउसे णामं पंचमे ।

भावार्थ–३ प्रश्न–हे भगवन् ! बकुश कितने प्रकार के कहे हैं ?

३ उत्तर–हे गौतम ! बकुश पांच प्रकार के कहे हैं । यथा–१ आभोग-बकुश २ अनाभोगबकुश ३ संवृतबकुश ४ असंवृतबकुश और ५ यथासूक्ष्म बकुश ।

४ प्रश्न–कुसीले णं भंते ! कइविहे पण्णत्ते ?

४ उत्तर–गोयमा ! दुविहे पण्णत्ते, तं जहा–पडिसेवणाकुसीले य कसायकुसीले य ।

भावार्थ–४ प्रश्न–हे भगवन् ! कुशील कितने प्रकार के कहे हैं ?

४ उत्तर–हे गौतम ! कुशील दो प्रकार के कहे हैं । यथा–१ प्रतिसेवना कुशील और २ कषायकुशील ।

५ प्रश्न–पडिसेवणाकुसीले णं भंते ! कइविहे पण्णत्ते ?

५ उत्तर–गोयमा ! पंचविहे पण्णत्ते, तं जहा–१ णाणपडिसेवणा-कुसीले २ दंसणपडिसेवणाकुसीले ३ चरित्तपडिसेवणाकुसीले ४ लिंग-पडिसेवणाकुसीले ५ अहासुहुमपडिसेवणाकुसीले णामं पंचमे ।

भावार्थ–५ प्रश्न–हे भगवन् ! प्रतिसेवना कुशील कितने प्रकार के कहे हैं ।

५ उत्तर–हे गौतम ! प्रतिसेवना कुशील पांच प्रकार के कहे हैं । यथा–१ ज्ञानप्रतिसेवना कुशील २ दर्शनप्रतिसेवना कुशील ३ चारित्रप्रतिसेवना कुशील ४ लिंगप्रतिसेवना कुशील और ५ यथासूक्ष्मप्रतिसेवना कुशील ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

६ प्रश्न-कसायकुसीले णं भंते ! कइविहे पण्णत्ते ?

६ उत्तर-गोयमा ! पंचविहे पण्णत्ते, तं जहा-१ णाणकसाय-कुसीले २ दंसणकसायकुसीले ३ चरित्तकसायकुसीले ४ लिंगकसाय-कुसीले ५ अहासुहुमकसायकुसीले णामं पंचमे ।

भावार्थ-६ प्रश्न-हे भगवन् ! कषाय-कुशील कितने प्रकार के कहे हैं ?

६ उत्तर-हे गौतम ! कषाय-कुशील पांच प्रकार के कहे हैं । यथा-१ ज्ञान कषाय-कुशील २ दर्शन कषाय-कुशील ३ चारित्र कषाय-कुशील ४ लिंग कषाय-कुशील और ५ यथासूक्ष्म कषाय-कुशील ।

७ प्रश्न-णियंठे णं भंते ! कइविहे पण्णत्ते ?

७ उत्तर-गोयमा ! पंचविहे पण्णत्ते, तं जहा-१ पढमसमयणियंठे अपढमसमयणियंठे ३ चरमसमयणियंठे ४ अचरमसमयणियंठे ५ अहा-सुहुमणियंठे णामं पंचमे ।

भावार्थ-७ प्रश्न-हे भगवन् ! निर्ग्रंथ कितने प्रकार के कहे हैं ?

७ उत्तर-हे गौतम ! निर्ग्रंथ पांच प्रकार के कहे हैं । यथा-१ प्रथम समयवर्ती निर्ग्रंथ २ अप्रथम समयवर्ती निर्ग्रंथ ३ चरम समयवर्ती निर्ग्रंथ ४ अचरम समयवर्ती निर्ग्रंथ और ५ यथासूक्ष्म निर्ग्रंथ ।

८ प्रश्न-सिणाए णं भंते ! कइविहे पण्णत्ते ?

८ उत्तर-गोयमा ! पंचविहे पण्णत्ते, तं जहा-१ अच्छवी २ असबले ३ अकम्मंसे ४ संसुद्धणाणदंसणधरे अरहा जिणे केवली ५ अपरिस्सावी ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

**भावार्थ**–८ प्रश्न–हे भगवन् ! स्नातक कितने प्रकार के कहे हैं ?

८ उत्तर–हे गौतम ! स्नातक पांच प्रकार के कहे हैं । यथा–१ अच्छवि २ अशबल ३ अकर्माश ४ संशुद्ध ज्ञान-दर्शन धारक अरिहन्त जिन केवली और ५ अपरिस्रावी ।

**विवेचन**–ग्रन्थ दो प्रकार के हैं–आभ्यन्तर और बाह्य । मिथ्यात्व आदि आभ्यन्तर ग्रन्थ हैं और धर्मोपकरण के अतिरिक्त शेष धन-धान्यादि बाह्य ग्रन्थ है । इस प्रकार बाह्य और आभ्यन्तर ग्रन्थ से जो रहित है, उसे 'निर्ग्रन्थ' कहते हैं । इन सब के सर्वविरति चारित्र होते हुए भी चारित्र मोहनीय कर्म के क्षयोपशमादि की विशेषता से पुलाक आदि पाँच भेद होते हैं ।

**पुलाक**–दाने सहित धान्य के पूले को 'पुलाक' कहते हैं । वह निस्सार होता है । उसी प्रकार संयम रूपी सार से रहित संयत को 'पुलाक' कहते हैं । यह संयमवान् होते हुए भी दोषों से संयम को कुछ अंश में असार करता है ।

पुलाक के दो भेद हैं–लब्धिपुलाक और प्रतिसेवनापुलाक । पुलाक लब्धि से युक्त साधु 'लब्धिपुलाक' कहलाता है, जो कि संघादि के प्रयोजन से बल-वाहन सहित चक्रवर्ती का भी विनाश कर सकता हैं । इस विषय में किन्हीं आचार्यों का कथन इस प्रकार है कि–प्रतिसेवना (विराधना–ज्ञानादि में अतिचार लगाना) से जो ज्ञानपुलाक है, उसी को इस प्रकार की लब्धि होती है और वही लब्धिपुलाक कहलाता है । इसके अतिरिक्त दूसरा कोई लब्धिपुलाक नहीं होता ।

प्रतिसेवनापुलाक की अपेक्षा पुलाक के पाँच भेद कहे हैं । यथा–ज्ञानपुलाक, दर्शन-पुलाक, चारित्रपुलाक, लिंगपुलाक और यथासूक्ष्मपुलाक । ज्ञानपुलाक–स्खलित, मिलित आदि ज्ञान के अतिचारों का सेवन करने वाला साधु ज्ञानपुलाक कहलाता है । दर्शनपुलाक–शंका, कांक्षा, कुतीर्थ परिचय आदि समकित के अतिचारों का सेवन कर के सम्यक्त्व को दूषित करने वाला साधु, दर्शनपुलाक कहलाता है । चारित्रपुलाक–मूलगुण और उत्तरगुणों में दोष लगा कर चारित्र की विराधना करने वाला साधु चारित्रपुलाक कहलाता है । लिंगपुलाक–शास्त्र में उपदिष्ट साधु-लिंग से अधिक धारण करने वाला अथवा निष्कारण अन्यलिंग को धारण करने वाला साधु लिंगपुलाक कहलाता है । यथासूक्ष्मपुलाक–कुछ प्रमाद होने से मन से अकल्पनीय ग्रहण करने के विचार वाला साधु यथासूक्ष्म पुलाक कहलाता है ।

बकुश का अर्थ है–'शबले' = चित्र वर्ण । शरीर और उपकरण को शोभनीय

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बनाने से जिसका चारित्र, शुद्धि और दोषों से विचित्र बना हो।

**बकुश**-बकुश के दो भेद हैं—उपकरण बकुश और शरीर बकुश। विभूषा (शोभा) के लिये अकाल में चोलपट्टा आदि धोने वाला, धूपादि देने वाला, पात्रादि को रोगन आदि लगा कर चमकाने वाला साधु 'उपकरण बकुश' होता है। शरीर बकुश–विभूषा के लिए हाथ, पैर, मुंह आदि धोने वाला, आँख, कान, नाक आदि से मैल दूर करने वाला, नख, केश आदि को संवारने वाला, दाँत साफ करने वाला और इस प्रकार कायगुप्ति रहित साधु शरीर-बकुश होता है। ये दोनों प्रकार के साधु प्रभूत वस्त्रपात्रादि रूप ऋद्धि और यश के कामी होते हैं और साता-गारव वाले होते हैं, इसलिए रात-दिन के कर्तव्य अनुष्ठानों में पूरे सावधान नहीं होते हैं। इस प्रकार इनका चारित्र सर्व या देश से दीक्षा-पर्याय के छेद योग्य अतिचारों से मलीन रहता है। इन दोनों प्रकार के बकुश के पाँच भेद हैं। यथा–आभोग बकुश, अनाभोग बकुश, संवृत बकुश, असंवृत बकुश और यथासूक्ष्म बकुश। आभोग बकुश—शरीर और उपकरण की विभूषा करना साधु के लिये निषिद्ध है—यह जानते हुए भी शरीर और उपकरण की विभूषा कर के चारित्र में दोष लगाने वाला साधु आभोग-बकुश है। अनाभोग बकुश–अनजान से शरीर और उपकरण की विभूषा करने वाला साधु अनाभोग बकुश है। संवृत बकुश–छिप कर शरीर और उपकरण की विभूषा कर दोष सेवन करने वाला साधु संवृत बकुश है। असंवृत बकुश—प्रकट रीति से शरीर और उपकरण की विभूषा रूप दोष सेवन करने वाला साधु असंवृत बकुश है। यथासूक्ष्म बकुश–उत्तरगुणों के विषय में प्रकट या अप्रकट रूप से कुछ प्रमाद सेवन करने वाला साधु यथासूक्ष्म बकुश कहलाता है।

**कुशील**–मूल तथा उत्तर गुणों में दोष लगाने से तथा संज्वलन कषाय के उदय से दूषित चारित्र वाला साधु 'कुशील' कहा जाता है। इसके दो भेद हैं–प्रतिसेवना कुशील और कषायकुशील। चारित्र के प्रति अभिमुख होते हुए भी अजितेन्द्रिय एवं किसी प्रकार पिण्डविशुद्धि, समिति, भावना, तप, पड़िमा आदि उत्तरगुणों की तथा मूलगुणों की विराधना करने से सर्वज्ञ की आज्ञा का उल्लंघन करने वाला 'प्रतिसेवना-कुशील' है। संज्वलन कषाय के उदय से दूषित चारित्र वाला कषाय-कुशील हैं। कषायकुशील और प्रतिसेवना-कुशील, इन दोनों के पाँच-पाँच भेद हैं। यथा–ज्ञानकुशील, दर्शनकुशील, चारित्रकुशील, लिंगकुशील और यथासूक्ष्मकुशील। ज्ञान, दर्शन, चारित्र और लिंग से आजीविका कर के दोष लगाने वाला प्रतिसेवना की अपेक्षा क्रमशः ज्ञान-कुशील, दर्शन-कुशील, चारित्र-कुशील और लिंग-कुशील होता है। 'यह तपस्वी है'–इस प्रकार की प्रशंसा से प्रसन्न होने वाला

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'यथासूक्ष्मकुशील' है। कषायकुशील के भी ये पांच भेद हैं। ज्ञान, दर्शन, चारित्र और लिंग के लिए संज्वलन की कषाय करे, वह क्रमशः ज्ञानकुशील, दर्शनकुशील, चारित्रकुशील और लिंगकषायकुशील होता है। मन से संज्वलन कषाय करने वाला साधु यथासूक्ष्मकुशील है अथवा संज्वलन कषायवश ज्ञान, दर्शन, चारित्र और लिंग की विराधना करने वाले क्रमशः ज्ञानकुशील, दर्शनकुशील, चारित्रकुशील, लिंगकुशील हैं और मन से संज्वलन कषाय करने वाला यथासूक्ष्मकषायकुशील है। लिंगकुशील के स्थान में कहीं-कहीं 'तपकुशील' भी है।

**निर्ग्रंथ**––जो मोह से रहित हो, उसे 'निर्ग्रंथ' कहते हैं। इसके उपशान्तमोह निर्ग्रंथ और क्षीणमोह निर्ग्रंथ–ये दो भेद हैं। इन दोनों के भी पांच भेद हैं। यथा––प्रथम समय निर्ग्रंथ, अप्रथम समय निर्ग्रंथ, चरम समय निर्ग्रंथ, अचरम समय निर्ग्रंथ और यथासूक्ष्म निर्ग्रंथ। उपशान्त मोह का काल जघन्य एक समय और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त है। क्षीण-मोह छद्मस्थ का काल जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त प्रमाण है। उसके प्रथम समय में वर्तमान 'प्रथम समय निर्ग्रंथ' और शेष समयों में वर्तमान 'अप्रथम समय निर्ग्रंथ' कहलाता है। ये दोनों भेद पूर्वानुपूर्वी की अपेक्षा से है। इसी प्रकार उपशान्तमोह और क्षीणमोह के चरम समय में वर्तमान 'चरम समय निर्ग्रंथ' और अन्तिम समय के सिवाय शेष समयों में वर्तमान निर्ग्रंथ 'अचरम समय निर्ग्रंथ' कहलाता है। ये दोनों भेद पश्चानुपूर्वी की अपेक्षा से है। प्रथम समय आदि की विवक्षा किये बिना सामान्य रूप से सभी समयों में वर्तमान निर्ग्रंथ 'यथासूक्ष्म निर्ग्रंथ' कहलाता है।

**स्नातक**––घातिक कर्मों का विनाश कर देने से शुद्ध बना हुआ साधु 'स्नातक' कहलाता है। इसके पांच भेद हैं। यथा–अच्छवि, अशबल, अकर्मांश, संशुद्ध-ज्ञानदर्शनधर अरिहन्त जिन केवली और अपरिश्रावी। अच्छवि––स्नातक काय-योग का निरोध करने से छवि अर्थात् शरीर रहित अथवा व्यथा नहीं देने वाला होता है। इसके स्थान में कोई आचार्य 'अक्षपी' कहते हैं। अशबल––निरतिचार शुद्ध चारित्र को पालता है, इसलिये वह 'अशबल' होता है। अकर्मांश––घातिक कर्मों का क्षय कर देने से स्नातक को 'अकर्मांश' कहते हैं। संशुद्ध–ज्ञानदर्शनधर अरिहन्तजिन-केवली––दूसरे ज्ञान और दर्शन से असम्बद्ध अतएव शुद्ध निष्कलंक ज्ञान और दर्शन को धारण करने वाला होने से स्नातक संशुद्धज्ञानदर्शनधारी होता है। पूजा के योग्य होने से एवं कर्म शत्रुओं का विनाश कर देने से 'अरिहन्त,' कषायों का विजेता होने से 'जिन' और परिपूर्ण ज्ञान दर्शन चारित्र का स्वामी होने से 'केवली'

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

है। अपरिश्रावी––सम्पूर्ण काय-योग का सर्वथा निरोध कर लेने पर, स्नातक निष्क्रिय हो जाता है और कर्म-प्रवाह सर्वथा रुक जाता है। इसलिये वह 'अपरिश्रावी' होता है। टीकाकार ने स्नातक के इन अवस्थाकृत भेदों की व्याख्या नहीं की है। अतः शक्र, पुरन्दर आदि के समान इनका शब्दकृत भेद होता है–ऐसा संभवित है।

## वेद द्वार

९ प्रश्न–पुलाए णं भंते ! किं सवेयए होज्जा, अवेयए होज्जा ?

९ उत्तर–गोयमा ! सवेयए होज्जा, णो अवेयए होज्जा।

भावार्थ–९ प्रश्न–हे भगवन् ! पुलाक सवेदी होता है या अवेदी ?

९ उत्तर–हे गौतम ! वह सवेदी होता है, अवेदी नहीं।

१० प्रश्न–जइ सवेयए होज्जा किं इत्थिवेयए होज्जा, पुरिसवेयए होज्जा, पुरिसणपुंसगवेयए होज्जा ?

१० उत्तर–गोयमा ! णो इत्थिवेयए होज्जा, पुरिसवेयए होज्जा, पुरिसणपुंसगवेयए वा होज्जा।

भावार्थ–१० प्रश्न–हे भगवन् ! पुलाक सवेदी होता है, तो क्या स्त्रीवेदी होता है, पुरुषवेदी होता है या पुरुष नपुंसकवेदी होता है ?

१० उत्तर–हे गौतम ! स्त्रीवेदी नहीं होता, किन्तु पुरुषवेदी या पुरुषनपुंसकवेदी होता है।

११ प्रश्न–बउसे णं भंते ! किं सवेयए होज्जा, अवेयए होज्जा ?

११ उत्तर–गोयमा ! सवेयए होज्जा, णो अवेयए होज्जा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ-११ प्रश्न-हे भगवन् ! बकुश सवेदी होते हैं या अवेदी ?

११ उत्तर-हे गौतम ! बकुश सवेदी होते हैं, अवेदी नहीं ।

१२ प्रश्न-जइ सवेयए होज्जा किं इत्थिवेयए होज्जा, पुरिसवेयए होज्जा, पुरिसणपुंसगवेयए होज्जा ?

१२ उत्तर-गोयमा ! इत्थिवेयए वा होज्जा, पुरिसवेयए वा होज्जा, पुरिसणपुंसगवेयए वा होज्जा । एवं पडिसेवणाकुसीले वि ।

भावार्थ-१२ प्रश्न-हे भगवन् ! बकुश सवेदी होते हैं, तो क्या स्त्रीवेदी होते हैं, पुरुषवेदी होते हैं या पुरुष-नपुंसकवेदी होते हैं ?

१२ उत्तर-हे गौतम ! वे स्त्रीवेदी, पुरुषवेदी या पुरुष नपुंसकवेदी होते हैं । इसी प्रकार प्रतिसेवना कुशील भी ।

१३ प्रश्न-कसायकुसीले णं भंते ! किं सवेयए-पुच्छा ।

१३ उत्तर-गोयमा ! सवेयए वा होज्जा, अवेयए वा होज्जा ।

भावार्थ-१३ प्रश्न-हे भगवन् ! कषाय-कुशील सवेदी होते हैं० ?

१३ उत्तर-हे गौतम ! कषाय-कुशील सवेदी भी होते हैं और अवेदी भी ।

१४ प्रश्न-जइ अवेयए किं उवसंतवेयए, खीणवेयए होज्जा ?

१४ उत्तर-गोयमा ! उवसंतवेयए वा खीणवेयए वा होज्जा ।

कठिन शब्दार्थ-खीणवेयए-क्षीण-वेदक ।

भावार्थ-१४ प्रश्न-हे भगवन् ! कषाय-कुशील यदि अवेदी होते हैं, तो उपशान्तवेदी होते हैं या क्षीणवेदी ?

१४ उत्तर-हे गौतम ! उपशान्तवेदी भी होते हैं और क्षीणवेदी भी ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१५ प्रश्न-जइ सवेयए होज्जा किं इत्थिवेयए-पुच्छा ।

१५ उत्तर-गोयमा ! तिसु वि जहा बउसो ।

भावार्थ-१५ प्रश्न-हे भगवन् ! यदि कषाय-कुशील सवेदी होते हैं, तो स्त्रीवेदी होते हैं० ?

१५ उत्तर-हे गौतम ! बकुश के समान तीनों ही वेदों में होते हैं ।

१६ प्रश्न-णियंठे णं भंते ! किं सवेयए-पुच्छा ।

१६ उत्तर-गोयमा ! णो सवेयए होज्जा अवेयए होज्जा ।

भावार्थ-१६ प्रश्न-हे भगवन् ! निर्ग्रंथ सवेदी होते हैं० ?

१६ उत्तर-हे गौतम ! निर्ग्रंथ सवेदी नहीं होते, अवेदी होते हैं ।

१७ प्रश्न-जइ अवेयए होज्जा किं उवसंत-पुच्छा ।

१७ उत्तर-गोयमा ! उवसंतवेयए वा होज्जा, खीणवेयए वा होज्जा ।

भावार्थ-१७ प्रश्न-हे भगवन् ! निर्ग्रंथ अवेदी होते हैं, तो क्या उपशान्त वेदी होते हैं या क्षीणवेदी ?

१७ उत्तर-हे गौतम ! उपशान्तवेदी भी होते हैं और क्षीणवेदी भी ।

१८ प्रश्न-सिणाए णं भंते ! किं सवेयए होज्जा० ?

१८ उत्तर-जहा णियंठे तहा सिणाए वि । णवरं णो उवसंत-वेयए होज्जा, खीणवेयए होज्जा ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ–१८ प्रश्न–हे भगवन् ! स्नातक सवेदी होते हैं या अवेदी ?

१८ उत्तर–हे गौतम ! निर्ग्रंथ के समान स्नातक भी अवेदी होते हैं। परन्तु वह उपशान्तवेदी नहीं होते, क्षीणवेदी होते हैं।

विवेचन–पुलाक, बकुश और प्रतिसेवना-कुशील में उपशम-श्रेणी या क्षपक-श्रेणी नहीं होती, इसलिये वे अवेदी नहीं होते। पुलाक लब्धि स्त्री को नहीं होती, पुरुष या पुरुष-नपुंसक को होती है। पुरुष होते हुए भी लिंग छेद आदि के द्वारा जो 'कृत्रिम नपुंसक' है, वह पुरुष-नपुंसक यहाँ ग्रहण किया है स्वरूपतः अर्थात् जो जन्म से नपुंसक है, उसका भी यहाँ ग्रहण किया है।

कषाय-कुशील, सूक्ष्मसंपराय गुणस्थान तक होते हैं। वे प्रमत्त, अप्रमत्त और अपूर्व-करण गुणस्थान में सवेदी होते हैं तथा अनिवृत्तिबादर और सूक्ष्मसंपराय गुणस्थान में वेद का उपशम या क्षय होने से अवेदी होते हैं।

निर्ग्रंथ उपशम और क्षपक दोनों श्रेणी में होते हैं। इसलिये वे उपशान्तवेदी या क्षीणवेदी होते हैं। स्नातक क्षपक-श्रेणी में ही होते हैं। इसलिये वे क्षीणवेदी होते हैं।

## राग द्वार

१९ प्रश्न–पुलाए णं भंते ! किं सरागे होज्जा, वीयरागे होज्जा ?

१९ उत्तर–गोयमा ! सरागे होज्जा, णो वीयरागे होज्जा, एवं जाव कसायकुसीले।

भावार्थ–१९ प्रश्न–हे भगवन् ! पुलाक सराग होते हैं या वीतराग ?

१९ उत्तर–हे गौतम ! पुलाक सराग होते हैं, वीतराग नहीं होते। इसी प्रकार यावत् कषाय-कुशील पर्यन्त।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२० प्रश्न-णियंठे णं भंते ! किं सरागे होज्जा-पुच्छा।

२० उत्तर-गोयमा ! णो सरागे होज्जा, वीयरागे होज्जा।

भावार्थ-२० प्रश्न-हे भगवन् ! निर्ग्रंथ सराग होते हैं या वीतराग ?
२० उत्तर-हे गौतम ! सराग नहीं, वीतराग होते हैं।

२१ प्रश्न-जइ वीयरागे होज्जा किं उवसंतकसायवीयरागे होज्जा, खीणकसायवीयरागे होज्जा ?

२१ उत्तर-गोयमा ! उवसंतकसायवीयरागे वा होज्जा, खीणकसायवीयरागे वा होज्जा। सिणाए एवं चेव। णवरं णो उवसंतकसायवीयरागे होज्जा, खीणकसायवीयरागे होज्जा ३।

भावार्थ-२१ प्रश्न-हे भगवन् ! यदि निर्ग्रंथ वीतराग होते हैं, तो क्या उपशान्तकषाय वीतराग होते हैं या क्षीण-कषाय वीतराग होते हैं ?

२१ उत्तर-हे गौतम ! उपशान्त-कषाय वीतराग भी होते हैं और क्षीण-कषाय वीतराग भी होते हैं। इसी प्रकार स्नातक भी। किन्तु स्नातक उपशान्त-कषाय वीतराग नहीं होते, केवल क्षीण-कषाय वीतराग ही होते हैं।

विवेचन-सराग का अर्थ 'सकषाय' है। यह सकषायत्व दसवें गुणस्थान तक होता है।

## कल्प द्वार

२२ प्रश्न-पुलाए णं भंते ! किं ठियकप्पे होज्जा, अट्ठियकप्पे होज्जा ?

२२ उत्तर-गोयमा ! ठियकप्पे वा होज्जा, अट्ठियकप्पे वा होज्जा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एवं जाव सिणाए ।

कठिन शब्दार्थ-ठियकप्पे-स्थित कल्प ।

भावार्थ-२२ प्रश्न-हे भगवन् ! पुलाक स्थित कल्प में होते हैं या अस्थित कल्प में ?

२२ उत्तर-हे गौतम ! वे स्थित कल्प में भी होते हैं और अस्थित कल्प में भी । इसी प्रकार यावत स्नातक पर्यंत ।

२३ प्रश्न-पुलाए णं भंते ! किं जिणकप्पे होज्जा, थेरकप्पे होज्जा, कप्पाईए होज्जा ?

२३ उत्तर-गोयमा ! णो जिणकप्पे होज्जा, थेरकप्पे होज्जा, णो कप्पाईए होज्जा ।

भावार्थ-२३ प्रश्न-हे भगवन् ! पुलाक जिनकल्प में होते हैं, स्थविर-कल्प में होते हैं या कल्पातीत ?

२३ उत्तर-हे गौतम ! पुलाक जिनकल्प में नहीं होते, कल्पातीत भी नहीं होते, किन्तु स्थविरकल्प में होते हैं ।

२४ प्रश्न-बउसे णं-पुच्छा ।

२४ उत्तर-गोयमा ! जिणकप्पे वा होज्जा, थेरकप्पे वा होज्जा, णो कप्पाईए होज्जा । एवं पडिसेवणाकुसीले वि ।

भावार्थ-२४ प्रश्न-हे भगवन् ! बकुश जिनकल्प में होते हैं० ?

२४ उत्तर-हे गौतम ! बकुश जिनकल्प में और स्थविरकल्प में होते हैं, किन्तु कल्पातीत नहीं होते । इसी प्रकार प्रतिसेवना-कुशील भी ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२५ प्रश्न-कसायकुसीले णं-पुच्छा ।

२५ उत्तर-गोयमा ! जिणकप्पे वा होज्जा, थेरकप्पे वा होज्जा, कप्पाईए वा होज्जा ।

भावार्थ-२५ प्रश्न-हे भगवन् ! कषाय-कुशील जिनकल्प में होते हैं० ?

२५ उत्तर-हे गौतम ! जिनकल्प में भी होते हैं, स्थविरकल्प भी और कल्पातीत भी होते हैं ।

२६ प्रश्न-णियंठे णं-पुच्छा ।

२६ उत्तर-गोयमा ! णो जिणकप्पे होज्जा, णो थेरकप्पे होज्जा, कप्पाईए होज्जा । एवं सिणाए वि ४ ।

भावार्थ-२६ प्रश्न-हे भगवन् ! निर्ग्रंथ जिनकल्प में होते हैं० ?

२६ उत्तर-हे गौतम ! निर्ग्रंथ जिनकल्प में या स्थविरकल्प में नहीं होते, किन्तु कल्पातीत होते हैं । इसी प्रकार स्नातक भी ।

विवेचन--अचेलकल्प आदि दस कल्प हैं । उनका पालन करना जिनके लिये निश्चित् रूप से आवश्यक हो, उन मुनियों का कल्प 'स्थितकल्प' कहलाता हैं । जिन मुनियों के लिये इन दस कल्पों में से चार का पालन करना नियमित रूप से आवश्यक हो और छह का पालन ऐच्छिक हो, उनका कल्प 'अस्थितकल्प' कहलाता है । प्रथम और अन्तिम तीर्थंकर के साधु के लिये अचेलकल्प आदि दस कल्पों का पालन करना आवश्यक है । इसलिये उनका कल्प 'स्थितकल्प' कहलाता है । मध्य के बावीस तीर्थंकरों के साधुओं के लिये दस कल्पों में से चार कल्पों का पालन नियमित होता है और छह का पालन करना उनके लिये नियमित रूप से आवश्यक नहीं होता । अतः उनका कल्प 'अस्थितकल्प' कहलाता है । पुलाक आदि सभी निर्ग्रंथ स्थितकल्प और अस्थितकल्प-दोनों कल्पों में होते हैं ।

दूसरी अपेक्षा से कल्प के दो भेद भी किये हैं । यथा-जिनकल्प और स्थविर-कल्प । इन दोनों कल्पों में जो नहीं हो, उसे 'कल्पातीत' कहते हैं । पुलाक तो केवल

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

स्थविर कल्प में ही होते हैं। बकुश और प्रतिसेवना-कुशील जिनकल्प और स्थविरकल्प– दोनों में होते हैं। कषाय-कुशील जिनकल्प और स्थविरकल्प में भी होते हैं और कल्पातीत भी होते हैं। क्योंकि छद्मस्थ तीर्थंकर सकषायी होने से कल्पातीत होते हुए भी कषाय-कुशील होते हैं। निर्ग्रंथ और स्नातक कल्पातीत ही होते हैं। उनमें जिनकल्प और स्थविर-कल्प धर्म नहीं होते।

## चारित्र द्वार

**२७ प्रश्न–पुलाए णं भंते ! किं सामाइयसंजमे होज्जा, छेओवट्ठावणियसंजमे होज्जा, परिहारविसुद्धियसंजमे होज्जा, सुहुमसंपरायसंजमे होज्जा, अहक्खायसंजमे होज्जा ?**

**२७ उत्तर–गोयमा ! सामाइयसंजमे वा होज्जा, छेओवट्ठावणियसंजमे वा होज्जा, णो परिहारविसुद्धियसंजमे होज्जा, णो सुहुमसंपरायसंजमे होज्जा, णो अहक्खायसंजमे होज्जा। एवं बउसे वि, एवं पडिसेवणाकुसीले वि।**

भावार्थ–२७ प्रश्न–हे भगवन् ! पुलाक, सामायिक संयम में, छेदोपस्थापनीय संयम में, परिहारविशुद्धि संयम में, सूक्ष्मसम्पराय संयम में या यथाख्यात संयम में होते हैं ?

२७ उत्तर–हे गौतम ! पुलाक, सामायिक संयम में या छेदोपस्थापनीय संयम में होते हैं, किन्तु परिहारविशुद्धि संयम में, सूक्ष्मसम्पराय संयम में और यथाख्यात संयम में नहीं होते। इसी प्रकार बकुश और प्रतिसेवना-कुशील भी।

**२८ प्रश्न–कसायकुसीले णं–पुच्छा।**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२८ उत्तर-गोयमा ! सामाइयसंजमे वा होज्जा जाव सुहुमसंपरायसंजमे वा होज्जा, णो अहक्खायसंजमे होज्जा ।

भावार्थ-२८ प्रश्न-हे भगवन् ! कषाय-कुशील किस संयम में होते हैं ?

२८ उत्तर-हे गौतम ! सामायिक संयम में यावत् सूक्ष्मसंपराय संयम में होते हैं, परन्तु यथाख्यात संयम में नहीं होते ।

२९ प्रश्न-णियंठे णं-पुच्छा ।

२९ उत्तर-गोयमा ! णो सामाइयसंजमे होज्जा जाव णो सुहुमसंपरायसंजमे होज्जा, अहक्खायसंजमे होज्जा । एवं सिणाए वि ५ ।

भावार्थ-२९ प्रश्न-हे भगवन् ! निर्ग्रंथ किस संयम में होते हैं ?

२९ उत्तर-हे गौतम ! सामायिक संयम यावत् सूक्ष्मसंपराय संयम में नहीं होते, किन्तु यथाख्यात संयम में होते हैं । इसी प्रकार स्नातक भी ।

## प्रतिसेवना द्वार

३० प्रश्न-पुलाए णं भंते ! किं पडिसेवए होज्जा, अपडिसेवए होज्जा ?

३० उत्तर-गोयमा ! पडिसेवए होज्जा, णो अपडिसेवए होज्जा ।

भावार्थ-३० प्रश्न-हे भगवन् ! पुलाक, प्रतिसेवी (दोषों का सेवन करने वाले) होते हैं या अप्रतिसेवी ?

३० उत्तर-हे गौतम ! प्रतिसेवी होते हैं, अप्रतिसेवी नहीं होते ।

३१ प्रश्न-जइ पडिसेवए होज्जा किं मूलगुणपडिसेवए होज्जा,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उत्तरगुणपडिसेवए होज्जा ?

३१ उत्तर-गोयमा ! मूलगुणपडिसेवए वा होज्जा, उत्तरगुणपडिसेवए वा होज्जा । मूलगुणपडिसेवमाणे पंचण्हं आसवाणं अण्णयरं पडिसेवेज्जा, उत्तरगुणपडिसेवमाणे दसविहस्स पच्चक्खाणस्स अण्णयरं पडिसेवेज्जा ।

कठिन शब्दार्थ-अण्णयरं-अन्यतर-किसी भी ।

भावार्थ-३१ प्रश्न-हे भगवन् ! यदि पुलाक, प्रतिसेवी होते हैं, तो क्या मूलगुणों के प्रतिसेवी होते हैं या उत्तरगुणों के ?

३१ उत्तर-हे गौतम ! मूलगुणों के प्रतिसेवी भी होते हैं और उत्तरगुणों के प्रतिसेवी भी । मूलगुणों के प्रतिसेवी होते हैं, तो पांच प्रकार के आश्रव में से किसी एक आश्रव के प्रतिसेवी होते है और उत्तरगुणों के प्रतिसेवी होते हैं, तो दस प्रकार के प्रत्याख्यानों में से किसी एक प्रत्याख्यान के प्रतिसेवी होते हैं ।

३२ प्रश्न-बउसे णं-पुच्छा ।

३२ उत्तर-गोयमा ! पडिसेवए होज्जा, णो अपडिसेवए होज्जा ।

भावार्थ-३२ प्रश्न-हे भगवन् ! बकुश प्रतिसेवी होते हैं० ?
३२ उत्तर-हे गौतम ! प्रतिसेवी होते हैं, अप्रतिसेवी नहीं होते ।

३३ प्रश्न-जइ पडिसेवए होज्जा किं मूलगुणपडिसेवए होज्जा, उत्तरगुणपडिसेवए होज्जा ?

३३ उत्तर-गोयमा ! णो मूलगुणपडिसेवए होज्जा, उत्तरगुण

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पडिसेवए होज्जा। उत्तरगुणपडिसेवमाणे दसविहस्स पच्चक्खाणस्स अण्णयरं पडिसेवेज्जा पडिसेवणाकुसीले जहा पुलाए।

भावार्थ–३३ प्रश्न–हे भगवन्! यदि बकुश प्रतिसेवी होते हैं, तो क्या मूलगुण प्रतिसेवी होते हैं या उत्तरगुण?

३३ उत्तर–हे गौतम! मूलगुणों के प्रतिसेवी नहीं होते, उत्तरगुणों के प्रतिसेवी होते हैं। उत्तरगुणों के प्रतिसेवी होते हैं, तो दस प्रकार के प्रत्याख्यान में से किसी एक प्रत्याख्यान के प्रतिसेवी होते हैं। प्रतिसेवना-कुशील का कथन पुलाक के समान है।

३४ प्रश्न–कसायकुसीले णं–पुच्छा।

३४ उत्तर–गोयमा! णो पडिसेवए होज्जा, अपडिसेवए होज्जा। एवं णिग्गंथे वि, एवं सिणाए वि ६।

भावार्थ–३४ प्रश्न–हे भगवन्! कषाय-कुशील प्रतिसेवी होते हैं० ?

३४ उत्तर–हे गौतम! प्रतिसेवी नहीं होते, किन्तु अप्रतिसेवी होते हैं। इसी प्रकार निर्ग्रंथ और स्नातक भी।

**विवेचन**—संज्वलन कषाय के उदय से जो संयम विरुद्ध आचरण करता हैं, वह 'प्रतिसेवक' (संयम विराधक) कहलाता है और जो किसी भी प्रकार के दोषों का सेवन नहीं करता, वह 'अप्रतिसेवी' कहलाता है। 'प्राणातिपातादिविरमण व्रत' 'मूलगुण' कहलाते हैं और अनागत, अतिक्रान्त, कोटिसहित इत्यादि दस प्रकार के प्रत्याख्यान एवं उपलक्षण से पिण्डविशुद्धयादि 'उत्तर गुण' कहलाते हैं। इनमें दोष लगाने वाला मुनि क्रमशः मूलगुण-प्रतिसेवी और उत्तरगुण प्रतिसेवी कहलाता है।

## ज्ञान द्वार

३५ प्रश्न–पुलाए णं भंते! कइसु णाणेसु होज्जा?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

३५ उत्तर-गोयमा ! दोसु वा तिसु वा होज्जा । दोसु होमाणे दोसु आभिणिबोहियणाणे सुयणाणे होज्जा, तिसु होमाणे तिसु आभिणिबोहियणाणे सुयणाणे ओहिणाणे होज्जा । एवं बउसे वि, एवं पडिसेवणाकुसीले वि ।

कठिन शब्दार्थ--होमाणे--होता हुआ ।

भावार्थ-३५ प्रश्न-हे भगवन् ! पुलाक में ज्ञान कितने होते हैं० ?

३५ उत्तर-हे गौतम ! दो या तीन ज्ञान होते हैं । यदि दो ज्ञान हो, तो आभिनिबोधिक ज्ञान और श्रुत ज्ञान होते हैं और तीन ज्ञान हो, तो आभिनिबोधिक ज्ञान, श्रुत ज्ञान और अवधि ज्ञान होते हैं । इसी प्रकार बकुश और प्रतिसेवना-कुशील भी ।

३६ प्रश्न-कसायकुसीले णं--पुच्छा ।

३६ उत्तर-गोयमा ! दोसु वा तिसु वा चउसु वा होज्जा । दोसु होमाणे दोसु आभिणिबोहियणाणे सुयणाणे होज्जा, तिसु होमाणे तिसु आभिणिबोहियणाण-सुयणाण-ओहिणाणेसु होज्जा, अहवा तिसु होमाणे आभिणिबोहियणाण-सुयणाण-मणपज्जवणाणेसु होज्जा, चउसु होमाणे चउसु आभिणिबोहियणाण-सुयणाण-ओहिणाण-मणपज्जवणाणेसु होज्जा ?

भावार्थ-३६ प्रश्न-हे भगवन् ! कषाय-कुशील में ज्ञान कितने होते हैं ?

३६ उत्तर-हे गौतम ! दो, तीन या चार ज्ञान होते हैं । दो हों, तो आभिनिबोधिक ज्ञान और श्रुत ज्ञान, तीन हों, तो आभिनिबोधिक ज्ञान,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

श्रुतज्ञान और अवधिज्ञान अथवा आभिनिबोधिकज्ञान, श्रुतज्ञान और मनःपर्यय ज्ञान होते हैं और चार ज्ञान हो, तो आभिनिबोधिकज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान और मनःपर्यय ज्ञान होते हैं। इसी प्रकार निर्ग्रंथ भी।

३७ प्रश्न-सिणाए णं-पुच्छा।

३७ उत्तर-गोयमा! एगंमि केवलणाणे होज्जा।

भावार्थ-३७ प्रश्न-हे भगवन्! स्नातक में ज्ञान कितने होते है?
३७ उत्तर-हे गौतम! स्नातक में एक केवलज्ञान ही होता है।

## श्रुत द्वार

३८ प्रश्न-पुलाए णं भंते! केवइयं सुयं अहिज्जेज्जा?

३८ उत्तर-गोयमा! जहण्णेणं णवमस्स पुव्वस्स तइयं आयार-वत्थुं, उक्कोसेणं णव पुव्वाइं अहिज्जेज्जा।

भावार्थ-३८ प्रश्न-हे भगवन्! पुलाक श्रुत कितना पढ़ते है?
३८ उत्तर-हे गौतम! पुलाक जघन्य नौवें पूर्व की तीसरी आचार वस्तु तक और उत्कृष्ट सम्पूर्ण नौ पूर्व पढ़ते है।

३९ प्रश्न-बउसे-पुच्छा।

३९ उत्तर-गोयमा! जहण्णेणं अट्ठ पवयणमायाओ, उक्कोसेणं दस पुव्वाइं अहिज्जेज्जा। एवं पडिसेवणाकुसीले वि।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ–३९ प्रश्न–हे भगवन् ! बकुश श्रुत कितना पढ़ते हैं ?

३९ उत्तर–हे गौतम ! जघन्य आठ प्रवचन-माता और उत्कृष्ट दस पूर्व तक पढ़ते हैं । इसी प्रकार प्रतिसेवना-कुशील भी ।

४० प्रश्न–कसायकुसीले-पुच्छा ।

४० उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं अट्ठ पवयणमायाओ, उक्कोसेणं चोद्दस पुव्वाइं अहिज्जेज्जा । एवं णियंठे वि ।

भावार्थ–४० प्रश्न–हे भगवन् ! कषाय-कुशील श्रुत कितना पढ़ते हैं ?

४० उत्तर–हे गौतम ! जघन्य आठ प्रवचन-माता और उत्कृष्ट चौदह पूर्व पर्यन्त पढ़ते हैं । इसी प्रकार निर्ग्रंथ भी ।

४१ प्रश्न-सिणाए-पुच्छा ।

४१ उत्तर-गोयमा ! सुयवइरित्ते होज्जा ७ ।

भावार्थ–४१ प्रश्न–हे भगवन् ! स्नातक श्रुत कितना पढ़ते हैं ?

४१ उत्तर–हे गौतम ! स्नातक श्रुतव्यतिरिक्त होते हैं ।

विवेचन–पाँच समिति और तीन गुप्ति–ये 'आठ प्रवचन–माता' कहलाते हैं । इनका पालन करना चारित्र रूप है । इसलिए चारित्र का पालन करने वाले को कम से कम आठ प्रवचन-माता का ज्ञान होना आवश्यक है, क्योंकि ज्ञानपूर्वक ही चारित्र होता है । बकुश को जघन्य ज्ञान इतना होता है और उत्कृष्ट दस पूर्व का ज्ञान होता है ।

## तीर्थ द्वार

४२ प्रश्न-पुलाए णं भंते ! किं तित्थे होज्जा, अतित्थे होज्जा ?

४२ उत्तर-गोयमा ! तित्थे होज्जा, णो अतित्थे होज्जा । एवं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बउसे वि, एवं पडिसेवणाकुसीले वि ।

भावार्थ-४२ प्रश्न-हे भगवन् ! पुलाक, तीर्थ में होते हैं या अतीर्थ में ?

४२ उत्तर-हे गौतम ! तीर्थ में होते हैं, अतीर्थ में नहीं होते । इसी प्रकार बकुश और प्रतिसेवना कुशील भी ।

४३ प्रश्न-कसायकुसीले-पुच्छा ।

४३ उत्तर-गोयमा ! तित्थे वा होज्जा, अतित्थे वा होज्जा ।

भावार्थ-४३ प्रश्न-हे भगवन् ! कषाय-कुशील, तीर्थ में होते हैं या अतीर्थ में ?

४३ उत्तर-हे गौतम ! तीर्थ में भी होते हैं और अतीर्थ में भी ।

४४ प्रश्न-जइ अतित्थे होज्जा किं तित्थयरे होज्जा, पत्तेयबुद्धे होज्जा ?

४४ उत्तर-गोयमा ! तित्थयरे वा होज्जा, पत्तेयबुद्धे वा होज्जा । एवं णियंठे वि, एवं सिणाए वि ८ ।

भावार्थ-४४ प्रश्न-हे भगवन् ! यदि वे अतीर्थ में होते हैं, तो क्या तीर्थंकर होते हैं या प्रत्येक-बुद्ध ?

४४ उत्तर-हे गौतम ! वे तीर्थंकर या प्रत्येक-बुद्ध होते हैं । इसी प्रकार निर्ग्रंथ और स्नातक भी ।

विवेचन--छद्मस्थ अवस्था में तीर्थंकर कषाय-कुशील होते हैं, इस अपेक्षा से यह कहा गया है कि कषाय-कुशील अतीर्थ में भी होते हैं, अथवा तीर्थ का विच्छेद हो जाने पर दूसरे साधु भी कषाय-कुशील होते हैं । इस अपेक्षा से यह समझना चाहिये कि कषाय-कुशील अतीर्थ में भी होते हैं ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

## लिंग द्वार

४५ प्रश्न–पुलाए णं भंते ! किं सलिंगे होज्जा, अण्णलिंगे होज्जा, गिहिलिंगे होज्जा ?

४५ उत्तर–गोयमा ! दव्वलिंगं पडुच्च सलिंगे वा होज्जा, अण्णलिंगे वा होज्जा, गिहिलिंगे वा होज्जा, भावलिंगं पडुच्च णियमा सलिंगे होज्जा, एवं जाव सिणाए ९ ।

भावार्थ–४५ प्रश्न–हे भगवन् ! पुलाक, स्वलिंग में, अन्यलिंग में या गृहस्थलिंग में होते हैं ?

४५ उत्तर–हे गौतम ! द्रव्यलिंग की अपेक्षा स्वलिंग, अन्यलिंग में या गृहस्थलिंग में होते हैं, किंतु भाव लिंग की अपेक्षा नियम से स्वलिंग में ही होते हैं । इसी प्रकार यावत् स्नातक पर्यन्त ।

विवेचन–लिंग के दो भेद हैं–द्रव्यलिंग और भावलिंग । सम्यग्ज्ञान-दर्शन-चारित्र भावलिंग है । यह भावलिंग केवलिप्ररूपित धर्म का पालन करने वालों में ही होता है । अतः यह स्वलिंग कहलाता है । द्रव्यलिंग के दो भेद हैं–स्वलिंग और अन्यलिंग (पर लिंग)। हाथ में रजोहरण रखना, मुख पर मुखवस्त्रिका बांधना, इत्यादि द्रव्य से स्वलिंग हैं । परलिंग के दो भेद हैं–कुतीर्थिक लिंग और गृहस्थलिंग । पुलाक में तीनों प्रकार के द्रव्यलिंग पाये जा सकते हैं, क्योंकि चारित्र का परिणाम किसी एक ही द्रव्यलिंग की अपेक्षा नहीं रखता ।

## शरीर द्वार

४६ प्रश्न–पुलाए णं भंते ! कइसु सरीरेसु होज्जा ?

४६ उत्तर–गोयमा ! तिसु ओरालिय-तेया-कम्मएसु होज्जा ।

भावार्थ–४६ प्रश्न–हे भगवन् ! पुलाक कितने शरीर में होते हैं ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

४६ उत्तर-हे गौतम ! औदारिक, तेजस् और कार्मण, इन तीन शरीरों में होते हैं।

४७ प्रश्न-बउसे णं भंते !-पुच्छा।

४७ उत्तर-गोयमा ! तिसु वा चउसु वा होज्जा, तिसु होमाणे तिसु ओरालिय-तेया-कम्मएसु होज्जा, चउसु होमाणे चउसु ओरालिय-वेउव्विय-तेया-कम्मएसु होज्जा। एवं पडिसेवणाकुसीले वि।

भावार्थ-४७ प्रश्न-हे भगवन् ! बकुश कितने शरीरों में होते हैं ?

४७ उत्तर-हे गौतम ! बकुश तीन या चार शरीरों में होते हैं। जो तीन शरीर में होते हैं, तो औदारिक, तेजस् और कार्मण शरीर में होते हैं और चार शरीरों में होते हैं, तब औदारिक, वैक्रिय, तेजस् और कार्मण शरीरों में होते हैं। इसी प्रकार प्रतिसेवना-कुशील भी।

४८ प्रश्न-कसायकुसीले-पुच्छा।

४८ उत्तर-गोयमा ! तिसु वा चउसु वा पंचसु वा होज्जा। तिसु होमाणे तिसु ओरालिय-तेया-कम्मएसु होज्जा, चउसु होमाणे चउसु ओरालिय-वेउव्विय-तेया-कम्मएसु होज्जा, पंचसु होमाणे पंचसु ओरालिय-वेउव्विय-आहारग-तेया-कम्मएसु होज्जा। णियंठो सिणाओ य जहा पुलाओ।

भावार्थ-४८ प्रश्न-हे भगवन् ! कषाय-कुशील कितने शरीरों में होते है ?

४८ उत्तर-हे गौतम ! तीन, चार या पांच शरीरों में होते हैं। तीन शरीर में हों, तो औदारिक, तेजस् और कार्मण शरीरों में, चार शरीरों में हों,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तो औदारिक, वैक्रिय, तेजस् और कार्मण शरीरों में और पांच शरीरों में हों, तो औदारिक, वैक्रिय, आहारक, तेजस् और कार्मण शरीरों में होते हैं। निर्ग्रंथ और स्नातक के शरीर पुलाक के समान होते है।

## क्षेत्र द्वार

४९ प्रश्न-पुलाए णं भंते ! किं कम्मभूमीए होज्जा, अकम्मभूमीए होज्जा ?

४९ उत्तर-गोयमा ! जम्मण-संतिभावं पडुच्च कम्मभूमीए होज्जा, णो अकम्मभूमीए होज्जा।

कठिन शब्दार्थ-संतिभावं-सद्भाव-मौजूदगी।

भावार्थ-४९ प्रश्न-हे भगवन् ! पुलाक, कर्मभूमि में होते हैं या अकर्मभूमि में ?

४९ उत्तर-हे गौतम ! जन्म और सद्भाव की अपेक्षा कर्मभूमि में होते है, अकर्मभूमि में नहीं होते।

५० प्रश्न-बउसे णं-पुच्छा।

५० उत्तर-गोयमा ! जम्मण-संतिभावं पडुच्च कम्मभूमीए होज्जा, णो अकम्मभूमीए होज्जा, साहरणं पडुच्च कम्मभूमीए वा होज्जा, अकम्मभूमीए वा होज्जा। एवं जाव सिणाए।

कठिन शब्दार्थ-साहरणं-संहरण-देवादि द्वारा एक स्थान से उठा कर दूसरे स्थान पर ले जाया जाना।

भावार्थ-५० प्रश्न-हे भगवन् ! बकुश, कर्मभूमि में होते हैं या अकर्मभूमि में ?

५० उत्तर-हे गौतम ! जन्म और सद्भाव की अपेक्षा कर्मभूमि में

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

होते हैं, अकर्मभूमि में नहीं, किन्तु संहरण की अपेक्षा कर्मभूमि में भी होते हैं और अकर्मभूमि में भी। इसी प्रकार यावत् स्नातक पर्यन्त।

**विवेचन**—जहाँ असि, मषि और कृषि द्वारा जीविकोपार्जन की जाती हो तथा तप, संयम आदि आध्यात्मिक अनुष्ठान हों, उसे 'कर्मभूमि' कहते हैं। पाँच भरत, पाँच ऐरवत और पाँच महाविदेह—ये पन्द्रह क्षेत्र 'कर्मभूमि' हैं। जहाँ असि, मषि और कृषि आदि द्वारा आजीविका न की जाती हो तथा तप, संयम आदि आध्यात्मिक अनुष्ठान न हो, उसे 'अकर्मभूमि' कहते हैं। पाँच हैमवत, पाँच हैरण्यवत, पाँच हरिवर्ष, पाँच रम्यक्वर्ष, पाँच देव-कुरु और पाँच उत्तरकुरु—ये तीस क्षेत्र 'अकर्मभूमि' हैं। इनमें असि, मषि और कृषि का व्यापार नहीं होता। इन क्षेत्रों में दस प्रकार के कल्पवृक्ष होते हैं। इन्हीं से वहाँ के मनुष्य अपना निर्वाह करते हैं। कर्म न करने से और कल्पवृक्षों द्वारा भोग प्राप्त होने से इन क्षेत्रों को 'भोगभूमि' भी कहते है। यहाँ के मनुष्य को 'भोगभूमिज' कहते हैं। यहाँ के स्त्री-पुरुष जोड़े से जन्म लेते हैं, इसलिये इन्हें 'युगलिक' कहते हैं।

जन्म (उत्पत्ति) और सद्भाव (चारित्र भाव का अस्तित्व) की अपेक्षा पुलाक कर्मभूमि में होते हैं अर्थात् पुलाक का जन्म कर्मभूमि में ही होता है और संयम अंगीकार कर वह वहीं विचरता है। वह अकर्मभूमि में उत्पन्न नहीं होता, क्योंकि वहाँ उत्पन्न हुए मनुष्य को चारित्र (संयम) की प्राप्ति नहीं होती। अतएव वहाँ उसका सद्भाव भी नहीं होता। संहरण की अपेक्षा भी वह अकर्मभूमि में नहीं होता, क्योंकि पुलाक लब्धि वाले का देव आदि कोई भी संहरण नहीं कर सकते।

## काल द्वार

**५१ प्रश्न—पुलाए णं भंते ! किं ओसप्पिणिकाले होज्जा, उस्सप्पिणिकाले होज्जा, णोओसप्पिणि-णोउस्सप्पिणिकाले वा होज्जा ?**

**५१ उत्तर—गोयमा ! ओसप्पिणिकाले वा होज्जा, उस्सप्पिणिकाले वा होज्जा, णोओसप्पिणी-णोउस्सप्पिणिकाले वा होज्जा।**

भावार्थ—५१ प्रश्न—हे भगवन् ! पुलाक, 'अवसर्पिणी काल' में होते हैं,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'उत्सर्पिणी काल' में होते हैं या 'नोअवसर्पिणी-नोउत्सर्पिणी काल' में होते हैं ?

५१ उत्तर-हे गौतम ! अवसर्पिणी काल में होते हैं, उत्सर्पिणी काल में भी होते हैं और नोअवसर्पिणी-नोउत्सर्पिणी काल में भी होते हैं।

५२ प्रश्न-जइ ओसप्पिणिकाले होज्जा किं १ सुसमसुसमाकाले होज्जा २ सुसमाकाले होज्जा ३ सुसमदूसमाकाले होज्जा ४ दूसम-सुसमाकाले होज्जा ५ दूसमाकाले होज्जा ६ दूसमदूसमाकाले होज्जा ?

५२ उत्तर-गोयमा ! जम्मणं पडुच्च १ णो सुसमसुसमाकाले होज्जा २ णो सुसमाकाले होज्जा ३ सुसमदूसमाकाले वा होज्जा ४ दूसमसुसमाकाले वा होज्जा ५ णो दूसमाकाले होज्जा ६ णो दूसम-दूसमाकाले होज्जा। संतिभावं पडुच्च णो सुसमसुसमाकाले होज्जा, णो सुसमाकाले होज्जा, सुसमदूसमाकाले वा होज्जा, दूसमसुसमाकाले वा होज्जा, दूसमाकाले वा होज्जा, णो दूसमदूसमाकाले होज्जा।

भावार्थ-५२ प्रश्न-हे भगवन् ! यदि पुलाक अवसर्पिणी काल में होते हैं, तो क्या 'सुषमसुषमा' काल में होते हैं, 'सुषमा' काल में होते हैं, 'सुषमदुषमा' काल में होते हैं, 'दुषमसुषमा' काल में होते हैं, 'दुषमाकाल' में होते हैं या 'दुषमदुषमा' काल में होते हैं ?

५२ उत्तर-हे गौतम ! जन्म की अपेक्षा सुषमसुषमा और सुषमा काल में नहीं होते, किन्तु सुषमदुषमा और दुषमसुषमा काल में होते हैं। दुषमा और दुषमदुषमा काल में नहीं होते। सद्भाव की अपेक्षा सुषमसुषमा, सुषमा और दुषमदुषमा काल में नहीं होते, किन्तु सुषमदुषमा, दुषमसुषमा और दुषमा काल में होते हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

५३ प्रश्न-जइ उस्सप्पिणिकाले होज्जा किं १ दूसमदूसमाकाले होज्जा २ दूसमाकाले होज्जा ३ दूसमसुसमाकाले होज्जा ४ सुसम-दूसमाकाले होज्जा ५ सुसमाकाले होज्जा ६ सुसमसुसमाकाले होज्जा ?

५३ उत्तर-गोयमा ! जम्मणं पडुच्च १ णो दूसमदूसमाकाले होज्जा २ दूसमाकाले वा होज्जा ३ दूसमसुसमाकाले वा होज्जा ४ सुसम-दूसमाकाले वा होज्जा ५ णो सुसमाकाले होज्जा ६ णो सुसमसुसमा-काले होज्जा। संतिभावं पडुच्च १ णो दूसमदूसमाकाले होज्जा २ णो दूसमाकाले होज्जा ३ दूसमसुसमाकाले वा होज्जा ४ सुसमदूसमाकाले वा होज्जा ५ णो सुसमाकाले होज्जा ६ णो सुसमसुसमाकाले होज्जा।

भावार्थ-५३ प्रश्न-हे भगवन् ! यदि पुलाक, उत्सर्पिणी काल में होते है, तो क्या दुषमदुषमा काल में, दुषमा काल में, दुषमसुषमा काल में, सुषम-दुषमा काल में, सुषमा काल में या सुषमसुषमा काल में होते हैं ?

५३ उत्तर-हे गौतम ! जन्म की अपेक्षा दुषमदुषमा काल में नहीं होते। दुषमा काल, दुषमसुषमा काल और सुषमदुषमा काल में होते हैं परन्तु सुषमा और सुषमसुषमा काल में नहीं होते। सद्भाव की अपेक्षा दुषमदुषमा काल और दुषमा काल में नहीं होते। दुषमसुषमा काल में, सुषमदुषमा काल में होते हैं, किन्तु सुषमा और सुषमसुषमा काल में नहीं होते।

५४ प्रश्न-जइ णोओसप्पिणि-णोउस्सप्पिणिकाले होज्जा किं सुसमसुसमापलिभागे होज्जा, सुसमापलिभागे होज्जा, सुसमदूसमा-पलिभागे होज्जा, दूसमसुसमापलिभागे होज्जा ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

५४ उत्तर-गोयमा ! जम्मणं-संतिभावं पडुच्च णो सुसमसुसमा-पलिभागे होज्जा, णो सुसमापलिभागे०, णो सुसमदूसमापलिभागे होज्जा, दूसमसुसमापलिभागे होज्जा ।

भावार्थ-५४ प्रश्न-हे भगवन् ! यदि पुलाक, नोअवसर्पिणी-नोउत्सर्पिणी में होते हैं, तो क्या सुषमसुषमा समान काल में या सुषमा समान काल में या सुषमदुषमा समान काल में या दुषमसुषमा समान काल में होते हैं ?

५४ उत्तर-हे गौतम ! जन्म और सद्भाव की अपेक्षा सुषमसुषमा समान काल में, सुषमा समान काल में और सुषमदुषमा समान काल में नहीं होते, परन्तु दुषमसुषमा समान काल में होते है ।

५५ प्रश्न-बउसे णं··पुच्छा ।

५५ उत्तर-गोयमा ! ओसप्पिणिकाले वा होज्जा, उस्सप्पिणि-काले वा होज्जा, णोओसप्पिणि-णोउस्सप्पिणिकाले वा होज्जा ।

भावार्थ-५५ प्रश्न-हे भगवन् ! बकुश, किस काल में होते हैं ?

५५ उत्तर-हे गौतम ! अवसर्पिणी काल में उत्सर्पिणी काल में, और नोअवसर्पिणी-नोउत्सर्पिणी काल में होते है ।

५६ प्रश्न-जइ ओसप्पिणिकाले होज्जा किं सुसमसुसमाकाले होज्जा-पुच्छा ।

५६ उत्तर-गोयमा ! जम्मणं-संतिभावं पडुच्च णो सुसमसुसमा-काले होज्जा, णो सुसमाकाले होज्जा, सुसमदूसमाकाले वा होज्जा, दूसमसुसमाकाले वा होज्जा, दूसमाकाले वा होज्जा, णो दूसमदूसमा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

काले होज्जा साहरणं पडुच्च अण्णयरे समाकाले होज्जा ।

भावार्थ-५६ प्रश्न-हे भगवन् ! बकुश, अवसर्पिणी काल में होते हैं, तो क्या सुषमसुषमा काल में होते हैं० ?

५६ उत्तर-हे गौतम ! जन्म और सद्भाव की अपेक्षा सुषमसुषमा काल में और सुषमा काल में नहीं होते । सुषमदुषमा काल में, दुषमसुषमा काल में और दुषमा काल में होते हैं, परन्तु दुषमदुषमा काल में नहीं होते । संहरण की अपेक्षा किसी भी काल में होते हैं ।

५७ प्रश्न-जइ उस्सप्पिणिकाले होज्जा किं दूसमदूसमाकाले होज्जा ६-पुच्छा ।

५७ उत्तर-गोयमा ! जम्मणं पडुच्च णो दूसमदूसमाकाले होज्जा जहेव पुलाए । संतिभावं पडुच्च णो दूसमदूसमाकाले होज्जा, णो दूसमाकाले होज्जा, एवं संतिभावेण वि जहा पुलाए जाव णो सुसम-सुसमाकाले होज्जा । साहरणं पडुच्च अण्णयरे समाकाले होज्जा ।

भावार्थ-५७ प्रश्न-हे भगवन् ! यदि बकुश, उत्सर्पिणी काल में होते हैं, तो क्या दुषमदुषमा काल में होते हैं० ?

५७ उत्तर-हे गौतम ! जन्म की अपेक्षा दुषमदुषमा काल में नहीं होते इत्यादि पुलाक के समान । सद्भाव की अपेक्षा दुषमदुषमा काल में और दुषमा काल में नहीं होते, इत्यादि पुलाक के समान यावत् सुषमसुषमा काल में नहीं होते । संहरण की अपेक्षा किसी भी काल में होते हैं ।

५८ प्रश्न-जइ णोओस्सप्पिणि-णोउस्सप्पिणिकाले होज्जा-पुच्छा ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

५८ उत्तर-गोयमा ! जम्मणं-संतिभावं पडुच्च णो सुसमसुसमा-पलिभागे होज्जा जहेव पुलाए जाव दूसमसुसमापलिभागे होज्जा । साहरणं पडुच्च अण्णयरे पलिभागे होज्जा, जहा बउसे । एवं पडि-सेवणाकुसीले वि, एवं कसायकुसीले वि । णियंठो सिणाओ य जहा पुलाओ । णवरं एएसिं अब्भहियं साहरणं भाणियव्वं, सेसं तं चेव १२ ।

कठिन शब्दार्थ—अब्भहियं—अत्यधिक—अधिक ।

भावार्थ-५८ प्रश्न-हे भगवन् ! यदि बकुश, नोअवसर्पिणी-नोउत्सर्पिणी काल में होते हैं, तो किस काल में होते हैं० ?

५८ उत्तर-हे गौतम ! जन्म और सद्भाव की अपेक्षा सुषमसुषमा समान काल में नहीं होते, इत्यादि सभी पुलाक के समान यावत् दुषमसुषमा समान काल में होते हैं । संहरण की अपेक्षा किसी भी काल में होते हैं । बकुश के समान प्रतिसेवना-कुशील और कषाय-कुशील भी । निर्ग्रंथ और स्नातक का कथन पुलाक के समान है, किन्तु इनका संहरण अधिक कहना चाहिये अर्थात् संहरण की अपेक्षा सर्वकाल में होते हैं, शेष पूर्ववत् ।

विवेचन—काल तीन प्रकार का कहा है। अवसर्पिणी काल, उत्सर्पिणी काल और नोअवसर्पिणी-नोउत्सर्पिणी काल । जिस काल में जीवों की आयु, बल, शरीर आदि भाव उत्तरोत्तर घटते जायँ, वह 'अवसर्पिणी काल' है । यह दस कोड़ाकोड़ी सागरोपम का होता है । जिस काल में जीवों की आयु, बल, शरीर आदि भावों की उत्तरोत्तर वृद्धि होती जाय, वह 'उत्सर्पिणी काल' है । यह भी दस कोड़ाकोड़ी सागरोपम का होता है । पाँच भरत और पाँच ऐरवत—इन दस क्षेत्रों में यह दो प्रकार का काल होता है । जिस काल में भावों की हानि-वृद्धि न हो और सदा एक से परिणाम रहते हों, उस काल को 'नोअवसर्पिणी-नोउत्सर्पिणी काल' कहते हैं । यह काल पाँच महाविदेह में और हैमवत आदि युगलिक क्षेत्रों में होता है ।

अवसर्पिणी काल के छह आरे हैं । यथा-१ सुषमसुषमा, २ सुषमा, ३ सुषमदुषमा,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

४ दुषमसुषमा ५ दुषमा और ६ दुषमदुषमा। उत्सर्पिणी काल के भी उलटे क्रम से ये ही छह आरे होते हैं। यथा-१ दुषमदुषमा २ दुषमा ३ दुषमसुषमा ४ सुषमदुषमा ५ सुषमा और ६ सुषमसुषमा।

पुलाक, जन्म की अपेक्षा अवसर्पिणी काल के तीसरे और चौथे आरे में होता है तथा सद्भाव की अपेक्षा तीसरे, चौथे और पाँचवें आरे में होता है। इनमें से जो चौथे आरे में जन्मा हुआ है, उसका सद्भाव पाँचवें आरे में भी होता है। तीसरे और चौथे आरे में जन्म और सद्भाव दोनों होते हैं। उत्सर्पिणी काल में जन्म की अपेक्षा दूसरे, तीसरे और चौथे आरे में होता है अर्थात् दूसरे आरे के अन्त में जन्म होता है और तीसरे आरे में वह चारित्र को स्वीकार करता है। तीसरे और चौथे आरे में जन्म और सद्भाव (चारित्र परिणाम) दोनों होते हैं अर्थात् सद्भाव की अपेक्षा तीसरे और चौथे आरे में ही होता है, क्योंकि इन्ही आरों में चारित्र की प्रतिपत्ति (स्वीकार) होती है। देवकुरु और उत्तरकुरु में सुषमसुषमा के समान काल होता है। हरिवर्ष और रम्यक्वर्ष क्षेत्रों में सुषमा के समान काल होता है। हैमवत और ऐरण्यवत क्षेत्रों में सुषमदुषमा के समान काल होता है और महाविदेह क्षेत्र में दुषमसुषमा के समान काल होता है।

पुलाक का संहरण नहीं होता, किन्तु निर्ग्रंथ और स्नातक का संहरण होता है। इसलिये संहरण की अपेक्षा निर्ग्रंथ और स्नातक का सद्भाव सर्वकाल में होता है। तात्पर्य यह है कि पहले संहरण किये हुए मनुष्य को निर्ग्रंथ और स्नातकपने की प्राप्ति होती है, यह समझना चाहिये। क्योंकि निर्ग्रंथ और स्नातक वेद रहित होते हैं और वेद रहित मुनियों का संहरण नहीं होता। जैसा कि कहा है-

'समणीमवगयवेयं परिहार-पुलाय-मप्पमत्तं च।
चोद्दसपुव्वि आहारयं च, ण य कोइ संहरइ॥'

अर्थात्-श्रमणी (साध्वी) अपगतवेद (वेद रहित), परिहारविशुद्धि चारित्रवान्, पुलाक, अप्रमत्त संयत (सातवें आदि गुणस्थानवर्ती) चौदह पूर्वधर और आहारक लब्धिमान्, इनका संहरण नहीं होता।

## गति द्वार

**५९ प्रश्न-पुलाए णं भंते ! कालगए समाणे किं (कं) गइं गच्छइ ?**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

५९ उत्तर-गोयमा ! देवगइं गच्छइ ।

प्रश्न-देवगइं गच्छमाणे किं भवणवासीसु उववज्जेज्जा, वाणमंतरेसु उववज्जेज्जा, जोइसि०, वेमाणिएसु उववज्जेज्जा ?

उत्तर-गोयमा ! णो भवणवासीसु, णो वाण०, णो जोइ०, वेमाणिएसु उववज्जेज्जा । वेमाणिएसु उववज्जमाणे जहण्णेणं सोहम्मे कप्पे, उक्कोसेणं सहस्सारे कप्पे उववज्जेज्जा । बउसे णं एवं चेव । णवरं उक्कोसेणं अच्चुए कप्पे । पडिसेवणाकुसीले जहा बउसे । कसायकुसीले जहा पुलाए । णवरं उक्कोसेणं अणुत्तरविमाणेसु उववज्जेज्जा ।

भावार्थ-५९ प्रश्न-हे भगवन् ! पुलाक मर कर किस गति में जाते हैं ?

५९ उत्तर-हे गौतम ! देवगति में जाते हैं ।

प्रश्न-हे भगवन् ! यदि देवगति में जाते हैं, तो क्या भवनपति में उत्पन्न होते हैं, वाणव्यन्तर में, ज्योतिषी में या वैमानिक में ?

उत्तर-हे गौतम ! भवनपति, वाणव्यन्तर और ज्योतिषियों में उत्पन्न नहीं होते, किन्तु वैमानिक देवों में उत्पन्न होते हैं । वैमानिक देवों में उत्पन्न होते हुए जघन्य सौधर्म देवलोक में और उत्कृष्ट सहस्रार देवलोक में उत्पन्न होते हैं । इसी प्रकार बकुश भी, किन्तु वह उत्कृष्ट अच्युत देवलोक में उत्पन्न होते हैं । प्रतिसेवना-कुशील, बकुश के समान है । कषाय-कुशील, पुलाक के समान है, किन्तु उत्कृष्ट अनुत्तर विमान में उत्पन्न होते हैं ।

६० प्रश्न-णियंठे णं भंते ! ० ?

६० उत्तर-एवं चेव जाव वेमाणिएसु उववज्जमाणे अजहण्ण-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मणुक्कोसेणं अणुत्तरविमाणेसु उववज्जेज्जा ।

भावार्थ–६० प्रश्न–हे भगवन् ! निर्ग्रंथ मर कर किस गति में जाते हैं ?

६० उत्तर–हे गौतम ! पूर्ववत्, यावत् वैमानिक में उत्पन्न होते हुए अजघन्यानुत्कृष्ट अनुत्तर विमान में उत्पन्न होते हैं ।

६१ प्रश्न–सिणाए णं भंते ! कालगए समाणे किं (कं) गइं गच्छइ ?

६१ उत्तर–गोयमा ! सिद्धिगइं गच्छइ ।

भावार्थ–६१ प्रश्न–हे भगवन् ! स्नातक मर कर किस गति में जाते हैं ?

६१ उत्तर–हे गौतम ! सिद्ध गति में ही जाते हैं ।

६२ प्रश्न–पुलाए णं भंते ! देवेसु उववज्जमाणे किं इंदत्ताए उववज्जेज्जा, सामाणियत्ताए उववज्जेज्जा, तायत्तीसगत्ताए उववज्जेज्जा, लोगपालत्ताए उववज्जेज्जा, अहमिंदत्ताए वा उववज्जेज्जा ?

६२ उत्तर–गोयमा ! अविराहणं पडुच्च इंदत्ताए उववज्जेज्जा, सामाणियत्ताए उववज्जेज्जा, तायत्तीसगत्ताए उववज्जेज्जा, लोगपालत्ताए उववज्जेज्जा, णो अहमिंदत्ताए उववज्जेज्जा । विराहणं पडुच्च अण्णयरेसु उववज्जेज्जा । एवं बउसे वि, एवं पडिसेवणाकुसीले वि ।

कठिन शब्दार्थ–तायत्तीसगत्ताए–त्रायस्त्रिंशकपन से, अहमिंदत्ताए–अहमिन्द्रपन से ।

भावार्थ–६२ प्रश्न–हे भगवन् ! पुलाक, देवों में उत्पन्न होते हुए, क्या इन्द्रपने, सामानिकदेव, त्रायस्त्रिंशक, लोकपाल या अहमिन्द्रपने उत्पन्न होते हैं ?

६२ उत्तर–हे गौतम ! अविराधना की अपेक्षा इन्द्र, सामानिकदेव, त्रायस्त्रिंशकदेव और लोकपालपने उत्पन्न होते हैं, किन्तु अहमिन्द्र नहीं होते ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विराधना की अपेक्षा अन्यतर देवलोक में अर्थात् भवनपति आदि में उत्पन्न होते हैं। इसी प्रकार बकुश और प्रतिसेवना-कुशील भी।

६३ प्रश्न-कसायकुसीले-पुच्छा।

६३ उत्तर-गोयमा! अविराहणं पडुच्च इंदत्ताए वा उववज्जेज्जा जाव अहमिंदत्ताए वा उववज्जेज्जा, विराहणं पडुच्च अण्णयरेसु उववज्जेज्जा।

भावार्थ-६३ प्रश्न-हे भगवन्! कषाय-कुशील इन्द्रपने उत्पन्न होते हैं०?

६३ उत्तर-हे गौतम! अविराधना की अपेक्षा इन्द्रपने यावत् अहमिन्द्रपने उत्पन्न होते हैं और विराधना की अपेक्षा वह अन्यतर (भवनपति आदि) देवों में उत्पन्न होते हैं।

६४ प्रश्न-णियंठे-पुच्छा।

६४ उत्तर-गोयमा! अविराहणं पडुच्च णो इंदत्ताए उववज्जेज्जा जाव णो लोगपालत्ताए उववज्जेज्जा, अहमिंदत्ताए उववज्जेज्जा। विराहणं पडुच्च अण्णयरेसु उववज्जेज्जा।

भावार्थ-६४ प्रश्न-हे भगवन्! निर्ग्रंथ इन्द्रपने उत्पन्न होते हैं०?

६४ उत्तर-हे गौतम! अविराधना की अपेक्षा इन्द्रपने यावत् लोकपालपने उत्पन्न नहीं होते, किन्तु अहमिन्द्रपने उत्पन्न होते हैं। विराधना की अपेक्षा भवनपति आदि में उत्पन्न होते हैं।

६५ प्रश्न-पुलायस्स णं भंते! देवलोगेसु उववज्जमाणस्स

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

केवइयं कालं ठिई पण्णत्ता ?

६५ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं पलिओवमपुहुत्तं, उक्कोसेणं अट्ठारस सागरोवमाइं ।

भावार्थ-६५ प्रश्न-हे भगवन् ! देवलोक में उत्पन्न होते हुए पुलाक, कितने काल की स्थिति में उत्पन्न होते हैं ?

६५ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य पल्योपम-पृथक्त्व और उत्कृष्ट अठारह सागरोपम की स्थिति में उत्पन्न होते हैं ।

६६ प्रश्न-बउसस्स-पुच्छा ।

६६ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं पलिओवमपुहुत्तं, उक्कोसेणं बावीसं सागरोवमाइं । एवं पडिसेवणाकुसीले वि ।

भावार्थ-६६ प्रश्न-हे भगवन् ! देवलोक में उत्पन्न होते हुए बकुश, कितने काल की स्थिति में उत्पन्न होते हैं ?

६६ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य पल्योपम-पृथक्त्व और उत्कृष्ट बाईस सागरोपम की स्थिति में उत्पन्न होते हैं । इसी प्रकार प्रतिसेवना-कुशील भी ।

६७ प्रश्न-कसायकुसीलस्स-पुच्छा ।

६७ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं पलिओवमपुहुत्तं उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं ।

भावार्थ-६७ प्रश्न-हे भगवन् ! देवलोक में उत्पन्न होते हुए कषाय-कुशील, कितनी स्थिति में उत्पन्न होते हैं ?

६७ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य पल्योपम-पृथक्त्व और उत्कृष्ट तेतीस

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सागरोपम की स्थिति में उत्पन्न होते हैं।

६८ प्रश्न-णियंठस्स-पुच्छा।

६८ उत्तर-गोयमा! अजहण्णमणुक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं १३।

भावार्थ-६८ प्रश्न-हे भगवन्! देवलोक में उत्पन्न होते हुए निर्ग्रंथ, कितने काल की स्थिति में उत्पन्न होते हैं?

६८ उत्तर-हे गौतम! अजघन्यानुत्कृष्ट तेतीस सागरोपम की स्थिति में उत्पन्न होते हैं।

विवेचन-पुलाक के विषय में इन्द्र, लोकपाल आदि देव पदवी विषयक प्रश्न का जो उत्तर दिया है, वह ज्ञानादि की अविराधना और लब्धि का प्रयोग न करने वाले पुलाक की अपेक्षा समझना चाहिये। वहीं इन्द्रादि रूप से उत्पन्न होता है। विराधना कर के तो भवनपति आदि देवों में उत्पन्न होता है। पहले देवोत्पत्ति के प्रश्न के उत्तर में जो पुलाक का मात्र वैमानिकों में ही उपपात कहा है, वह अविराधक पुलाक की अपेक्षा समझना चाहिये। क्योंकि संयम आदि की विराधना करने वालों का उपपात तो भवनपति आदि में ही होता है।

यहां पुलाक आदि पांच का जो देवों में उपपात बताया है, वह देवलोक विषयक प्रश्न होने से देवों मे उत्पन्न होने का बताया है, अन्यथा विराधक तो पुलाक आदि चारों ही गतियों में उत्पन्न हो सकते हैं।

स्नातक की तो केवल सिद्ध गति है। इसीलिये उसके विषय में इन्द्रादिरूप पदवी का और स्थिति का प्रश्न नहीं किया है, क्योंकि सिद्धगति में इन्द्रादि पदवियां नहीं होती और वहां की स्थिति एक जीव की 'सादि अनन्त' होती है।

## संयम-स्थान

९९ प्रश्न-पुलागस्स णं भंते! केवइया संजमट्ठाणा पण्णत्ता?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

६९ उत्तर–गोयमा ! असंखेज्जा संजमट्ठाणा पण्णत्ता। एवं जाव कसायकुसीलस्स।

भावार्थ–६९ प्रश्न–हे भगवन् ! पुलाक के संयम-स्थान कितने कहे हैं ?

६९ उत्तर–हे गौतम ! पुलाक के संयम-स्थान असंख्य कहे है। इसी प्रकार यावत् कषाय-कुशील पर्यन्त।

७० प्रश्न–णियंठस्स णं भंते ! केवइया संजमट्ठाणा पण्णत्ता ?

७० उत्तर–गोयमा ! एगे अजहण्णमणुक्कोसए संजमट्ठाणे, एवं सिणायस्स वि।

भावार्थ–७० प्रश्न–हे भगवन् ! निर्ग्रंथ के संयम-स्थान कितने कहे हैं ?

७० उत्तर–हे गौतम ! एक ही अजघन्यानुत्कृष्ट संयम-स्थान कहा है। इसी प्रकार स्नातक के भी।

७१ प्रश्न–एएसि णं भंते ! पुलाग-बउस-पडिसेवणा-कसाय-कुसील-णियंठ-सिणायाणं संजमट्ठाणाणं कयरे कयरे० जाव विसेसाहिया वा ?

७१ उत्तर–गोयमा ! सव्वत्थोवे णियंठस्स सिणायस्स य एगे अजहण्णमणुक्कोसए संजमट्ठाणे, पुलागस्स णं संजमट्ठाणा असंखेज्जगुणा, बउसस्स संजमट्ठाणा असंखेज्जगुणा, पडिसेवणाकुसीलस्स संजमट्ठाणा असंखेज्जगुणा, कसायकुसीलस्स संजमट्ठाणा असंखेज्जगुणा १४।

भावार्थ–७१ प्रश्न–हे भगवन् ! पुलाक, बकुश, प्रतिसेवना-कुशील,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कषाय-कुशील, निर्ग्रंथ और स्नातक के संयम-स्थानों में, किस के संयम-स्थान, किस के संयमस्थानों से अल्प यावत् विशेषाधिक हैं ?

७१ उत्तर-हे गौतम ! निर्ग्रंथ और स्नातक का संयम-स्थान, अजघन्यानुत्कृष्ट एक ही है और सब से अल्प है, उससे पुलाक के संयम-स्थान असंख्य गुण हैं, उनसे बकुश के संयम-स्थान असंख्य गुण हैं, उनसे प्रतिसेवना-कुशील के संयम-स्थान असंख्य गुण हैं, उनसे कषाय-कुशील के संयम-स्थान असंख्य गुण हैं।

विवेचन-संयम अर्थात् चारित्र, उसके स्थान अर्थात् शुद्धि की प्रकर्षता और अप्रकर्षताकृत भेद-'संयम-स्थान' कहलाता है। वे असंख्य होते हैं। उनमें प्रत्येक संयम-स्थान के सर्व आकाश-प्रदेशों को सर्व आकाश-प्रदेशों से गुणा करने पर जितने अनन्तानन्त पर्याय (अंश) होते हैं, उतने एक संयम-स्थान के पर्याय होते हैं, ऐसे संयम-स्थान पुलाक के असंख्य होते हैं, क्योंकि चारित्र-मोहनीय का क्षयोपशम विचित्र होता है। इसी प्रकार यावत् कषाय-कुशील तक जानना चाहिये। निर्ग्रंथ का संयम-स्थान तो एक ही होता है, क्योंकि कषाय का क्षय या उपशम एक ही प्रकार का होता है। अतः उसकी शुद्धि भी एक ही प्रकार की होती है। एक होने के कारण ही उसका संयम-स्थान अजघन्यानुत्कृष्ट होता है, क्योंकि जघन्य और उत्कृष्टता का सद्भाव बहुत में ही होता है। इसी प्रकार स्नातक का संयम-स्थान भी एक ही होता है। अतएव संयम-स्थानों के अल्प-बहुत्व में कहा है कि निर्ग्रंथ और स्नातक का संयम-स्थान एक ही होने के कारण सब से अल्प है। पुलाक आदि के संयम-स्थान उक्त क्रम के अनुसार क्षयोपशम की विचित्रता के कारण असंख्य-असंख्य गुण होते हैं।

## सन्निकर्ष द्वार

**७२ प्रश्न-पुलागस्स णं भंते ! केवइया चरित्तपज्जवा पण्णत्ता ?**

**७२ उत्तर-गोयमा ! अणंता चरित्तपज्जवा पण्णत्ता, एवं जाव सिणायस्स।**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ-७२ प्रश्न-हे भगवन् ! पुलाक के चारित्र-पर्याय कितने होते हैं ?

७२ उत्तर-हे गौतम ! पुलाक के चारित्र-पर्याय अनन्त होते हैं । इसी प्रकार यावत् स्नातक पर्यन्त ।

७३ प्रश्न-पुलाए णं भंते ! पुलागस्स सट्ठाणसण्णिगासेणं चरित्तपज्जवेहिं किं हीणे, तुल्ले, अब्भहिए ?

७३ उत्तर-गोयमा ! १ सिय हीणे २ सिय तुल्ले ३ सिय अब्भहिए ३ । जइ हीणे अणंतभागहीणे वा, असंखेज्जइभागहीणे वा, संखेज्जइभागहीणे वा, संखेज्जगुणहीणे वा, असंखेज्जगुणहीणे वा, अणंतगुणहीणे वा । अह अब्भहिए अणंतभागमब्भहिए वा, असंखेज्जइभागमब्भहिए वा, संखेज्जइभागमब्भहिए वा, संखेज्जगुणमब्भहिए वा, असंखेज्जगुणमब्भहिए वा, अणंतगुणमब्भहिए वा ।

कठिन शब्दार्थ--सट्ठाणसण्णिगासेणं--स्वस्थानसन्निकर्ष-सजातीय चारित्र-पर्यायों का सन्निकर्ष--परस्पर संयोजन ।

भावार्थ-७३ प्रश्न-हे भगवन् ! एक पुलाक, दूसरे पुलाक के स्वस्थान सन्निकर्ष से चारित्र-पर्यायों से हीन है, तुल्य है, या अधिक है ?

७३ उत्तर-हे गौतम ! कदाचित् हीन होता है, कदाचित् तुल्य और कदाचित् अधिक होता है। यदि हीन होता है, तो अनन्त भाग हीन, असंख्य भाग हीन, संख्यात भाग हीन, संख्यात गुण हीन, असंख्यात गुण हीन, या अनन्त गुण हीन होता है । यदि अधिक होता है, तो अनन्त भाग अधिक, असंख्यात भाग अधिक, संख्यात भाग अधिक, संख्यात गुण अधिक, असंख्यात गुण अधिक, या अनन्त गुण अधिक होता है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

७४ प्रश्न-पुलाए णं भंते ! बउसस्स परट्ठाणसण्णिगासेणं चरित्त-पज्जवेहिं किं हीणे, तुल्ले, अब्भहिए ?

७४ उत्तर-गोयमा ! हीणे, णो तुल्ले, णो अब्भहिए, अणंत-गुणहीणे। एवं पडिसेवणाकुसीलस्स वि। कसायकुसीलेणं समं छट्ठाण-वडिए जहेव सट्ठाणे। णियंठस्स जहा बउसस्स, एवं सिणायस्स वि।

भावार्थ-७४ प्रश्न-हे भगवन् ! पुलाक अपने चारित्र-पर्यायों से, बकुश के परस्थान-सन्निकर्ष (विजातीय चारित्र-पर्याय) की अपेक्षा हीन है, तुल्य है या अधिक है ?

७४ उत्तर-हे गौतम ! हीन होते हैं, तुल्य या अधिक नहीं होते। अनन्त गुण हीन होते हैं। इसी प्रकार प्रतिसेवना-कुशील से भी जानना चाहिये। कषाय-कुशील से पुलाक के स्वस्थान के समान छह स्थान पतित कहना चाहिये। बकुश के समान निर्ग्रंथ और स्नातक से भी कथन करना चाहिये।

७५ प्रश्न-बउसे णं भंते ! पुलागस्स परट्ठाणसण्णिगासेणं चरित्तपज्जवेहिं किं हीणे, तुल्ले, अब्भहिए ?

७५ उत्तर-गोयमा ! णो हीणे, णो तुल्ले, अब्भहिए, अणंत-गुणमब्भहिए।

भावार्थ-७५ प्रश्न-हे भगवन् ! बकुश, पुलाक के परस्थान सन्निकर्ष से चारित्रपर्याय की अपेक्षा हीन है, तुल्य है या अधिक है ?

७५ उत्तर-हे गौतम ! हीन नहीं और तुल्य भी नहीं, किन्तु अधिक है, अनन्त गुण अधिक है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

७६ प्रश्न-बउसे णं भंते ! बउसस्स सट्ठाणसण्णिगासेणं चरित्त-पज्जवेहिं-पुच्छा ।

७६ उत्तर-गोयमा ! सिय हीणे, सिय तुल्ले, सिय अब्भहिए । जइ हीणे छट्ठाणवडिए ।

भावार्थ-७६ प्रश्न-हे भगवन् ! एक बकुश, दूसरे बकुश के स्वस्थान सन्निकर्ष (सजातीय-पर्यायों) से हीन है, तुल्य है या अधिक है ?

७६ उत्तर-हे गौतम ! कदाचित् हीन, कदाचित् तुल्य और कदाचित् अधिक होता है । यदि हीन होता है, तो (यावत्) छह स्थान पतित होता है ।

७७ प्रश्न-बउसे णं भंते ! पडिसेवणाकुसीलस्स परट्ठाणसण्णि-गासेणं चरित्तपज्जवेहिं किं हीणे० ?

७७ उत्तर-छट्ठाणवडिए, एवं कसायकुसीलस्स वि ।

भावार्थ-७७ प्रश्न-हे भगवन् ! बकुश, प्रतिसेवना कुशील के परस्थान सन्निकर्ष से चारित्र-पर्यायों से हीन, तुल्य या अधिक है ?

७७ उत्तर-हे गौतम ! छह स्थान पतित होते हैं । इसी प्रकार कषाय-कुशील की अपेक्षा भी जानना चाहिये ।

७८ प्रश्न-बउसे णं भंते ! णियंठस्स परट्ठाणसण्णिगासेणं चरित्तपज्जवेहिं-पुच्छा ।

७८ उत्तर-गोयमा ! हीणे, णो तुल्ले, णो अब्भहिए, अणंतगुण-हीणे, एवं सिणायस्स वि । पडिसेवणाकुसीलस्स एवं चेव बउसवत्तव्वया

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भाणियव्वा । कसायकुसीलस्स एस चेव बउसवत्तव्वया । णवरं पुलाएण वि समं छट्ठाणवडिए ।

भावार्थ-७८ प्रश्न-हे भगवन् ! बकुश, निर्ग्रंथ के परस्थान सन्निकर्ष से चारित्रपर्यायों से हीन, तुल्य या अधिक होते हैं ?

७८ उत्तर-हे गौतम ! हीन होते हैं, तुल्य और अधिक नहीं होते । अनन्त गुण हीन होते हैं । इसी प्रकार स्नातक की अपेक्षा भी जानना चाहिये । प्रतिसेवना-कुशील के लिये भी इसी प्रकार, बकुश की वक्तव्यता कहनी चाहिये । कषाय-कुशील के लिये भी यही बकुश की वक्तव्यता जाननी चाहिये, किन्तु पुलाक की अपेक्षा छह स्थान पतित कहना चाहिये ।

७९ प्रश्न-णियंठे णं भंते ! पुलागस्स परट्ठाणसण्णिगासेणं चरित्तपज्जवेहिं-पुच्छा ।

७९ उत्तर-गोयमा ! णो हीणे, णो तुल्ले, अब्भहिए, अणंतगुणमब्भहिए, एवं जाव कसायकुसीलस्स ।

भावार्थ-७९ प्रश्न-हे भगवन् ! निर्ग्रंथ, पुलाक के परस्थान सन्निकर्ष से चारित्रपर्यायों से हीन, तुल्य या अधिक होते हैं ?

७९ उत्तर-हे गौतम ! हीन और तुल्य नहीं, किन्तु अधिक होते हैं । अनन्त गुण अधिक होते हैं । इस प्रकार यावत् कषाय-कुशील की अपेक्षा भी ।

८० प्रश्न-णियंठे णं भंते ! णियंठस्स सट्ठाणसण्णिगासेणं-पुच्छा ।

८० उत्तर-गोयमा ! णो हीणे, तुल्ले, णो अब्भहिए । एवं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सिणायस्स वि ।

भावार्थ–८० प्रश्न–हे भगवन् ! निर्ग्रंथ, दूसरे निर्ग्रंथ के स्वस्थान सन्निकर्ष से चारित्र-पर्यायों से हीन, तुल्य या अधिक है ?

८० उत्तर–हे गौतम ! हीन नहीं और अधिक भी नहीं हैं, तुल्य होते हैं । इसी प्रकार स्नातक के साथ भी जानना चाहिये ।

८१ प्रश्न–सिणाए णं भंते ! पुलागस्स परट्ठाणसण्णिगासेणं० ?

८१ उत्तर–एवं जहा णियंठस्स वत्तव्वया तहा सिणायस्स वि भाणियव्वा । जाव–

प्रश्न–सिणाए णं भंते ! सिणायस्स सट्ठाणसण्णिगासेणं–पुच्छा ।

उत्तर–गोयमा ! णो हीणे, तुल्ले, णो अब्भहिए ।

भावार्थ–८१ प्रश्न–हे भगवन् ! स्नातक, पुलाक के परस्थान सन्निकर्ष से चारित्र-पर्यायों से हीन, तुल्य या अधिक है ?

८१ उत्तर–हे गौतम ! जिस प्रकार निर्ग्रंथ की वक्तव्यता कही, उसी प्रकार स्नातक की वक्तव्यता भी जाननी चाहिये । यावत्—

प्रश्न–हे भगवन् ! स्नातक, दूसरे स्नातक के स्वस्थान सन्निकर्ष से—चारित्र-पर्यायों से हीन, तुल्य या अधिक है ?

उत्तर–हे गौतम ! हीन और अधिक नहीं, तुल्य है ।

८२ प्रश्न–एएसि णं भंते ! पुलाग-बउस-पडिसेवणाकुसील-कसायकुसील-णियंठ-सिणायाणं जहण्णुक्कोसगाणं चरित्तपज्जवाणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कयरे कयरे जाव विसेसाहिया वा ?

८२ उत्तर-गोयमा ! १ पुलागस्स कसायकुसीलस्स य एएसि णं जहण्णगा चरित्तपज्जवा दोण्ह वि तुल्ला सव्वत्थोवा । २ पुलागस्स उक्कोसगा चरित्तपज्जवा अणंतगुणा । ३ बउसस्स पडिसेवणाकुसीलस्स य एएसि णं जहण्णगा चरित्तपज्जवा दोण्ह वि तुल्ला अणंतगुणा । ४ बउसस्स उक्कोसगा चरित्तपज्जवा अणंतगुणा । ५ पडिसेवणा-कुसीलस्स उक्कोसगा चरित्तपज्जवा अणंतगुणा । ६ कसायकुसीलस्स उक्कोसगा चरित्तपज्जवा अणंतगुणा । ७ णियंठस्स सिणायस्स य एएसि णं अजहण्णमणुक्कोसगा चरित्तपज्जवा दोण्ह वि तुल्ला अणंतगुणा १५ ।

भावार्थ-८२ प्रश्न-हे भगवन् ! पुलाक, बकुश, प्रतिसेवना-कुशील, कषाय-कुशील, निर्ग्रंथ और स्नातक के जघन्य और उत्कृष्ट चारित्र-पर्यायों से कौन किससे यावत् विशेषाधिक हैं ?

८२ उत्तर-हे गौतम ! १-पुलाक और कषाय-कुशील के जघन्य चारित्र-पर्याय परस्पर तुल्य हैं और सब से थोड़े हैं २-उनसे पुलाक के उत्कृष्ट चारित्र-पर्याय अनन्त गुण हैं ३-उनसे बकुश और प्रतिसेवना-कुशील के जघन्य चारित्र-पर्याय अनन्त गुण हैं और परस्पर तुल्य हैं ४-उनसे बकुश के उत्कृष्ट चारित्र-पर्याय अनन्त गुण हैं ५-उनसे प्रतिसेवना कुशील के उत्कृष्ट चारित्र-पर्याय अनन्त गुण हैं ६-उनसे कषाय-कुशील के उत्कृष्ट चारित्र पर्याय अनन्त गुण हैं ७-उनसे निर्ग्रंथ और स्नातक, इन दोनों के अजघन्यानुत्कृष्ट चारित्र-पर्याय अनन्त गुण हैं और परस्पर तुल्य हैं ।

विवेचन-चारित्र अर्थात् सर्वविरति रूप परिणाम के पर्यव अर्थात् भेद (अंश) 'चारित्र-पर्यव' कहलाते हैं । वे बुद्धिकृत या विषयकृत अविभाग परिच्छेद (जिनके फिर

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विभाग न हो सके) होते हैं।

पुलाक आदि का पुलाक आदि के साथ सन्निकर्ष अर्थात् संयोजन को 'स्वस्थान सन्निकर्ष' कहते हैं। पुलाक आदि का बकुश आदि के साथ संयोजन 'परस्थान सन्निकर्ष' कहलाता है।

विशुद्ध संयम के स्थानभूत विशुद्धतर पर्यायों की अपेक्षा अविशुद्ध संयम-स्थानभूत अविशुद्धतर पर्याय 'हीन' कहलाते हैं। गुण और गुणी के अभेद सम्बन्ध से उन पर्यायों वाला साधु भी हीन कहलाता है। शुद्ध पर्यायों की समानता के कारण 'तुल्य' कहलाता है। विशुद्धतर पर्यायों के सम्बन्ध से 'अधिक' कहलाता है।

एक पुलाक, दूसरे पुलाक के साथ सजातीय चारित्र-पर्यायों से षट्स्थान पतित होता है। षट्स्थान हीन-१ अनन्त भाग हीन २ असंख्य भाग हीन ३ संख्येय भाग हीन ४ संख्येय गुण हीन ५ असंख्येय गुण हीन और ६ अनन्त गुण हीन। इसी प्रकार अधिक (वृद्धि) के भी षट्स्थान पतित होते हैं। यथा-१ अनन्त भाग वृद्धि २ असंख्य भाग वृद्धि ३ संख्येय भाग वृद्धि ४ संख्येय गुण वृद्धि ५ असंख्येय गुण वृद्धि और ६ अनन्त गुण वृद्धि। इनका खुलासा इस प्रकार है-प्रत्येक चारित्र के अनन्त पर्याय होते हैं। एक चारित्र के पालने वाले अनेक जीव होते हैं। यथाख्यात चारित्र के अतिरिक्त दूसरे चारित्र के पालन करने वालों के परिणामों में समानता और असमानता-दोनों हो सकती है। असमानता को समझाने के लिये षड्गुण हानि-वृद्धि का स्वरूप बताया है। यथा-१ अनन्तवां भाग हीन-चारित्र पालने वाले दो साधुओं में से एक के जो चारित्र-पर्याय हैं, उनके अनन्त विभाग किये जायँ, उनसे दूसरे साधु के चारित्र-पर्याय एक विभाग कम है, तो वह कमी अनन्तवें भाग हीन कहा जाता है।

२ असंख्यातवां भाग हीन-इसी प्रकार चारित्र का पालन करने वाले दो साधुओं में से एक साधु के चारित्र के असंख्य विभाग किये जायँ, उनसे दूसरे साधु का चारित्र एक भाग कम हो, तो वह असंख्येय भाग हीन माना जाता है।

३ संख्यातवां भाग हीन-उपर्युक्त रीति से एक साधु के चारित्र के संख्यात भाग किये जायँ, उनसे दूसरे साधु का चारित्र एक भाग कम हो, तो वह संख्यातवां भाग हीन कहा जाता है।

४ संख्येय गुण हीन-उपर्युक्त रीति से एक साधु के जितने चारित्र-पर्याय हैं, उनको संख्यात गुण किया जाय, तब वह पहले साधु के बराबर हो सके, तो उस दूसरे साधु का चारित्र संख्यात गुण हीन होता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

५ असंख्यात गुण हीन-दोनों साधुओं में से दूसरे के जितने चारित्र-पर्याय हैं, उनको असंख्यात गुण किया जाय, तब वह पहले साधु के बराबर हो, तो उसका चारित्र असंख्यात गुण हीन कहलाता है।

६ अनन्त गुण हीन-दो साधुओं में से दूसरे के जितने चारित्र-पर्याय हैं, उनको अनन्त गुण किया जाय, तब वह पहले साधु के बराबर हो, तो वह अनन्त गुण हीन कहलाता है। इसी प्रकार वृद्धि के भी षट्स्थान-पतित का क्रम समझना चाहिये।

सामायिक चारित्र के अनन्त पर्याय है। किसी के सामायिक चारित्र के अनन्त पर्याय अधिक है और किसी के कम हैं, परन्तु सभी सामायिक चारित्र के पालने वालों के अनन्त पर्याय हैं ही। इनको समझाने के लिये जिसके सामायिक चारित्र के सब से अधिक पर्याय हैं, वे भी हैं तो अनन्त ही और सभी आकाश-प्रदेशों से अनन्त गुण अधिक हैं। असत्कल्पना से उदाहरण के रूप में समझाने के लिये सब से अधिक संयम-पर्याय वाले संयमी के अनन्त पर्यायों को दस हजार के रूप में मान लिया जाय। लोक में जीव भी अनन्त हैं, किन्तु असत्कल्पना से सभी जीवों को एक सौ मान लिया जाय। लोकाकाश के प्रदेश असंख्य हैं, उन्हें असत्कल्पना से पचास मान लिया जाय और उत्कृष्ट संख्यात राशि को असत्कल्पना से दस मान लिया जाय। जैसे कि सामायिक चारित्र के सब से अधिक पर्याय अनन्त हैं। असत्कल्पना से उन्हें १०००० मान लिया जाय। जीव अनन्त है, उन्हें असत्-कल्पना से १०० मान लिया जाय। १ अनन्त भाग हीन-अब दस हजार में १०० का भाग दिया जाय, क्योंकि एक तो पूर्ण पर्याय वाला है और दूसरा अनन्तवां भाग हीन हैं। अतः १०००० में १०० का भाग देने पर लब्धांक १०० आते हैं अर्थात् १००००-१००=९९०० उसके चारित्र-पर्याय हैं। यह १०० पर्याय (अनन्तवां भाग हीन) ही अनन्तवां भाग होता है।

२ असंख्य भाग हीन-एक के तो पूर्ण अनन्त पर्याय हैं, जिन्हें असत्कल्पना से १०००० माना है। दूसरे के चारित्र पर्याय उससे असंख्यातवां भाग हीन हैं। असंख्यात को असत्कल्पना से ५० माना है। १०००० में ५० का भाग देने पर २०० आते हैं। इस प्रकार १००००-२००=९८०० पर्याय हैं। यह २०० पर्याय असंख्यातवां भाग हीन हैं।

३ संख्यात भाग हीन-एक के तो पूर्ण पर्याय अनन्त हैं, जिन्हें असत्कल्पना से १०००० माना हैं, दूसरे के चारित्र-पर्याय उससे संख्यातवां भाग हीन हैं। असत्कल्पना से संख्यात को १० माना है। १०००० में १० का भाग देने पर लब्धांक १००० आते हैं। अतः उसके १०००० में से १००० शेष निकालने पर ९००० पर्यव शेष रहते हैं। पहले से इसके एक हजार पर्यव (संख्यात भाग) हीन हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

४ संख्यात गुण हीन--जो संख्यात गुण हीन हैं, उसके एक हजार पर्याय हैं। संख्यात को असत्कल्पना से १० माना है। पहले के चारित्र-पर्याय अनन्त हैं, दूसरे के १००० पर्याय को संख्यात गुण अर्थात् १० से गुणा करने पर वह पहले वाले के (जिसके अनन्त पर्याय हैं और जिन्हें असत्कल्पना से १०००० माना है) बराबर होता है।

५ असंख्यात गुण हीन --जो असंख्यात गुण हीन हैं, उसके २०० पर्याय हैं। पहले के तो अनन्त पर्याय हैं (जिन्हें असत्कल्पना से १०००० माना है) अतः २०० पर्याय को असत्कल्पना से ५० वाँ भाग माना है। अतः २०० को ५० से गुणा करें, तब वह पहले वाले के बराबर होता है।

६ अनन्त गुण हीन–जिसके अनन्त गुण हीन पर्याय हैं, उसके १०० पर्याय माने हैं। पहले के तो अनन्त पर्याय अर्थात् १०००० पर्याय हैं। अतः इसके १०० पर्यायों को १०० से गुणा किया जाय, तब वह पहले वाले के बराबर होता है। अतः इसके पर्याय अनन्त गुण हीन हैं। संक्षेप में—

| पूर्ण पर्याय पालने वाले | अपूर्ण पर्याय पालने वाले |
|---|---|
| १०००० प्रतियोगी | ९९०० अनन्तवाँ भाग हीन। |
| १०००० प्रतियोगी | ५८०० असंख्यातवाँ भाग हीन। |
| १०००० प्रतियोगी | ९००० संख्यातवाँ भाग हीन। |
| १०००० प्रतियोगी | १००० संख्यात गुण हीन। |
| १०००० प्रतियोगी | २०० असंख्यात गुण हीन। |
| १०००० प्रतियोगी | १०० अनन्त गुण हीन। |

जिस प्रकार षट्स्थान-पतित हीन का स्वरूप बताया है, उसी प्रकार षट्स्थान-पतित अधिक (वृद्धि) का भी समझना चाहिये।

यह सामायिक चारित्र का उदाहरण दिया है। इसी प्रकार छेदोपस्थापनीय आदि चारित्रों पर और पुलाक आदि निर्ग्रंथों पर भी घटित कर लेना चाहिये।

परस्थान का अर्थ है विजातीय। जैसे कि पुलाक, पुलाक के साथ तो सजातीय है, किंतु बकुशादि के साथ विजातीय है। पुलाक तथाविध विशुद्धि के अभाव से बकुश से हीन है। जिस प्रकार पुलाक का पुलाक के साथ षट्स्थान-पतित कहा है, उसी प्रकार कषाय-कुशील की अपेक्षा भी षट्स्थान-पतित समझना चाहिये। पुलाक, कषाय-कुशील से अविशुद्ध संयम-स्थान में रहने के कारण कदाचित् हीन भी होता है। समान संयम-स्थान में रहने पर कदाचित् समान भी होता है अथवा शुद्धतर संयम-स्थान में रहने पर कदाचित् अधिक भी होता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पुलाक और कषाय-कुशील के सर्व जघन्य संयम-स्थान सब से नीचे हैं। वहाँ से वे दोनों साथ-साथ असंख्य संयम-स्थानों तक जाते हैं। क्योंकि वहाँ तक उन दोनों के समान अध्यवसाय होते हैं। तत्पश्चात् पुलाक हीन परिणाम वाला होने से आगे के संयम-स्थानों में नहीं जाता, किन्तु वहाँ रुक जाता है। इसके पश्चात् कषाय-कुशील अकेला ही असंख्य संयम स्थानों तक जाता है। वहाँ से कषाय-कुशील, प्रतिसेवना-कुशील और बकुश–ये तीनों साथ-साथ असंख्य संयम-स्थानों तक जाते हैं। फिर वहाँ बकुश रुक जाता है। इसके पश्चात् प्रतिसेवना-कुशील और कषाय-कुशील ये दोनों असंख्य संयम-स्थानों तक जाते हैं। वहाँ जा कर प्रतिसेवना-कुशील रुक जाता है। फिर कषाय-कुशील उससे आगे असंख्य संयम-स्थानों तक जाता है। वहाँ जा कर वह भी रुक जाता है। उसके पश्चात् निर्ग्रंथ और स्नातक ये दोनों उससे आगे एक संयम-स्थान जाते हैं। इस प्रकार पुलाक, कषाय-कुशील के अतिरिक्त शेष सभी निर्ग्रंथों के चारित्र-पर्यायों से अनन्त गुण हीन होता है।

बकुश, पुलाक से विशुद्धतर परिणाम वाला होने से अनन्त गुण अधिक होता है। बकुश, बकुश के साथ विचित्र परिणाम वाला होने से कदाचित् हीन, कदाचित् तुल्य और कदाचित् अधिक होता है। प्रतिसेवना-कुशील और कषाय-कुशील से भी इसी प्रकार हीनादि होता है। निर्ग्रंथ और स्नातक से तो वह हीन ही होता है। प्रतिसेवना-कुशील का कथन, बकुश के समान है। कषाय-कुशील भी बकुश के समान है और पुलाक से बकुश अधिक कहा है, किन्तु यहाँ पर कषाय कुशील, पुलाक के साथ हीनादि षट्स्थान पतित कहना चाहिये, क्योंकि उसके परिणाम पुलाक की अपेक्षा हीन, तुल्य और अधिक होते हैं।

## योग द्वार

**८३ प्रश्न–पुलाए णं भंते! किं सयोगी होज्जा, अयोगी होज्जा?**

**८३ उत्तर–गोयमा! सयोगी होज्जा, णो अयोगी होज्जा?**

**प्रश्न–जइ सयोगी होज्जा किं मणजोगी होज्जा, वयजोगी होज्जा, कायजोगी होज्जा?**

**उत्तर–गोयमा! मणजोगी वा होज्जा, वयजोगी वा होज्जा,**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कायजोगी वा होज्जा । एवं जाव णियंठे ।

भावार्थ–८३ प्रश्न–हे भगवन् ! पुलाक सयोगी होते हैं या अयोगी ?

८३ उत्तर–हे गौतम ! सयोगी होते हैं, अयोगी नहीं होते ।

प्रश्न–सयोगी होते हैं, तो मनयोगी होते हैं, वचनयोगी होते हैं या काय-योगी होते हैं ?

उत्तर–हे गौतम ! वे मनयोगी, वचनयोगी और काययोगी होते हैं । इसी प्रकार यावत् निर्ग्रन्थ पर्यन्त ।

८४ प्रश्न–सिणाए णं–पुच्छा ।

८४ उत्तर–गोयमा ! सयोगी वा होज्जा, अयोगी वा होज्जा । जइ सयोगी होज्जा किं मणजोगी होज्जा–सेसं जहा पुलागस्स १६ ।

भावार्थ–८४ प्रश्न–हे भगवन् ! स्नातक सयोगी होते हैं या अयोगी ?

८४ उत्तर–हे गौतम ! सयोगी भी होते हैं और अयोगी भी । यदि सयोगी होते हैं, तो क्या मनयोगी होते हैं इत्यादि सभी पुलाक के समान है ।

विवेचन–स्नातक सयोगी और अयोगी दोनों प्रकार के होते हैं । शैलेशी अवस्था से पहले तक वे सयोगी होते हैं और शैलेशी अवस्था में अयोगी बन जाते हैं ।

## उपयोग द्वार

८५ प्रश्न–पुलाए णं भंते ! किं सागारोवउत्ते होज्जा, अणागारो-वउत्ते होज्जा ?

८५ उत्तर–गोयमा ! सागारोवउत्ते वा होज्जा, अणागारोवउत्ते वा होज्जा । एवं जाव सिणाए १७ ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ-८५ प्रश्न-हे भगवन् ! पुलाक साकारोपयोगयुक्त होते हैं या अनाकारोपयोगयुक्त ?

८५ उत्तर-हे गौतम ! साकारोपयोगयुक्त भी होते हैं और अनाकार उपयोगयुक्त भी । इसी प्रकार यावत् स्नातक पर्यन्त ।

## कषाय द्वार

८६ प्रश्न-पुलाए णं भंते ! सकसायी होज्जा, अकसायी होज्जा ?

८६ उत्तर-गोयमा ! सकसायी होज्जा, णो अकसायी होज्जा ।

प्रश्न-जइ सकसायी होज्जा से णं भंते ! कइसु कसाएसु होज्जा ?

उत्तर-गोयमा ! चउसु कोह-माण-माया-लोभेसु होज्जा । एवं बउसे वि, एवं पडिसेवणाकुसीले वि ।

भावार्थ-८६ प्रश्न-हे भगवन् ! पुलाक, सकषायी होते हैं या अकषायी ?

८६ उत्तर-हे गौतम ! सकषायी होते हैं, अकषायी नहीं होते ।

प्रश्न-हे भगवन् ! यदि वे सकषायी होते हैं, तो कितने कषायों में होते हैं ?

उत्तर-हे गौतम ! क्रोध, मान, माया और लोभ-इन चारों कषायों में होते हैं । इसी प्रकार बकुश और प्रतिसेवना-कुशील पर्यन्त ।

८७ प्रश्न-कसायकुसीले णं-पुच्छा ।

८७ उत्तर-गोयमा ! सकसायी होज्जा, णो अकसायी होज्जा ।

प्रश्न-जइ सकसायी होज्जा से णं भंते ! कइसु कसाएसु होज्जा ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उत्तर-गोयमा ! चउसु वा तिसु वा दोसु वा एगंमि वा होज्जा । चउसु होमाणे चउसु संजलणकोह-माण-माया-लोभेसु होज्जा, तिसु होमाणे तिसु संजलणमाण माया-लोभेसु होज्जा, दोसु होमाणे संजलणमाया-लोभेसु होज्जा, एगंमि होमाणे संजलणलोभे होज्जा ।

भावार्थ-८७ प्रश्न-हे भगवन् ! कषाय-कुशील सकषायी होते हैं या अकषायी ?

८७ उत्तर-हे गौतम ! सकषायी होते हैं, अकषायी नहीं होते ।

प्रश्न-हे भगवन् ! यदि वे सकषायी होते हैं, तो कितने कषाय में होते हैं ?

उत्तर-हे गौतम ! वे चार, तीन दो या एक कषाय में होते हैं । चार कषाय में होते हुए संज्वलन क्रोध, मान, माया और लोभ में होते हैं । तीन में होते हुए संज्वलन मान, माया और लोभ में । दो कषाय में होते हुए संज्वलन माया और लोभ में । एक कषाय में होते हैं, तो संज्वलन लोभ में होते हैं ।

८८ प्रश्न-णियंठे णं-पुच्छा ।

८८ उत्तर-गोयमा ! णो सकसायी होज्जा, अकसायी होज्जा ।

प्रश्न-जइ अकसायी होज्जा किं उवसंतकसायी होज्जा, खीणकसायी होज्जा ?

उत्तर-गोयमा ! उवसंतकसायी वा होज्जा, खीणकसायी वा होज्जा । सिणाए एवं चेव, णवरं णो उवसंतकसायी होज्जा, खीणकसायी होज्जा १८ ।

भावार्थ-८८ प्रश्न-हे भगवन् ! निर्ग्रंथ सकषायी होते हैं या अकषायी ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

८८ उत्तर–हे गौतम ! सकषायी नहीं होते, अकषायी होते हैं।

प्रश्न–हे भगवन् ! यदि अकषायी होते हैं, तो क्या उपशान्त-कषायी होते हैं या क्षीण-कषायी।

उत्तर–हे गौतम ! उपशान्त-कषायी भी होते हैं और क्षीण-कषायी भी। इसी प्रकार स्नातक भी। किन्तु वे उपशांत-कषायी नहीं होते, क्षीण-कषायी होते हैं।

**विवेचन**–कषाय द्वार में पुलाक के लिये कहा है कि वे सकषायी होते हैं, अकषायी नहीं होते, क्योंकि उनके कषायों का उपशम या क्षय नहीं होता।

कषाय-कुशील के लिये जो कषायों का वर्णन किया है, उसका तात्पर्य यह है कि जब वे चार कषाय में होते हैं, तब उनके संज्वलन क्रोध, मान, माया और लोभ, ये चारों कषाय होते हैं। उपशम-श्रेणी में या क्षपक-श्रेणी में जब संज्वलन क्रोध का उपशम या क्षय हो जाता है, तब उसके तीन कषाय होते हैं। संज्वलन मान का क्षय या उपशम हो जाने पर दो और जब माया का उपशम या क्षय हो जाता है, तब 'सूक्ष्मसपराय' नामक दसवें गुणस्थान में केवल एक संज्वलन लोभ ही शेष रहता है।

## लेश्या द्वार

८९ प्रश्न–पुलाए णं भंते ! किं सलेस्से होज्जा, अलेस्से होज्जा ?

८९ उत्तर–गोयमा ! सलेस्से होज्जा, णो अलेस्से होज्जा।

प्रश्न–जइ सलेस्से होज्जा, से णं भंते ! कइसु लेस्सासु होज्जा ?

उत्तर–गोयमा ! तिसु विसुद्धलेस्सासु होज्जा, तं जहा–तेउलेस्साए, पम्हलेस्साए, सुक्कलेस्साए। एवं बउसस्स वि, एवं पडिसेवणाकुसीले वि।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ–८९ प्रश्न–हे भगवन् ! पुलाक सलेशी होते हैं या अलेशी ?

८९ उत्तर–हे गौतम ! सलेशी होते हैं, अलेशी नहीं होते ।

प्रश्न–हे भगवन् ! यदि सलेशी होते हैं, तो कितनी लेश्या में होते हैं ?

उत्तर–हे गौतम ! तीन विशुद्ध लेश्याओं में होते हैं । यथा–तेजोलेश्या, पद्मलेश्या और शुक्ललेश्या । इसी प्रकार बकुश और प्रतिसेवना-कुशील भी ।

९० प्रश्न–कसायकुसीले–पुच्छा ।

९० उत्तर–गोयमा ! सलेस्से होज्जा, णो अलेस्से होज्जा ।

प्रश्न–जइ सलेस्से होज्जा, से णं भंते ! कइसु लेसासु होज्जा ?

उत्तर–गोयमा ! छसु लेसासु होज्जा, तं जहा–कण्हलेस्साए जाव सुक्कलेस्साए ।

भावार्थ–९० प्रश्न–हे भगवन् ! कषाय-कुशील सलेशी होते हैं या अलेशी ?

९० उत्तर–हे गौतम ! सलेशी होते हैं, अलेशी नहीं होते ।

प्रश्न–हे भगवन् ! यदि सलेशी होते हैं तो कितनी लेश्याओं में होते हैं ?

उत्तर–हे गौतम ! छह लेश्याओं में होते हैं । यथा–कृष्णलेश्या यावत् शुक्ललेश्या ।

९१ प्रश्न–णियंठे णं भंते !–पुच्छा ।

९१ उत्तर–गोयमा ! सलेस्से होज्जा ।

प्रश्न–जइ सलेस्से होज्जा से णं भंते ! कइसु लेस्सासु होज्जा ?

उत्तर–गोयमा ! एक्काए सुक्कलेस्साए होज्जा ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ-९१ प्रश्न-हे भगवन् ! निर्ग्रंथ सलेशी होते हैं या अलेशी ?
९१ उत्तर-हे गौतम ! सलेशी होते हैं, अलेशी नहीं होते ।
प्रश्न-हे भगवन् ! यदि सलेशी होते हैं, तो कितनी लेश्याओं में होते हैं ?
उत्तर-हे गौतम ! एक शुक्ल लेश्या में ही होते हैं ।

९२ प्रश्न-सिणाए-पुच्छा ।
९२ उत्तर-गोयमा ! सलेस्से वा होज्जा, अलेस्से वा होज्जा ।
प्रश्न-जइ सलेस्से होज्जा, से णं भंते ! कइसु लेस्सासु होज्जा ?
उत्तर-गोयमा ! एगाए परमसुक्कलेस्साए होज्जा १९ ।

भावार्थ-९२ प्रश्न-हे भगवन् ! स्नातक सलेशी होते हैं या अलेशी ?
९२ उत्तर-हे गौतम ! सलेशी भी होते हैं और अलेशी भी होते हैं ।
प्रश्न-हे भगवन् ! यदि सलेशी होते हैं, तो कितनी लेश्याओं में होते हैं ?
उत्तर-हे गौतम ! एक परम शुक्ल लेश्या में होते हैं ।

**विवेचन**-पुलाक, बकुश और प्रतिसेवना-कुशील-ये तीनों, तीन विशुद्ध लेश्याओं में होते हैं अर्थात् भाव लेश्या की अपेक्षा तेजो, पद्म और शुक्ल-इन प्रशस्त लेश्याओं में होते हैं ।

'कषाय-कुशील छह लेश्याओं में होते हैं ।' यद्यपि टीकाकार ने कषाय-कुशील में छह लेश्या बताते हुए कृष्णादि तीन लेश्याओं को मात्र द्रव्य-लेश्या ही बताई हैं, किन्तु द्रव्य-लेश्या भी छह और भाव-लेश्या भी छहों समझनी चाहिये। वे किस प्रकार घटित होती हैं ? इसका विवेचन प्रथम शतक के प्रथम और द्वितीय उद्देशक के विवेचन में, पाद-टिप्पण में दिया जा चुका है । जिज्ञासुओं को वहां देखना चाहिये (प्रथम भाग पृष्ठ ९१) ।

स्नातक में जो एक परम शुक्ल लेश्या का कथन किया है, इसका आशय यह है कि शुक्लध्यान के तीसरे भेद के समय ही एक परम शुक्ल लेश्या होती है, दूसरे समय में तो उसमें शुक्ल लेश्या ही होती है, किन्तु वह शुक्ल लेश्या भी दूसरे जीवों की शुक्ल लेश्या की अपेक्षा परम शुक्ल लेश्या होती है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# परिणाम द्वार

९३ प्रश्न–पुलाए णं भंते ! किं वड्ढमाणपरिणामे होज्जा, हीयमाणपरिणामे होज्जा, अवट्ठियपरिणामे होज्जा ?

९३ उत्तर–गोयमा ! वड्ढमाणपरिणामे वा होज्जा, हीयमाणपरिणामे वा होज्जा, अवट्ठियपरिणामे वा होज्जा । एवं जाव कसायकुसीले ।

कठिन शब्दार्थ–वड्ढमाण––वर्द्धमान––बढ़ता हुआ, हीयमाण—घटता हुआ, अवट्ठिय––अवस्थित ।

भावार्थ–९३ प्रश्न–हे भगवन् ! पुलाक, वर्द्धमान परिणामी होते हैं, हीयमान (घटते हुए) परिणामी होते हैं या अवस्थित परिणामी ?

९३ उत्तर–हे गौतम ! वर्द्धमान् परिणामी, हीयमान परिणामी और अवस्थित परिणामी भी होते हैं । इसी प्रकार यावत् कषाय-कुशील पर्यन्त ।

९४ प्रश्न–णियंठे णं–पुच्छा ।

९४ उत्तर–गोयमा ! वड्ढमाणपरिणामे होज्जा, णो हीयमाणपरिणामे होज्जा, अवट्ठियपरिणामे वा होज्जा । एवं सिणाए वि ।

भावार्थ–९४ प्रश्न–हे भगवन् ! निर्ग्रंथ वर्द्धमान परिणामी होते हैं०?

९४ उत्तर–हे गौतम ! वर्द्धमान और अवस्थित परिणामी होते हैं, किंतु हीयमान परिणामी नहीं होते । इसी प्रकार स्नातक भी ।

९५ प्रश्न–पुलाए णं भंते ! केवइयं कालं वड्ढमाणपरिणामे होज्जा ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

९५ उत्तर गोयमा ! जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं अंतोमुहुत्तं ।

भावार्थ-९५ प्रश्न-हे भगवन् ! पुलाक वर्द्धमान परिणामी कितने काल तक होते हैं ?

९५ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य एक समय और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त तक ।

९६ प्रश्न-केवइयं कालं हीयमाणपरिणामे होज्जा ?

९६ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं अंतोमुहुत्तं ।

भावार्थ-९६ प्रश्न-हे भगवन् ! पुलाक हीयमान परिणामी कितने काल तक होते हैं ?

९६ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य एक समय और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त तक ।

९७ प्रश्न-केवइयं कालं अवट्ठियपरिणामे होज्जा ?

९७ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं सत्त समया । एवं जाव कसायकुसीले ।

भावार्थ-९७ प्रश्न-हे भगवन् ! पुलाक, अवस्थित परिणामी कितने काल तक रहते हैं ?

९७ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य एक समय और उत्कृष्ट सात समय तक। इसी प्रकार यावत् कषाय-कुशील पर्यन्त ।

९८ प्रश्न-णियंठे णं भंते ! केवइयं कालं वड्ढमाणपरिणामे होज्जा ?

९८ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेण वि अंतोमुहुत्तं ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ-९८ प्रश्न-हे भगवन् ! निर्ग्रंथ, वर्द्धमान परिणामी कितने काल तक रहते हैं ?

९८ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट भी अन्तर्मुहूर्त ।

९९ प्रश्न-केवइयं कालं अवट्ठियपरिणामे होज्जा ?

९९ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं अंतोमुहुत्तं ।

भावार्थ-९९ प्रश्न-हे भगवन् ! निर्ग्रंथ अवस्थित परिणामी कितने काल तक रहते हैं ?

९९ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य एक समय और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त तक।

१०० प्रश्न-सिणाए णं भंते ! केवइयं कालं वड्ढमाणपरिणामे होज्जा ?

१०० उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं वि अंतोमुहुत्तं ।

भावार्थ-१०० प्रश्न-हे भगवन् ! स्नातक वर्द्धमान परिणामी कितने काल तक होते हैं ?

१०० उत्तर-हे गौतम ! जघन्य अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट भी अन्तर्मुहूर्त ।

१०१ प्रश्न-केवइयं कालं अवट्ठियपरिणामे होज्जा ?

१०१ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं देसूणा पुव्वकोडी २० ।

भावार्थ-१०१ प्रश्न-हे भगवन् ! स्नातक अवस्थित परिणामी कितने काल तक होते हैं ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

**१०१ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट देशोनपूर्वकोटि वर्ष पर्यन्त ।**

**विवेचन**- चारित्र के भावों को 'परिणाम' कहते हैं । संयमशुद्धि की उत्कर्षता (वृद्धि) होती रहे, उसे 'वर्द्धमान परिणाम' कहते हैं और संयमशुद्धि की अपकर्षता (हीनता) होती रहे, उसे, 'हीयमान परिणाम' कहते हैं, तथा संयमशुद्धि स्थिर रहे, उसमें किसी प्रकार की हीनाधिकता (घट-बढ़) न हो, उसे 'अवस्थित परिणाम' कहते हैं ।

निर्ग्रन्थ हीयमान परिणाम वाला नहीं होता। यदि उसके परिणामों में हीनता आती है, तो वह 'कषाय-कुशील' कहलाता है। स्नातक के परिणामों में हीनता होने का कारण ही नहीं है, इसलिए वह हीयमान परिणाम वाला नहीं होता ।

पुलाक के परिणाम जब वृद्धिगत हो रहे हों, तब यदि वे कषाय से बाधित हो जाय, तो वह एकादि समय वर्द्धमान परिणाम का अनुभव करता है । इसलिए उसका काल जघन्य एक समय होता है और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त होता है। इसी प्रकार बकुश, प्रतिसेवना-कुशील और कषाय-कुशील के विषय में भी जानना चाहिए । बकुशादि के जघन्य एक समय वर्द्धमान परिणाम, मरण की अपेक्षा भी घटित हो सकता है, परन्तु पुलाक में मरण की अपेक्षा एक समय घटित नहीं हो सकता, क्योंकि पुलाकपने में मरण नहीं होता । मरण के समय पुलाक, कषाय-कुशीलादि रूप में परिणत हो जाता है । पहले पुलाक का जो मरण कहा है, वह भूतभाव की अपेक्षा समझना चाहिये ।

निर्ग्रन्थ जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त तक वर्द्धमान परिणाम वाला होता है, जब केवलज्ञान उत्पन्न होता है, तब उसके परिणामान्तर हो जाते हैं । निर्ग्रंथ के अवस्थित परिणाम जघन्य एक समय, मरण की अपेक्षा घटित हो सकता है ।

स्नातक जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त तक वर्द्धमान परिणाम वाला होता है, क्योंकि शैलेशी अवस्था में वर्द्धमान परिणाम अन्तर्मुहूर्त तक होते हैं । स्नातक के अवस्थित परिणाम का काल भी जघन्य अन्तर्मुहूर्त होता है, क्योंकि केवलज्ञान उत्पन्न होने के बाद अन्तर्मुहूत तक अवस्थित परिणाम वाला हो कर फिर शैलेशी अवस्था को स्वीकार करता है, इस अपेक्षा से यह काल घटित होता है । अवस्थित परिणाम का उत्कृष्ट काल देशोन पूर्वकोटि वर्ष होता है, क्योंकि पूर्वकोटि वष की आयु वाले पुरुष को जन्म से जघन्य नौ वर्ष बीत जाने पर केवलज्ञान उत्पन्न हो, तो नौ वर्ष न्यून पूर्वकोटि वर्ष पर्यन्त अवस्थित परिणाम वाला हो कर शैलेशी अवस्था की प्राप्ति तक विचरता है और शैलेशी अवस्था में वर्द्धमान परिणाम वाला हो जाता है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# कर्म-बन्ध द्वार

१०२ प्रश्न--पुलाए णं भंते ! कइ कम्मप्पगडीओ बंधइ ?

१०२ उत्तर--गोयमा ! आउयवज्जाओ सत्त कम्मप्पगडीओ बंधइ ।

भावार्थ–१०२ प्रश्न–हे भगवन् ! पुलाक, कर्म-प्रकृतियां कितनी बांधता है ?

१०२ उत्तर–हे गौतम ! आयुष्य कर्म को छोड़ कर सात कर्म-प्रकृतियां बांधता है ।

१०३ प्रश्न--बउसे--पुच्छा ।

१०३ उत्तर--गोयमा ! सत्तविहबंधए वा, अट्ठविहबंधए वा । सत्त बंधमाणे आउयवज्जाओ सत्त कम्मप्पगडीओ बंधइ, अट्ठ बंधमाणे, पडिपुण्णाओ अट्ठ कम्मप्पगडीओ बंधइ । एवं पडिसेवणाकुसीले वि ।

भावार्थ–१०३ प्रश्न–हे भगवन् ! बकुश, कर्म-प्रकृतियां कितनी बांधता है ?

१०३ उत्तर–हे गौतम ! सात या आठ कर्म-प्रकृतियां बांधता है । जब सात कर्म-प्रकृतियां बांधता है, तो आयुष्य को छोड़ कर शेष सात कर्म-प्रकृतियां बांधता है । जब आयुष्य कर्म बांधता है, तो सम्पूर्ण आठ कर्म-प्रकृतियों को बांधता है । इसी प्रकार प्रतिसेवना-कुशील भी ।

१०४ प्रश्न--कसायकुसीले--पुच्छा ।

१०४ उत्तर--गोयमा ! सत्तविहबंधए वा, अट्ठविहबंधए वा, छव्विहबंधए वा । सत्त बंधमाणे आउयवज्जाओ सत्त कम्मप्पगडीओ बंधइ, अट्ठ बंधमाणे पडिपुण्णाओ अट्ठ कम्मप्पगडीओ बंधइ, छ बंध-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

माणे आउय-मोहणिज्जवज्जाओ छक्कम्मप्पगडीओ बंधइ।

भावार्थ-१०४ प्रश्न-हे भगवन् ! कषाय-कुशील, कर्म की कितनी प्रकृतियां बांधता है ?

१०४ उत्तर-हे गौतम ! सात, आठ या छह कर्म-प्रकृतियां बांधता है। सात बांधता हुआ आयुष्य के अतिरिक्त शेष सात कर्म-प्रकृतियों का बंध करता है। आठ बांधता हुआ प्रतिपूर्ण आठ कर्म-प्रकृतियां बांधता है। छह बांधता हुआ आयुष्य और मोहनीय कर्म छोड़ कर छह कर्म-प्रकृतियां बांधता है।

१०५ प्रश्न-णियंठे णं-पुच्छा।

१०५ उत्तर-गोयमा ! एगं वेयणिज्जं कम्मं बंधइ।

भावार्थ-१०५ प्रश्न-हे भगवन् ! निर्ग्रंथ, कर्म की कितनी प्रकृतियां बांधता है ?

१०५ उत्तर-हे गौतम ! वह एकमात्र वेदनीय कर्म बांधता है।

१०६ प्रश्न-सिणाए-पुच्छा।

१०६ उत्तर-गोयमा ! एगविहबंधए वा, अबंधए वा। एगं बंधमाणे एगं वेयणिज्जं कम्मं बंधइ २१।

भावार्थ-१०६ प्रश्न-हे भगवन् ! स्नातक, कर्म की कितनी प्रकृतियां बांधता है ?

१०६ उत्तर-हे गौतम ! एक कर्म-प्रकृति बांधता है, अथवा नहीं भी बांधता है। एक को बांधता हुआ वेदनीय कर्म बांधता है।

विवेचन-पुलाक अवस्था में आयुष्य का बन्ध नहीं होता, क्योंकि उस अवस्था में उसके आयुष्य बन्ध योग्य अध्यवसाय नहीं होते।

आयुष्य के दो भाग बीत जाने पर तीसरे भाग में आयु-बन्ध होता है। किन्तु आयुष्य के पहले के दो भागों में आयु-बन्ध नहीं होता, इसलिये बकुश आदि सात या आठ कर्म-प्रकृतियों को बांधते हैं। कषाय-कुशील, सूक्ष्मसंपराय गुणस्थान में आयुष्य नहीं,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बांधता है, क्योंकि आयुष्य का बन्ध सातवें अप्रमत्त गुणस्थान तक ही होता है। कषाय-कुशील के बादर कषायोदय का अभाव होने से मोहनीय कर्म नहीं बाँधता। अतः कषाय-कुशील आयुष्य और मोहनीय के अतिरिक्त शेष छह कर्म-प्रकृतियाँ बाँधता है। निर्ग्रन्थ और स्नातक योग निमित्तक एक वेदनीय कर्म को ही बाँधता है, क्योंकि कर्मबन्ध के हेतुओं में उसके केवल योग का ही सद्भाव होता है। स्नातक के अयोगी गुणस्थान में, बन्ध हेतु का अभाव होने से अबन्धक होता है।

## कर्म-वेदना द्वार

**१०७ प्रश्न–पुलाए णं भंते ! कइ कम्मप्पगडीओ वेदेइ ?**

**१०७ उत्तर–गोयमा ! णियमं अट्ठ कम्मप्पगडीओ वेदेइ। एवं जाव कसायकुसीले।**

भावार्थ–१०७ प्रश्न–हे भगवन् ! पुलाक, कर्म की कितनी प्रकृतियों का वेदन करते हैं ?

१०७ उत्तर–हे गौतम ! नियम से आठों कर्म-प्रकृतियों का वेदन करते हैं। इसी प्रकार यावत् कषाय-कुशील पर्यंत।

**१०८ प्रश्न–णियंठे णं–पुच्छा।**

**१०८ उत्तर–गोयमा ! मोहणिज्जवज्जाओ सत्त कम्मप्पगडीओ वेदेइ।**

भावार्थ–१०८ प्रश्न–हे भगवन् ! निर्ग्रन्थ, कर्म की कितनी प्रकृतियों का वेदन करते हैं ?

१०८ उत्तर–हे गौतम ! मोहनीय कर्म छोड़कर सात कर्म-प्रकृतियों का वेदन करते हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१०९ प्रश्न–सिणाए णं–पुच्छा ।

१०९ उत्तर–गोयमा ! वेयणिज्ज-आउय-णाम-गोयाओ चत्तारि कम्मप्पगडीओ वेदेइ २२ ।

भावार्थ–१०९ प्रश्न–हे भगवन् ! स्नातक, कितनी कर्म-प्रकृतियों का वेदन करते हैं ?

१०९ उत्तर–हे गौतम ! वेदनीय, आयुष्य, नाम और गोत्र––इन चार कर्म-प्रकृतियों का वेदन करते हैं ।

विवेचन––पुलाक से ले कर कषाय-कुशील तक आठों कर्म-प्रकृतियाँ वेदते हैं । निर्ग्रंथ, मोहनीय को छोड़ कर सात कर्म-प्रकृतियों को वेदते हैं, क्योंकि उसके मोहनीय कर्म उपशान्त या क्षीण हो जाता है । स्नातक के घाती-कर्मों का क्षय हो जाता है । इसलिये वेदनीयादि चार अघाती कर्मों को ही वेदते हैं ।

## कर्म-उदीरणा द्वार

११० प्रश्न--पुलाए णं भंते ! कइ कम्मप्पगडीओ उदीरेइ ?

११० उत्तर--गोयमा ! आउय-वेयणिज्जवज्जाओ छ कम्मप्पगडीओ उदीरेइ ।

भावार्थ–११० प्रश्न–हे भगवन् ! पुलाक, उदीरणा कितनी कर्म-प्रकृतियों की करते हैं ?

११० उत्तर–हे गौतम ! आयुष्य और वेदनीय को छोड़ कर छह कर्म-प्रकृतियों की उदीरणा करते हैं ।

१११ प्रश्न--बउसे--पुच्छा ।

१११ उत्तर--गोयमा ! सत्तविहउदीरए वा, अट्ठविहउदीरए वा, छव्विहउदीरए वा । सत्त उदीरेमाणे आउयवज्जाओ सत्त कम्मप्प-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

डीओ उदीरेइ, अट्ठ उदीरेमाणे पडिपुण्णाओ अट्ठ कम्मप्पगडीओ उदीरेइ. छ उदीरेमाणे आउय-वेयणिज्जवज्जाओ छ कम्मप्पगडीओ उदीरेइ । पडिसेवणाकुसीले एवं चेव ।

कठिन शब्दार्थ-उदीरेमाणे–उदीरणा करता हुआ ।

भावार्थ–१११ प्रश्न–हे भगवन् ! बकुश, कर्म की कितनी प्रकृतियों को उदीरता है ?

१११ उत्तर–हे गौतम ! सात, आठ या छह कर्म-प्रकृतियों को उदीरता है । सात को उदीरता हुआ आयुष्य को छोड़ कर सात कर्म-प्रकृतियों को उदीरता है । आठ को उदीरता हुआ प्रतिपूर्ण आठ कर्म-प्रकृतियों को उदीरता है । छह को उदीरता हुआ आयुष्य और वेदनीय को छोड़ कर छह कर्म-प्रकृतियों को उदीरता है । इसी प्रकार प्रतिसेवना-कुशील भी ।

११२ प्रश्न–कसायकुसीले-पुच्छा ।

११२ उत्तर–गोयमा ! सत्तविहउदीरए वा, अट्ठविहउदीरए वा, छव्विहउदीरए वा, पंचविहउदीरए वा । सत्त उदीरेमाणे आउयवज्जाओ सत्त कम्मप्पगडीओ उदीरेइ, अट्ठ उदीरेमाणे पडिपुण्णाओ अट्ठ कम्मप्पगडीओ उदीरेइ, छ उदीरेमाणे आउय-वेयणिज्जवज्जाओ छ कम्मप्पगडीओ उदीरेइ, पंच उदीरेमाणे आउय-वेयणिज्ज-मोहणिज्ज-वज्जाओ पंच कम्मप्पगडीओ उदीरेइ ।

भावार्थ–११२ प्रश्न–हे भगवन् ! कषाय-कुशील कर्म की कितनी प्रकृतियों को उदीरता है ?

११२ उत्तर–हे गौतम ! सात, आठ, छह या पांच कर्म-प्रकृतियों को

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उदीरता है। आयुष्य को छोड़ कर शेष सात कर्म प्रकृतियों को उदीरता है। सम्पूर्ण आठ कर्म-प्रकृतियों को उदीरता है। आयुष्य और वेदनीय को छोड़ कर छह कर्म-प्रकृतियों को उदीरता है और आयुष्य, वेदनीय और मोहनीय को छोड़ कर पांच कर्म-प्रकृतियों को उदीरता है।

११३ प्रश्न–णियंठे–पुच्छा।

११३ उत्तर–गोयमा ! पंचविहउदीरए वा, दुविहउदीरए वा। पंच उदीरेमाणे आउय-वेयणिज्ज-मोहणिज्जवज्जाओ पंच कम्मप्पगडीओ उदीरेइ, दो उदीरेमाणे णामं च गोयं च उदीरेइ।

भावार्थ–११३ प्रश्न–हे भगवन् ! निर्ग्रंथ, कर्म की कितनी प्रकृतियों को उदीरता है ?

११३ उत्तर–हे गौतम ! पांच या दो कर्म-प्रकृतियों को उदीरता है। जब पांच की उदीरणा करता है, तो आयुष्य, वेदनीय और मोहनीय कर्म को छोड़ कर उदीरणा करता है और दो को उदीरता हुआ नाम और गोत्र–इन दो कर्म-प्रकृतियों को उदीरता है।

११४ प्रश्न–सिणाए–पुच्छा।

११४ उत्तर–गोयमा ! दुविहउदीरए वा अणुदीरए वा। दो उदीरेमाणे णामं च गोयं च उदीरेइ २३।

भावार्थ–११४ प्रश्न–हे भगवन् ! स्नातक, कर्म की कितनी प्रकृतियों को उदीरता है ?

११४ उत्तर–हे गौतम ! दो कर्म-प्रकृतियों की उदीरणा करता है अथवा उदीरणा नहीं भी करता है। दो को उदीरता हुआ नाम और गोत्र कर्म-प्रकृतियों को उदीरता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

**विवेचन**—पुलाक, आयुष्य और वेदनीय कर्म की उदीरणा नहीं करता, क्योंकि उसके उदीरणा करने योग्य अध्यवसाय नहीं होते। किन्तु वह पहले इन दोनों कर्मों की उदीरणा कर के पीछे पुलाकपन को प्राप्त होता है। इसी प्रकार आगे जिन-जिन कर्म-प्रकृतियों की उदीरणा का निषेध किया है, उन-उन कर्म-प्रकृतियों की उदीरणा पहले कर के पीछे बकुशादिपन को प्राप्त करता है। स्नातक सयोगी अवस्था में नामकर्म और गोत्र-कर्म का उदीरक होता है तथा आयुष्य और वेदनीय कर्म की उदीरणा तो सातवें गुणस्थान में ही बन्द हो जाती है। अयोगी अवस्था में तो वह अनुदीरक ही होता है।

## उपसंपद् हान द्वार

**११५ प्रश्न-पुलाए णं भंते ! पुलायत्तं जहमाणे किं जहइ, किं उवसंपज्जइ ?**

**११५ उत्तर-गोयमा ! पुलायत्तं जहइ, कसायकुसीलं वा असंजमं वा उवसंपज्जइ।**

**कठिन शब्दार्थ-जहमाणे**—छोड़ता हुआ, **जहइ**—छोड़ता है, **उवसंपज्जइ**—प्राप्त करता है।

**भावार्थ-११५ प्रश्न-हे भगवन् ! पुलाक, पुलाकपन का त्याग करते हुए क्या छोड़ते हैं और क्या प्राप्त करते है ?**

**११५ उत्तर-हे गौतम ! पुलाकपन छोड़ते हैं और कषाय-कुशीलपन या असंयम प्राप्त करते हैं।**

**११६ प्रश्न-बउसे णं भंते ! बउसत्तं जहमाणे किं जहइ, किं उवसंपज्जइ ?**

**११६ उत्तर-गोयमा ! बउसत्तं जहइ, पडिसेवणाकुसीलं वा**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कसायकुसीलं वा असंजमं वा संजमासंजमं वा उवसंपज्जइ ।

भावार्थ–११६ प्रश्न–हे भगवन् ! बकुश, बकुशपन छोड़ते हुए किसे छोड़ते हैं और किसे प्राप्त करते हैं ?

११६ उत्तर–हे गौतम ! बकुशपन छोड़ते हैं और प्रतिसेवना-कुशीलपन, कषाय-कुशीलपन, असंयम या संयमासंयम प्राप्त करते हैं ।

११७ प्रश्न–पडिसेवणाकुसीले णं भंते ! पडि०–पुच्छा ।

११७ उत्तर–गोयमा ! पडिसेवणाकुसीलत्तं जहइ, बउसं वा कसायकुसीलं वा असंजमं वा संजमासंजमं वा उवसंपज्जइ ।

भावार्थ–११७ प्रश्न–हे भगवन् ! प्रतिसेवना-कुशील, प्रतिसेवना-कुशीलपन त्यागते हुए क्या छोड़ते हैं और क्या प्राप्त करते हैं ?

११७ उत्तर–हे गौतम ! प्रतिसेवना-कुशीलपन को छोड़ते हैं और बकुशपन, कषाय-कुशीलपन, असंयम या संयमासंयम प्राप्त करते हैं ।

११८ प्रश्न–कसायकुसीले–पुच्छा ।

११८ उत्तर–गोयमा ! कसायकुसीलत्तं जहइ, पुलायं वा, बउसं वा पडिसेवणाकुसीलं वा, णियंठं वा, असंजमं वा, संजमासंजमं वा उवसंपज्जइ ।

भावार्थ–११८ प्रश्न–हे भगवन् ! कषाय-कुशील, कषाय-कुशीलपन को त्यागते हुए किसे छोड़ते हैं और किसे प्राप्त करते हैं ?

११८ उत्तर–हे गौतम ! कषाय-कुशीलपन छोड़ते हैं और पुलाकपन, बकुशपन, प्रतिसेवना-कुशीलपन, निर्ग्रंथपन, असंयम या संयमासंयम प्राप्त करते हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

११९ प्रश्न-णियंठे-पुच्छा ।

११९ उत्तर-गोयमा ! णियंठत्तं जहइ, कसायकुसीलं वा, सिणायं वा, असंजमं वा उवसंपज्जइ ।

भावार्थ-११९ प्रश्न-हे भगवन् ! निर्ग्रंथ, निर्ग्रंथपन त्यागते हुए क्या छोड़ते हैं और किसे प्राप्त करते हैं ?

११९ उत्तर-हे गौतम ! निर्ग्रंथपन छोड़ते हैं और कषाय-कुशीलपन, स्नातकपन या असंयम प्राप्त करते हैं ।

१२० प्रश्न-सिणाए-पुच्छा ।

१२० उत्तर-गोयमा ! सिणायत्तं जहइ, सिद्धिगइं उवसंपज्जइ २४ ।

भावार्थ-१२० प्रश्न-हे भगवन् ! स्नातक, स्नातकपन त्यागते हुए क्या छोड़ते हैं और किसे प्राप्त करते हैं ?

१२० उत्तर-हे गौतम ! स्नातकपन छोड़ते हैं और सिद्धगति प्राप्त करते हैं ।

विवेचन-पुलाक, पुलाकपन छोड़ कर उसके समान संयम-स्थानों के सद्भाव से कषाय-कुशीलपन को प्राप्त होते हैं । इस प्रकार जिस संयत के जैसे संयम-स्थान होते हैं, वह उसी भाव को प्राप्त होता है, किन्तु कषाय-कुशील अपने समान संयम-स्थानभूत पुलाकादि भावों को प्राप्त करते हैं और अविद्यमान समान संयम-स्थान रूप निर्ग्रंथ भाव को प्राप्त करते हैं । निर्ग्रन्थ, कषाय-कुशील या स्नातक भाव को प्राप्त करते हैं और स्नातक तो सिद्धगति ही प्राप्त करते हैं ।

निर्ग्रन्थ, उपशमश्रेणी और क्षपकश्रेणी करते है । उपशमश्रेणी करने वाले निर्ग्रन्थ, श्रेणी से गिरते हुए कषाय-कुशीलपन प्राप्त करते हैं और श्रेणी के शिखर पर मर कर देव रूप से उत्पन्न होते हुए असंयत होते है, किन्तु संयतासंयत (देशविरत) नहीं होते । क्योंकि देवों में संयतासंयतपन नहीं होता । यद्यपि निर्ग्रंथ श्रेणी से गिर कर संयतासंयत भी होते हैं, परन्तु उसका यहां कथन नहीं किया है । क्योंकि श्रेणी से गिर कर वे सीधे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संयतासंयत नहीं होते, किन्तु कषाय-कुशील हो कर संयतासंयत होते हैं । स्नातक, स्नातकपन को छोड़ कर मोक्ष में ही जाते हैं ।

## संज्ञा द्वार

१२१ प्रश्न–पुलाए णं भंते ! किं सण्णोवउत्ते होज्जा, णोसण्णोवउत्ते होज्जा ?

१२१ उत्तर–गोयमा ! णोसण्णोवउत्ते होज्जा ।

भावार्थ–१२१ प्रश्न–हे भगवन् ! पुलाक, संज्ञोपयुक्त (आहारादि संज्ञायुक्त) होते हैं या नोसंज्ञोपयुक्त (आहारादि संज्ञा रहित) ?

१२१ उत्तर–हे गौतम ! संज्ञोपयुक्त नहीं होते, नोसंज्ञोपयुक्त होते हैं ।

१२२ प्रश्न–बउसे णं भंते !–पुच्छा ।

१२२ उत्तर–गोयमा ! सण्णोवउत्ते वा होज्जा, णोसण्णोवउत्ते वा होज्जा । एवं पडिसेवणाकुसीले वि, एवं कसायकुसीले वि । णियंठे सिणाए य जहा पुलाए २५ ।

भावार्थ–१२२ प्रश्न–हे भगवन् ! बकुश, संज्ञोपयुक्त होते हैं या नोसंज्ञोपयुक्त ?

१२२ उत्तर–हे गौतम ! संज्ञोपयुक्त भी होते हैं और नोसंज्ञोपयुक्त भी । इसी प्रकार प्रतिसेवना-कुशील और कषाय-कुशील भी । निर्ग्रंथ और स्नातक पुलाक के समान नोसंज्ञोपयुक्त होते है ।

विवेचन–आहारादि संज्ञा में उपयुक्त अर्थात् आहारादि की अभिलाषा वाला 'संज्ञोपयुक्त' कहलाता है । आहारादि का उपभोग करने पर भी आहारादि के विषय में आसक्ति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रहित जीव 'नोसंज्ञोपयुक्त' कहलाता है। अतः आहारादि के विषय में आसक्ति रहित होने से पुलाक, निर्ग्रंथ और स्नातक 'नोसंज्ञोपयुक्त' होते हैं। यद्यपि निर्ग्रंथ और स्नातक तो वीतराग होने से नोसंज्ञोपयुक्त ही होते हैं, किन्तु 'पुलाक सरागी होने से नोसंज्ञोपयुक्त कैसे हो सकते हैं ?' इस प्रकार की शंका नहीं करनी चाहिये। क्योंकि सराग अवस्था में आसक्ति रहितपना सर्वथा नहीं हो सकता-ऐसी बात नहीं है। बकुशादि सराग होने पर भी संज्ञा रहित कहे हैं। इस विषय में चूर्णिकार ने कहा है कि-'नोसंज्ञा अर्थात् ज्ञान-संज्ञा।' इनमें पुलाक, निर्ग्रंथ और स्नातक नोसंज्ञोपयुक्त होते हैं अर्थात् ज्ञानप्रधान उपयोग वाले होते हैं, परन्तु आहारादि संज्ञा के उपयोग वाले नहीं होते। बकुश आदि तो संज्ञोपयुक्त और नोसंज्ञोपयुक्त-दोनों प्रकार के होते हैं, क्योंकि उनके इसी प्रकार के संयम-स्थानों का सद्भाव है।

## आहारक द्वार

**१२३ प्रश्न-पुलाए णं भंते ! किं आहारए होज्जा, अणाहारए होज्जा ?**

**१२३ उत्तर-गोयमा ! आहारए होज्जा, णो अणाहारए होज्जा। एवं जाव णियंठे।**

**भावार्थ-१२३ प्रश्न-हे भगवन् ! पुलाक, आहारक होते हैं या अनाहारक ?**

**१२३ उत्तर-हे गौतम ! आहारक होते हैं, अनाहारक नहीं होते। इसी प्रकार यावत् निर्ग्रन्थ पर्यन्त।**

**१२४ प्रश्न-सिणाए-पुच्छा।**

**१२४ उत्तर-गोयमा ! आहारए वा होज्जा, अणाहारए वा होज्जा २६।**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ-१२४ प्रश्न-हे भगवन् ! स्नातक, आहारक होते हैं या अनाहारक ?

१२४ उत्तर-हे गौतम ! आहारक भी होते हैं और अनाहारक भी ।

विवेचन-पुलाक से ले कर निर्ग्रंथ तक मुनियों के विग्रहगत्यादि रूप अनाहारकपने के कारण का अभाव होने से आहारकपना ही होता है । स्नातक केवली-समुद्घात के तीसरे, चौथे और पाँचवें समय में तथा अयोगी अवस्था में अनाहारक होते हैं । इसके अतिरिक्त शेष समय में आहारक होते हैं ।

## भव द्वार

१२५ प्रश्न-पुलाए णं भंते ! कइ भवग्गहणाइं होज्जा ?

१२५ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं एक्कं, उक्कोसेणं तिण्णि ।

भावार्थ-१२५ प्रश्न-हे भगवन् ! पुलाक, कितने भव ग्रहण करते हैं अर्थात् कितने भवों में पुलाकपन आता है ?

१२५ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य एक और उत्कृष्ट तीन भव ग्रहण करते हैं अर्थात् तीन भवों में पुलाकपना प्राप्त हो सकता है ।

१२६ प्रश्न-बउसे-पुच्छा ।

१२६ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं एक्कं, उक्कोसेणं अट्ठ । एवं पडिसेवणाकुसीले वि, एवं कसायकुसीले वि । णियंठे जहा पुलाए ।

भावार्थ-१२६ प्रश्न-हे भगवन् ! बकुश कितने भव ग्रहण करते हैं ?

१२६ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य एक और उत्कृष्ट आठ भव ग्रहण करते हैं अर्थात् आठ भवों में बकुशत्व आ सकता है । इसी प्रकार प्रतिसेवना-कुशील और कषाय-कुशील भी । निर्ग्रंथ का कथन पुलाक के समान है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१२७ प्रश्न-सिणाए-पुच्छा ।

१२७ उत्तर-गोयमा ! एक्कं २७ ।

भावार्थ-१२७ प्रश्न-हे भगवन् ! स्नातक कितने भव ग्रहण करते हैं ?

१२७ उत्तर-हे गौतम ! एक भव ग्रहण करते हैं ।

**विवेचन**-पुलाक जघन्यतः एक भव में पुलाक हो कर कषाय-कुशील आदि किसी भी संयतपन को एक बार या अनेक बार, उसी भव में या अन्य भव में प्राप्त कर के सिद्ध होता है और उत्कृष्ट देवादि भव से अन्तरित (बीच में देवादि भव) करते हुए तीन भव में पुलाकपन को प्राप्त कर सकता है ।

बकुश, प्रतिसेवना-कुशील और कषाय-कुशील के लिये जघन्य एक भव और उत्कृष्ट आठ भव कहे हैं । इसका तात्पर्य यह है कि कोई व्यक्ति एक भव में बकुशपन अथवा प्रतिसेवना एवं कषाय-कुशीलपन प्राप्त कर के सिद्ध होता है और कोई व्यक्ति एक भव में बकुशादिपन प्राप्त कर के भवान्तर में बकुशादिपन को प्राप्त किये बिना ही सिद्ध होता है । इसलिये बकुशादि के लिये जघन्य एक भव और उत्कृष्ट आठ भव कहे हैं, क्योंकि उत्कृष्ट आठ भव तक चारित्र की प्राप्ति होती है । इनमें से कोई तो आठ भव बकुशपन के और उनमें अन्तिम भव सकषायत्वादि युक्त बकुशपन से पूरा करता है और कोई एक भव प्रतिसेवनाकुशीलत्वादियुक्त बकुशपन से पूरा करता है और फिर उसी भव में मोक्ष चला जाता है ।

## आकर्ष द्वार

१२८ प्रश्न-पुलागस्स णं भंते ! एगभवग्गहणीया केवइया आगरिसा पण्णत्ता ?

१२८ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं एक्को, उक्कोसेणं तिण्णि ।

कठिन शब्दार्थ-आगरिसा-आकर्ष-चारित्र प्राप्ति ।

भावार्थ-१२८ प्रश्न-हे भगवन् ! पुलाक के एक भव में आकर्ष (पुलाकपन-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्राप्ति) कितने कहे हैं अर्थात् एक भव में पुलाकपना कितनी बार आता है ?

१२८ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य एक और उत्कृष्ट तीन आकर्ष होते हैं (एक भव में तीन बार आ सकता है)।

१२९ प्रश्न-बउसस्स णं-पुच्छा ।

१२९ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं एक्को, उक्कोसेणं सयग्गसो । एवं पडिसेवणाकुसीले वि, एवं कसायकुसीले वि ।

कठिन शब्दार्थ-सयग्गसो-शतपरिमाण-शतपृथक्त्व ।

भावार्थ-१२९ प्रश्न-हे भगवन् ! बकुश के एक भव में आकर्ष कितने होते हैं ?

१२९ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य एक और उत्कृष्ट शतपृथक्त्व आकर्ष होते हैं। इसी प्रकार प्रतिसेवना-कुशील और कषाय-कुशील भी ।

१३० प्रश्न-णियंठस्स णं-पुच्छा ।

१३० उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं एक्को, उक्कोसेणं दोण्णि ।

भावार्थ-१३० प्रश्न-हे भगवन् ! निर्ग्रंथ के एक भव में कितने आकर्ष होते हैं ?

१३० उत्तर-हे गौतम ! जघन्य एक और उत्कृष्ट दो आकर्ष होते हैं।

१३१ प्रश्न-सिणायस्स णं-पुच्छा ।

१३१ उत्तर-गोयमा ! एक्को ।

भावार्थ-१३१ प्रश्न-हे भगवन् ! स्नातक के एक भव में कितने आकर्ष होते हैं ?

१३१ उत्तर-हे गौतम ! एक आकर्ष होता है ।

१३२ प्रश्न-पुलागस्स णं भंते ! णाणाभवग्गहणीया केवइया

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आगरिसा पण्णत्ता ?

१३२ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं दोण्णि, उक्कोसेणं सत्त ।

भावार्थ-१३२ प्रश्न-हे भगवन् ! पुलाक के अनेक भवों में कितने आकर्ष होते हैं ?

१३२ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य दो और उत्कृष्ट सात आकर्ष होते हैं ।

१३३ प्रश्न-बउसस्स-पुच्छा ।

१३३ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं दोण्णि, उक्कोसेणं सहस्सग्गसो, एवं जाव कसायकुसीलस्स ।

भावार्थ-१३३ प्रश्न-हे भगवन् ! बकुश के अनेक भवों में कितने आकर्ष होते हैं ?

१३३ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य दो और उत्कृष्ट सहस्रपृथक्त्व आकर्ष होते हैं । इसी प्रकार यावत् कषाय-कुशील तक ।

१३४ प्रश्न-णियंठस्स णं-पुच्छा ।

१३४ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं दोण्णि, उक्कोसेणं पंच ।

भावार्थ-१३४ प्रश्न-हे भगवन् ! निर्ग्रन्थ के अनेक भवों में कितने आकर्ष होते हैं ?

१३४ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य दो और उत्कृष्ट पाँच आकर्ष होते हैं ।

१३५ प्रश्न-सिणायस्स-पुच्छा ।

१३५ उत्तर-गोयमा ! णत्थि एक्को वि २८ ।

भावार्थ-१३५ प्रश्न-हे भगवन् ! स्नातक के अनेक भवों में कितने आकर्ष होते हैं ?

१३५ उत्तर-हे गौतम ! एक भी आकर्ष नहीं होता ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

**विवेचन**–चारित्र की प्राप्ति को 'आकर्ष' कहा है। इस प्रकार का आकर्ष पुलाक के जघन्य एक और उत्कृष्ट तीन होते हैं। बकुश के जघन्य और उत्कृष्ट शतपृथक्त्व होते हैं।

निर्ग्रंथ के एक भव में जघन्य एक होता है और दो बार उपशम-श्रेणी करने से उत्कृष्ट दो आकर्ष होते हैं।

पुलाक के एक भव में एक और दूसरे भव में पुनः एक, इस प्रकार अनेक-भव में जघन्य दो आकर्ष होते हैं और उत्कृष्ट सात आकर्ष होते हैं। पुलाकपन उत्कृष्ट तीन भव में होता है। इनमें से एक भव में उत्कृष्ट तीन आकर्ष होते हैं। प्रथम भव में एक आकर्ष और दूसरे दो भवों में तीन-तीन आकर्ष होते हैं इत्यादि विकल्प से सात आकर्ष होते हैं।

बकुशपन के उत्कृष्ट आठ भव होते हैं। इनमें से प्रत्येक भव में उत्कृष्ट शत-पृथक्त्व आकर्ष हो सकते हैं। जबकि आठ भवों में उत्कृष्ट प्रत्येक भव में नौ सौ-नौ सौ आकर्ष हों, तो उनको आठ से गुणा करने पर सात हजार दो सौ होते हैं। इस प्रकार बकुश के अनेक भव की अपेक्षा सहस्रपृथक्त्व आकर्ष हो सकते हैं।

निर्ग्रंथपन के उत्कृष्ट तीन भव होते हैं। उनमें से प्रथम भव में दो आकर्ष और दूसरे भव में दो आकर्ष तथा तीसरे भव में एक आकर्ष होता है। क्षपक निर्ग्रंथपन का आकर्ष कर के सिद्ध होता है। इस प्रकार अनेक भवों में निर्ग्रंथपन के पाँच आकर्ष होते हैं। स्नातक तो उसी भव में सिद्ध हो जाते हैं। इसलिये उनके अनेक भव और आकर्ष नहीं होते।

## काल द्वार

**१३६ प्रश्न–पुलाए णं भंते ! कालओ केवचिरं होइ ?**

**१३६ उत्तर–गोयमा ! जहण्णेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेण वि अंतोमुहुत्तं।**

**भावार्थ–१३६ प्रश्न–हे भगवन् ! पुलाक कितने काल तक रहते हैं ?**

**१३६ उत्तर–हे गौतम ! जघन्य अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट भी अन्तर्मुहूर्त रहते हैं।**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१३७ प्रश्न-बउसे-पुच्छा ।

१३७ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं देसूणा पुव्वकोडी । एवं पडिसेवणाकुसीले वि, कसायकुसीले वि ।

भावार्थ-१३७ प्रश्न-हे भगवन् ! बकुशपन कितने काल तक रहता है ?

१३७ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य एक समय और उत्कृष्ट देशोन पूर्वकोटि वर्ष । इसी प्रकार प्रतिसेवना-कुशील और कषाय-कुशील भी ।

१३८ प्रश्न-णियंठे-पुच्छा ।

१३८ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं अंतोमुहुत्तं ।

भावार्थ-१३८ प्रश्न-हे भगवन् ! निर्ग्रंथपन कितने काल तक रहता है ?

१३८ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य एक समय और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त ।

१३९ प्रश्न-सिणाए-पुच्छा ।

१३९ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं देसूणा पुव्वकोडी ।

भावार्थ-१३९ प्रश्न-हे भगवन् ! स्नातकपन कितने काल तक रहता है ?

१३९ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट देशोन पूर्वकोटि वर्ष तक ।

विवेचन-पुलाकपन को प्राप्त हुए मुनि एक अन्तर्मुहूर्त पूरा न हो, तब तक नहीं मरते एवं पुलाकपन से गिरते भी नहीं अर्थात् कषाय-कुशीलपन में अन्तर्मुहूर्त पहले जाते नहीं और पुलाकपन में तो मरते ही नहीं है । इसलिये उनका काल जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त का होता है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बकुशपन की प्राप्ति होने पर तुरन्त ही मरण संभव होने से जघन्य एक समय तक बकुशपन रहता है। यदि पूर्वकोटि वर्ष की आयु वाला, सातिरेक आठ वर्ष की उम्र में संयम स्वीकार करें, तो उसकी अपेक्षा उत्कृष्ट काल देशोनपूर्वकोटि वर्ष होता है।

निर्ग्रन्थ का जघन्य काल एक समय है, क्योंकि उपशान्तमोह गुणस्थानवर्ती निर्ग्रन्थ प्रथम समय में भी मरण को प्राप्त हो सकते हैं। निर्ग्रन्थ का उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है, क्योंकि निर्ग्रन्थपन इतने काल तक ही रहता है। स्नातक का जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है, क्योंकि आयु के अन्तिम अन्तर्मुहूर्त में केवलज्ञान उत्पन्न होने पर जघन्य अन्तर्मुहूर्त के बाद वे मोक्ष जा सकते हैं। उत्कृष्ट काल तो देशोनपूर्वकोटि है, जिसका उल्लेख पहले कर दिया हैं।

**१४० प्रश्न-पुलाया णं भंते ! कालओ केवचिरं होंति ?**

**१४० उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं अंतोमुहुत्तं।**

भावार्थ-१४० प्रश्न-हे भगवन् ! पुलाक (बहुत) कितने काल तक रहते हैं ?

१४० उत्तर-हे गौतम ! जघन्य एक समय और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त।

**१४१ प्रश्न-बउसा णं-पुच्छा।**

**१४१ उत्तर-गोयमा ! सव्वद्धं एवं जाव कसायकुसीला। णियंठा जहा पुलाया, सिणाया जहा बउसा २९।**

भावार्थ-१४१ प्रश्न-हे भगवन् ! बकुश (बहुत) कितने काल तक रहते हैं ?

१४१ उत्तर-हे गौतम ! सर्वाद्धा (सर्व काल) रहते हैं। इसी प्रकार यावत् कषाय-कुशील पर्यन्त। निर्ग्रंथ पुलाक के समान और स्नातक बकुश के समान सदाकाल रहते हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

**विवेचन**–एक वचन सम्बन्धी पुलाक आदि का काल परिमाण बता कर, बहुवचन सम्बन्धी काल परिमाण बताया है। एक पुलाक अपने अन्तर्मुहूर्त के अन्तिम समय में वर्तमान है, उसी समय में दूसरा मुनि पुलाकपन को प्राप्त करे, तब दोनों पुलाकों का एक समय में सद्भाव होता है। इस प्रकार अनेक पुलाकों का (दो पुलाक हो, तो भी 'अनेक' कहलाते हैं) जघन्य काल एक समय होता है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त होता है, क्योंकि पुलाक एक समय में उत्कृष्ट सहस्रपृथक्त्व (दो हजार से नौ हजार तक) हो सकते हैं। वे बहुत होने पर भी उनका काल अन्तर्मुहूर्त ही होता है, किन्तु एक पुलाक की स्थिति के अन्तर्मुहूर्त से अनेक पुलाकों की स्थिति का अन्तर्मुहूर्त बड़ा होता है।

बकुशादि का स्थिति काल तो सर्वाद्धा (सर्व काल) होता है, क्योंकि वे सदैव मिलते हैं।

## अन्तर द्वार

**१४२ प्रश्न–पुलागस्स णं भंते ! केवइयं कालं अंतरं होइ ?**

**१४२ उत्तर–गोयमा ! जहण्णेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं अणंतं कालं, अणंताओ ओसप्पिणि-उस्सप्पिणीओ कालओ, खेत्तओ अवड्ढ-पोग्गलपरियट्टं देसूणं। एवं जाव णियंठस्स।**

भावार्थ–१४२ प्रश्न–हे भगवन् ! पुलाक का अन्तर कितने काल का होता है ?

१४२ उत्तर–हे गौतम ! जघन्य अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अनन्त काल। काल की अपेक्षा अनन्त अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी और क्षेत्र की अपेक्षा देशोन अपार्द्ध पुद्गल-परावर्तन का अन्तर होता है। इसी प्रकार यावत् निर्ग्रंथ तक।

**१४३ प्रश्न–सिणायस्स–पुच्छा।**

**१४३ उत्तर–गोयमा ! णत्थि अंतरं।**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ-१४३ प्रश्न-हे भगवन् ! स्नातक का अन्तर कितने काल का है ?

१४३ उत्तर-हे गौतम ! अन्तर नहीं होता ।

१४४ प्रश्न-पुलायाणं भंते ! केवइयं कालं अंतरं होइ ?

१४४ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं संखेज्जाइं वासाइं ।

भावार्थ-१४४ प्रश्न-हे भगवन् ! पुलाकों का अन्तर कितने काल का होता है ?

१४४ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य एक समय और उत्कृष्ट संख्यात वर्षों का ।

१४५ प्रश्न-बउसाणं भंते !-पुच्छा ।

१४५ उत्तर-गोयमा ! णत्थि अंतरं, एवं जाव कसायकुसीलाणं ।

भावार्थ-१४५ प्रश्न-हे भगवन् ! बकुशों का अन्तर कितने काल का होता है ?

१४५ उत्तर-हे गौतम ! अन्तर नहीं होता । इसी प्रकार यावत् कषाय-कुशील तक ।

१४६ प्रश्न-णियंठाणं-पुच्छा ।

१४६ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं छम्मासा सिणायाणं जहा बउसाणं ३० ।

भावार्थ-१४६ प्रश्न-हे भगवन् ! निर्ग्रंथों का अन्तर कितने काल का होता है ?

१४६ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य एक समय और उत्कृष्ट छह मास का । स्नातकों का कथन बकुशों के समान ।

विवेचन-अन्तर द्वार में यह बताया है कि पुलाक आदि पुनः कितने काल बाद

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पुनः पुलाकपन आदि को प्राप्त होते हैं। पुलाक, पुलाकपन छोड़ कर जघन्य अन्तर्मुहूर्त में पुनः पुलाक हो सकता है और उत्कृष्ट अनन्तकाल में पुलाकपन को प्राप्त होता है। वह अनन्तकाल अनन्त अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी रूप समझना चाहिये और क्षेत्र से देशोन अपार्द्ध पुद्गल-परावर्तन समझना चाहिये।

पुद्गल-परावर्तन का स्वरूप इस प्रकार है। कोई जीव आकाश के प्रत्येक प्रदेश पर मृत्यु को प्राप्त हो। इस प्रकार मरण से जितने काल में समस्त लोक को व्याप्त करे, उतना काल 'क्षेत्र पुद्गल-परावर्तन' कहलाता है। यहाँ देशोन अर्द्ध पुद्गल-परावर्तन काल पुलाकादि का अन्तर बताया है+। स्नातक का अन्तर नहीं होता, क्योंकि स्नातक का पतन नहीं होता, इसलिये उनका अन्तर नहीं पड़ता है।

## समुद्घात द्वार

**१४७ प्रश्न-पुलागस्स णं भंते ! कइ समुग्घाया पण्णत्ता ?**

**१४७ उत्तर-गोयमा ! तिण्णि समुग्घाया पण्णत्ता, तं जहा-वेयणासमुग्घाए, कसायसमुग्घाए, मारणंतियसमुग्घाए।**

**भावार्थ-१४७ प्रश्न-हे भगवन् ! पुलाक के समुद्घात कितने कहे हैं ?**

**१४७ उत्तर-हे गौतम ! तीन समुद्घात कहे हैं। यथा-वेदना-समुद्घात, कषाय-समुद्घात और मारणान्तिक-समुद्घात।**

**१४८ प्रश्न-बउसस्स णं भंते !-पुच्छा।**

**१४८ उत्तर-गोयमा ! पंच समुग्घाया पण्णत्ता, तं जहा-वेयणा-**

+ इस प्रकार का स्वरूप टीकाकारों ने और ग्रन्थकारों ने बताया है, किन्तु भगवती शतक १२ उद्देशक ४ में जो पुद्गल-परावर्तन का स्वरूप बताया है, उसका कथन पहले किया जा चुका है। यहाँ आगमोक्त वैक्रिय पुद्गल-परावर्तन का आधा समझना चाहिये—ऐसी प्राचीन धारणा है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समुग्घाए जाव तेयासमुग्घाए । एवं पडिसेवणाकुसीले वि ।

भावार्थ–१४८ प्रश्न–हे भगवन् ! बकुश के समुद्घात कितने कहे हैं ?

१४८ उत्तर–हे गौतम ! पांच समुद्घात कहे हैं। यथा- वेदना-समुद्घात यावत् तेजस्-समुद्घात । इसी प्रकार प्रतिसेवना-कुशील भी ।

१४९ प्रश्न–कसायकुसीलस्स–पुच्छा ।

१४९ उत्तर–गोयमा ! छ समुग्घाया पण्णत्ता, तं जहा–वेयणा-समुग्घाए जाव आहारगसमुग्घाए ।

भावार्थ–१४९ प्रश्न–हे भगवन् ! कषाय-कुशील के समुद्घात कितने कहे हैं ?

१४९ उत्तर–हे गौतम ! समुद्घात छह कहे हैं । यथा–वेदना-समुद्घात यावत् आहारक-समुद्घात ।

१५० प्रश्न–णियंठस्स णं–पुच्छा ।

१५० उत्तर–गोयमा ! णत्थि एको वि ।

भावार्थ–१५० प्रश्न–हे भगवन् ! निर्ग्रंथ के समुद्घात कितने कहे हैं ?

१५० उत्तर–हे गौतम ! एक भी समुद्घात नहीं होता ।

१५१ प्रश्न–सिणायस्स—पुच्छा ।

१५१ उत्तर–गोयमा ! एगे केवलिसमुग्घाए पण्णत्ते ३१ ।

भावार्थ–१५१ प्रश्न–हे भगवन् ! स्नातक के समुद्घात कितने कहे हैं ?

१५१ उत्तर–हे गौतम ! एक केवली-समुद्घात कहा हैं।

विवेचन–पुलाक में तीन समुद्घात कहे हैं। मुनियों में संज्वलन कषाय के उदय से

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कषाय-समुद्घात पाया जाता है। इस कारण पुलाक में भी कषाय-समुद्घात सम्भव है। पुलाक में मारणान्तिक-समुद्घात कहा है। यद्यपि पुलाक अवस्था में मरण नहीं होता, तथापि मारणान्तिक-समुद्घात होता है। क्योंकि मारणान्तिक-समुद्घात से निवृत्त होने पर कषाय-कुशीलत्वादि परिणाम के सद्भाव में उसका मरण होता है। अतः पुलाक में मारणान्तिक समुद्घात का सद्भाव है। निर्ग्रन्थ में एक भी समुद्घात नहीं होता, क्योंकि उसका उसी प्रकार का स्वभाव है।

## क्षेत्रावगाहन द्वार

**१५२ प्रश्न-पुलाए णं भंते ! लोगस्स किं १ संखेज्जइभागे होज्जा २ असंखेज्जइभागे होज्जा ३ संखेज्जेसु भागेसु होज्जा ४ असंखेज्जेसु भागेसु होज्जा ५ सव्वलोए होज्जा ?**

**१५२ उत्तर-गोयमा ! णो संखेज्जइभागे होज्जा, असंखेज्जइभागे होज्जा, णो संखेज्जेसु भागेसु होज्जा, णो असंखेज्जेसु भागेसु होज्जा, णो सव्वलोए होज्जा। एवं जाव णियंठे।**

भावार्थ-१५२ प्रश्न-हे भगवन् ! पुलाक, लोक के संख्यातवें भाग में होते हैं, असंख्यातवें भाग में होते हैं, संख्यात भागों में होते हैं, असंख्यात भागों में होते हैं या सम्पूर्ण लोक में होते हैं ?

१५२ उत्तर- हे गौतम ! संख्यातवें भाग में नहीं होते, असंख्यातवें भाग में होते है। संख्यात भागों में, असंख्यात भागों में और सम्पूर्ण लोक में भी नहीं होते। इसी प्रकार यावत् निर्ग्रंथ पर्यन्त।

**१५३ प्रश्न-सिणाए णं-पुच्छा।**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१५३ उत्तर–गोयमा ! णो संखेज्जइभागे होज्जा, असंखेज्जइभागे होज्जा, णो संखेज्जेसु भागेसु होज्जा, असंखेज्जेसु भागेसु होज्जा, सव्वलोए वा होज्जा ३२ ।

भावार्थ–१५३ प्रश्न–हे भगवन् ! स्नातक लोक के संख्यातवें भाग में होते हैं० ?

१५३ उत्तर–हे गौतम ! लोक के संख्यातवें भाग में और संख्यात भागों में नहीं होते, किन्तु असंख्यातवें भाग में और असंख्यात भागों में तथा सम्पूर्ण लोक में होते हैं ।

विवेचन–क्षेत्र द्वार का अर्थ है–अवगाहना क्षेत्र द्वार अर्थात् पुलाक आदि का शरीर लोक के कितने भाग को अवगाहित करता है ? पुलाक का शरीर लोक के असंख्यातवें भाग को अवगाहित करता है । इसी प्रकार यावत् निर्ग्रन्थ तक जानना चाहिये । स्नातक के विषय में यह समझना चाहिये कि केवलि-समुद्घात अवस्था में, जब स्नातक शरीरस्थ होते हैं या दण्ड, कपाट अवस्था में होते हैं, तब वह लोक के असंख्यातवें भाग में रहते हैं, क्योंकि केवली भगवान् का शरीर इतने क्षेत्र परिमाण ही होता है । मन्थानक अवस्था में केवली भगवान् के प्रदेशों से लोक का बहुत भाग व्याप्त हो जाता है और थोड़ा भाग अव्याप्त रहता है । अतः लोक के असंख्य भागों में रहते हैं और जब समग्र लोक को व्याप्त कर लेते हैं, तब सम्पूर्ण लोक में होते हैं ।

## क्षेत्र-स्पर्शना द्वार

१५४ प्रश्न–पुलाए णं भंते ! लोगस्स किं संखेज्जइभागं फुसइ, असंखेज्जइभागं फुसइ ?

१५४ उत्तर–एवं जहा ओगाहणा भणिया तहा फुसणा वि भाणियव्वा जाव सिणाए ३३ ।

कठिन शब्दार्थ–फुसणा–स्पर्शना ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

**भावार्थ**-१५४ प्रश्न-हे भगवन् ! पुलाक, लोक के संख्यातवें भाग को स्पर्श करता है या असंख्यातवें भाग को० ?

१५४ उत्तर-हे गौतम ! अवगाहना के अनुसार स्पर्शना भी जानना चाहिये । इसी प्रकार यावत् स्नातक पर्यन्त ।

**विवेचन**-स्पर्श द्वार में कहा है कि यह क्षेत्र अवगाहना द्वार के समान है । इस विषय में प्रश्न होता है कि जब दोनों समान है, तो पृथक् द्वार क्यों कहे हैं ? समाधान है कि--जितने प्रदेशों को अवगाहित कर शरीर रहता है, उतने क्षेत्र को 'क्षेत्रावगाहना' कहते हैं । अवगाढ़ क्षेत्र अर्थात् जितने क्षेत्र को अवगाहित कर शरीर रहा हुआ है, वह क्षेत्र और उसका पार्श्ववर्ती क्षेत्र जिसके साथ शरीर-प्रदेशों का स्पर्श हो रहा है, वह सारा क्षेत्र 'स्पर्शना क्षेत्र' कहलाता है ।

## भाव द्वार

१५५ प्रश्न-पुलाए णं भंते ! कयरम्मि भावे होज्जा ?

१५५ उत्तर-गोयमा ! खओवसमिए भावे होज्जा । एवं जाव कसायकुसीले ।

**कठिन शब्दार्थ**-कयरम्मि-किसमें ।

**भावार्थ**-१५५ प्रश्न-हे भगवन् ! पुलाक किस भाव में होते हैं ?

१५५ उत्तर-हे गौतम ! क्षायोपशमिक भाव में होते हैं । इसी प्रकार यावत् कषाय-कुशील पर्यन्त ।

१५६ प्रश्न-णियंठे-पुच्छा ।

१५६ उत्तर-गोयमा ! उवसमिए वा भावे होज्जा, खइए वा भावे होज्जा ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ-१५६ प्रश्न-हे भगवन् ! निर्ग्रंथ किस भाव में होते हैं ?

१५६ उत्तर-हे गौतम ! औपशमिक या क्षायिक भाव में होते हैं ।

१५७ प्रश्न-सिणाए-पुच्छा ।

१५७ उत्तर-गोयमा ! खइए भावे होज्जा ३४ ।

भावार्थ-१५७ प्रश्न-हे भगवन् ! स्नातक किस भाव में होते हैं ?

१५७ उत्तर-हे गौतम ! क्षायिक भाव में होते हैं ।

विवेचन--पुलाक से ले कर कषाय-कुशील तक क्षायोपशमिक भाव में, निर्ग्रंथ औपशमिक या क्षायिक भाव में और स्नातक क्षायिक भाव में होते हैं ।

## परिमाण द्वार

१५८ प्रश्न-पुलाया णं भंते ! एगसमएणं केवइया होज्जा ?

१५८ उत्तर-गोयमा ! पडिवज्जमाणए पडुच्च सिय अत्थि, सिय णत्थि । जइ अत्थि जहण्णेणं एक्को वा दो वा तिण्णि वा, उक्कोसेणं सयपुहुत्तं । पुव्वपडिवण्णए पडुच्च सिय अत्थि, सिय णत्थि । जइ अत्थि जहण्णेणं एक्को वा दो वा तिण्णि वा, उक्कोसेणं सहस्सपुहुत्तं ।

कठिन शब्दार्थ--पडिवज्जमाणए--प्रतिपद्यमान--तत्काल उस अवस्था को प्राप्त होता हुआ, पुव्वपडिवण्णए-पूर्वप्रतिपन्न-पहले ही उस अवस्था को प्राप्त किया हुआ ।

भावार्थ-१५८ प्रश्न-हे भगवन् ! पुलाक एक समय में कितने होते हैं ?

१५८ उत्तर-हे गौतम ! प्रतिपद्यमान (तत्काल पुलाकपन को प्राप्त

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

होते हुए) पुलाक कदाचित् होते हैं और कदाचित् नहीं होते। यदि होते हैं, तो जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट शतपृथक्त्व होते हैं। पूर्वप्रतिपन्न पुलाक भी कदाचित् होते हैं और नहीं भी होते। यदि होते हैं, तो जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट सहस्रपृथक्त्व होते हैं।

१५९ प्रश्न–बउसा णं भंते ! एगसमएणं–पुच्छा।

१५९ उत्तर–गोयमा ! पडिवज्जमाणए पडुच्च सिय अत्थि, सिय णत्थि। जइ अत्थि जहण्णेणं एक्को वा दो वा तिण्णि वा, उक्कोसेणं सयपुहुत्तं। पुव्वपडिवण्णए पडुच्च जहण्णेणं कोडिसयपुहुत्तं, उक्कोसेण वि कोडिसयपुहुत्तं। एवं पडिसेवणाकुसीले वि।

भावार्थ–१५९ प्रश्न–हे भगवन् ! बकुश एक समय में कितने होते हैं ?

१५९ उत्तर–हे गौतम ! प्रतिपद्यमान बकुश कदाचित् होते हैं और कदाचित् नहीं होते। यदि होते हैं, तो जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट शतपृथक्त्व होते हैं। पूर्वप्रतिपन्न बकुश जघन्य और उत्कृष्ट कोटिशत-पृथक्त्व होते हैं। इसी प्रकार प्रतिसेवना-कुशील भी।

१६० प्रश्न–कसायकुसीलाणं–पुच्छा।

१६० उत्तर–गोयमा ! पडिवज्जमाणए पडुच्च सिय अत्थि, सिय णत्थि। जइ अत्थि जहण्णेणं एक्को वा दो वा तिण्णि वा, उक्कोसेणं सहस्सपुहुत्तं। पुव्वपडिवण्णए पडुच्च जहण्णेणं कोडिसहस्सपुहुत्तं, उक्कोसेण वि कोडिसहस्सपुहुत्तं।

भावार्थ–१६० प्रश्न–हे भगवन् ! कषाय-कुशील एक समय में कितने होते हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१६० उत्तर-हे गौतम ! प्रतिपद्यमान कषाय-कुशील कदाचित् होते हैं और नहीं भी होते । यदि होते हैं, तो जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट सहस्रपृथक्त्व होते हैं । पूर्वप्रतिपन्न कषाय-कुशील जघन्य और उत्कृष्ट कोटिसहस्रपृथक्त्व (दो हजार करोड़ से नौ हजार करोड़) होते हैं ।

१६१ प्रश्न-णियंठाणं-पुच्छा ।

१६१ उत्तर-गोयमा ! पडिवज्जमाणए पडुच्च सिय अत्थि, सिय णत्थि, जइ अत्थि जहण्णेणं एक्को वा दो वा तिण्णि वा, उक्कोसेणं बावट्ठं सतं-अट्ठसयं खवगाणं, चउप्पण्णं उवसामगाणं । पुव्वपडिवण्णए पडुच्च सिय अत्थि, सिय णत्थि । जइ अत्थि जहण्णेणं एक्को वा दो वा तिण्णि वा, उक्कोसेणं सयपुहुत्तं ।

भावार्थ-१६१ प्रश्न-हे भगवन् ! निर्ग्रन्थ एक समय में कितने होते हैं ?

१६१ उत्तर-हे गौतम ! प्रतिपद्यमान निर्ग्रंथ कदाचित् होते हैं और नहीं भी होते । यदि होते हैं, तो जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट एक सौ बासठ होते हैं, इनमें क्षपक-श्रेणी वाले १०८ और उपशम-श्रेणी वाले ५४-ये दोनों मिला कर १६२ होते हैं । पूर्वप्रतिपन्न निर्ग्रंथ कदाचित् होते हैं और नहीं भी होते । यदि होते हैं, तो जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट शतपृथक्त्व होते हैं ।

१६२ प्रश्न-सिणायाणं-पुच्छा ।

१६२ उत्तर-गोयमा ! पडिवज्जमाणए पडुच्च सिय अत्थि, सिय

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णत्थि, जइ अत्थि जहण्णेणं एको वा दो वा तिण्णि वा, उक्कोसेणं अट्ठसयं । पुव्वपडिवण्णए पडुच्च जहण्णेणं कोडिपुहुत्तं, उक्कोसेणं वि कोडिपुहुत्तं ३५ ।

भावार्थ-१६२ प्रश्न-हे भगवन् ! स्नातक एक समय में कितने होते हैं ?

१६२ उत्तर-हे गौतम ! प्रतिपद्यमान स्नातक कदाचित् होते हैं या नहीं होते । यदि होते हैं, तो जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट १०८ होते हैं । पूर्वप्रतिपन्न जघन्य और उत्कृष्ट कोटिपृथक्त्व होते हैं ।

विवेचन-सभी संयतों (साधुओं) का परिमाण कोटिसहस्रपृथक्त्व है और यहां तो केवल कषाय-कुशील मुनियों का ही इतना परिमाण (कोटिसहस्रपृथक्त्व) बताया है । उनमें पुलाकादि की संख्या को मिलाने से तो कोटिसहस्रपृथक्त्व से अधिक संख्या हो जायगी । फिर यथोक्त परिमाण में विरोध कैसे नहीं आएगा ? इस शंका का समाधान यह है कि कषाय-कुशील संयतों का जो कोटिसहस्रपृथक्त्व परिमाण कहा है, वह दो, तीन कोटिसहस्ररूप जानना चाहिये । उसमें पुलाक, बकुशादि की संख्या को मिला देने पर भी सर्व संयतों का परिमाण जो कहा है, उससे अधिक संख्या नहीं होगी अर्थात् सर्व संयतों का परिमाण कोटिसहस्रपृथक्त्व ही होता है ।

## अल्प-बहुत्व द्वार

१६३ प्रश्न-एएसि णं भंते ! पुलाग-बउस-पडिसेवणाकुसील-कसायकुसील-णियंठ-सिणायाणं कयरे कयरे जाव विसेसाहिया वा ?

१६३ उत्तर-गोयमा ! सव्वत्थोवा णियंठा, पुलाया संखेज्जगुणा, सिणाया संखेज्जगुणा, बउसा संखेज्जगुणा, पडिसेवणाकुसीला संखेज्ज-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गुणा, कसायकुसीला संखेज्जगुणा ।

॥ 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति जाव विहरइ ॥

॥ पणवीसइमे सए छट्ठो उद्देसओ समत्तो ॥

भावार्थ—१६३ प्रश्न—हे भगवन् ! पुलाक, बकुश, प्रतिसेवना कुशील, कषायकुशील, निर्ग्रंथ और स्नातक, इनमें कौन किससे अल्प, बहुत्व, तुल्य या विशेषाधिक हैं ?

१६३ उत्तर—हे गौतम ! सब से थोड़े निर्ग्रंथ हैं, उनसे पुलाक संख्यात गुण हैं, उनसे स्नातक संख्यात गुण हैं, उनसे बकुश संख्यात गुण हैं, उनसे प्रतिसेवना-कुशील संख्यात गुण हैं और उनसे कषाय-कुशील संख्यात गुण हैं ।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'—कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

विवेचन—बकुश और प्रतिसेवना-कुशील का परिमाण कोटिशतपृथक्त्व कहा है, तो अल्प-बहुत्व में बकुश से प्रतिसेवना-कुशील संख्यात गुण कहे हैं, यह कैसे घटित होगा ? इस शंका का समाधान यह है कि बकुश का परिमाण जो कोटिशतपृथक्त्व कहा है, वह दो, तीन कोटिशतरूप जानना चाहिये और प्रतिसेवना-कुशील का कोटिशतपृथक्त्व परिमाण चार, छह कोटिशत रूप जानना चाहिये । इस प्रकार उक्त अल्प-बहुत्व में किसी प्रकार का विरोध नहीं है । प्रतिसेवना-कुशील और कषाय-कुशील का अल्प-बहुत्व जो संख्यात गुण कहा है, वह तो स्पष्ट ही है, क्योंकि उनका परिमाण कोटिसहस्रपृथक्त्व बताया है ।

॥ पच्चीसवें शतक का छठा उद्देशक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# शतक २५ उद्देशक ७

## संयत के भेद

१ प्रश्न--कइ णं भंते ! संजया पण्णत्ता ?

१ उत्तर--गोयमा ! पंच संजया पण्णत्ता, तं जहा--सामाइय-संजए २ छेओवट्ठावणियसंजए ३ परिहारविसुद्धियसंजए ४ सुहुम-संपरायसंजए ५ अहक्खायसंजए ।

भावार्थ--१ प्रश्न--हे भगवन् ! संयत कितने प्रकार के कहे हैं ?

१ उत्तर--हे गौतम ! संयत पांच प्रकार के कहे हैं। यथा--१ सामायिक संयत, २ छेदोपस्थापनीय संयत, ३ परिहारविशुद्धिक संयत, ४ सूक्ष्म-सम्पराय संयत और ५ यथाख्यात संयत ।

२ प्रश्न--सामाइयसंजए णं भंते ! कइविहे पण्णत्ते ?

२ उत्तर--गोयमा ! दुविहे पण्णत्ते, तं जहा--इत्तरिए य आवक-हिए य ।

कठिन शब्दार्थ--इत्तरिए--इत्वरिक--अल्पकालीन, आवकहिए--यावत्कथिक--जीवनपर्यन्त ।

भावार्थ--२ प्रश्न--हे भगवन् ! सामायिक संयत कितने प्रकार के कहे हैं ?

२ उत्तर--हे गौतम ! सामायिक संयत दो प्रकार के कहे हैं। यथा--इत्वरिक और यावत्कथिक ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

३ प्रश्न-छेओवट्ठावणियसंजए णं-पुच्छा ।

३ उत्तर-गोयमा ! दुविहे पण्णत्ते, तं जहा-साइयारे य णिरइयारे य ।

भावार्थ-३ प्रश्न-हे भगवन् ! छेदोपस्थापनीय संयत कितने प्रकार के कहे हैं ?

३ उत्तर-हे गौतम ! दो प्रकार के कहे हैं । यथा-सातिचार और निरतिचार ।

४ प्रश्न-परिहारविसुद्धियसंजए-पुच्छा ।

४ उत्तर-गोयमा ! दुविहे पण्णत्ते ,तं जहा-णिव्विसमाणए य णिव्विट्ठकाइए य ।

भावार्थ-४ प्रश्न-हे भगवन् ! परिहारविशुद्धिक संयत कितने प्रकार के कहे हैं ?

४ उत्तर-हे गौतम ! दो प्रकार के । यथा-निर्विशमानक और निर्विष्टकायिक ।

५ प्रश्न-सुहुमसंपराय-पुच्छा ।

५ उत्तर-गोयमा ! दुविहे पण्णत्ते, तं जहा-संकिलिस्समाणए य विसुद्धमाणए य ।

भावार्थ-५ प्रश्न-हे भगवन् ! सूक्ष्म-संपराय संयत कितने प्रकार के हैं ?

५ उत्तर-हे गौतम ! दो प्रकार के । यथा-संक्लिश्यमानक और विशुद्धयमानक ।

६ प्रश्न-अहक्खायसंजए-पुच्छा ।

६ उत्तर-गोयमा ! दुविहे पण्णत्ते, तं जहा-छउमत्थे य केवली य ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ-६ प्रश्न-हे भगवन् ! यथाख्यात संयत कितने प्रकार के हैं ?
६ उत्तर-हे गौतम ! दो प्रकार के । यथा-छद्मस्थ और केवली ।

## संयतों का स्वरूप

सामाइयंमि उ कए चाउज्जामं अणुत्तरं धम्मं ।
तिविहेणं फासयंतो सामाइयसंजओ स खलु ॥ १ ॥
छेत्तूण उ परियागं पोराणं जो ठवेइ अप्पाणं ।
धम्मंमि पंचजामे छेओवट्ठावणो स खलु ॥ २ ॥
परिहरइ जो विसुद्धं तु पंचजामं अणुत्तरं धम्मं ।
तिविहेणं फासयंतो परिहारियसंजओ स खलु ॥ ३ ॥
लोभाणू वेययंतो जो खलु उवसामओ व खवओ वा ।
सो सुहुमसंपराओ अहखाया ऊणओ किंचि ॥ ४ ॥
उवसंते खीणंमि व जो खलु कम्मंमि मोहणिज्जंमि ।
छउमत्थो व जिणो वा अहखाओ संजओ स खलु ॥५॥(१)

भावार्थ-गाथाओं का अर्थ-सामायिक चारित्र को स्वीकार करने के पश्चात् चार महाव्रत रूप अनुत्तर (प्रधान) धर्म को जो मन, वचन और काया से त्रिविध (तीन करण से) पालन करता है, वह 'सामायिक संयत' कहलाता है ॥१॥

पूर्व पर्याय का छेदन कर के जो अपनी आत्मा को पाँच महाव्रत रूप धर्म में स्थापित करता है, वह 'छेदोपस्थापनीय संयत' कहलाता है ॥२॥

जो पाँच महाव्रत रूप अनुत्तर धर्म को मन, वचन और काया से,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

त्रिविध पालन करता हुआ अमुक प्रकार का तप करता है, वह 'परिहार-विशुद्धिक संयत' कहलाता है ॥ ३ ॥

जो सूक्ष्म लोभ को वेदता हुआ चारित्र मोहनीय कर्म का उपशम करता है या क्षय करता है, वह 'सूक्ष्म-संपराय संयत' कहलाता है। यह यथाख्यात संयत से कुछ हीन होता है ॥४॥

मोहनीय कर्म के उपशान्त अथवा क्षीण हो जाने पर जो छद्मस्थ या जिन (केवली) होता है, वह 'यथाख्यात संयत' कहलाता है ॥५॥

**विवेचन**—सामायिकादि पाँच चारित्र हैं। अतः जो सामायिक आदि चारित्र के पालक हैं, वे सामायिक आदि 'संयत' कहलाते हैं। इनके दो भेद हैं—इत्वरिक और यावत्कथिक। इत्वर का अर्थ है-अल्पकाल। चारित्र ग्रहण करने के पश्चात् भविष्य में दूसरी बार छेदोपस्थापनीय संयतपन का व्यपदेश (व्यवहार) हो, उसे 'इत्वरिक सामायिक संयत' कहते हैं। प्रथम और अन्तिम तीर्थंकर भगवान् के तीर्थ में, जब तक शिष्य में महाव्रत का आरोपण नहीं किया जाता, तब तक उस शिष्य के इत्वरकालिक सामायिक समझनी चाहिये। यावज्जीवन की सामायिक 'यावत्कथिक सामायिक' कहलाती है। प्रथम और अन्तिम तीर्थंकर भगवान् के मध्य के बाईस तीर्थंकर भगवान् एवं महाविदेह क्षेत्र के सभी तीर्थंकरों के तीर्थ में सामायिक चारित्र लेने के पश्चात् पुनः दूसरा व्यपदेश नहीं होता। इसलिये उन्हें 'यावत्कथिक सामायिक संयत' कहते हैं।

जिस चारित्र में पूर्व पर्याय का छेद और महाव्रतों में उपस्थापन (आरोपण) होता है, उसे 'छेदोपस्थापनीय चारित्र' कहते हैं अथवा पूर्व पर्याय का छेद कर के जो महाव्रत दिये जाते हैं, उसे 'छेदोपस्थापनीय चारित्र' कहते हैं। यह चारित्र भरत क्षेत्र और ऐरावत क्षेत्र के प्रथम और अन्तिम तीर्थंकरों के तीर्थ में ही होता है। मध्यवर्ती तीर्थंकरों के तीर्थ में नहीं होता। इसके दो भेद हैं—सातिचार और निरतिचार। इत्वर सामायिक वाले साधु के और एक तीर्थ से दूसरे तीर्थ में जाने वाले साधु के जो व्रतों का आरोपण होता है, वह 'निरतिचार छेदोपस्थापनीय चारित्र' है। मूल गुणों का घात करने वाले साधु के जो व्रतों का आरोपण होता है, वह 'सातिचार छेदोपस्थापनीय चारित्र' है। छेदोपस्थापनीय चारित्र वाले साधु प्रथम और अन्तिम तीर्थंकर के तीर्थ में ही होते हैं।

जिस चारित्र में परिहार (तप विशेष) से कर्म-निर्जरा रूप शुद्धि होती है, उसे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'परिहारविशुद्धि चारित्र' कहते हैं। नौ साधुओं का गण, परिहार तप अंगीकार करता है। इसका विस्तृत वर्णन पहले लिखा जा चुका है। इसके दो भेद हैं-निर्विशमानक और निर्विष्टकायिक। तप करने वाले पारिहारिक साधु- निर्विशमानक' कहलाते हैं और तप कर के वैयावृत्य करने वाले-आनुपारिहारिक साधु तथा तप करने के बाद गुरु-पद पर रहा वाले---आनु हुआ साधु, 'निर्विष्टकायिक' कहलाता है।

जिस चारित्र में सूक्ष्म-सम्पराय (संज्वलन लोभ का सूक्ष्म अंश) रहता है, उसे 'सूक्ष्म-संपराय चारित्र' कहते हैं। इसके संक्लिश्यमानक और विशुद्धचमानक, ये दो भेद हैं। उपशम-श्रेणी से गिरते हुए साधु के परिणाम संक्लेशयुक्त होते हैं, इसलिये उसका चारित्र 'संक्लिश्यमान सूक्ष्म-सम्पराय चारित्र' कहलाता है। क्षपक-श्रेणी या उपशम-श्रेणी पर चढ़ने वाले साधु के परिणाम उत्तरोत्तर विशुद्ध रहने से उसका चारित्र 'विशुद्धचमान सूक्ष्म-सम्पराय चारित्र' कहलाता है।

कषाय का सर्वथा उदय न होने से अतिचार रहित, पारमार्थिक रूप से प्रसिद्ध चारित्र, 'यथाख्यात चारित्र' कहलाता है अथवा अकषायी साधु का निरतिचार यथार्थ चारित्र 'यथाख्यात चारित्र' कहलाता है। यथाख्यात चारित्र के छद्मस्थ और केवली, ये दो भेद हैं अथवा उपशान्तमोह और क्षीणमोह अथवा प्रतिपाती और अप्रतिपाती—इस प्रकार इसके दो भेद हैं। केवली-यथाख्यात चारित्र के 'सयोगी केवली' और 'अयोगी केवली'—ये दो भेद हैं।

इन पाँचों चारित्रों का पालन करने वाले संयतों का संक्षिप्त स्वरूप मूल की गाथाओं में ही बता दिया है।

## सवेदी-अवेदी

**७ प्रश्न-सामाइयसंजए णं भंते ! किं सवेयए होज्जा अवेयए होज्जा ?**

**७ उत्तर-गोयमा ! सवेयए वा होज्जा, अवेयए वा होज्जा। जइ सवेयए-एवं जहा कसायकुसीले तहेव णिरवसेसं। एवं छेओवट्ठा-**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वणियसंजए वि । परिहारविसुद्धियसंजओ जहा पुलाओ । सुहुम-संपरायसंजओ अहक्खायसंजओ य जहा णियंठो (२) ।

भावार्थ–७ प्रश्न–हे भगवन् ! सामायिक संयत, सवेदी होते हैं या अवेदी ?

७ उत्तर–हे गौतम ! सवेदी भी होते हैं और अवेदी भी । यदि सवेदी होते हैं आदि सभी कथन 'कषाय-कुशील' के समान है । इसी प्रकार छेदोपस्थाप-नीय संयत भी । परिहारविशुद्धिक संयत पुलाक के समान है । सूक्ष्म-संपराय संयत और यथाख्यात संयत, निर्ग्रन्थवत् है । (२)

विवेचन–सामायिक संयत, सवेदी और अवेदी दोनों होते हैं, क्योंकि नौवें गुणस्थान तक सामायिक चारित्र होता है और नौवें गुणस्थान में वेद का उपशम अथवा क्षय होता है । इसलिये वहां सामायिक संयत 'अवेदक' होता है और उससे पूर्व 'सवेदक' होता है । यदि वह सवेदक होता है, तो तीन वेद वाला होता है । यदि अवेदी होता है, तो उपशान्तवेदी या क्षीणवेदी होता है ।

परिहारविशुद्धिक संयत, पुलाक के समान पुरुषवेदी या पुरुषनपुंसकवेदी होता है ।

सूक्ष्म-संपराय संयत और यथाख्यात संयत, उपशान्तवेदी या क्षीणवेदी होने से अवेदी होते हैं ।

## सराग-वीतराग

८ प्रश्न–सामाइयसंजए णं भंते ! किं सरागे होज्जा वीयरागे होज्जा ?

८ उत्तर–गोयमा ! सरागे होज्जा, णो वीयरागे होज्जा । एवं जाव सुहुमसंपरायसंजए । अहक्खायसंजए जहा णियंठे (३) ।

भावार्थ–८ प्रश्न–हे भगवन् ! सामायिक संयत, सराग होते हैं या वीतराग ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

८ उत्तर–हे गौतम ! सराग होते हैं, वीतराग नहीं । इसी प्रकार यावत् सूक्ष्म-संपराय संयत पर्यन्त । यथाख्यात संयत निर्ग्रन्थ के समान है (३)।

## स्थित-कल्प अस्थित-कल्प

९ प्रश्न–सामाइयसंजए णं भंते । किं ठियकप्पे होज्जा, अट्ठियकप्पे होज्जा ?

९ उत्तर–गोयमा ! ठियकप्पे वा होज्जा, अट्ठियकप्पे वा होज्जा ।

भावार्थ–९ प्रश्न–हे भगवन् ! सामायिक संयत स्थित-कल्प में होते हैं या अस्थित-कल्प में ?

९ उत्तर–हे गौतम ! स्थित-कल्प में भी होते हैं और अस्थित-कल्प में भी ।

१० प्रश्न–छेओवट्ठावणियसंजए--पुच्छा ।

१० उत्तर–गोयमा ! ठियकप्पे होज्जा, णो अट्ठियकप्पे होज्जा । एवं परिहारविसुद्धियसंजए वि । सेसा जहा सामाइयसंजए ।

भावार्थ–१० प्रश्न–हे भगवन् ! छेदोपस्थापनीय संयत स्थित-कल्प में होते हैं या अस्थित-कल्प में ?

१० उत्तर–हे गौतम ! स्थित-कल्प में होते हैं, अस्थित-कल्प में नहीं होते । इसी प्रकार परिहारविशुद्धि संयत भी । सूक्ष्म-संपराय और यथाख्यात संयत का कथन सामायिक संयत के समान है ।

११ प्रश्न–सामाइयसंजए णं भंते ! किं जिणकप्पे होज्जा, थेर-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कप्पे होज्जा, कप्पाईए होज्जा ?

११ उत्तर–गोयमा ! जिणकप्पे वा होज्जा, जहा कसायकुसीले तहेव णिरवसेसं। छेओवट्ठावणिओ परिहारविसुद्धिओ य जहा बउसो, सेसा जहा णियंठे (४)।

भावार्थ–११ प्रश्न–हे भगवन् ! सामायिक संयत, जिनकल्प में होते हैं, स्थविरकल्प में होते हैं या कल्पातीत ?

११ उत्तर–हे गौतम ! जिनकल्प में होते हैं इत्यादि सारा कथन कषाय-कुशील के समान है। छेदोपस्थापनीय और परिहारविशुद्धि संयत का कथन बकुश के समान हैं। सूक्ष्म-संपराय और यथाख्यात संयत निर्ग्रन्थ के समान हैं (४)।

विवेचन–अस्थित कल्प, मध्य के बाईस तीर्थंकरों के तीर्थ में और महाविदेह क्षेत्र के तीर्थंकरों के तीर्थ में होता है। वहाँ छेदोपस्थापनीय चारित्र और परिहारविशुद्धि चारित्र नहीं होता। इसलिये छेदोपस्थापनीय संयत और परिहारविशुद्धि संयत, अस्थित कल्प में नहीं होते।

## संयत पुलाकादि निर्ग्रंथ होते हैं ?

१२ प्रश्न–सामाइयसंजए णं भंते ! किं पुलाए होज्जा, बउसे जाव सिणाए होज्जा ?

१२ उत्तर–गोयमा ! पुलाए वा होज्जा, बउसे जाव कसायकुसीले वा होज्जा, णो णियंठे होज्जा, णो सिणाए होज्जा। एवं छेओवट्ठावणिए वि।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ-१२ प्रश्न-हे भगवन् ! सामायिक संयत पुलाक, बकुश यावत् स्नातक होते हैं ?

१२ उत्तर-हे गौतम ! पुलाक, बकुश यावत् कषाय-कुशील होते हैं, किन्तु निर्ग्रंथ और स्नातक नहीं होते । इसी प्रकार छेदोपस्थापनीय संयत भी ।

१३ प्रश्न-परिहारविसुद्धियसंजए णं भंते !-पुच्छा ।

१३ उत्तर-गोयमा ! णो पुलाए, णो बउसे, णो पडिसेवणा-कुसीले होज्जा, कसायकुसीले होज्जा, णो णियंठे होज्जा, णो सिणाए होज्जा । एवं सुहुमसंपराए वि ।

भावार्थ-१३ प्रश्न-हे भगवन् ! परिहारविशुद्धिक संयत, पुलाक यावत् स्नातक होते हैं ?

१३ उत्तर-हे गौतम ! पुलाक, बकुश, प्रतिसेवना-कुशील और निर्ग्रंथ तथा स्नातक नहीं होते, किन्तु कषाय-कुशील होते हैं । इसी प्रकार सूक्ष्म-संपराय संयत भी ।

१४ प्रश्न-अहक्खायसंजए-पुच्छा ।

१४ उत्तर-गोयमा ! णो पुलाए होज्जा जाव णो कसायकुसीले होज्जा, णियंठे वा होज्जा, सिणाए वा होज्जा (५) ।

भावार्थ-१४ प्रश्न-हे भगवन् ! यथाख्यात संयत, पुलाक यावत् स्नातक होते हैं ?

१४ उत्तर-हे गौतम ! पुलाक यावत् कषाय-कुशील नहीं होते, किन्तु निर्ग्रंथ या स्नातक होते हैं (५) ।

विवेचन-चारित्र द्वार में पुलाकादि का कथन किया है । इसका कारण यह है कि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पुलाक आदि परिणाम भी चारित्र रूप ही है ।

## प्रतिसेवना

१५ प्रश्न–सामाइयसंजए णं भंते ! किं पडिसेवए होज्जा, अपडिसेवए होज्जा ?

१५ उत्तर–गोयमा ! पडिसेवए वा होज्जा, अपडिसेवए वा होज्जा । जइ पडिसेवए होज्जा, किं मूलगुणपडिसेवए होज्जा, सेसं जहा पुलागस्स । जहा सामाइयसंजए एवं छेओवट्ठावणिए वि ।

भावार्थ–१५ प्रश्न–हे भगवन् ! सामायिक संयत, प्रतिसेवी होते हैं या अप्रतिसेवी ?

१५ उत्तर–हे गौतम ! प्रतिसेवी भी होते हैं और अप्रतिसेवी भी ।

प्रश्न–हे भगवन् ! यदि प्रतिसेवी होते हैं, तो 'मूलगुण प्रतिसेवी' होते हैं० ?

उत्तर–शेष कथन पुलाक के समान । सामायिक संयत के समान छेदोपस्थापनीय संयत भी जानना चाहिए ।

१६ प्रश्न–परिहारविसुद्धियसंजए–पुच्छा ।

१६ उत्तर–गोयमा ! णो पडिसेवए होज्जा, अपडिसेवए होज्जा । एवं जाव अहक्खायसंजए (६) ।

भावार्थ–१६ प्रश्न–हे भगवन् ! परिहारविशुद्धिक संयत 'प्रतिसेवी' होते हैं या 'अप्रतिसेवी' ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१६ उत्तर-हे गौतम ! प्रतिसेवी नहीं होते, अप्रतिसेवी होते हैं। इसी प्रकार यावत् यथाख्यात संयत तक (६)।

## ज्ञान द्वार

१७ प्रश्न-सामाइयसंजए णं भंते ! कइसु णाणेसु होज्जा ?

१७ उत्तर-गोयमा ! दोसु वा तिसु वा चउसु वा णाणेसु होज्जा, एवं जहा कसायकुसीलस्स तहेव चत्तारि णाणाइं भयणाए, एवं जाव सुहुमसंपराए। अहक्खायसंजयस्स पंच णाणाइं भयणाए जहा णाणुद्देसए।

भावार्थ-१७ प्रश्न-हे भगवन् ! सामायिक संयत में ज्ञान कितने होते हैं ?

१७ उत्तर-हे गौतम ! दो, तीन अथवा चार ज्ञान होते है। इनमें कषाय-कुशील के समान चार ज्ञान की भजना होती है। इसी प्रकार यावत् सूक्ष्म-संपराय संयत पर्यन्त तथा ज्ञानोद्देशक (शतक ८ उद्देशक २) के अनुसार यथाख्यात संयत के पाँच ज्ञान भजना (विकल्प) से होते हैं।

विवेचन-यथाख्यात संयत के लिए पाँच ज्ञान की भजना कही है। इसका कारण यह है कि यथाख्यात संयत के दो भेद हैं-केवली और छद्मस्थ। केवली यथाख्यात संयत के एक केवलज्ञान ही होता है। छद्मस्थ-वीतराग-यथाख्यात संयत के दो, तीन या चार ज्ञान होते हैं। इसके लिए 'ज्ञानोद्देशक' का अतिदेश किया है। यह आठवें शतक के दूसरे उद्देशक में, ज्ञान वक्तव्यता प्रतिपादन करने वाला अवान्तर प्रकरण है।

## श्रुत द्वार

१८ प्रश्न-सामाइयसंजए णं भंते ! केवइयं सुयं अहिज्जेज्जा ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१८ उत्तर–गोयमा ! जहण्णेणं अट्ठ पवयणमायाओ, जहा कसायकुसीले । एवं छेओवट्ठावणिए वि ।

भावार्थ–१८ प्रश्न–हे भगवन् ! सामायिक संयत कितना श्रुत पढ़ते हैं ?

१८ उत्तर–हे गौतम ! जघन्य आठ प्रवचन-माता इत्यादि सारा वर्णन कषाय-कुशील के समान । इसी प्रकार छेदोपस्थापनीय संयत भी ।

१९ प्रश्न–परिहारविसुद्धियसंजए–पुच्छा ।

१९ उत्तर–गोयमा ! जहण्णेणं णवमस्स पुव्वस्स तइयं आयार-वत्थुं, उक्कोसेणं असंपुण्णाइं दस पुव्वाइं अहिज्जेज्जा । सुहुमसंपराय-संजए जहा सामाइयसंजए ।

भावार्थ–१९ प्रश्न–हे भगवन् ! परिहारविशुद्धिक संयत कितना श्रुत पढ़ते हैं ?

१९ उत्तर–हे गौतम ! जघन्य नौवें पूर्व की तीसरी आचार वस्तु और उत्कृष्ट दस पूर्व असम्पूर्ण पढ़ते हैं । सूक्ष्म-संपराय संयत, सामायिक संयत के समान है ।

२० प्रश्न–अहक्खायसंजए–पुच्छा ।

२० उत्तर–गोयमा ! जहण्णेणं अट्ठ पवयणमायाओ, उक्कोसेणं चोद्दस पुव्वाइं अहिज्जेज्जा, सुयवइरित्ते वा होज्जा (७) ।

भावार्थ–२० प्रश्न–हे भगवन् ! यथाख्यात संयत कितना श्रुत पढ़ते हैं ?

२० उत्तर–हे गौतम ! जघन्य आठ प्रवचन-माता और उत्कृष्ट चौदह पूर्व पढ़ते हैं अथवा श्रुतव्यतिरिक्त (केवली) होते हैं (७) ।

विवेचन––श्रुत के प्रकरण में––यथाख्यात संयत यदि निर्ग्रंथ होते हैं, तो जघन्य

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आठ प्रवचन-माता और उत्कृष्ट चौदह पूर्व का श्रुत पढ़ा हुआ होता है। यदि वह स्नातक होता है, तो श्रुतातीत--केवली होता है।

## तीर्थ द्वार

२१ प्रश्न-सामाइयसंजए णं भंते ! किं तित्थे होज्जा, अतित्थे होज्जा ?

२१ उत्तर-गोयमा ! तित्थे वा होज्जा, अतित्थे वा होज्जा, जहा कसायकुसीले। छेओवट्ठावणिए परिहारविसुद्धिए य जहा पुलाए, सेसा जहा सामाइयसंजए (८)।

भावार्थ-२१ प्रश्न-हे भगवन् ! सामायिक संयत, तीर्थ में होते हैं या अतीर्थ में ?

२१ उत्तर-हे गौतम ! तीर्थ में भी होते हैं और अतीर्थ में भी इत्यादि सभी वर्णन कषाय-कुशील के समान। छेदोपस्थापनीय और परिहारविशुद्धिक संयत पुलाक के समान तथा सूक्ष्म-संपराय और यथाख्यात संयत, सामायिक संयत के समान जानना चाहिये (८)।

## लिंग द्वार

२२ प्रश्न-सामाइयसंजए णं भंते ! किं सलिंगे होज्जा, अण्णलिंगे होज्जा, गिहिलिंगे होज्जा ?

२२ उत्तर-जहा पुलाए। एवं छेओवट्ठावणिए वि।

भावार्थ-२२ प्रश्न-हे भगवन् ! सामायिक संयत, स्वलिंग में, अन्यलिंग

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

में या गृहस्थलिंग में होते हैं ?

२२ उत्तर–हे गौतम ! सभी वर्णन पुलाक के समान जानो। इसी प्रकार छेदोपस्थापनीय संयत भी।

२३ प्रश्न–परिहारविसुद्धियसंजए णं भंते ! किं–पुच्छा।

२३ उत्तर–गोयमा ! दव्वलिंगं पि भावलिंगं पि पडुच्च सलिंगे होज्जा, णो अण्णलिंगे होज्जा, णो गिहिलिंगे होज्जा। सेसा जहा सामाइयसंजए (९)।

भावार्थ–२३ प्रश्न–हे भगवन् ! परिहारविशुद्धिक संयत, स्वलिंग में, अन्यलिंग में या गृहस्थलिंग में होते हैं ?

२३ उत्तर–हे गौतम ! द्रव्यलिंग और भावलिंग की अपेक्षा स्वलिंग में ही होते हैं, अन्यलिंग या गृहस्थलिंग में नहीं होते। सूक्ष्म-सम्पराय और यथाख्यात संयत, सामायिक संयत के समान हैं।

## शरीर द्वार

२४ प्रश्न–सामाइयसंजए णं भंते ! कइसु सरीरेसु होज्जा ?

२४ उत्तर–गोयमा ! तिसु वा चउसु वा पंचसु वा जहा कसायकुसीले। एवं छेओवट्ठावणिए वि, सेसा जहा पुलाए (१०)।

भावार्थ–२४ प्रश्न–हे भगवन् ! सामायिक संयत के शरीर कितने होते हैं?

२४ उत्तर–हे गौतम ! तीन, चार अथवा पाँच शरीरों में होते हैं इत्यादि कषाय-कुशीलवत्। इसी प्रकार छेदोपस्थापनीय संयत भी। शेष संयतों का कथन पुलाक के समान (१०)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

## क्षत्र द्वार

२५ प्रश्न–सामाइयसंजए णं भंते ! किं कम्मभूमीए होज्जा, अकम्मभूमीए होज्जा ?

२५ उत्तर–गोयमा ! जम्मणं संतिभावं पडुच्च कम्मभूमीए, णो अकम्मभूमीए–जहा वउसे । एवं छेओवट्ठावणिए वि । परिहार-विसुद्धिए य जहा पुलाए, सेसा जहा सामाइयसंजए (११) ।

भावार्थ–२५ प्रश्न–हे भगवन् ! सामायिक संयत, कर्मभूमि में होते हैं या अकर्मभूमि में ?

२५ उत्तर–हे गौतम ! जन्म और सद्भाव से वे कर्मभूमि में होते हैं, अकर्मभूमि में नहीं होते इत्यादि बकुश के समान । इसी प्रकार छेदोपस्थापनीय संयत भी । परिहारविशुद्धिक संयत, पुलाकवत् और सूक्ष्म-सम्पराय संयत तथा यथाख्यात संयत, सामायिक संयत के समान हैं (११) ।

## काल द्वार

२६ प्रश्न–सामाइयसंजए णं भंते ! किं ओसप्पिणीकाले होज्जा, उस्सप्पिणीकाले होज्जा, णोओसप्पिणी-णोउस्सप्पिणीकाले होज्जा ?

२६ उत्तर–गोयमा ! ओसप्पिणीकाले–जहा वउसे । एवं छेओ-वट्ठावणिए वि । णवरं जम्मणं संतिभावं पडुच्च चउसु वि पलिभागेसु णत्थि. साहरणं पडुच्च अण्णयरे पलिभागे होज्जा, सेसं तं चेव ।

भावार्थ–२६ प्रश्न–हे भगवन् ! सामायिक संयत, अवसर्पिणी काल में, उत्सर्पिणी काल में या नोअवसर्पिणी-नोउत्सर्पिणी काल में होते हैं ?

२६ उत्तर–हे गौतम ! अवसर्पिणी काल में होते हैं इत्यादि सभी कथन

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बकुश के समान है। इसी प्रकार छेदोपस्थापनीय संयत भी, किन्तु यह जन्म और सद्भाव की अपेक्षा चारों पलिभाग (सुषमसुषमा, सुषमा, सुषमदुषमा और दुषमसुषमा के समान काल) में नहीं होते। संहरण की अपेक्षा किसी भी पलिभाग में होते हैं। शेष पूर्ववत्।

२७ प्रश्न-परिहारविसुद्धिए-पुच्छा।

२७ उत्तर-गोयमा! ओसप्पिणीकाले वा होज्जा, उस्सप्पिणीकाले वा होज्जा, णोओसप्पिणी-णोउस्सप्पिणीकाले णो होज्जा। जइ ओसप्पिणीकाले होज्जा-जहा पुलाओ। उस्सप्पिणीकाले वि जहा पुलाओ। सुहुमसंपराइओ जहा णियंठो। एवं अहक्खाओ वि (१२)।

भावार्थ-२७ प्रश्न-हे भगवन्! परिहारविशुद्धिक संयत, अवसर्पिणी काल में होते हैं०?

२७ उत्तर-हे गौतम! अवसर्पिणी काल और उत्सर्पिणी काल में होते हैं, किन्तु नोअवसर्पिणी-नोउत्सर्पिणी काल में नहीं होते। यदि अवसर्पिणी काल अथवा उत्सर्पिणी काल में होते हैं, तो पुलाकवत्। सूक्ष्म-संपराय संयत और यथाख्यात संयत का काल निर्ग्रन्थ के समान है (१२)।

विवेचन—नोअवसर्पिणी-नोउत्सर्पिणी के सुषमादि समान तीन प्रकार के काल में (देवकुरु आदि में) बकुश का जन्म और सद्भाव का निषेध किया है और दुषमसुषमा समान काल में (महाविदेह क्षेत्र में) सद्भाव कहा है। छेदोपस्थापनीय संयत का चारों पलिभाग में अर्थात् देवकुरु आदि में तथा महाविदेह में निषेध किया है।

## गति द्वार

२८ प्रश्न-सामाइयसंजए णं भंते! कालगए समाणे किं (कं)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गइं गच्छइ ?

२८ उत्तर-गोयमा ! देवगइं गच्छइ ।

प्रश्न-देवगइं गच्छमाणे किं भवणवासीसु उववज्जेज्जा, वाणमंतरेसु उववज्जेज्जा, जोइसिएसु उववज्जेज्जा, वेमाणिएसु उववज्जेज्जा ?

उत्तर-गोयमा ! णो भवणवासीसु उववज्जेज्जा-जहा कसायकुसीले । एवं छेओवट्ठावणिए वि । परिहारविसुद्धिए जहा पुलाए । सुहुमसंपराए जहा णियंठे ।

भावार्थ-२८ प्रश्न-हे भगवन् ! सामायिक संयत कालधर्म (मृत्यु) प्राप्त कर किस गति में जाते हैं ?

२८ उत्तर-हे गौतम ! देवगति में जाते हैं ।

प्रश्न-हे भगवन् ! देवगति में जाते हुए क्या भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिषी या वैमानिक में उत्पन्न होते हैं ?

उत्तर-हे गौतम ! भवनपति में उत्पन्न नहीं होते इत्यादि कषाय-कुशीलवत् । इसी प्रकार छेदोपस्थापनीय संयत भी । परिहारविशुद्धिक संयत की गति पुलाक के समान और सूक्ष्म-संपराय संयत की गति निर्ग्रन्थ के समान जानो ।

२९ प्रश्न-अहक्खाए-पुच्छा ।

२९ उत्तर-गोयमा ! एवं अहक्खायसंजए वि जाव अजहण्णमणुक्कोसेणं अणुत्तरविमाणेसु उववज्जेज्जा, अत्थेगइए सिज्झइ जाव अंतं करेइ ।

भावार्थ-२९ प्रश्न-हे भगवन् ! यथाख्यात संयत, कालधर्म प्राप्त कर किस गति में जाते हैं ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२९ उत्तर-हे गौतम ! यथाख्यात संयत भी पूर्व कथनानुसार यावत् अजघन्यानुत्कृष्ट अनुत्तर विमान में उत्पन्न होते हैं और कई सिद्ध हो जाते हैं यावत् सभी दुःखों का अन्त करते हैं ।

३० प्रश्न-सामाइयसंजए णं भंते ! देवलोगेसु उववज्जमाणे किं इंदत्ताए उववज्जइ-पुच्छा ।

३० उत्तर-गोयमा ! अविराहणं पडुच्च, एवं जहा कसायकुसीले । एवं छेओवट्ठावणिए । परिहारविसुद्धिए जहा पुलाए । सेसा जहा णियंठे ।

भावार्थ-३० प्रश्न-हे भगवन् ! सामायिक संयत, देवलोक में उत्पन्न होते हुए इन्द्रपने उत्पन्न होते हैं०?

३० उत्तर-हे गौतम ! अविराधक हो, तो कषाय-कुशीलवत् । इसी प्रकार छेदोपस्थापनीय संयत भी । परिहारविशुद्धिक संयत, पुलाक के समान । सूक्ष्म-संपराय और यथाख्यात संयत, निर्ग्रन्थ के समान हैं ।

## देवायु स्थिति

३१ प्रश्न-सामाइयसंजयस्स णं भंते ! देवलोगेसु उववज्जमाणस्स केवइयं कालं ठिई पण्णत्ता ?

३१ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं दो पलिओवमाइं, उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं । एवं छेओवट्ठावणिए वि ।

भावार्थ-३१ प्रश्न-हे भगवन् ! देवलोक में उत्पन्न होते हुए सामायिक

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संयत की स्थिति कितने काल की कही है ?

३१ उत्तर–हे गौतम ! जघन्य दो पल्योपम और उत्कृष्ट तेतीस सागरोपम । इसी प्रकार छेदोपस्थापनीय संयत की स्थिति भी जानो ।

३२ प्रश्न–परिहारविसुद्धियस्स–पुच्छा ।

३२ उत्तर–गोयमा ! जहण्णेणं दो पलिओवमाइं, उक्कोसेणं अट्ठारस सागरोवमाइं, सेसाणं जहा णियंठस्स (१३) ।

भावार्थ–३२ प्रश्न–हे भगवन् ! देवलोक में उत्पन्न होते हुए परिहार-विशुद्धिक संयत की स्थिति कितनी होती है ?

३२ उत्तर–हे गौतम ! जघन्य दो पल्योपम और उत्कृष्ट अठारह सागरोपम । सूक्ष्म-संपराय और यथाख्यात संयत की स्थिति निर्ग्रन्थ के समान होती है (१३)।

## संयम-स्थान

३३ प्रश्न–सामाइयसंजयस्स णं भंते ! केवइया संजमट्ठाणा पण्णत्ता ?

३३ उत्तर–गोयमा ! असंखेज्जा संजमट्ठाणा पण्णत्ता, एवं जाव परिहारविसुद्धियस्स ।

भावार्थ–३३ प्रश्न–हे भगवन् ! सामायिक संयत के कितने संयम-स्थान कहे हैं ?

३३ उत्तर–हे गौतम ! असंख्य संयम-स्थान कहे हैं । इसी प्रकार यावत् परिहारविशुद्धिक संयत तक ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

३४ प्रश्न-सुहुमसंपरायसंजयस्स-पुच्छा ।

३४ उत्तर-गोयमा ! असंखेज्जा अंतोमुहुत्तिया संजमट्ठाणा पण्णत्ता ।

भावार्थ-३४ प्रश्न-हे भगवन् ! सूक्ष्म-संपराय संयत के संयम-स्थान कितने कहे हैं ?

३४ उत्तर-हे गौतम ! अन्तर्मुहूर्त के समय जितने असंख्य संयम-स्थान कहे हैं ।

३५ प्रश्न-अहक्खायसंजयस्स-पुच्छा ।

३५ उत्तर-गोयमा ! एगे अजहण्णमणुक्कोसए संजमट्ठाणे पण्णत्ते ।

भावार्थ-३५ प्रश्न-हे भगवन् ! यथाख्यात संयत के संयम-स्थान कितने कहे हैं ?

३५ उत्तर-हे गौतम ! अजघन्यानुत्कृष्ट संयम-स्थान एक ही कहा है ।

३६ प्रश्न-एएसि णं भंते ! सामाइय-छेओवट्ठावणिय-परिहार-विसुद्धिय-सुहुमसंपराय-अहक्खायसंजयाणं संजमट्ठाणाणं कयरे कयरे जाव विसेसाहिया वा ?

३६ उत्तर-गोयमा ! सव्वत्थोवे अहक्खायसंजमस्स एगे अजहण्णमणुक्कोसए संजमट्ठाणे, सुहुमसंपरायसंजयस्स अंतोमुहुत्तिया संजमट्ठाणा असंखेज्जगुणा, परिहारविसुद्धियसंजयस्स संजमट्ठाणा असंखेज्जगुणा, सामाइयसंजयस्स छेओवट्ठावणियसंजयस्स य एएसि णं संजमट्ठाणा दोण्ह वि तुल्ला असंखेज्जगुणा (१४) ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

**भावार्थ**–३६ प्रश्न–हे भगवन ! सामायिक संयत, छेदोपस्थापनीय संयत, परिहारविशुद्धिक संयत, सूक्ष्म-संपराय संयत और यथाख्यात संयत, इनके संयम-स्थानों में कौन किससे यावत् विशेषाधिक हैं ?

उत्तर–हे गौतम ! यथाख्यात संयत के अजघन्यानुत्कृष्ट एक संयम-स्थान है और सबसे अल्प है । उनसे सूक्ष्म-संपराय संयत से अन्तर्मुहूर्त सम्बन्धी संयम-स्थान असंख्य गुण हैं, उनसे परिहारविशुद्धिक संयत के संयम-स्थान असंख्य गुण हैं, उनसे सामायिक संयत और छेदोपस्थापनीय संयत (इन दोनों) के संयम-स्थान परस्पर तुल्य हैं और असंख्य गुण हैं १४ ।

**विवेचन**–सूक्ष्म-सम्पराय संयत की अन्तर्मुहूर्त प्रमाण स्थिति है । उनके चारित्र-विशुद्धि के परिणाम प्रतिसमय विशेष-विशेष होने से असंख्य होते हैं । यथाख्यात संयत का संयम-स्थान तो एक ही होता है ।

संयम-स्थान का जो अल्प-बहुत्व बताया है, वह इस प्रकार समझना चाहिये;–

असद्भाव स्थापना से सभी संयम के स्थान २१ मान लिये जायँ । उनमें से सर्वोपरि जो एक है, वह यथाख्यात संयत का संयम-स्थान है । उसके बाद सूक्ष्म-संपराय संयत के चार संयम-स्थान हैं । वे उस एक की अपेक्षा असंख्य गुण समझना चाहिये । उसके बाद चार संयम स्थान छोड़ कर उस के नीचे के आठ संयम स्थान परिहार विशुद्धिक संयत के हैं । वे पूर्व से असंख्य गुण समझने चाहिए । इसके बाद ऊपर छोड़े हुए जो चार हैं वे और पूर्वोक्त परिहार विशुद्धिक–संयत वाले आठ और उनसे नीचे के अन्य चार इस प्रकार सोलह संयम स्थान सामायिक और छेदोपस्थापनीय चारित्र के हैं । ये पूर्व से असंख्यात गुण हैं और परस्पर तुल्य हैं ।

## चारित्र-पर्यव

**३७ प्रश्न–सामाइयसंजयस्स णं भंते ! केवइया चरित्तपज्जवा पण्णत्ता ?**

**३७ उत्तर–गोयमा ! अणंता चरित्तपज्जवा पण्णत्ता, एवं जाव अहक्खायसंजयस्स ।**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ–३७ प्रश्न–हे भगवन् ! सामायिक संयत के चारित्र-पर्यव कितने कहे हैं ?

३७ उत्तर–हे गौतम ! चारित्र-पर्यव अनन्त कहे हैं। इसी प्रकार यावत् यथाख्यात संयत तक।

**३८ प्रश्न–सामाइयसंजए णं भंते ! सामाइयसंजयस्स सट्ठाण-सण्णिगासेणं चरित्तपज्जवेहिं किं हीणे, तुल्ले, अब्भहिए ?**

**३८ उत्तर–गोयमा ! सिय हीणे–छट्ठाणवडिए।**

भावार्थ–३८ प्रश्न–हे भगवन् ! एक सामायिक संयत, दूसरे सामायिक संयत के स्वस्थान सन्निकर्ष (सजातीय चारित्र-पर्यवों) की अपेक्षा हीन होते हैं, तुल्य होते हैं या अधिक होते हैं ?

३८ उत्तर–हे गौतम ! कदाचित् हीन, कदाचित् तुल्य और कदाचित् अधिक होते हैं। यह छह स्थान पतित जानो।

**३९ प्रश्न–सामाइयसंजए णं भंते ! छेओवट्ठावणियसंजयस्स परट्ठाणसण्णिगासेणं चरित्तपज्जवेहिं–पुच्छा।**

**३९ उत्तर–गोयमा ! सिय हीणे, छट्ठाणवडिए। एवं परिहार-विसुद्धियस्स वि।**

भावार्थ–३९ प्रश्न–हे भगवन् ! सामायिक संयत, छेदोपस्थापनीय संयत के परस्थान सन्निकर्ष (विजातीय चारित्र-पर्यवों) की अपेक्षा हीन, तुल्य या अधिक होते हैं ?

३९ उत्तर–हे गौतम ! कदाचित् हीन, कदाचित् तुल्य और कदाचित् अधिक होते हैं। यह भी छह स्थान पतित होते हैं। इसी प्रकार परिहार-विशुद्धिक संयत भी।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

४० प्रश्न-सामाइयसंजए णं भंते ! सुहुमसंपरायसंजयस्स परट्ठाणसण्णिगासेणं चरित्तपज्जवेहिं-पुच्छा ।

४० उत्तर-गोयमा ! हीणे, णो तुल्ले, णो अब्भहिए, अणंतगुणहीणे । एवं अहक्खायसंजयस्स वि । एवं छेओवट्ठावणिए वि हेट्ठिल्लेसु तिसु वि समं छट्ठाणवडिए, उवरिल्लेसु दोसु तहेव हीणे । जहा छेओवट्ठावणिए तहा परिहारविसुद्धिए वि ।

भावार्थ-४० प्रश्न-हे भगवन् ! सामायिक संयत, सूक्ष्म-संपराय संयत के परस्थान सन्निकर्ष (विजातीय) चारित्र-पर्यवों की अपेक्षा हीन, तुल्य या अधिक होते हैं ?

४० उत्तर-हे गौतम ! हीन होते हैं, तुल्य और अधिक नहीं होते । अनन्त गुण हीन हैं । इसी प्रकार यथाख्यात संयत भी । इसी प्रकार छेदोपस्थापनीय संयत भी नीचे के तीन संयतों के साथ छह स्थान पतित होते हैं और ऊपर के दो संयतों के साथ उसी प्रकार अनन्त गुण हीन होते हैं । परिहारविशुद्धिक संयत का कथन छेदोपस्थापनीय संयत के समान है ।

४१ प्रश्न-सुहुमसंपरायसंजए णं भंते ! सामाइयसंजयस्स परट्ठाण-पुच्छा ।

४१ उत्तर-गोयमा ! णो हीणे, णो तुल्ले, अब्भहिए, अणंतगुणमब्भहिए । एवं छेओवट्ठावणिय-परिहारविसुद्धिएसु वि समं । सट्ठाणे सिय हीणे, सिय तुल्ले, सिय अब्भहिए । जइ हीणे अणंतगुणहीणे, अह (जइ) अब्भहिए अणंतगुणमब्भहिए ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ–४१ प्रश्न–हे भगवन् ! सूक्ष्म-सम्पराय संयत, सामायिक संयत के परस्थान सन्निकर्ष (विजातीय) चारित्र-पर्यवों से हीन, तुल्य या अधिक हैं ?

४१ उत्तर–हे गौतम ! हीन और तुल्य नहीं, अधिक है और अनन्त गुण अधिक है। इसी प्रकार छेदोपस्थापनीय संयत और परिहारविशुद्धिक संयत के साथ भी जानना चाहिए। स्वस्थान सन्निकर्ष (सजातीय) चारित्र-पर्यवों की अपेक्षा कदाचित् हीन, कदाचित् तुल्य और कदाचित् अधिक होते हैं। यदि हीन होते हैं, तो अनन्त गुण हीन होते हैं और अधिक होते हैं तो अनन्त गुण अधिक होते हैं।

४२ प्रश्न–सुहुमसंपरायसंजयस्स अहक्खायसंजयस्स परट्ठाण-पुच्छा।

४२ उत्तर–गोयमा ! हीणे, णो तुल्ले, णो अब्भहिए, अणंत-गुणहीणे। अहक्खाए हेट्ठिल्लाणं चउण्ह वि णो हीणे, णो तुल्ले, अब्भहिए, अणंतगुणमब्भहिए। सट्ठाणे णो हीणे, तुल्ले णो अब्भहिए।

भावार्थ–४२ प्रश्न–हे भगवन् ! सूक्ष्म-सम्पराय संयत, यथाख्यात संयत के परस्थान सन्निकर्ष चारित्र-पर्यवों की अपेक्षा हीन, तुल्य या अधिक होते हैं ?

४२ उत्तर–हे गौतम ! हीन होते हैं, किन्तु तुल्य और अधिक नहीं होते। अनन्त गुण हीन होते हैं। यथाख्यात संयत नीचे के चार संयतों की अपेक्षा हीन नहीं, तुल्य भी नहीं, किन्तु अधिक हैं और अनन्त गुण अधिक हैं। स्वस्थान सन्निकर्ष चारित्र-पर्यवों की अपेक्षा हीन नहीं, अधिक भी नहीं, किन्तु तुल्य हैं।

४३ प्रश्न–एएसि णं भंते ! सामाइय-छेओवट्ठावणिय-परिहार-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विसुद्धिय-सुहुमसंपराय-अहक्खायसंजयाणं जहण्णुक्कोसगाणं चरित्त-पज्जवाणं कयरे कयरे जाव विसेसाहिया वा ?

४३ उत्तर–गोयमा ! सामाइयसंजयस्स छेओवट्ठावणियसंजयस्स य एएसि णं जहण्णगा चरित्तपज्जवा दोण्ह वि तुल्ला सव्वत्थोवा, परिहारविसुद्धियसंजयस्स जहण्णगा चरित्तपज्जवा अणंतगुणा, तस्स चेव उक्कोसगा चरित्तपज्जवा अणंतगुणा, सामाइयसंजयस्स छेओवट्ठावणियसंजयस्स य एएसि णं उक्कोसगा चरित्तपज्जवा दोण्ह वि तुल्ला अणंतगुणा, सुहुमसंपरायसंजयस्स जहण्णगा चरित्तपज्जवा, अणंतगुणा, तस्स चेव उक्कोसगा चरित्तपज्जवा अणंतगुणा अहक्खायसंजयस्स अजहण्णमणुक्कोसगा चरित्तपज्जवा अणंतगुणा (१५)।

भावार्थ–४३ प्रश्न–हे भगवन् ! सामायिक संयत, छेदोपस्थापनीय संयत, परिहारविशुद्धिक संयत, सूक्ष्म-सम्पराय संयत और यथाख्यात संयत, इनके जघन्य और उत्कृष्ट चारित्र-पर्यवों में कौन किससे यावत् विशेषाधिक है ?

४३ उत्तर–हे गौतम ! सामायिक संयत और छेदोपस्थापनीय संयत, इन दोनों के जघन्य चारित्र-पर्यव परस्पर तुल्य हैं और सब से थोड़े हैं। उनसे परिहारविशुद्धिक संयत के जघन्य चारित्र-पर्यव अनन्त गुण हैं, उनसे परिहार-विशुद्धिक संयत के उत्कृष्ट चारित्र पर्यव अनन्त गुण हैं। उनसे सामायिक संयत और छेदोपस्थापनीय संयत के उत्कृष्ट चारित्र-पर्यव अनन्त गुण हैं और परस्पर तुल्य हैं। उनसे सूक्ष्म-सम्पराय संयत के जघन्य चारित्र-पर्यव अनन्त गुण हैं, उनसे सूक्ष्म-सम्पराय संयत के उत्कृष्ट चारित्र-पर्यव अनन्त गुण हैं, उनसे यथा-ख्यात संयत के अजघन्यानुत्कृष्ट चारित्र-पर्यव अनन्त गुण हैं (१५)।

विवेचन––सामायिक संयत के संयम-स्थान असंख्य होते हैं। उनमें से जब एक

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हीन शुद्धि वाला होता है और दूसरा संयत कुछ अधिक शुद्धि वाला होता है, तब उन दोनों सामायिक संयतों में से एक हीन और दूसरा अधिक कहलाता है। इस हीनाधिकता में छह स्थान पतितता होती है। जब दोनों के संयम-स्थान समान होते हैं, तब तुल्यता होती है।

## योग द्वार

४४ प्रश्न–सामाइयसंजए णं भंते! किं सजोगी होज्जा, अजोगी होज्जा?

४४ उत्तर–गोयमा! सजोगी जहा पुलाए। एवं जाव सुहुम-संपरायसंजए। अहक्खाए जहा सिणाए (१६)।

भावार्थ–४४ प्रश्न–हे भगवन्! सामायिक संयत, सयोगी होते हैं या अयोगी?

४४ उत्तर–हे गौतम! सयोगी होते हैं इत्यादि पुलाकवत्। इसी प्रकार यावत् सूक्ष्म-सम्पराय संयत तक। यथाख्यात संयत, स्नातक के समान है (१६)।

## उपयोग द्वार

४५ प्रश्न–सामाइयसंजए णं भंते! किं सागारोवउत्ते होज्जा, अणागारोवउत्ते होज्जा?

४५ उत्तर–गोयमा! सागारोवउत्ते जहा पुलाए। एवं जाव अहक्खाए। णवरं सुहुमसंपराए सागारोवउत्ते होज्जा, णो अणागारो-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वउत्ते होज्जा (१७)।

भावार्थ–४५ प्रश्न–हे भगवन् ! सामायिक संयत, साकारोपयोग युक्त होते हैं या अनाकारोपयोग युक्त ?

४५ उत्तर–हे गौतम ! साकारोपयोग युक्त इत्यादि पुलाकवत् । इसी प्रकार यावत् यथाख्यात संयत पर्यन्त । किन्तु सूक्ष्म-सम्पराय संयत एक साकारोपयोग वाले ही होते हैं, अनाकारोपयोगी नहीं होते (१७) ।

विवेचन–सामायिक संयत आदि में साकारोपयोग और अनाकारोपयोग–दोनों उपयोग होते हैं, परन्तु सूक्ष्म-सम्पराय संयत में एक साकारोपयोग ही होता है, अनाकारोपयोग नहीं होता । क्योंकि सूक्ष्म-सम्पराय संयत साकारोपयोग में ही दसवें गुणस्थान में प्रवेश करते हैं और साकारोपयोग का समय पूरा होने से पहले ही वे दसवें गुणस्थान को छोड़ देते हैं । इस गुणस्थान का स्वभाव ही ऐसा है ।

## कषाय द्वार

४६ प्रश्न–सामाइयसंजए णं भंते ! किं सकसायी होज्जा, अकसायी होज्जा ?

४६ उत्तर–गोयमा ! सकसायी होज्जा, णो अकसायी होज्जा–जहा कसायकुसीले । एवं छेओवट्ठावणिए वि । परिहारविसुद्धिए जहा पुलाए ।

भावार्थ–४६ प्रश्न–हे भगवन् ! सामायिक संयत, सकषायी होते हैं या अकषायी ?

४६ उत्तर–हे गौतम ! सकषायी होते हैं, अकषायी नहीं होते इत्यादि कषाय-कुशीलवत् (चार, तीन और दो कषायों में होते हैं । किन्तु एक कषाय में नहीं होते )। इसी प्रकार छेदोपस्थापनीय भी । परिहारविशुद्धिक संयत का कथन पुलाक के समान है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

४७ प्रश्न–सुहुमसंपरायसंजए–पुच्छा ।

४७ उत्तर–गोयमा ! सकसायी होज्जा, णो अकसायी होज्जा ।

भावार्थ–४७ प्रश्न–हे भगवन् ! सूक्ष्म-सम्पराय संयत, सकषायी होते हैं या अकषायी ?

४७ उत्तर–हे गौतम ! सकषायी होते हैं, अकषायी नहीं होते ।

४८ प्रश्न–जइ सकसायी होज्जा, से णं भंते ! कइसु कसायेसु होज्जा ?

४८ उत्तर–गोयमा ! एगंमि संजलणलोभे होज्जा । अहक्खाय-संजए जहा णियंठे (१८) ।

भावार्थ–४८ प्रश्न–हे भगवन् ! यदि सूक्ष्म-सम्पराय संयत सकषायी होते हैं, तो कितने कषायों में होते हैं ?

४८ उत्तर–हे गौतम ! एकमात्र संज्वलन लोभ होता है । यथाख्यात संयत निर्ग्रंथ के समान हैं (१८) ।

## लेश्या द्वार

४९ प्रश्न–सामाइयसंजए णं भंते ! किं सलेस्से होज्जा, अलेस्से होज्जा ?

४९ उत्तर–गोयमा ! सलेस्से होज्जा–जहा कसायकुसीले । एवं छेओवट्ठावणिए वि । परिहारविसुद्धिए जहा पुलाए । सुहुमसंपराए जहा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णियंठे। अहक्खाए जहा सिणाए। णवरं जइ सलेस्से होज्जा, एगाए सुक्कलेस्साए होज्जा (१९)।

भावार्थ–४९ प्रश्न–हे भगवन्! सामायिक संयत सलेशी होते हैं या अलेशी?

४९ उत्तर–हे गौतम! सलेशी होते हैं इत्यादि कषाय-कुशीलवत। इसी प्रकार छेदोपस्थापनीय संयत भी। परिहारविशुद्धिक संयत पुलाकवत्। सूक्ष्म-सम्पराय संयत, निर्ग्रन्थ के समान है और यथाख्यात संयत, स्नातक के समान है, यदि सलेशी होते हैं, तो एकमात्र शुक्ललेशी होते हैं (१९)।

विवेचन–लेश्या के विषय में यथाख्यात संयत का कथन स्नातक के समान है। वे सलेशी भी होते हैं और अलेशी भी। यदि स्नातक, सलेशी होते हैं, तो परम शुक्ल-लेश्या वाले होते हैं, किन्तु यथाख्यात संयत शुक्ल-लेश्या वाला ही होता है।

## परिणाम द्वार

५० प्रश्न–सामाइयसंजए णं भंते! किं वड्ढमाणपरिणामे होज्जा, हीयमाणपरिणामे होज्जा, अवट्ठियपरिणामे होज्जा?

५० उत्तर–गोयमा! वड्ढमाणपरिणामे जहा पुलाए। एवं जाव परिहारविसुद्धिए।

भावार्थ–५० प्रश्न–हे भगवन्! सामायिक संयत, वर्द्धमान परिणाम वाले होते हैं, हीयमान परिणाम वाले होते हैं या अवस्थित परिणाम वाले होते हैं?

५० उत्तर–हे गौतम! वर्द्धमान परिणाम वाले होते हैं इत्यादि पुलाक-वत्। इसी प्रकार यावत् परिहार-विशुद्धिक संयत पर्यन्त।

५१ प्रश्न–सुहुमसंपराए–पुच्छा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

५१ उत्तर-गोयमा ! वड्ढमाणपरिणामे वा होज्जा, हीयमाण-परिणामे वा होज्जा, णो अवट्ठियपरिणामे होज्जा । अहक्खाए जहा णियंठे ।

भावार्थ-५१ प्रश्न-हे भगवन् ! सूक्ष्म-सम्पराय संयत, वर्द्धमान परिणाम वाले होते हैं० ?

५१ उत्तर-हे गौतम ! वर्द्धमान परिणाम वाले या हीयमान परिणाम वाले होते हैं, अवस्थित परिणाम वाले नहीं होते । यथाख्यात संयत निर्ग्रन्थ के समान हैं ।

५२ प्रश्न-सामाइयसंजए णं भंते ! केवइयं कालं वड्ढमाण-परिणामे होज्जा ?

५२ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं एक्कं समयं-जहा पुलाए । एवं जाव परिहारविसुद्धिए ।

भावार्थ-५२ प्रश्न-हे भगवन् ! सामायिक संयत, वर्द्धमान परिणाम-युक्त कितने काल तक होते हैं ?

५२ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य एक समय वर्द्धमान परिणाम वाले होते हैं इत्यादि पुलाकवत् । इसी प्रकार यावत् परिहारविशुद्धिक संयत तक ।

५३ प्रश्न-सुहुमसंपरायसंजए णं भंते ! केवइयं कालं वड्ढमाण-परिणामे होज्जा ?

५३ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं अंतो-मुहुत्तं ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रश्न–केवइयं कालं हीयमाणपरिणामे ?

उत्तर–एवं चेव ।

भावार्थ–५३ प्रश्न–हे भगवन् ! सूक्ष्म-सम्पराय वर्द्धमान परिणाम वाले कितने काल तक होते हैं ?

५३ उत्तर–हे गौतम ! जघन्य एक समय और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त तक।

प्रश्न–हे भगवन् ! हीयमान परिणाम वाले कितने काल तक होते हैं ?

उत्तर–हे गौतम ! इसी प्रकार ।

५४ प्रश्न–अहक्खायसंजए णं भंते ! केवइयं कालं वड्ढमाण-परिणामे होज्जा ?

५४ उत्तर–गोयमा ! जहण्णेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेण वि अंतो-मुहुत्तं ।

प्रश्न–केवइयं कालं अवट्ठियपरिणामे होज्जा ?

उत्तर–गोयमा ! जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं देसूणा पुव्वकोडी (२०) ।

भावार्थ–५४ प्रश्न–हे भगवन् ! यथाख्यात संयत कितने काल तक वर्द्ध-मान परिणाम वाले होते हैं ?

५४ उत्तर–हे गौतम ! जघन्य अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट भी अन्तर्मुहूर्त तक वर्द्धमान परिणाम वाले होते हैं ।

प्रश्न–हे भगवन् ! उनके अवस्थित परिणाम कितने काल तक रहते हैं ?

उत्तर–हे गौतम ! जघन्य एक समय और उत्कृष्ट देशोन पूर्वकोटि वर्ष तक (२०) ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

**विवेचन** सूक्ष्म-संपराय संयत जब श्रेणी चढ़ते हैं, तब वर्द्धमान परिणाम वाले होते हैं और जब श्रेणी से गिरते हैं, तब हीयमान परिणाम वाले होते हैं, किन्तु उस गुण-स्थान का स्वभाव ही ऐसा होना है कि जिसमें अवस्थित परिणाम नहीं होते।

सूक्ष्म-संपराय संयत का वर्द्धमान परिणाम जघन्य एक समय मृत्यु की अपेक्षा से होता है, वर्द्धमान परिणाम को करने के एक समय बाद ही उनका मरण हो जाय, तब जघन्य परिणाम होता है और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त वर्द्धमान परिणाम तो उस गुणस्थान की स्थिति ही है। इसी प्रकार हीयमान परिणाम के विषय में भी समझना चाहिये।

जो यथाख्यात संयत, केवलज्ञान को प्राप्त करते हैं और जो शैलेशी अवस्था को प्राप्त होते हैं, उनका वर्द्धमान परिणाम जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त रहता है। उसके बाद उसका व्यवच्छेद हो जाता है। अवस्थित परिणाम जघन्य एक समय उस अपेक्षा से घटित होता है कि उपशम अवस्था प्राप्ति के प्रथम समय के बाद ही उसका मरण हो जाय। उत्कृष्ट अवस्थित परिणाम देशोन पूर्वकोटि उस अपेक्षा से घटित होता है, जबकि पूर्वकोटि वर्ष की आयु वाला साधिक आठ वर्ष की उम्र में संयम अंगीकार कर के शीघ्र ही केवलज्ञान प्राप्त कर ले।

## कर्म-बन्ध

**५५ प्रश्न-सामाइयसंजए णं भंते ! कइ कम्मप्पगडीओ बन्धइ ?**

**५५ उत्तर-गोयमा ! सत्तविहबंधए वा, अट्ठविहबंधए वा एवं जहा बउसे। एवं जाव परिहारविसुद्धिए।**

**भावार्थ-५५ प्रश्न-हे भगवन् ! सामायिक संयत, कर्म-प्रकृतियाँ कितनी बाँधते हैं ?**

**५५ उत्तर-हे गौतम ! सात या आठ कर्म-प्रकृतियाँ बाँधते हैं इत्यादि बकुशवत्। इसी प्रकार यावत् परिहारविशुद्धिक संयत पर्यन्त।**

**५६ प्रश्न-सुहुमसंपरायसंजमे-पुच्छा।**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

५६ उत्तर–गोयमा ! आउय-मोहणिज्जवज्जाओ छ कम्मप्पगडीओ बंधइ । अहक्खाएसंजए जहा सिणाए (२१) ।

भावार्थ–५६ प्रश्न–हे भगवन् ! सूक्ष्म-सम्पराय संयत कर्म-प्रकृतियां कितनी बाँधते हैं ?

५६ उत्तर–हे गौतम ! आयुष्य और मोहनीय कर्म को छोड़ कर शेष छह कर्म-प्रकृतियां बाँधते हैं । यथाख्यात संयत के बन्ध स्नातक के समान है (२१) ।

विवेचन––आयुष्य कर्म का बन्ध सातवें अप्रमत्त गुणस्थान तक होता है । सूक्ष्म-संपराय संयत दसवें गुणस्थानवर्ती होते हैं, इसलिये वे आयुष्य कर्म का बन्ध नहीं करते तथा बादर कषाय का उदय न होने से मोहनीय कर्म का बन्ध भी नहीं करते । अतः इन दो के अतिरिक्त शेष छह कर्म-प्रकृतियों का बन्ध करते हैं ।

## कर्म-वेदन

५७ प्रश्न–सामाइयसंजए णं भंते ! कइ कम्मप्पगडीओ वेदेइ ?

५७ उत्तर–गोयमा ! णियमं अट्ठ कम्मप्पगडीओ वेदेइ । एवं जाव सुहुमसंपराए ।

भावार्थ–५७ प्रश्न–हे भगवन् ! सामायिक संयत, कर्म की कितनी प्रकृतियों का वेदन करते हैं ?

५७ उत्तर–हे गौतम ! नियम से (अवश्य) आठ कर्म-प्रकृतियों का वेदन करते हैं । इसी प्रकार यावत् सूक्ष्म-सम्पराय संयत तक ।

५८ प्रश्न–अहक्खाए–पुच्छा ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

५८ उत्तर-गोयमा ! सत्तविहवेयए वा, चउव्विहवेयए वा । सत्त वेदेमाणे मोहणिज्जवज्जाओ सत्त कम्मप्पगडीओ वेदेइ, चत्तारि वेदेमाणे वेयणिज्जा उय-णाम-गोयाओ चत्तारि कम्मप्पगडीओ वेदेइ (२२)।

भावार्थ-५८ प्रश्न-हे भगवन् ! यथाख्यात संयत कर्म की कितनी प्रकृतियों का वेदन करते हैं ?

५८ उत्तर-हे गौतम ! सात या चार कर्म-प्रकृतियों का वेदन करते हैं । जब सात का वेदन करते हैं, तो मोहनीय छोड़ कर सात का वेदन करते हैं और जब चार का वेदन करते हैं, तब वेदनीय, आयुष्य, नाम और गोत्र इन चार कर्म-प्रकृतियों का वेदन करते हैं (२२) ।

विवेचन--यथाख्यात संयत के निर्ग्रन्थ अवस्था में मोहनीय कर्म का उपशम या क्षय हो जाने से मोहनीय को छोड़ कर शेष सात कर्म-प्रकृतियों का वेदन करते हैं और स्नातक अवस्था में घाती-कर्मों का क्षय हो जाने से चार अघाती-कर्मों का ही वेदन करते हैं।

## कर्म-उदीरणा

५९ प्रश्न-सामाइयसंजए णं भंते ! कइ कम्मप्पगडीओ उदीरेइ ?

५९ उत्तर-गोयमा ! सत्तविह-जहा बउसो। एवं जाव परिहार-विसुद्धिए ।

भावार्थ-५९ प्रश्न-हे भगवन् ! सामायिक संयत कर्म की कितनी प्रकृतियों की उदीरणा करते हैं ?

५९ उत्तर-हे गौतम ! सात कर्म-प्रकृतियों की उदीरणा करते हैं इत्यादि बकुश के समान यावत् परिहारविशुद्धिक संयत पर्यन्त ।

६० प्रश्न-सुहुमसंपराए-पुच्छा ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

६० उत्तर–गोयमा ! छव्विहउदीरए वा पंचविहउदीरए वा । छ उदीरेमाणे आउय-वेयणिज्जवज्जाओ छ कम्मप्पगडीओ उदीरेइ, पंच उदीरेमाणे आउय-वेयणिज्ज-मोहणिज्जवज्जाओ पंच कम्मप्पगडीओ उदीरेइ ।

भावार्थ–६० प्रश्न–हे भगवन् ! सूक्ष्म-संपराय संयत, कर्म की कितनी प्रकृतियों को उदीरते हैं ?

६० उत्तर–हे गौतम ! छह या पांच कर्म-प्रकृतियों को उदीरते हैं । छह को उदीरते हुए, आयुष्य और वेदनीय को छोड़ कर शेष छह कर्म-प्रकृतियों को उदीरते हैं । पांच को उदीरते हुए आयुष्य, वेदनीय और मोहनीय को छोड़ कर शेष पांच कर्म-प्रकृतियों को उदीरते हैं ।

६१ प्रश्न–अहक्खायसंजए–पुच्छा ।

६१ उत्तर–गोयमा ! पंचविहउदीरए वा दुविहउदीरए वा अणुदीरए वा । पंच उदीरेमाणे आउय०–सेसं जहा णियंठस्स (२३) ।

भावार्थ–६१ प्रश्न–हे भगवन् ! यथाख्यात संयत कर्म की कितनी प्रकृतियों को उदीरते हैं ?

६१ उत्तर–हे गौतम ! पांच अथवा दो को उदीरते हैं या अनुदीरक होते हैं । पांच को उदीरते हुए आयुष्य, वेदनीय और मोहनीय के अतिरिक्त शेष पांच की उदीरणा करते हैं इत्यादि शेष निर्ग्रन्थ के समान (२३)।

## उपसंपद्-हान

६२ प्रश्न–सामाइयसंजए णं भंते ! सामाइयसंजयत्तं जहमाणे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

किं जहइ, किं उवसंपज्जइ ?

६२ उत्तर-गोयमा ! सामाइयसंजयत्तं जहइ, छेओवट्ठावणिय-संजयं वा, सुहुमसंपरायसंजयं वा, असंजमं वा, संजमासंजमं वा उव-संपज्जइ ।

भावार्थ-६२ प्रश्न-हे भगवन् ! सामायिक संयत, सामायिक संयतपन त्यागते हुए किसे छोड़ते हैं और क्या प्राप्त करते हैं ?

६२ उत्तर-हे गौतम ! वे सामायिक संयम छोड़ते हैं और छेदोपस्थाप-नीय संयम, सूक्ष्म-संपराय संयम, असंयम अथवा संयमासंयम प्राप्त करते हैं ।

६३ प्रश्न-छेओवट्ठावणिए-पुच्छा ।

६३ उत्तर-गोयमा ! छेओवट्ठावणियसंजयत्तं जहइ, सामाइय-संजमं वा, परिहारविसुद्धियसंजमं वा, सुहुमसंपरायसंजमं वा, असंजमं वा, संजमासंजमं वा उवसंपज्जइ ।

भावार्थ-६३ प्रश्न-हे भगवन् ! छेदोपस्थापनीय संयत यावत् किसे छोड़ते हैं और क्या प्राप्त करते हैं ?

६३ उत्तर-हे गौतम ! वे छेदोपस्थापनीय संयत छोड़ते हैं और सामा-यिक संयम, परिहारविशुद्धिक संयम, सूक्ष्म-संपराय संयम, असंयम अथवा संयमा-संयम प्राप्त करते हैं ।

६४ प्रश्न-परिहारविसुद्धिए-पुच्छा ।

६४ उत्तर-गोयमा ! परिहारविसुद्धियसंजयत्तं जहइ, छेओवट्ठा-वणियसंजयत्तं वा असंजमं वा उवसंपज्जइ ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ-६४ प्रश्न-हे भगवन् ! परिहारविशुद्धिक संयत किसे छोड़ते हैं० ?

६४ उत्तर-हे गौतम ! परिहारविशुद्धिक संयम छोड़ कर छेदोपस्थापनीय संयम अथवा असंयम प्राप्त करते हैं ।

६५ प्रश्न-सुहुमसंपराए-पुच्छा ।

६५ उत्तर-गोयमा ! सुहुमसंपरायसंजयत्तं जहइ, सामाइयसंजमं वा, छेओवट्ठावणियसंजमं वा, अहक्खायसंजमं वा, असंजमं वा उवसंपज्जइ ।

भावार्थ-६५ प्रश्न-हे भगवन् ! सूक्ष्म-संपराय संयत किसे छोड़ते हैं०?

६५ उत्तर-हे गौतम ! वे सूक्ष्म-संपराय संयम छोड़ते हैं और सामायिक संयम, छेदोपस्थापनीय संयम, यथाख्यात संयम अथवा असंयम प्राप्त करते हैं ।

६६ प्रश्न-अहक्खायसंजए-पुच्छा ।

६६ उत्तर-गोयमा ! अहक्खायसंजयत्तं जहइ, सुहुमसंपरायसंजमं वा, असंजमं वा, सिद्धिगइं वा उवसंपज्जइ (२४) ।

भावार्थ-६६ प्रश्न-हे भगवन् ! यथाख्यात संयत किसे छोड़ते हैं० ?

६६ उत्तर-हे गौतम ! वे यथाख्यात संयम छोड़ते हैं और सूक्ष्म-संपराय संयम, असंयम अथवा सिद्ध गति प्राप्त करते हैं (२४) ।

विवेचन-सामायिक संयत का सामायिक संयम छोड़ कर छेदोपस्थापनीय संयम स्वीकार करने का कारण यह है कि जब तेईसवें तीर्थंकर के तीर्थ से चौबीसवें तीर्थंकर के शासन में आते हैं, तब चतुर्याम धर्म से पंचयाम धर्म को स्वीकार करते हैं तथा प्रथम और अन्तिम तीर्थंकर के शासनवर्ती शिष्य को जब महाव्रत आरोपण किये जाते हैं, तब भी सामायिक संयम से छेदोपस्थापनीय संयम प्राप्त करते हैं अथवा श्रेणी चढ़ते हुए मुनि,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सामायिक संयम से आगे बढ़ कर सूक्ष्म-संपराय संयम प्राप्त करते हैं अथवा संयम परिणामों के गिर जाने से संयमासंयम या असंयम प्राप्त करते हैं और काल कर के देव बनते हैं, तो भी असंयम प्राप्त करते हैं ।

छेदोपस्थापनीय संयत अपना संयम छोड़ते हुए सामायिक संयम स्वीकार करते हैं। जैसे कि—प्रथम तीर्थंकर के शासनवर्ती साधु, दूसरे तीर्थंकर के शासन को स्वीकार करते समय छेदोपस्थापनीय संयम छोड़ कर सामायिक संयम प्राप्त करते हैं अथवा छेदोपस्थापनीय संयम छोड़ते हुए साधु, परिहारविशुद्धिक संयम स्वीकार करते हैं, क्योंकि छेदोपस्थापनीय संयत ही परिहारविशुद्धिक संयम स्वीकार करने के योग्य होते हैं इत्यादि। परिहारविशुद्धिक संयत, परिहारविशुद्धिक संयम छोड़ कर पुनः गच्छ में आने के कारण छेदोपस्थापनीय संयम स्वीकार करते हैं अथवा उस अवस्था में कालधर्म को प्राप्त हो जायँ, तो देवों में उत्पन्न होते हैं । अतएव असंयम को प्राप्त करते हैं ।

सूक्ष्म-संपराय संयत, श्रेणी से गिरते हुए सूक्ष्म-संपराय संयम छोड़ कर, यदि वे पहले सामायिक संयत हो, तो सामायिक संयम प्राप्त करते हैं और यदि वे पहले छेदोपस्थापनीय संयत हो, तो छेदोपस्थापनीय संयम प्राप्त करते हैं । यदि श्रेणी ऊपर चढ़े, तो यथाख्यात संयम प्राप्त करते हैं और यदि काल करे, तो असंयम को प्राप्त होते हैं ।

उपशम-श्रेणी करने वाले यथाख्यात संयत, श्रेणी से गिरने पर यथाख्यात संयम त्यागते हुए सूक्ष्म-संपराय संयम प्राप्त करते हैं और उस समय मरण हो जाय, तो देवों में उत्पन्न होने के कारण असंयम प्राप्त करते हैं, यदि स्नातक हों, तो सिद्धगति प्राप्त करते हैं ।

## संज्ञा द्वार

**६७ प्रश्न—सामाइयसंजए णं भंते ! किं सण्णोवउत्ते होज्जा, णोसण्णोवउत्ते होज्जा ?**

**६७ उत्तर—गोयमा ! सण्णोवउत्ते—जहा बउसो । एवं जाव परिहारविसुद्धिए । सुहुमसंपराए अहक्खाए य जहा पुलाए (२५) ।**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कठिन शब्दार्थ—सण्णोवउत्त–संज्ञा के उपयोग में युक्त होना। आहारादि में आसक्त—अनुरक्त होना।

भावार्थ–६७ प्रश्न–हे भगवन्! सामायिक संयत, संज्ञोपयुक्त (आहारादि संज्ञा में आसक्त) होते हैं या नोसंज्ञोपयुक्त?

६७ उत्तर–हे गौतम! वे संज्ञोपयुक्त होते हैं इत्यादि बकुश के समान। इसी प्रकार यावत् परिहारविशुद्धिक संयत पर्यन्त। सूक्ष्म-संपराय संयत और यथाख्यात संयत को, पुलाक के समान जानना चाहिये (२५)।

६८ प्रश्न–सामाइयसंजए णं भंते! किं आहारए होज्जा, अणाहारए होज्जा?

६८ उत्तर–जहा पुलाए। एवं जाव सुहुमसंपराए। अहक्खायसंजए जहा सिणाए (२६)।

भावार्थ–६८ प्रश्न–हे भगवन्! सामायिक संयत, आहारक होते हैं या अनाहारक?

६८ उत्तर–हे गौतम! पुलाक के समान यावत् सूक्ष्म-संपराय पर्यन्त। यथाख्यात संयत, स्नातक के समान हैं (२६)।

## भव द्वार

६९ प्रश्न–सामाइयसंजए णं भंते! कइ भवग्गहणाइं होज्जा?

६९ उत्तर–गोयमा! जहण्णेणं एक्कं, उक्कोसेणं अट्ठ। एवं छेओवट्ठावणिए वि।

भावार्थ–६९ प्रश्न–हे भगवन्! सामायिक संयत कितने भव ग्रहण करते हैं अर्थात् कितने भवों में सामायिक संयम आता है?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

६९ उत्तर–हे गौतम ! जघन्य एक और उत्कृष्ट आठ भव ग्रहण करते हैं। इसी प्रकार छेदोपस्थापनीय संयम भी।

७० प्रश्न–परिहारविसुद्धिए–पुच्छा।

७० उत्तर–गोयमा ! जहण्णेणं एक्कं, उक्कोसेणं तिण्णि। एवं जाव अहक्खाए (२७)।

भावार्थ–७० प्रश्न–हे भगवन् ! परिहारविशुद्धिक संयत कितने भव ग्रहण करते हैं ?

७० उत्तर–हे गौतम ! जघन्य एक और उत्कृष्ट तीन भव ग्रहण करते हैं। इसी प्रकार यावत् यथाख्यात संयत पर्यन्त (२७)।

## आकर्ष द्वार

७१ प्रश्न–सामाइयसंजयस्स णं भंते ! एगभवग्गहणिया केवइया आगरिसा पण्णत्ता ?

७१ उत्तर–गोयमा ! जहण्णेणं–जहा बउसस्स।

भावार्थ–७१ प्रश्न–हे भगवन् ! सामायिक संयत के एक भव में आकर्ष (चारित्र प्राप्ति) कितने होते हैं ?

७१ उत्तर–हे गौतम ! जघन्य एक और उत्कृष्ट शतपृथक्त्व होते हैं इत्यादि बकुश के समान।

७२ प्रश्न–छेओवट्ठावणियस्स–पुच्छा।

७२ उत्तर–गोयमा ! जहण्णेणं एक्को, उक्कोसेणं वीसपुहुत्तं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ-७२ प्रश्न-हे भगवन् ! छेदोपस्थापनीय संयत के एक भव में कितने आकर्ष कहे हैं ?

७२ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य एक और उत्कृष्ट बीस पृथक्त्व (दो बीसी से छह बीसी तक) होते हैं ।

७३ प्रश्न-परिहारविसुद्धियस्स-पुच्छा ।

७३ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं एक्को, उक्कोसेणं तिण्णि ।

भावार्थ-७३ प्रश्न-हे भगवन् ! परिहारविशुद्धिक संयत के एक भव में कितने० ?

७३ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य एक और उत्कृष्ट तीन आकर्ष कहे हैं ।

७४ प्रश्न-सुहुमसंपरायस्स-पुच्छा ।

७४ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं एक्को, उक्कोसेणं चत्तारि ।

भावार्थ-७४ प्रश्न-हे भगवन् ! सूक्ष्म-संपराय के एक भव में कितने आकर्ष० ?

७४ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य एक और उत्कृष्ट चार आकर्ष कहे हैं ।

७५ प्रश्न-अहक्खायस्स-पुच्छा ।

७५ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं एक्को, उक्कोसेणं दोण्णि ।

भावार्थ-७५ प्रश्न-हे भगवन् ! यथाख्यात संयत के एक भव में कितने० ?

७५ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य एक और उत्कृष्ट दो आकर्ष कहे हैं ।

७६ प्रश्न-सामाइयसंजयस्स णं भंते ! णाणाभवग्गहणिया केवइया आगरिसा पण्णत्ता ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

७६ उत्तर-गोयमा ! जहा बउसे ।

भावार्थ-७६ प्रश्न-हे भगवन् ! सामायिक संयत के अनेक भवों में कितने आकर्ष कहे हैं ?

७६ उत्तर-हे गौतम ! बकुश के अनुसार ।

७७ प्रश्न-छेओवट्ठावणियस्स-पुच्छा ।

७७ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं दोण्णि, उक्कोसेणं उवरिं णवण्हं सयाणं अंतो सहस्सस्स । परिहारविसुद्धियस्स जहण्णेणं दोण्णि, उक्कोसेणं सत्त । सुहुमसंपरायस्स जहण्णेणं दोण्णि, उक्कोसेणं णव । अहक्खायस्स जहण्णेणं दोण्णि, उक्कोसेणं पंच ।

कठिन शब्दार्थ--उवरिं—ऊपर ।

भावार्थ-७७ प्रश्न-हे भगवन् ! छेदोपस्थापनीय संयत के अनेक भवों में० ?

७७ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य दो तथा उत्कृष्ट नौ सौ से ऊपर और एक हजार से नीचे आकर्ष कहे हैं । परिहारविशुद्धिक संयत के जघन्य दो और उत्कृष्ट सात, सूक्ष्म-संपराय संयत के जघन्य दो और उत्कृष्ट नौ तथा यथाख्यात संयत के जघन्य दो और उत्कृष्ट पांच आकर्ष कहे हैं (२८) ।

विवेचन-छेदोपस्थापनीय संयत उत्कृष्ट आकर्ष छह बीसी (एक सौ बीस) होते हैं । अतः बीस पृथक्त्व कहे हैं । परिहारविशुद्धिक संयम एक भव में उत्कृष्ट तीन बार प्राप्त हो सकता है । सूक्ष्म-संपराय संयत के एक भव में दो बार उपशम-श्रेणी का सम्भव होने से और प्रत्येक श्रेणी में संक्लिश्यमान और विशुद्धयमान-ये दो प्रकार के सूक्ष्म-संपराय होने से उत्कृष्ट चार बार सूक्ष्म-संपरायपन की प्राप्ति होती है । यथाख्यात संयत के दो बार उपशम-श्रेणी का सम्भव होने से दो आकर्ष (चारित्र प्राप्त) होते हैं ।

छेदोपस्थापनीय संयत के अनेक भव में नौ सौ से ऊपर और एक हजार से कम आकर्ष कहे हैं । इसकी संगति इस प्रकार है:-मान लिया जाय कि एक भव में छह बीसी आकर्ष होते हैं । उनको आठ भवों के साथ गुणित करने पर १६० होते हैं । सम्भावना मात्र की

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अपेक्षा से यह संख्या विशेष बताई गई है। इसके अतिरिक्त दूसरी रीति से भी–जिस में नौ सौ से अधिक संख्या आ जाय, घटित करना चाहिये।

परिहारविशुद्धिक संयत के एक भव में उत्कृष्ट तीन बार परिहारविशुद्धि चारित्र की प्राप्ति होती है और यह चारित्र तीन भव तक प्राप्त हो सकता है। इसलिये एक भव में तीन बार, दूसरे भव में दो बार और तीसरे भव में दो बार इत्यादि विकल्प से उसके अनेक भवों में सात आकर्ष होते हैं। सूक्ष्म-संपराय संयत के एक भव में चार आकर्ष होते हैं और इसकी प्राप्ति तीन भव तक हो सकती है। इसलिये उसके एक भव में चार बार, दूसरे भव में चार बार और तीसरे भव में एक बार, इस प्रकार अनेक भवों में नौ आकर्ष होते हैं। यथाख्यात संयत के एक भव में दो आकर्ष, दूसरे भव में दो आकर्ष और तीसरे भव में एक आकर्ष, इस प्रकार तीन भवों में पाँच आकर्ष होते हैं।

## स्थिति द्वार

**७८ प्रश्न–सामाइयसंजए णं भंते ! कालओ केवच्चिरं होइ ?**

**७८ उत्तर–गोयमा ! जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं देसूणएहिं णवहिं वासेहिं ऊणिया पुव्वकोडी। एवं छेओवट्ठावणिए वि। परिहारविसुद्धिए जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं देसूणएहिं एगुणतीसाए वासेहिं ऊणिया पुव्वकोडी। सुहुमसंपराए जहा णियंठे। अहक्खाए जहा सामाइयसंजए।**

भावार्थ–७८ प्रश्न–हे भगवन् ! सामायिक संयत कितने काल तक होते अर्थात् उनकी स्थिति कितनी है ?

७८ उत्तर–हे गौतम ! जघन्य एक समय और उत्कृष्ट देशोन नौ वर्ष कम पूर्वकोटि वर्ष पर्यन्त। इसी प्रकार छेदोपस्थापनीय संयत भी। परिहार-विशुद्धिक संयत जघन्य एक समय और उत्कृष्ट देशोन उनतीस वर्ष कम

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूर्वकोटि वर्ष तक होते हैं। सूक्ष्म-संपराय का काल निर्ग्रंथ के समान और यथाख्यात संयत का सामायिक संयत के समान है।

७९ प्रश्न-सामाइयसंजया णं भंते ! कालओ केवचिरं होंति ?

७९ उत्तर-गोयमा ! सव्वद्धं ।

भावार्थ-७९ प्रश्न-हे भगवन् ! सामायिक संयत (बहुत) कितने काल तक होते हैं ?

७९ उत्तर-हे गौतम ! वे सर्वाद्धा (सभी काल) होते हैं।

८० प्रश्न-छेओवट्ठावणिएसु-पुच्छा ।

८० उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं अड्ढाइज्जाइं वाससयाइं, उक्कोसेणं पण्णासं सागरोवमकोडिसयसहस्साइं ।

कठिन शब्दार्थ-पण्णासं-पचास ।

भावार्थ-८० प्रश्न-हे भगवन् ! छेदोपस्थापनीय संयत (बहुत) कितने काल तक होते हैं ?

८० उत्तर-हे गौतम ! जघन्य ढ़ाई सौ वर्ष और उत्कृष्ट पचास लाख करोड़ सागरोपम तक होते हैं।

८१ प्रश्न-परिहारविसुद्धिएसु-पुच्छा ।

८१ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं देसूणाइं दो वाससयाइं उक्कोसेणं देसूणाओ दो पुव्वकोडीओ ।

भावार्थ-८१ प्रश्न-हे भगवन् ! परिहारविशुद्धिक संयत (बहुत) कितने काल तक होते हैं ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

८१ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य देशोन दो सौ वर्ष, उत्कृष्ट देशोन दो पूर्वकोटि वर्ष तक होते हैं ।

८२ प्रश्न-सुहुमसंपरायसंजया णं भंते !-पुच्छा ।

८२ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं अंतोमुहुत्तं । अहक्खायसंजया जहा सामाइयसंजया (२९) ।

भावार्थ-८२ प्रश्न-हे भगवन् ! सूक्ष्म-संपराय संयत (बहुत) कितने काल तक होते हैं ?

८२ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य एक समय, उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त तक । यथाख्यात संयतों का कथन सामायिक संयतों के समान है (२९) ।

विवेचन-सामायिक चारित्र प्राप्ति के बाद तुरन्त ही उसकी मृत्यु हो जाय, उस अपेक्षा से सामायिक संयत का काल जघन्य एक समय होता है और उत्कृष्ट देशोन नौ वर्ष कम पूर्वकोटि वर्ष होता है । यह काल गर्भ के समय से गिनना चाहिये-।

परिहारविशुद्धिक संयत का जघन्य काल एक समय मरण की अपेक्षा है और उत्कृष्ट देशोन उनतीस वर्ष कम पूर्वकोटि वर्ष प्रमाण होता है, क्योंकि पूर्वकोटि वर्ष की आयु वाले किसी मनुष्य ने देशोन नौ वर्ष की उम्र में दीक्षा ग्रहण की और बीस वर्ष की दीक्षा-पर्याय होने पर वह परिहारविशुद्धिक चारित्र को स्वीकार कर सकता है । यद्यपि परिहारविशुद्धिक चारित्र का काल परिमाण अठारह मास का है, तथापि उन्हीं अविच्छिन्न परिणामों से वह उसे जीवनपर्यन्त पाले, तो देशोन उनतीस वर्ष कम पूर्वकोटि वर्ष पर्यन्त रहता है ।

यथाख्यात संयत का काल परिमाण उपशम अवस्था में मरण की अपेक्षा जघन्य एक समय और स्नातक अवस्था वाले यथाख्यात संयत की अपेक्षा देशोन पूर्वकोटि वर्ष है ।

उत्सर्पिणी काल में प्रथम तीर्थंकर के तीर्थ तक छेदोपस्थापनीय चारित्र होता है और उनका तीर्थ (शासन) ढ़ाई सौ वर्ष चलता है । इसलिये छेदोपस्थापनीय संयतों का काल जघन्य ढ़ाई सौ वर्ष होता है । अवसर्पिणी काल में प्रथम तीर्थंकर के तीर्थ तक छेदोपस्थापनीय चारित्र होता है और उनका तीर्थ पचास लाख करोड़ सागरोपम तक होता है। इसलिये उत्कृष्ट इतने काल तक छेदोपस्थापनीय संयत होते हैं ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

परिहारविशुद्धिक संयतों का काल जघन्य देशोन (५८ वर्ष कम) दो सौ वर्ष होता है। जैसे कि उत्सर्पिणी काल में प्रथम तीर्थंकर के समीप सौ वर्ष की आयु वाले कोई मुनि परिहारविशुद्धिक चारित्र अंगीकार करे और उनके जीवन के अन्त में उसके पास सौ वर्ष की आयु वाले दूसरे कोई मुनि परिहारविशुद्धिक चारित्र अंगीकार करे। किंतु उनके पास फिर कोई तीसरे मुनि परिहारविशुद्धिक चारित्र अंगीकार नहीं करते। इस प्रकार दो सौ वर्ष होते हैं। परन्तु परिहारविशुद्धिक चारित्र अंगीकार करने वाला उनतीस वर्ष की आयु हो जाने पर ही यह चारित्र अंगीकार कर सकता है। इस प्रकार दो व्यक्तियों के अठावन वर्ष कम हो जाने पर अठावन वर्ष कम दो सौ वर्ष अर्थात् एक सौ बयालीस वर्ष जघन्य काल होता है। इस प्रकार टीकाकार ने व्याख्या की है और चूर्णिकार ने भी इसी प्रकार व्याख्या की है, किन्तु वह अवसर्पिणी काल के अन्तिम तीर्थंकर की अपेक्षा से की है। दोनों व्याख्याओं की संगति एक ही प्रकार से बताई है किन्तु परिहारविशुद्धिक चारित्र वाला चौथे आरे का जन्मा हुआ होने से दूसरे पाठ (प्रथम परिहारविशुद्धिक चारित्र अंगीकार करने वालों के पास में उनके जीवन के अन्त में परिहारविशुद्धिक चारित्र अंगीकार करने वाला) की आयु एक सौ आठ वर्ष या इससे अधिक हो जाती है। उत्कृष्ट काल देशोन दो पूर्वकोटि वर्ष होता है। जैसे कि–अवसर्पिणी काल के प्रथम तीर्थंकर के समीप पूर्वकोटि वर्ष की आयु वाले मुनि परिहारविशुद्धिक चारित्र अंगीकार करे और उनके जीवन के अन्त में उनके पास उतनी ही आयु वाले दूसरे मुनि यही चारित्र अंगीकार करे। इस प्रकार दो पूर्वकोटि वर्ष होते हैं। उनमें से उन दोनों मुनियों की उनतीस-उनतीस वर्ष की आयु कम करने पर देशोन (५८ वर्ष कम) दो पूर्वकोटि वर्ष होते हैं।

## अन्तर काल द्वार

**८३ प्रश्न–सामाइयसंजयस्स णं भंते ! केवइयं कालं अंतरं होइ ?**

**८३ उत्तर–गोयमा ! जहण्णेणं जहा पुलागस्स। एवं जाव अहक्खायसंजयस्स।**

**भावार्थ**–८३ प्रश्न–हे भगवन् ! सामायिक संयत का अन्तर कितने काल का होता है ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

८३ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य अन्तर्मुहूर्त इत्यादि पुलाक के समान । इसी प्रकार यावत् यथाख्यात संयत पर्यन्त ।

८४ प्रश्न-सामाइयसंजयाणं भंते !-पुच्छा ।

८४ उत्तर-गोयमा ! णत्थि अंतरं ।

भावार्थ-८४ प्रश्न-हे भगवन् ! सामायिक संयतों का अंतर कितने काल का० ?

८४ उत्तर-हे गौतम ! अन्तर नहीं होता ।

८५ प्रश्न-छेओवट्ठावणिय-पुच्छा ।

८५ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं तेवट्ठिं वाससहस्साइं, उक्कोसेणं अट्ठारस सागरोवमकोडाकोडीओ ।

भावार्थ-८५ प्रश्न-हे भगवन् ! छेदोपस्थापनीय संयतों का अन्तर० ?

८५ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य तिरसठ हजार वर्ष और उत्कृष्ट (कुछ कम) अठारह कोड़ाकोड़ी सागरोपम ।

८६ प्रश्न-परिहारविसुद्धियस्स-पुच्छा ।

८६ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं चउरासीइं वाससहस्साइं, उक्कोसेणं अट्ठारस सागरोवमकोडाकोडीओ । सुहुमसंपरायाणं जहा णियंठाणं । अहक्खायाणं जहा सामाइयसंजयाणं (३०) ।

भावार्थ-८६ प्रश्न-हे भगवन् ! परिहारविशुद्धिक संयतों का अन्तर० ?

८६ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य चौरासी हजार वर्ष उत्कृष्ट (कुछ कम) अठारह कोड़ाकोड़ी सागरोपम का है । सूक्ष्म-सम्पराय संयतों का अन्तर निर्ग्रंथों के समान और यथाख्यात संयतों का सामायिक संयतों के समान है (३०) ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

**विवेचन**–अन्तर द्वार में छेदोपस्थापनीय का जो अन्तर बताया है, वह इस प्रकार समझना चाहिये–अवसर्पिणी काल के दुषमा नामक पाँचवें आरे तक छेदोपस्थापनीय चारित्र रहता है। उसके बाद दुषमदुषमा नामक छठे आरे में–जो इक्कीस हजार वर्ष का होता है और उत्सर्पिणी काल के इक्कीस हजार वर्ष परिमाण पहले आरे में तथा इक्कीस हजार वर्ष परिमाण दूसरे आरे में, छेदोपस्थापनीय चारित्र का अभाव होता है। इस प्रकार तिरसठ हजार वर्ष परिमाण छेदोपस्थापनीय संयतों का जघन्य अन्तर होता है और उत्कृष्ट अन्तर अठारह कोटाकोटि सागरोपम का होता है। वह इस प्रकार है–उत्सर्पिणी काल के चौबीसवें तीर्थंकर के तीर्थ तक छेदोपस्थापनीय चारित्र होता है। उसके बाद दो कोटाकोटि प्रमाण चौथे आरे में, तीन कोटाकोटि प्रमाण पाँचवें आरे में और चार कोटाकोटि प्रमाण छठे आरे में तथा इसी प्रकार अवसर्पिणी काल के चार कोटाकोटि सागरोपम प्रमाण पहले आरे में, तीन कोटाकोटि सागरोपम प्रमाण दूसरे आरे में और दो कोटाकोटि सागरोपम प्रमाण तीसरे आरे में छेदोपस्थापनीय चारित्र नहीं होता। परन्तु उसके बाद में अवसर्पिणी काल के तीसरे आरे के पिछले भाग में प्रथम तीर्थंकर के तीर्थ में छेदोपस्थापनीय चारित्र होता है। इस प्रकार छेदोपस्थापनीय संयतों का उत्कृष्ट अन्तर अठारह कोटाकोटि सागरोपम होता है। इसमें थोड़ा काल कम रहता है और जघन्य अंतर में थोड़ा काल बढ़ता है, परंतु वह अल्प होने से उसकी विवक्षा यहां नहीं की है।

अवसर्पिणी काल का पाँचवाँ और छठा आरा तथा उत्सर्पिणी काल का पहला और दूसरा आरा ये प्रत्येक आरे इक्कीस-इक्कीस हजार वर्ष के होते हैं। इन चारों आरों में परिहारविशुद्धि चारित्र नहीं होता। इसलिये चौरासी हजार वर्ष परिहारविशुद्धिक संयतों का जघन्य अन्तर है। यहाँ अन्तिम तीर्थंकर के पश्चात् पाँचवें आरे में परिहारविशुद्धि चारित्र का काल कुछ अधिक और उत्सर्पिणी काल के तीसरे आरे में परिहारविशुद्धि चारित्र को स्वीकार करने से पहले का काल अल्प होने से उसकी यहाँ विवक्षा नहीं की है।

परिहारविशुद्धि चारित्र का उत्कृष्ट अन्तर अठारह कोटाकोटि सागरोपम का होता है। उसकी संगति छेदोपस्थापनीय चारित्र के समान जाननी चाहिये।

# समुद्घात द्वार

## ८७ प्रश्न–सामाइयसंजयस्स णं भंते ! कइ समुग्घाया पण्णत्ता ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

८७ उत्तर–गोयमा ! छ समुग्घाया पण्णत्ता–जहा कसायकुसीलस्स। एवं छेओवट्ठावणियस्स वि। परिहारविसुद्धियस्स जहा पुलागस्स। सुहुमसंपरायस्स जहा णियंठस्स। अहक्खायस्स जहा सिणायस्स (३१)।

भावार्थ–८७ प्रश्न–हे भगवन् ! सामायिक संयत के समुद्घात कितने कहे हैं ?

८७ उत्तर–हे गौतम ! कषाय-कुशील के समान छह समुद्घात कहे हैं। इसी प्रकार छेदोपस्थापनीय संयत भी। परिहारविशुद्धिक संयत पुलाक के समान है। सूक्ष्म-संपराय संयत निर्ग्रंथ के समान है और यथाख्यात संयत के समुद्घात स्नातक जैसे हैं (३१)।

## लोक स्पर्श द्वार

८८ प्रश्न–सामाइयसंजए णं भंते ! लोगस्स किं संखेज्जइभागे होज्जा, असंखेज्जइभागे–पुच्छा।

८८ उत्तर–गोयमा ! णो संखेज्जइ–जहा पुलाए। एवं जाव सुहुमसंपराए। अहक्खायसंजए जहा सिणाए (३२)।

भावार्थ–८८ प्रश्न–हे भगवन् ! सामायिक संयत, लोक के संख्यातवें भाग में होते हैं या असंख्यातवें भाग में० ?

८८ उत्तर–हे गौतम ! लोक के संख्यातवें भाग में नहीं होते इत्यादि पुलाक के समान। इसी प्रकार यावत् सूक्ष्म-संपराय संयत तक। यथाख्यात संयत का कथन स्नातक के समान है (३२)।

८९ प्रश्न–सामाइयसंजए णं भंते ! लोगस्स किं संखेज्जइभागं फुसइ० ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

८९ उत्तर-जहेव होज्जा तहेव फुसइ (३३)।

कठिन शब्दार्थ--फुसइ--स्पर्श करता है।

भावार्थ-८९ प्रश्न-हे भगवन्! सामायिक संयत लोक के संख्यातवें भाग को स्पर्श करते हैं० ?

८९ उत्तर-हे गौतम! जिस प्रकार क्षेत्र अवगाहना कही है, उसी प्रकार क्षेत्र-स्पर्शना भी जाननी चाहिये (३३)।

## भाव द्वार

९० प्रश्न-सामाइयसंजए णं भंते! कयरंमि भावे होज्जा ?

९० उत्तर-गोयमा! खओवसमिए भावे होज्जा। एवं जाव सुहुमसंपराए।

भावार्थ-९० प्रश्न-हे भगवन्! सामायिक संयत कौन-से भाव में होते हैं?

९० उत्तर-हे गौतम! क्षायोपशमिक भाव में होते हैं। इसी प्रकार यावत् सूक्ष्म-संयत पर्यन्त।

९१ प्रश्न-अहक्खायसंजए-पुच्छा।

९१ उत्तर-गोयमा! उवसमिए वा खइए वा भावे होज्जा (३४)।

भावार्थ-९१ प्रश्न-हे भगवन्! यथाख्यात संयत किस भाव में होते हैं?

९१ उत्तर-हे गौतम! औपशमिक या क्षायिक भाव में होते हैं (३४)।

विवेचन--क्षेत्र द्वार, स्पर्शना द्वार और भाव द्वार के लिये पुलाक आदि का अतिदेश किया है। जिनका वर्णन उ. ६ में किया जा चुका है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# परिमाण द्वार

९२ प्रश्न–सामाइयसंजया णं भंते ! एगसमएणं केवइया होज्जा ?

९२ उत्तर–गोयमा ! पडिवज्जमाणए य पडुच्च जहा कसाय-कुसीला तहेव णिरवसेसं ।

भावार्थ–९२ प्रश्न–हे भगवन् ! सामायिक संयत एक समय में कितने होते हैं ?

९२ उत्तर–हे गौतम ! प्रतिपद्यमान सामायिक संयत आदि का परिमाण कषाय-कुशील के समान है ।

९३ प्रश्न–छेओवट्ठावणिया–पुच्छा ।

९३ उत्तर–गोयमा ! पडिवज्जमाणए पडुच्च सिय अत्थि सिय णत्थि । जइ अत्थि जहण्णेणं एक्को वा दो वा तिण्णि वा, उक्कोसेणं सयपुहुत्तं । पुव्वपडिवण्णए पडुच्च सिय अत्थि सिय णत्थि, जइ अत्थि जहण्णेणं कोडिसयपुहुत्तं, उक्कोसेण वि कोडिसयपुहुत्तं । परिहार-विसुद्धिया जहा पुलाया । सुहुमसंपराया जहा णियंठा ।

भावार्थ–९३ प्रश्न–हे भगवन् ! छेदोपस्थापनीय संयत एक समय में कितने० ?

९३ उत्तर–हे गौतम ! प्रतिपद्यमान कदाचित् होते हैं और नहीं भी होते । यदि होते हैं, तो जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट शत-पृथक्त्व होते हैं । पूर्वप्रतिपन्न कदाचित् होते हैं और नहीं भी होते । यदि होते हैं, तो जघन्य कोटिशतपृथक्त्व और उत्कृष्ट भी कोटिशतपृथक्त्व । परिहारविशुद्धिक संयतों का परिमाण पुलाक के समान और सूक्ष्म-संपराय संयतों की संख्या निर्ग्रन्थों के समान है ।

९४ प्रश्न–अहक्खायसंजया णं–पुच्छा ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

९४ उत्तर-गोयमा ! पडिवज्जमाणए पडुच्च सिय अत्थि सिय णत्थि। जइ अत्थि जहण्णेणं एक्को वा दो वा तिण्णि वा, उक्कोसेणं बावट्ठसयं-अट्ठुत्तरसयं खवगाणं, चउप्पण्णं उवसामगाणं। पुव्वपडिवण्णए पडुच्च जहण्णेणं कोडिपुहुत्तं, उक्कोसेण वि कोडिपुहुत्तं।

**भावार्थ**-९४ प्रश्न-हे भगवन् ! यथाख्यात संयत एक समय में कितने होते हैं ?

९४ उत्तर-हे गौतम ! प्रतिपद्यमान कदाचित् होते हैं और नहीं भी होते। यदि होते हैं, तो जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट १६२ होते हैं। जिनमें १०८ क्षपक और ५४ उपशमक होते हैं। पूर्वप्रतिपन्न जघन्य और उत्कृष्ट कोटिपृथक्त्व होते हैं (३४)।

**विवेचन**-परिमाण द्वार में छेदोपस्थापनीय संयतों का जो उत्कृष्ट परिमाण बताया है, वह प्रथम तीर्थंकर के तीर्थ की अपेक्षा सम्भवित होता है, किन्तु जघन्य परिमाण बराबर समझ में नहीं आता, क्योंकि पाँचवें आरे के अन्त में भरतादि दस क्षेत्रों में प्रत्येक क्षेत्र में दो-दो संयत होने से जघन्य बीस छेदोपस्थापनीय संयत होते हैं। कोई आचार्य तो इस प्रकार कहते हैं कि जघन्य परिमाण भी प्रथम तीर्थंकर के तीर्थ की अपेक्षा समझना चाहिये-ऐसा टीकाकारों का अभिप्राय है। इसमें जो जघन्य परिमाण में कोटिशतपृथक्त्व बताया है, उसका परिमाण अल्प है और उत्कृष्ट में जो कोटिशतपृथक्त्व बताया है, उसका परिमाण अधिक समझना चाहिये।

प्रतिपद्यमान यथाख्यात संयत एक समय में उत्कृष्ट १६२ होते हैं। इनमें १०८ क्षपक होते हैं। क्षपक-श्रेणी वाले सभी मोक्ष जाते हैं एक समय में १०८ से अधिक मोक्ष नहीं जा सकते। अतः एक समय में क्षपक यथाख्यात संयतों की उत्कृष्ट संख्या १०८ ही होती है। उसी समय उपशमक यथाख्यात संयतों की संख्या ५४ ही होती है, क्योंकि जीव का स्वभाव ही ऐसा है। इस प्रकार एक समय में यथाख्यात संयतों की उत्कृष्ट संख्या १६२ घटित होती है।

## अल्प-बहुत्व द्वार

९५ प्रश्न-एएसि णं भंते ! सामाइय-छेओवट्ठावणिय-परिहार-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विसुद्धिय-सुहुमसंपराय-अहक्खायसंजयाणं कयरे कयरे जाव विसेसाहिया वा ?

९५ उत्तर-गोयमा ! सव्वत्थोवा सुहुमसंपरायसंजया, परिहारविसुद्धियसंजया संखेज्जगुणा, अहक्खायसंजया संखेज्जगुणा, छेओवट्ठावणियसंजया संखेज्जगुणा, सामाइयसंजया संखेज्जगुणा (३६)।

भावार्थ-९५ प्रश्न-हे भगवन् ! सामायिक संयत, छेदोपस्थापनीय संयत, परिहारविशुद्धिक संयत, सूक्ष्म-संपराय संयत और यथाख्यात संयतों में कौन किससे यावत् विशेषाधिक हैं ?

९५ उत्तर-हे गौतम ! सूक्ष्म संपराय संयत सब से थोड़े हैं, उनसे परिहारविशुद्धिक संयत संख्यात गुण हैं, उनसे यथाख्यात संयत संख्यात गुण हैं, उनसे छेदोपस्थापनीय संयत संख्यात गुण हैं और उनसे सामायिक संयत संख्यात गुण है (३६)।

विवेचन-अल्प-बहुत्व द्वार में सब से अल्प सूक्ष्म-सम्पराय संयत कहे हैं, क्योंकि उनका काल अल्प है और वे निर्ग्रंथ के तुल्य होने से एक समय में शतपृथक्त्व होते हैं, उनसे परिहारविशुद्धिक संयत संख्यात गुण होते हैं, क्योंकि उनका काल सूक्ष्म-सम्पराय संयतों से अधिक है और वे पुलाक के समान सहस्रपृथक्त्व होते हैं, उनसे यथाख्यात संयत संख्यात गुण होते हैं, उनका परिमाण कोटिपृथक्त्व होता है, उनसे छेदोपस्थापनीय संयत संख्यात गुण होते हैं, उनका परिमाण कोटिशतपृथक्त्व होता है, उनसे सामायिक संयत संख्यात गुण होते हैं, उनका परिमाण कषाय-कुशील के समान कोटिसहस्रपृथक्त्व होता है।

९६-पडिसेवण दोसाऽऽलोयणा य आलोयणारिहे चेव।
तत्तो सामायारी पायच्छित्ते तवे चेव।

९६ भावार्थ-१ प्रतिसेवना २ आलोचना के दोष ३ दोषों की आलोचना ४ आलोचना देने योग्य गुरु ५ समाचारी ६ प्रायश्चित्त और ७ तप, इन सात विषयों का वर्णन अब आगे किया जायगा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# प्रतिसेवना

९७ प्रश्न–कइविहा णं भंते ! पडिसेवणा पण्णत्ता ?

९७ उत्तर–गोयमा ! दसविहा पडिसेवणा पण्णत्ता, तं जहा–

दप्पपमाद्ऽणाभोगे आउरे आवतीति य ।

संकिण्णे सहसक्कारे भयप्पओसा य वीमंसा ।

**कठिन शब्दार्थ**–**वीमंसा**–विमर्श–विचार–परीक्षा ।

**भावार्थ**–९७ प्रश्न–हे भगवन् ! प्रतिसेवना कितने प्रकार की कही है ?

९७ उत्तर–हे गौतम ! प्रतिसेवना दस प्रकार की कही है । यथा– १ दर्प प्रतिसेवना, २ प्रमाद प्रतिसेवना, ३ अनाभोग प्रतिसेवना, ४ आतुर प्रतिसेवना, ५ आपत् प्रतिसेवना, ६ संकीर्ण प्रतिसेवना, ७ सहसाकार प्रतिसेवना ८ भय प्रतिसेवना, ९ प्रद्वेष प्रतिसेवना और १० विमर्श प्रतिसेवना ।

**विवेचन**–पाप या दोषों के सेवन से होने वाली संयम की विराधना को 'प्रतिसेवना' कहते हैं । इसके दस भेद हैं––

१ दर्प प्रतिसेवना––अहंकार (अभिमान) से होने वाली संयम की विराधना ।

२ प्रमाद प्रतिसेवना––मद्यपान, विषय, कषाय, निद्रा और विकथा, इन प्रमादों के सेवन से होने वाली संयम की विराधना ।

३ अनाभोग प्रतिसेवना––अनजान से होने वाली संयम की विराधना ।

४ आतुर प्रतिसेवना––भूख, प्यास, आदि किसी पीड़ा से व्याकुल होने पर की गई संयम की विराधना ।

५ आपत् प्रतिसेवना––किसी आपत्ति के आने पर संयम की विराधना करना । आपत्ति चार प्रकार की होती है । यथा––द्रव्य आपत्ति––प्रासुक आदि निर्दोष आहारादि नहीं मिलना । क्षेत्र आपत्ति––मार्ग भूल जाने आदि से अटवी आदि भयानक वन में भटक जाना । काल आपत्ति––दुर्भिक्ष आदि में । भाव आपत्ति––रोगातंक से शरीर का अस्वस्थ हो जाना ।

६ संकीर्ण प्रतिसेवना––स्वपक्ष और परपक्ष से होने वाली स्थान की तंगी के कारण संयम का उल्लंघन करना अर्थात् छोटे क्षेत्रों में साधु-साध्वी और गृहस्थों का अधिक इकट्ठा हो जाने से संयम में दोष लगाना अथवा शंकित प्रतिसेवना––ग्रहण योग्य आहार में भी किसी दोष की शंका हो जाने पर उसको लेना । अथवा आहारादि के न मिलने पर

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

खेद पूर्वक वचन बोलना ।

७ सहसाकार प्रतिसेवना-अकस्मात् अर्थात् पहले से बिना समझे-बूझे और बिना प्रतिलेखना किये किसी काम को करना । अर्थात् पहले बिना देखे पैर आदि रखना और पीछे देखना ।

८ भय प्रतिसेवना-सिंह आदि के भय से संयम की विराधना करना ।

९ प्रद्वेष प्रतिसेवना-किसी के ऊपर द्वेष या ईर्षा से संयम की विराधना करना । यहां प्रद्वेष से चारों कषाय लिये जाते है ।

१० विमर्श प्रतिसेवना-शिष्य की परीक्षा आदि के लिये की गई संयम की विराधना ।

इन दस कारणों से संयम की विराधना की जाती है या हो जाती है ।

## आलोचना के दोष

**९८ दस आलोयणादोसा, पण्णत्ता, तं जहा-**
**आकंपइत्ता अणुमाणइत्ता जं दिट्ठं बायरं च सुहुमं वा ।**
**छण्णं सद्दाउलयं बहुजण अव्वत्त तस्सेवी ।**

**भावार्थ**-९८-आलोचना के दस दोष कहे हैं । यथा-१ आकम्प्य २ अनुमान्य ३ दृष्ट ४ बादर ५ सूक्ष्म ६ छन्न-प्रछन्न ७ शब्दाकुल ८ बहुजन ९ अव्यक्त और १० तत्सेवी ।

**विवेचन**-जानते या अजानते लगे हुए दोष को आचार्य या बड़े साधु के सामने निवेदन कर के उसके लिये उचित प्रायश्चित्त लेना-'आलोचना' है । आलोचना का शब्दार्थ है-अपने दोषों को भली प्रकार देखना । आलोचना के दस दोष हैं । इन्हें छोड़ते हुए शुद्ध हृदय से आलोचना करनी चाहिये । वे दोष इस प्रकार हैं-

१ आकंपयित्ता (आकम्प्य)-'प्रसन्न होने पर गुरु महाराज मुझे थोड़ा प्रायश्चित्त देंगे'-ऐसा सोच कर उन्हें सेवा आदि से प्रसन्न कर के फिर उनके समक्ष दोषों की आलोचना करना ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२ अणुमाणइत्ता (अनुमान्य)-'बिलकुल छोटा अपराध बताने में गुरु महाराज मुझे बहुत थोड़ा प्रायश्चित्त देंगे'-ऐसा अनुमान कर के अपने अपराध को बहुत छोटा कर के बताना।

३ दिट्ठं (दृष्ट)-जिस अपराध को गुरु महाराज आदि ने देख लिया हो, उसी की आलोचना करना।

४ बायरं (बादर)-केवल बड़े-बड़े अपराधों की आलोचना करना और छोटे अपराधों की उपेक्षा कर उनकी आलोचना नहीं करना।

५ सुहुम (सूक्ष्म)-'जो अपने छोटे-छोटे अपराधों की भी आलोचना कर लेता है, वह बड़े अपराधों को कैसे छोड़ सकता है'-ऐसा विश्वास उत्पन्न कराने के लिये केवल छोटे-छोटे दोषों की आलोचना करना।

६ छण्णं (छन्न-प्रछन्न)-अधिक लज्जा के कारण अव्यक्त शब्द बोलते हुए इस प्रकार आलोचना करना कि जिनके समीप आलोचना की जाय वह न सुन सके।

७ सद्दाउलयं (शब्दाकुल)-दूसरे अगीतार्थों को सुनाने के लिये ऊँचे स्वर से बोलकर आलोचना करना।

८ बहुजणं (बहुजन)-एक ही अतिचार की बहुत-से साधुओं के समीप आलोचना करना।

९ अव्वत्त (अव्यक्त)-अगीतार्थ अर्थात् जिस साधु को पूरा ज्ञान नहीं है कि किस अतिचार का कैसा प्रायश्चित्त दिया जाता है, उसके समक्ष आलोचना करना।

१० तस्सेवी (तत्सेवी)-जिस दोष की आलोचना करनी हो, उसी दोष को सेवन करने वाले आचार्य के पास आलोचना करना।

ये आलोचना के दस दोष हैं। इन्हें टाल कर शुद्ध हृदय से आलोचना करनी चाहिये।

## आलोचना के योग्य

**९९-दसहिं ठाणेहिं संपण्णे अणगारे अरिहइ अत्तदोसं आलोइत्तए, तंजहा-जाइसंपण्णे, कुलसंपण्णे, विणयसंपण्णे, णाणसंपण्णे,**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

**दंसणसंपण्णे चरित्तसंपण्णे, खंते, दंते, अमायी, अपच्छाणुतावी ।**

**भावार्थ-९९-दस गुणों से युक्त अनगार आलोचना करने के योग्य होते हैं । यथा-१ जाति सम्पन्न २ कुल सम्पन्न ३ विनय सम्पन्न ४ ज्ञान सम्पन्न ५ दर्शन सम्पन्न ६ चारित्र सम्पन्न ७ क्षान्त (क्षमावाला) ८ दान्त ९ अमायी और १० अपश्चात्तापी ।**

**विवेचन**-दस गुणों से युक्त अनगार अपने दोषों की आलोचना करने के योग्य होते हैं । वे गुण इस प्रकार हैं—

१ जाति सम्पन्न—मातृ पक्ष को 'जाति' कहते हैं । उत्तम जाति वाला बुरा काम नहीं करता । यदि कभी उससे भूल हो जाती है, तो शुद्ध हृदय से आलोचना कर लेता है ।

२ कुल सम्पन्न—पितृवंश को 'कुल' कहते हैं । उत्तम कुल में उत्पन्न हुआ व्यक्ति स्वीकार किये हुए प्रायश्चित्त को भली प्रकार से पूरा करता है ।

३ विनय सम्पन्न—विनयवान् साधु, बड़ों की बात मान कर शुद्ध हृदय से आलोचना करता है ।

४ ज्ञान सम्पन्न—ज्ञानवान् साधु 'मोक्ष मार्ग की आराधना के लिये क्या करना चाहिये और क्या नहीं'—इसे भली प्रकार समझ कर आलोचना करता है ।

५ दर्शन सम्पन्न—श्रद्धालु । भगवान् के वचनों पर श्रद्धा होने के कारण वह शास्त्रों में बताई हुई, प्रायश्चित्त से होने वाली शुद्धि को मानता है और आलोचना करता है ।

६ चारित्र सम्पन्न—उत्तम चारित्र वाला । अपने चारित्र को शुद्ध रखने के लिये, दोषों की आलोचना करता है ।

७ क्षान्त—क्षमावाला । किसी दोष के कारण गुरु से उपालम्भ आदि मिलने पर, वह क्रोध नहीं करता और अपना दोष स्वीकार कर के आलोचना करता है ।

८ दान्त—इन्द्रियों को वश में रखने वाला । इन्द्रियों के विषय में अनासक्त व्यक्ति कठोर से कठोर प्रायश्चित्त भी शीघ्र स्वीकार करता है । वह पापों की आलोचना भी शुद्ध हृदय से करता है ।

९ अमायी—कपट रहित । अपने पाप को छिपाये बिना स्वच्छ हृदय से आलोचना करने वाला सरल व्यक्ति ।

१० अपश्चात्तापी—आलोचना करने के बाद पछतावा नहीं करने वाला ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# आलोचना देने योग्य

१००–अट्ठहिं ठाणेहिं संपण्णे अणगारे अरिहइ आलोयणं पडिच्छित्तए, तं जहा–आयारवं, आहारवं, ववहारवं, उव्वीलए, पकुव्वए, अपरिस्सावी, णिज्जवए, अवायदंसी।

भावार्थ–१००–आठ गुणों से युक्त साधु आलोचना देने के योग्य होते हैं। यथा–१ आचारवान् २ आधारवान् ३ व्यवहारवान् ४ अपव्रीड़क ५ प्रकुर्वक ६ अपरिस्रावी ७ निर्यापक और ८ अपायदर्शी।

विवेचन–आठ गुणों से युक्त साधु आलोचना सुनने के योग्य होते हैं। यथा—

१ आचारवान्–ज्ञानादि पाँच प्रकार के आचार वाला।

२ आधारवान्–बताये हुए अतिचारों को मन में धारण करने वाला।

३ व्यवहारवान्–आगम-व्यवहार, श्रुत-व्यवहार आदि पाँच प्रकार के व्यवहार वाला।

४ अपव्रीड़क–लज्जा से अपने दोषों को छिपाने वाले शिष्य की लज्जा, मीठे वचनों से दूर कर के भली प्रकार से आलोचना कराने वाला।

५ प्रकुर्वक–आलोचना किये हुए दोष का प्रायश्चित्त दे कर अतिचारों की शुद्धि कराने में समर्थ।

६ अपरिस्रावी–आलोचना करने वाले के दोषों को दूसरे के समक्ष प्रकट नहीं करने वाला।

७ निर्यापक–अशक्ति या किसी अन्य कारण से एक साथ पूरा प्रायश्चित्त लेने में असमर्थ साधु को थोड़ा-थोड़ा प्रायश्चित्त दे कर निर्वाह कराने वाला।

८ अपायदर्शी–आलोचना नहीं लेने में परलोक का भय तथा दूसरे दोष दिखा कर भला प्रकार आलोचना कराने वाला।

आलोचना सुनने वाले के यहाँ उपर्युक्त आठ गुण बताये हैं, किन्तु स्थानांग सूत्र में दस गुण भी बताये हैं, जिनमें ९ प्रियधर्मी और १० दृढ़धर्मी–ये दो गुण अधिक हैं।

# समाचारी के भेद

१०१–दसविहा सामायारी पण्णत्ता, तं जहा–

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इच्छा मिच्छा तहक्कारे आवस्सिया य णिसीहिया ।
आपुच्छणा य पडिपुच्छा छंदणा य णिमंतणा ।
उवसंपया य काले सामायारी भवे दसहा ।

**१०१ भावार्थ-समाचारी दस प्रकार की कही है । यथा-१ इच्छाकार २ मिथ्याकार ३ तथाकार ४ आवश्यकी ५ नैषेधिकी ६ आपृच्छना ७ प्रतिपृच्छना ८ छन्दना ९ निमन्त्रणा और १० उपसम्पदा ।**

**विवेचन**-साधु का विधिवत् आचरण अथवा मर्यादित भला आचरण 'समाचारी' कहलाता है । इसके दस भेद हैं । यथा-

१ इच्छाकार-'यदि आपकी इच्छा हो, तो मैं अपना अमुक कार्य करूँ अथवा आपकी आज्ञा हो, तो मैं आपका यह कार्य करूँ'-इस प्रकार पूछना 'इच्छाकार' कहलाता है । एक साधु, दूसरे साधु से किसी कार्य के लिये प्रार्थना करे अथवा दूसरा साधु स्वयं वह कार्य करे, तो उसमें 'इच्छाकार' कहना आवश्यक है । इससे किसी भी कार्य में किसी की विवशता नहीं रहती ।

२ मिथ्याकार-संयम का पालन करते हुए कोई विपरीत आचरण हो गया हो, तो उस पाप के लिये पश्चात्ताप करता हुआ साधु स्वयं कहता है कि 'मिच्छामिदुक्कडं' अर्थात् 'मेरा पाप निष्फल हो ।' इसे 'मिथ्याकार' समाचारी कहते हैं ।

३ तथाकार-सूत्रादि आगम के विषय में गुरु से कुछ पूछने पर जब गुरु महाराज उत्तर दें, तब तथा जब वे व्याख्यान दें तब-'तहत्ति' (आप कहते हैं, वह ठीक है) कहना 'तथाकार' समाचारी है ।

४ आवश्यकी-आवश्यक कार्य के लिये उपाश्रय से बाहर निकलते समय साधु को-'आवस्सिया, आवस्सिया' कहना चाहिये अर्थात् 'मैं आवश्यक कार्य के लिये जाता हूँ'-ऐसा कहना 'आवश्यकी' समाचारी है ।

५ नैषेधिकी-बाहर से लौट कर उपाश्रय में प्रवेश करते समय 'निसीहिया, निसीहिया' कहना अर्थात् जिस कार्य के लिये मैं बाहर गया था, उस कार्य से निवृत्त हो कर आ गया हूँ ।' इस प्रकार उस गत कार्य का निषेध करना 'नैषेधिकी' समाचारी है ।

६ आपृच्छना-किसी कार्य में प्रवृत्ति करने के पूर्व गुरु महाराज से पूछना कि "हे भगवन् ! मैं वह कार्य करूं ?" यह 'आपृच्छना' समाचारी है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

७ प्रतिपृच्छना–गुरु महाराज ने पहले जिस कार्य का निषेध किया, उसी कार्य में आवश्यकतानुसार प्रवृत्त होना हो, तो गुरु महाराज से पूछना कि–'हे भगवन् ! आपने पहले इस कार्य के लिये निषेध किया था, परन्तु यह कार्य करना आवश्यक है । आप अनुज्ञा प्रदान करें, तो करूँ ?' इस प्रकार पुनः पूछना 'प्रतिपृच्छना' समाचारी है ।

८ छन्दना–लाये हुए आहार के लिये दूसरे साधुओं को आमन्त्रण देना । जैसे–'यदि आपके उपयोग में आ सके, तो यह आहार ग्रहण कीजिये ।'

९ निमन्त्रणा–आहार लाने के लिये दूसरे साधुओं को निमन्त्रण देना अर्थात् पूछना । जैसे–'क्या आपके लिये आहारादि लाऊँ ?' यह 'निमन्त्रणा' समाचारी है ।

१० उपसम्पद्–ज्ञानादि प्राप्त करने के लिये अपना गच्छ छोड़ कर किसी विशेष ज्ञानी गुरु के समीप रहना–'उपसम्पद्' समाचारी है ।

इस प्रकार साधु के आचरण करने की यह दस प्रकार की समाचारी है ।

# प्रायश्चित्त के भेद

**१०२–दसविहे पायच्छित्ते पण्णत्ते, तं जहा–आलोयणारिहे, पडिक्कमणारिहे, तदुभयारिहे, विवेगारिहे, विउसग्गारिहे, तवारिहे, छेदारिहे, मूलारिहे, अणवट्ठप्पारिहे, पारंचियारिहे ।**

**१०२ भावार्थ–दस प्रकार का प्रायश्चित्त कहा हैं। यथा–१ आलोचनार्ह २ प्रतिक्रमणार्ह ३ तदुभयार्ह ४ विवेकार्ह ५ व्युत्सर्गार्ह ६ तपार्ह ७ छेदार्ह ८ मूलार्ह ९ अनवस्थाप्यार्ह और १० पारांचिकार्ह ।**

**विवेचन**–अतिचारों की विशुद्धि के लिये आलोचना करना और गुरु के कथनानुसार तपस्यादि करना 'प्रायश्चित्त' है । इसके दस भेद हैं । यथा–

१ आलोचनार्ह–संयम में लगे हुए दोष को गुरु के समक्ष स्पष्ट वचनों से सरलता पूर्वक प्रकट करना 'आलोचना' है । जो दोष आलोचना मात्र से शुद्ध हो जाय, उसे 'आलोचनार्ह' या 'आलोचना प्रायश्चित्त' कहते हैं ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२ प्रतिक्रमणार्ह–प्रतिक्रमण के योग्य। पाप से पीछे हटने एवं किये हुए पाप की निष्फलता के लिये 'मिच्छामिदुक्कडं' कहना एवं भविष्य में वैसा पाप नहीं करने का संकल्प करना। जो प्रायश्चित्त केवल प्रतिक्रमण से शुद्ध हो जाय और गुरु के समक्ष आलोचना करने की भी आवश्यकता न पड़े, उसे 'प्रतिक्रमणार्ह' कहते हैं।

३ तदुभयार्ह–आलोचना और प्रतिक्रमण दोनों के योग्य। जो प्रायश्चित्त दोनों से शुद्ध हो, उसे 'तदुभयार्ह' या 'मिश्र' प्रायश्चित्त कहते हैं।

४ विवेकार्ह–अशुद्ध भक्तादि को छोड़ना। जो प्रायश्चित्त आधाकर्मादि आहार का विवेक अर्थात् त्याग करने से शुद्ध हो जाय, उसे 'विवेकार्ह' प्रायश्चित्त कहते हैं।

५ व्युत्सर्गार्ह–कायोत्सर्ग के योग्य। शरीर की चेष्टा को रोक कर ध्येय वस्तु में उपयोग लगाने से जिस प्रायश्चित्त की शुद्धि होती है, उसे 'व्युत्सर्गार्ह' प्रायश्चित्त कहते है।

६ तपार्ह–जिस दोष की शुद्धि तप से हो, उसे 'तपार्ह' प्रायश्चित्त कहते हैं।

७ छेदार्ह–दीक्षा-पर्याय छेद के योग्य। जो अपराध दीक्षा-पर्याय का छेद करने पर शुद्ध हो, उसे 'छेदार्ह' कहते हैं।

८ मूलार्ह–मूल अर्थात् पुनः दीक्षा लेने से शुद्ध होने योग्य। ऐसा दोष जिसके सेवन करने पर साधु को एक बार लिया हुआ संयम छोड़ कर दूसरी बार दीक्षा लेनी पड़े। छेदार्ह प्रायश्चित्त में चार महीने, छह महीने या कुछ समय की दीक्षा कम कर दी जाती है। ऐसा होने पर वह दोषी साधु, उन सभी साधुओं को वन्दना करता है जिनसे पहले दीक्षित होने पर भी, दीक्षा-पर्याय कम कर देने से वह छोटा हो गया है। जितनी दीक्षा पर्याय का छेद हुआ है, उससे शेष दीक्षा-पर्याय उसकी गिनती में आती है किन्तु मूलार्ह प्रायश्चित्त में उसका पहले का संयम बिलकुल नहीं गिना जाता। दोषी को पुनः दीक्षा लेनी पड़ती है और उस समय से पहले दीक्षित सभी साधुओं को वन्दना करनी पड़ती है।

९ अनवस्थाप्यार्ह–तप के बाद दूसरी बार दीक्षा देने के योग्य। जब तक अमुक प्रकार का तप न करे, तब तक उसे संयम या दीक्षा नहीं दी जा सकती। इस प्रकार की अनवस्था (अनिश्चित काल मर्यादा) होने से यह 'अनवस्थाप्य' प्रायश्चित्त कहलाता है। निश्चित तप करने के बाद उसे गृहस्थ का वेश पहनाने के बाद दूसरी बार दीक्षा देने पर ही उसकी शुद्धि होती है, इसे 'अनवस्थाप्यार्ह' प्रायश्चित्त कहते हैं।

१० पारांचिकार्ह–गच्छ से बाहर करने योग्य। जिस दोष के सेवन करने पर साधु को गच्छ से बाहर निकाल दिया जाय। साध्वी या रानी आदि का शील भंग रूप

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

महादोष सेवन करने पर यह प्रायश्चित्त दिया जाता है। साधु-वेश और स्वक्षेत्र का त्याग कर के जिनकल्पी के समान महातप का आचरण करना पड़ता है। यह प्रायश्चित्त महा-पराक्रम वाले आचार्य को ही दिया जाता है। इसकी शुद्धि के लिये छह महीने से लेकर बारह वर्ष तक गच्छ छोड़ कर जिनकल्पी के समान कठोर तपस्या करनी पड़ती है। उपाध्याय के लिये नौवें प्रायश्चित्त तक का विधान है और सामान्य साधु के लिये आठवें मूलार्ह प्रायश्चित्त तक का विधान है। जहां तक चौदह पूर्वधारी और वज्र-ऋषभ-नाराच नामक प्रथम संहनन वाले होते हैं, वहीं तक दसों प्रायश्चित्त रहते हैं। उनका विच्छेद होने के बाद मूलार्ह तक आठ ही प्रायश्चित्त होते हैं।

अन्यत्र आचार्य और उपाध्याय के अतिरिक्त दूसरे साधुओं के लिये भी दस प्रायश्चित्त का विधान आया है।

## तप के भेद

**१०३–दुविहे तवे पण्णत्ते, तं जहा–बाहिरए य अब्भिंतरए य।**

**भावार्थ–१०३–तप दो प्रकार का कहा है। यथा–बाह्य और आभ्यंतर।**

**१०४ प्रश्न–से किं तं बाहिरए तवे ?**

**१०४ उत्तर–बाहिरए तवे छव्विहे पण्णत्ते, तं जहा–अणसणं, ओमोयरिया, भिक्खायरिया, रसपरिच्चाओ, कायकिलेसो, पडिसंलीणता।**

**कठिन–शब्दार्थ––ओमोयरिया––अवमोदरिका––ऊनोदरी।**

**भावार्थ–१०४ प्रश्न–हे भगवन् ! बाह्य तप कितने प्रकार के कहे हैं ?**

**१०४ उत्तर–हे गौतम ! बाह्य तप छह प्रकार के कहे हैं। यथा–अनशन, अवमोदरिका (ऊनोदरी), भिक्षाचर्या, रसपरित्याग, काय-क्लेश और प्रतिसंलीनता।**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

**विवेचन**-शरीर, आत्मा और कर्मों का तप ना 'तप' है। जैसे-अग्नि में तपा हुआ सोना, निर्मल हो कर शुद्ध होता है, उसी प्रकार तप रूपी अग्नि से तपी हुई आत्मा कर्म-मल से रहित हो कर शुद्ध स्वरूप हो जाता है। तप दो प्रकार का है-बाह्य और आभ्यन्तर। शरीर से विशेष सम्बन्ध रखने वाला तप 'बाह्य तप' कहलाता है। इसके छह भेद हैं।

## अनशन तप

**१०५ प्रश्न-से किं तं अणसणे ?**

**१०५ उत्तर-अणसणे दुविहे पण्णत्ते, तं जहा-इत्तरिए य आवकहिए य।**

भावार्थ-१०५ प्रश्न-हे भगवन् ! अनशन कितने प्रकार का कहा है ?

१०५ उत्तर-हे गौतम ! अनशन दो प्रकार का कहा है। यथा-इत्वरिक और यावत्कथिक।

**१०६ प्रश्न-से किं तं इत्तरिए ?**

**१०६ उत्तर-इत्तरिए अणेगविहे पण्णत्ते, तं जहा-चउत्थे भत्ते, छट्ठे भत्ते, अट्ठमे भत्ते, दसमे भत्ते, दुवालसमे भत्ते, चोद्दसमे भत्ते, अद्धमासिए भत्ते, मासिए भत्ते, दोमासिए भत्ते, तेमासिए भत्ते जाव छम्मासिए भत्ते। सेत्तं इत्तरिए।**

भावार्थ-१०६ प्रश्न-हे भगवन् ! इत्वरिक अनशन कितने प्रकार का कहा है ?

१०६ उत्तर-हे गौतम ! इत्वरिक अनशन अनेक प्रकार का कहा है। यथा-चतुर्थभक्त, (उपवास), षष्ठभक्त (बेला), अष्टमभक्त (तेला), दशम-भक्त (चोला), द्वादशभक्त (पचोला), चतुर्दशभक्त (छह उपवास), अर्द्धमासिक-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भक्त (पन्द्रह दिन के उपवास), मासिकभक्त (एक महीने के उपवास), द्विमासिकभक्त, त्रिमासिकभक्त यावत् षाण्मासिकभक्त । यह इत्वरिक अनशन है ।

१०७ प्रश्न–से किं तं आवकहिए ?

१०७ उत्तर–आवकहिए दुविहे पण्णत्ते, तं जहा–पाओवगमणे य भत्तपच्चक्खाणे य ।

भावार्थ–१०७ प्रश्न–हे भगवन् ! यावत्कथिक अनशन कितने प्रकार का है ?

१०७ उत्तर–हे गौतम ! यावत्कथिक अनशन दो प्रकार का है । यथा–पादपोपगमन और भक्त-प्रत्याख्यान ।

१०८ प्रश्न–से किं तं पाओवगमणे ?

१०८ उत्तर–पाओवगमणे दुविहे पण्णत्ते, तं जहा–णीहारिमे य अणीहारिमे य, णियमं अपडिकम्मे । सेत्तं पाओवगमणे ।

भावार्थ–१०८ प्रश्न–हे भगवन् ! पादपोपगमन कितने प्रकार का है ?

१०८ उत्तर–हे गौतम ! पादपोपगमन दो प्रकार का है । यथा–निर्हारिम और अनिर्हारिम । ये दोनों नियम से (अवश्य ही) अप्रतिकर्म होते हैं । यह पादपोपगमन तप हुआ ।

१०९ प्रश्न–से किं तं भत्तपच्चक्खाणे ?

१०९ उत्तर–भत्तपच्चक्खाणे दुविहे पण्णत्ते, तं जहा–णीहारिमे य अणीहारिमे य, णियमं सपडिकम्मे । सेत्तं भत्तपच्चक्खाणे । सेत्तं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आवकहिए । सेत्तं अणसणे ।

भावार्थ–१०९ प्रश्न–हे भगवन् ! भक्त प्रत्याख्यान के कितने भेद हैं ?

१०९ उत्तर–हे गौतम ! भक्त प्रत्याख्यान दो प्रकार का है । यथा– निर्हारिम और अनिर्हारिम । ये दोनों नियम से सप्रतिकर्म होते है । यह भक्त प्रत्याख्यान हुआ । यह यावत्कथिक अनशन और अनशन का कथन पूर्ण हुआ ।

विवेचन–१ अनशन–आहार का त्याग करना । इसके दो भेद हैं–इत्वरिक अनशन और यावत्कथिक अनशन । इत्वर का अर्थ है–अल्प काल । अल्प काल के लिए किये जाने वाले अनशन को 'इत्वरिक अनशन' कहते हैं । प्रथम तीर्थंकर के शासन में एक वर्ष, मध्य के बाईस तीर्थंकरों के शासन में आठ मास और अन्तिम तीर्थंकर के शासन में छह मास तक का उत्कृष्ट इत्वरिक अनशन होता है । इसके चतुर्थ-भक्त, षष्ठ-भक्त आदि अनेक भेद हैं । 'चतुर्थ-भक्त' को 'उपवास' भी कहते हैं । जैसा कि कहा है–

'चतुर्थं भक्तं यावद्भक्तं त्यज्यते यत्र तच्चतुर्थं इयं च
उपवासस्य संज्ञा, एवं षष्ठादिकमुपवासद्वयादेरिति ।
चतुर्थमेकेनोपवासेन, षष्ठं द्वाभ्यां, अष्टमं त्रिभिः ।

अर्थात्–'चतुर्थ-भक्त' यह उपवास की संज्ञा है अर्थात् चतुर्थ-भक्त का तात्पर्य एक उपवास है । षष्ठ-भक्त का अर्थ 'दो उपवास' और अष्टम-भक्त का अर्थ 'तीन उपवास' है । इसी प्रकार आगे भी समझना चाहिये ।

यावत्कथिक अनशन के दो भेद हैं । यथा–पादपोपगमन और भक्तप्रत्याख्यान । अशन, पान, खादिम और स्वादिम रूप चारों प्रकार के आहार का त्याग कर के अपने शरीर के किसी भी अंग को किंचित्मात्र भी नहीं हिलाते हुए, निश्चल रूप से संथारा करना 'पादपोपगमन' कहलाता है । 'पादप' का अर्थ है–'वृक्ष' । जिस प्रकार कटा हुआ वृक्ष अथवा वृक्ष की कटी हुई डाली स्वयं हिलती नहीं, उसी प्रकार संथारा कर के जिस स्थान पर, जिस रूप में एक बार लेट जाय, फिर उसी स्थान, उसी रूप में लेटे रहना और इसी प्रकार मृत्यु हो जाना 'पादपोपगमन मरण' है । इसमें हाथ-पाँव हिलाने का भी आगार नहीं होता ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तीन या चारों आहार का यावज्जीवन त्याग कर के जो संथारा किया जाता है, उसे 'भक्त-प्रत्याख्यान' अनशन कहते हैं। इसे 'भक्तपरिज्ञा' भी कहते हैं। पादपोपगमन और भक्त-प्रत्याख्यान के 'निर्हारिम' और 'अनिर्हारिम'–ऐसे दो-दो भेद होते हैं। जिस मुनि का संथारा ग्रामादि में रहते हुआ हो और उसके मृतक शरीर को ग्रामादि से बाहर ले जाना पड़े, उसे 'निर्हारिम' कहते हैं और ग्रामादि से बाहर किसी पर्वत की गुफादि में जो संथारा किया जाय, उसे 'अनिर्हारिम' कहते हैं। पादपोपगमन 'अप्रतिकर्म' होता अर्थात् संथारे की अवस्था में दूसरे मुनियों से किसी भी प्रकार की सेवा नहीं कराई जाती है। भक्त-प्रत्याख्यान अनशन 'सप्रतिकर्म' होता है। इस संथारे में दूसरे मुनियों से सेवा कराई जा सकती है।

## ऊनोदरी तप

११० प्रश्न–से किं तं ओमोयरिया ?

११० उत्तर–ओमोयरिया दुविहा पण्णत्ता. तं जहा-दव्वोमोयरिया य भावोमोयरिया य।

भावार्थ–११० प्रश्न–हे भगवन् ! अवमोदरिका (ऊनोदरी) कितने प्रकार की है ?

११० उत्तर–हे गौतम ! अवमोदरिका दो प्रकार की कही है। यथा–द्रव्य अवमोदरिका और भाव अवमोदरिका।

१११ प्रश्न–से किं तं दव्वोमोयरिया ?

१११ उत्तर–दव्वोमोयरिया दुविहा पण्णत्ता, तं जहा–उवगरणदव्वोमोयरिया य भत्तपाणदव्वोमोयरिया य।

भावार्थ–१११ प्रश्न–हे भगवन् ! द्रव्य अवमोदरिका कितने प्रकार की कही है ?

१११ उत्तर–हे गौतम ! द्रव्य अवमोदरिका दो प्रकार की कही है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

यथा-उपकरण द्रव्य अवमोदरिका और भक्तपान द्रव्य अवमोदरिका ।

११२ प्रश्न-से किं तं उवगरणदव्वोमोयरिया ?

११२ उत्तर-उवगरणदव्वोमोयरिया तिविहा पण्णत्ता, (तं जहा-) एगे वत्थे, एगे पादे, चियत्तोवगरणसाइज्जणया । सेत्तं उवगरणदव्वोमोयरिया ।

भावार्थ-११२ प्रश्न-हे भगवन् ! उपकरण द्रव्य अवमोदरिका कितने प्रकार की है ?

११२ उत्तर-हे गौतम ! उपकरण द्रव्य अवमोदरिका तीन प्रकार की कही है । यथा-एक वस्त्र, एक पात्र और त्यक्तोपकरणस्वदनता । यह उपकरण द्रव्य अवमोदरिका हुई ।

११३ प्रश्न-से किं तं भत्तपाणदव्वोमोयरिया ?

११३ उत्तर-भत्त० अट्ठकुक्कुडिअंडगप्पमाणमेत्ते कवले आहारं आहारेमाणे अप्पाहारे, दुवालस० जहा सत्तमसए पढमोद्देसए जाव णो 'पकामरसभोजी' त्ति वत्तव्वं सिया । सेत्तं भत्तपाणदव्वोमोयरिया सेत्तं दव्वोमोयरिया ।

भावार्थ-११३ प्रश्न-हे भगवन् ! भक्तपान द्रव्यअवमोदरिका कितने प्रकार की है ?

११३ उत्तर-हे गौतम ! कुर्कुटी-अण्डक प्रमाण केवल आठ कवल आहार करना-'अल्पाहार अवमोदरिका' है । बारह कवल प्रमाण आहार करना 'अवड्ढ अवमोदरिका' है इत्यादि सातवें शतक के प्रथम उद्देशकानुसार यावत् वह 'प्रकामरसभोजी नहीं' कहलाता है, पर्यन्त । यह भक्तपान द्रव्य अवमोदरिका हुई । यह द्रव्य अवमोदरिका पूर्ण हुई ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

११४ प्रश्न–से किं तं भावोमोयरिया ?

११४ उत्तर–भावोमोयरिया अणेगविहा पण्णत्ता, तं जहा–अप्पकोहे जाव अप्पलोभे, अप्पसद्दे, अप्पझंझे, अप्पतुमंतुमे । सेत्तं भावोमोयरिया । सेत्तं ओमोयरिया ।

भावार्थ–११४ प्रश्न–हे भगवन् ! भाव अवमोदरिका कितने प्रकार की कही है ?

११४ उत्तर–हे गौतम ! भाव अवमोदरिका अनेक प्रकार की कही है । यथा–अल्प क्रोध, यावत् अल्प लोभ, अल्प शब्द, अल्प झंझ, अल्प तुमन्तुम । यह भाव अवमोदरिका हुई । यह अवमोदरिका पूर्ण हुई ।

विवेचन–अवमोदरिका (ऊनोदरी)––भोजन आदि का परिमाण और क्रोधादि का आवेश कम करना–'ऊनोदरी' तप कहलाता है । इसके दो भेद हैं । यथा–द्रव्य ऊनोदरी और भाव ऊनोदरी । भण्ड-उपकरण और आहारादि का शास्त्रों में जो परिमाण बताया है, उसमें कमी करना तथा अति सरस और पौष्टिक आहार का त्याग करना––द्रव्य ऊनोदरी है । द्रव्य ऊनोदरी के दो भेद हैं । यथा––उपकरण द्रव्य ऊनोदरी और भक्तपान द्रव्य ऊनोदरी । उपकरण द्रव्य ऊनोदरी के तीन भेद हैं । यथा––एक पात्र, एक वस्त्र और जीर्ण उपधि । शास्त्र में चार पात्र रखने का विधान है । उससे कम रखना पात्र ऊनोदरी है । इसी प्रकार साधु के लिये वस्त्र बहत्तर हाथ (चोरस) और साध्वी के लिये छियानवें हाथ रखने का विधान है, इससे कम रखना 'वस्त्र ऊनोदरी' है । तीसरे भेद के लिये 'चियत्तोवगरणसाइज्जणया' यह मूलपाठ है । जिसका अर्थ टीकाकार ने किया है कि संयतों के त्यागे हुए उपकरणों को लेना तथा 'जीर्ण' वस्त्रपात्रादि लेना किया है । चूर्णिकार ने इस विषय में लिखा है–

**जं वत्थाइं धारेइ तम्मि वि ममत्तं नत्थि । जइ कोइ मग्गइ तस्स देइ ।।**

अर्थात्––मुनि के पास जो वस्त्र हों, उनमें ममत्व भाव न रखे और दूसरा कोई संभोगी साधु माँगे, तो उसे दे दे ।

ये सभी अर्थ ऊनोदरी में घटित होते हैं ।

भक्तपान द्रव्य ऊनोदरी के सामान्यतः पाँच भेद हैं । यथा–– आठ कवल (ग्रास)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रमाण आहार करना 'अल्पाहार ऊनोदरी' है। बारह कवल प्रमाण आहार करना 'अवड्ढ (अपार्द्ध) ऊनोदरी' है अर्थात् ढाई भाग की ऊनोदरी है। सोलह कवल प्रमाण आहार करना 'अर्द्ध ऊनोदरी' है। चौबीस कवल प्रमाण आहार करना 'प्राप्त (पाव) ऊनोदरी' है अर्थात् चार विभाग में से तीन विभाग आहार है और एक विभाग ऊनोदरी है। इकत्तीस कवल प्रमाण आहार करना 'किंचित् ऊनोदरी' है और पूरे बत्तीस कवल प्रमाण आहार करना 'प्रमाणोपेत आहार' कहलाता है। पूर्ण आहार तप नहीं माना जाता। एक कवल प्रमाण भी आहार कम करे, वहाँ तक थोड़ा भी तप अवश्य है और इस प्रकार ऊनोदरी तप करने वाला मुनि 'प्रकाम-रस-भोजी' नहीं कहलाता। इस ऊनोदरी तप का विशेष विवेचन सातवें शतक के प्रथम उद्देशक में किया जा चुका है।

भाव ऊनोदरी के अनेक भेद कहे हैं। क्रोध, मान, माया और लोभ में कमी करना, इनके आवेश को कम करना। अल्प शब्द बोलना, कषाय के वश हो कर भाषण न करना तथा हृदय में रहे हुए कषाय को शान्त करना 'भाव ऊनोदरी' है।

# भिक्षाचरी तप

**११५ प्रश्न–से किं तं भिक्खायरिया ?**

**११५ उत्तर–भिक्खायरिया अणेगविहा पण्णत्ता, तं जहा–दव्वाभिग्गहचरए–जहा उववाइए, जाव सुद्धेसणिए, संखादत्तिए। सेत्तं भिक्खायरिया।**

**भावार्थ–११५ प्रश्न–हे भगवन् ! भिक्षाचर्या कितने प्रकार की है ?**

**११५ उत्तर–हे गौतम ! भिक्षाचर्या अनेक प्रकार की कही है। यथा–द्रव्याभिग्रहचरक भिक्षाचर्या इत्यादि औपपातिक सूत्र के अनुसार, यावत् शुद्धैषणिक, संख्यादत्तिक। यह भिक्षाचर्या है।**

***विवेचन***–*विविध प्रकार के अभिग्रह ले कर भिक्षा का संकोच करते हुए विचरना,* 'भिक्षाचर्या' तप कहलाता है। अभिग्रहपूर्वक भिक्षा करने से वृत्ति का संकोच होता है,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इसलिये इसे 'वृत्ति संक्षेप' तप भी कहते हैं। औपपातिक सूत्र में द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव तथा शुद्धैषणिक, संख्यादत्तिक आदि अनेक भेद किये हैं।

## रस परित्याग तप

**११६ प्रश्न–से किं तं रसपरिच्चाए ?**

**११६ उत्तर–रसपरिच्चाए अणेगविहे पण्णत्ते, तं जहा–णिव्विगिइए, पणीयरसविवज्जए–जहा उववाइए जाव लूहाहारे। सेत्तं रसपरिच्चाए।**

**भावार्थ–११६ प्रश्न–हे भगवन् ! रसपरित्याग के कितने भेद हैं ?**

**११६ उत्तर–हे गौतम ! रसपरित्याग अनेक प्रकार का है। यथा-निर्विकृतिक, प्रणीतरस विवर्जक इत्यादि औपपातिक सूत्रानुसार यावत् रूक्षाहारक। यह रस परित्याग है।**

**विवेचन**–दूध, दही, घी, तेल और मिष्टान्न, इन पाँच को विकृति (विगय) कहते हैं। इन विकारजनक विकृतियों का तथा प्रणीत (स्निग्ध और गरिष्ठ) खान-पान वस्तुओं का त्याग करना 'रस परित्याग' कहलाता है। इसके भी निर्विकृतिक, प्रणीतरस विवर्जक यावत् रूक्षाहारक आदि अनेक भेद औपपातिक सूत्र में कहे हैं।

## काय-क्लेश तप

**११७ प्रश्न–से किं तं कायकिलेसे ?**

**११७ उत्तर–कायकिलेसे अणेगविहे पण्णत्ते, तं जहा–ठाणाईए, उक्कुडुयासणिए, जहा–उववाइए जाव सव्वगायपरिकम्म-विभूसविप्प-**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मुक्के । मेतं कायकिलेसे ।

कठिन शब्दार्थ–उक्कुडुयसाणिए—उत्कुटुकासनिक ।

भावार्थ–११७ प्रश्न–हे भगवन् ! काय-क्लेश तप कितने प्रकार का है ?

११७ उत्तर–हे गौतम ! काय-क्लेश तप अनेक प्रकार का है । यथा–स्थानातिग, उत्कुटुकासनिक आदि औपपातिकसूत्रानुसार यावत् शरीर के सभी प्रकार के संस्कार और शोभा का त्याग करना । यह काय-क्लेश तप हुआ ।

विवेचन—शास्त्र-सम्मत रीति से काया अर्थात् शरीर को क्लेश (कष्ट) पहुँचाना 'काय-क्लेश' तप है । उग्र वीरासनादि आसनों का सेवन करना, लोच करना, शरीर की शोभा-शुश्रूषा का त्याग करना आदि काय-क्लेश के अनेक भेद हैं । औपपातिक सूत्र में स्थानस्थितिक, स्थानातिग, उत्कुटुकासनिक आदि भेद दिये हैं ।

## प्रतिसंलीनता तप

११८ प्रश्न–से किं तं पडिसंलीणया ?

११८ उत्तर–पडिसंलीणया चउव्विहा पण्णत्ता, तं जहा–इंदिय-पडिसंलीणया, कसायपडिसंलीणया, जोगपडिसंलीणया, विवित्त-सयणासणसेवणया ।

भावार्थ–११८ प्रश्न–हे भगवन् ! प्रतिसंलीनता कितने प्रकार की कही है ?

११८ उत्तर–हे गौतम ! प्रतिसंलीनता चार प्रकार की है । यथा–इंद्रिय-प्रतिसंलीनता, कषाय-प्रतिसंलीनता, योग-प्रतिसंलीनता और विविक्त शयनासनसेवनता ।

११९ प्रश्न–से किं तं इंदियपडिसंलीणया ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

११९ उत्तर-इंदिय० पंचविहा पण्णत्ता, तं जहा-सोइंदिय-विसयप्पयारणिरोहो वा, सोइंदियविसयप्पत्तेसु वा अत्थेसु रागदोस-विणिग्गहो, चक्खिंदियविसय० एवं जाव फासिंदियविसयप्पयारणिरोहो वा फासिंदियविसयप्पत्तेसु वा अत्थेसु रागदोसविणिग्गहो। सेत्तं इंदियपडिसंलीणया।

भावार्थ-११९ प्रश्न-हे भगवन्! इंद्रिय-प्रतिसंलीनता कितने प्रकार की है?

११९ उत्तर-हे गौतम! इंद्रिय-प्रतिसंलीनता पांच प्रकार की है। यथा-श्रोत्रेन्द्रिय विषय-प्रचार निरोध अथवा श्रोत्रेन्द्रिय विषय प्राप्त अर्थों में राग-द्वेष विनिग्रह, चक्षुरिन्द्रिय विषय-प्रचार निरोध अथवा चक्षुरिन्द्रिय विषय प्राप्त अर्थों में राग-द्वेष विनिग्रह, इस प्रकार यावत् स्पर्शनेन्द्रिय विषय-प्रचार निरोध अथवा स्पर्शनेन्द्रिय विषय प्राप्त अर्थों में राग-द्वेष विनिग्रह। यह इंद्रिय प्रति-संलीनता तप हुआ।

१२० प्रश्न-से किं तं कसायपडिसंलीणया?

१२० उत्तर-कसायपडिसंलीणया चउव्विहा पण्णत्ता। तं जहा-कोहोदयणिरोहो वा उदयप्पत्तस्स वा कोहस्स विफलीकरणं, एवं जाव लोभोदयणिरोहो वा उदयप्पत्तस्स वा लोभस्स विफलीकरणं। सेत्तं कसायपडिसंलीणया।

भावार्थ-१२० प्रश्न-हे भगवन्! कषाय-प्रतिसंलीनता कितने प्रकार की है?

१२० उत्तर-हे गौतम! कषाय-प्रतिसंलीनता चार प्रकार की है। यथा-क्रोधोदय निरोध अथवा उदय प्राप्त क्रोध का विफलीकरण, इस प्रकार यावत् लोभोदय निरोध या उदय प्राप्त लोभ का विफलीकरण।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१२१ प्रश्न-से किं तं जोगपडिसंलीणया ?

१२१ उत्तर-जोगपडिसंलीणया तिविहा पण्णत्ता, तं जहा-मणजोगप० वइजोगप० कायजोगपडिसंलीणया। से किं तं मणजोगप० ? मणजोगपडिसंलीणया तिविहा पण्णत्ता, तंजहा-१ अकुसलमणणिरोहो वा २ कुसलमणउदीरणं वा ३ मणस्स वा एगत्तीभावकरणं। से किं तं वइजोगप० ? वइजोगप० तिविहा पण्णत्ता, तंजहा - १ अकुसलवइणिरोहो वा २ कुसलवइउदीरणं वा ३ वइए वा एगत्तीभावकरणं।

भावार्थ-१२१ प्रश्न-हे भगवन् ! योग-प्रतिसंलीनता कितने प्रकार की है ?

१२१ उत्तर-हे गौतम ! योग-प्रतिसंलीनता तीन प्रकार की है। यथा-मनयोग प्रतिसंलीनता, वचनयोग प्रतिसंलीनता और काययोग प्रतिसंलीनता। हे भगवन् ! मनयोग प्रतिसंलीनता कितने प्रकार की है ? हे गौतम ! तीन प्रकार की कही गई है, यथा-१ अकुशल मन का निरोध २ कुशल मन की उदीरणा और ३ मन को एकाग्र करना। हे भगवन् ! वचनयोग प्रतिसंलीनता कितने प्रकार की कही गई है ? हे गौतम ! तीन प्रकार की कही गई है। यथा-१ अकुशल वचन का निरोध २ कुशल वचन की उदीरणा और ३ वचन की एकाग्रता करना।

१२२ प्रश्न-से किं तं कायपडिसंलीणया ?

१२२ उत्तर-कायपडिसंलीणया जण्णं सुसमाहियपसंतसाहरियपाणिपाए कुम्मो इव गुत्तिंदिए अल्लीणे पल्लीणे चिट्ठइ, सेत्तं कायपडिसंलीणया। सेत्तं जोगपडिसंलीणया।

भावार्थ-१२२ प्रश्न-हे भगवन् ! काय-प्रतिसंलीनता किसे कहते हैं ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१२२ उत्तर-हे गौतम ! सम्यक् प्रकार से समाधिपूर्वक शान्त हो कर हाथ-पांव संकुचित करना, कछुए के समान गुप्तेन्द्रिय हो कर, आलीन-प्रलीन (स्थिर) होना 'काय-प्रतिसंलीनता' है । यह 'योग-प्रतिसंलीनता' हुई ।

१२३ प्रश्न-से किं तं विवित्तसयणासणसेवणया ?

१२३ उत्तर-विवित्तसयणासणसेवणया जण्णं आरामेसु वा उज्जाणेसु वा जहा सोमिलुद्देसए जाव सेज्जासंथारगं उवसंपज्जित्ता णं विहरइ । सेत्तं विवित्तसयणासणसेवणया । सेत्तं पडिसंलीणया । सेत्तं बाहिरए तवे १ ।

भावार्थ-१२३ प्रश्न-हे भगवन् ! विविक्तशयनासनसेवनता किसे कहते हैं?

१२३ उत्तर-हे गौतम ! विविक्त (स्त्री, पशु और पण्डक-नपुंसक से रहित) स्थान में अर्थात् आराम (बगीचा) उद्यान आदि अठारहवें शतक के दसवें सोमिल उद्देशकानुसार निर्दोष शय्या-संथारा आदि उपकरण ले कर रहना, 'विविक्तशयनासनसेवनता' कहलाती है । यह विविक्तशयनासनसेवनता और प्रतिसंलीनता के साथ-साथ ही बाह्य तप पूर्ण हुआ ।

विवेचन-प्रतिसंलीनता का अर्थ है गोपन करना । योग, इन्द्रिय और कषायों की अशुभ प्रवृत्ति को रोकना 'प्रतिसंलीनता' है । मुख्य रूप से इसके चार भेद हैं । इन्द्रिय प्रतिसंलीनता, कषाय प्रतिसंलीनता, योग प्रतिसंलीनता और विविक्तशयनासन सेवनता इन्द्रिय प्रतिसंलीनता के पाँच, कषाय प्रतिसंलीनता के चार और योग प्रतिसंलीनता के तीन भेद हैं । ये बारह और विविक्तशयनासनसेवनता, ये सभी मिला कर तेरह भेद होते है उनका अर्थ इस प्रकार है-

१ श्रोत्रेन्द्रिय प्रतिसंलीनता-श्रोत्रेन्द्रिय को अपने विषयों की ओर जाने से रोकना तथा श्रोत्रेन्द्रिय द्वारा गृहीत विषयों में राग-द्वेष नहीं करना ।

२ चक्षुरिन्द्रिय प्रतिसंलीनता-चक्षु अर्थात् नेत्रों को अपने विषय की ओर जाने से रोकना और चक्षुरिन्द्रिय द्वारा गृहीत विषयों में राग-द्वेष नहीं करना ।

३ घ्राणेन्द्रिय प्रतिसंलीनता ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

४ रसनेन्द्रिय प्रतिसंलीनता ।

५ स्पर्शनेन्द्रिय प्रतिसंलीनता ।

इनका स्वरूप भी ऊपर लिखे अनुसार जानना चाहिये ।

क्रोध प्रतिसंलीनता-क्रोध का उदय नहीं होने देना और उदय में आये हुए क्रोध को निष्फल बना देना । मान प्रतिसंलीनता, माया प्रतिसंलीनता और लोभ प्रतिसंलीनता, इन तीनों का स्वरूप, क्रोध प्रतिसंलीनता के समान है ।

मन प्रतिसंलीनता-मन की अकुशल (अशुभ) प्रवृत्ति को रोकना और कुशल (शुभ) प्रवृत्ति करना तथा 'चित्त' को एकाग्र (स्थिर) करना ।

वचन प्रतिसंलीनता-अकुशल (अशुभ) वचन को रोकना और कुशल (शुभ एवं निरवद्य) वचन बोलना तथा वचन की प्रवृत्ति को रोकना । ये सभी वचन प्रतिसंलीनता हैं।

काय प्रतिसंलीनता—भली प्रकार समाधिपूर्वक शान्त हो कर, हाथ-पाँव संकुचित कर के तथा कछुए के समान गुप्तेन्द्रिय हो कर, आलीन-प्रलीन अर्थात् स्थिर होना 'काय प्रतिसंलीनता' है ।

विविक्तशयनासनसेवनता-स्त्री, पशु और नपुंसक से रहित स्थान में निर्दोष शय्या-संस्तारक आदि स्वीकार कर रहना-विवक्तशयनासनसेवनता कहलाती है । आराम (बगीचा) उद्यान (बाग) आदि में संस्तारक अंगीकार करना भी विविक्तशयनासन-सेवनता है ।

अनशन, ऊनोदरी, भिक्षाचर्या, रस परित्याग, काय-क्लेश और प्रतिसंलीनता, ये छह 'बाह्य तप' कहलाते हैं। ये मुक्ति प्राप्ति के बाह्य अंग हैं। ये बाह्य द्रव्यादि की अपेक्षा रखते हैं और प्रायः बाह्य शरीर को तपाते हैं अर्थात् शरीर पर इनका अधिक प्रभाव पड़ता है । इन तपों का करने वाला भी लोक में 'तपस्वी' रूप से प्रसिद्ध हो जाता है । अन्यतीर्थिक भी स्वाभिप्रायानुसार इनका सेवन करते हैं। इत्यादि कारणों से ये तप 'बाह्य तप' कहलाते हैं।

# प्रायश्चित्त तप

**१२४ प्रश्न-से किं तं अब्भिंतरए तवे ?**

**१२४ उत्तर-अब्भिंतरए तवे छव्विहे पण्णत्ते, तं जहा-१ पायच्छित्तं २ विणओ ३ वेयावच्चं ४ सज्झाओ ५ झाणं ६ विउस्सग्गो।**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

**भावार्थ**–१२४ प्रश्न–हे भगवन् ! आभ्यन्तर तप कितने प्रकार का है ?

१२४ उत्तर–हे गौतम ! आभ्यन्तर तप छह प्रकार का है । यथा–**प्रायश्चित्त, विनय, वैयावृत्य, स्वाध्याय, ध्यान और व्युत्सर्ग ।**

**विवेचन**––जिस तप का सम्बन्ध आत्मा के भावों के साथ हो, उसे 'आभ्यन्तर तप' कहते हैं ।

१२५ प्रश्न–से किं तं पायच्छित्ते ?

१२५ उत्तर–पायच्छित्ते दसविहे पण्णत्ते, तं जहा–आलोयणारिहे जाव पारंचियारिहे । सेत्तं पायच्छित्ते ।

**भावार्थ**–१२५ प्रश्न–हे भगवन् ! प्रायश्चित्त कितने प्रकार का है ?

१२५ उत्तर–हे गौतम ! प्रायश्चित्त दस प्रकार का है । यथा–आलोचनार्ह, यावत् पारांचिकार्ह । यह प्रायश्चित्त तप हुआ ।

**विवेचन**–प्रायश्चित्त–मूलगुण और उत्तरगुण विषयक अतिचारों से मलीन हुई आत्मा जिस अनुष्ठान से शुद्ध हो, उसे 'प्रायश्चित्त' कहते हैं, अथवा 'प्रायः' का अर्थ है–'पाप' और 'चित्त' का अर्थ है 'शुद्धि' । जिस अनुष्ठान से पाप की शुद्धि हो, उसे 'प्रायश्चित्त' कहते हैं । प्रायश्चित्त के ५० भेद इस प्रकार हैं–आलोचनार्ह, प्रतिक्रमणार्ह आदि दस प्रकार का प्रायश्चित्त । प्रायश्चित्त देने वाले के आचारवान् आधारवान् आदि दस गुण, प्रायश्चित्त लेने वाले के जाति सम्पन्न, कुल सम्पन्न आदि दस गुण, आकम्पयित्ता (आकम्प्य) अणुमाणइत्ता (अनुमान्य) आदि आलोचना के दस दोष, दर्प, प्रमाद आदि प्रायश्चित्त सेवन करने के दस कारण । ये सभी मिला कर प्रायश्चित्त के ५० भेद होते हैं ।

## विनय तप

१२६ प्रश्न–से किं तं विणए ?

१२६ उत्तर–विणए सत्तविहे पण्णत्ते, तं जहा–१ णाणविणए २ दंसणविणए ३ चरित्तविणए ४ मणविणए ५ वइविणए,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

६ कायविणए ७ लोगोवयारविणए ।

१२६ प्रश्न-हे भगवन् ! विनय कितने प्रकार का है ?

१२६ उत्तर-हे गौतम ! विनय सात प्रकार का कहा है । यथा-ज्ञान-विनय, दर्शन-विनय, चारित्र-विनय, मन-विनय, वचन-विनय, काय-विनय और लोकोपचार-विनय ।

१२७ प्रश्न-से किं तं णाणविणए ?

१२७ उत्तर-णाणविणए पंचविहे पण्णत्ते, तं जहा-१ आभिणिबोहियणाणविणए जाव ५ केवलणाणविणए । सेत्तं णाणविणए ।

भावार्थ-१२७ प्रश्न-हे भगवन् ! ज्ञान-विनय के कितने प्रकार हैं ?

१२७ उत्तर-हे गौतम ! ज्ञान-विनय पांच प्रकार का है । यथा-आभिनिबोधिक ज्ञान-विनय यावत् केवलज्ञान-विनय । यह ज्ञान-विनय हुआ ।

१२८ प्रश्न-से किं तं दंसणविणए ।

१२८ उत्तर-दंसणविणए दुविहे पण्णत्ते, तं जहा-सुस्सूसणाविणए य अणच्चासायणाविणए य ।

भावार्थ-१२८ प्रश्न-हे भगवन् ! दर्शन-विनय के कितने भेद हैं ?

१२८ उत्तर-हे गौतम ! दर्शन-विनय के दो भेद हैं । यथा-शुश्रूषा-विनय और अनाशातना-विनय ।

१२९ प्रश्न-से किं तं सुस्सूसणाविणए ?

१२९ उत्तर-सुस्सूसणाविणए अणेगविहे पण्णत्ते, तं जहा-सक्कारे इ वा, सम्माणे इ वा-जहा चोद्दसमसए तइए उद्देसए जाव पडिसंसाहणया । सेत्तं सुस्सूसणाविणए ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ-१२९ प्रश्न-हे भगवन् ! शुश्रूषा-विनय के कितने भेद हैं ?

१२९ उत्तर-हे गौतम ! शुश्रूषा-विनय के अनेक भेद हैं। यथा-सत्कार, सम्मान आदि, चौदहवें शतक के तीसरे उद्देशकानुसार, यावत् प्रतिसंसाधनता पर्यन्त। यह शुश्रूषा विनय हुआ।

१३० प्रश्न-से किं तं अणच्चासायणाविणए ?

१३० उत्तर-अणच्चासायणाविणए पणयालीसइविहे पण्णत्ते, तं जहा-१ अरहंताणं अणच्चासायणया २ अरहंतपण्णत्तस्स धम्मस्स अणच्चासायणया ३ आयरियाणं अणच्चासायणया ४ उवज्झायाणं अणच्चासायणया ५ थेराणं अणच्चासायणया ६ कुलस्स अणच्चासायणया ७ गणस्स अणच्चासायणया ८ संघस्स अणच्चासायणया ९ किरियाए अणच्चासायणया १० संभोगस्स अणच्चासायणया ११ आभिणिबोहियणाणस्स अणच्चासायणया जाव १५ केवलणाणस्स अणच्चासायणया ३० एएसिं चेव भत्ति-बहुमाणेणं ४५ एएसिं चेव वण्णसंजलणया। सेत्तं अणच्चासायणाविणए। सेत्तं दंसणविणए।

भावार्थ-१३० प्रश्न-हे भगवन् ! अनाशातना-विनय कितने प्रकार का हैं ?

१३० उत्तर-हे गौतम ! अनाशातना-विनय के ४५ भेद कहे हैं। यथा-अरिहन्त भगवन्तों की अनाशातना, अरिहन्त प्रज्ञप्तधर्म की अनाशातना, आचार्य महाराज की अनाशातना, उपाध्याय महाराज की अनाशातना, स्थविर भगवन्तों की अनाशातना, कुल की अनाशातना, गण की अनाशातना, संघ की

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अनाशातना, क्रिया की अनाशातना, सांभोगिक (समान धर्म वाले) की अनाशातना, आभिनिबोधिक ज्ञान की अनाशातना यावत् केवलज्ञान की अनाशातना। इन पन्द्रह की १ भक्ति २ बहुमान करना तथा इन पन्द्रह के ३ गुण कीर्त्तन करना, इस प्रकार अनाशातना विनय के ४५ भेद होते हैं। यह अनाशातना विनय हुआ और इसके साथ ही दर्शन-विनय पूर्ण हुआ।

१३१ प्रश्न–से किं तं चरित्तविणए ?

१३१ उत्तर–चरित्तविणए पंचविहे पण्णत्ते, तं जहा–१ सामाइयचरित्तविणए जाव ५ अहक्खायचरित्तविणए। से त्तं चरित्तविणए।

भावार्थ–१३१ प्रश्न–हे भगवन् ! चारित्र-विनय कितने प्रकार का है ?

१३१ उत्तर–हे गौतम ! चारित्र-विनय पांच प्रकार का कहा है। यथा–सामायिक-चारित्र-विनय यावत् यथाख्यात-चारित्र-विनय। यह चारित्र-विनय हुआ।

१३२ प्रश्न–से किं तं मणविणए ?

१३२ उत्तर–मणविणए दुविहे पण्णत्ते, तं जहा–पसत्थमणविणए, अप्पसत्थमणविणए य।

भावार्थ–१३२ प्रश्न–हे भगवन् ! मन-विनय कितने प्रकार का है ?

१३२ उत्तर–हे गौतम ! मन-विनय दो प्रकार का है। यथा–प्रशस्त मन-विनय और अप्रशस्त मन-विनय।

१३३ प्रश्न–से किं तं पसत्थमणविणए ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१३३ उत्तर-पसत्थमणविणए सत्तविहे पण्णत्ते, तं जहा-१ अपावए २ असावज्जे ३ अकिरिए ४ णिरुवक्केसे ५ अणण्हयकरे ६ अच्छविकरे ७ अभूयाभिसंकणे। सेत्तं पसत्थमणविणए।

भावार्थ-१३३ प्रश्न-हे भगवन्! प्रशस्त मन-विनय कितने प्रकार का है?

१३३ उत्तर-हे गौतम! प्रशस्त मन-विनय सात प्रकार का है। यथा-१ अपापक (पाप रहित) २ असावद्य (निरवद्य--क्रोधादि पाप रहित) ३ अक्रिय (कायिकी आदि क्रिया रहित) ४ निरुपक्लेश (शोकादि उपक्लेश रहित) ५ अनाश्रवकर (आश्रव रहित) ६ अच्छविकर (स्व और पर को पीड़ा रहित) ७ अभूताभिशङ्कित (जीवों को भय उत्पन्न न करने वाला)। यह प्रशस्त मन-विनय हुआ।

१३४ प्रश्न-से किं तं अप्पसत्थमणविणए?

१३४ उत्तर-अप्पसत्थमणविणए सत्तविहे पण्णत्ते, तं जहा-१ पावए २ सावज्जे ३ सकिरिए ४ सउवक्केसे ५ अण्णहयकरे ६ छविकरे ७ भूयाभिसंकणे। सेत्तं अप्पसत्थमणविणए। सेत्तं मणविणए।

भावार्थ-१३४ प्रश्न-हे भगवन्! अप्रशस्त मन-विनय कितने प्रकार का है?

१३४ उत्तर-हे गौतम! अप्रशस्त मन-विनय सात प्रकार का कहा है। यथा-पापकारी, सावद्य, सक्रिय (कायिकी आदि क्रिया सहित), सोपक्लेश, आश्रवकारी, छविकारी (स्व-पर को पीड़ा उत्पन्न करने वाला) भूताभिशंकित (प्राणियों को भय उत्पन्न करने वाला)। (इन सात में मन को प्रवृत्त न करना विनय है अर्थात् अप्रशस्त मन को धारण नहीं करना 'मन-विनय' है।) यह अप्रशस्त मन-विनय हुआ। यह मन-विनय हुआ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१३५ प्रश्न-से किं तं वइविणए ?

१३५ उत्तर-वइविणए दुविहे पण्णत्ते, तं जहा-पसत्थवइविणए य अप्पसत्थवइविणए य ।

भावार्थ-१३५ प्रश्न-हे भगवन् ! वचन-विनय कितने प्रकार का है ?

१३५ उत्तर-हे गौतम ! वचन-विनय दो प्रकार का है । यथा-प्रशस्त वचन-विनय और अप्रशस्त वचन-विनय ।

१३६ प्रश्न-से किं तं पसत्थवइविणए ?

१३६ उत्तर-पसत्थवइविणए सत्तविहे पण्णत्ते, तं जहा-१ अपावए २ असावज्जे जाव ७ अभूयाभिसंकणे । सेत्तं पसत्थवइविणए ।

भावार्थ-१३६ हे भगवन् ! प्रशस्त वचन-विनय कितने प्रकार का है ?

१३६ उत्तर-हे गौतम ! प्रशस्त वचन-विनय सात प्रकार का है। यथा-अपापकारी, असावद्यकारी यावत् अभूताभिशंकित। यह प्रशस्त वचन-विनय हुआ।

१३७ प्रश्न-से किं तं अप्पसत्थवइविणए ?

१३७ उत्तर-अप्पसत्थवइविणए सत्तविहे पण्णत्ते, तं जहा-१ पावए २ सावज्जे जाव ७ भूयाभिसंकणे । सेत्तं अप्पसत्थवइविणए । सेत्तं वइविणए ।

भावार्थ-१३७ प्रश्न-हे भगवन् ! अप्रशस्त वचन-विनय कितने प्रकार का है ?

१३७ उत्तर-हे गौतम ! अप्रशस्त वचन-विनय सात प्रकार का कहा है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

यथा-पापकारी, सावद्यकारी यावत् भूताभिशंकित। यह अप्रशस्त वचन-विनय हुआ। यह वचन-विनय पूर्ण हुआ।

१३८ प्रश्न-से किं तं कायविणए ?

१३८ उत्तर-कायविणए दुविहे पण्णत्ते, तं जहा-पसत्थकाय-विणए य अप्पसत्थकायविणए य।

भावार्थ-१३८ प्रश्न-हे भगवन् ! काय-विनय कितने प्रकार का है ?

१३८ उत्तर-हे गौतम ! काय-विनय दो प्रकार का कहा है। यथा-प्रशस्त काय-विनय और अप्रशस्त काय-विनय।

१३९ प्रश्न-से किं तं पसत्थकायविणए ?

१३९ उत्तर-पसत्थकायविणए सत्तविहे पण्णत्ते, तं जहा-१ आउत्तं गमणं २ आउत्तं ठाणं ३ आउत्तं णिसीयणं ४ आउत्तं तुयट्टणं ५ आउत्तं उल्लंघणं ६ आउत्तं पल्लंघणं ७ आउत्तं सव्विंदियजोगजुंजणया। सेत्तं पसत्थकायविणए।

भावार्थ-१३९ प्रश्न-हे भगवन् ! प्रशस्त काय-विनय कितने प्रकार का कहा है ?

१३९ उत्तर-हे गौतम ! प्रशस्त काय-विनय सात प्रकार का कहा है। यथा-आयुक्त गमन (सावधानीपूर्वक जाना) आयुक्त स्थान (सावधानीपूर्वक ठहरना--खड़े रहना) आयुक्त निषीदन (सावधानीपूर्वक बैठना) आयुक्त त्वग्-वर्तन (सावधानीपूर्वक सोना) आयुक्त उल्लंघन (सावधानीपूर्वक उल्लंघन करना) आयुक्त प्रलंघन (सावधानी से बार-बार लांघना) और आयुक्त सर्वेन्द्रिय योग युंजनता (सभी इन्द्रिय और योगों की सावधानीपूर्वक प्रवृत्ति करना)। यह प्रशस्त काय-विनय हुआ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१४० प्रश्न–से किं तं अप्पसत्थकायविणए ?

१४० उत्तर–अप्पसत्थकायविणए सत्तविहे पण्णत्ते, तं जहा–१ अणाउत्तं गमणं जाव ७ अणाउत्तं सव्विंदियजोगजुंजणया। सेत्तं अप्पसत्थकायविणए। सेत्तं कायविणए।

भावार्थ–१४० प्रश्न–हे भगवन् ! अप्रशस्त काय-विनय कितने प्रकार का है ?

१४० उत्तर–हे गौतम ! अप्रशस्त काय-विनय सात प्रकार का कहा है। यथा–अनायुक्त गमन यावत् अनायुक्त सर्वेन्द्रिय-योग-युंजनता (असावधानी से सभी इन्द्रियों और योगों की प्रवृति करना)। यह अप्रशस्त काय-विनय हुआ। यह काय-विनय हुआ।

१४१ प्रश्न–से किं तं लोगोवयारविणए ?

१४१ उत्तर–लोगोवयारविणए सत्तविहे पण्णत्ते, तं जहा–१ अब्भासवत्तियं २ परच्छंदाणुवत्तियं ३ कज्जहेउं ४ कयपडिकइया ५ अत्तगवेसणया ६ देसकालण्णया ७ सव्वत्थेसु अप्पडिलोमया। सेत्तं लोगोवयारविणए। सेत्तं विणए।

भावार्थ–१४१ प्रश्न–हे भगवन् ! लोकोपचार-विनय के कितने भेद हैं ?

१४१ उत्तर–हे गौतम ! लोकोपचार-विनय के सात भेद कहे हैं। यथा–अभ्यासवृत्तिता (गुरु आदि के पास रहना और अभ्यास में प्रेम रखना), परच्छन्दानुवर्त्तिता (गुरु आदि बड़ों की इच्छानुसार कार्य करना), कार्य हेतु (गुरु आदि द्वारा किये हुए ज्ञान-दानादि कार्य के लिये उन्हें विशेष मानना, उन्हें आहारादि ला कर देना), कृतप्रतिक्रिया (अपने पर किये हुए उपकार का बदला चुकाना अथवा 'आहारादि से गुरु की शुश्रूषा करने से वे प्रसन्न

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

होंगे और उससे वे मुझे ज्ञान सिखावेंगे'-ऐसा समझ कर उनकी विनय-भक्ति करना) आर्त्तगवेषणता (रोगी साधुओं की सार-संभाल करना) देशकालानुज्ञता (अवसर देख कर कार्य करना) सर्वार्थअप्रतिलोमता (सभी कार्यों में गुरु महाराज के अनुकूल प्रवृत्ति करना)।

विवेचन-जिसके द्वारा सम्पूर्ण दुःखों के कारणभूत आठ कर्मों का विनयन-विनाश होता है, उसे 'विनय' कहते हैं अथवा अपने से बड़े और गुरुजनों को देश-काल के अनुसार सत्कार-सन्मान करना 'विनय' कहलाता है। अथवा-

कर्मणां द्राग् विनयनाद्, विनयो विदुषां मतः।
अपवर्गफलाढ्यस्य, मूलं धर्मतरोरयम्॥

अर्थात् ज्ञानावरणीयादि आठ कर्मों का शीघ्र विनाशक होने से यह 'विनय' कहा जाता है। मोक्ष रूपी फल को देने वाले धर्मरूपी वृक्ष का यह मूल है। इसके सामान्यतः सात भेद हैं। यथा-ज्ञान-विनय, दर्शन-विनय, चारित्र-विनय, मन-विनय, वचन-विनय, काय-विनय और लोकोपचार-विनय। इन सातों के अवान्तर भेद १३४ होते हैं। वे इस प्रकार हैं-ज्ञान-विनय के ५ भेद, दर्शन-विनय के ५५ भेद, चारित्र-विनय के ५ भेद, मन-विनय के २४ भेद, वचन-विनय के २४ भेद, काय-विनय के १४ भेद, लोकोपचार-विनय के ७ भेद। ये कुल मिला कर १३४ भेद होते हैं।

ज्ञान और ज्ञानी पर श्रद्धा रखना, उनके प्रति भक्ति और बहुमान दिखाना, उनके द्वारा प्रतिपादित तत्त्वों पर भली प्रकार से चिन्तन-मनन करना और विधिपूर्वक ज्ञान ग्रहण करना एवं ज्ञान का अभ्यास करना 'ज्ञान-विनय' है। इसके पाँच भेद हैं। यथा-मतिज्ञान विनय, श्रुतज्ञान विनय, अवधिज्ञान विनय, मनः पर्यव ज्ञान विनय और केवलज्ञान विनय।

दर्शन-विनय-देव अरिहन्त (वीतराग), गुरु निर्ग्रन्थ (कनक कामिनी के त्यागी) और धर्म केवलि भाषित, इन तीन तत्त्वों में श्रद्धा रखना दर्शन (सम्यक्त्व) कहलाता है। दर्शन की विनय-भक्ति और श्रद्धा को 'दर्शन-विनय' कहते हैं। इसके सामान्यतः दो भेद हैं। यथा-शुश्रूषा-विनय और अनाशातना-विनय। शुश्रूषा-विनय के दस भेद हैं-१ अभ्युत्थान-गुरु महाराज या अपने से बड़े रत्नाधिक सन्त पधारते हों, तो उन्हें देख कर खड़े हो जाना २ आसनाभिग्रह-'पधारिये आसन पर बैठिये'-इस प्रकार कहना ३ आसनप्रदान-बैठने के लिये उन्हें आसन देना ४ सत्कार-उन्हें सत्कार देना ५ सन्मान-उन्हें सन्मान देना ६ कीर्तिकर्म-उनके गुणग्राम-स्तुति करना ७ अञ्जलि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रग्रह—उन्हें हाथ जोड़कर प्रणाम करना ८ अनुगमनता—लौटते समय कुछ दूर तक पहुँचाने जाना ९ पर्युपासनता—बैठे हों, तो उनकी पर्युपासना (सेवा) करना १० प्रतिसंसाधनता—उनके वचन को स्वीकार करना।

शुश्रूषा-विनय के अन्य प्रकार से भी दस भेद किये हैं। यथा—१ अरिहन्त भगवान् का विनय २ अरिहन्त प्ररूपित धर्म का विनय ३ आचार्य का विनय ४ उपाध्याय का विनय ५ स्थविर का विनय ६ कुल का विनय ७ गण का विनय ८ संघ का विनय ९ क्रिया विनय अर्थात् 'आत्मा, परलोक, मोक्ष आदि हैं'—ऐसी प्ररूपणा करना और १० सांभोगिक का विनय।

अनाशातना दर्शन विनय—दर्शन और दर्शनवान् की आशातना न करना 'अनाशातना-विनय' है। इसके ४५ भेद है। अरिहंत भगवान्, अरिहंत प्ररूपित धर्म, आचार्य, उपाध्याय आदि पन्द्रह की आशातना न करना, अर्थात् विनय करना, भक्ति करना और गुणग्राम करना। इन तीन कार्यों के करने से ४५ भेद हो जाते हैं। हाथ जोड़ना आदि बाह्य आचारों को 'भक्ति' कहते हैं। हृदय में श्रद्धा और प्रीति रखना 'बहुमान' है। गुणकीर्तन करना तथा गुणों को ग्रहण करना 'गुणग्राम' (वर्णवाद) कहलाता है।

चारित्र और चारित्रवानों का विनय करना 'चारित्र-विनय' है। चारित्र के सामायिकादि पाँच भेद मूल-पाठ में बता दिये हैं।

आचार्य आदि का मन से विनय करना, मन की अशुभ प्रवृत्ति को रोकना तथा उसे शुभ प्रवृत्ति में लगाना 'मन-विनय' है। प्रशस्त और अप्रशस्त ये इसके दो भेद हैं। प्रत्येक के बारह-बारह भेद होने से चौबीस भेद हैं। मन में प्रशस्त भाव लाना 'प्रशस्त मन-विनय' है और अप्रशस्त भावों को मन में नहीं आने देना 'अप्रशस्त मन-विनय' है। मन-विनय के समान वचन-विनय के भी चौबीस भेद होते हैं। आचार्य आदि का वचन से विनय करना, वचन की अशुभ प्रवृत्ति को रोकना तथा शुभ प्रवृत्ति में लगाना 'वचन-विनय' है।

काया से आचार्य आदि का विनय करना, काया की अशुभ प्रवृत्ति रोकना और शुभ प्रवृत्ति करना 'काय-विनय' है। इसके भी प्रशस्त और अप्रशस्त के भेद से दो भेद हैं। सावधानीपूर्वक जाना, खड़े रहना, बैठना, सोना, उल्लंघन करना, प्रलंघन करना और सभी इन्द्रियों तथा योगों की प्रवृत्ति करना 'प्रशस्त काय-विनय' है और इन उपर्युक्त क्रियाओं को असावधानी से करना 'अप्रशस्त काय-प्रवृत्ति' है। इसे रोकना 'अप्रशस्त काय-विनय' है। इस प्रकार काय-विनय के चौदह भेद हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दूसरे साधर्मिकों को सुख पहुँचे--इस प्रकार की बाह्य क्रियाएँ करना 'लोकोपचार-विनय' है। इसके सात भेद हैं। जिनके नाम और अर्थ भावार्थ में लिखे जा चुके हैं। इस प्रकार विनय के कुल मिला कर १३४ भेद होते हैं।

अन्यत्र विनय के ५२ भेद भी कहे हैं। वे इस प्रकार हैं--तीर्थंकर, सिद्ध, कुल, गण, संघ, क्रिया, धर्म, ज्ञान, ज्ञानी, आचार्य, उपाध्याय, स्थविर और गणी, इन तेरह की (१) आशातना न करना (२) भक्ति करना (३) बहुमान करना अर्थात् इनके प्रति पूज्य भाव रखना (४) इनके गुणों की प्रशंसा करना। इस तरह चार प्रकार से इन तेरह का विनय किया जाता है। तेरह को चार से गुणा करने से विनय के बावन भेद होते हैं।

# वैयावृत्य तप

**१४२ प्रश्न-से किं तं वेयावच्चे ?**

**१४२ उत्तर-वेयावच्चे दसविहे पण्णत्ते, तं जहा-१ आयरिय-वेयावच्चे २ उवज्झायवेयावच्चे ३ थेरवेयावच्चे ४ तवस्सिवेयावच्चे ५ गिलाणवेयावच्चे ६ सेहवेयावच्चे ७ कुलवेयावच्चे ८ गणवेयावच्चे ९ संघवेयावेच्चे १० साहम्मियवेयावच्चे। सेत्तं वेयावच्चे।**

**भावार्थ-१४२ प्रश्न-हे भगवन् ! वैयावृत्य के कितने भेद हैं ?**

**१४२ उत्तर-हे गौतम ! वैयावृत्य के दस भेद हैं। यथा-१ आचार्य की वैयावृत्य २ उपाध्याय की वैयावृत्य ३ स्थविर की वैयावृत्य ४ तपस्वी की वैयावृत्य ५ रोगी की वैयावृत्य ६ शैक्ष (नव दीक्षित) की वैयावृत्य ७ कुल (एक आचार्य का शिष्य परिवार) की वैयावृत्य ८ गण (समूह) की वैयावृत्य ९ संघ की वैयावृत्य और १० साधर्मिक (समान धर्म वाले) की वैयावृत्य। यह वैयावृत्य हुआ।**

**विवेचन**-गुरु, तपस्वी, रोगी, नवदीक्षित आदि को विधिपूर्वक आहारादि ला कर

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

देना 'वैयावृत्य' कहलाता है ।

## स्वाध्याय तप

१४३ प्रश्न-से किं तं सज्झाए ?

१४३ उत्तर-सज्झाए पंचविहे पण्णत्ते, तं जहा-१ वायणा २ पडिपुच्छणा ३ परियट्टणा ४ अणुप्पेहा ५ धम्मकहा । सेत्तं सज्झाए ।

भावार्थ-१४३ प्रश्न-हे भगवन् ! स्वाध्याय कितने प्रकार का है ?

१४३ उत्तर-हे गौतम ! स्वाध्याय पांच प्रकार का है । यथा-१ वाचना २ पृच्छना ३ परिवर्तना ४ अनुप्रेक्षा और ५ धर्मकथा । यह स्वाध्याय हुआ ।

विवेचन-अस्वाध्याय काल टाल कर, मर्यादापूर्वक शास्त्रों का अध्ययन-अध्यापन आदि करना 'स्वाध्याय' है । स्वाध्याय के पाँच भेद हैं । यथा-१ वाचना-शिष्य को सूत्र और अर्थ पढ़ाना २ पृच्छना-वाचना ग्रहण कर के उसमें सन्देह होने पर पुनः पूछना 'पृच्छना' है अथवा पहले सीखे हुए सूत्रादि ज्ञान में शंका होने पर प्रश्न करना 'पृच्छना' है। ३ परिवर्तना-पढ़ा हुआ ज्ञान विस्मृत न हो जाय, इसलिये बार-बार आवृत्ति करना-'परिवर्तना' है । ४ अनुप्रेक्षा-सीखे हुए सूत्र के अर्थ का विस्मरण न हो जाय, इसलिये उसका बार-बार मनन करना, विचारना 'अनुप्रेक्षा' है । ५ धर्मकथा-उपर्युक्त चारों प्रकार से शास्त्र का अभ्यास करने पर श्रोताओं को शास्त्रों का व्याख्यान सुनाना, धर्मोपदेश देना, 'धर्मकथा' कहलाती है ।

## ध्यान के भेद

१४४ प्रश्न-से किं तं झाणे ?

१४४ उत्तर-झाणे चउव्विहे पण्णत्ते, तं जहा-१ अट्टे झाणे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२ रोद्दे झाणे ३ धम्मे झाणे ४ सुक्के झाणे ।

भावार्थ-१४४ प्रश्न-हे भगवन् ! ध्यान कितने प्रकार का है ?

१४४ उत्तर-हे गौतम ! ध्यान चार प्रकार का है । यथा-आर्त्तध्यान २ रौद्र ध्यान ३ धर्म ध्यान और ४ शुक्ल ध्यान ।

**विवेचन**-एक लक्ष्य पर चित्त को एकाग्र करना-'ध्यान' है, अथवा छद्मस्थों का अन्तर्मुहुर्त परिमाण, एक वस्तु पर चित्त स्थिर रखना 'ध्यान' कहलाता है । एक वस्तु से दूसरी वस्तु में ध्यान के संक्रमण होने पर ध्यान का प्रवाह चिर कालतक भी रह सकता है । जिनेन्द्र भगवान् के लिये तो योगों का निरोध करना ही ध्यान कहलाता है ।

## आर्त्त ध्यान

१४५-अट्टे झाणे चउव्विहे पण्णत्ते, तं जहा-१ अमणुण्ण-संपओगसंपउत्ते तस्स विप्पओगसइसमण्णागए यावि भवइ २ मणुण्ण-संपओगसंपउत्ते तस्स अविप्पओगसइसमण्णागए यावि भवइ ३ आयंक-संपओगसंपउत्ते तस्स विप्पओगसइसमण्णागए यावि भवइ ४ परिज्जु-सियकामभोगसंपओगसंपउत्ते तस्स अविप्पओगसइसमण्णागए यावि भवइ ।

अट्टस्स णं झाणस्स चत्तारि लक्खणा पण्णत्ता, तं जहा-१ कंदणया २ सोयणया ३ तिप्पणया ४ परिदेवणया ।

भावार्थ-१४५ आर्त्त ध्यान चार प्रकार का है । यथा-

१ अमनोज्ञ वियोग चिन्ता-अमनोज्ञ (अनिष्ट) वस्तु की प्राप्ति होने पर उसके वियोग की चिन्ता करना ।

२ मनोज्ञ अवियोग चिन्ता-मनोज्ञ (इष्ट) वस्तु की प्राप्ति होने पर

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उसके अवियोग की चिन्ता करना ।

३ आतंक (रोग) होने पर उसके वियोग की चिन्ता करना ।

४ प्रीति उत्पन्न करने वाले काम-भोग आदि की प्राप्ति होने पर उनके अवियोग की चिन्ता करना ।

आर्त्त ध्यान के चार लक्षण कहे हैं । यथा-१ क्रन्दनता २ शोचनता ३ तेपनता और ४ परिदेवनता ।

**विवेचन**-आर्त्त ध्यान आर्त्त अर्थात् दुःख के निमित्त से या दुःख में होने वाला ध्यान 'आर्त्त ध्यान' कहलाता है । अथवा दुःखी प्राणी का ध्यान 'आर्त्त ध्यान' कहलाता है । अथवा मनोज्ञ वस्तु के वियोग और अमनोज्ञ वस्तु के संयोग आदि कारणों से चित्त की घबराहट 'आर्त्त ध्यान' कहलाता है । अथवा जीव, मोहवश राज्य का उपभोग, शयन, आसन, वाहन, स्त्री, गन्ध, माला, रत्न, आभूषण आदि में जो अतिशय इच्छा करता है, वह 'आर्त्तध्यान' कहलाता है । इसके चार भेद हैं । यथा-

(१) अमनोज्ञ वियोग चिन्ता-अमनोज्ञ शब्द, रूप, गन्ध, रस, स्पर्श और उनकी साधनभूत वस्तुओं का संयोग होने पर, उनके वियोग की चिन्ता करना तथा भविष्य में भी उनका संयोग न हो, ऐसी इच्छा रखना, आर्त्त ध्यान का पहला भेद है । इस आर्त्त ध्यान का कारण द्वेष है ।

(२) मनोज्ञ अवियोग चिन्ता-पांचों इन्द्रियों के मनोज्ञ विषय और उनके कारण रूप माता-पिता, भाई, स्वजन, स्त्री, पुत्र, धन और सातावेदना के संयोग में उनका वियोग न होने का अध्यवसाय करना तथा भविष्य में भी उनके संयोग की इच्छा करना आर्त्त-ध्यान का दूसरा भेद है । इसका मूल कारण-राग है ।

(३) रोग वियोग चिन्ता-शूल, श्वास कास आदि रोग-आतंक से व्याकुल प्राणी का रोग के वियोग का चिन्तन करना तथा रोगादि के अभाव में भविष्य के लिये रोगादि का संयोग न होने की चिन्ता करना, आर्त्त ध्यान का तीसरा भेद है ।

(४) निदान-देवेन्द्र, चक्रवर्ती और वासुदेव आदि के रूप और ऋद्धि आदि देख कर या सुन कर उनमें आसक्ति लाना और यह सोचना कि 'मैंने जो तप-संयम आदि धर्म कार्य किये हैं, उनके फलस्वरूप मुझे भी ऐसी ऋद्धि प्राप्त हो,' इस प्रकार अधम निदान की चिन्ता करना, आर्त्त ध्यान का चौथा भेद है । आर्त्त ध्यान का मूल कारण 'अज्ञान' है । क्योंकि अज्ञानियों के अतिरिक्त दूसरों को सांसारिक सुखों में आसक्ति नहीं होती । ज्ञानी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पुरुषों के चित्त में तो सदा मोक्ष की ही लगन लगी रहती है। यह चार प्रकार का आर्त्त-ध्यान संसार को बढ़ाने वाला और सामान्यतः तिर्यंच गति में ले जाने वाला होता है।

आर्त्त ध्यान के चार लक्षण (लिंग) कहे हैं। यथा-१ क्रन्दनता-ऊँचे स्वर से रोना और चिल्लाना २ शोचनता-दीनता के भाव युक्त हो, आँखों में आँसू भर आना ३ तेपनता-टपटप आँसू गिराना और ४ परिदेवनता-बार-बार क्लिष्ट भाषण करना, विलाप करना।

इष्ट वियोग, अनिष्ट संयोग और वेदना के निमित्त से ये उपर्युक्त चार लक्षण आर्त्तध्यानी के होते हैं।

## रौद्र ध्यान

**१४६-रोद्दे झाणे चउव्विहे पण्णत्ते, तं जहा-१ हिंसाणुबंधी २ मोसाणुबंधी ३ तेयाणुबंधी ४ सारक्खणाणुबंधी। रोद्दस्स णं झाणस्स चत्तारि लक्खणा पण्णत्ता, तं जहा-१ ओस्सण्णदोसे, २ बहुलदोसे ३ अण्णाणदोसे ४ आमरणांतदोसे।**

**भावार्थ-१४६ रौद्र ध्यान चार प्रकार का है। यथा-१ हिंसानुबन्धी २ मृषानुबन्धी ३ स्तेयानुबन्धी और ४ संरक्षणानुबन्धी।**

**रौद्र ध्यान के चार लक्षण कहे हैं। यथा-१ ओसन्न दोष २ बहुल दोष ३ अज्ञान दोष और ४ आमरणान्त दोष।**

**विवेचन**-रौद्र ध्यान-हिंसा, झूठ और चोरी में तथा धन आदि की रक्षा में मन को जोड़ना 'रौद्र ध्यान' है। अथवा हिंसा आदि का अतिक्रूर परिणाम 'रौद्र ध्यान' है।

अथवा हिंसा में प्रवृत्त आत्मा द्वारा प्राणियों को रुलाने वाले व्यापार का चिन्तन करना 'रौद्र ध्यान' है।

अथवा छेदना, भेदना, काटना, मारना, वध करना, प्रहार करना, दमन करना इत्यादि कार्यों में जो राग करता है और जिसमें अनुकम्पा भाव नहीं है, उस पुरुष का ध्यान 'रौद्र ध्यान' कहलाता है। इसके चार भेद हैं। यथा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(१) हिंसानुबन्धी––प्राणियों को चाबुक आदि से मारना, कील आदि से नाक, कान आदि बींधना, रस्सी, जंजीर आदि से बांधना, अग्नि में डालना, डाम लगाना, तलवार आदि से प्राण-वध करना अथवा उपर्युक्त कार्य न करते हुए भी क्रोध के वश हो कर निर्दयतापूर्वक इन हिंसाकारी कार्यों का निरन्तर चिन्तन करते रहना 'हिंसानुबन्धी रौद्र ध्यान' है।

(२) मृषानुबन्धी––दूसरों को ठगने की प्रवृत्ति करने वाले तथा छिप कर पाप आचरण करने वाले को अनिष्ट सूचक वचन, असभ्य वचन, असत् अर्थ का प्रकाशन, सत् अर्थ का अपलाप एवं एक के स्थान पर दूसरे पदार्थ आदि का कथन रूप असत्य वचन एवं प्राणियों का उपघात करने वाले वचन कहना या कहने का निरन्तर चिन्तन करना–'मृषानुबन्धी रौद्र ध्यान' है।

(३) स्तेयानुबन्धी––(चौर्यानुबन्धी) तीव्र क्रोध और लोभ से व्याकुल चित्त वाले पुरुष की प्राणियों के उपघातक, पर-द्रव्य हरण आदि कार्यों में निरन्तर चित्तवृत्ति का होना 'स्तेयानुबन्धी रौद्र ध्यान' है।

(४) संरक्षणानुबन्धी–शब्दादि पाँच विषयों के साधनभूत, धन की रक्षा करने की चिन्ता करना और 'न मालूम दूसरा क्या करेगा'–इस आशंका से दूसरों का उपघात करने की कषाय युक्त चित्तवृत्ति रखना 'संरक्षणानुबन्धी रौद्र ध्यान' है।

हिंसा, झूठ, चोरी और धन-संरक्षण स्वयं करना, दूसरों से करवाना और करते हुए की अनुमोदना करना तथा इन तीनों के निमित्तादि का चिन्तन करना 'रौद्र ध्यान' है। राग-द्वेष से व्याकुल जीव के यह चारों प्रकार का रौद्र ध्यान होता है। यह ध्यान संसार को बढ़ाने वाला और प्रायः नरक गति में ले जाने वाला होता है।

रौद्र ध्यान के चार लक्षण हैं। यथा––

१ ओसन्न दोष–रौद्रध्यानी हिंसा से निवृत्त न होने से बहुलतापूर्वक हिंसा आदि में से किसी एक में प्रवृत्ति करता है।

२ बहुल दोष–रौद्रध्यानी हिंसादि सभी दोषों में प्रवृत्ति करता है।

३ अज्ञान दोष–अज्ञान से, कुशास्त्र के संस्कार से नरकादि के कारणभूत अधर्म स्वरूप हिंसादि में धर्म-बुद्धि से उन्नति के लिये प्रवृत्ति करना 'अज्ञान दोष' है।

अथवा नाना दोष–हिंसादि के विविध उपायों में अनेक बार प्रवृत्ति करना 'नाना दोष' है।

४ आमरणान्त दोष–मरणपर्यन्त क्रूर हिंसादि कार्यों में अनुताप (पश्चात्ताप) न

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

होना एवं हिंसादि में प्रवृत्ति करते रहना 'आमरणान्त दोष' है। जैसे कालसौकरिक कसाई।

कठोर एवं संक्लिष्ट परिणाम वाला रौद्रध्यानी दूसरे के दुःख में प्रसन्न होता है। ऐहिक और पारलौकिक भय से रहित होता है। उसके मन में अनुकम्पा भाव लेशमात्र भी नहीं होता। अकार्य कर के भी उसे पश्चात्ताप नहीं होता। पाप कार्य कर के वह प्रसन्न होता है।

## धर्म ध्यान

**१४७-धम्मे झाणे चउव्विहे चउप्पडोयारे पण्णत्ते, तं जहा-१ आणाविजए २ अवायविजए ३ विवागविजए ४ संठाणविजए। धम्मस्स णं झाणस्स चत्तारि लक्खणा पण्णत्ता, तं जहा-१ आणारुयी २ णिस्सगरुयी ३ सुत्तरुयी ४ ओगाढरुयी। धम्मस्स णं झाणस्स चत्तारि आलंबणा पण्णत्ता, तं जहा-१ वायणा २ पडिपुच्छणा ३ परियट्टणा ४ धम्मकहा। धम्मस्स णं झाणस्स चत्तारि अणुप्पेहाओ पण्णत्ताओ, तं जहा-१ एगत्ताणुप्पेहा २ अणिच्चाणुप्पेहा ३ असरणाणुप्पेहा ४ संसाराणुप्पेहा।**

**कठिन शब्दार्थ**--चउप्पडोयारे--चतुष्प्रत्यवतार अर्थात् भेद, लक्षण, आलम्बन और अनुप्रेक्षा, इन चार बातों से जिसका विचार किया जाय।

**भावार्थ**-१४७-धर्म ध्यान के चार प्रकार एवं चतुष्प्रत्यवतार कहा है। यथा-१ आज्ञाविचय २ अपायविचय ३ विपाक-विचय और ४ संस्थानविचय।

धर्म ध्यान के चार लक्षण कहे हैं। यथा-१ आज्ञारुचि २ निसर्गरुचि ३ सूत्ररुचि और ४ अवगाढ़रुचि।

धर्म ध्यान के चार अवलम्बन कहे हैं। यथा-१ वाचना २ प्रतिपृच्छना

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

३ परिवर्तना और ४ धर्मकथा ।

**धर्म ध्यान की चार अनुप्रेक्षाएँ कही है । यथा-१ एकत्वानुप्रेक्षा, २ अनित्यानुप्रेक्षा ३ अशरणानुप्रेक्षा और ४ संसारानुप्रेक्षा ।**

**विवेचन**-धर्म ध्यान-धर्म अर्थात् जिन-आज्ञा युक्त पदार्थ स्वरूप के पर्यालोचन में मन को एकाग्र करना 'धर्म ध्यान' है । अथवा श्रुतचारित्र धर्म सहित ध्यान 'धर्म ध्यान' है । अथवा सूत्रार्थ की साधना करना, महाव्रतों को धारण करना, बन्ध, मोक्ष, गति, आगति के हेतुओं का विचार करना । पाँच इन्द्रियों के विषयों से निवृत्ति और प्राणियों में दया भाव, इनमें मन की एकाग्रता होना 'धर्म ध्यान' है ।

१ आज्ञाविचय-(आणाविजय) जिन आज्ञा को सत्य मान कर उस पर पूर्ण श्रद्धा रखना, इसमें प्रतिपादित तत्त्वों का चिन्तन और मनन करना, वीतराग प्रतिपादित तत्त्वों में से कोई तत्त्व समझ में नहीं आवे, तो यह विचार करे कि-'यह वचन वीतराग, सर्वज्ञ भगवान् जिनेश्वर द्वारा कथित है, इसलिये सर्व प्रकारेण सत्य ही है । वीतरागी पुरुषों के वचन सत्य ही होते हैं, क्योंकि उनके असत्य कथन का कोई कारण नहीं है ।' इस प्रकार वीतराग वचनों का चिन्तन-मनन करना । उनमें सन्देह न करना और उनमें मन को एकाग्र करना 'आज्ञाविचय' नामक धर्म ध्यान है ।

२ अपायविचय-राग-द्वेष, कषाय, मिथ्यात्व, अविरति आदि आस्रव और क्रियाओं से होने वाले ऐहिक और पारलौकिक कुफल और हानियों का विचार करना, चिन्तन करना-'अपायविचय' धर्म ध्यान है । इन दोषों से होने वाले कुफल का चिन्तन करने वाला जीव, इन दोषों से अपनी आत्मा की रक्षा करने में सावधान रहता है एवं इनसे दूर रहते हुए आत्म-कल्याण साधता है ।

३ विपाकविचय-'यद्यपि शुद्ध आत्मा का स्वरूप ज्ञान-दर्शन और सुखादि रूप है, तथापि कर्मवश निजी गुण दबे हुए हैं । कर्मों के वश हो कर यह चारों गतियों में परिभ्रमण कर रही है । सम्पत्ति-विपत्ति, संयोग-वियोग आदि से होने वाले सुख-दुःख जीव के पूर्वोपार्जित शुभाशुभ कर्मों का ही फल है । स्वोपार्जित कर्मों के अतिरिक्त कोई अन्य इस आत्मा को सुख-दुःख देने वाला नहीं है ।' इस प्रकार कर्म विषयक चिन्तन में मन को लगाना 'विपाकविचय' धर्म ध्यान है ।

४ संस्थानविचय-धर्मास्तिकायादि छह द्रव्य और उनकी पर्याय, जीव, अजीव के आकार, उत्पाद, व्यय, ध्रौव्य, लोक का स्वरूप, पृथ्वी, द्वीप, सागर, नरक, स्वर्ग आदि का

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आकार, लोकस्थिति, जीव की गति-आगति, जीवन, मरण आदि शास्त्रोक्त पदार्थों का चिन्तन करना तथा इस अनादि अनन्त संसार-सागर से पार करने वाली ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप संवर रूपी नौका का विचार करना इत्यादि रूप से शास्त्रोक्त पदार्थों के चिन्तन-मनन में मन को एकाग्र करना 'संस्थानविचय धर्म ध्यान' है।

धर्म ध्यान के चार लक्षण हैं। यथा--

१ आज्ञारुचि-शास्त्रोक्त अर्थों पर रुचि रखना।

२ निसर्गरुचि-किसी के उपदेश के बिना, स्वभाव से ही जिनभाषित तत्त्वों पर श्रद्धा होना।

३ सूत्ररुचि-सूत्र अर्थात् आगमोक्त वीतराग प्रतिपादित तत्त्वों पर श्रद्धा करना।

४ अवगाढ़रुचि-(उपदेशरुचि) द्वादशांग का विस्तारपूर्वक ज्ञान करने से जिन-प्रणीत भावों पर जो श्रद्धा होती है, वह 'अवगाढ़रुचि' है। अथवा साधु के सूत्रानुसारी उपदेश से जो श्रद्धा होती है, वह 'अवगाढ़रुचि' है।

तात्पर्य यह है कि तत्त्वार्थ श्रद्धान रूप सम्यक्त्व ही धर्म ध्यान का लिंग है। जिनेश्वर देव एवं साधु मुनिराजों के गुणों का कथन करना, भक्तिपूर्वक प्रशंसा एवं स्तुति करना, गुरु आदि का विनय करना, दान देना, श्रुत, शील एवं संयम में अनुराग रखना, ये धर्म ध्यान के चिन्ह हैं। इनसे धर्मध्यानी पहिचाना जाता है।

धर्म ध्यान के चार अवलम्बन कहे हैं। यथा-१ वाचना २ पृच्छना ३ परिवर्तना और ४ धर्मकथा।

स्थानांग सूत्र के चौथे स्थान में वाचना, पृच्छना, परिवर्तना और अनुप्रेक्षा, ये चार धर्म ध्यान के अवलम्बन कहे हैं।

धर्म ध्यान की चार अनुप्रेक्षाएँ कही हैं। यथा-

१ एकत्वानुप्रेक्षा-"इस संसार में मैं अकेला हूँ। मेरा कोई नहीं है और मैं भी किसी का नहीं हूँ। ऐसा कोई भी व्यक्ति दिखाई नहीं देता, जो भविष्य में मेरा होने वाला हो अथवा मैं जिसका बन सकूँ" इत्यादि रूप से आत्मा के एकत्व अर्थात् असहायपन की भावना करना 'एकत्वानुप्रेक्षा' है।

२ अनित्यानुप्रेक्षा-"शरीर अनेक विघ्न, बाधाओं और रोगों का स्थान है। संपत्ति, विपत्ति का स्थान है। संयोग के साथ वियोग लगा हुआ है। उत्पन्न होने वाला प्रत्येक पदार्थ नश्वर है।" इस प्रकार शरीर, जीवन तथा संसार के सभी पदार्थों के अनित्य स्वरूप पर

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विचार करना, 'अनित्यानुप्रेक्षा' है।

३ अशरणानुप्रेक्षा-'जन्म, जरा, मृत्यु के भय से भयभीत और व्याधि एवं वेदना से पीड़ित जीव का इस संसार में कोई त्राण रूप नहीं है। यदि आत्मा का कोई त्राण करने वाला है, तो जिनेन्द्र भगवान् का प्रवचन ही एक त्राण-शरण है।' इस प्रकार आत्मा के त्राण-शरण के अभाव का चिन्तन करना 'अशरण भावना' है।

४ संसारानुप्रेक्षा-'इस संसार में माता बन कर वही जीव, पुत्री, बहिन और स्त्री बन जाता है। पुत्र का जीव पिता, भाई और शत्रु तक बन जाता है।' इस प्रकार चार गति में सभी अवस्थाओं में संसार के विचित्रतापूर्ण स्वरूप का विचार करना 'संसारानुप्रेक्षा' है।

धर्म ध्यान के उपरोक्त चार भेद के अतिरिक्त अन्य प्रकार भी हैं। वे इस प्रकार हैं-

(१) पिण्डस्थ-पार्थिवी, आग्नेयी आदि पाँच धारणाओं का एकाग्रता से चिन्तन करना।

(२) पदस्थ--नाभि में सोलह पंखुड़ी के, हृदय में चौबीस पंखुड़ी के और मुख पर आठ पंखुड़ी के कमल की कल्पना करना और प्रत्येक पंखुड़ी पर वर्णमाला के अ, आ, इ, ई आदि अक्षरों की अथवा पंचपरमेष्ठी मन्त्र के अक्षरों की स्थापना कर के एकाग्रता-पूर्वक उनका चिन्तन करना अर्थात् किसी पद के आश्रित हो कर मन को एकाग्र करना 'पदस्थ धर्म ध्यान' है।

(३) रूपस्थ--शास्त्रोक्त अरिहन्त भगवान् की शान्त दशा को हृदय में स्थापित कर के स्थिर चित्त से ध्यान करना 'रूपस्थ धर्म ध्यान' है।

(४) रूपातीत-रूप रहित निरंजन, निराकार, निर्मम, सिद्ध भगवान् का अवलम्बन ले कर, उसके साथ आत्मा की एकता का चिन्तन करना 'रूपातीत धर्म ध्यान' है।

# शुक्ल ध्यान

**१४८-सुक्के झाणे चउव्विहे चउप्पडोयारे पण्णत्ते, तं जहा-**
**१ पुहुत्तवियक्के सवियारी २ एगंतवियक्के अवियारी ३ सुहुमकिरिए**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अणियट्टी ४ समुच्छिण्णकिरिए अप्पडिवाती । सुक्कस्स णं झाणस्स चत्तारि लक्खणा पण्णत्ता, तं जहा–१ खंती २ मुत्ती ३ अज्जवे ४ मद्दवे। सुक्कस्स णं झाणस्स चत्तारि आलंबणा पण्णत्ता, तं जहा–१ अव्वहे २ असंमोहे ३ विवेगे ४ विउसग्गे । सुक्कस्स णं झाणस्स चत्तारि अणुप्पेहाओ पण्णत्ताओ, तं जहा–१ अणंतवत्तियाणुप्पेहा २ विप्परिणामाणुप्पेहा ३ असुभाणुप्पेहा ४ अवायाणुप्पेहा । सेत्तं झाणे ।

भावार्थ–१४८–शुक्ल ध्यान के चार प्रकार और चतुष्प्रत्यवतार कहे हैं । यथा–१ पृथक्त्व-वितर्क-सविचारी २ एकत्व-वितर्क-अविचारी ३ सूक्ष्म क्रिया अनिवर्त्ती और ४ समुच्छिन्न क्रिया अप्रतिपाती ।

शुक्ल ध्यान के चार लक्षण कहे हैं । यथा–१ क्षान्ति (क्षमा) २ मुक्ति ३ आर्जव और ४ मार्दव ।

शुक्ल ध्यान के चार अवलम्बन कहे हैं । यथा–१ अव्यथा २ असम्मोह ३ विवेक और ४ व्युत्सर्ग ।

शुक्ल ध्यान की चार अनुप्रेक्षाएँ कही हैं। यथा–१ अनन्त-वर्तितानुप्रेक्षा २ विपरिणामानुप्रेक्षा ३ अशुभानुप्रेक्षा और ४ अपायानुप्रेक्षा । यह ध्यान का वर्णन हुआ ।

विवेचन—शुक्ल ध्यान—पूर्व विषयक श्रुत के आधार से मन की अत्यन्त स्थिरता और योग का निरोध, 'शुक्ल ध्यान' कहलाता है । अथवा जो ध्यान आठ प्रकार के कर्म-मल को दूर करता है । अथवा जो शोक को नष्ट करता है, वह 'शुक्ल ध्यान' हैं । तात्पर्य यह है कि परावलम्बन रहित शुक्ल अर्थात् निर्मल आत्म-स्वरूप का तन्मयतापूर्वक चिन्तन करना 'शुक्ल ध्यान' है । अथवा जिस ध्यान में विषयों का सम्बन्ध होने पर भी वैराग्य-बल से चित्त, बाहरी विषयों की ओर नहीं जाता तथा शरीर का छेदन-भेदन होने पर भी स्थिर हुआ चित्त ध्यान से लेश मात्र भी नहीं डिगता, उसे 'शुक्ल ध्यान' कहते हैं । शुक्ल ध्यान के चार भेद हैं । यथा—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१ पृथक्त्व-वितर्क-सविचारी—एक द्रव्य विषयक अनेक पर्यायों का पृथक्-पृथक् विस्तारपूर्वक, पूर्वगत श्रुत के अनुसार, द्रव्यार्थिक-पर्यायार्थिक आदि नयों से चिन्तन करना—'पृथक्त्व-वितर्क सविचारी' शुक्ल ध्यान है। यह ध्यान विचार सहित होता है। विचार का स्वरूप है अर्थ, व्यंजन (शब्द) और योगों में संक्रमण। अर्थात् इस ध्यान में अर्थ से शब्द में, शब्द से अर्थ में, शब्द से शब्द में और अर्थ से अर्थ में एवं एक योग से दूसरे योग में संक्रमण होता है।

पूर्वगत श्रुत के अनुसार विविध नयों से पदार्थों की पर्यायों का भिन्न-भिन्न रूप से चिन्तन रूप यह शुक्ल ध्यान, पूर्वधारी को होता है और मरुदेवी माता के समान जो पूर्वधर नहीं हैं, उन्हें अर्थ, व्यंजन एवं योगों में परस्पर संक्रमण रूप यह शुक्ल ध्यान होता है।

२ एकत्व-वितर्क-अविचारी—पूर्वगत श्रुत का आधार ले कर उत्पाद आदि पर्यायों के एकत्व (अभेद) से किसी एक पदार्थ का अथवा पर्याय का स्थिर चित्त से चिन्तन करना 'एकत्व-वितर्क अविचारी' है। इसमें, अर्थ, व्यंजन और योगों का संक्रमण नहीं होता। जिस प्रकार वायु रहित एकान्त स्थान में दीपक की लौ स्थिर रहती है, उसी प्रकार इस ध्यान में चित्त स्थिर रहता है।

३ सूक्ष्म क्रिया अनिवर्ती—मोक्ष जाने के पहले केवली भगवान् मन और वचन, इन दो योगों का तथा अर्द्ध काय-योग का भी निरोध करते हैं। उस समय केवली भगवान् के कायिकी, उच्छ्वास आदि सूक्ष्म क्रिया ही रहती है। परिणामों में विशेष बढ़े-चढ़े रहने से केवली भगवान् यहां से पीछे नहीं हटते। यह तीसरा 'सूक्ष्म क्रिया अनिवर्ती' शुक्ल ध्यान है।

४ समुच्छिन्न क्रिया अप्रतिपाती—शैलेशी अवस्था को प्राप्त केवली भगवान् सभी योगों का निरोध कर लेते हैं। योगों के निरोध से सभी क्रियाएँ नष्ट हो जाती हैं। यह ध्यान सदा जीवन पर्यन्त बना रहता है। इसलिये इसे 'समुच्छिन्न क्रिया अप्रतिपाती' शुक्ल ध्यान कहते हैं।

पृथक्त्व-वितर्क सविचारी शुक्ल ध्यान, सभी योगों में होता है। एकत्व-वितर्क अविचारी शुक्ल ध्यान किसी एक ही योग में होता है। सूक्ष्म क्रिया अनिवर्ती शुक्ल ध्यान केवल काय-योग में होता है। चौथा समुच्छिन्न क्रिया अप्रतिपाती शुक्ल ध्यान अयोगी अवस्था में ही होता है। छद्मस्थ के मन को निश्चल करना 'ध्यान' कहलाता है। और केवली के काया को निश्चल करना ध्यान कहलाता है।

शुक्ल ध्यान के चार लक्षण कहे हैं। यथा—१ क्षान्ति (क्षमा) क्रोध न करना

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

और उदय में आये हुए क्रोध को विफल कर देना । इस प्रकार क्रोध का त्याग क्षमा है ।

२ मुक्ति-उदय में आये हुए लोभ को विफल करना । लोभ का त्याग मुक्ति (शौच-निर्लोभता) है ।

३ आर्जव-माया को उदय में नहीं आने देना एवं उदय में आई हुई माया को निष्फल कर देना आर्जव (सरलता) है ।

४ मार्दव-मान नहीं करना और उदय में आये हुए मान को निष्फल कर देना । मान का त्याग करना मार्दव (मृदुता-कोमलता) है ।

अन्यत्र इनका क्रम इस प्रकार भी है-क्षमा, मार्दव, आर्जव और मुक्ति ।

शुक्ल ध्यान के चार अवलम्बन कहे हैं । यथा-१ अव्यथ-शुक्लध्यानी परीषह-उपसर्गों से डर कर ध्यान से चलित नहीं होते ।

२ असम्मोह-शुक्लध्यानी को अत्यन्त गहन सूक्ष्म विषयों में अथवा देवादि कृत माया में सम्मोह नहीं होता ।

३ विवेक-शुक्लध्यानी, आत्मा को देह से भिन्न और सभी संयोगों को आत्मा से भिन्न समझता है ।

४ व्युत्सर्ग-शुक्लध्यानी निस्संग रूप से देह और उपधि का त्याग करता है ।

अन्यत्र अव्यथ आदि को शुक्ल ध्यान के लक्षण बताये हैं और क्षमा आदि को अवलम्बन बताये हैं ।

शुक्ल ध्यान की चार अनुप्रेक्षाएँ हैं । यथा-

१ अनन्तवर्तितानुप्रेक्षा-अनन्त भव परम्परा की भावना करना । जैसे-'यह जीव अनादि काल से संसार में चक्कर लगा रहा है । इस संसार रूपी महासमुद्र के पार पहुँचना अत्यंत दुष्कर हो रहा है । यह जीव नरक, तिर्यंच, मनुष्य और देव भवों में निरन्तर एक के बाद दूसरे में, बिना विश्राम के परिभ्रमण कर रहा है ।' इस प्रकार की भावना करना 'अनन्तवर्तितानुप्रेक्षा' है ।

२ विपरिणामानुप्रेक्षा-वस्तुओं के विपरिणमन पर विचार करना । जैसे-'सभी स्थान अशाश्वत है । यहां के और देवलोक के स्थान तथा मनुष्य और देवादि की ऋद्धियाँ और सुख अस्थायी है ।' इस प्रकार की भावना 'विपरिणामानुप्रेक्षा' है ।

३ अशुभानुप्रेक्षा-संसार के अशुभ स्वरूप पर विचार करना । जैसे-'इस संसार को धिक्कार है, जिसमें एक सुन्दर रूप वाला अभिमानी मनुष्य मर कर, अपने ही मृत शरीर

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

में कृमि के रूप में उत्पन्न हो जाता है' इत्यादि से भावना करना 'अशुभानुप्रेक्षा' है।

४ अपायानुप्रेक्षा---जीव, जिन कारणों से दुःखी होता है, उन विविध उपायों का चिन्तन करना। जैसे-'वश में नहीं किये हुए क्रोध और मान तथा बढ़ती हुई माया और लोभ, ये चारों संसार के मूल को सींचने और बढ़ाने वाले हैं। इन्हीं से जीव विविध प्रकार के दुःख भोगता है' इत्यादि आश्रव से होने वाले अपायों का चिन्तन करना 'अपायानुप्रेक्षा' है।

इस प्रकार ध्यान के ४८ भेद होते हैं। आर्त्त ध्यान के ८, रौद्र ध्यान के ८, धर्मध्यान के १६ और शुक्ल ध्यान के १६, ये कुल मिला कर ४८ भेद होते हैं।

चार ध्यानों में से धर्म ध्यान और शुक्ल ध्यान प्रशस्त हैं, निर्जरा के कारण हैं, अतः ग्राह्य हैं। आर्त्त ध्यान और रौद्र ध्यान अप्रशस्त हैं, कर्मबन्ध और संसार वृद्धि के कारण हैं, अतः त्याज्य हैं।

तप के प्रकरण में प्रशस्त और अप्रशस्त---दोनों प्रकार के ध्यानों का वर्णन किया है। प्रशस्त ध्यानों का आसेवन करने से और अप्रशस्त ध्यानों को छोड़ने से तप होता है। इस अभिप्राय से तप के प्रकरण में प्रशस्त और अप्रशस्त दोनों ध्यानों का वर्णन किया है।

## व्युत्सर्ग

**१४९ प्रश्न-से किं तं विउसग्गे ?**

**१४९ उत्तर-विउसग्गे दुविहे पण्णत्ते, तं जहा-१ दव्वविउसग्गे य भावविउसग्गे य।**

**भावार्थ-१४९ प्रश्न-हे भगवन् ! व्युत्सर्ग कितने प्रकार का है ?**

**१४९ उत्तर-हे गौतम ! व्युत्सर्ग दो प्रकार का है। यथा-द्रव्य व्युत्सर्ग और भाव व्युत्सर्ग।**

**१५० प्रश्न-से किं तं दव्वविउसग्गे ?**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१५० उत्तर-दव्वविउसग्गे चउव्विहे पण्णत्ते, तं जहा-गण-विउसग्गे, सरीरविउसग्गे, उवहिविउसग्गे, भत्तपाणविउसग्गे। सेत्तं दव्वविउसग्गे।

भावार्थ-१५० प्रश्न-हे भगवन् ! द्रव्य व्युत्सर्ग कितने प्रकार का है ?

१५० उत्तर-हे गौतम ! द्रव्य व्युत्सर्ग चार प्रकार का है। यथा-गण व्युत्सर्ग, शरीर व्युत्सर्ग, उपधि व्युत्सर्ग और भक्तपान व्युत्सर्ग। इस प्रकार द्रव्य व्युत्सर्ग है।

१५१ प्रश्न-से किं तं भावविउसग्गे ?

१५१ उत्तर-भावविउसग्गे तिविहे पण्णत्ते, तं जहा-कसाय-विउसग्गे, संसारविउसग्गे, कम्मविउसग्गे।

भावार्थ-१५१ प्रश्न-हे भगवन् ! भाव व्युत्सर्ग कितने प्रकार का है ?

१५१ उत्तर-हे गौतम ! भाव व्युत्सर्ग तीन प्रकार का है। यथा-कषाय व्युत्सर्ग, संसार व्युत्सर्ग और कर्म व्युत्सर्ग।

१५२ प्रश्न-से किं तं कसायविउसग्गे ?

१५२ उत्तर-कसायविउसग्गे चउव्विहे पण्णत्ते, तं जहा-कोह-विउसग्गे, माणविउसग्गे, मायाविउसग्गे, लोभविउसग्गे। सेत्तं कसाय-विउसग्गे।

भावार्थ-१५२ प्रश्न-हे भगवन् ! कषाय व्युत्सर्ग कितने प्रकार का है ?

१५२ उत्तर-हे गौतम ! कषाय व्युत्सर्ग चार प्रकार का है। यथा-क्रोध व्युत्सर्ग, मान व्युत्सर्ग, माया व्युत्सर्ग और लोभ व्युत्सर्ग। यह कषाय व्युत्सर्ग हुआ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१५३ प्रश्न-से किं तं संसारविउसग्गे ?

१५३ उत्तर-संसारविउसग्गे चउव्विहे पण्णत्ते, तं जहा-णेरइय-संसारविउसग्गे जाव देवसंसारविउसग्गे । सेत्तं संसारविउसग्गे ।

भावार्थ--१५३ प्रश्न-हे भगवन् ! संसार व्युत्सर्ग कितने प्रकार का है ?

१५३ उत्तर-हे गौतम ! संसार व्युत्सर्ग चार प्रकार का है। यथा-नैरयिक-संसार व्युत्सर्ग यावत् देव-संसार व्युत्सर्ग । यह संसार-व्युत्सर्ग हुआ ।

१५४ प्रश्न-से किं तं कम्मविउसग्गे ?

१५४ उत्तर-कम्मविउसग्गे अट्ठविहे पण्णत्ते, तं जहा-णाणावर-णिज्जकम्मविउसग्गे जाव अंतराइयकम्मविउसग्गे । सेत्तं कम्मविउसग्गे । सेत्तं भावविउसग्गे । सेत्तं अब्भिंतरए तवे ।

❀ 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति ❀

॥ पणवीसइमे सए सत्तमो उद्देसओ समत्तो ॥

भावार्थ-१५४ प्रश्न-हे भगवन् ! कर्म व्युत्सर्ग के कितने भेद हैं ?

१५४ उत्तर-हे गौतम ! कर्म व्युत्सर्ग के आठ भेद हैं। यथा-ज्ञानावर-णीय कर्म व्युत्सर्ग यावत् अन्तराय कर्म व्युत्सर्ग । यह कर्म व्युत्सर्ग हुआ और यह भाव व्युत्सर्ग हुआ और साथ ही यह आभ्यंतर तप हुआ ।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'-कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

**विवेचन**-ममत्व का त्याग करना 'व्युत्सर्ग' तप है । इसके सामान्यतः दो भेद हैं । यथा--द्रव्य व्युत्सर्ग और भाव व्युत्सर्ग । द्रव्य व्युत्सर्ग के चार भेद हैं । यथा--

(१) शरीर व्युत्सर्ग--ममत्व रहित हो कर शरीर का त्याग करना ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२ गणव्युत्सर्ग—अपने गण (गच्छ) का त्याग कर के 'जिनकल्प' स्वीकार करना।

३ उपधि व्युत्सर्ग—किसी कल्प विशेष में उपधि का त्याग करना।

४ भक्त-पान व्युत्सर्ग—सदोष आहार-पानी का त्याग करना।

भाव व्युत्सर्ग के तीन भेद हैं। यथा—

१ कषाय व्युत्सर्ग—कषाय का त्याग करना। इसके क्रोधादि चार भेद है।

२ संसार व्युत्सर्ग—नरक आदि आयु बंध के कारण मिथ्यात्व आदि का त्याग करना।

३ कर्म व्युत्सर्ग—कर्मबन्ध के कारणों का त्याग करना।

कहीं-कहीं भाव व्युत्सर्ग के चार भेद बताये हैं। वहाँ चौथा भेद 'योग व्युत्सर्ग' बताया है। योगों का त्याग करना-योग व्युत्सर्ग है। इसके तीन भेद हैं। मनयोग व्युत्सर्ग, वचनयोग व्युत्सर्ग और काययोग व्युत्सर्ग। ये व्युत्सर्ग तप के भेद हुए।

आभ्यन्तर तप मोक्ष प्राप्ति में अन्तरंग कारण है। अन्तर्दृष्टि आत्मा ही इनका सेवन करता है और वही इन्हें तप रूप से मानता है। इसका प्रभाव बाह्य शरीर पर नहीं पड़ता, किन्तु आभ्यन्तर राग-द्वेष कषाय आदि पर पड़ता है।

## ॥ पच्चीसवें शतक का सातवां उद्देशक सम्पूर्ण ॥

# शतक २५ उद्देशक ८

## जीवों के उत्पन्न होने का उदाहरण

१ प्रश्न—रायगिहे जाव एवं वयासी—णेरइया णं भंते ! कहं उववज्जंति ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१ उत्तर—से जहाणामए पवए पवमाणे अज्झवसाणणिव्वत्तिएणं करणोवाएणं सेयकाले तं ठाणं विप्पजहित्ता पुरिमं ठाणं उवसंपज्जित्ता णं विहरइ, एवामेव एए वि जीवा पवओ विव पवमाणा अज्झवसाणणिव्वत्तिएणं करणोवाएणं सेयकाले तं भवं विप्पजहित्ता पुरिमं भवं उवसंपज्जित्ता णं विहरंति ।

कठिन शब्दार्थ—पवए—प्लवक—कूदने वाला, पवमाणे—प्लवमान-कूदता हुआ ।

भावार्थ—१ प्रश्न—राजगृह नगर में गौतम स्वामी ने यावत् इस प्रकार पूछा—हे भगवन् ! नैरयिक जीव किस प्रकार उत्पन्न होते हैं ?

१ उत्तर—हे गौतम ! जिस प्रकार कोई पुरुष कूदता हुआ अध्यवसाय निर्वर्तित क्रिया साधन द्वारा उस स्थान को छोड़ कर भविष्यत्काल में अगले स्थान को प्राप्त होता है, उसी प्रकार जीव भी अध्यवसाय निर्वर्तित क्रिया साधन द्वारा अर्थात् कर्मों द्वारा पूर्वभव को छोड़ कर भविष्यत्काल में उत्पन्न होने योग्य भव को प्राप्त हो कर उत्पन्न होते हैं ।

२ प्रश्न—तेसि णं भंते ! जीवाणं कहं सीहा गई, कहं सीहे गइविसए पण्णत्ते ?

२ उत्तर—गोयमा ! से जहाणामए केइ पुरिसे तरुणे बलवं एवं जहा चोद्दसमसए पढमुद्देसए जाव तिसमएण वा विग्गहेणं उववज्जंति, तेसि णं जीवाणं तहा सीहा गई, तहा सीहा गइविसए पण्णत्ते ।

भावार्थ—२ प्रश्न—हे भगवन् ! उन नैरयिक जीवों की शीघ्र गति और शीघ्र गति का विषय कैसा होता है ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२ उत्तर-हे गौतम ! जिस प्रकार कोई पुरुष तरुण और बलवान् हो इत्यादि चौदहवें शतक के पहले उद्देशकानुसार यावत् वे तीन समय की विग्रह गति से उत्पन्न होते हैं। उन जीवों की वैसी शीघ्र गति और शीघ्र गति का विषय होता है।

३ प्रश्न-ते णं भंते ! जीवा कहं परभवियाउयं पकरेंति ?

३ उत्तर-गोयमा ! अज्झवसाणजोगणिव्वत्तिएणं करणोवाएणं एवं खलु ते जीवा परभवियाउयं पकरेंति।

भावार्थ-३ प्रश्न-हे भगवन् ! वे जीव परभव की आयु किस प्रकार बांधते हैं ?

३ उत्तर-हे गौतम ! वे जीव अपने अध्यवसाय रूप और मन आदि के व्यापार से करणोपाय (कर्मबन्ध के हेतु) द्वारा परभव की आयु बांधते हैं।

४ प्रश्न-तेसि णं भंते ! जीवाणं कहं गई पवत्तइ ?

४ उत्तर-गोयमा ! आउक्खएणं, भवक्खएणं, ठिइक्खएणं, एवं खलु तेसिं जीवाणं गई पवत्तइ।

भावार्थ-४ प्रश्न-हे भगवन् ! उन जीवों की गति क्यों होती है ?

४ उत्तर-हे गौतम ! उन जीवों की आयु, भव और स्थिति का क्षय हो जाने से गति होती है।

## आत्म-ऋद्धि से उत्पत्ति

५ प्रश्न-ते णं भंते ! जीवा किं आयड्ढीए उववज्जंति, परिड्ढीए उववज्जंति ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

५ उत्तर–गोयमा ! आयइड्ढीए उववज्जंति, णो परिड्ढीए उववज्जंति ।

भावार्थ–५ प्रश्न–हे भगवन् ! वे जीव आत्म-ऋद्धि (अपनी शक्ति) से उत्पन्न होते हैं या पर-ऋद्धि (दूसरों की शक्ति) से ?

५ उत्तर–हे गौतम ! जीव आत्म-ऋद्धि से उत्पन्न होते हैं, पर-ऋद्धि से नहीं ।

६ प्रश्न–ते णं भंते ! जीवा किं आयकम्मुणा उववज्जंति, परकम्मुणा उववज्जंति ?

६ उत्तर–गोयमा ! आयकम्मुणा उववज्जंति, णो परकम्मुणा उववज्जंति ।

भावार्थ–६ प्रश्न–हे भगवन् ! वे जीव अपने कर्मों से उत्पन्न होते हैं या दूसरों के कर्मों से ?

६ उत्तर–हे गौतम ! वे अपने कर्मों से ही उत्पन्न होते हैं, दूसरों के कर्मों से नहीं ।

७ प्रश्न–ते णं भंते ! जीवा किं आयप्पओगेणं उववज्जंति, परप्पओगेणं उववज्जंति ?

७ उत्तर–गोयमा ! आयप्पओगेणं उववज्जंति, णो परप्पओगेणं उववज्जंति ।

भावार्थ–७ प्रश्न–हे भगवन् ! वे जीव, आत्म-प्रयोग (अपने व्यापार) से उत्पन्न होते हैं या पर-प्रयोग से ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

७ उत्तर–हे गौतम ! आत्म-प्रयोग से उत्पन्न होते हैं, पर-प्रयोग से नहीं।

८ प्रश्न–असुरकुमारा णं भंते ! कहं उववज्जंति ?

८ उत्तर–जहा णेरइया तहेव णिरवसेसं जाव णो परप्पओगेणं उववज्जंति। एवं एगिंदियवज्जा जाव वेमाणिया। एगिंदिया एवं चेव। णवरं चउसमइओ विग्गहो, सेसं त चेव।

❀ 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति जाव विहरइ ❀

॥ पणवीसइमे सए अट्ठमो उद्देसो समत्तो ॥

भावार्थ–८ प्रश्न–हे भगवन् ! असुरकुमार किस प्रकार उत्पन्न होते हैं ?

८ उत्तर–हे गौतम ! नैरयिकों के समान असुरकुमार भी उत्पन्न होते हैं, यावत् आत्म-प्रयोग से उत्पन्न होते हैं, पर-प्रयोग से नहीं। इसी प्रकार एकेन्द्रिय के अतिरिक्त यावत् वैमानिक तक सभी जीवों के विषय में जानना चाहिये। एकेन्द्रियों का कथन भी उसी प्रकार है, किन्तु उनकी विग्रह गति उत्कृष्ट चार समय तक की होती है। शेष पूर्ववत्।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है। हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'–कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं।

**विवेचन**–जीवों की उत्पत्ति, शीघ्र गति एवं शीघ्र गति के विषय में चौदहवें शतक के प्रथम उद्देशक में विस्तारपूर्वक विवेचन किया है। तदनुसार यहाँ भी जानना चाहिये।

॥ पच्चीसवें शतक का आठवाँ उद्देशक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# शतक २५ उद्देशक ९

## भवसिद्धिक जीवों की उत्पत्ति

१ प्रश्न–भवसिद्धियणेरइया णं भंते ! कहं उववज्जंति ?

१ उत्तर–गोयमा ! से जहाणामए पवए पवमाणे–अवसेसं तं चेव जाव वेमाणिए ।

❀ 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति ❀

॥ पणवीसइमे सए णवमो उद्देसो समत्तो ॥

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! भवसिद्धिक नैरयिक किस प्रकार उत्पन्न होते हैं ?

१ उत्तर–हे गौतम ! पूर्वोक्त कूदते हुए पुरुष के समान इत्यादि सभी पूर्वोक्त यावत् वैमानिक पर्यन्त ।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'–कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

॥ पच्चीसवें शतक का नौवां उद्देशक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# शतक २५ उद्देशक १०

## अभव्य जीवों की उत्पत्ति

१ प्रश्न–अभवसिद्धियणेरइया णं भंते ! कहं उववज्जंति ?

१ उत्तर–गोयमा ! से जहाणामए पवए पवमाणे–अवसेसं तं चेव एवं जाव वेमाणिए ।

❀ 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति ❀

॥ पणवीसइमे सए दसमो उद्देसो समत्तो ॥

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! अभवसिद्धिक नैरयिक किस प्रकार उत्पन्न होते हैं ?

१ उत्तर–हे गौतम ! पूर्ववत कोई कूदने वाले पुरुष के समान यावत् वैमानिक पर्यन्त ।

॥ पच्चीसवें शतक का दसवां उद्देशक सम्पूर्ण ॥

# शतक २५ उद्देशक ११

## सम्यग्दृष्टि जीवों की उत्पत्ति

१ प्रश्न–सम्मदिट्ठिणेरइया णं भंते ! कहं उववज्जंति ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१ उत्तर-गोयमा ! से जहाणामए पवए पवमाणे-अवसेसं तं चेव, एवं एगिंदियवज्जं जाव वेमाणिया ।

❀ 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति ❀

॥ पणवीसइमे सए एक्कारसमो उद्देसो समत्तो ॥

भावार्थ- १ प्रश्न- हे भगवन् ! समदृष्टि नैरयिक किस प्रकार उत्पन्न होते हैं?

१ उत्तर-हे गौतम ! कूदने वाले पुरुष के समान पूर्ववत् । एकेन्द्रिय छोड़ कर यावत् वैमानिक पर्यन्त ।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन ! यह इसी प्रकार है'- कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

विवेचन-यहाँ समदृष्टि के उत्पन्न होने का वर्णन है । एकेन्द्रिय जीव मिथ्यादृष्टि ही होते हैं । इसलिये यहाँ एकेन्द्रियों को वर्जित किया है ।

॥ पच्चीसवें शतक का ग्यारहवाँ उद्देशक सम्पूर्ण ॥

# शतक २५ उद्देशक १२

## मिथ्यादृष्टि जीवों की उत्पत्ति

१ प्रश्न-मिच्छदिट्ठिणेरइया णं भंते ! कहं उववज्जंति ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१ उत्तर–गोयमा ! से जहाणामए पवए पवमाणे–अवसेसं तं चेव, एवं जाव वेमाणिए ।

❀ 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति ❀

॥ पणवीसइमे सए बारसमो उद्देसो समत्तो ॥

॥ पणवीसइमं सयं समत्तं ॥

**भावार्थ**–१ प्रश्न–हे भगवन् ! मिथ्यादृष्टि नैरयिक किस प्रकार उत्पन्न होते हैं?

१ उत्तर–हे गौतम ! पूर्ववत् । यावत् वैमानिक पर्यन्त ।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'–कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

॥ पच्चीसवें शतक का बारहवाँ उद्देशक सम्पूर्ण ॥

## पच्चीसवाँ शतक सम्पूर्ण

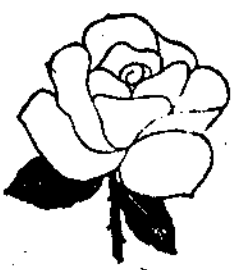

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# शतक २६

## (बन्धी शतक)

णमो सुयदेवयाए भगवईए ।

जीवा य लेस्स पक्खिय दिट्ठि अण्णाण णाण सण्णाओ ।
वेय कसाए जोग उवओग एक्कारस वि ठाणा ॥

भगवती श्रुत-देवता को नमस्कार हो ।

भावार्थ—इस शतक में ग्यारह उद्देशक हैं । उनका विषय क्रमशः इस प्रकार है—१ जीव २ लेश्या ३ पाक्षिक (शुक्लपाक्षिक और कृष्णपाक्षिक) ४ दृष्टि ५ अज्ञान ६ ज्ञान ७ संज्ञा ८ वेद ९ कषाय १० योग और ११ उपयोग। ग्यारह उद्देशकों में उपर्युक्त द्वारों से बन्ध विषयक निरूपण किया जायगा ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# शतक २६ उद्देशक १

## जीव ने कर्म का बन्ध किया, करता है, करेगा ?

१ प्रश्न–तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे जाव एवं वयासी–जीवे णं भंते ! १ पावं कम्मं किं बंधी बंधइ बंधिस्सइ २ बंधी बंधइ ण बंधिस्सइ ३ बंधी ण बंधइ बंधिस्सइ ४ बंधी ण बंधइ ण बंधिस्सइ ?

१ उत्तर–गोयमा ! १ अत्थेगइए बंधी बंधइ बंधिस्सइ २ अत्थेगइए बंधी बंधइ ण बंधिस्सइ ३ अत्थेगइए बंधी ण बंधइ बंधिस्सइ ४ अत्थेगइए बंधी ण बंधइ ण बंधिस्सइ (१)।

कठिन शब्दार्थ –बंधी––बांधा था, बंधइ—बांधता है, बंधिस्सइ––बांधेगा।

भावार्थ–१ प्रश्न–उस काल उस समय में राजगृह नगर में यावत् गौतम स्वामी ने पूछा–हे भगवन् ! १ जीव ने पापकर्म बांधा था, बांधता है और बांधेगा।

२ अथवा बांधा था, बांधता है और नहीं बांधेगा ?

३ अथवा बांधा था, नहीं बांधता है और बांधेगा ?

४ अथवा बांधा था, नहीं बांधता है और नहीं बांधेगा ?

१ उत्तर–हे गौतम ! १ किसी जीव ने पापकर्म बांधा था, बांधता है और बांधेगा।

२ किसी जीव ने पापकर्म बांधा था, बांधता है, परंतु आगे नहीं बांधेगा।

३ किसी जीव ने पापकर्म बांधा था, अभी नहीं बांधता है, किंतु आगे बांधेगा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

४ किसी जीव ने पापकर्म बांधा था, नहीं बांधता है और आगे भी नहीं बांधेगा ।

२ प्रश्न–सलेस्से णं भंते ! जीवे पावं कम्मं किं बंधी बंधइ बंधिस्सइ २ बंधी बंधइ ण बंधिस्सइ पुच्छा ।

२ उत्तर–गोयमा ! १ अत्थेगइए बंधी बंधइ बंधिस्सइ, अत्थेगइए एवं चउभंगो ।

भावार्थ–२ प्रश्न–हे भगवन् ! सलेशी जीव ने पापकर्म बांधा था, बांधता है और बांधेगा ? अथवा बांधा था, बांधता है और नहीं बांधेगा आदि० ?

२ उत्तर–हे गौतम ! किसी जीव ने पापकर्म बांधा था, बांधता है और बांधेगा आदि चारों भंग ।

३ प्रश्न–कण्हलेस्से णं भंते ! जीवे पावं कम्मं किं बंधी–पुच्छा ।

३ उत्तर–गोयमा ! अत्थेगइए बंधी बंधइ बंधिस्सइ, अत्थेगइए बंधी बंधइ ण बंधिस्सइ, एवं जाव पम्हलेस्से । सव्वत्थ पढम बिइय-भंगा । सुक्कलेस्से जहा सलेस्से तहेव चउभंगो ।

भावार्थ–३ प्रश्न–हे भगवन् ! कृष्णलेशी जीव ने पापकर्म बांधा था, बांधता है और बांधेगा० ?

३ उत्तर–हे गौतम ! १ किसी जीव ने पापकर्म बांधा था, बांधता है और बांधेगा । २ किसी जीव ने पापकर्म बांधा था, बांधता है, किन्तु आगे नहीं बांधेगा । इसी प्रकार पद्मलेशी पर्यन्त । इन सभी में पहला और दूसरा–ये दो भंग होते हैं । शुक्ललेशी के लिए सलेशी के समान चार भंग जानो ।

४ प्रश्न–अलेस्से णं भंते ! जीवे पावं कम्मं किं बंधी–पुच्छा ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

४ उत्तर-गोयमा ! बंधी ण बंधइ ण बंधिस्सइ (२)।

भावार्थ-४ प्रश्न-हे भगवन् ! अलेशी जीव ने पापकर्म बांधा था० ?

४ उत्तर-हे गौतम ! अलेशी जीव ने पापकर्म बांधा था, अब नहीं बांधता है और आगे भी नहीं बांधेगा।

५ प्रश्न-कण्हपक्खिए णं भंते ! जीवे पावं कम्मं-पुच्छा।

५ उत्तर-गोयमा ! अत्थेगइए बंधी० पढम-बिइया भंगा।

भावार्थ-५ प्रश्न-हे भगवन् ! कृष्णपाक्षिक जीव ने पापकर्म बांधा था० ?

५ उत्तर-हे गौतम ! किसी जीव ने बांधा था आदि पहला और दूसरा भंग।

६ प्रश्न-सुक्कपक्खिए णं भंते ! जीवे-पुच्छा।

६ उत्तर-गोयमा ! चउभंगो भाणियव्वो (३)।

भावार्थ-६ प्रश्न-हे भगवन् ! शुक्लपाक्षिक जीव ने पापकर्म बांधा था० ?

६ उत्तर-हे गौतम ! चारों भंग जानो।

७-सम्मदिट्ठीणं चत्तारि भंगा, मिच्छादिट्ठीणं पढम-बिइया, सम्मामिच्छादिट्ठीणं एवं चेव (४)।

भावार्थ-७-समदृष्टि जीवों में चार भंग, मिथ्यादृष्टि जीवों में पहला और दूसरा-ये दो भंग, सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवों में भी इसी प्रकार दो भंग।

८-णाणीणं चत्तारि भंगा, आभिणिबोहियणाणीणं जाव मणपज्जव-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णाणीणं चत्तारि भंगा, केवलणाणीणं चरमो भंगो जहा अलेस्साणं (५)। अण्णाणीणं पढम-बिइया, एवं मइअण्णाणीणं, सुयअण्णाणीणं विभंगणाणीणं वि (६)।

भावार्थ-८-ज्ञानी जीवों में चार भंग, आभिनिबोधिक ज्ञानी यावत् मनःपर्यव ज्ञानी में चार भंग, केवलज्ञानी जीवों में अन्तिम एक भंग अलेशी जीवों के समान पाया जाता है। अज्ञानी जीवों में पहला और दूसरा भंग, इसी प्रकार मतिअज्ञानी, श्रुतअज्ञानी और विभंगज्ञानी में भी पहला और दूसरा भंग पाया जाता है।

९-आहारसण्णोवउत्ताणं जाव परिग्गहसण्णोवउत्ताणं पढम-बिइया, णोसण्णोवउत्ताणं चत्तारि (७)।

भावार्थ-९-आहारसंज्ञोपयुक्त यावत् परिग्रहसंज्ञोपयुक्त जीवों में पहला और दूसरा और नोसंज्ञोपयुक्त जीवों में चारों भंग पाये जाते हैं।

१०-सवेयगाणं पढम-बिइया। एवं इत्थीवेयगा, पुरिसवेयगा, णपुंसगवेयगा वि। अवेयगाणं चत्तारि (८)।

भावार्थ-१०-सवेदक जीवों में पहला और दूसरा भंग इसी प्रकार स्त्रीवेदक, पुरुषवेदक तथा नपुंसकवेदक में भी पहला और दूसरा भंग पाये जाते हैं। अवेदक में चारों भंग पाये जाते हैं।

११-सकसायीणं चत्तारि, कोहकसायीणं पढम-बिइया भंगा, एवं माणकसाइयस्स वि, मायाकसाइयस्स वि। लोभकसाइयस्स चत्तारि भंगा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ–११–सकषायी जीवों में चार भंग, क्रोधकषायी जीवों में पहला और दूसरा भंग और इसी प्रकार मानकषायी तथा मायाकषायी जीवों में भी ये दो भंग पाये जाते हैं। लोभकषायी जीवों में चारों भंग पाये जाते हैं।

१२ प्रश्न–अकसायी णं भंते ! जीवे पावं कम्मं किं बंधी–पुच्छा।

१२ उत्तर–गोयमा ! अत्थेगइए बंधी ण बंधइ बंधिस्सइ ३, अत्थेगइए बंधी ण बंधइ ण बंधिस्सइ ४ (९)।

भावार्थ–१२ प्रश्न–हे भगवन् ! अकषायी जीव ने पापकर्म बांधा था०?

१२ उत्तर–हे गौतम ! किसी जीव ने बांधा था, अभी नहीं बांधता है किंतु भविष्य में बांधेगा और किसी जीव ने बांधा था, अभी नहीं बांधता है और आगे भी नहीं बांधेगा।

१३–सजोगिस्स चउभंगो, एवं मणजोगिस्स वि वयजोगिस्स वि कायजोगिस्स वि। अजोगिस्स चरिमो (१०)। सागारोवउत्ते चत्तारि, अणगारोवउत्ते वि चत्तारि भंगा (११)।

भावार्थ–१३–सयोगी जीवों में चार भंग। इसी प्रकार मनयोगी, वचनयोगी और काययोगी जीवों में भी चार भंग पाये जाते हैं। अयोगी जीवों में अन्तिम एक भंग पाया जाता है। साकारोपयुक्त और अनाकारोपयुक्त जीवों में चारों भंग पाये जाते हैं।

विवेचन–उपरोक्त सूत्र में जीव, लेश्या आदि ग्यारह स्थानों में बन्ध का कथन किया गया। इनमें से पहले उद्देशक में अनन्तरोपपन्नक, परम्परोपपन्नक आदि विशेषण रहित सामान्य जीव की अपेक्षा ग्यारह द्वारों से बन्ध वक्तव्यता का कथन किया है। 'जीव ने

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पाप कर्म बांधा था' इसके चार भंग बनाये है । यथा-

१ बांधा था, बांधता है और बांधेगा ।

२ बांधा था, बांधता है और नहीं बांधेगा ।

३ बांधा था, नहीं बांधता है और बांधेगा ।

४ बांधा था, नहीं बांधता है और नहीं बांधेगा

यदि कोई यह शंका करे कि 'जिस प्रकार 'बांधा था' के चार भंग बनते हैं, उसी प्रकार 'नहीं बांधा था' के भी चार भंग क्यों नहीं बनते ?' इसका समाधान यह है कि 'भूतकाल में पाप कर्म नहीं बांधा था,-ऐसा कोई भी जीव नहीं है । इसलिए 'नहीं बांधा था' यह मूल भंग बन ही नहीं सकता, फिर चार भंग तो बने ही कहां से ?

(१) 'बांधा था, बांधता है और बांधेगा'-यह पहला भंग अभव्य जीव की अपेक्षा है ।

(२) 'बांधा था, बांधता है और नहीं बांधेगा'-यह दूसरा भंग क्षपक अवस्था को प्राप्त होने वाले भव्य जीव की अपेक्षा है ।

(३) 'बांधा था, नहीं बांधता है और बांधेगा'-यह तीसरा भंग जिस जीव ने मोहनीय कर्म का उपशम किया है, उस उपशम दशा में वर्तमान भव्य जीव की अपेक्षा है। क्योंकि उस उपशम अवस्था से गिरने पर वह अवश्य कर्मों का बन्ध करेगा ।

(४) 'बांधा था, नहीं बांधता है और नहीं बांधेगा'-यह चौथा भंग क्षीण-मोहनीय जीव की अपेक्षा है ।

सलेशी जीव में चारों भंग पाये जाते हैं, क्योंकि शुक्ललेशी जीव पाप कर्म का बन्धक भी होता है । कृष्णादि पांच लेश्या वाले जीवों में पहले के दो भंग ही पाये जाते हैं। क्योंकि उन जीवों में वर्तमान काल में मोहनीय कर्म का क्षय अथवा उपशम नहीं है । इसलिए उनमें तीसरा और चौथा भंग नहीं पाया जाता । कृष्णादि पांच लेश्या वाले जीवों में दूसरा भंग (बांधा था, बांधता है और नहीं बांधेगा) तो सम्भव है, क्योंकि कालान्तर में क्षपक अवस्था प्राप्त होने पर वह नहीं बांधेगा ।

अलेशी में केवल चौथा भंग ही पाया जाता है, क्योंकि अयोगी केवली अवस्था में जीव अलेशी होता हैं । लेश्या के अभाव में जीव अबन्धक होता है ।

जिन जीवों का संसार-परिभ्रमण काल अर्द्ध पुद्गल-परावर्तन काल से अधिक है, वे 'कृष्ण पाक्षिक' कहलाते हैं और जिन जीवों का संसार-परिभ्रमण काल अर्द्ध पुद्गल-परावर्तन से अधिक नहीं है और वे अर्द्ध पुद्गल-परावर्तन काल के भीतर ही मोक्ष चले जायेंगे, वे 'शुक्ल-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पाक्षिक' कहलाते हैं। कृष्णपाक्षिक जीवों में पहले के दो भंग होते हैं, क्योंकि वर्तमान काल में उन जीवों में पापकर्म का अबन्धकपन नहीं है। शुक्लपाक्षिक जीवों में चारों भंग पाये जाते हैं। प्रथम भंग तो प्रश्न समय के अनन्तर तुरन्त के भविष्यत् समय की अपेक्षा घटित होता है। दूसरा भंग भविष्यत्काल में क्षपक अवस्था की प्राप्ति की अपेक्षा घटित होता है। तीसरा भंग उन शुक्लपाक्षिक जीवों में घटित होता है, जो मोहनीय कर्म का उपशम कर के पीछे गिरने वाले हैं और चौथा भंग क्षपक अवस्था की अपेक्षा घटित होता है।

'कृष्णपाक्षिक जीवों में 'बांधेंगे नहीं'—यह अंश असम्भव होने हुए भी दूसरा भंग माना है, तो शुक्लपाक्षिक जीवों में 'बांधेंगे नहीं' इस अंश का अवश्य सम्भव होने से 'बांधेंगे'—इस अंश युक्त प्रथम भंग क्यों नहीं घटित होता है ?' इस प्रश्न का उत्तर यह है कि शुक्लपाक्षिक जीवों के प्रश्न समय के अनन्तर (तुरन्त पश्चात्) समय की अपेक्षा प्रथम भंग है और कृष्णपाक्षिक जीवों में शेष समयों की अपेक्षा दूसरा भंग घटित होता है।

सम्यग्दृष्टि जीवों में शुक्लपाक्षिक के समान चारों भंग होते हैं। मिथ्यादृष्टि और मिश्रदृष्टि में पहले के दो भंग होते हैं, क्योंकि उनके मोहनीय कर्म का बन्ध होने में अन्तिम दो भंग घटित नहीं होते।

केवलज्ञानी जीव को वर्तमान में और भविष्यत्काल में बन्ध नहीं होने से उनमें एकमात्र चौथा भंग ही होता है। अज्ञानी जीवों के मोहनीय कर्म का क्षय या उपशम न होने से पहले के दो भंग ही पाये जाते हैं।

आहारादि की संज्ञा अर्थात् आसक्ति वाले जीवों में क्षपकपन और उपशमकपन नहीं होने से पहले के दो भंग ही होते हैं। नोसंज्ञा अर्थात् आहारादि की आसक्ति रहित जीवों में मोहनीय कर्म का क्षय और उपशम सम्भव होने से चारों भंग पाये जाते हैं।

वेद का उदय हो, तब जीव मोहनीय का क्षय और उपशम नहीं कर सकता। इसलिये पहले के दो भंग ही पाये जाते हैं। अवेदी जीवों में वेद का उपशम हो, किन्तु सूक्ष्म-संपराय गुणस्थान की प्राप्ति न हो, तब तक मोहनीय कर्म को बांधता है और बांधेगा। अथवा वहां से गिर कर भी बांधेगा। वेद का क्षय हो जाने पर पापकर्म बांधता है, परन्तु सूक्ष्म-संपरायादि अवस्था में नहीं बांधता है। उपशान्तवेदी जीव सूक्ष्म-संपरायादि अवस्था में पापकर्म नहीं बांधता है, किन्तु वहां से उतरने के बाद बांधता है। वेद का क्षय हो जाने पर सूक्ष्म-संपरायादि गुणस्थानों में पापकर्म नहीं बांधता है और आगे भी नहीं बांधेगा।

सकषायी जीवों में चारों भंग पाये जाते हैं। उनमें से पहला भंग अभव्य जीव की अपेक्षा है। दूसरा भंग उस भव्य जीव की अपेक्षा है, जिसके मोहनीय कर्म क्षय होने वाला

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

है। उपशमक सूक्ष्म-संपराय जीव की अपेक्षा तीसरा भंग है और चौथा भंग क्षपक सूक्ष्म-सम्पराय जीव की अपेक्षा है। इसी प्रकार लोभ-कषायी जीवों के विषय में भी समझना चाहिये। क्रोध-कषायी, मान-कषायी और माया-कषायी जीवों में पहले के दो भंग पाये जाते हैं। पहला भंग अभव्य जीव की अपेक्षा और दूसरा भंग भव्य विशेष की अपेक्षा है। उनमें तीसरा और चौथा भंग नहीं पाया जाता, क्योंकि क्रोधादि के उदय में अबन्धकता नहीं होती। अकषायी जीवों में तीसरा और चौथा भंग पाया जाता है। तीसरा भंग उपशमक अकषायी में और चौथा भंग क्षपक अकषायी में पाया जाता है।

सयोगी में अभव्य, भव्यविशेष, उपशमक और क्षपक की अपेक्षा क्रमशः चारों भंग पाये जाते हैं। अयोगी को पापकर्म का बन्ध नहीं होता और भविष्य में भी नहीं होगा, इसलिये एक चौथा भंग ही पाया जाता है।

साकारोपयुक्त और अनाकारोपयुक्त जीवों में चारों भंग पाये जाते हैं। इसकी घटना पूर्ववत् है।

## नैरयिक के पाप-बन्ध

**१४ प्रश्न**--णेरइए णं भंते ! पावं कम्मं किं बंधी बंधइ बंधिस्सइ ?

**१४ उत्तर**--गोयमा ! अत्थेगइए बंधी० पढम-बिइया।

भावार्थ--१४ प्रश्न--हे भगवन् ! नैरयिक जीव ने पाप-कर्म बांधा था इत्यादि० ?

१४ उत्तर--हे गौतम ! किसी नैरयिक जीव ने पाप-कर्म बांधा था, इत्यादि पहला और दूसरा भंग।

**१५ प्रश्न**--सलेस्से णं भंते ! णेरइए पावं कम्मं ० ?

**१५ उत्तर**--एवं चेव। एवं कण्हलेस्से वि, णीललेस्से वि, काउलेस्से वि। एवं कण्हपक्खिए, सुक्कपक्खिए, सम्मदिट्ठी, मिच्छादिट्ठी,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सम्मामिच्छादिट्ठी, णाणी, आभिणिबोहियणाणी, सुयणाणी, ओहिणाणी, अण्णाणी, मइअण्णाणी, सुयअण्णाणी, विभंगणाणी, आहारसण्णोवउत्ते जाव परिग्गहसण्णोवउत्ते, सवेयए, णपुंसगवेयए, सकसायी जाव लोभकसायी, सजोगी, मणजोगी, वयजोगी, कायजोगी, सागारोवउत्ते, अणागारोवउत्ते—एएसु सव्वेसु पएसु पढम-बिइया भंगा भाणियव्वा। एवं असुरकुमारस्स वि वत्तव्वया भाणियव्वा, णवरं तेउलेस्सा, इत्थिवेयग-पुरिसवेयगा य अब्भहिया, णपुंसगवेयगा ण भण्णंति, सेसं तं चेव, सव्वत्थ पढमबिइया भंगा। एवं जाव थणियकुमारस्स। एवं पुढविकाइयस्स वि, आउकाइयस्स वि जाव पंचिंदियतिरिक्खजोणियस्स वि सव्वत्थ वि पढम-बिइया भंगा, णवरं जस्स जा लेस्सा। दिट्ठी, णाणं, अण्णाणं, वेदो, जोगो य अत्थि तं तस्स भाणियव्वं, सेसं तहेव। मणूसस्स जच्चेव जीवपए वत्तव्वया सच्चेव णिरवसेसा भाणियव्वा। वाणमंतरस्स जहा असुरकुमारस्स। जोइसियस्स वेमाणियस्स एवं चेव, णवरं लेस्साओ जाणियव्वाओ, सेसं तहेव भाणियव्वं।

भावार्थ—१५ प्रश्न—हे भगवन्! सलेशी नैरयिक जीव ने पापकर्म बांधा था०?

१५ उत्तर—हे गौतम! पूर्ववत् पहला और दूसरा भंग। इसी प्रकार कृष्णलेशी, नीललेशी, कापोतलेशी, कृष्णपाक्षिक, शुक्लपाक्षिक, सम्यग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि, सम्यग्मिथ्यादृष्टि, ज्ञानी, आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी, अज्ञानी, मतिअज्ञानी, श्रुतअज्ञानी, विभंगज्ञानी, आहारसंज्ञोपयुक्त यावत् परिग्रहसंज्ञोपयुक्त, सवेदक, नपुंसकवेदक, सकषायी यावत् लोभकषायी, सयोगी, मनयोगी, वचनयोगी, काययोगी, साकारोपयुक्त, अनाकारोपयुक्त, इन सभी पदों

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

में पहला और दूसरा भंग पाया जाता है ।

इसी प्रकार असुरकुमारों में भी, किन्तु उनमें तेजोलेश्या, स्त्रीवेदक और पुरुषवेदक अधिक कहने चाहिये, नपुंसकवेदक नहीं । शेष पूर्ववत् । इनमें पहला और दूसरा भंग पाया जाता है । इस प्रकार यावत् स्तनितकुमार पर्यन्त ।

पृथ्वीकायिक, अप्कायिक यावत् पंचेन्द्रिय तिर्यंच-योनिक तक सभी के इसी प्रकार पहला और दूसरा भंग है । जिस जीव में जो लेश्या, दृष्टि, ज्ञान, अज्ञान, वेद और योग हों, उसमें वही कहना चाहिये । शेष पूर्ववत ।

मनुष्य के लिए जीवपद की वक्तव्यता के अनुसार सभी कहना चाहिये । वाणव्यन्तर असुरकुमारों के समान है । ज्योतिषी और वैमानिक भी इसी प्रकार है, परन्तु जिसके जो लेश्या हों, वही कहनी चाहिये । शेष पूर्ववत् ।

१६ प्रश्न-जीवे णं भंते ! णाणावरणिज्जं कम्मं किं बंधी बंधइ बंधिस्सइ-?

१६ उत्तर-एवं जहेव पावकम्मस्स वत्तव्वया तहेव णाणावरणिज्जस्स वि भाणियव्वा, णवरं जीवपए मणुस्सपए य सकसायी जाव लोभकसाइंमि य पढम-बिइया भंगा, अवसेसं तं चेव जाव वेमाणिया । एवं दरिसणावरणिज्जेण वि दंडगो भाणियव्वो णिरवसेसो ।

भावार्थ-१६ प्रश्न-हे भगवन् ! जीव ने ज्ञानावरणीय कर्म बांधा था० ?

१६ उत्तर-हे गौतम ! पापकर्म की वक्तव्यता के समान ज्ञानावरणीय कर्म के विषय में भी जानना चाहिये । परन्तु जीवपद और मनुष्यपद में सकषायी यावत् लोभ कषायी में पहला और दूसरा भंग ही कहना चाहिये, शेष पूर्ववत् यावत् वैमानिक पर्यन्त । ज्ञानावरणीय कर्म के समान दर्शनावरणीय कर्म के विषय में भी सम्पूर्ण दण्डक कहने चाहिये ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

**विवेचन**--नैरयिक जीव में उपशम श्रेणी या क्षपक श्रेणी नहीं होती इसलिये उनमें तीसरा और चौथा भंग नहीं पाया जाता, पहला और दूसरा भंग ही पाया जाता है। इसी प्रकार सलेशी इत्यादि विशेषण युक्त नारक पद में भी जानना चाहिये और इसी प्रकार असुरकुमारादि में भी जानना चाहिये।

औधिक जीव और सलेशी आदि विशेषण युक्त जीव के लिये जो चतुर्भंगी आदि कहनी है, वह मनुष्य के लिये भी उसी प्रकार कहनी चाहिये, क्योंकि जीव और मनुष्य, दोनों समान धर्म वाले हैं। इस प्रकार औधिक जीव सहित पच्चीस दण्डक पाप-कर्म सम्बन्धी कहे, उसी प्रकार ज्ञानावरणीय कर्म के विषय में भी पच्चीस दण्डक कहने चाहिये, किन्तु पापकर्म के दण्डक में जीवपद और मनुष्यपद में सकषायी और लोभ कषायी की अपेक्षा सूक्ष्म-संपराय गुणस्थानवर्ती जीव मोहनीय कर्म रूप पाप कर्म का अबन्धक होने से चार भंग कहे थे, किन्तु यहाँ ज्ञानावरणीय कर्म के दण्डक में पहले के दो भंग ही कहने चाहिये, क्योंकि सकषायी जीव ज्ञानावरणीय कर्म का बन्धक अवश्य होता है, अबन्धक नहीं होता। ज्ञानावरणीय कर्म के समान दर्शनावरणीय के दण्डक भी कहना चाहिये।

**१७ प्रश्न**-जीवे णं भंते ! वेयणिज्जं कम्मं किं बंधी-पुच्छा।

**१७ उत्तर**-गोयमा ! १ अत्थेगइए बंधी बंधइ बंधिस्सइ २ अत्थेगइए बंधी बंधइ ण बंधिस्सइ ४ अत्थेगइए बंधी ण बंधइ ण बंधिस्सइ, सलेस्से वि एवं चेव तइयविहूणा भंगा। कण्हलेस्से जाव पम्हलेस्से पढम-बिइया भंगा, सुक्कलेस्से तइयविहूणा भंगा, अलेस्से चरिमो भंगो। कण्हपक्खिए पढम-बिइया। सुक्कपक्खिया तइयविहूणा। एवं सम्मदिट्ठिस्स वि, मिच्छादिट्ठिस्स सम्मामिच्छादिट्ठिस्स य पढम-बिइया। णाणिस्स तइयविहूणा, आभिणिबोहियणाणी जाव मणपज्जवणाणी पढम-बिइया, केवलणाणी तइयविहूणा। एवं णोसण्णोवउत्ते, अवेयए, अकसायी। सागारोवउत्ते अणागारोवउत्ते एएसु तइयविहूणा। अजो-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गिम्मि य चरिमो, सेसेसु पढम-बिइया ।

कठिन शब्दार्थ--विहूणा--विहीन--रहित ।

भावार्थ--१७ प्रश्न--हे भगवन् ! जीव ने वेदनीय कर्म बांधा था० ?

१७ उत्तर--हे गौतम ! १ किसी जीव ने बांधा था, बांधता है और बांधेगा । २ किसी जीव ने बांधा था, बांधता है और नहीं बांधेगा । ४ किसी जीव ने बांधा था, नहीं बांधता है और नहीं बांधेगा । ये तीन भंग पाये जाते हैं । इसी प्रकार सलेशी जीव में तीसरे भंग को छोड़ कर शेष तीन भंग पाये जाते हैं । कृष्णलेशी यावत् पद्मलेशी जीवों में पहला और दूसरा भंग पाया जाता है । शुक्ललेशी जीवों में तीसरे भंग के अतिरिक्त तीन भंग पाये जाते हैं । अलेशी में चौथा भंग होता है । कृष्णपाक्षिक जीवों में पहला और दूसरा भंग तथा शुक्लपाक्षिक में तीसरे के अतिरिक्त तीन भंग पाये जाते हैं । इसी प्रकार सम्यग्दृष्टि में भी तीन भंग होते हैं । मिथ्यादृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवों में पहला और दूसरा भंग होता है । ज्ञानी जीवों में तीसरे के अतिरिक्त तीन भंग होते हैं । आभिनिबोधिकज्ञानी यावत् मनः पर्यवज्ञानी जीवों में पहला और दूसरा भंग तथा केवलज्ञानी में तीसरे के अतिरिक्त तीन भंग होते हैं । इसी प्रकार नोसंज्ञोपयुक्त, अवेदक, अकषायी, साकारोपयुक्त और अनाकारोपयुक्त, इन सभी में तीसरे के अतिरिक्त तीन भंग होते हैं । अयोगी में एक चौथा भंग होता है । शेष सभी में पहला और दूसरा भंग ही होता है ।

१८ प्रश्न--णेरइए णं भंते ! वेयणिज्जं कम्मं बंधी बंधइ--?

१८ उत्तर--एवं णेरइया जाव वेमाणिय त्ति । जस्स जं अत्थि सव्वत्थ वि पढम-बिइया, णवरं मणुस्से जहा जीवे ।

भावार्थ--१८ प्रश्न--हे भगवन् ! नैरयिक जीव ने वेदनीय कर्म बांधा० ?

१८ उत्तर--हे गौतम ! पूर्ववत् । नैरयिक से ले कर यावत् वैमानिक तक

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जिसके जो लेश्यादि हों, वे कहने चाहिये। इन सभी में पहला और दूसरा भंग पाया जाता है। मनुष्य सामान्य जीव के समान है।

**विवेचन**--वेदनीय कर्म के बन्धक में पहला भंग अभव्य जीव की अपेक्षा से है। जो भव्य जीव मोक्ष जाने वाला है, उनकी अपेक्षा दूसरा भंग है। तीसरा भंग यहाँ संभव नहीं है, क्योंकि जो जीव वेदनीय का अबन्धक हो जाता है, वह फिर वेदनीय का बन्ध कभी नहीं करता। चौथा भंग अयोगी केवली की अपेक्षा से है। इस प्रकार वेदनीय कर्म में तीसरा भंग छोड़ कर शेष तीन भंग पाये जाते हैं।

सलेशी जीव में पूर्वोक्त युक्ति से तीसरे भंग के अतिरिक्त शेष तीन भंग होते हैं। 'बांधा था, नहीं बांधता है और नहीं बांधेगा,' यह चौथा भंग यहाँ स्वीकार किया है, किन्तु यह यहाँ किस प्रकार घटित होता है,--यह सम्यक् ज्ञात नहीं होता। यह भंग लेश्या रहित अयोगी में ही घटित होता है, क्योंकि लेश्या तेरहवें गुणस्थान तक होती है और वहाँ तक जीव वेदनीय कर्म का बन्धक होता है। इस विषय में कोई आचार्य इस प्रकार समाधान करते हैं कि इस सूत्र के प्रामाण्य (कथन) से अयोगी अवस्था के प्रथम समय में 'घंटा लाला न्याय' से परमशुक्ल लेश्या सम्भवित होती है और इसीलिये सलेशी में चौथा भंग घटित हो सकता है। तत्त्व बहुश्रुत गम्य है।

कृष्णादि पाँच लेश्या वाले जीवों में अयोगीपन का अभाव होने से वे वेदनीय कर्म के अबन्धक नहीं होते। इसलिये उनमें पहले के दो भंग होते हैं। शुक्ललेश्या जीव में सलेशी के समान तीन भंग होते हैं। अलेशी जीव, केवली और सिद्ध होते हैं उनमें केवल चौथा भंग ही पाया जाता है। कृष्णपाक्षिक जीव में अयोगीपन का अभाव होने से पहले के दो भंग ही पाये जाते हैं। शुक्लपाक्षिक जीव अयोगी भी होता है, इसलिये उसमें तीसरे भंग के अतिरिक्त शेष तीन भंग होते हैं।

सम्यग्दृष्टि जीव में अयोगीपन का सम्भव होने से तीसरे भंग के अतिरिक्त शेष तीन भंग पाये जाते हैं। मिथ्यादृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवों में अयोगीपन का अभाव होने से वे वेदनीय कर्म के अबन्धक नहीं होते। इसलिये पहले के दो भंग ही पाये जाते हैं। ज्ञानी और केवलज्ञानी में, अयोगी अवस्था में चौथा भंग होता है। इसलिये तीसरे भंग के अतिरिक्त शेष तीन भंग पाये जाते हैं। आभिनिबोधिक आदि ज्ञान वाले जीवों में अयोगी अवस्था का अभाव होने से चौथा भंग नहीं पाया जाता। उनमें पहले के दो भंग ही पाये जाते हैं। इस प्रकार सभी स्थानों पर यह समझना चाहिये कि जहाँ अयोगी अवस्था का

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सम्भव है, वहाँ तीसरे भंग के अतिरिक्त तीन भंग पाये जाते हैं और जहाँ अयोगी अवस्था का सम्भव नहीं है, वहाँ पहला और दूसरा भंग ही पाया जाता है।

१९ प्रश्न–जीवे णं भंते ! मोहणिज्जं कम्मं किं बंधी बंधइ० ?

१९ उत्तर–जहेव पावं कम्मं तहेव मोहणिज्जंपि णिरवसेसं जाव वेमाणिए।

भावार्थ–१९ प्रश्न–हे भगवन् ! जीव ने मोहनीय कर्म बांधा था० ?

१९ उत्तर–हे गौतम ! पाप कर्म के समान मोहनीय-कर्म भी है। इस प्रकार यावत् वैमानिक तक।

२० प्रश्न–जीवे णं भंते ! आउयं कम्मं किं बंधी बंधइ–पुच्छा।

२० उत्तर–गोयमा ! अत्थेगइए बंधी–चउभंगो। सलेस्से जाव सुक्कलेस्से चत्तारि भंगा, अलेस्से चरिमो भंगो।

भावार्थ–२० प्रश्न–हे भगवन् ! जीव ने आयु-कर्म बांधा था० ?

२० उत्तर–हे गौतम ! किसी जीव ने बांधा था, इत्यादि चारों भंग होते हैं। सलेशी यावत् शुक्ललेशी जीवों में भी चारों भंग होते हैं। अलेशी जीवों में एकमात्र अन्तिम भंग होता है।

२१ प्रश्न–कण्हपक्खिए णं–पुच्छा।

२१ उत्तर–गोयमा ! अत्थेगइए बंधी बंधइ बंधिस्सइ, अत्थेगइए बंधी ण बंधइ बंधिस्सइ। सुक्कपक्खिए सम्मदिट्ठि मिच्छादिट्ठि चत्तारि भंगा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ–२१ प्रश्न–हे भगवन् ! कृष्णपाक्षिक जीव ने आयु-कर्म बांधा था० ?

२१ उत्तर–हे गौतम ! किसी जीव ने बांधा था, बांधता है और बांधेगा । किसी जीव ने बांधा था, नहीं बांधता है और आगे बांधेगा–ये दो भंग पाये जाते हैं । शुक्लपाक्षिक, सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टि जीवों में चारों भंग पाये जाते हैं ।

२२ प्रश्न–सम्मामिच्छादिट्ठी–पुच्छा ।

२२ उत्तर–गोयमा ! अत्थेगइए बंधी ण बंधइ बंधिस्सइ, अत्थेगइए बंधी ण बंधइ ण बंधिस्सइ, णाणी जाव ओहिणाणी चत्तारि भंगा ।

भावार्थ–२२ प्रश्न–हे भगवन् ! सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव ने आयु कर्म बांधा था० ?

२२ उत्तर–हे गौतम ! किसी जीव ने बांधा था, नहीं बांधता है और बांधेगा । किसी जीव ने बांधा था, नहीं बांधता है और नहीं बांधेगा–ये दो भंग पाये जाते हैं । ज्ञानी यावत् अवधिज्ञानी जीवों में चारों भंग पाये जाते हैं ।

२३ प्रश्न–मणपज्जवणाणी–पुच्छा ।

२३ उत्तर–गोयमा ! अत्थेगइए बंधी बंधइ बंधिस्सइ, अत्थेगइए बंधी ण बंधइ बंधिस्सइ, अत्थेगइए बंधी ण बंधइ ण बंधिस्सइ । केवलणाणे चरमो भंगो । एवं एएणं कमेणं णोमण्णोवउत्ते विइयविहूणा जहेव मणपज्जवणाणे । अवेयए अकसायी य तइय-चउत्था जहेव सम्मामिच्छत्ते । अजोगिम्मि चरिमो, सेसेसु पएसु चत्तारि भंगा जाव अणागारोवउत्ते ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ-२३ प्रश्न-हे भगवन ! मनःपर्यवज्ञानी जीव ने आयु-कर्म बांधा था०?

२३ उत्तर-हे गौतम ! किसी मनःपर्यवज्ञानी ने आयु-कर्म बांधा था, बांधता है और बांधेगा। किसी जीव ने बांधा था, नहीं बांधता है, बांधेगा। किसी जीव ने बांधा था, नहीं बांधता है और नहीं बांधेगा। ये तीन भंग पाये जाते हैं। केवलज्ञानी में एक चौथा भंग ही होता है। इसी प्रकार क्रमशः नोसंज्ञोपयुक्त जीव में, दूसरे भंग के अतिरिक्त तीन भंग, मनःपर्यवज्ञानी के समान होते हैं। अवेदक और अकषायी जीवों में सम्यग्मिथ्यादृष्टि के समान तीसरा और चौथा भंग होता है। अयोगी में एक अन्तिम भंग होता है। शेष सभी पदों में यावत् अनाकारोपयुक्त तक चारों भंग होते हैं।

२४ प्रश्न-णेरइए णं भंते ! आउयं कम्मं किं बंधो-पुच्छा।

२४ उत्तर-गोयमा ! अत्थेगइए चत्तारि भंगा, एवं सव्वत्थ वि णेरइयाणं चत्तारि भंगा, णवरं कण्हलेस्से कण्हपक्खिए य पढम-तइया भंगा, सम्मामिच्छत्ते तइय-चउत्था। असुरकुमारे एवं चेव, णवरं कण्ह-लेस्से वि चत्तारि भंगा भाणियव्वा, सेसं जहा णेरइयाणं, एवं जाव थणियकुमाराणं। पुढविकाइयाणं सव्वत्थ वि चत्तारि भंगा, णवरं कण्हपक्खिए पढम तइया भंगा।

भावार्थ-२४ प्रश्न-हे भगवन् ! नैरयिक जीव ने आयु-कर्म बांधा था०?

२४ उत्तर-हे गौतम ! किसी नैरयिक जीव ने बांधा था इत्यादि चार भंग। इस प्रकार सभी स्थानों में नैरयिक के चार भंग कहना चाहिये। परन्तु कृष्णलेशी और कृष्णपाक्षिक में पहला और तीसरा भंग तथा सम्यग्मिथ्या-दृष्टि में तीसरा और चौथा भंग होता है। इसी प्रकार असुरकुमार में भी, किन्तु कृष्णलेशी में चार भंग कहने चाहिये। शेष सभी नैरयिक के समान।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इस प्रकार यावत् स्तनितकुमारों तक। पृथ्वीकायिक जीवों में भी सभी स्थानों में चारों भंग होते हैं, किन्तु कृष्णपाक्षिक में पहला और तीसरा भंग होता है।

२५ प्रश्न–तेउलेस्से–पुच्छा।

२५ उत्तर–गोयमा! बंधी ण बंधइ बंधिस्सइ, सेसेसु सव्वत्थ चत्तारि भंगा। एवं आउकाइय-वणस्सइकाइयाण वि णिरवसेसं। तेउकाइय-वाउकाइयाणं सव्वत्थ वि पढम-तइया भंगा। बेइंदिय-तेइंदिय-चउरिंदियाणं पि सव्वत्थ वि पढम-तइया भंगा। णवरं सम्मत्ते, णाणे, आभिणिबोहियणाणे, सुयणाणे तइओ भंगो। पंचिंदिय-तिरिक्ख-जोणियाणं कण्हपक्खिए पढम-तइया भंगा, सम्मामिच्छत्ते तइय-चउत्थो भंगो, सम्मत्ते णाणे, आभिणिबोहियणाणे, सुयणाणे, ओहिणाणे एएसु पंचसु वि पएसु बिइयविहूणा भंगा, सेसेसु चत्तारि भंगा। मणुस्साणं जहा जीवाणं। णवरं सम्मत्ते, ओहिए णाणे, आभिणिबोहियणाणे, सुयणाणे, ओहिणाणे एएसु बिइयविहूणा भंगा, सेसं तं चेव। वाण-मंतर-जोइसिय-वेमाणिया जहा असुरकुमारा। णामं गोयं अंतरायं च एयाणि जहा णाणावरणिज्जं।

❀ 'सेवं भंते! सेवं भंते!' त्ति जाव विहरइ ❀

॥ छवीसइमे सए बंधिसए पढमो उद्देसओ समत्तो ॥

भावार्थ–२५ प्रश्न–हे भगवन्! तेजोलेशी (पृथ्वीकायिक) जीव ने आयु-कर्म बांधा था० ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२५ उत्तर–हे गौतम ! बांधा था, नहीं बांधता है और बांधेगा । यह एक भंग पाया जाता है । शेष सभी स्थानों में चार भंग होते हैं । इसी प्रकार अप्कायिक और वनस्पतिकायिक जीवों में भी । तेउकायिक और वायुकायिक जीवों के सभी स्थानों पहला और तीसरा भंग होता है । बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय और चौरिन्द्रिय जीवों में सभी स्थानों में पहला और तीसरा भंग होता है । किन्तु सम्यक्त्व, ज्ञान, आभिनिबोधिकज्ञान और श्रुतज्ञान में एक तीसरा भंग ही होता है । पंचेन्द्रिय तिर्यंच-योनिक में कृष्णपाक्षिक में पहला और तीसरा भंग, सम्यग्मिथ्यात्व में तीसरा और चौथा भंग, सम्यक्त्व, ज्ञान, आभिनिबोधिकज्ञान, श्रुतज्ञान और अवधिज्ञान–इन पांच पदों में दूसरे भंग के अतिरिक्त शेष तीन भंग होते हैं । शेष सभी पदों में चारों भंग होते हैं । मनुष्य, औधिक जीव के समान, परन्तु सम्यक्त्व, औधिक (सामान्य) ज्ञान, आभिनिबोधिकज्ञान, श्रुतज्ञान और अवधिज्ञान, इन सभी पदों में दूसरे भंग के अतिरिक्त शेष तीन भंग कहने चाहिये । शेष पूर्ववत् । वाणव्यन्तर, ज्योतिषी और वैमानिक, असुरकुमार के समान है । नामकर्म, गोत्रकर्म और अन्तरायकर्म, ज्ञानावरणीयकर्म के सदृश है ।

'हे भगवन ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'—कह कर गौतम स्वामी यावत विचरते हैं ।

**विवेचन**–आयु-कर्म बांधने के विषय में चार भंग बताये हैं । उनमें पहला भंग अभव्य जीव की अपेक्षा है । जो जीव चरमशरीरी होगा, उसकी अपेक्षा दूसरा भंग है । तीसरा भंग उपशमक की अपेक्षा है, क्योंकि उसने पहले आयु बांधा था वर्तमान काल में–उपशम अवस्था में आयु नहीं बांधता और उपशम अवस्था से गिरने पर फिर आयु बांधेगा । चौथा भंग क्षपक की अपेक्षा है । उसने भूतकाल में (जन्मान्तर में) आयु बांधा था, वर्तमान में नहीं बांधता और भविष्यत्काल में भी नहीं बांधेगा ।

सलेशी यावत् शुक्ललेशी जीवों में चार भंग बताये हैं । उनमें से जो निर्वाण को प्राप्त नहीं होगा, उसकी अपेक्षा पहला भंग है । जो चरमशरीरी रूप से उत्पन्न होगा, उसकी अपेक्षा दूसरा भंग है । अबन्ध समय की अपेक्षा तीसरा भंग है और जो चरम-शरीरी है उसकी अपेक्षा चौथा भंग है । इस प्रकार अन्यत्र भी घटित करना चाहिए ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शैलेशी अवस्था प्राप्त जीव तथा सिद्ध भगवान् अलेशी होते हैं। वे आयु का बन्ध नहीं करते और आगे भी नहीं करेंगे। इसलिए उनमें एकमात्र चौथा भंग ही पाया जाता है।

कृष्णपाक्षिक जीव में पहला और तीसरा भंग पाया जाता है। अभव्य की अपेक्षा पहला और अबन्धकाल की अपेक्षा तीसरा भंग होता है। क्योंकि वह वर्तमान काल में आयु नहीं बांधता है, किन्तु भविष्यत्काल में बांधेगा। दूसरा और चौथा भंग कृष्णपाक्षिक में नहीं होता, क्योंकि उसमें आयु-बन्ध का सर्वथा अभाव नहीं होता।

शुक्लपाक्षिक और सम्यग्दृष्टि में चार भंग होते हैं, क्योंकि उसने पहले आयु बांधा था, बन्धकाल में बांधता है और अबन्धकाल के बाद फिर बांधेगा। इस अपेक्षा से पहला भंग होता है। चरमशरीरी की अपेक्षा दूसरा, उपशम अवस्था की अपेक्षा तीसरा और क्षपक अवस्था की अपेक्षा चौथा भंग होता है। मिथ्यादृष्टि में चार भंग होते हैं। अभव्य की अपेक्षा पहला भंग, चरमशरीर की प्राप्ति होने पर नहीं बांधेगा, अतः दूसरा भंग, अबन्ध-काल की अपेक्षा तीसरा भंग है और चौथा भंग चरमशरीरी की अपेक्षा है। सम्यग्मिथ्या-दृष्टि (मिश्रदृष्टि) जीव सम्यग्मिथ्यादृष्टि अवस्था में आयु नहीं बांधता और कोई जीव चरमशरीरी हो जाने पर बांधेगा भी नहीं, इसलिए इसमें तीसरा और चौथा भंग पाया जाता है।

ज्ञानी जीवों में चार भंग होते हैं, जिनकी घटना पूर्ववत् समझना चाहिये। मनःपर्यव-ज्ञानी में दूसरे भंग के अतिरिक्त तीन भंग पाये जाते हैं। उसने पहले आयु बांधा था, वर्त-मान में देवायु बांधता है और आगे मनुष्यायु बांधेगा, इस अपेक्षा से प्रथम भंग होता है। दूसरा भंग सम्भवित नहीं है, क्योंकि देव-भव में अवश्य मनुष्य आयु बांधेगा, उपशम अवस्था की अपेक्षा तीसरा और क्षपक अवस्था की अपेक्षा चौथा भंग है। केवलज्ञानी न तो आयु बांधते हैं और न बांधेंगे। इसलिये एक चौथा भंग ही पाया जाता है।

नोसंज्ञोपयुक्त जीव में भी मनःपर्यवज्ञानी के समान तीन भंग घटित करने चाहिये। अवेदक और अकषायी जीव में उपशम और क्षपक अवस्था की अपेक्षा तीसरा और चौथा भंग पाया जाता है।

अज्ञान---मतिअज्ञानादि तीन, संज्ञोपयुक्त--आहारादि चार संज्ञोपयुक्त, सवेदक--स्त्रीवेद आदि तीन वेद, सकषाय---क्रोधादि चार कषाय, सयोगी---मनोयोगी आदि तथा साकारोपयुक्त और अनाकारोपयुक्त इन सभी में चार-चार भंग पाये जाते हैं।

नैरयिक जीवों में चार भंग कहे हैं, क्योंकि नैरयिक जीव ने आयु बांधा था, बंध काल में अब बांधता है और भवान्तर में बांधेगा, इस प्रकार पहला भंग होता है। जो मोक्ष

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

को प्राप्त होने वाला है, उसकी अपेक्षा से दूसरा भंग है। बन्धकाल के अभाव और भावी-बन्ध काल की अपेक्षा तीसरा भंग है। जिसने परभव का आयु बांध लिया और जिसका आयु बांधा है, वही उसका चरमभव है, उसकी अपेक्षा से चौथा भंग है। इस प्रकार सर्वत्र घटित करना चाहिये। कृष्णलेशी नैरयिक में प्रथम और तृतीय भंग पाया जाता है। प्रथम भंग तो प्रतीत ही है। दूसरा भंग उसमें नहीं होता, क्योंकि कृष्णलेशी नैरयिक तिर्यंच में अथवा अचरमशरीरी मनुष्य में उत्पन्न होता है। कृष्णलेश्या पाँचवीं नरक पृथ्वी आदि में होती है। वहाँ से निकला हुआ केवली नहीं होता। इसलिये वहाँ से निकला हुआ नैरयिक अचरमशरीरी होने से फिर आयु बांधेगा। कृष्णलेशी नैरयिक अबन्धकाल में आयु नहीं बांधता, किन्तु बन्धकाल में बांधेगा। इस प्रकार तृतीय भंग घटित होता है। वह आयु का अबन्धक नहीं होता, इसलिये उसमें चौथा भंग नहीं पाया जाता। इसी प्रकार कृष्णपाक्षिक में भी पहले और तीसरे भंग की घटना करनी चाहिये।

सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव, आयु नहीं बांधता। इसलिये उसमें तीसरा और चौथा भंग होता है। कृष्णलेशी असुरकुमार में चारों भंग होते हैं, क्योंकि वह वहाँ से निकल कर मनुष्य गति में आ कर सिद्ध हो सकता है। इस अपेक्षा से दूसरा और चौथा भंग घटित होता है। पृथ्वीकायिक जीवों में सभी स्थानों में चार भंग होते हैं, किन्तु कृष्णपाक्षिक में प्रथम और तृतीय भंग ही होता है। तेजोलेशी पृथ्वीकायिक में एक तीसरा भंग होता है, क्योंकि कोई तेजोलेशी देव, पृथ्वीकायिक जीवों में उत्पन्न हुआ, वह अपर्याप्त अवस्था में तेजोलेशी होता है और तेजोलेश्या का समय बीत जाने पर आयु बांधता है। इसलिये तेजोलेशी पृथ्वीकायिक ने पूर्वभव में आयु बांधा था, परन्तु तेजोलेश्या के समय नहीं बांधता और तेजोलेश्या का समय बीत जाने पर फिर बांधेगा। इस प्रकार तीसरा भंग घटित होता है। इसी प्रकार कृष्णपाक्षिक, अप्कायिक और वनस्पतिकायिक जीवों में प्रथम और तृतीय भंग होता है और उनमें तेजोलेश्या में तीसरा भंग होता है। दूसरे स्थानों में चार भंग होते हैं।

तेउकायिक और वायुकायिक जीवों में सर्वत्र प्रथम और तृतीय भंग ही होता है, क्योंकि वहाँ से निकल कर उनकी उत्पत्ति मनुष्य में नहीं होने से सिद्धि-गमन का अभाव है, अतः द्वितीय और चतुर्थ भंग नहीं होता।

विकलेन्द्रिय जीवों में सर्वत्र प्रथम और तृतीय भंग ही होता है, क्योंकि वहाँ से निकले हुए मनुष्य तो हो सकते हैं, किन्तु मुक्ति नहीं पा सकते। इसलिये वे अवश्य आयु का बन्ध करेंगे। अतः दूसरा और चौथा भंग घटित नहीं होता। विकलेन्द्रियों में इतने स्थानों में

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विशेषता है। यथा—सम्यक्त्व, ज्ञान, आभिनिबोधिकज्ञान और श्रुतज्ञान, इनमें केवल तीसरा भंग ही पाया जाता है, क्योंकि उनमें सम्यक्त्व आदि सास्वादन भाव से अपर्याप्त अवस्था में ही होते हैं। इनके चले जाने पर आयु का बंध होता है। इसलिये उन्होंने पूर्व भव में आयु बांधा था, सम्यक्त्व आदि अवस्था में नहीं बांधते और उसके बाद बांधेंगे। इस प्रकार एक तृतीय भंग ही घटित होता है।

पंचेन्द्रिय तिर्यंच में कृष्णपाक्षिक पद में प्रथम और तृतीय भंग ही पाया जाता है, क्योंकि कृष्णपाक्षिक आयु बांध कर या नहीं बांध कर उसका अबन्धक अनन्तर ही होता है और वह मोक्ष जाने के अयोग्य है। सम्यग्मिथ्यादृष्टि तिर्यंच-पंचेन्द्रिय में आयु-बन्ध का अभाव होने से तीसरा और चौथा भंग ही होता है। पंचेन्द्रिय तिर्यंच में सम्यक्त्व, ज्ञान, आभिनिबोधिकज्ञान, श्रुतज्ञान और अवधिज्ञान—इन पांच में द्वितीय भंग को छोड़ कर शेष तीन भंग पाये जाते हैं। क्योंकि सम्यग्दृष्टि आदि युक्त पंचेन्द्रिय तिर्यंच देवों में ही उत्पन्न होता है। वहाँ वह आयु बांधेगा, इसलिये दूसरा भंग घटित नहीं होता। प्रथम और तृतीय भंग की घटना पहले बता दी गई है। चौथा भंग इस प्रकार घटित होता है कि किसी पंचेन्द्रिय तिर्यंच ने मनुष्य आयु बांध ली, इसके बाद उसको सम्यक्त्व आदि की प्राप्ति हुई। इसके पश्चात् प्राप्त हुए मनुष्य भव में ही वह मोक्ष चला जाय, तो वह आयु नहीं बांधेगा। इस प्रकार चतुर्थ भंग घटित होता है। मनुष्य के लिये भी इन सम्यक्त्व आदि पाँच पदों में भी इन तीनों भंगों की घटना इसी प्रकार करनी चाहिये।

## ॥ छब्बीसवें शतक का प्रथम उद्देशक सम्पूर्ण ॥

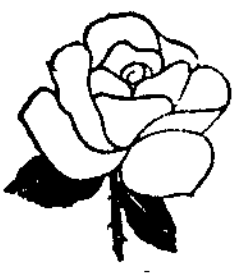

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# शतक २६ उद्देशक २

## अनन्तरोपपन्नक के बन्ध

१ प्रश्न–अणंतरोववण्णए णं भंते ! णेरइए पावं कम्मं किं बंधी–पुच्छा तहेव ।

१ उत्तर–गोयमा ! अत्थेगइए बन्धी पढम-बिइया भंगा ।

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! अनन्तरोपपन्नक नैरयिक ने पाप-कर्म बांधा था० ?

१ उत्तर–हे गौतम ! किसी ने बांधा था इत्यादि पहला और दूसरा भंग होता है ।

२ प्रश्न–सलेस्से णं भंते ! अणंतरोववण्णए णेरइए पावं कम्मं किं बन्धी–पुच्छा ।

२ उत्तर–गोयमा ! पढम-बिइया भंगा, एवं खलु सव्वत्थ पढम-बिइया भंगा, णवरं सम्मामिच्छत्तं मणजोगो वइजोगो य ण पुच्छिज्जइ । एवं जाव थणियकुमाराणं । बेइंदिय-तेइंदिए-चउरिंदियाणं वयजोगोण भण्णइ । पंचिंदिय-तिरिक्ख-जोणियाणं पि सम्मामिच्छत्तं, ओहिणाणं, विभंगणाणं, मणजोगो, वयजोगो–एयाणि पंच पयाणि ण भण्णंति । मणुस्साणं अलेस्स-सम्मामिच्छत्त-मणपज्जवणाण-केवलणाण-विभंग-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णाण-णोसण्णोवउत्त-अवेयग-अकसायी - मणजोग-वयजोग - अजोगी-एयाणि एक्कारस पयाणि ण भण्णंति । वाणमंतर-जोइसिय-वेमाणियाणं जहा णेरइयाणं तहेव ते तिण्णि ण भण्णंति । सव्वेसिं जाणि सेसाणि ठाणाणि सव्वत्थ पढम-बिइया भंगा । एगिंदियाणं सव्वत्थ पढम-बिइया भंगा । जहा पावे एवं णाणावरणिज्जेण वि दंडओ, एवं आउयवज्जेसु जाव अंतराइए दंडओ ।

भावार्थ–२ प्रश्न–हे भगवन् ! सलेशी अनन्तरोपपन्नक नैरयिक ने पाप-कर्म बांधा था० ?

२ उत्तर–हे गौतम ! यहां पहला और दूसरा भंग कहना चाहिये । इस प्रकार लेश्यादि सभी पदों में पहला और दूसरा भंग कहना, किन्तु सम्यग्-मिथ्यात्व, मनोयोग और वचनयोग का प्रश्न नहीं करना चाहिये । इसी प्रकार स्तनितकुमार पर्यन्त । बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय और चौरिन्द्रिय में वचनयोग नहीं कहना । पञ्चेन्द्रिय तिर्यंच-योनिक में सम्यग्मिथ्यात्व, अवधिज्ञान, विभंगज्ञान, मनोयोग और वचनयोग, ये पांच पद नहीं कहने चाहिये । मनुष्य में, अलेशीपन, सम्यग्मिथ्यात्व, मनःपर्यवज्ञान, केवलज्ञान, विभंगज्ञान, नोसंज्ञोपयुक्त, अवेदक, अकषायी, मनोयोग, वचनयोग और अयोगीपन, ये ग्यारह पद नहीं कहने चाहिये । वाणव्यन्तर, ज्योतिषी और वैमानिक, इनका कथन नैरयिक के समान है, किन्तु पूर्वोक्त (सम्यग्मिथ्यात्व, मनोयोग और वचनयोग) ये तीन पद नहीं कहने चाहिये । शेष स्थानों में पहला और दूसरा भंग । एकेन्द्रिय में सभी स्थानों में पहला और दूसरा भंग । जिस प्रकार पाप-कर्म के विषय में कहा, उसी प्रकार ज्ञानावरणीय कर्म के विषय में भी दण्डक कहना चाहिये । इसी प्रकार आयु-कर्म छोड़ कर यावत् अन्तराय कर्म तक दण्डक कहना चाहिये ।

विवेचन–जिसकी उत्पत्ति का प्रथम समय ही है, उसे 'अनन्तरोपपन्नक' कहते हैं ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इस दूसरे उद्देशक में अनन्तरोपपन्नक नैरयिक आदि चौबीस ही दण्डकों में उपर्युक्त ग्यारह द्वारों से पाप-कर्म आदि की बन्ध वक्तव्यता कही जाती है। पहले उद्देशक में जीव नारकादि पच्चीस दण्डक कहे हैं, किन्तु इस उद्देशक में नैरयिकादि चौबीस दण्डक ही कहने चाहिये, क्योंकि औधिक के साथ अनन्तरोपपन्नक आदि विशेषण नहीं लगाये जा सकते। अनन्तरोपपन्नक नैरयिक में पहले के दो भंग पाये जाते है। क्योंकि उसमें मोह रूप पाप-कर्म के अबन्धकपन का अभाव है। अबन्धकपन सूक्ष्म-संपरायादि गुणस्थानों में होता है और वे गुणस्थान नैरयिक के नहीं होते। लेश्यादि पद सामान्यतः नैरयिकादि में होते हैं। जो पद अनन्तरोपपन्नक नैरयिक आदि में अपर्याप्त होने के कारण नहीं होते, उनके विषय में प्रश्न नहीं करना चाहिये। वे ये हैं–मिश्रदृष्टि, मनोयोग और वचनयोग। इसी प्रकार आगे भी समझना चाहिये। पर्याप्तक होने के बाद तो ये होते हैं।

३ प्रश्न–अणंतरोववण्णए णं भंते ! णेरइए आउयं कम्मं किं बन्धी–पुच्छा।

३ उत्तर–गोयमा ! बन्धी ण बन्धइ बंधिस्सइ।

भावार्थ–३ प्रश्न–हे भगवन् ! अनन्तरोपपन्नक नैरयिक ने आयु-कर्म बांधा था० ?

३ उत्तर–हे गौतम ! पहले बांधा था, वर्तमान में नहीं बांधता और भविष्य में बांधेगा। यह एक तीसरा भंग ही पाया जाता है।

४ प्रश्न–सलेस्से णं भंते ! अणंतरोववण्णए णेरइए आउयं कम्मं किं बन्धी० ?

४ उत्तर–एवं चेव तइओ भंगो, एवं जाव अणागारोवउत्ते। सव्वत्थ वि तइओ भंगो। एवं मणुस्सवज्जं जाव वेमाणियाणं। मणुस्साणं सव्वत्थ तइय-चउत्था भंगा, णवरं कण्हपक्खिएसु तइओ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भंगो, सव्वेसिं णाणत्ताइं ताइं चेव ।

❀ 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति ❀

॥ छवीसइमे बंधिसए बीओ उद्देसो समत्तो ॥

**भावार्थ**–४ प्रश्न–हे भगवन् ! सलेशी अनन्तरोपपन्नक नैरयिक ने आयु-कर्म बांधा था० ?

४ उत्तर–हे गौतम ! पूर्ववत् तीसरा भंग होता है। इसी प्रकार यावत् अनाकारोपयुक्त तक सर्वत्र तीसरा भंग। इसी प्रकार मनुष्य के अतिरिक्त यावत् वैमानिक तक। मनुष्य में सभी स्थानों में तीसरा और चौथा भंग कहना चाहिये, किन्तु कृष्णपाक्षिक में तीसरा भंग ही है। सभी स्थानों में नानात्व (भिन्नता) पूर्ववत् है।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है। हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'–कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं।

**विवेचन**–आयु-कर्म के विषय में मनुष्य में सभी स्थानों में तीसरा और चौथा भंग पाया जाता है, क्योंकि अनन्तरोपपन्नक मनुष्य आयु नहीं बांधता, वह बाद में बांधेगा। इस अपेक्षा तीसरा भंग होता है। यदि वह चरमशरीरी हो, तो आयु-कर्म नहीं बांधता और नहीं बांधेगा। इस प्रकार चौथा भंग घटित होता है। कृष्णपाक्षिक में केवल तीसरा भंग ही होता है। सभी नैरयिक आदि जीवों में पाप-कर्म दण्डक में जो भिन्नता कही, वह सभी आयु-दण्डक में कहनी चाहिये। मनुष्य के अतिरिक्त सभी दण्डकों में आयु की अपेक्षा एक तीसरा भंग ही पाया जाता है।

आयु-कर्म की पृच्छा में तेईस दण्डक में एक तीसरा भंग ही बताया है। मनुष्य में कृष्णपाक्षिक को छोड़ कर अनन्तरोपपन्नक मनुष्य में पाये जाने वाले पैंतीस बोलों में तीसरा और चौथा भंग बताया है। "बंधी, न बंधइ, न बंधिस्सइ"–यह चौथा भंग है। अर्थात् भूतकाल में आयु बांधा था, वर्तमान काल में नहीं बांधता और भविष्यत्काल में भी नहीं बांधेगा"–यह चौथा भंग चरमशरीरी जीव में ही घटित हो सकता है। समुच्चय मनुष्य में

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

४७ बोल पाये जाते हैं। अनन्तरोपपन्नक मनुष्य में ग्यारह बोल तो वर्जित किये हैं, किन्तु नपुंसक का बोल वर्जित नहीं किया। अनन्तरोपपन्नक-नपुंसक, जन्म-नपुंसक ही होता है, कृत्रिम नहीं।

शंका–कोई जन्म-नपुंसक मोक्ष गया हो–ऐसा कोई उदाहरण शास्त्रों में मिलता है ?

समाधान–यद्यपि ऐसा उदाहरण शास्त्रों में देखने में नहीं आया, तथापि उपर्युक्त सूत्रपाठ से यह स्पष्ट सिद्ध होता है कि जन्म-नपुंसक उसी भव में मोक्ष जा सकता है।

शंका–वृहत्कल्प सूत्र के चौथे उद्देशक में नपुंसक को दीक्षा के अयोग्य बताया है, फिर वह उसी भव में मोक्ष कैसे जा सकता है ?

समाधान–वृहत्कल्प सूत्र में जो नपुंसक को दीक्षा के अयोग्य बताया है, वह श्रुत-व्यवहारी के लिये है, अर्थात् श्रुतव्यवहारी नपुंसक को दीक्षा नहीं दे सकता, किन्तु आगम-व्यवहारी दीक्षा दे सकते हैं। वृहत्कल्प स्वयं श्रुतव्यवहार है, आगमव्यवहार नहीं। यदि यहाँ के निषेध से सम्पूर्णतया नपुंसक की दीक्षा का निषेध समझा जाय, तब तो जन्म-नपुंसक और कृत्रिम-नपुंसक सभी का निषेध हो जायगा। किन्तु शास्त्रकार को यह इष्ट नहीं है, क्योंकि 'नपुंसक-लिंग सिद्ध' बताया है। आगम-व्यवहारी को विशिष्ट ज्ञान होने से वे जन्म-नपुंसक और कृत्रिम-नपुंसक दोनों को दीक्षा दे सकते हैं और वे दोनों उसी भव में मोक्ष भी जा सकते हैं।

## ॥ छब्बीसवें शतक का दूसरा उद्देशक सम्पूर्ण ॥

# शतक २६ उद्देशक ३

## परम्परोपपन्नक के बन्ध

**१ प्रश्न–परंपरोववण्णए णं भंते ! णेरइए पावं कम्मं किं बंधी–पुच्छा।**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१ उत्तर—गोयमा ! अत्थेगइए पढम-बिइया । एवं जहेव पढमो उद्देसओ तहेव परंपरोववण्णएहि वि उद्देसओ भाणियव्वो णेरइयाइओ तहेव णवदंडगसहिओ । अट्ठण्ह वि कम्मप्पगडीणं जा जस्स कम्मस्स वत्तव्वया सा तस्स अहीणमइरित्ता णेयव्वा जाव वेमाणिया अणागारोवउत्ता ।

❀ 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति ❀

॥ छवीसइमे बंधिसए तइओ उद्देसो समत्तो ॥

कठिन शब्दार्थ—अहीणमइरित्ता—न कम, न अधिक, बराबर ।

भावार्थ—१ प्रश्न—हे भगवन् ! परम्परोपपन्नक नैरयिक जीव ने पाप-कर्म बांधा था० ?

१ उत्तर—हे गौतम ! किसी ने बांधा था इत्यादि पहला और दूसरा भंग कहना चाहिए। जिस प्रकार प्रथम उद्देशक कहा, उसी प्रकार परम्परोपपन्नक नैरयिक आदि के विषय में पापकर्मादि नौ दण्डक सहित यह तीसरा उद्देशक जानना चाहिए । आठ कर्म-प्रकृतियों में से जिसके लिए जिस कर्म की वक्तव्यता कही है, उसके लिए उस कर्म की वक्तव्यता बराबर कहनी चाहिये । इस प्रकार यावत् अनाकारोपयुक्त वैमानिकों तक ।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'—कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

विवेचन—जिस प्रकार पहले उद्देशक में जीव नारकादि के विषय में कथन किया है, उसी प्रकार यह तीसरा उद्देशक भी कहना चाहिये । विशेषता यह है कि पहले उद्देशक में जीव नारकादि पच्चीस दण्डक कहे हैं, किन्तु इस उद्देशक में नैरयिकादि चौबीस दण्डक ही कहने चाहिये, क्योंकि औधिक जीव के साथ अनन्तरोपपन्नक और परम्परोपपन्नक इत्यादि विशेषण नहीं लग सकते ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पाप-कर्म का यह पहला सामान्य दण्डक और आठ कर्मों के आठ दण्डक, ये नौ दण्डक पहले उद्देशक में कहे हैं, वे ही नौ दण्डक इस उद्देशक में भी कहने चाहिये।

॥ छब्बीसवें शतक का तीसरा उद्देशक सम्पूर्ण ॥

# शतक २६ उद्देशक ४

## अनन्तरावगाढ़ बन्धक

१ प्रश्न-अणंतरोगाढए णं भंते ! णेरइए पावं कम्मं किं बंधी-पुच्छा।

१ उत्तर-गोयमा ! अत्थेगइए एवं जहेव अणंतरोववण्णएहिं णवदंडगसंगहिओ उद्देसो भणिओ तहेव अणंतरोगाढएहि वि अहीण-मइरित्तो भाणियव्वो णेरइयाईए जाव वेमाणिए।

❀ 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति ❀

॥ छवीसइमे बंधिसए चउत्थो उद्देसो समत्तो ॥

भावार्थ-१ प्रश्न-हे भगवन् ! अनन्तरावगाढ़ नैरयिक ने पाप-कर्म बांधा था०?

१ उत्तर-हे गौतम ! जिस प्रकार अनन्तरोपपन्नक के नौ दण्डक सहित

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उद्देशक कहा है, उसी प्रकार अनन्तरावगाढ़ नैरयिक आदि के भी वैमानिक पर्यन्त उद्देशक कहना ।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'—कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

**विवेचन**—जो जीव एक भी समय के अन्तर बिना उत्पत्ति स्थान को अवलम्बन कर के रहता है, वह 'अनन्तरावगाढ़' कहलाता है । परन्तु ऐसा अर्थ करने से अनन्तरोपपन्नक और अनन्तरावगाढ़ के अर्थ में भिन्नता नहीं रहती । इसलिये ऐसा अर्थ करना चाहिये कि उत्पत्ति के एक समय बाद फिर एक भी समय के अन्तर बिना उत्पत्ति स्थान की अपेक्षा कर के जो रहता है, वह अनन्तरावगाढ़ कहलाता है और फिर एकादि समय का अन्तर हो, वह 'परम्परावगाढ़' कहलाता है । अर्थात् उत्पत्ति के द्वितीय समयवर्ती अनन्तरावगाढ़ कहलाता है और उत्पत्ति के तृतीयादि समयवर्ती परम्परावगाढ़ कहलाता है ।

## ॥ छब्बीसवें शतक का चौथा उद्देशक सम्पूर्ण ॥

# शतक २६ उद्देशक ५

## परम्परावगाढ़ बंधक

१ प्रश्न—परंपरोगाढए णं भंते ! णेरइए पावं कम्मं किं बंधी० ?

१ उत्तर—जहेव परंपरोववण्णएहिं उद्देसो सो चेव णिरवसेसो

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भाणियव्वो ।

'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति

॥ छवीसइमे बंधिसए पंचमो उद्देसो समत्तो ॥

भावार्थ-१ प्रश्न-हे भगवन् ! परम्परावगाढ़ नैरयिक ने पाप-कर्म बांधा था० ?

१ उत्तर-हे गौतम ! जिस प्रकार परम्परोपपन्नक के विषय में उद्देशक कहा, उसी प्रकार परम्परावगाढ़ के विषय में सम्पूर्ण उद्देशक कहना चाहिये ।

॥ छब्बीसवें शतक का पाँचवाँ उद्देशक सम्पूर्ण ॥

# शतक २६ उद्देशक ६

## अनन्तराहारक बंधक

१ प्रश्न-अणंतराहारए णं भंते ! णेरइए पावं कम्मं किं बंधी-पुच्छा ।

१ उत्तर-एवं जहेव अणंतरोववण्णएहिं उद्देसो तहेव णिरवसेसं ।

'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति

॥ छवीसइमे सए छट्ठओ उद्देसो समत्तो ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१ प्रश्न–हे भगवन् ! अनन्तराहारक नैरयिक ने पाप-कर्म बांधा था० ?

१ उत्तर–हे गौतम ! अनन्तरोपपन्नक उद्देशक के समान अनन्तराहारक उद्देशक भी कहना चाहिये ।

**विवेचन**–आहारकत्व के प्रथम समयवर्ती को 'अनन्तराहारक' कहते हैं ।

॥ छब्बीसवें शतक का छठा उद्देशक सम्पूर्ण ॥

# शतक २६ उद्देशक ७

## परम्पराहारक बंधक

१ प्रश्न–परंपराहारए णं भंते ! णेरइए पावं कम्मं किं बंधी–पुच्छा ।

१ उत्तर–गोयमा ! एवं जहेव परंपरोववण्णएहिं उद्देसो तहेव णिरवसेसो भाणियव्वो ।

'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति

॥ छवीसइमे सए सत्तमो उद्देसो समत्तो ॥

**भावार्थ**–१ प्रश्न–हे भगवन् ! परम्पराहारक नैरयिक ने पाप-कर्म बांधा था० ?

१ उत्तर–हे गौतम ! परम्परोपपन्नक उद्देशक के समान परम्पराहारक

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उद्देशक भी कहना चाहिये ।

विवेचन-आहारकाल के द्वितीयादि समयवर्ती को 'परम्पराहारक' कहते हैं ।

॥ छब्बीसवें शतक का सातवाँ उद्देशक सम्पूर्ण ॥

# शतक २६ उद्देशक ८

## अनन्तर पर्याप्तक बन्धक

१ प्रश्न-अणंतरपज्जत्तए णं भंते ! णेरइए पावं कम्मं किं बंधी-पुच्छा ।

१ उत्तर-गोयमा ! जहेव अणंतरोववण्णएहिं उद्देसो तहेव णिरवसेसं ।

'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति

॥ छब्बीसइमे सए अट्ठम उद्देसो समत्तो ॥

भावार्थ-१ प्रश्न-हे भगवन् ! अनन्तर पर्याप्तक नैरयिक ने पाप-कर्म बांधा था० ?

१ उत्तर-हे गौतम ! अनन्तरोपपन्नक उद्देशक के समान सम्पूर्ण उद्देशक कहना चाहिये ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

**विवेचन**-पर्याप्तकत्व के प्रथम समयवर्ती को अनन्तर पर्याप्तक कहते हैं।

॥ छब्बीसवें शतक का आठवाँ उद्देशक सम्पूर्ण ॥

# शतक २६ उद्देशक ९

## परम्पर पर्याप्तक बंधक

१ प्रश्न परंपरपज्जत्तए णं भंते ! णेरइए पावं कम्मं किं बंधी-पुच्छा।

१ उत्तर-गोयमा ! एवं जहेव परंपरोववण्णएहिं उद्देसो तहेव णिरवसेसो भाणियव्वो।

'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति जाव विहरइ

॥ छवीसइमे बंधिसए णवमो उद्देसो समत्तो ॥

भावार्थ-१ प्रश्न-हे भगवन् ! परम्पर पर्याप्तक नैरयिक ने पाप-कर्म बांधा था० ?

१ उत्तर-हे गौतम ! परम्परोपपन्नक के समान परम्पर पर्याप्तक उद्देशक भी कहना चाहिये।

॥ छब्बीसवें शतक का नोवाँ उद्देशक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# शतक २६ उद्देशक १०

## चरम बन्धक

१ प्रश्न–चरिमे णं भंते ! णेरइए पावं कम्मं किं बंधी–पुच्छा ।

१ उत्तर–गोयमा ! एवं जहेव परंपरोववण्णएहिं उद्देसो तहेव चरिमेहिं णिरवसेसो ।

'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति जाव विहरइ

॥ छवीसइमे बंधिसए दसमो उद्देसो समत्तो ॥

**भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! चरम नैरयिक ने पाप-कर्म बांधा था० ?**

**१ उत्तर–हे गौतम ! परम्परोपपन्नक उद्देशक के समान चरम नैरयिक आदि के विषय में भी सम्पूर्ण उद्देशक जानना चाहिये ।**

**विवेचन**–जिसका नरक-भव 'चरम'–अन्तिम है अर्थात् जो नरक से निकल कर मनुष्यादि गति में जा कर मोक्ष प्राप्त करेगा, किन्तु पुनः लौट कर नरक में नहीं आएगा, वह 'चरम नैरयिक' कहलाता है । यहाँ चरम नैरयिक के लिये परम्परोपपन्नक उद्देशक का अतिदेश किया है और परम्परोद्देशक के लिये प्रथम उद्देशक का अतिदेश किया है । फिर भी मनुष्य पद की अपेक्षा आयु-कर्म के बन्ध के विषय में यह विशेषता है कि प्रथम उद्देशक में आयु-कर्म के सामान्यतः चार भंग कहे हैं, परन्तु चरम मनुष्य के विषय में केवल चौथा भंग ही घटित होता है, क्योंकि जो चरम मनुष्य है, उसने पहले आयु बांधा था, वर्तमान समय में नहीं बांधता है और भविष्यत्काल में भी नहीं बांधेगा । यदि ऐसा न हो, तो उसका चरमपना ही घटित नहीं हो सकता । इस प्रकार टीकाकार ने कहा है, किन्तु वह मनुष्य-भव की अपेक्षा चरम है । इसलिये वह नरक, तिर्यंच और देवगति में तो नहीं जायगा, परन्तु मनुष्य के उत्कृष्ट आठ भव तक करते हुए भी मनुष्य का चरम-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पना कायम रहता है और ऐसा होने पर उसमें आयु की अपेक्षा चारों भंग घटित हो सकते हैं। सम्यग्दृष्टि, सज्ञानी, मतिज्ञानी यावत् मनःपर्यवज्ञानी, नो संज्ञोपयुक्त इन सात बोलों में तीसरा, चौथा ये दो भंग ही घटित होते हैं। और चरम मनुष्य में कृष्णपाक्षिक का बोल घटित नहीं होता है।

॥ छब्बीसवें शतक का दसवाँ उद्देशक सम्पूर्ण ॥

# शतक २६ उद्देशक ११

## अचरम बंधक

१ प्रश्न–अचरिमे णं भंते ! णेरइए पावं कम्मं किं बंधी–पुच्छा।

१ उत्तर–गोयमा ! अत्थेगइए एवं जहेव पढमोद्देसए, पढम-बिइया भंगा भाणियव्वा सव्वत्थ जाव पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं।

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! अचरम नैरयिक ने पाप-कर्म बांधा था०?

१ उत्तर–हे गौतम ! प्रथम उद्देशकानुसार सर्वत्र पहला और दूसरा भंग कहना चाहिये, यावत् पञ्चेन्द्रिय तिर्यंच योनि पर्यन्त।

२ प्रश्न–अचरिमे णं भंते ! मणुस्से पावं कम्मं किं बंधी–पुच्छा।

२ उत्तर–गोयमा ! अत्थेगइए बंधी बंधइ बंधिस्सइ, अत्थेगइए बंधी बंधइ ण बंधिस्सइ, अत्थेगइए बंधी ण बंधइ बंधिस्सइ।

भावार्थ–२ प्रश्न–हे भगवन् ! अचरम मनुष्य ने पाप-कर्म बांधा था०?

२ उत्तर–हे गौतम ! १ किसी ने बांधा था, बांधता है और बांधेगा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२ किसी ने बांधा था, बांधता है और नहीं बांधेगा। ३ किसी ने बांधा था, नहीं बांधता है और बांधेगा।

३ प्रश्न–सलेस्से णं भंते ! अचरिमे मणूसे पावं कम्मं किं बंधी० ?

३ उत्तर–एवं चेव तिण्णि भंगा चरमविहूणा भाणियव्वा एवं जहेव पढमुद्देसे। णवरं जेसु तत्थ वीससु चत्तारि भंगा तेसु इह आदिल्ला तिण्णि भंगा भाणियव्वा चरिमभंगवज्जा। अलेस्से केवलणाणी य अजोगी य एए तिण्णि वि ण पुच्छिज्जंति, सेसं तहेव वाणमंतरजोइसिय-वेमाणिए जहा णेरइए।

भावार्थ–३ प्रश्न–हे भगवन् ! सलेशी अचरम मनुष्य ने पाप-कर्म बांधा था० ?

३ उत्तर–हे गौतम ! पूर्वोक्त कथनानुसार चौथा भंग छोड़ कर शेष तीन भंग कहना चाहिये। शेष प्रथम उद्देशक के समान, किन्तु वहां जिन बीस पदों में चार भंग कहे हैं, उन पदों में यहां अन्तिम भंग के अतिरिक्त प्रथम के तीन भंग कहना चाहिये। यहां अलेशी, केवलज्ञानी और अयोगी मनुष्य के विषय में प्रश्न नहीं करना चाहिये। वाणव्यन्तर, ज्योतिषी और वैमानिक देवों का कथन नैरयिक के समान जानना चाहिये।

४ प्रश्न–अचरिमे णं भंते ! णेरइए णाणावरणिज्जं कम्मं किं बंधी–पुच्छा।

४ उत्तर–गोयमा ! एवं जहेव पावं०। णवरं मणुस्सेसु सकसायीसु लोभकसायीसु य पढम-बिइया भंगा, सेसा अट्ठारस चरमविहूणा, सेसं तहेव जाव वेमाणियाणं। दरिसणावरणिज्जं पि एवं चेव णिरव-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सेसं । वेयणिज्जे सव्वत्थ वि पढम-बिइया भंगा जाव वेमाणियाणं, णवरं मणुस्सेसु अलेस्से, केवली अजोगी य णत्थि ।

भावार्थ-४ प्रश्न-हे भगवन् ! अचरम नैरयिक ने ज्ञानावरणीय-कर्म बांधा था० ?

४ उत्तर-हे गौतम ! पाप-कर्म के समान । परन्तु सकषायी और लोभ-कषायी मनुष्यों में पहला और दूसरा भंग कहना चाहिये तथा शेष अठारह पदों में अन्तिम भंग के अतिरिक्त शेष तीन भंग कहने चाहिये । शेष पूर्ववत् । इसी प्रकार यावत् वैमानिक पर्यन्त । दर्शनावरणीय-कर्म के विषय में भी । इसी प्रकार वेदनीय-कर्म के विषय में सभी स्थानों में पहला और दूसरा भंग यावत् वैमानिक पर्यंत । किंतु यहां अचरम मनुष्य में अलेशी, केवली और अयोगी नहीं होते ।

५ प्रश्न-अचरिमे णं भंते ! णेरइए मोहणिज्जं कम्मं किं बंधी-पुच्छा ।

५ उत्तर-गोयमा ! जहेव पावं तहेव णिरवसेसं जाव वेमाणिए ।

भावार्थ-५ प्रश्न-हे भगवन् ! अचरम नैरयिक ने मोहनीय-कर्म बांधा था० ?

५ उत्तर-हे गौतम ! जिस प्रकार पाप-कर्म के विषय में कहा, उसी प्रकार यावत् वैमानिक पर्यन्त जानना चाहिए ।

६ प्रश्न-अचरिमे णं भंते ! णेरइए आउयं कम्मं किं बंधी-पुच्छा ।

६ उत्तर-गोयमा ! पढम-बिइया भंगा. एवं सव्वपएसु वि । णेरइयाणं पढम-तइया भंगा, णवरं सम्मामिच्छत्ते तइओ भंगो, एवं जाव थणियकुमाराणं । पुढविक्काइय-आउक्काइय-वणस्सइकाइयाणं तेउ-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

लेस्साए तइओ भंगो. सेसेसु पएसु सव्वत्थ पढम-तइया भंगा, तेउकाइय-वाउकाइयाणं सव्वत्थ पढम-तइया भंगा, बेइंदिय-तेइंदिय चउरिंदियाणं एवं चेव णवरं सम्मत्ते ओहिणाणे आभिणिबोहियणाणे सुयणाणे एएसु चउसु वि ठाणेसु तइओ भंगो। पंचिंदियतिरिक्ख-जोणियाणं सम्मामिच्छत्ते तइओ भंगो, सेसेसु पएसु सव्वत्थ पढम-तइया भंगा। मणुस्साणं सम्मामिच्छत्ते-अवेयए अकसाइम्मि य तइओ भंगो, अलेस्स-केवलणाण-अजोगी य ण पुच्छिज्जंति, सेसपएसु सव्वत्थ पढम-तइया भंगा, वाणमंतर-जोइसिय-वेमाणिया जहा णेरइया। णामं गोयं अंतराइयं च जहेव णाणावरणिज्जं तहेव णिरवसेसं।

❀ 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति जाव विहरइ ❀

॥ छव्वीसइमे बंधिसए एक्कारसमो उद्देसो समत्तो ॥

॥ छव्वीसइमं सयं समत्तं ॥

भावार्थ–६ प्रश्न–हे भगवन् ! अचरम नैरयिक ने आयु-कर्म बांधा था०?

६ उत्तर–हे गौतम ! पहला और तीसरा भंग सभी पदों में कहना चाहिये। नैरयिकों (बहुवचन) के सभी पदों में पहला और तीसरा भंग कहना चाहिये। किन्तु सम्यग्मिथ्यात्व में तीसरा भंग ही कहना चाहिये। इस प्रकार यावत् स्तनितकुमार तक। पृथ्वीकायिक, अप्कायिक और वनस्पतिकायिक जीवों के तेजोलेश्या में तीसरा भंग कहना चाहिये। शेष सभी पदों में सर्वत्र पहला और तीसरा भंग कहना चाहिये। तेउकायिक और वायुकायिक के सभी स्थानों में प्रथम और तृतीय भंग कहना चाहिये। बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय और

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चौरिन्द्रिय के लिए भी इसी प्रकार कहना चाहिये। परन्तु विशेष यह है कि सम्यक्त्व, आभिनिबोधिकज्ञान, आभिनिबोधिकज्ञान और श्रुतज्ञान, इन चार स्थानों में तीसरा भंग कहना चाहिये। पञ्चेन्द्रिय तिर्यंच-योनिक में, सम्यग्मिथ्यात्व में तीसरा भंग और शेष सर्वत्र प्रथम और तृतीय भंग कहना चाहिये। मनुष्य के विषय में सम्यग्मिथ्यात्व, अवेदक और अकषायी, इन तीन पदों में तीसरा भंग कहना चाहिये। अलेशी, केवलज्ञान और अयोगी के विषय में प्रश्न नहीं करना चाहिये। शेष सर्वत्र प्रथम और तृतीय भंग कहना चाहिये। वाणव्यन्तर, ज्योतिषी और वैमानिक के विषय में नैरयिक के समान कहना चाहिये। ज्ञानावरणीय के समान नाम-कर्म, गोत्र-कर्म और अन्तराय-कर्म के विषय में भी कहना चाहिये।

'हे भगवन्! यह इसी प्रकार है। हे भगवन्! यह इसी प्रकार है'—कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं।

**विवेचन**—जो जीव, वही भव पुनः प्राप्त करेगा, वह भव की अपेक्षा 'अचरम' कहलाता है। अचरम उद्देशक में, पंचेन्द्रिय-तिर्यंच तक के पदों में पाप-कर्म की अपेक्षा पहला और दूसरा भंग कहा है। मनुष्य में अन्तिम भंग के अतिरिक्त तीन भंग होते हैं। इनमें चौथा भंग नहीं होता। क्योंकि चौथा भंग तो चरमशरीरी मनुष्य में पाया जाता है। जिन बीस पदों में, पहले उद्देशक में चार भंग कहे थे, उनमें यहाँ अन्तिम भंग के अतिरिक्त, पूर्व के तीन भंग कहने चाहिये। वे बीस पद ये हैं, यथा—जीव, सलेशी, शुक्ललेशी, शुक्ल-पाक्षिक, सम्यग्दृष्टि, ज्ञानी, मतिज्ञानादि चार, नोसंज्ञोपयुक्त, अवेद, सकषाय, लोभकषाय, सयोगी, मनोयोगी आदि तीन, साकारोपयुक्त और अनाकारोपयुक्त। इनमें सामान्यतः चार भंग ही होते हैं, किन्तु जब ये बीस पद अचरम मनुष्य के साथ हों, तब इनमें चौथा भंग नहीं होता, क्योंकि चौथा भंग चरम मनुष्य में ही होता है। अलेशी, केवलज्ञानी और अयोगी, ये तीन पद चरम में ही होते हैं। इसलिये अचरम के साथ इनका प्रश्न करने का निषेध किया है।

ज्ञानावरणीय दण्डक भी पाप-कर्म दण्डक से समान है, किन्तु इसमें पाप-कर्म दण्डक में सकषायी और लोभकषायी में प्रथम के तीन भंग कहे हैं। परन्तु यहाँ प्रथम के दो भंग ही कहने चाहिये, क्योंकि ये ज्ञानावरणीय कर्म को बांधे बिना उसके पुनर्बन्धक नहीं होते

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

और सकषायी जीव सदैव ज्ञानावरणीय के बन्धक ही होते हैं। इनमें अचरम होने से चौथा भंग नहीं होता।

वेदनीय-कर्म में सर्वत्र प्रथम और द्वितीय भंग ही होता है। इनमें तीसरा और चौथा भंग नहीं बन सकता, क्योंकि जो एक बार वेदनीय का अबन्धक हो जाता है, वह पुनः वेदनीय कर्म नहीं बांधता। चौथा भंग अयोगी अवस्था में होता है, इसलिए वह अचरम में नहीं बनता।

आयु-कर्म के विषय में नैरयिक में प्रथम और तृतीय भंग पाया जाता है। प्रथम भंग की घटना स्पष्ट है। तीसरा भंग इस प्रकार घटित होता है कि उसने आयु-कर्म बांधा था, वर्तमान में अबन्ध-काल में नहीं बांधता है, परन्तु बन्ध-काल में बांधेगा, क्योंकि यह अचरम है। इसमें दूसरा और चौथा भंग नहीं पाया जाता। दूसरा भंग तो इस प्रकार घटित नहीं होता है कि वह अचरम होने से आयु का बन्ध अवश्य करेगा। अन्यथा उसका अचरमपना ही नहीं हो सकता और इसी युक्ति से चौथा भंग भी घटित नहीं होता। शेष पदों की घटना पूर्ववत् करनी चाहिये।

प्रत्येक उद्देशक में इसे 'बन्धी शतक' कहा है। इसका कारण यह है कि प्रत्येक उद्देशक का प्रारम्भ 'बन्धी' शब्द से हुआ है। 'बन्धी' शब्द से उपलक्षित होने से इसे 'बन्धी शतक' कहा है।

## ॥ छब्बीसवें शतक का ग्यारहवाँ उद्देशक सम्पूर्ण ॥

# ॥ छब्बीसवाँ शतक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# शतक २७

(करिंसु शतक)

## शतक २७ उद्देशक १-११

### जीव पाप-कर्म करता है ?

१ प्रश्न-जीव णं भंते ! पावं कम्मं किं १ करिंसु करेंति करिस्संति २ करिंसु करेंति ण करिस्संति ३ करिंसु ण करेंति करिस्संति ४ करिंसु ण करेंति ण करिस्संति ?

१ उत्तर-गोयमा ! १ अत्थेगइए करिंसु करेंति करिस्संति २ अत्थेगइए करिंसु करेंति ण करिस्संति ३ अत्थेगइए करिंसु ण करेंति करिस्संति ४ अत्थेगइए करिंसु ण करेंति ण करिस्संति ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! (१) जीव ने पाप-कर्म किया था, करता है और करेगा ? (२) किया था, करता है और नहीं करेगा ? (३) किया था, नहीं करता है और करेगा ? (४) किया था, नहीं करता है और नहीं करेगा ?

१ उत्तर–हे गौतम ! (१) किसी जीव ने पाप-कर्म किया था, करता है और करेगा ।

(२) किसी जीव ने किया था, करता है और नहीं करेगा ।

(३) किसी जीव ने किया था, नहीं करता है और करेगा ।

(४) किसी जीव ने किया था, नहीं करता है और नहीं करेगा ।

**२–सलेस्से णं भंते ! जीवे पावं कम्मं एवं एएणं अभिलावेणं जच्चेव बंधिसए वत्तव्वया सच्चेव णिरवसेसा भाणियव्वा, तहेव णव-दंडगसंगहिया एक्कारस उद्देसगा भाणियव्वा ।**

**॥ सत्तवीसइमं करिंसु सयं समत्तं ॥**

भावार्थ–२–सलेशी जीव ने पाप-कर्म किया था ? इत्यादि पूर्वोक्त पाठ द्वारा 'बन्धी शतक' में जो वक्तव्यता कही, वह सभी यहां कहनी चाहिये तथा उसी प्रकार नौ दण्डक सहित ग्यारह उद्देशक भी यहां कहना चाहिये ।

**विवेचन**–जिस प्रकार छब्बीसवें शतक में प्रत्येक प्रश्न के प्रारम्भ में 'बन्धी' शब्द आया हुआ होने से से वह 'बन्धी शतक' कहलाता है, उसी प्रकार इस सत्ताईसवें शतक में प्रत्येक प्रश्न के प्रारम्भ में 'करिसु' पद आया है, इसलिए इसे 'करिसु शतक' कहते हैं ।

शङ्का–छब्बीसवें शतक में 'बन्ध' का कथन किया है और इस सत्ताईसवें शतक में 'करण' का कथन किया जा रहा है, तब प्रश्न होता है कि 'बन्ध' में और 'करण' में क्या अन्तर है ?

समाधान–यद्यपि 'बन्ध' और 'करण' में कोई अन्तर नहीं है, तथापि यहां जो पृथक् कथन किया है, इसका कारण यह बताना है कि जीव की जो 'कर्म-बन्ध क्रिया' है, वह जीवकृत ही है अर्थात् जीव के द्वारा ही की हुई है, 'ईश्वरादिकृत' नहीं है ।

Jain Education International  For Personal & Private Use Only  www.jainelibrary.org

अथवा-'बन्ध' का अर्थ है-सामान्य रूप से कर्म को बांधना और 'करण' का अर्थ है-कर्मों को निधत्तादि रूप से बांधना, जिसमे विपाकादि रूप से उनका फल अवश्य भोगना पड़े, इत्यादि बातो को बताने के लिए 'बन्ध' और 'करण' का पृथक्-पृथक् कथन किया है।

## ॥ सत्ताईसवाँ शतक का १-११ उद्देशक सम्पूर्ण ॥

# ॥ सत्ताईसवाँ शतक सम्पूर्ण ॥

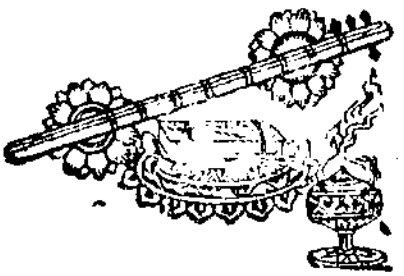

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# शतक २८

(कर्म समर्जक शतक)

## शतक २८ उद्देशक १

### पाप का समर्जन और तिर्यंच-गति

१ प्रश्न—जीवा णं भंते ! पावं कम्मं कहिं समज्जिणिंसु, कहिं समायरिंसु ?

१ उत्तर—गोयमा ! १ सव्वे वि ताव तिरिक्खजोणिएसु होज्जा २ अहवा तिरिक्खजोणिएसु य णेरइएसु य होज्जा ३ अहवा तिरिक्खजोणिएसु य मणुस्सेसु य होज्जा ४ अहवा तिरिक्खजोणिएसु य देवेसु य होज्जा ५ अहवा तिरिक्खजोणिएसु य णेरइएसु य मणुस्सेसु य होज्जा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

६ अहवा तिरिक्खजोणिएसु य णेरइएसु य देवेसु य होज्जा ७ अहवा तिरिक्खजोणिएसु य मणुस्सेसु य देवेसु य होज्जा ८ अहवा तिरिक्खजोणिएसु य णेरइएसु य मणुस्सेसु य देवेसु य होज्जा ।

कठिन शब्दार्थ–कहिं–कहां पर, समज्जिणिंसु–समर्जन किया—ग्रहण किया, समायरिंसु–आचरण किया ।

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! जीव ने किस गति में पाप-कर्मों का समर्जन (ग्रहण) किया था और किस गति में आचरण किया था ?

१ उत्तर–हे गौतम ! (१) सभी जीव तिर्यंच-गति में थे। (२) अथवा सभी जीव तिर्यंच-योनि और नरक-योनि में थे। (३) अथवा सभी जीव तिर्यंच योनि और मनुष्य में थे। (४) अथवा सभी जीव तिर्यंच योनि और देव में थे। (५) अथवा सभी जीव तिर्यंच-योनि, नैरयिक और मनुष्य में थे। (६) अथवा सभी जीव तिर्यंच-योनि, नैरयिक और देव में थे। (७) अथवा सभी जीव तिर्यंच-योनि, मनुष्य और देव में थे। (८) अथवा सभी जीव तिर्यंच-योनि, नैरयिक, मनुष्य और देव में थे। (उस-उस गति में उन्होंने पाप-कर्म का समर्जन और समाचरण किया था) ।

२ प्रश्न–सलेस्सा णं भंते ! जीवा पावं कम्मं कहिं समज्जिणिंसु, कहिं समायरिंसु ?

२ उत्तर–एवं चेव । एवं कण्हलेस्सा जाव अलेस्सा । कण्ह-पक्खिया, सुक्कपक्खिया । एवं जाव अणागारोवउत्ता ।

भावार्थ–२ प्रश्न–हे भगवन् ! सलेशी जीव ने किस गति में पाप-कर्मों का समर्जन और समाचरण किया था ?

२ उत्तर–हे गौतम ! पूर्ववत् । कृष्णलेशी यावत् अलेशी, कृष्णपाक्षिक

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शुक्लपाक्षिक यावत् अनाकारोपयुक्त पर्यन्त ।

३ प्रश्न–णेरइया णं भंते ! पावं कम्मं कहिं समज्जिणिंसु. कहिं समायरिंसु ?

३ उत्तर–गोयमा ! सव्वे वि ताव तिरिक्खजोणिएसु होज्ज त्ति–एवं चेव अट्ठ भंगा भाणियव्वा । एवं सव्वत्थ अट्ठ भंगा, एवं जाव अणागारोवउत्ता वि । एवं जाव वेमाणियाणं । एवं णाणावरणिज्जेण वि दंडओ । एवं जाव अंतराइएणं । एवं एए जीवादीया वेमाणियपज्जवसाणा णव दंडगा भवंति ।

❀ 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति जाव विहरइ ❀

॥ अट्ठवीसइमे सए पढमो उद्देसो समत्तो ॥

भावार्थ–३ प्रश्न–हे भगवन् ! नैरयिक ने किस गति में पाप कर्मों का समर्जन और समाचरण किया था ?

३ उत्तर–हे गौतम ! सभी जीव तिर्यञ्च-योनिक थे इत्यादि पूर्ववत् आठों भंग । इसी प्रकार सर्वत्र यावत् अनाकारोपयुक्त तक आठ-आठ भंग और (दण्डक के क्रम से) वैमानिक तक कहना चाहिये । इस प्रकार ज्ञानावरणीय से ले कर यावत् अन्तराय पर्यन्त । जीव से ले कर वैमानिक तक नौ दण्डक होते हैं ।

विवेचन–यहाँ प्रश्न में समर्जन और समाचरण शब्द दिये हैं । इनका अर्थ इस प्रकार है—पाप-कर्मों का समर्जन अर्थात् उपार्जन और समाचरण अर्थात् पाप-कर्म के हेतुभूत पाप-क्रिया का आचरण । प्रश्न का तात्पर्य यह है कि जीव ने पाप-कर्म के समा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चरण से पाप-कर्म का उपार्जन किस गति में किया था ? अथवा समर्जन और समाचरण शब्द पर्यायवाची हैं। अतः दोनों शब्द एक ही अर्थ के बोधक हैं।

तिर्यंच-योनि अधिक जीवों का आश्रय होने से सभी जीवों की माता रूप है। इसलिये अन्य नारकादि सभी जीव कदाचित् तिर्यंच से आ कर उत्पन्न हुए हों, इसलिये वे 'सभी तिर्यंच-योनि में थे' ऐसा कहा जाता है। इसका अभिप्राय यह है कि किसी विवक्षित समय में जो नैरयिक आदि थे, वे अल्प होने के कारण, मोक्ष चले जाने से तथा तिर्यंच गति में प्रवेश कर जाने से उन विवक्षित नैरयिकों की अपेक्षा नरक गति निर्लेप (खाली) हो गई हो, किंतु तिर्यंच गति, अनन्त होने से निर्लेप नहीं हो सकती, अतः उन तिर्यंच में से निकल कर उन विवक्षित नैरयिकों के स्थान में नैरयिक रूप से उत्पन्न हुए हों, उनकी अपेक्षा यह कहा जा सकता है कि उन सभी ने तिर्यंच-गति में नरक गत्यादि के हेतुभूत पाप-कर्मों का उपार्जन किया था। यह प्रथम भंग है अथवा विवक्षित समय में जो मनुष्य और देव थे, वे निर्लेप रूप से वहाँ से निकल गये और उनके स्थानों में तिर्यंच और नरक गति से आ कर जीव उत्पन्न हो गये। उनकी अपेक्षा दूसरा भंग बनता है कि सभी तिर्यंच-योनिक और नैरयिक में थे। जो जहाँ थे, वहीं पर उन्होंने कर्म उपार्जन किये। अथवा विवक्षित समय में जो नैरयिक और देव थे, वे उसी प्रकार वहाँ से निर्लेप रूप से निकल गये और उनके स्थानों में तिर्यंच और मनुष्य से आ कर उत्पन्न हो गये। उनकी अपेक्षा यह तीसरा भंग बनता है कि सभी तिर्यंच और मनुष्य में थे। जो जहाँ थे, उन्होंने वहीं पर कर्म उपार्जन किये। इस प्रकार आठों ही भंगों के विषय में जानना चाहिये।

इन आठ भंगों में से पहला भंग तिर्यंच गति का ही है। दूसरा, तीसरा और चौथा—तिर्यंच और नैरयिक, तिर्यंच और मनुष्य, तिर्यंच और देव, इस प्रकार द्विक-संयोगी बनते हैं। पांचवां, छठा और सातवाँ, ये तीन भंग—(१) तिर्यंच, नैरयिक और मनुष्य (२) तिर्यंच, नैरयिक और देव तथा (३) तिर्यंच, मनुष्य और देव, इस प्रकार त्रिसंयोगी बनते हैं। आठवाँ भंग—तिर्यंच, नैरयिक, मनुष्य और देव, इस प्रकार चतुःसंयोगी बनता है।

इस प्रकार सलेशी आदि सभी के पाप-कर्म आदि नौ दण्डकों के साथ आठ-आठ भंग कहना चाहिये।

## ॥ अट्ठाईसवें शतक का प्रथम उद्देशक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# शतक २८ उद्देशक २

## अनन्तरोपपन्नक कर्म समर्जन

१ प्रश्न–अणंतरोववण्णगा णं भंते ! णेरइया पावं कम्मं कहिं समज्जिणिंसु, कहिं समायरिंसु ?

१ उत्तर–गोयमा ! सव्वे वि ताव तिरिक्खजोणिएसु होज्जा, एवं एत्थ वि अट्ठ भंगा । एवं अणंतरोववण्णगाणं णेरइयाईणं जस्स जं अत्थि लेसाईयं अणागारोवओगपज्जवसाणं तं सव्वं एयाए भयणाए भाणियव्वं जाव वेमाणियाणं । णवर अणंतरेसु जे परिहरियव्वा ते जहा बंधिसए तहा इहं पि । एवं णाणावरणिज्जेण वि दंडओ, एवं जाव अंतराइएणं णिरवसेसं । एसो वि णवदंडगसंगहिओ उद्देसओ भाणियव्वो ।

'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति

॥ अट्ठावीसइमे सए बीओ उद्देसो समत्तो ॥

कठिन शब्दार्थ–परिहरियव्वा–छोड़ देने योग्य ।

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! अनन्तरोपपन्नक नैरयिक ने किस गति में पापकर्म का समर्जन किया और किस गति में पाप-कर्मों का समाचरण किया था ?

उत्तर–हे गौतम ! वे सभी तिर्यंच-योनिक थे, इत्यादि पूर्वोक्त आठ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भंग यहाँ भी कहना चाहिये। अनन्तरोपपन्नक नैरयिक की अपेक्षा लेश्या यावत् अनाकारोपयोग पर्यन्त बोलों में से जिसमें जो पाये जाते हों, वे सभी विकल्प से यावत् वैमानिक तक कहना चाहिये। परन्तु अनन्तरोपपन्नक जीवों में जो-जो बोल छोड़ देने योग्य हैं (मिश्रदृष्टि, मनोयोग, वचनयोगादि) वे वे बोल बन्धी-शतक के अनुसार छोड़ देने चाहिये। इसी प्रकार ज्ञानावरणीय-कर्म यावत् अन्तराय-कर्म तक नौ दण्डक सहित यह उद्देशक कहना चाहिये।

'हे भगवन्! यह इसी प्रकार है। हे भगवन्! यह इसी प्रकार है'— कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं।

**विवेचन**–अनन्तरोपपन्नक नैरयिक में सम्यग्मिथ्यात्व, मनोयोग, वचनयोग आदि पद संभवित नहीं हैं। इसलिये जिस प्रकार बन्धी शतक में उन विषयों में प्रश्न नहीं किया, उसी प्रकार यहाँ भी नहीं करना चाहिये।

शंका–प्रथम भंग में कहा है कि सभी तिर्यंच-योनिक से आ कर उत्पन्न हुए, सो यह बात कैसे संभव हो सकती है? क्योंकि तिर्यंच आठवें देवलोक तक ही उत्पन्न हो सकते हैं? फिर तिर्यंच से निकले हुए आनत आदि देवों में कैसे उत्पन्न हो सकते हैं? तथा तिर्यंच से निकले हुए तीर्थंकर आदि उत्तम पुरुष भी नहीं होते, इसी प्रकार की शंका द्वितीयादि भंगों में भी होती है?

समाधान–शंका उचित है, किन्तु बहुलता की अपेक्षा ये भंग कहे हैं, ऐसा समझना चाहिये।

## ॥ अट्ठाईसवें शतक का दूसरा उद्देशक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# शतक २८ उद्देशक ३-११

१-एवं एएणं कमेणं जहेव बंधिसए उद्देसगाणं परिवाडी तहेव इहं पि अट्ठसु भंगेसु णेयव्वा। णवरं जाणियव्वं जं जस्स अत्थि तं तस्स भाणियव्वं जाव अचरिमुद्देसो। सव्वे वि एए एक्कारस उद्देसगा।

❀ 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति जाव विहरइ ❀

॥ अट्ठावीसइमे सए ३-११ उद्देसगा समत्ता ॥

॥ अट्ठावीसइमं कम्मसमज्जणसयं समत्तं ॥

भावार्थ-इसी क्रम से, जिस प्रकार बन्धी शतक में उद्देशकों की परिपाटी कही है, उसी प्रकार यहाँ भी आठों ही भंगों में जाननी चाहिये। परन्तु जिसमें जो बोल संभवित हों, वे ही बोल कहना चाहिये, यावत् अचरम उद्देशक पर्यन्त। ये सभी ग्यारह उद्देशक हैं।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है। हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'--कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं।

॥ अट्ठाईसवें शतक का ३-११ उद्देशक सम्पूर्ण ॥

## ॥ अट्ठाईसवां शतक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# शतक २६

(कर्म-प्रस्थापन शतक)

## शतक २६ उद्देशक १

### कर्म-वेदन का प्रारम्भ और समाप्ति

१ प्रश्न—जीवा णं भंते ! पावं कम्मं किं १ समायं पट्ठविंसु समायं णिट्ठविंसु २ समायं पट्ठविंसु विसमायं णिट्ठविंसु ३ विसमायं पट्ठविंसु समायं णिट्ठविंसु ४ विसमायं पट्ठविंसु विसमायं णिट्ठविंसु ?

१ उत्तर—गोयमा ! अत्थेगइया समायं पट्ठविंसु समायं णिट्ठविंसु, जाव अत्थेगइया विसमायं पट्ठविंसु विसमायं णिट्ठविंसु ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कठिन शब्दार्थ––समायं––एक साथ, पट्ठविंसु––प्रारम्भ किया था, णिट्ठविंसु––समाप्त किया था।

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! १ जीव, पाप-कर्म का वेदन एक साथ प्रारम्भ करते हैं और एक साथ ही समाप्त करते हैं ? २ या एक साथ प्रारम्भ करते हैं और भिन्न समय में समाप्त करते हैं ? ३ या भिन्न समय में प्रारम्भ करते हैं और एक साथ समाप्त करते हैं ? ४ या भिन्न समय में प्रारम्भ करते हैं और भिन्न समय में समाप्त करते हैं ?

१ उत्तर–हे गौतम ! कितने ही जीव एक साथ प्रारम्भ करते हैं और एक साथ समाप्त करते हैं यावत् कितने ही जीव भिन्न समय में प्रारम्भ करते हैं और भिन्न समय में समाप्त करते हैं।

२ प्रश्न–से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ–'अत्थेगइया समायं पट्ठविंसु समायं णिट्ठविंसु'–तं चेव ?

२ उत्तर–गोयमा ! जीवा चउव्विहा पण्णत्ता, तं जहा–१ अत्थेगइया समाउया समोववण्णगा २ अत्थेगइया समाउया विसमोववण्णगा ३ अत्थेगइया विसमाउया समोववण्णगा ४ अत्थेगइया विसमाउया विसमोववण्णगा। १ तत्थ णं जे ते समाउया समोववण्णगा ते णं पावं कम्मं समायं पट्ठविंसु समायं णिट्ठविंसु। २ तत्थ णं जे ते समाउया विसमोववण्णगा ते णं पावं कम्मं समायं पट्ठविंसु विसमायं णिट्ठविंसु। ३ तत्थ णं जे ते विसमाउया समोववण्णगा ते णं पावं कम्मं विसमायं पट्ठविंसु समायं णिट्ठविंसु। ४ तत्थ णं जे ते विसमाउया विसमोववण्णगा ते णं पावं कम्मं विसमायं पट्ठविंसु

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विसमायं णिट्ठविंसु । से तेणट्ठेणं गोयमा ! तं चेव ।

भावार्थ–२ प्रश्न–हे भगवन् ! ऐसा क्यों कहा कि कितने ही जीव पाप कर्मों का वेदन एक साथ प्रारंभ करते हैं और एक साथ समाप्त करते हैं० ?

२ उत्तर–हे गौतम ! जीव चार प्रकार के कहे हैं । यथा–१ कई जीव समान आयु (एक साथ इस भव की आयु के उदय) वाले हैं और समान (एक साथ परभव में) उत्पन्न होते हैं २ कई जीव समान आयु वाले हैं, किन्तु विषम (भिन्न-भिन्न समय में) उत्पन्न होते हैं ३ कई जीव विषम आयु वाले हैं और सम (एक साथ) उत्पन्न होते हैं और ४ कितने ही जीव विषम आयु वाले हैं और विषम उत्पन्न होते हैं । १ जो समान आयु वाले और समान उत्पन्न होते हैं, वे पाप-कर्म का भोग एक साथ प्रारंभ करते हैं और एक साथ समाप्त करते हैं । २ जो समान आयु वाले और विषम उत्पन्न होते हैं, वे पाप-कर्म का भोग एक साथ प्रारंभ करते हैं और भिन्न समय में समाप्त करते हैं। ३ जो विषम आयु वाले और समान उत्पन्न होते हैं, वे पाप-कर्म का भोग भिन्न समय में प्रारंभ करते हैं और एक साथ समाप्त करते हैं और ४ जो विषम आयु वाले और विषम उत्पन्न होते हैं, वे पाप-कर्म का भोग भिन्न समय में प्रारंभ करते हैं और भिन्न समय में समाप्त करते हैं। इस कारण हे गौतम ! पूर्वोक्त प्रकार से कहा है।

३ प्रश्न–सलेस्सा णं भंते ! जीवा पावं कम्मं० ?

३ उत्तर–एवं चेव, एवं सव्वट्ठाणेसु वि जाव अणगारोवउत्ता । एए सव्वे वि पया एयाए वत्तव्वयाए भाणियव्वा ।

भावार्थ–३ प्रश्न–हे भगवन् ! सलेशी जीव, पाप-कर्म एक साथ भोगना प्रारंभ करते हैं० ?

३ उत्तर–हे गौतम ! पूर्ववत् । सभी स्थानों में यावत् अनाकारोपयुक्त पर्यन्त । इन सभी पदों में यही वक्तव्यता कहनी चाहिये ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

४ प्रश्न-णेरइया णं भंते ! पावं कम्मं किं समायं पट्ठविंसु समायं णिट्ठविंसु-पुच्छा ।

४ उत्तर-गोयमा ! अत्थेगइया समायं पट्ठविंसु-एवं जहेव जीवाणं तहेव भाणियव्वं जाव अणागारोवउत्ता । एवं जाव वेमाणियाणं जस्स जं अत्थि तं एएणं चेव कमेणं भाणियव्वं । जहा पावेण दंडओ, एएणं कमेणं अट्ठसु वि कम्मप्पगडीसु अट्ठ दंडगा भाणियव्वा जीवाईया वेमाणियपज्जवसाणा । एसो णवदंडगसंगहिओ पढमो उद्देसो भाणियव्वो ।

❀ 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति ❀

॥ एगूणतीसइमे सए पढमो उद्देसो समत्तो ॥

भावार्थ-४ प्रश्न-हे भगवन् ! नैरयिक पाप-कर्म का भोग एक साथ प्रारंभ करते हैं और एक साथ समाप्त करते हैं० ?

४ उत्तर-हे गौतम ! कई नैरयिक एक साथ पाप-कर्म का वेदन प्रारंभ करते हैं और एक साथ समाप्त करते हैं इत्यादि जीवों की वक्तव्यतानुसार यावत् अनाकारोपयुक्त तक । इसी प्रकार यावत वैमानिक तक, जिसमें जो बोल पाये जाते हों, वे इसी क्रम से कहना चाहिये । जिस प्रकार पाप-कर्म का दण्डक कहा, उसी प्रकार उसी क्रम से आठों कर्म-प्रकृतियों के आठ दण्डक, जीवादि से ले कर वैमानिक पर्यन्त कहना चाहिये। यह नौ दण्डक सहित प्रथम उद्देशक कहना चाहिये ।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'--कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

**विवेचन**--पाप-कर्म को भोगने का प्रारंभ और समाप्ति के लिए समकाल और विषमकाल की अपेक्षा चौभंगी कही है। यह चौभंगी सम आयु और विषम आयु तथा सम उत्पत्ति और विषय उत्पत्ति वाले जीवों की अपेक्षा घटित होती है।

**शंका**--यह चौभंगी आयु-कर्म की अपेक्षा तो घटित हो जाती है, किन्तु पाप-कर्म की अपेक्षा कैसे घटित होगी, क्योंकि पाप-कर्म, आयु-कर्म की अपेक्षा न तो प्रारंभ होता है और न समाप्त होता है ?

**समाधान**--यहाँ कर्मों का उदय और क्षय, भव की अपेक्षा से माना है। इसी अपेक्षा को ले कर आयु-कर्म की समानता और विषमता तथा परभव में उत्पत्ति की समानता और विषमता को ले कर पाप-कर्म का प्रारम्भ और समाप्ति का कथन किया है। अतएव पाप-कर्म सम्बन्धी चौभंगी घटित हो जाती है।

## ॥ उनतीसवें शतक का प्रथम उद्देशक सम्पूर्ण ॥

# शतक २९ उद्देशक २

## अनन्तरोपपन्नक कर्म-भोग

**१ प्रश्न**--अणंतरोववण्णगा णं भंते ! णेरइया पावं कम्मं किं समायं पट्ठविंसु समायं णिट्ठविंसु--पुच्छा।

**१ उत्तर**--गोयमा ! अत्थेगइया समायं पट्ठविंसु समायं णिट्ठविंसु, अत्थेगइया समायं पट्ठविंसु विसमायं णिट्ठविंसु।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ-१ प्रश्न-हे भगवन् ! अनन्तरोपपन्नक नैरयिक पाप-कर्म को एक साथ भोगना प्रारंभ करते हैं और एक साथ समाप्त करते हैं०?

१ उत्तर-हे गौतम ! कितने ही नैरयिक एक साथ प्रारंभ करते हैं और एक साथ समाप्त करते हैं, तथा कितने ही नैरयिक एक साथ प्रारंभ करते हैं और भिन्न समय में समाप्त करते हैं।

२ प्रश्न-से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ-'अत्थेगइया समायं पट्ठविंसु-तं चेव' ?

२ उत्तर-गोयमा ! अणंतरोववण्णगा णेरइया दुविहा पण्णत्ता, तं जहा-अत्थेगइया समाउया समोववण्णगा, अत्थेगइया समाउया विसमोववण्णगा। तत्थ णं जे ते समाउया समोववण्णगा ते णं पावं कम्मं समायं पट्ठविंसु समायं णिट्ठविंसु। तत्थ णं जे ते समाउया विसमोववण्णगा ते णं पावं कम्मं समायं पट्ठविंसु विसमायं णिट्ठविंसु। से तेणट्ठेणं-तं चेव।

भावार्थ-२ प्रश्न-हे भगवन् ! ऐसा क्यों कहते हैं० ?

२ उत्तर-हे गौतम ! अनन्तरोपपन्नक नैरयिक दो प्रकार के हैं। यथा-कितने ही नैरयिक समान आयु वाले और समान उत्पत्ति वाले होते हैं, तथा कितने ही समान आयु वाले और विषम उत्पत्ति वाले होते हैं। जो समान आयु वाले और समान उत्पत्ति वाले हैं, वे पाप-कर्म का वेदन एक साथ प्रारंभ करते हैं और एक साथ समाप्त करते हैं। जो समान आयु वाले और विषम उत्पत्ति वाले हैं, वे पाप-कर्म का भोगना एक साथ प्रारंभ करते हैं और भिन्न समय में समाप्त करते हैं। इस कारण हे गौतम ! पूर्वोक्त कथन है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

३ प्रश्न–सलेस्सा णं भंते ! अणंतरोववण्णा णेरइया पावं० ?

३ उत्तर–एवं चेव, एवं जाव अणागारोवउत्ता। एवं असुरकुमाराणं। एवं जाव वेमाणियाणं, णवरं जं जस्स अत्थि तं तस्स भाणियव्वं। एवं णाणावरणिज्जेण वि दंडओ, एवं णिरवसेसं जाव अंतराइएणं।

❀ 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति जाव विहरइ ❀

॥ एगूणतीसइमे सए बीओ उद्देसो समत्तो ॥

**भावार्थ**–३ प्रश्न–हे भगवन् ! सलेशी अनन्तरोपपन्नक नैरयिक एक साथ पाप-कर्म का वेदन प्रारंभ करते हैं और एक साथ समाप्त करते हैं० ?

३ उत्तर–हे गौतम ! पूर्ववत्। इसी प्रकार यावत् अनाकारोपयुक्त तक। असुरकुमार से ले कर यावत् वैमानिक तक भी इसी प्रकार। किन्तु जिसके जो हो, वही कहना चाहिये। इसी प्रकार ज्ञानावरणीय से ले कर यावत् अन्तराय पर्यन्त।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है। हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'–कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं।

**विवेचन**–आयु उदय के प्रथम समयवर्ती जीव, 'अनन्तरोपपन्नक' कहलाते हैं। उनके आयु का उदय समकाल में ही होता है, अन्यथा उनका अनन्तरोपपन्नकपना ही नहीं बन सकता। मरण के पश्चात् परभव की उत्पत्ति की अपेक्षा 'समोपपन्नक' कहलाते हैं, और मरणकाल में भूतपूर्व गति की अपेक्षा वे अनन्तरोपपन्नक कहलाते हैं। इस प्रकार यह प्रथम भंग बनता है। दूसरे भंग में समकाल में आयु का उदय होने से 'समायुष्क' कहलाते हैं और मरण समय की विषमता के कारण 'विषमोपपन्नक' कहलाते हैं, इस प्रकार दूसरा भंग बनता है। ये अनन्तरोपपन्नक हैं, इसलिए इनमें विषमायु सम्बन्धी तीसरा और चौथा भंग नहीं बनता।

॥ उनतीसवें शतक का दूसरा उद्देशक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# शतक २९ उद्देशक ३-११

१-एवं एएणं गमएणं जच्चेव बंधिसए उद्देसगपरिवाडी सच्चेव इह वि भाणियव्वा जाव अचरिमो त्ति । अणंतरउद्देसगाणं चउण्ह वि एक्का वत्तव्वया, सेसाणं सत्तण्हं एक्का ।

॥ एगूणतीसइमे सए ३-११ उद्देसगा समत्ता ॥

॥ एगूणतीसइमं कम्मपट्ठवणसयं समत्तं ॥

कठिन शब्दार्थ--सच्चेव--वही ।

भावार्थ-१-'बन्धी-शतक' में उद्देशक की जो परिपाटी कही है, वह इस पाठ से सम्पूर्ण उद्देशकों की परिपाटी यावत् अचरमोद्देशक पर्यन्त कहना चाहिए । अनन्त सम्बन्धी चार उद्देशकों की एक वक्तव्यता और शेष सात उद्देशकों की एक वक्तव्यता कहनी चाहिये ।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'--कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

**विवेचन**--शेष उद्देशकों की वक्तव्यता पूर्ववत् कहनी चाहिये, किन्तु अनन्तरोपपन्नक, अनन्तरावगाढ़, अनन्तराहारक और अनन्तर पर्याप्तक, इन चार उद्देशकों की एक समान वक्तव्यता है और शेष सात उद्देशकों की एक समान वक्तव्यता है ।

॥ उनतीसवें शतक के ३-११ उद्देशक सम्पूर्ण ॥

## ॥ उनतीसवां शतक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# शतक ३०

## शतक ३० उद्देशक १

### समवसरण

१ प्रश्न–कइ णं भंते ! समोसरणा पण्णत्ता ?

१ उत्तर–गोयमा ! चत्तारि समोसरणा पण्णत्ता, तं जहा–किरियावाई, अकिरियावाई, अण्णाणियवाई, वेणइयवाई ।

कठिन शब्दार्थ––समोसरणा––समवसरण––मत, दर्शन ।

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! समवसरण कितने कहे हैं ?

१ उत्तर–हे गौतम ! समवसरण चार कहे हैं । यथा–१ क्रियावादी २ अक्रियावादी ३ अज्ञानवादी और ४ विनयवादी ।

२ प्रश्न–जीवा णं भंते ! किं किरियावाई, अकिरियावाई, अण्णाणियवाई, वेणइयवाई ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२ उत्तर-गोयमा ! जीवा किरियावाई वि, अकिरियावाई वि, अण्णाणियवाई वि, वेणइयवाई वि ।

भावार्थ-२ प्रश्न-हे भगवन् ! जीव क्रियावादी है, अक्रियावादी है, अज्ञानवादी है या विनयवादी है ?

२ उत्तर-हे गौतम ! जीव क्रियावादी भी है, अक्रियावादी, अज्ञानवादी और विनयवादी भी है ।

३ प्रश्न-सलेस्सा णं भंते ! जीवा किं किरियावाई-पुच्छा ।

३ उत्तर-गोयमा ! किरियावाई वि, अकिरियावाई वि, अण्णाणियवाई वि, वेणइयवाई वि । एवं जाव सुक्कलेस्सा ।

भावार्थ-३ प्रश्न-हे भगवन् ! सलेशी जीव क्रियावादी है० ?

३ उत्तर-हे गौतम ! क्रियावादी भी है, अक्रियावादी, अज्ञानवादी और विनयवादी भी है । इसी प्रकार यावत् शुक्ललेश्या पर्यन्त ।

४ प्रश्न-अलेस्सा णं भंते ! जीवा-पुच्छा ।

४ उत्तर-गोयमा ! किरियावाई, णो अकिरियावाई, णो अण्णाणियवाई, णो वेणइयवाई ।

भावार्थ-४ प्रश्न-हे भगवन् ! अलेशी जीव क्रियावादी है० ?

४ उत्तर-हे गौतम ! अलेशी जीव क्रियावादी है, अक्रियावादी, अज्ञानवादी और विनयवादी नहीं है ।

५ प्रश्न-कण्हपक्खिया णं भंते ! जीवा किं किरियावाई-पुच्छा ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

५ उत्तर-गोयमा ! णो किरियावाई, अकिरियावाई, अण्णाणियवाई वि, वेणइयवाई वि । सुक्कपक्खिया जहा सलेस्सा । सम्मदिट्ठी जहा अलेस्सा । मिच्छादिट्ठी जहा कण्हपक्खिया ।

भावार्थ-५ प्रश्न-हे भगवन् ! कृष्णपाक्षिक जीव क्रियावादी है० ?

५ उत्तर-हे गौतम ! क्रियावादी नहीं, अपितु अक्रियावादी है, अज्ञानवादी और विनयवादी भी है । शुक्लपाक्षिक जीव, सलेशी जीव के समान है । सम्यग्दृष्टि जीव, अलेशी जीव के समान है । मिथ्यादृष्टि जीव, कृष्णपाक्षिक जीव के समान है ।

६ प्रश्न-सम्मामिच्छादिट्ठीणं-पुच्छा ।

६ उत्तर-गोयमा ! णो किरियावाई, णो अकिरियावाई, अण्णाणियवाई वि, वेणइयवाई वि । णाणी जाव केवलणाणी जहा अलेस्से । अण्णाणी जाव विभंगणाणी जहा कण्हपक्खिया । आहारसण्णोवउत्ता जाव परिग्गहसण्णोवउत्ता जहा सलेस्सा । णोसण्णोवउत्ता जहा अलेस्सा । सवेयगा जाव णपुंसगवेयगा जहा सलेस्सा । अवेयगा जहा अलेस्सा । सकसायी जाव लोभकसायी जाव सलेस्सा । अकसायी जहा अलेस्सा । सजोगी जाव कायजोगी जहा सलेस्सा । अजोगी जहा अलेस्सा । सागारोवउत्ता अणागारोवउत्ता जहा सलेस्सा ।

भावार्थ-६ प्रश्न-हे भगवन् ! सम्यग्मिथ्या (मिश्र) दृष्टि जीव क्रियावादी है०?

६ उत्तर-हे गौतम ! क्रियावादी नहीं, अक्रियावादी भी नहीं, किन्तु अज्ञानवादी है और विनयवादी भी है । ज्ञानी यावत् केवलज्ञानी जीव, अलेशी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जीवों के समान हैं। अज्ञानी यावत् विभंगज्ञानी जीव, कृष्णपाक्षिक जीवों के समान है। आहारसंज्ञोपयुक्त यावत् परिग्रहसंज्ञोपयुक्त जीव, सलेशी जीवों के समान है। नोसंज्ञोपयुक्त जीव, अलेशी जीवों के तुल्य है। सवेदक यावत् नपुंसकवेदक जीव, सलेशी जीव सदृश है। अवेदक जीव अलेशी जीवों के अनुरूप है। सकषायी यावत् लोभकषायी जीव, सलेशी जीवों के तुल्य है। अकषायी जीवों का वर्णन अलेशी जीवों के अनुरूप है। सयोगी यावत् काययोगी जीव, सलेशी जीवों के समान हैं। अयोगी जीव, अलेशी जीवों के तुल्य है। साकारोपयुक्त और अनाकारोपयुक्त जीव, सलेशी जीव के सदृश है।

७ प्रश्न–णेरइया णं भंते ! किं किरियावाई–पुच्छा।

७ उत्तर–गोयमा ! किरियावाई वि जाव वेणइयवाई वि।

भावार्थ–७ प्रश्न–हे भगवन् ! नैरयिक क्रियावादी हैं० ?

७ उत्तर–हे गौतम ! क्रियावादी यावत् विनयवादी भी हैं।

८ प्रश्न–सलेस्सा णं भंते ! णेरइया किं किरियावाई–?

८ उत्तर–एवं चेव। एवं जाव काउलेस्सा। कण्हपक्खिया किरियाविवज्जिया। एवं एएणं कमेणं जच्चेव जीवाणं वत्तव्वया सच्चेव णेरइयाणं वत्तव्वया वि जाव अणागारोवउत्ता। णवरं जं अत्थि तं भाणियव्वं, सेसं ण भण्णइ। जहा णेरइया एवं जाव थणियकुमारा।

भावार्थ–८ प्रश्न–हे भगवन् ! सलेशी नैरयिक क्रियावादी हैं० ?

८ उत्तर–हे गौतम ! पूर्ववत् यावत् कापोतलेशी नैरयिक पर्यन्त। कृष्णपाक्षिक नैरयिक क्रियावादी नहीं हैं, इसी प्रकार और इसी क्रम से जीवों की वक्तव्यता नैरयिकों के विषय में यावत् अनाकारोपयुक्त पर्यन्त। किन्तु वही कहना

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चाहिए जिसके जो हो, शेष नहीं कहना चाहिये। नैरयिक के समान असुरकुमार यावत् स्तनितकुमार पर्यन्त भी।

९ प्रश्न-पुढविकाइया णं भंते ! किं किरियावाई-पुच्छा।

९ उत्तर-गोयमा ! णो किरियावाई, अकिरियावाई वि. अण्णाणियवाई वि, णो वेणइयवाई। एवं पुढविकाइयाणं जं अत्थि तत्थ सव्वत्थ वि एयाइं दो मज्झिल्लाइं समोसरणाइं जाव अणागारोवउत्ता वि। एवं जाव चउरिंदियाणं। सव्वठाणेसु एयाइं चेव मज्झिल्लगाइं दो समोसरणाइं। सम्मत्तणाणेहि वि एयाणि चेव मज्झिल्लगाइं दो समोसरणाइं। पंचिंदियतिरिक्खजोणिया जहा जीवा। णवरं जं अत्थि तं भाणियव्वं। मणुस्सा जहा जीवा तहेव णिरवसेसं। वाणमंतर-जोइसिय-वेमाणिया जहा असुरकुमारा।

भावार्थ-९ प्रश्न-हे भगवन् ! पृथ्वीकायिक क्रियावादी हैं०?

९ उत्तर-हे गौतम ! वे क्रियावादी और विनयवादी नहीं, अक्रियावादी और अज्ञानवादी हैं। पृथ्वीकायिक जीवों में जो पद संभवित हों, उन सभी पदों में अक्रियावादी और अज्ञानवादी-ये मध्य के दो समवसरण जानना चाहिये। इस प्रकार यावत् अनाकारोपयुक्त पृथ्वीकायिक पर्यन्त और इसी प्रकार यावत् चौरिन्द्रिय जीवों तक सभी पदों में मध्य के दो समवसरण होते हैं। इनके सम्यक्त्व और ज्ञान में भी मध्य के ये दो ही समवसरण हैं। पञ्चेन्द्रिय तिर्यंच-योनिक का कथन औधिक जीवों के समान है, किन्तु इनमें भी जो बोल हों, वही कहना चाहिये। मनुष्य, औधिक जीवों के समान हैं। वाणव्यन्तर, ज्योतिषी और वैमानिक, असुरकुमार के तुल्य हैं।

**विवेचन**-अनेक प्रकार के परिणाम वाले जीव जिसमें हो, उसे 'समवसरण' कहते हैं, अर्थात् भिन्न-भिन्न मतों एवं दर्शनों को 'समवसरण' कहते हैं। 'समवसरण' के चार भेद

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हैं। यथा—क्रियावादी, अक्रियावादी, अज्ञानवादी और विनयवादी। इनका स्वरूप इस प्रकार है—

१ क्रियावादी—कर्त्ता के बिना क्रिया सम्भव नहीं है इसलिए 'क्रिया का जो कर्त्ता है, वह आत्मा है'-इस प्रकार आत्मा के अस्तित्व को मानने वाले क्रियावादी हैं। अथवा—'क्रिया ही प्रधान है, ज्ञान की कोई आवश्यकता नहीं है'—इस प्रकार क्रिया को प्रधान मानने वाले 'क्रियावादी' कहलाते है। अथवा—एकान्त रूप से जीव-अजीव आदि पदार्थों के अस्तित्व को मानने वाले क्रियावादी कहलाते हैं। इनके १८० भेद हैं। यथा—

जीव, अजीव, आश्रव, बन्ध, पुण्य, पाप, संवर, निर्जरा और मोक्ष, इन नौ पदार्थों के स्व और पर से अठारह भेद होते हैं। इन अठारह के नित्य और अनित्य रूप से ३६ भेद होते हैं। इनमें से प्रत्येक के काल, नियति, स्वभाव, ईश्वर और आत्मा की अपेक्षा पाँच-पाँच भेद करने से १८० भेद होते हैं।

जैसे—जीव स्व स्वरूप से काल की अपेक्षा नित्य है और अनित्य भी है। जीव पर रूप से काल की अपेक्षा नित्य है और अनित्य भी है। इस प्रकार काल की अपेक्षा चार भेद होते हैं। इसी प्रकार नियति, स्वभाव, ईश्वर और आत्मा की अपेक्षा भी जीव के चार-चार भेद हैं। इस प्रकार जीवादि नौ तत्त्वों के प्रत्येक के बीस-बीस भेद होने से कुल १८० भेद होते हैं।

२ अक्रियावादी—अक्रियावादी की भी अनेक व्याख्याएँ हैं। यथा—किसी भी अनवस्थित पदार्थ में क्रिया नहीं होती। यदि पदार्थ में क्रिया होगी, तो वह अनवस्थित नहीं होगी। इस प्रकार पदार्थों को अनवस्थित मान कर उनमें क्रिया का अभाव मानने वाले 'अक्रियावादी' कहलाते हैं। अथवा—क्रिया की आवश्यकता ही क्या है? केवल चित्त की पवित्रता होनी चाहिये। इस प्रकार मात्र ज्ञान से ही मोक्ष की मान्यता वाले 'अक्रियावादी' कहलाते हैं। जीवादि के अस्तित्व को नहीं मानने वाले 'अक्रियावादी' कहलाते हैं। इनके ८४ भेद हैं। यथा—जीव, अजीव, आश्रव, बन्ध, संवर, निर्जरा और मोक्ष, इन सात तत्त्वों के स्व और पर के भेद से चौदह भेद होते हैं। काल, यदृच्छा, नियति, स्वभाव, ईश्वर और आत्मा, इन छह की अपेक्षा चौदह भेदों का वर्णन करने से ८४ भेद होते हैं। जैसे—जीव, स्वतः काल से नहीं है जीव परतः काल से नहीं है। इस प्रकार काल की अपेक्षा जीव के दो भेद हैं। काल के समान यदृच्छा, नियति आदि की अपेक्षा भी जीव के दो-दो भेद हैं। इस प्रकार जीव के बारह भेद हैं। जीव के समान शेष छह तत्त्वों के भी बारह-बारह

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भेद होते हैं। यों कुल ८४ भेद होते हैं।

३ अज्ञानवादी—जीवादि अतीन्द्रिय पदार्थों को जानने वाला कोई नहीं है और न उनके जानने से कुछ प्रयोजन सिद्ध होता है। इसके अतिरिक्त ज्ञानी और अज्ञानी–इन दोनों का समान अपराध होने पर ज्ञानी को अधिक दोष माना है और अज्ञानी को कम। इसलिये अज्ञान ही श्रेष्ठ है। ऐसा मानने वाले 'अज्ञानवादी' कहलाते हैं। इनके ६७ भेद हैं। यथा–जीव, अजीव, आश्रव, बन्ध, पुण्य, पाप, संवर, निर्जरा और मोक्ष, इन नौ तत्त्वों के सत्, असत्, सदसद्, अवक्तव्य, सदवक्तव्य, असदवक्तव्य, सदसदवक्तव्य, इन सात से गुणन करने पर ६३ भेद होते हैं। उत्पत्ति के सद्, असद्, सदसद् और अवक्तव्य की अपेक्षा से चार भेद होते हैं। जैसे कि—जीव सद् है, यह कौन जानता है और इसके जानने से क्या लाभ है इत्यादि।

४ विनयवादी–स्वर्ग, अपवर्ग आदि की प्राप्ति विनय से ही होती है। इसलिये विनय ही श्रेष्ठ है। इस प्रकार विनय को प्रधान रूप से मानने वाले विनयवादी कहलाते हैं। इनके बत्तीस भेद हैं। यथा–देव, राजा, यति, ज्ञाति, स्थविर, अधम, माता और पिता, इन आठों का मन, वचन, काया और दान, इन चार प्रकार से विनय होता है। इस प्रकार आठ को चार से गुणा करने पर बत्तीस भेद होते हैं।

ये चारों वादी मिथ्यादृष्टि हैं। क्रियावादी, जीवादि पदार्थों के अस्तित्व को ही मानते हैं। इस प्रकार एकांत अस्तित्व को मानने से इनके मत में पर रूप की अपेक्षा से नास्तित्व नहीं माना जाता। पर रूप की अपेक्षा से वस्तु में नास्तित्व नहीं मानने से वस्तु में स्व रूप के समान पर रूप का भी अस्तित्व रहेगा। इस प्रकार प्रत्येक वस्तु में सभी वस्तुओं का अस्तित्व रहने से एक ही वस्तु सर्व रूप हो जायगी, जो कि प्रत्यक्ष बाधित है। इस प्रकार क्रियावादियों का मत मिथ्यात्व पूर्ण है।

अक्रियावादी जीवादि पदार्थों का अस्तित्व नहीं मानने से असद्भूत अर्थ का प्रतिपादन करते हैं। इसलिये वे भी मिथ्यादृष्टि हैं। एकान्त रूप से जीव के अस्तित्व का प्रतिषेध करने से उनके मत में निषेधकर्त्ता का ही अभाव हो जायगा। निषेधकर्त्ता का अभाव हो जाने से सभी का अस्तित्व स्वतः सिद्ध हो जाता है।

अज्ञानवादी अज्ञान को ही श्रेय मानते हैं। इसलिये वे भी मिथ्यादृष्टि हैं और उनका कथन स्ववचन बाधित है, क्योंकि 'अज्ञान श्रेय है'–यह बात भी वे बिना ज्ञान के कैसे जान सकते हैं और बिना ज्ञान के वे अपने मत का समर्थन भी कैसे कर सकते हैं?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इस प्रकार अज्ञान को श्रेय मानते हुए उन्हें ज्ञान का आश्रय लेना ही पड़ता है।

विनयवादी--केवल विनय से ही स्वर्ग, मोक्ष आदि कल्याण को पाने की इच्छा रखने वाले विनयवादी मिथ्यादृष्टि हैं। क्योंकि ज्ञान और क्रिया, दोनों से ही मोक्ष की प्राप्ति होती है, अकेले ज्ञान से या अकेली क्रिया से नहीं। ज्ञान को छोड़ कर एकान्त रूप से क्रिया के केवल एक अंग का आश्रय लेने से वे सत्य मार्ग से दूर हैं। इस प्रकार ये चारों वादी मिथ्यादृष्टि हैं।

इस शतक में उपरोक्त क्रियावादी का ग्रहण नहीं किया है, किन्तु 'क्रियावादी' शब्द से 'सम्यग्दृष्टि' का ग्रहण किया है।

सम्यग्दृष्टियों का कथन अलेशी जीवों के समान कहा है। अलेशी जीव अयोगी और सिद्ध होते हैं। वे क्रियावाद के कारणभूत द्रव्य और पर्याय के यथार्थ ज्ञान से युक्त होने से क्रियावादी हैं। यहाँ जो सम्यग्दृष्टि के योग्य अलेश्यत्व, सम्यग्दर्शन, ज्ञानी, नोसंज्ञोपयुक्त और अवेदकत्व आदि स्थान हैं, उन सभी का क्रियावाद में समावेश होता है और मिथ्यादृष्टि के योग्य मिथ्यात्व, अज्ञान आदि स्थानों का अक्रियावाद आदि तीन समवसरणों में समावेश होता है। मिश्रदृष्टि, साधारण परिणाम वाला होने से उसकी गणना आस्तिक में या नास्तिक में नहीं की है। इसलिये वे अज्ञानवादी और विनयवादी भी होते हैं।

पृथ्वीकायिकादि जीव, मिथ्यादृष्टि होने से अक्रियावादी और अज्ञानवादी होते हैं। यद्यपि उनमें वचन का अभाव होने से वाद नहीं होता, तथापि उस-उस वाद के योग्य परिणाम होने से वे अक्रियावादी और अज्ञानवादी कहे जाते हैं। उनमें विनयवाद के योग्य परिणाम न होने से वे विनयवादी नहीं होते।

पृथ्वीकायिकादि के योग्य सलेश्यत्व, कृष्णलेश्या, नीललेश्या, कापोतलेश्या और तेजोलेश्या तथा कृष्णपाक्षिकत्वादि जो स्थान हैं, उन सभी में अक्रियावादी और अज्ञानवादी समवसरण होते हैं। इस प्रकार चौरिन्द्रिय पर्यन्त जानना चाहिये, किन्तु यहाँ इतना समझना आवश्यक है कि क्रियावाद और विनयवाद, विशिष्ट सम्यक्त्वादि परिणाम के सद्भाव में होते हैं। इसलिये यद्यपि बेइन्द्रियादि जीवों में सास्वादन गुणस्थान की प्राप्ति के समय सम्यक्त्व और ज्ञान का अंश होता है, तथापि वे क्रियावादी और विनयवादी नहीं कहलाते।

पञ्चेन्द्रिय तिर्यंच में अलेश्यत्व, अकषायित्वादि की पृच्छा नहीं करनी चाहिये, क्योंकि ये स्थान इनमें नहीं होते।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१० प्रश्न-किरियावाई णं भंते ! जीवा किं णेरइयाउयं पकरेंति तिरिक्खजोणियाउयं पकरेंति, मणुस्साउयं पकरेंति, देवाउयं पकरेंति?

१० उत्तर-गोयमा ! णो णेरइयाउयं पकरेंति, णो तिरिक्ख-जोणियाउयं पकरेंति, मणुस्साउयं पि पकरेंति, देवाउयं पि पकरेंति।

भावार्थ-१० प्रश्न-हे भगवन् ! क्रियावादी जीव, नैरयिक का आयु बांधते हैं या तिर्यंच-योनिक, मनुष्य अथवा देव का आयु बांधते हैं ?

१० उत्तर-हे गौतम ! क्रियावादी जीव, नैरयिक और तिर्यंच-योनिक का आयु नहीं बांधते, किन्तु मनुष्य और देव का आयु बांधते हैं।

११ प्रश्न-जइ देवाउयं पकरेंति किं भवणवासीदेवाउयं पकरेंति जाव वेमाणियदेवाउयं पकरेंति ?

११ उत्तर-गोयमा ! णो भवणवासीदेवाउयं पकरेंति, णो वाण-मंतरदेवाउयं पकरेंति णो जोइसियदेवाउयं पकरेंति, वेमाणियदेवाउयं पकरेंति।

भावार्थ-११ प्रश्न-हे भगवन् ! यदि क्रियावादी जीव देव का आयु बांधते है, तो भवनपति देव का आयु बांधते हैं, अथवा यावत् वैमानिक देव का आयु बांधते हैं ?

११ उत्तर-हे गौतम ! वे भवनपति, वाणव्यन्तर और ज्योतिषी देव का आयु नहीं बांधते, किन्तु वैमानिक देव का आयु बांधते हैं।

१२ प्रश्न-अकिरियावाई णं भंते ! जीवा किं णेरइयाउयं पकरेंति, तिरिक्ख०-पुच्छा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१२ उत्तर-गोयमा ! णेरइयाउयं पि पकरेंति जाव देवाउयं पि पकरेंति । एवं अण्णाणियवाई वि, वेणइयवाई वि ।

भावार्थ-१२ प्रश्न-हे भगवन् ! अक्रियावादी जीव, नैरयिक का आयु बांधते हैं० ?

१२ उत्तर-हे गौतम ! नैरयिक यावत् देव का आयु बांधते हैं । इसी प्रकार अज्ञानवादी और विनयवादी भी ।

१३ प्रश्न-सलेस्सा णं भंते ! जीवा किरियावाई किं णेरइयाउयं पकरेंति-पुच्छा ।

१३ उत्तर-गोयमा ! णो णेरइयाउयं एवं जहेव जीवा तहेव सलेस्सा वि चउहि वि समोसरणेहिं भाणियव्वा ।

भावार्थ-१३ प्रश्न-हे भगवन् ! सलेशी क्रियावादी जीव, नैरयिक का आयु बांधते हैं० ?

१३ उत्तर-हे गौतम ! नैरयिक का आयु नहीं बांधते इत्यादि औधिक जीव के समान सलेशी में चारों समवसरण कहना चाहिये ।

१४ प्रश्न-कण्हलेस्सा णं भंते ! जीवा किरियावाई किं णेरइयाउयं पकरेंति-पुच्छा ।

१४ उत्तर-गोयमा ! णो णेरइयाउयं पकरेंति, णो तिरिक्खजोणियाउयं पकरेंति, मणुस्साउयं पकरेंति, णो देवाउयं पकरेंति । अकिरियावाई अण्णाणियवाई वेणइयवाई य चत्तारि वि आउयाइं पकरेंति ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एवं णीललेस्सा वि । एवं काउलेस्सा वि ।

भावार्थ–१४ प्रश्न–हे भगवन् ! कृष्णलेशी क्रियावादी जीव, नैरयिक का आयु बांधते हैं० ?

१४ उत्तर–हे गौतम ! नैरयिक, तिर्यंच-योनिक और देव का आयु नहीं बांधते, किन्तु मनुष्य का आयु बांधते हैं । कृष्णलेशी अक्रियावादी, अज्ञानवादी और विनयवादी जीव, नैरयिक आदि चारों प्रकार का आयु बांधते हैं । इसी प्रकार नीललेशी और कापोतलेशी भी ।

१५ प्रश्न–तेउलेस्सा णं भंते ! जीवा किरियावाई किं णेरइयाउयं पकरेंति–पुच्छा ।

१५ उत्तर–गोयमा ! णो णेरइयाउयं पकरेंति, णो तिरिक्खजोणियाउयं पकरेंति, मणुस्साउयं पकरेंति, देवाउयं पि पकरेंति । जइ देवाउयं पकरेंति–तहेव ।

भावार्थ–१५ प्रश्न–हे भगवन् ! तेजोलेशी क्रियावादी जीव, नैरयिक का आयु बांधते हैं० ?

१५ उत्तर–हे गौतम ! नैरयिक और तिर्यंच का आयु नहीं बांधते, किन्तु मनुष्य और देव का आयु बांधते हैं । यदि वे देव का आयु बांधते हैं, तो *पूर्ववत् आयु का बन्ध करते हैं ।*

१६ प्रश्न–तेउलेस्सा णं भंते ! जीवा अकिरियावाई किं णेरइयाउयं–पुच्छा ।

१६ उत्तर–गोयमा ! णो णेरइयाउयं पकरेंति, मणुस्साउयं पि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पकरेंति, तिरिक्खजोणियाउयं पि पकरेंति, देवाउयं पि पकरेंति। एवं अण्णाणियवाई वि, वेणइयवाई वि। जहा तेउलेस्सा एवं पम्हलेस्सा वि सुक्कलेस्सा वि णायव्वा।

भावार्थ-१६ प्रश्न-हे भगवन् ! तेजोलेशी अक्रियावादी जीव, नैरयिक का आयु बांधते हैं० ?

१६ उत्तर-हे गौतम ! नैरयिक का आयु नहीं बांधते, किन्तु तिर्यंच, मनुष्य और देव का आयु बांधते हैं। इसी प्रकार अज्ञानवादी और विनयवादी जीव भी। तेजोलेशी जीव के समान पद्मलेशी और शुक्ललेशी जीव भी जानना चाहिये।

१७ प्रश्न-अलेस्सा णं भंते ! जीवा किरियावाई किं णेरइयाउयं-पुच्छा।

१७ उत्तर-गोयमा ! णो णेरइयाउयं पकरेंति, णो तिरिक्ख०, णो मणु०, णो देवाउयं पकरेंति।

भावार्थ-१७ प्रश्न-हे भगवन् ! अलेशी क्रियावादी जीव, नैरयिक का बांधते हैं० ?

१७ उत्तर-हे गौतम ! वे नैरयिक, तिर्यंच, मनुष्य और देव, किसी का भी आयु नहीं बांधते।

१८ प्रश्न-कण्हपक्खिया णं भंते ! जीवा अकिरियावाई किं णेरइयाउयं-पुच्छा।

१८ उत्तर-गोयमा ! णेरइयाउयं पि पकरेंति एवं चउविहं पि।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एवं अण्णाणियवाई वि, वेणइयवाई वि। सुक्कपक्खिया जहा सलेस्सा।

भावार्थ-१८ प्रश्न-हे भगवन् ! कृष्णपाक्षिक अक्रियावादी जीव, नैरयिक का आयु बांधते हैं० ?

१८ उत्तर-हे गौतम ! नैरयिक, तिर्यंच आदि चारों प्रकार का आयु बांधते हैं। इसी प्रकार कृष्णपाक्षिक अज्ञानवादी और विनयवादी भी। शुक्ल-पाक्षिक, सलेशी जीव के समान बन्ध करते हैं।

१९ प्रश्न-सम्मदिट्ठी णं भंते ! जीवा किरियावाई किं णेरइया-उयं-पुच्छा।

१९ उत्तर-गोयमा ! णो णेरइयाउयं पकरेंति, णो तिरिक्ख-जोणियाउयं पकरेंति, मणुस्साउयं पकरेंति, देवाउयं पि पकरेंति। मिच्छादिट्ठी जहा कण्हपक्खिया।

भावार्थ-१९ प्रश्न-हे भगवन् ! सम्यग्दृष्टि क्रियावादी जीव, नैरयिक का आयु बांधते हैं० ?

१९ उत्तर-हे गौतम ! नैरयिक और तिर्यंच का आयु नहीं बांधते, किन्तु मनुष्य और देव का आयु बांधते हैं। मिथ्यादृष्टि क्रियावादी का बन्ध कृष्णपाक्षिक के समान है।

२० प्रश्न-सम्मामिच्छादिट्ठी णं भंते ! जीवा अण्णाणियवाई किं णेरइयाउयं० ?

२० उत्तर-जहा अलेस्सा। एवं वेणइयवाई वि। णाणी आभिणि-बोहियणाणी य सुयणाणी य ओहिणाणी य जहा सम्मदिट्ठी।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ–२० प्रश्न–हे भगवन् ! सम्यग्मिथ्यादृष्टि अज्ञानवादी जीव, नैरयिक का आयु बांधते हैं० ?

२० उत्तर–हे गौतम ! अलेशी जीव के समान । इसी प्रकार विनयवादी भी जानना चाहिये । ज्ञानी, मतिज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी की वक्तव्यता सम्यग्दृष्टि के समान है ।

२१ प्रश्न–मणपज्जवणाणी णं भंते ! पुच्छा ।

२१ उत्तर–गोयमा ! णो णेरइयाउयं पकरेंति, णो तिरिक्ख०, णो मणुस्स०, देवाउयं पकरेंति ।

भावार्थ–२१ प्रश्न–हे भगवन् ! मनःपर्यवज्ञानी क्रियावादी जीव, नैरयिक का आयु बांधते हैं० ?

२१ उत्तर–हे गौतम ! वे नैरयिक, तिर्यंच और मनुष्य का आयु नहीं बांधते, किन्तु देव का आयु बांधते हैं ।

२२ प्रश्न–जइ देवाउयं पकरेंति किं भवणवासि०–पुच्छा ।

२२ उत्तर–गोयमा ! णो भवणवासिदेवाउयं पकरेंति, णो वाणमंतर०, णो जोइसिय०, वेमाणियदेवाउयं पकरेंति । केवलणाणी जहा अलेस्सा । अण्णाणी जाव विभंगणाणी जहा कण्हपक्खिया । सण्णासु चउसु वि जहा सलेस्सा । णोसण्णोवउत्ता जहा मणपज्जवणाणी । सवेयगा जाव णपुंसगवेयगा जहा सलेस्सा । अवेयगा जहा अलेस्सा । सकसायी जाव लोभकसायी जहा सलेस्सा । अकसायी जहा अलेस्सा । सजोगी जाव कायजोगी जहा सलेस्सा । अजोगी जहा अलेस्सा ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सागारोवउत्ता य अणागारोवउत्ता य जहा सलेस्सा ।

भावार्थ-२२ प्रश्न-हे भगवन् ! यदि वे देव का आयु बांधते हैं, तो क्या भवनपति देव यावत् वैमानिक देव का आयु बांधते हैं ?

२२ उत्तर-हे गौतम ! वे भवनपति, वाणव्यन्तर और ज्योतिषी देव का आयु नहीं बांधते, परन्तु वैमानिक देव का आयु बांधते हैं । केवलज्ञानी का कथन अलेशी जीव के समान है । अज्ञानी यावत् विभंगज्ञानी, कृष्णपाक्षिक के समान है । आहारादि चारों संज्ञा वाले जीव, सलेशी जीव के समान है । नोसंज्ञोपयुक्त जीव, मनःपर्यव ज्ञानी के समान है । सवेदी यावत् नपुंसक वेदी जीव, सलेशी जीव के समान है । अवेदी जीव, अलेशी के समान है । सकषायी यावत् लोभ-कषायी जीव, सलेशी जीव के सदृश है । अकषायी, अलेशी के तुल्य है । सयोगी यावत् काययोगी, सलेशीवत् हैं । अयोगी, अलेशी के समान है । साकारोपयुक्त और अनाकारोपयुक्त जीव, सलेशी के समान है ।

विवेचन--यहां कहा है कि क्रियावादी जीव, नैरयिक और तिर्यंच का आयु नहीं बांधते, किन्तु मनुष्य और देव का आयु बांधते हैं । इसका आशय यह है कि जो नैरयिक और देव क्रियावादी हैं, वे मनुष्य का आयु बांधते हैं और जो मनुष्य और पंचेन्द्रिय तिर्यंच क्रियावादी हैं, वे देव का आयु बांधते हैं ।

कृष्णलेशी क्रियावादी जीव, नैरयिक, तिर्यंच और देव का आयु नहीं बांधते, किन्तु एक मनुष्य का आयु बांधते हैं । यह कथन नैरयिक और असुरकुमारादि की अपेक्षा समझना चाहिये, क्योंकि जो कृष्णलेशी, सम्यग्दृष्टि मनुष्य और पंचेन्द्रिय तिर्यंच हैं, वे मनुष्य का आयु तो बांधते ही नहीं हैं, वैमानिक का आयु कृष्णादि तीन लेश्या में बंधता नहीं है ।

अलेशी जीव, अयोगी और सिद्ध होते हैं । अतः वे किसी भी प्रकार का आयु नहीं बांधते ।

'सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव का कथन अलेशी के समान है'-ऐसा जो कहा है, इसका आशय यह है कि अलेशी जाव जो सिद्ध हैं, वे तो कृत-कृत्य होने से एवं कर्मों का समूल क्षय करने से आयु-कर्म का बन्ध नहीं करते और अयोगी जीव भी उसी भव में मोक्ष प्राप्त करने हैं, इसलिये वे भी किसी प्रकार का आयु नहीं बांधते, इसी प्रकार सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव भी सम्यग्मिथ्यादृष्टि अवस्था में किसी प्रकार के आयु का बन्ध नहीं करते हैं ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२३ प्रश्न-किरियावाई णं भंते ! णेरइया किं णेरइयाउयं-पुच्छा।

२३ उत्तर-गोयमा ! णो णेरइयाउयं०, णो तिरिक्ख०, मणुस्साउयं पकरेंति, णो देवाउयं पकरेंति।

भावार्थ-२३ प्रश्न-हे भगवन् ! क्रियावादी नैरयिक, नैरयिक का आयु बांधते हैं ?

२३ उत्तर-हे गौतम ! वे नैरयिक, तिर्यंच और देव का आयु नहीं बांधते, मनुष्य का आयु बांधते हैं।

२४ प्रश्न-अकिरियावाई णं भंते ! णेरइया-पुच्छा।

२४ उत्तर-गोयमा ! णो णेरइयाउयं०, तिरिक्खजोणियाउयं पकरेंति, मणुस्साउयं पि पकरेंति, णो देवाउय पकरेंति। एवं अण्णाणियवाई वि, वेणयवाई वि।

भावार्थ-२४ प्रश्न-हे भगवन् ! अक्रियावादी नैरयिक, नैरयिक का आयु बांधते हैं० ?

२४ उत्तर-हे गौतम ! वे नैरयिक और देव का आयु नहीं बांधते, किन्तु तिर्यंच और मनुष्य का आयु बांधते हैं। अज्ञानवादी और विनयवादी भी इसी प्रकार।

२५ प्रश्न-सलेस्सा णं भंते ! णेरइया किरियावाई किं णेरइयाउयं० ?

२५ उत्तर-एवं सव्वे वि णेरइया जे किरियावाई ते मणुस्साउयं एगं पकरेंति, जे अकिरियावाई, अण्णाणियवाई, वेणइयवाई ते सव्व-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ट्ठाणेसु वि णो णेरइयाउयं पकरेंति, तिरिक्खजोणियाउयं पि पकरेंति, मणुस्साउयं पि पकरेंति, णो देवाउयं पकरेंति। णवरं सम्मामिच्छत्ते उवरिल्लेहिं दोहि वि समोसरणेहिं ण किंचि वि पकरेंति जहेव जीवपए। एवं जाव थणियकुमारा जहेव णेरइया।

भावार्थ-२५ प्रश्न-हे भगवन् ! सलेशी क्रियावादी नैरयिक का आयु बांधते हैं० ?

२५ उत्तर-हे गौतम ! जो नैरयिक क्रियावादी हैं, वे सभी एकमात्र मनुष्य का ही आयु बांधते हैं और जो अक्रियावादी, अज्ञानवादी और विनयवादी हैं, वे सभी स्थानों में तिर्यंच और मनुष्य का ही आयु बांधते हैं, नैरयिक और देव का आयु नहीं बांधते, परन्तु सम्यग्मिथ्यादृष्टि, अज्ञानवादी और विनयवादी, इन दो समवसरण में, जीव-पद के अनुसार किसी भी आयु का बन्ध नहीं करते। इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमार पर्यन्त।

२६ प्रश्न-अकिरियावाई णं भंते ! पुढविकाइया-पुच्छा।

२६ उत्तर-गोयमा ! णो णेरइयाउयं पकरेंति, तिरिक्खजोणियाउयं० मणुस्साउयं० णो देवाउयं पकरेंति। एवं अण्णाणियवाई वि।

भावार्थ-२६ प्रश्न-हे भगवन् ! अक्रियावादी पृथ्वीकायिक जीव, नैरयिक का आयु बांधते हैं० ?

२६ उत्तर-हे गौतम ! वे नैरयिक और देव का आयु नहीं बांधते, किन्तु तिर्यंच और मनुष्य का आयु बांधते हैं। अज्ञानवादी भी इसी प्रकार।

२७ प्रश्न-सलेस्सा णं भंते !० ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२७ उत्तर—एवं जं जं पयं अत्थि पुढविकाइयाणं तहिं तहिं मज्झिमेसु दोसु समोसरणेसु एवं चेव दुविहं आउयं पकरेंति। णवरं तेउलेस्साए ण किं पि पकरेंति। एवं आउकाइयाण वि, एवं वणस्सइ-काइयाण वि। तेउकाइया वाउकाइया सव्वट्ठाणेसु मज्झिमेसु दोसु समोसरणेसु णो णेरइयाउयं पकरेंति, तिरिक्खजोणियाउयं पकरेंति, णो मणुस्साउयं०, णो देवाउयं पकरेंति। बेइंदिय तेइंदिय-चउरिंदियाणं जहा पुढविकाइयाणं। णवरं सम्मत्त-णाणेसु ण एक्कं पि आउगं पकरेंति।

भावार्थ—२७ प्रश्न—हे भगवन्! सलेशी अक्रियावादी पृथ्वीकायिक जीव, नैरयिक का आयु बांधते हैं०?

२७ उत्तर—हे गौतम! जो-जो पद पृथ्वीकायिक जीव में होते हैं, उन सभी में अक्रियावादी और अज्ञानवादी, इन दो समवसरण में पूर्व कथनानुसार मनुष्य और तिर्यंच, दो प्रकार का आयु बांधते हैं, परन्तु तेजोलेश्या में तो किसी भी आयु का बन्ध नहीं करते। इसी प्रकार अप्कायिक और वनस्पतिकायिक जीवों के भी जानना चाहिये। तेजस्काय और वायुकाय के सभी स्थानों में अक्रियावादी और अज्ञानवादी, ऐसे दो समवसरण में नैरयिक, मनुष्य और देव का आयु नहीं बांधते, एकमात्र तिर्यंच का आयु बांधते हैं। बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय और चौरिन्द्रिय जीव का निरूपण पृथ्वीकायिक के तुल्य है, परन्तु सम्यक्त्व और ज्ञान में वे किसी भी आयु का बन्ध नहीं करते।

२८ प्रश्न—किरियावाई णं भंते! पंचिंदियतिरिक्खजोणिया किं णेरइयाउयं पकरेंति—पुच्छा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२८ उत्तर–गोयमा ! जहा मणपज्जवणाणी । अकिरियावाई अण्णाणियवाई वेणइयवाई य चउव्विहं पि पकरेंति । जहा ओहिया तहा सलेस्सा वि ।

भावार्थ–२८ प्रश्न–हे भगवन् ! क्रियावादी पञ्चेन्द्रिय तिर्यंच जीव, नैरयिक का आयु बांधते हैं० ?

२८ उत्तर–हे गौतम ! इनका बन्ध मनःपर्यव ज्ञानी के तुल्य है । अक्रियावादी, अज्ञानवादी और विनयवादी पञ्चेन्द्रिय तिर्यंच-योनिक जीव, चारों प्रकार का आयु बांधते हैं । सलेशी जीव का निरूपण औधिक तिर्यंच पंचेन्द्रिय के सदृश है ।

२९ प्रश्न–कण्हलेस्सा णं भंते ! किरियावाई पंचिंदियतिरिक्ख-जोणिया किं णेरइयाउयं–पुच्छा ?

२९ उत्तर–गोयमा ! णो णेरइयाउयं पकरेंति, णो तिरिक्ख०, णो मणुस्साउयं०, णो देवाउयं पकरेंति । अकिरियावाई अण्णाणियवाई वेणइयवाई चउव्विहं पि पकरेंति । जहा कण्हलेस्सा एवं णीललेस्सा वि, काउलेस्सा वि, तेउलेस्सा जहा सलेस्सा । णवरं अकिरियावाई, अण्णाणियवाई, वेणइयवाई य णो णेरइयाउयं पकरेंति, देवाउयं पि पकरेंति, तिरिक्खजोणियाउयं पि पकरेंति, मणुस्साउयं पि पकरेंति । एवं पम्हलेस्सा वि, एवं सुक्कलेस्सा वि भाणियव्वा । कण्हपक्खिया तिहिं समोसरणेहिं चउव्विहं पि आउयं पकरेंति । सुक्कपक्खिया जहा सलेस्सा । सम्मदिट्ठी जहा मणपज्जवणाणी तहेव वेमाणियाउयं पकरेंति ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मिच्छदिट्ठी जहा कण्हपक्खिया । सम्मामिच्छादिट्ठी ण य एक्कं पि पकरेंति जहेव णेरइया । णाणी जाव ओहिणाणी जहा सम्मदिट्ठी । अण्णाणी जाव विभंगणाणी जहा कण्हपक्खिया । सेसा जाव अणागारोवउत्ता सव्वे जहा सलेस्सा तहा चेव भाणियव्वा । जहा पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं वत्तव्वया भणिया एवं मणुस्साण वि भाणियव्वा, णवरं मणपज्जवणाणी णोमणोवउत्ता य जहा सम्मदिट्ठी तिरिक्खजोणिया तहेव भाणियव्वा । अलेस्सा केवलणाणी अवेयगा अकसायी अजोगी य एए ण एगं पि आउयं पकरेंति । जहा ओहिया जीवा सेसं तहेव । वाणमंतर-जोइसिय-वेमाणिया जहा असुरकुमारा ।

भावार्थ–२९ प्रश्न–हे भगवन् ! कृष्णलेशी क्रियावादी पञ्चेन्द्रिय तिर्यंच जीव, नैरयिक का आयु बांधते हैं० ?

२९ उत्तर–हे गौतम ! नैरयिक, तिर्यंच, मनुष्य और देव, किसी का भी आयु नहीं बांधते । अक्रियावादी, अज्ञानवादी और विनयवादी चारों प्रकार का आयु बांधते हैं । नीललेशी और कापोतलेशी भी कृष्णलेशी के समान है । तेजोलेशी का बन्ध, सलेशी के समान है, परन्तु अक्रियावादी, अज्ञानवादी और विनयवादी जीव, नैरयिक का आयु नहीं बांधते । देव, तिर्यंच और मनुष्य का आयु बांधते हैं । इसी प्रकार पद्मलेशी और शुक्ललेशी भी जानना चाहिये । कृष्णपाक्षिक, अक्रियावादी, अज्ञानवादी और विनयवादी, चारों प्रकार का आयु बांधते हैं । शुक्लपाक्षिक का कथन सलेशी के समान है । सम्यग्दृष्टि, मनःपर्यव ज्ञानी के सदृश वैमानिक का आयु बांधता है । मिथ्यादृष्टि, कृष्णपाक्षिक के तुल्य है । सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव, एक भी आयु नहीं बांधते । उनमें नैरयिक के समान दो समवसरण होते हैं । ज्ञानी यावत् अवधिज्ञानी का आयु बन्ध सम्यग्-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

**दृष्टि के समान है। अज्ञानी यावत् विभंगज्ञानी का कथन कृष्णपाक्षिक के तुल्य है। शेष सभी यावत् अनाकारोपयुक्त पर्यन्त जीव का कथन सलेशीवत् है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यंच के समान मनुष्य का भी जानना चाहिये, परन्तु मनः-पर्यव ज्ञानी और नोसंज्ञोपयुक्त जीव का कथन सम्यग्दृष्टि तिर्यंच-योनिक जैसा है। अलेशी, केवलज्ञानी, अवेदी, अकषायी और अयोगी, ये सभी किसी भी प्रकार का आयु नहीं बांधते। इनका कथन औधिक जीव के तुल्य है। वाण-व्यन्तर, ज्योतिषी और वैमानिक देव का कथन असुरकुमार जैसा है।**

**विवेचन**–क्रियावादी नैरयिक, नारक-भव के स्वभाव के कारण नैरयिक आयु और देवायु का बन्ध नहीं करते हैं और क्रियावादी होने के कारण वे तिर्यंच आयु भी नहीं बांधते हैं, एकमात्र मनुष्य का आयु ही बांधते हैं। अक्रियावाद आदि तीन समवसरण में नैरयिक जीव, सभी स्थानों में तिर्यंच और मनुष्य का आयु बांधते हैं। सम्यग्मिथ्यादृष्टि नैरयिक, अज्ञानवादी और विनयवादी ही होते है। सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थान का स्वभाव ही ऐसा है कि उसमें रहते हुए जीव किसी भी प्रकार का आयु नहीं बांधते।

पृथ्वीकायिक जीव में, अपर्याप्त अवस्था में, इन्द्रिय-पर्याप्ति पूरी होने के पूर्व ही तेजोलेश्या होती है और वे इन्द्रिय-पर्याप्ति पूरी होने पर ही पर-भव का आयु बांधते हैं। इसलिये तेजोलेश्या के अभाव में ही उनके आयु का बन्ध होता है।

बेइन्द्रिय आदि जीवों में सास्वादन सम्यक्त्व होने से उनमें सम्यक्त्व और ज्ञान होता है, किन्तु उनका काल अत्यन्त अल्प होने से उस समय में आयु का बन्ध नहीं होता। अतः उनमें सम्यक्त्व और ज्ञान के अभाव में आयु का बन्ध होता है।

जब सम्यग्दृष्टि पञ्चेन्द्रिय तिर्यंच, कृष्णादि अशुभ लेश्या के परिणाम वाले होते है, तब वे किसी भी आयु का बन्ध नहीं करते। जब वे तेजोलेश्यादि शुभ परिणाम वाले होते हैं, तभी एकमात्र वैमानिक देव का आयु बांधते हैं।

तेजोलेश्या वाले जीव के आयु का बन्ध सलेशी जीव के समान बताया है। इसका अभिप्राय यह है कि क्रियावादी केवल वैमानिक का ही आयु बांधते हैं। शेष तीन समवसरण वाले जीव, चारों प्रकार का आयु बांधते हैं, क्योंकि सलेशी जीव में इसी प्रकार का आयु का बन्ध कहा है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

३० प्रश्न-किरियावाई णं भंते ! जीवा किं भवसिद्धिया अभवसिद्धिया ?

३० उत्तर-गोयमा ! भवसिद्धिया, णो अभवसिद्धिया ।

भावार्थ-३० प्रश्न-हे भगवन् ! क्रियावादी जीव, भवसिद्धिक हैं या अभवसिद्धिक० ?

३० उत्तर-हे गौतम ! अभवसिद्धिक नहीं, भवसिद्धिक हैं ।

३१ प्रश्न-अकिरियावाई णं भंते ! जीव किं भवसिद्धिया-पुच्छा ।

३१ उत्तर-गोयमा ! भवसिद्धिया वि, अभवसिद्धिया वि । एवं अण्णाणियवाई वि, वेणइयवाई वि ।

भावार्थ-३१ प्रश्न-हे भगवन् ! अक्रियावादी जीव, भवसिद्धिक हैं या अभवसिद्धिक० ?

३१ उत्तर-हे गौतम ! भवसिद्धिक भी हैं और अभवसिद्धिक भी । इसी प्रकार अज्ञानवादी और विनयवादी भी ।

३२ प्रश्न-सलेस्सा णं भंते ! जीवा किरियावाई किं भव-पुच्छा ।

३२ उत्तर-गोयमा ! भवसिद्धिया, णो अभवसिद्धिया ।

भावार्थ-३२ प्रश्न-हे भगवन् ! सलेशी क्रियावादी जीव भवसिद्धिक हैं० ?

३२ उत्तर-हे गौतम ! अभवसिद्धिक नहीं, भवसिद्धिक हैं ।

३३ प्रश्न-सलेस्सा णं भंते ! जीवा अकिरियावाई किं भव-पुच्छा ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

३३ उत्तर–गोयमा ! भवसिद्धिया वि, अभवसिद्धिया वि । एवं अण्णाणियवाई वि, वेणइयवाई वि जहा सलेस्सा । एवं जाव सुक्कलेस्सा ।

भावार्थ–३३ प्रश्न–हे भगवन् ! सलेशी अक्रियावादी जीव, भवसिद्धिक हैं० ?

३३ उत्तर–हे गौतम ! भवसिद्धिक भी हैं, और अभवसिद्धिक भी । इसी प्रकार अज्ञानवादी और विनयवादी भी । सलेशी के समान कृष्णलेशी यावत् शुक्ललेशी पर्यन्त ।

३४ प्रश्न–अलेस्सा णं भंते ! जीवा किरियावाई किं भव–पुच्छा ।

३४ उत्तर–गोयमा ! भवसिद्धिया, णो अभवसिद्धिया । एवं एएणं अभिलावेणं कण्हपक्खिया तिसु वि समोसरणेसु भयणाए । सुक्कपक्खिया चउसु वि समोसरणेसु भवसिद्धिया, णो अभवसिद्धिया । सम्मदिट्ठी जहा अलेस्सा । मिच्छादिट्ठी जहा कण्हपक्खिया । सम्मामिच्छादिट्ठी दोसु वि समोसरणेसु जहा अलेस्सा । णाणी जाव केवलणाणी भवसिद्धिया, णो अभवसिद्धिया । अण्णाणी जाव विभंगणाणी जहा कण्हपक्खिया । सण्णासु चउसु वि जहा सलेस्सा । णो सण्णोवउत्ता जहा सम्मदिट्ठी । सवेयगा जाव णपुंसगवेयगा जहा सलेस्सा अवेयगा जहा सम्मदिट्ठी । सकसायी जाव लोभकसायी जहा सलेस्सा । अकसायी जहा सम्मदिट्ठी । सजोगी जाव कायजोगी जहा सलेस्सा । अजोगी जहा सम्मदिट्ठी । सागारोवउत्ता अणागारोवउत्ता जहा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सलेस्सा । एवं णेरइया वि भाणियव्वा, णवरं णायव्वं जं अत्थि । एवं असुरकुमारा वि जाव थणियकुमारा । पुढविक्काइया सव्वट्ठाणेसु वि मज्झिल्लेसु दोसु वि समोसरणेसु भवसिद्धिया वि, अभवसिद्धिया वि । एवं जाव वणस्सइकाइया । वेइंदिय-तेइंदिय-चउरिंदिया एवं चेव । णवरं सम्मत्ते आभिणिबोहियणाणे सुयणाणे एएसु चेव दोसु मज्झिमेसु समोसरणेसु भवसिद्धिया, णो अभवसिद्धिया सेसं तं चेव । पंचिंदियतिरिक्खजोणिया जहा णेरइया । णवरं णायव्वं जं अत्थि । मणुस्सा जहा ओहिया जीवा । वाणमंतर-जोइसिय-वेमाणिया जहा असुरकुमारा ।

❀ 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति ❀

॥ तीसइमे सए पढमो उद्देसो समत्तो ॥

भावार्थ–३४ प्रश्न–हे भगवन् ! अलेशी क्रियावादी जीव, भवसिद्धिक हैं०?

३४ उत्तर–हे गौतम ! भवसिद्धिक हैं, अभवसिद्धिक नहीं । इस अभिलाप से कृष्णपाक्षिक तीनों समवसरण में (अक्रियावादी, अज्ञानवादी और विनयवादी) भजना (विकल्प) से भवसिद्धिक हैं । शुक्लपाक्षिक जीव, चारों समवसरण में भवसिद्धिक हैं, अभवसिद्धिक नहीं । सम्यग्दृष्टि जीव, अलेशी जीव के समान हैं । मिथ्यादृष्टि जीव, कृष्णपाक्षिक के तुल्य है । सम्यग्मिथ्यादृष्टि अज्ञानवादी और विनयवादी, इन दोनों समवसरण में अलेशी जीव के तुल्य भवसिद्धिक हैं । ज्ञानी यावत् केवलज्ञानी जीव भवसिद्धिक हैं, अभवसिद्धिक नहीं । अज्ञानी यावत् विभंगज्ञानी जीव, कृष्णपाक्षिक जीव के तुल्य हैं । चारों संज्ञा वाले जीव का निरूपण सलेशी जीव के सदृश है । नोसंज्ञोपयुक्त जीव का कथन सम्यग्दृष्टि जैसा है । सवेदी यावत् नपुंसकवेदी जीव, सलेशी जैसे है और

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अवेदी जीव सम्यग्दृष्टि के तुल्य हैं। सकषायी यावत् लोभकषायी जीव, सलेशी जीव के समान हैं। अकषायी जीव, सम्यग्दृष्टि के तुल्य हैं सयोगी यावत् काय-योगी जीव, सलेशी जीव जैसे हैं। अयोगी जीव, सम्यग्दृष्टि जीव के समान हैं। साकारोपयुक्त और अनाकारोपयुक्त जीव, सलेशी जीव जैसे हैं। इसी प्रकार नैरयिक भी हैं, किन्तु उनमें जो बोल पाये जाते हों, वे कहने चाहिये। इसी प्रकार असुरकुमार यावत् स्तनितकुमार तक जानना चाहिए। पृथ्वी-कायिक सभी स्थानों में मध्य के दो समवसरण में (अक्रियावादी, अज्ञानवादी) भवसिद्धिक भी हैं और अभवसिद्धिक भी। इसी प्रकार यावत् वनस्पतिकायिक, बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय और चौरिन्द्रिय जीव भी है, किन्तु सम्यक्त्व, आभिनिबोधिकज्ञान और श्रुतज्ञान में इन दोनों के मध्य के समवसरण में भवसिद्धिक हैं, अभवसिद्धिक नहीं। शेष पूर्ववत्। पञ्चेन्द्रिय तिर्यंच-योनिक जीव नैरयिक के तुल्य हैं, किन्तु उनमें जो बोल पाये जाते हों, वे कहने चाहिये। मनुष्य, औधिक जीव के समान हैं। वाणव्यन्तर, ज्योतिषी और वैमानिक देव का निरूपण असुरकुमार के समान है।

'हे भगवन्! यह इसी प्रकार है। हे भगवन्! यह इसी प्रकार है'—कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं।

## ॥ तीसवें शतक का प्रथम उद्देशक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# शतक ३० उद्देशक २

## अनन्तरोपपन्नक क्रियावादी०

१ प्रश्न–अणंतरोववण्णगा णं भंते ! णेरइया किं किरियावाई–पुच्छा ।

१ उत्तर–गोयमा ! किरियावाई वि जाव वेणइयवाई वि ।

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! अनन्तरोपपन्नक नैरयिक क्रियावादी हैं० ?

१ उत्तर–हे गौतम ! क्रियावादी भी हैं यावत् विनयवादी भी हैं ।

२ प्रश्न–सलेस्सा णं भंते ! अणंतरोववण्णगा णेरइया किं किरियावाई० ?

२ उत्तर–एवं चेव, एवं जहेव पढमुद्देसे णेरइयाणं वत्तव्वया तहेव इह वि भाणियव्वा । णवरं जं जस्स अत्थि अणंतरोववण्णगाणं णेरइयाणं तं तस्स भाणियव्वं । एवं सव्वजीवाणं जाव वेमाणियाणं । णवरं अणंतरोववण्णगाणं जं जहिं अत्थि तं तहिं भाणियव्वं ।

भावर्थ–२ प्रश्न–हे भगवन् ! सलेशी अनन्तरोपपन्नक नैरयिक क्रियावादी हैं० ?

२ उत्तर–हे गौतम ! प्रथम उद्देशक के समान । किन्तु अनन्तरोपपन्नक नैरयिक में जो संभव हो, उसी का निरूपण करना चाहिये । इसी प्रकार सर्व जीव यावत् वैमानिक पर्यन्त । अनन्तरोपपन्नक जीव में जहां जो संभव हो,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वही जानना चाहिये ।

३ प्रश्न–किरियावाई णं भंते ! अणंतरोववण्णगा णेरइया किं णेरइयाउयं पकरेंति–पुच्छा ।

३ उत्तर–गोयमा ! णो णेरइयाउयं पकरेंति, णो तिरि०, णो मणु०, णो देवाउयं पकरेंति । एवं अकिरियावाई वि अण्णाणियवाई वि वेणइयवाई वि ।

भावार्थ–३ प्रश्न–हे भगवन् ! क्रियावादी अनन्तरोपपन्नक नैरयिक, नैरयिक का आयु बांधते हैं० ?

३ उत्तर–हे गौतम ! नैरयिक, तिर्यंच, मनुष्य और देव का आयु नहीं बांधते । इसी प्रकार अक्रियावादी, अज्ञानवादी और विनयवादी भी ।

४ प्रश्न–सलेस्सा णं भंते ! किरियावाई अणंतरोववण्णगा णेरइया किं णेरइयाउयं–पुच्छा ।

४ उत्तर–गोयमा ! णो णेरइयाउयं पकरेंति जाव णो देवाउयं पकरेंति । एवं जाव वेमाणिया । एवं सव्वट्ठाणेसु वि अणंतरोववण्णगा णेरइया ण किंचि वि आउयं पकरेंति जाव अणागारोवउत्तत्ति । एवं जाव वेमाणिया, णवरं जं जस्स अत्थि तं तस्स भाणियव्वं ।

भावार्थ–४ प्रश्न हे भगवन् ! सलेशी अनन्तरोपपन्नक क्रियावादी नैरयिक, नैरयिक का आयु बांधते हं० ?

४ उत्तर–हे गौतम ! नैरयिक यावत् देव किसी का आयु नहीं बांधते ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इसी प्रकार यावत् वैमानिक पर्यन्त। इस प्रकार सभी स्थानों में अनन्तरोपपन्नक नैरयिक किसी भी आयु का बन्ध नहीं करते यावत् अनाकारोपयुक्त पर्यन्त और इसी प्रकार वैमानिक पर्यन्त, जिसके जो संभव हो, वही जानना चाहिये।

५ प्रश्न-किरियावाई णं भंते ! अणंतरोववण्णगा णेरइया किं भवसिद्धिया, अभवसिद्धिया ?

५ उत्तर-गोयमा ! भवसिद्धिया, णो अभवसिद्धिया।

भावार्थ-५ प्रश्न-हे भगवन् ! क्रियावादी अनन्तरोपपन्नक नैरयिक भवसिद्धिक हैं० ?

५ उत्तर-हे गौतम ! अभवसिद्धिक नहीं, भवसिद्धिक हैं।

६ प्रश्न-अकिरियावाई णं-पुच्छा।

६ उत्तर-गोयमा ! भवसिद्धिया वि, अभवसिद्धिया वि। एवं अण्णाणियवाई वि वेणइयवाई वि।

भावार्थ-६ प्रश्न-हे भगवन् ! अक्रियावादी अनन्तरोपपन्नक नैरयिक, भवसिद्धिक हैं० ?

६ उत्तर-हे गौतम ! वे भवसिद्धिक भी हैं और अभवसिद्धिक भी। इसी प्रकार अज्ञानवादी और विनयवादी भी।

७ प्रश्न-सलेस्सा णं भंते ! किरियावाई अणंतरोववण्णगा णेरइया किं भवसिद्धिया, अभवसिद्धिया ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

७ उत्तर-गोयमा ! भवसिद्धिया, णो अभवसिद्धिया । एवं एएणं अभिलावेणं जहेव ओहिए उद्देसए णेरइयाणं वत्तव्वया भणिया तहेव इह वि भाणियव्वा जाव अणागारोवउत्तत्ति । एवं जाव वेमाणियाणं। णवरं जं जस्स अत्थि तं तस्स भाणियव्वं । इमं से लक्खणं-जे किरियावाई सुक्कपक्खिया सम्मामिच्छदिट्ठीया एए सव्वे भवसिद्धिया, णो अभवसिद्धिया, सेसा सव्वे भवसिद्धिया वि अभवसिद्धिया वि ।

❀ 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति ❀

॥ तीसइमे सए बीओ उद्देसो समत्तो ॥

भावार्थ-७ प्रश्न-हे भगवन् ! सलेशी अनन्तरोपपन्नक क्रियावादी नैरयिक, भवसिद्धिक हैं० ?

७ उत्तर-हे गौतम ! भवसिद्धिक हैं, अभवसिद्धिक नहीं । इसी प्रकार इस अभिलाप से, औधिक उद्देशक में नैरयिक की वक्तव्यता है, उसी प्रकार यहां भी समझना चाहिये, यावत् अनाकारोपयुक्त और वैमानिक पर्यन्त, जिसके जो हो, वही समझना चाहिये । उसका लक्षण यह है कि क्रियावादी, शुक्ल-पाक्षिक और सम्यग्मिथ्यादृष्टि, ये सभी भवसिद्धिक हैं, अभवसिद्धिक नहीं । शेष सभी भवसिद्धिक भी हैं और अभवसिद्धिक भी ।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'-कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

**विवेचन**-तत्काल उत्पन्न हुआ जीव 'अनन्तरोपपन्नक' कहलाता है । इस दूसरे उद्देशक में सभी कथन अनन्तरोपपन्नक की अपेक्षा किया है ।

क्रियावादी, शुक्लपाक्षिक और सम्यग्मिथ्यादृष्टि, ये भव्य ही होते हैं, अभव्य नहीं ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शेष जीव भव्य और अभव्य दोनों प्रकार के होते हैं। अलेश्या, सम्यग्दृष्टि, ज्ञानी, अवेदी, अकषायी और अयोगी, ये भी भव्य ही होते हैं। इनका समावेश क्रियावादी में हो गया है। इसलिये यहां इनका पृथक् निर्देश नहीं किया है।

॥ तीसवें शतक का दूसरा उद्देशक सम्पूर्ण ॥

# शतक ३० उद्देशक ३

## परम्परोपपन्नक क्रियावादी

१ प्रश्न-परंपरोववण्णगा णं भंते ! णेरइया किरियावाई० ?

१ उत्तर-एवं जहेव ओहिओ उद्देसओ तहेव परंपरोववण्णएसु वि णेरइयाईओ तहेव णिरवसेसं भाणियव्वं, तहेव तियदंडगसंगहिओ।

❀ 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति जाव विहरइ ❀

॥ तीसइमे सए तईओ उद्देसो समत्तो ॥

कठिन शब्दार्थ-तियदंडगसंगहिओ-त्रिदण्डकसंगृहीत-तीन दण्डकों से युक्त।

भावार्थ-१ प्रश्न-हे भगवन् ! परम्परोपपन्नक नैरयिक क्रियावादी हैं०?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१ उत्तर-हे गौतम ! औधिक उद्देशकानुसार परम्परोपपन्नक नैरयिक भी हैं और नैरयिक से ले कर वैमानिक पर्यन्त समग्र उद्देशक भी उसी प्रकार, तीन दण्डक सहित जानना चाहिये ।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'-कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

**विवेचन**-जिन जीवों को उत्पन्न हुए एक समय से अधिक हो गया है, वे 'परंपरोपपन्नक' कहलाते हैं । इनके लिये औधिक उद्देशक का अतिदेश किया है ।

क्रियावादित्व आदि की प्ररूपणा करना, यह एक दण्डक है । आयु-बन्ध की प्ररूपणा का दूसरा दण्डक है और भव्याभव्यत्व की प्ररूपणा का तीसरा दण्डक है । इन तीन दण्डकों सहित यहां कथन करना चाहिये ।

## ।। तीसवें शतक का तीसरा उद्देशक सम्पूर्ण ।।

# शतक ३० उद्देशक ४-११

## समुच्चय क्रियावादी०

१-एवं एएणं कमेणं जच्चेव बंधिसए उद्देसगाणं परिवाडी सच्चेव इहं पि जाव अचरिमो उद्देसो । णवरं अणंतरा चत्तारि वि एक्कगमगा, परंपरा चत्तारि वि एक्कगमएणं । एवं चरिमा वि अच-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रिमा वि एवं चेव । णवरं अलेस्सो केवली अजोगी ण भण्णइ, सेसं तहेव ।

❀ 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति एए एक्कारस वि उद्देसगा । ४-११ ❀

॥ तीसइमं समवसरण सयं समत्तं ॥

भावार्थ-१-इसी प्रकार और इस क्रम से बन्धी-शतक में उद्देशकों की जो परिपाटी है, वही परिपाटी यहां भी, यावत् अचरम उद्देशक पर्यन्त समझनी चाहिये । 'अनन्तर' शब्द से विशेषित चार उद्देशक एकगम वाले (एक समान) हैं और 'परम्पर' शब्द से विशेषित चार उद्देशक एकगम वाले हैं । इसी प्रकार 'चरम' और 'अचरम' शब्द से विशेषित उद्देशकों के विषय में भी समझना चाहिये, किन्तु अलेशी, केवली और अयोगी का कथन यहां नहीं करना चाहिये । शेष पूर्ववत् । इस प्रकार ये ग्यारह उद्देशक हुए ।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'-कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

विवेचन-जो जीव अचरम हैं, वे अलेशी, केवलज्ञानी और अयोगी नहीं हो सकते । इसलिये अचरम उद्देशक में उनका कथन नहीं करना चाहिये ।

॥ तीसवें शतक के ४-११ उद्देशक समाप्त ॥

## ॥ तीसवां शतक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# शतक ३१

## (उपपात शतक)

## शतक ३१ उद्देशक १

### क्षुद्रयुग्म

१ प्रश्न–रायगिहे जाव एवं वयासी–कइ णं भंते ! खुड्डा जुम्मा पण्णत्ता ?

१ उत्तर–गोयमा ! चत्तारि खुड्डा जुम्मा पण्णत्ता । तं जहा–१ कडजुम्मे २ तेयोए ३ दावरजुम्मे ४ कलिओए ।

प्रश्न–से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ–'चत्तारि खुड्डा जुम्मा पण्णत्ता, तं जहा–कडजुम्मे जाव कलिओए' ?

उत्तर–गोयमा ! जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चउपज्जवसिए सेत्तं खुड्डागकडजुम्मे। जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे तिपज्जवसिए सेत्तं खुड्डागतेओगे। जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे दुपज्जवसिए सेत्तं खुड्डागदावरजुम्मे। जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे एगपज्जवसिए सेत्तं खुड्डागकलिओगे। से तेणट्ठेणं जाव कलिओगे।

कठिन शब्दार्थ–खुड्डा–क्षुद्र–लघु, जुम्मा–युग्म–राशि।

भावार्थ–१ प्रश्न–राजगृह नगर में गौतम स्वामी ने यावत् इस प्रकार पूछा–हे भगवन्! क्षुद्रयुग्म कितने कहे हैं?

१ उत्तर–हे गौतम! क्षुद्रयुग्म चार कहे हैं। यथा–कृतयुग्म, त्र्योज, द्वापरयुग्म और कल्योज।

प्रश्न–हे भगवन्! कृतयुग्म यावत् कल्योज–ये चार क्षुद्रयुग्म क्यों कहे हैं?

उत्तर–हे गौतम! जिस राशि में से चार-चार का अपहार करते हुए अन्त में चार रहे, उसे 'क्षुद्रकृतयुग्म' कहते हैं। जिसमें से चार-चार का अपहार करते हुए अन्त में तीन शेष रहे, उसे 'क्षुद्रत्र्योज' कहते हैं। जिसमें से चार-चार का अपहार करते हुए अन्त में दो शेष रहे, उसे 'क्षुद्रद्वापरयुग्म' कहते हैं और जिस राशि में से चार-चार का अपहार करते अन्त में एक ही शेष रहे, उसे 'क्षुद्रकल्योज' कहते हैं। इस कारण हे गौतम! यावत् कल्योज कहा है।

२ प्रश्न–खुड्डागकडजुम्मणेरइया णं भंते! कओ उववज्जंति? किं णेरइएहिंतो उववज्जंति? तिरिक्ख–पुच्छा?

२ उत्तर–गोयमा! णो णेरइएहिंतो उववज्जंति। एवं णेरइयाणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उववाओ जहा वक्कंतीए तहा भाणियव्वो ।

भावार्थ-२ प्रश्न-हे भगवन् ! क्षुद्रकृतयुग्म राशि परिमाण नैरयिक कहां से आ कर उत्पन्न होते हैं ? क्या नैरयिक, तिर्यंच० ?

२ उत्तर-हे गौतम ! नैरयिक से आ कर उत्पन्न नहीं होते, (किन्तु पञ्चेन्द्रिय तिर्यंच और गर्भज मनुष्य से आ कर उत्पन्न होते हैं) इत्यादि प्रज्ञापना सूत्र के छठे व्युत्क्रान्ति पद में नैरयिक के उपपात के अनुसार ।

३ प्रश्न-ते णं भंते ! जीवा एगसमएणं केवइया उववज्जंति ?

३ उत्तर-गोयमा ! चत्तारि वा अट्ठ वा बारस वा सोलस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा उववज्जंति ।

भावार्थ-३ प्रश्न-हे भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ?

३ उत्तर-हे गौतम ! चार, आठ, बारह, सोलह, संख्यात या असंख्यात उत्पन्न होते हैं ।

४ प्रश्न-ते णं भंते ! जीवा कहं उववज्जंति ?

४ उत्तर-गोयमा ! से जहाणामए पवए पवमाणे अज्झवसाण०-एवं जहा पंचविंसइमे सए अट्ठमुद्देसए णेरइयाणं वत्तव्वया तहेव इह वि भाणियव्वा जाव आयप्पओगेणं उववज्जंति णो परप्पओगेणं उववज्जंति ।

भावार्थ-४ प्रश्न-हे भगवन् ! वे जीव किस प्रकार उत्पन्न होते हैं ?

४ उत्तर-हे गौतम ! जिस प्रकार कोई कूदने वाला कूदता हुआ (अपने पूर्व स्थान को छोड़ कर आगे के स्थान को प्राप्त करता है, इसी प्रकार

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नैरयिक भी पूर्ववर्ती भव को छोड़ कर अध्यवसाय रूप कारण से अगले भव को प्राप्त करते हैं) इत्यादि पच्चीसवें शतक के आठवें उद्देशक में नैरयिक संबंधी कथनानुसार यावत् वे आत्म-प्रयोग से उत्पन्न होते हैं, पर-प्रयोग से नहीं।

५ प्रश्न–रयणप्पभापुढविखुड्डागकडजुम्मणेरइया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?

५ उत्तर–एवं जहा ओहियणेरइयाणं वत्तव्वया सच्चेव रयणप्पभाए वि भाणियव्वा जाव णो परप्पओगेणं उववज्जंति। एवं सक्करप्पभाए वि जाव अहेसत्तमाए एवं उववाओ जहा वक्कंतीए। "असण्णी खलु पढमं दोच्चं व सरीसवा तइय पक्खी"। गाहाए उववाएयव्वा, सेसं तहेव।

कठिन शब्दार्थ–सरीसवा–सरीसृप––गोह आदि।

भावार्थ–५ प्रश्न–हे भगवन्! क्षुद्रकृतयुग्म राशि प्रमाण रत्नप्रभा पृथ्वी के नैरयिक कहां से आ कर उत्पन्न होते हैं० ?

५ उत्तर–हे गौतम! औधिक नैरयिक की वक्तव्यतानुसार रत्नप्रभा पृथ्वी के नैरयिक भी, यावत् वे पर-प्रयोग से उत्पन्न नहीं होते पर्यन्त। इसी प्रकार शर्कराप्रभा यावत् अधःसप्तम पृथ्वी तक, प्रज्ञापना सूत्र के छठे व्युत्क्रांति पद के अनुसार यहाँ भी उपपात जानना चाहिये। यावत् 'असंज्ञी जीव पहली नरक तक, सरीसृप (भुजपरिसृप) दूसरी नरक तक और पक्षी तीसरी नरक तक उत्पन्न होते हैं' इत्यादि गाथा से उपपात जानना चाहिये। शेष पूर्ववत्।

६ प्रश्न–खुड्डागतेओगणेरइया णं भंते ! कओ उववज्जंति ? किं णेरइएहिंतो० ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

६ उत्तर–उववाओ जहा वक्कंतीए ।

भावार्थ–६ प्रश्न–हे भगवन् ! क्षुद्रत्र्योज राशि प्रमाण नैरयिक कहाँ से आ कर उत्पन्न होते हैं० ?

६ उत्तर–हे गौतम ! प्रज्ञापना सूत्र के छठे व्युत्क्रान्ति पद के अनुसार उपपात जानना चाहिये ।

७ प्रश्न–ते णं भंते ! जीवा एगसमएणं केवइया उववज्जंति ?

७ उत्तर–गोयमा ! तिण्णि वा सत्त वा एक्कारस वा पण्णरस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा उववज्जंति । सेसं जहा कडजुम्मस्स, एवं जाव अहेसत्तमाए ।

भावार्थ–७ प्रश्न–हे भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ?

७ उत्तर–हे गौतम ! तीन, सात, ग्यारह, पन्द्रह, संख्यात या असंख्यात उत्पन्न होते हैं । शेष सभी कृतयुग्म नैरयिक के समान यावत् अधःसप्तम पृथ्वी पर्यन्त ।

८ प्रश्न–खुड्डागदावरजुम्मणेरइया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?

८ उत्तर–एवं जहेव खुड्डागकडजुम्मे । णवरं परिमाणं दो वा छ वा दस वा चोद्दस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा, सेसं तं चेव जाव अहेसत्तमाए ।

भावार्थ–८ प्रश्न–हे भगवन् ! क्षुद्रद्वापरयुग्म राशि प्रमाण नैरयिक कहाँ से आ कर उत्पन्न होते हैं० ?

८ उत्तर–हे गौतम ! क्षुद्रकृतयुग्म राशि के अनुसार । परिमाण–दो,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

छह, दस, चौदह, संख्यात या असंख्यात उत्पन्न होते हैं। शेष पूर्ववत्, यावत् अधःसप्तम पृथ्वी पर्यन्त।

९ प्रश्न–खुड्डागकलियोगणेरइया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?

९ उत्तर–एवं जहेव खुड्डागकडजुम्मे। णवरं परिमाणं एको वा पंच वा णव वा तेरस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा उववज्जंति सेसं तं चेव। एवं जाव अहेसत्तमाए।

❀ 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति २ जाव विहरइ ❀

॥ इक्कतीसइमे सए पढमो उद्देसो समत्तो ॥

भावार्थ–९ प्रश्न–हे भगवन् ! क्षुद्रकल्योज राशि प्रमाण नैरयिक कहाँ से आ कर उत्पन्न होते हैं ?

९ उत्तर–हे गौतम ! क्षुद्रकृतयुग्म राशि के अनुसार। परिमाण एक, पाँच, नौ, तेरह, संख्यात या असंख्यात उत्पन्न होते हैं। शेष पूर्ववत् यावत् अधः सप्तम पृथ्वी पर्यन्त।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है। हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'–कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं।

विवेचन–लघु (अल्प) संख्या वाली राशि को 'क्षुद्रयुग्म' कहते हैं। इनमें से चार, आठ, बारह आदि संख्या वाली राशि 'क्षुद्रकृतयुग्म' कहलाती है। तीन, सात, ग्यारह आदि संख्या वाली राशि 'क्षुद्रत्र्योज' कहलाती है। दो, छह, दस आदि संख्या वाली राशि 'क्षुद्र-द्वापरयुग्म' कहलाती है। एक, पाँच, नौ आदि संख्या वाली राशि 'क्षुद्रकल्योज' कहलाती है।

॥ इकत्तीसवें शतक का प्रथम उद्देशक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# शतक ३१ उद्देशक २

## कृष्णलेश्या वाले नैरयिक की उत्पत्ति

१ प्रश्न–कण्हलेस्सखुड्डागकडजुम्मणेरइया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?

१ उत्तर–एवं चेव जहा ओहियगमो जाव णो परप्पओगेणं उववज्जंति । णवरं उववाओ जहा वक्कंतीए धूमप्पभापुढविणेरइयाणं, सेसं तं चेव ।

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! क्षुद्रकृतयुग्म राशि प्रमाण कृष्णलेश्या वाले नैरयिक कहाँ से आ कर उत्पन्न होते हैं० ?

१ उत्तर–हे गौतम ! औधिक गमक के अनुसार, यावत् पर-प्रयोग से उत्पन्न नहीं होते । यहाँ भी प्रज्ञापना सूत्र के छठे व्युत्क्रान्ति पद के अनुसार । धूमप्रभा पृथ्वी के नैरयिकों का उपपात कहना चाहिये तथा प्रश्न और उत्तर पूर्ववत् जानना चाहिये ।

२ प्रश्न–धूमप्पभापुढविकण्हलेस्सखुड्डागकडजुम्मणेरइया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?

२ उत्तर–एवं चेव णिरवसेसं । एवं तमाए वि, अहेसत्तमाए वि । णवरं उववाओ सव्वत्थ जहा वक्कंतीए ।

भावार्थ–२ प्रश्न–हे भगवन् ! क्षुद्रकृतयुग्म राशि प्रमाण कृष्णलेश्या वाले

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

धूमप्रभा पृथ्वी के नैरयिक कहां से आ कर उत्पन्न होते हैं० ?

२ उत्तर-हे गौतम ! पूर्ववत् । इसी प्रकार तमःप्रभा और अधःसप्तम पृथ्वी पर्यन्त । सभी स्थानों में उपपात होता है-प्रज्ञापना सूत्र के छठे व्युत्क्रान्तिपद के अनुसार ।

३ प्रश्न-कण्हलेस्सखुड्डागतेओगणेरइया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?

३ उत्तर-एवं चेव, णवरं तिण्णि वा सत्त वा एक्कारस वा पण्णरस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा, सेसं तं चेव । एवं जाव अहेसत्तमाए वि ।

भावार्थ-३ प्रश्न-हे भगवन् ! क्षुद्रकृयोज राशि प्रमाण कृष्णलेश्या वाले नैरयिक कहां से आ कर उत्पन्न होते हैं० ?

३ उत्तर-हे गौतम ! पूर्ववत् । तीन, सात, ग्यारह, पन्द्रह, संख्यात या असंख्यात उत्पन्न होते हैं । शेष पूर्ववत् । इसी प्रकार यावत् अधःसप्तम पृथ्वी पर्यन्त ।

४ प्रश्न-कण्हलेस्सखुड्डागदावरजुम्मणेरइया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?

४ उत्तर-एवं चेव । णवरं दो वा छ वा दस वा चोद्दस वा, सेसं तं चेव, धूमप्पभाए वि जाव अहेसत्तमाए ।

भावार्थ-४ प्रश्न-हे भगवन् ! कृष्णलेश्या वाले क्षुद्रद्वापरयुग्म राशि प्रमाण नैरयिक कहां से आ कर उत्पन्न होते हैं० ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

४ उत्तर—हे गौतम ! पूर्ववत् । परिमाण—दो, छह, दस, चौदह, संख्यात या असंख्यात उत्पन्न होते हैं । शेष पूर्ववत् । इसी प्रकार धूमप्रभा यावत् अधःसप्तम पृथ्वी पर्यन्त ।

५ प्रश्न—कण्हलेस्सखुड्डागकलिओग णेरइया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?

५ उत्तर—एवं चेव । णवरं एक्को वा पंच वा णव वा तेरस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा, सेसं तं चेव । एवं धूमप्पभाए वि, तमाए वि, अहेसत्तमाए वि ।

'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति

॥ इक्कतीसइमे सए बीओ उद्देसो समत्तो ॥

भावार्थ—५ प्रश्न—हे भगवन् ! कृष्णलेश्या वाले क्षुद्रकल्योज राशि प्रमाण नैरयिक कहां से आ कर उत्पन्न होते हैं० ?

५ उत्तर—हे गौतम ! पूर्ववत् । परिमाण—एक, पांच, नौ, तेरह, संख्यात या असंख्यात उत्पन्न होते हैं । शेष पूर्ववत् । इसी प्रकार धूमप्रभा, तमःप्रभा और अधःसप्तम पृथ्वी पर्यन्त ।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'—कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

विवेचन—इस दूसरे उद्देशक में कृष्णलेश्या वाले नैरयिकों का कथन किया है । यह लेश्या पाँचवीं, छठी और सातवीं नरक के नैरयिकों में होती है । सामान्य दण्डक और तीन नरक विषयक तीन दण्डक, इस प्रकार यहां कुल चार दण्डक होते हैं । इनका उपपात प्रज्ञापना सूत्र के छठे व्युत्क्रान्ति पद के अनुसार है । इनमें असंज्ञी, सरीसृप, पक्षी और सिंह (सभी चतुष्पद) के अतिरिक्त दूसरे तिर्यञ्च पंचेन्द्रिय और गर्भज मनुष्य उत्पन्न होते हैं ।

## ॥ इकतीसवें शतक का दूसरा उद्देशक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# शतक ३१ उद्देशक ३

## नील लेश्या वाले नैरयिक की उत्पत्ति

१ प्रश्न–णीललेस्सखुड्डागकडजुम्मणेरइया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?

१ उत्तर–एवं जहेव कण्हलेस्सखुड्डागकडजुम्मा । णवरं उववाओ जो वालुयप्पभाए, सेसं तं चेव । वालुयप्पभापुढविणीललेस्सखुड्डागकडजुम्मणेरइया एवं चेव, एवं पंकप्पभाए वि, एवं धूमप्पभाए वि । एवं चउसु वि जुम्मेसु । णवरं परिमाणं जाणियव्वं । परिमाणं जहा कण्हलेस्सउद्देसए । सेसं तहेव ।

'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति

॥ इक्कतीसइमे सए तईओ उद्देसो समत्तो ॥

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! नीललेश्या वाले क्षुद्रकृतयुग्म प्रमाण नैरयिक कहां से आ कर उत्पन्न होते हैं० ?

१ उत्तर–हे गौतम ! कृष्णलेश्या वाले क्षुद्रकृतयुग्म नैरयिक के समान, किन्तु उपपात वालुकाप्रभा के समान है । शेष पूर्ववत् । इसी प्रकार वालुकाप्रभा पृथ्वी के नीललेश्या वाले क्षुद्रकृतयुग्म नैरयिक और पङ्कप्रभा और धूमप्रभा के विषय में भी चारों युग्म का कथन करना चाहिये । परिमाण

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कृष्णलेश्या के उद्देशक के अनुसार है। शेष पूर्ववत्।

'हे भगवन्! यह इसी प्रकार है। हे भगवन्! यह इसी प्रकार है'–कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं।

**विवेचन**–तीसरे उद्देशक में नीललेश्या वाले नैरयिकों की प्ररूपणा की गई है। नीललेश्या तीसरी, चौथी और पाँचवीं नरक में होती है। इसलिए एक सामान्य दण्डक और तीन नरकों के तीन दण्डक, इस प्रकार चार दण्डक कहे हैं। यहाँ नीललेश्या का प्रकरण चल रहा है। वह वालुकाप्रभा आदि में ही होती है। इसलिए उनमें जिन जीवों का उत्पाद होता है, उन्हीं का उत्पाद जानना चाहिए। इसमें असंज्ञी और सरीसृप के अतिरिक्त शेष तिर्यञ्च पंचेन्द्रिय और गर्भज मनुष्य उत्पन्न होते हैं।

## ॥ इकतीसवें शतक का तीसरा उद्देशक सम्पूर्ण ॥

# शतक ३१ उद्देशक ४

## कापोतलेशी नैरयिक की उत्पत्ति

१ प्रश्न–काउलेस्सखुड्डागकडजुम्मणेरइया णं भंते! कओ उववज्जंति?

१ उत्तर–एवं जहेव कण्हलेस्सखुड्डागकडजुम्म०, णवरं उववाओ जो रयणप्पभाए, सेसं तं चेव।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ-१ प्रश्न-हे भगवन् ! कापोतलेश्या वाले क्षुद्रकृतयुग्म राशि प्रमाण नैरयिक कहां से आ कर उत्पन्न होते हैं० ?

१ उत्तर-हे गौतम ! कृष्णलेश्या वाले क्षुद्रकृतयुग्म नैरयिक के समान उपपात रत्नप्रभा के अनुसार । शेष पूर्ववत् ।

२ प्रश्न-रयणप्पभापुढविकाउलेस्सखुड्डागकडजुम्मणेरइया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?

२ उत्तर-एवं चेव । एवं सक्करप्पभाए वि, एवं वालुयप्पभाए वि । एवं चउसु वि जुम्मेसु । णवरं परिमाणं जाणियव्वं, परिमाणं जहा कण्हलेस्सउद्देसए, सेसं तं चेव ।

❀ 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति ❀

॥ इक्तीसइमे सए चउत्थो उद्देसो समत्तो ॥

भावार्थ-२ प्रश्न-हे भगवन् ! कापोतलेश्या वाले क्षुद्रकृतयुग्म राशि प्रमाण रत्नप्रभा पृथ्वी के नैरयिक कहां से आ कर उत्पन्न होते हैं० ?

२ उत्तर-हे गौतम ! पूर्ववत् । इस प्रकार शर्कराप्रभा में और वालुकाप्रभा में चारों युग्म का निरूपण करना चाहिए । परिमाण कृष्णलेश्या उद्देशक के अनुसार ।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'--कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

**विवेचन**--इस चौथे उद्देशक में कापोतलेश्या वाले नैरयिकों का कथन किया है । कापोतलेश्या पहली, दूसरी और तीसरी नरक में होती है । इसलिये एक सामान्य दण्डक

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

और इन तीन नरकों के तीन दण्डक, यों इस उद्देशक में चार दण्डक कहे हैं। सामान्य दण्डक में रत्नप्रभा के समान उपपात जानना चाहिये।

॥ इकत्तीसवें शतक का चौथा उद्देशक सम्पूर्ण ॥

# शतक ३१ उद्देशक ५

## भवसिद्धिक नैरयिक की उत्पत्ति

१ प्रश्न-भवसिद्धियखुड्डागकडजुम्मणेरइया णं भंते ! कओ उववज्जंति ? किं णेरइय० ?

१ उत्तर-एवं जहेव ओहिओ गमओ तहेव णिरवसेसं जाव णो परप्पओगेणं उववज्जंति।

भावार्थ-१ प्रश्न-हे भगवन् ! क्षुद्रकृतयुग्म राशि प्रमाण भवसिद्धिक नैरयिक कहां से आ कर उत्पन्न होते हैं० ?

१ उत्तर-हे गौतम ! औधिक गमक के अनुसार, यावत् वे पर-प्रयोग से उत्पन्न नहीं होते।

२ प्रश्न-रयणप्पभापुढविभवसिद्धियखुड्डागकडजुम्मणेरइया णं भंते० ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२ उत्तर–एवं चेव, णिरवसेसं, एवं जाव अहेसत्तमाए । एवं भवसिद्धियखुड्डागतेओगणेरइया वि। एवं जाव कलिओग त्ति । णवरं परिमाणं जाणियव्वं, परिमाणं पुव्वभणियं जहा पढमुद्देसए ।

❀ 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति ❀

॥ इकतीसइमे सए पंचमो उद्देसो समत्तो ॥

भावार्थ–२ प्रश्न–हे भगवन् ! रत्नप्रभा पृथ्वी के क्षुद्रकृतयुग्म राशि प्रमाण भवसिद्धिक नैरयिक कहां से आ कर उत्पन्न होते हैं० ?

२ उत्तर–हे गौतम ! पूर्ववत्, यावत् अधःसप्तम पृथ्वी तक । इसी प्रकार भवसिद्धिक क्षुद्रत्र्योज राशि प्रमाण नैरयिक के विषय में यावत् कल्योज पर्यन्त जानना चाहिये । परिमाण प्रथम उद्देशक के अनुसार ।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'— कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

॥ इकत्तीसवें शतक का पांचवां उद्देशक सम्पूर्ण ॥

# शतक ३१ उद्देशक ६

## कृष्णलेशी भवसिद्धिक की उत्पत्ति

१ प्रश्न–कण्हलेस्सभवसिद्धियखुड्डागकडजुम्मणेरइया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१ उत्तर-एवं जहेव ओहिओ कण्हलेस्सउद्देसओ तहेव णिरवसेसं चउसु वि जुम्मेसु भाणियव्वो जाव-

प्रश्न-अहेसत्तमपुढविकण्हलेस्सखुड्डागकलिओगणेरइया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?

उत्तर-तहेव । ❀ 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति ❀

॥ इकतीसइमे सए छट्ठो उद्देसो समत्तो ॥

भावार्थ-१ प्रश्न-हे भगवन् ! कृष्णलेश्या वाले भवसिद्धिक क्षुद्रकृतयुग्म प्रमाण नैरयिक कहाँ से आ कर उत्पन्न होते हैं० ?

१ उत्तर-हे गौतम ! औधिक कृष्णलेश्या के उद्देशक के अनुसार चारों युग्म का कथन करना चाहिये ।

प्रश्न-हे भगवन् ! अधःसप्तम पृथ्वी के कृष्णलेश्या वाले क्षुद्रकल्योज राशि प्रमाण नैरयिक कहाँ से आ कर उत्पन्न होते हैं० ?

उत्तर-हे गौतम ! पूर्ववत् ।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'-- कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

॥ इकतीसवें शतक का छठा उद्देशक सम्पूर्ण ॥

## शतक ३१ उद्देशक ७—२८

### समुच्चय उत्पत्ति

-णीललेस्सभवसिद्धिया चउसु वि जुम्मेसु तहेव भाणियव्वा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जहा ओहिए णीललेस्सउद्देसए । 'सेवं भंते०' । ३१-७ ।

भावार्थ-नीललेश्या वाले भवसिद्धिक नैरयिकों के चारों युग्म का कथन औधिक नीललेश्या उद्देशक के अनुसार ॥७॥

-काउलेस्सा भवसिद्धिया चउसु वि जुग्मेसु तहेव उववाएयव्वा जहेव ओहिए काउलेस्सउद्देसए । 'सेवं भंते०' । ३१-८ ।

भावार्थ-कापोतलेश्या वाले भवसिद्धिक नैरयिक के चारों युग्म का निरूपण औधिक कापोत लेश्या उद्देशक के अनुसार ॥८॥

-जहा भवसिद्धिएहिं चत्तारि उद्देसगा भणिया एवं अभवसिद्धिएहि वि चत्तारि उद्देसगा भाणियव्वा जाव काउलेस्सउद्देसओ त्ति । 'सेवं भंते०' । ३१-९-१२ ।

भावार्थ-जिस प्रकार भवसिद्धिक के चार उद्देशक कहे हैं, उसी प्रकार अभवसिद्धिक के भी चार उद्देशक, कापोतलेश्या उद्देशक पर्यन्त हैं ॥९-१२॥

-एवं सम्मदिट्ठीहि वि लेस्सासंजुत्तेहिं चत्तारि उद्देसगा कायव्वा, णवरं सम्मदिट्ठी पढमबिइएसु वि दोसु वि उद्देसएसु अहेसत्तमापुढवीए ण उववाएयव्वो, सेसं तं चेव । 'सेवं भंते०' । ३१-१३-१६ ।

भावार्थ-इसी प्रकार सम्यग्दृष्टि के भी लेश्या सहित चार उद्देशक हैं । पहले और दूसरे उद्देशक में सम्यग्दृष्टि का अधःसप्तम नरक पृथ्वी में उपपात नहीं कहना, शेष पूर्ववत् ॥१३-१६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

-मिच्छादिट्ठीहि वि चत्तारि उद्देसगा कायव्वा जहा भवसिद्धियाणं । 'सेवं भंते० '। ३१-१७-२० ।

भावार्थ-भवसिद्धिक के समान मिथ्यादृष्टि के भी चार उद्देशक हैं । । १७-२० ।

---

-एवं कण्हपक्खिएहि वि लेस्सासंजुत्तेहिं चत्तारि उद्देसगा कायव्वा जहेव भवसिद्धिएहिं । 'सेवं भंते० '। ३१-२१-२४ ।

भावार्थ-इसी प्रकार कृष्णपाक्षिक के लेश्या सहित चार उद्देशक भी भवसिद्धिक के समान हैं । २१-२४ ।

---

-सुक्कपक्खिएहिं एवं चेव चत्तारि उद्देसगा भाणियव्वा । जाव वालुयप्पभापुढविकाउलेस्ससुक्कपक्खियखुड्डागकलिओगणेरइया णं भंते ! कओ उववज्जंति ? तहेव जाव णो परप्पओगेणं उववज्जंति । 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति । सव्वे वि एए अट्ठावीसं उद्देसगा ।

। ३१-२५-२८ ।

॥ इक्कतीसइमे सए ७-२८ उद्देसगा समत्ता ॥

॥ इक्कतीसइमं उववायसयं समत्तं ॥

भावार्थ-इसी प्रकार शुक्लपाक्षिक के भी लेश्या सहित चार उद्देशक हैं। यावत् हे भगवन् ! वालुकाप्रभा पृथ्वी के कापोतलेश्या वाले शुक्लपाक्षिक क्षुद्रकल्योज राशि प्रमाण नैरयिक कहाँ से आ कर उत्पन्न होते हैं ?

उत्तर-हे गौतम ! पूर्ववत् । यावत् वे पर-प्रयोग से उत्पन्न नहीं होते ।

। २५-२८ ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'- कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

ये सभी अट्ठाईस उद्देशक हैं ।

॥ इकत्तीसवें शतक के ७-२८ उद्देशक समाप्त ॥

## ॥ इकत्तीसवाँ शतक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# शतक ३२

## ( उद्वर्त्तन शतक )

## उद्देशक १-२८

१ प्रश्न-खुड्डागकडजुम्मणेरइया णं भंते ! अणंतरं उव्वट्टित्ता कहिं गच्छंति, कहिं उववज्जंति ? किं णेरइएसु उववज्जंति ? तिरिक्ख-जोणिएसु उवक्वज्जंति० ?

१ उत्तर-उव्वट्टणा जहा वक्कंतीए ।

कठिन शब्दार्थ--उव्वट्टित्ता--उद्वर्तित होकर--वहाँ से निकल कर ।

भावार्थ-१ प्रश्न-हे भगवन् ! क्षुद्रकृतयुग्म राशि प्रमाण नैरयिक वहां से उद्वर्तित हो कर (निकल कर--मर कर) तुरन्त कहां जाते हैं और कहां उत्पन्न होते हैं ? क्या नैरयिक में उत्पन्न होते हैं अथवा तिर्यञ्च-योनिक में उत्पन्न होते हैं० ?

१ उत्तर-हे गौतम ! प्रज्ञापना सूत्र के छठे व्युत्क्रान्ति पद केअनुसार ।

२ प्रश्न-ते णं भंते ! जीवा एगसमएणं केवइया उव्वट्टंति ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२ उत्तर-गोयमा ! चत्तारि वा अट्ठ वा बारस वा सोलस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा उव्वट्टंति ।

भावार्थ-२ प्रश्न-हे भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उद्वर्तते (मरते) हैं ?

२ उत्तर-हे गौतम ! चार, आठ, बारह, सोलह, संख्यात या असंख्यात उद्वर्तते हैं ।

३ प्रश्न-ते णं भंते ! जीवा कहं उव्वट्टंति ?

३ उत्तर-गोयमा ! से जहाणामए पवए० एवं तहेव । एवं सो चेव गमओ जाव आयप्पओगेणं उव्वट्टंति, णो परप्पओगेणं उव्वट्टंति ।

भावार्थ-३ प्रश्न-हे भगवन् ! वे जीव किस प्रकार उद्वर्तते हैं ?

३ उत्तर-हे गौतम ! जिस प्रकार कोई कूदने वाला इत्यादि पूर्ववत्, यावत् वे आत्म-प्रयोग से उद्वर्तते हैं, पर-प्रयोग से नहीं ।

४ प्रश्न-रयणप्पभापुढविखुड्डागकड० ?

४ उत्तर-एवं रयणप्पभाए वि, एवं जाव अहेसत्तमाए । एवं खुड्डागतेओग-खुड्डागदावरजुम्म-खुड्डागकलिओगा । णवरं परिमाणं जाणियव्वं, सेसं तं चेव । 'सेवं भंते०' । ३२-१ ।

भावार्थ-४ प्रश्न-हे भगवन् ! रत्नप्रभा पृथ्वी के क्षुद्रकृतयुग्म राशि प्रमाण नैरयिक वहां से उद्वर्तित हो कर तुरन्त कहां जाते हैं, कहां उत्पन्न होते हैं ?

४ उत्तर-हे गौतम ! रत्नप्रभा पृथ्वी के नैरयिक की उद्वर्तना के अनुसार, यावत् अधःसप्तम पृथ्वी तक की उद्वर्तना पर्यन्त । इसी प्रकार

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

क्षुद्रत्र्योज, क्षुद्रद्वापरयुग्म और क्षुद्रकल्योज के विषय में भी जानना चाहिये। परिमाण पूर्ववत् अपना-अपना पृथक्-पृथक् कहना चाहिये। शेष पूर्ववत् ।३२–१।

५–कण्हलेस्सकडजुम्मणेरइया–एवं एएणं कमेणं जहेव उववायसए अट्ठावीसं उद्देसगा भणिया तहेव उव्वट्टणासए वि अट्ठावीसं उद्देसगा भाणियव्वा णिरवसेसा। णवरं 'उव्वट्टंति' त्ति अभिलावो भाणियव्वो, सेसं तं चेव।

'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति

॥ बत्तीसइमं उव्वट्टणासयं समत्तं ॥

भावार्थ–५ प्रश्न–हे भगवन् ! कृष्णलेश्या वाले क्षुद्रकृतयुग्म राशि प्रमाण नैरयिक वहाँ से निकल कर तुरन्त कहाँ जाते हैं, कहाँ उत्पन्न होते हैं ?

५ उत्तर–इसी क्रम से उपपात शतक के अट्ठाईस उद्देशक के समान, उद्वर्तना शतक के भी अट्ठाईस उद्देशक जानना चाहिये। अन्तर यह है कि 'उत्पन्न होते हैं' के स्थान पर 'उद्वर्तते हैं'–कहना चाहिये। शेष पूर्ववत्।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है। हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'–कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं।

विवेचन––नरक से निकल कर जीव पर्याप्त संख्यात वर्ष की आयु वाले मनुष्य और तिर्यंच में उत्पन्न होते हैं।

॥ बत्तीसवें शतक के १–२८ उद्देशक सम्पूर्ण ॥

## ॥ बत्तीसवाँ शतक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# शतक ३३

## (एकेन्द्रिय शतक)

### अवान्तर शतक १

१ प्रश्न–कइविहा णं भंते ! एगिंदिया पण्णत्ता ?

१ उत्तर–गोयमा ! पंचविहा एगिंदिया पण्णत्ता, तं जहा–पुढविकाइया जाव वणस्सइकाइया ।

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! एकेन्द्रिय जीव कितने प्रकार के कहे हैं ?

१ उत्तर–हे गौतम ! एकेन्द्रिय जीव पांच प्रकार के कहे हैं । यथा–पृथ्वीकायिक यावत् वनस्पतिकायिक ।

२ प्रश्न–पुढविकाइया णं भंते ! कइविहा पण्णत्ता ?

२ उत्तर–गोयमा ! दुविहा पण्णत्ता, तं जहा–सुहुमपुढविकाइया य बायरपुढविकाइया य ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ-२ प्रश्न-हे भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीव कितने प्रकार के कहे हैं ?

२ उत्तर-हे गौतम ! दो प्रकार के कहे हैं । यथा-सूक्ष्म पृथ्वीकायिक और बादर पृथ्वीकायिक ।

३ प्रश्न-सुहुमपुढविकाइया णं भंते ! कइविहा पण्णत्ता ?

३ उत्तर-गोयमा ! दुविहा पण्णत्ता, तं जहा-पज्जत्ता सुहुम-पुढविकाइया य अपज्जत्ता सुहुमपुढविकाइया य ।

भावार्थ-३ प्रश्न-हे भगवन् ! सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव कितने प्रकार के कहे हैं ?

३ उत्तर-हे गौतम ! दो प्रकार के कहे हैं । यथा-पर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वी-कायिक और अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक ।

४ प्रश्न-बायरपुढविकाइया णं भंते ! कइविहा पण्णत्ता ?

४ उत्तर-गोयमा ! एवं चेव, एवं आउकाइया वि चउक्कएणं भेएणं भाणियव्वा, एवं जाव वणस्सइकाइया ।

भावार्थ-४ प्रश्न-हे भगवन ! बादर पृथ्वीकायिक जीव कितने प्रकार के कहे हैं ?

४ उत्तर-हे गौतम ! पूर्ववत् । इसी प्रकार अप्कायिक जीव के भी चार भेद हैं यावत् वनस्पतिकायिक पर्यन्त ।

५ प्रश्न-अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइयाणं भंते ! कइ कम्मप्पगडीओ पण्णत्ताओ ?

५ उत्तर-गोयमा ! अट्ठ कम्मप्पगडीओ पण्णत्ताओ, तं जहा-णाणावरणिज्जं जाव अंतराइयं ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ-५ प्रश्न-हे भगवन् ! अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव के कितनी कर्म-प्रकृतियां कही हैं ?

५ उत्तर-हे गौतम ! आठ कर्म-प्रकृतियां कही हैं । यथा-ज्ञानावरणीय यावत् अन्तराय ।

६ प्रश्न-पज्जत्तसुहुमपुढविकाइयाणं भंते ! कइ कम्मप्पगडीओ पण्णत्ताओ ?

६ उत्तर-गोयमा ! अट्ठ कम्मप्पगडीओ पण्णत्ताओ, तं जहा-णाणावरणिज्जं जाव अंतराइयं ।

भावार्थ-६ प्रश्न-हे भगवन् ! पर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव के कितनी कर्म-प्रकृतियां कही हैं ?

६ उत्तर-हे गौतम ! आठ कर्म-प्रकृतियां कही है । यथा-ज्ञानावरणीय यावत् अन्तराय ।

७ प्रश्न-अपज्जत्तबायरपुढविकाइयाणं भंते ! कइ कम्मप्पगडीओ पण्णत्ताओ ?

७ उत्तर-गोयमा ! एवं चेव ।

भावार्थ-७ प्रश्न-हे भगवन् ! अपर्याप्त बादर पृथ्वीकायिक जीव के कितनी कर्म-प्रकृतियां कही हैं ?

७ उत्तर-हे गौतम ! पूर्ववत् ।

८ प्रश्न-पज्जत्तबायरपुढविकाइयाणं भंते ! कइ कम्मप्पगडीओ० ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

८ उत्तर-एवं चेव । एवं एएणं कमेणं जाव बायरवणस्सइकाइयाणं पज्जत्तगाणं ति ।

भावार्थ-८ प्रश्न-हे भगवन् ! पर्याप्त बादर पृथ्वीकायिक जीव के कितनी कर्मप्रकृतियां कही हैं ?

८ उत्तर-हे गौतम ! पूर्ववत् । इसी प्रकार इसी क्रम से यावत् पर्याप्त बादर वनस्पतिकायिक पर्यन्त ।

९ प्रश्न-अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइयाणं भंते ! कइ कम्मप्पगडीओ बंधंति ?

९ उत्तर-गोयमा ! सत्तविहबंधगा वि, अट्ठविहबंधगा वि । सत्त बंधमाणा आउयवज्जाओ सत्त कम्मप्पगडीओ बंधंति, अट्ठ बंधमाणा पडिपुण्णाओ अट्ठ कम्मप्पगडीओ बंधंति ।

भावार्थ-९ प्रश्न-हे भगवन् ! अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव कितनी कर्मप्रकृतियां बांधते हैं ?

९ उत्तर-हे गौतम ! सात कर्म-प्रकृतियां भी बांधते हैं और आठ भी बांधते हैं । सात बांधते हुए आयु-कर्म को छोड़ कर शेष सात कर्म-प्रकृतियां बांधते हैं । आठ बांधते हुए प्रतिपूर्ण आठ कर्म-प्रकृतियां बांधते हैं ।

१० प्रश्न-पज्जत्तसुहुमपुढविकाइया णं भंते ! कइ कम्म० ?

१० उत्तर-एवं चेव, एवं सव्वे जाव-

भावार्थ-१० प्रश्न-हे भगवन् ! पर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव कितनी कर्म-प्रकृतियां बांधते हैं ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१० उत्तर–हे गौतम ! पूर्ववत् । इसी प्रकार सभी एकेन्द्रिय जीवों के विषय में दण्डक कहना चाहिये । यावत्–

११ प्रश्न–पज्जत्तबायरवणस्सइकाइया णं भंते ! कइ कम्मप्पगडीओ बंधंति ?

११ उत्तर–एवं चेव ।

भावार्थ–११ प्रश्न–हे भगवन् ! पर्याप्त बादर वनस्पतिकायिक जीव कितनी कर्म-प्रकृतियां बांधते हैं ?

११ उत्तर–हे गौतम ! पूर्ववत् ।

१२ प्रश्न–अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइया णं भंते ! कइ कम्मप्पगडीओ वेदेंति ?

१२ उत्तर–गोयमा ! चोद्दस कम्मप्पगडीओ वेदेंति, तं जहा–णाणावरणिज्जं जाव अंतराइयं, सोइंदियवज्झं, चक्खिंदियवज्झं, घाणिंदियवज्झं, जिब्भिंदियवज्झं, इत्थिवेयवज्झं, पुरिसवेयवज्झं । एवं चउक्कएणं भेएणं जाव–

भावार्थ–१२ प्रश्न–हे भगवन् ! अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव कितनी कर्मप्रकृतियां वेदते हैं ?

१२ उत्तर–हे गौतम ! वे चौदह कर्म-प्रकृतियां वेदते हैं । यथा–ज्ञानावरणीय यावत् अन्तराय, ९ श्रोतेन्द्रियवध्य (श्रोतेन्द्रियावरण) १० चक्षुरिन्द्रियवध्य (चक्षुरिन्द्रियावरण) ११ घ्राणेन्द्रियवध्य १२ जिव्हेन्द्रियवध्य १३ स्त्रीवेदवध्य और १४ पुरुषवेदवध्य । इस प्रकार सूक्ष्म, बादर, पर्याप्त और अपर्याप्त के चार भेद पूर्वक पर्याप्त बादर वनस्पतिकायिक पर्यन्त, यावत्–

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१३ प्रश्न–पज्जत्तबायरवणस्सइकाया णं भंते ! कइ कम्मप्पगडीओ वेदेंति ?

१३ उत्तर–गोयमा ! एवं चेव चोद्दस कम्मप्पगडीओ वेदेंति ।

❀ 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति । ३३–१ । ❀

भावार्थ–१३ प्रश्न–हे भगवन् ! पर्याप्त बादर वनस्पतिकायिक जीव कर्म-प्रकृतियां कितनी वेदते हैं ?

१३ उत्तर–हे गौतम ! पूर्ववत् चौदह कर्म-प्रकृतियां वेदते हैं ।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'–कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

## उद्देशक २

१ प्रश्न–कइविहा णं भंते ! अणंतरोववण्णगा एगिंदिया पण्णत्ता ?

१ उत्तर–गोयमा ! पंचविहा अणंतरोववण्णगा एगिंदिया पण्णत्ता, तं जहा–पुढविकाइया जाव वणस्सइकाइया ।

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! अनन्तरोपपन्नक (तत्काल उत्पन्न हुए) एकेन्द्रिय जीव कितने प्रकार के कहे हैं ?

१ उत्तर–हे गौतम ! अनन्तरोपपन्नक एकेन्द्रिय पांच प्रकार के कहे हैं । यथा–पृथ्वीकायिक यावत् वनस्पतिकायिक ।

२ प्रश्न–अणंतरोववण्णगा णं भंते ! पुढविकाइया कइविहा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पण्णत्ता ?

२ उत्तर--गोयमा ! दुविहा पण्णत्ता, तं जहा--सुहुमपुढविकाइया य बायरपुढविकाइया य, एवं दुपएणं भेएणं जाव वणस्सइकाइया ।

भावार्थ--२ प्रश्न--हे भगवन् ! अनन्तरोपपन्नक पृथ्वीकायिक जीव कितने प्रकार के कहे हैं ?

२ उत्तर--हे गौतम ! दो प्रकार के कहे हैं । यथा--सूक्ष्म पृथ्वीकायिक और बादर पृथ्वीकायिक । इसी प्रकार दो भेद से यावत् वनस्पतिकायिक पर्यंत ।

३ प्रश्न--अणंतरोववण्णगसुहुमपुढविकाइयाणं भंते ! कइ कम्मप्पगडीओ पण्णत्ताओ ?

३ उत्तर--गोयमा ! अट्ठ कम्मप्पगडीओ पण्णत्ताओ, तं जहा--णाणावरणिज्जं जाव अंतराइयं ।

भावार्थ--३ प्रश्न--हे भगवन् ! अनन्तरोपपन्नक सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव के कर्म-प्रकृतियां कितनी कही हैं ?

३ उत्तर--हे गौतम ! आठ कर्म-प्रकृतियां कही हैं । यथा--ज्ञानावरणीय यावत् अन्तराय ।

४ प्रश्न--अणंतरोववण्णगबायरपुढविकाइयाणं भंते ! कइ कम्मप्पगडीओ पण्णत्ताओ ?

४ उत्तर--गोयमा ! अट्ठ कम्मप्पगडीओ पण्णत्ताओ, तं जहा--णाणावरणिज्जं जाव अंतराइयं । एवं जाव अणंतरोववण्णगबायरवणस्सइकाइयाणं ति ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ-४ प्रश्न-हे भगवन् ! अनन्तरोपपन्नक बादर पृथ्वीकायिक जीव के कर्म-प्रकृतियां कितनी कही हैं ?

४ उत्तर-हे गौतम ! आठ कर्म-प्रकृतियां कही हैं । यथा-ज्ञानावरणीय यावत् अन्तराय । इसी प्रकार यावत् अनन्तरोपपन्नक बादर वनस्पतिकायिक पर्यन्त ।

५ प्रश्न-अणंतरोववण्णगसुहुमपुढविकाइयाणं भंते ! कइ कम्मप्पगडीओ बंधंति ?

५ उत्तर-गोयमा ! आउयवज्जाओ सत्त कम्मप्पगडीओ बंधंति। एवं जाव अणंतरोववण्णगबायरवणस्सइकाइय त्ति ।

भावार्थ-५ प्रश्न-हे भगवन् ! अनन्तरोपपन्नक सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव कर्मप्रकृतियां कितनी बांधते हैं ?

५ उत्तर-हे गौतम ! आयु-कर्म के अतिरिक्त शेष सात कर्म प्रकृतियां बांधते हैं । इसी प्रकार यावत् अनन्तरोपपन्नक बादर वनस्पतिकायिक पर्यन्त ।

६ प्रश्न-अणंतरोववण्णगसुहुमपुढविकाइयाणं भंते ! कइ कम्मप्पगडीओ वेदेंति ?

६ उत्तर-गोयमा ! चउद्दस कम्मप्पगडीओ वेदेंति, तं जहा-णाणावरणिज्जं, तहेव जाव पुरिसवेयवज्जं। एवं जाव अणंतरोववण्णगबायरवणस्सइकाइय त्ति । 'सेवं भंते०' ! । ३३-२ ।

भावार्थ-६ प्रश्न-हे भगवन् ! अनन्तरोपपन्नक सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव कर्मप्रकृतियां कितनी वेदते हैं ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

६ उत्तर-हे गौतम ! चौदह कर्म प्रकृतियां वेदते हैं। यथा-ज्ञानावरणीय यावत् पुरुषवेद-वध्य (पुरुषवेदावरण)। इसी प्रकार यावत् अनन्तरोपपन्नक बादर वनस्पतिकायिक पर्यन्त। ३३-२।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है। हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'— कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं।

## उद्देशक ३

१ प्रश्न-कइविहा णं भंते ! परंपरोववण्णगा एगिंदिया पण्णत्ता ?

१ उत्तर-गोयमा ! पंचविहा परंपरोववण्णगा एगिंदिया पण्णत्ता, तं जहा पुढविकाइया-एवं चउक्कओ भेओ जहा ओहिउद्देसए।

भावार्थ-१ प्रश्न-हे भगवन् ! परम्परोपपन्नक एकेन्द्रिय जीव कितने प्रकार के कहे हैं ?

१ उत्तर-हे गौतम ! पांच प्रकार के कहे हैं। यथा-पृथ्वीकायिक यावत् वनस्पतिकायिक। इसी प्रकार औधिक उद्देशक के अनुसार प्रत्येक के चार-चार भेद कहने चाहिये।

२ प्रश्न-परंपरोववण्णगअपज्जत्तसुहुमपुढविकाइयाणं भंते ! कइ कम्मप्पगडीओ पण्णत्ताओ ?

२ उत्तर-एवं एएणं अभिलावेणं जहा ओहिउद्देसए तहेव णिरवसेसं भाणियव्वं जाव 'चउहस वेदेंति'। 'सेवं भंते०' त्ति। ३३-३।

भावार्थ-२ प्रश्न-हे भगवन् ! परम्परोपपन्नक अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जीव के कर्म-प्रकृतियां कितनी कही हैं ?

२ उत्तर-हे गौतम ! इसी प्रकार इस अभिलाप से औधिक उद्देशक के अनुसार, यावत् चौदह कर्म-प्रकृतियां वेदते हैं । ३३-३ ।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'--कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

## उद्देशक ४-११

-अणंतरोगाढा जहा अणंतरोववण्णगा । ३३-४ ।
-परंपरोगाढा जहा परंपरोववण्णगा । ३३-५ ।
-अणंतराहारगा जहा अणंतरोववण्णगा । ३३-६ ।
-परंपराहारगा जहा परंपरोववण्णगा । ३३-७ ।
-अणंतरपज्जत्तगा जहा अणंतरोववण्णगा । ३३-८ ।
-परंपरपज्जत्तगा जहा परंपरोववण्णगा । ३३-९ ।
-चरिमा वि जहा परंपरोववण्णगा तहेव । ३३-१० ।
-एवं अचरिमा वि ११ । एवं एए एक्कारस उद्देसगा ।

❀ 'सेव भंते ! सेवं भंते !' त्ति जाव विहरइ ❀

॥ पढमं एगिंदियसयं समत्तं ॥

-अनन्तरोपपन्नक के समान अनन्तरावगाढ़ भी । ३३-४ ।
-परम्परोपपन्नक के समान परम्परावगाढ़ भी । ३३-५ ।
-अनन्तरोपपन्नक के समान अनन्तराहारक भी । ३३-६ ।
-परम्परोपपन्नक के समान परम्पराहारक भी । ३३-७ ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

—अनन्तरोपपन्नक के समान अनन्तरपर्याप्तक भी । ३३—८ ।

—परम्परोपपन्नक के समान परम्परपर्याप्तक भी । ३३—९ ।

—परम्परोपपन्नक के समान चरम भी । ३३—१० ।

—इसी प्रकार अचरम भी कहना चाहिये । ये सभी ग्यारह उद्देशक हैं । ३३—११ ।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'—कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

विवेचन—एकेन्द्रिय जीव चौदह कर्म-प्रकृतियाँ वेदते हैं । यथा—ज्ञानावरणीय से ले कर अन्तराय तक आठ कर्म-प्रकृतियाँ, श्रोतेन्द्रियावरण, चक्षुरिन्द्रियावरण, घ्राणेन्द्रियावरण जिव्हेन्द्रियावरण, स्त्रीवेदावरण और पुरुषवेदावरण । एकेन्द्रिय जीवों के केवल एक स्पर्शनेन्द्रिय ही होती है । शेष चार इन्द्रियाँ नहीं होती, इसलिए वे चारों इन्द्रियों के आवरण का वेदन करते हैं । इनका मतिज्ञानावरणीय में समावेश होता है । एकेन्द्रिय जीवों में एक नपुंसक वेद ही होता है । इसलिए वे स्त्रीवेदावरण और पुरुषवेदावरण का वेदन करते हैं अर्थात् इनके इन दोनों वेदों का उदय नहीं होता ।

तत्काल उत्पन्न हुए जीव 'अनन्तरोपपन्नक' कहलाते हैं और जिनको उत्पन्न हुए दो-तीन आदि समय हो गये हैं, वे 'परम्परोपपन्नक' कहलाते हैं । अनन्तरोपपन्नक एकेन्द्रियों में पर्याप्तक और अपर्याप्तक भेद नहीं होते । इसलिए उनमें ये दो भेद नहीं कहने चाहिये, सूक्ष्म और बादर, ये दो भेद ही कहने चाहिये ।

## ॥ तेतीसवें शतक का प्रथम एकेन्द्रिय शतक सम्पूर्ण ॥

# अवान्तर शतक २

**१ प्रश्न—कइविहा णं भंते ! कण्हलेस्सा एगिंदिया पण्णत्ता ?**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१ उत्तर-गोयमा ! पंचविहा कण्हलेस्सा एगिंदिया पण्णत्ता, तं जहा-पुढविकाइया जाव वणस्सइकाइया ।

भावार्थ-१ प्रश्न-हे भगवन् ! कृष्णलेश्या वाले एकेन्द्रिय जीव कितने प्रकार के कहे हैं ?

१ उत्तर-हे गौतम ! कृष्णलेश्या वाले एकेन्द्रिय पांच प्रकार के कहे हैं। यथा-पृथ्वीकायिक यावत् वनस्पतिकायिक ।

२ प्रश्न-कण्हलेस्सा णं भंते ! पुढविकाइया कइविहा पण्णत्ता ?

२ उत्तर-गोयमा ! दुविहा पण्णत्ता, तं जहा-सुहुमपुढविकाइया य बायरपुढविकाइया य ।

भावार्थ-२ प्रश्न-हे भगवन् ! कृष्णलेश्या वाले पृथ्वीकायिक कितने प्रकार के कहे हैं ?

२ उत्तर-हे गौतम ! दो प्रकार के कहे हैं । यथा-सूक्ष्म पृथ्वीकायिक और बादर पृथ्वीकायिक ।

३ प्रश्न-कण्हलेस्सा णं भंते ! सुहुमपुढविकाइया कइविहा पण्णत्ता ?

३ उत्तर-गोयमा ! एवं एएणं अभिलावेणं चउक्कभेओ जहेव ओहिउद्देसए जाव वणस्सइकाइय त्ति ।

भावार्थ-३ प्रश्न-हे भगवन् ! कृष्णलेश्या वाले सूक्ष्म पृथ्वीकायिक कितने प्रकार के कहे हैं ?

३ उत्तर-हे गौतम ! औधिक उद्देशक के अनुसार । इस अभिलाप से चार भेद यावत् वनस्पतिकायिक पर्यन्त ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

४ प्रश्न–कण्हलेस्सअपज्जत्तसुहुमपुढविकाइयाणं भंते ! कइ कम्मप्पगडीओ पण्णत्ताओ ?

४ उत्तर--एवं चेव एएणं अभिलावेणं जहेव ओहिउद्देसए तहेव पण्णत्ताओ, तहेव बंधंति, तहेव वेदेंति । 'सेवं भंते०' ।

भावार्थ–४ प्रश्न–हे भगवन् ! कृष्णलेश्या वाले अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव के कर्म-प्रकृतियां कितनी कही हैं ?

४ उत्तर–हे गौतम ! औघिक उद्देशक के अनुसार, उसी अभिलाप से कर्म-प्रकृतियां कहनी चाहिये, तथा उसी प्रकार उनका बन्ध और वेदन भी कहना चाहिये । ३३–२–१ ।

१ प्रश्न--कइविहा णं भंते ! अणंतरोववण्णगकण्हलेस्सएगिंदिया पण्णत्ता ?

१ उत्तर--गोयमा ! पंचविहा अणंतरोववण्णगा कण्हलेस्सा एगिंदिया--एवं एएणं अभिलावेणं तहेव दुयओ भेओ जाव वणस्सइकाइय त्ति ।

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! अनन्तरोपपन्नक कृष्णलेश्या वाले एकेन्द्रिय जीव कितने प्रकार के कहे हैं ?

१ उत्तर–हे गौतम ! अनन्तरोपपन्नक कृष्णलेश्या वाले एकेन्द्रिय जीव पांच प्रकार के कहे हैं । इस अभिलाप से पूर्ववत रूप से दो भेद यावत् वनस्पतिकायिक पर्यन्त ।

२ प्रश्न--अणंतरोववण्णगकण्हलेस्ससुहुमपुढविकाइयाणं भंते !

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कइ कम्मप्पगडीओ पण्णत्ताओ ?

२ उत्तर-एवं एएणं अभिलावेणं जहा ओहिओ अणंतरोववण्णगाणं उद्देसओ तहेव जाव वेदेंति । 'सेवं भंते०' ।

भावार्थ-२ प्रश्न-हे भगवन् ! अनन्तरोपपन्नक कृष्णलेश्या वाले सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव के कर्म-प्रकृतियां कितनी कही हैं ?

२ उत्तर-हे गौतम ! पूर्वोक्त अभिलाप से औधिक अनन्तरोपपन्नक उद्देशक के अनुसार यावत् 'वेदते हैं' तक । ३२-२-२ ।

१ प्रश्न-कइविहा णं भंते ! परंपरोववण्णगा कण्हलेस्सा एगिंदिया पण्णत्ता ?

१ उत्तर-गोयमा ! पंचविहा परंपरोववण्णगा कण्हलेस्सा एगिंदिया पण्णत्ता, तं जहा-पुढविकाइया-एवं एएणं अभिलावेणं तहेव चउक्कओ भेओ जाव वणस्सइकाइय त्ति ।

भावार्थ-१ प्रश्न-हे भगवन् ! परम्परोपपन्नक कृष्णलेश्या वाले एकेन्द्रिय जीव कितने प्रकार के कहे हैं ?

१ उत्तर-हे गौतम ! परम्परोपपन्नक कृष्णलेश्या वाले एकेन्द्रिय जीव पांच प्रकार के कहे हैं । यथा-पृथ्वीकायिक आदि । इस अभिलाप से उसी प्रकार चार भेद यावत् वनस्पतिकायिक पर्यन्त ।

२ प्रश्न-परंपरोववण्णगकण्हलेस्सअपज्जत्त-सुहुम-पुढविकाइयाणं भंते ! कइ कम्मप्पगडीओ पण्णत्ताओ ।

२ उत्तर-एवं एएणं अभिलावेणं जहेव ओहिओ परंपरोववण्णग-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उद्देसओ तहेव जाव वेदेंति । एवं एएणं अभिलावेणं जहेव ओहिएगिंदियसए एक्कारस उद्देसगा भणिया तहेव कण्हलेस्ससए वि भाणियव्वा जाव चरिमअचरिमकण्हलेस्सा एगिंदिया ।

॥ बिइयं एगिंदियसयं समत्तं ॥

भावार्थ-२ प्रश्न-हे भगवन् ! परम्परोपपन्नक कृष्णलेश्या वाले अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव के कर्म-प्रकृतियां कितनी कही हैं ?

२ उत्तर-हे गौतम ! पूर्वोक्त अभिलाप से औधिक उद्देशक के अनुसार परम्परोपपन्नक सम्बन्धी भी यावत् 'वेदते हैं' तक जानना चाहिए । औधिक एकेन्द्रिय शतक में ग्यारह उद्देशक कहे, उसी प्रकार इस अभिलाप से कृष्णलेश्या शतक में भी कहना चाहिये, यावत् चरम और अचरम कृष्णलेश्या वाले एकेंद्रिय पर्यन्त । ३३-२-३ से ११ उद्देशक तक ।

॥ तेतीसवें शतक का दूसरा अवान्तर शतक सम्पूर्ण ॥

## अवान्तर शतक ३

-जहा कण्हलेस्सेहिं भणियं एवं णीललेस्सेहि वि सयं भाणियव्वं । 'सेवं भंते०' ।

॥ तइयं एगिंदियसयं समत्तं ॥

भावार्थ-कृष्णलेश्या के समान नीललेश्या के विषय में भी शतक कहना चाहिये । ३३-३ ।

## अवान्तर शतक ४

-एवं काउलेस्सेहि वि सयं भाणियव्वं, णवरं 'काउलेस्से'

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ति अभिलावो भाणियव्वो ।

॥ चउत्थं एगिंदियसयं समत्तं ॥

भावार्थ–१–कापोत लेश्या के विषय में भी इसी प्रकार शतक कहना चाहिये, किन्तु 'कापोत लेश्या' ऐसा पाठ कहना चाहिये । ३३–४ ।

## अवान्तर शतक ५

१ प्रश्न–कइविहा णं भंते ! भवसिद्धिया एगिंदिया पण्णत्ता ?

१ उत्तर–गोयमा ! पंचविहा भवसिद्धिया एगिंदिया पण्णत्ता, तं जहा–पुढविकाइया जाव वणस्सइकाइया, भेओ चउक्कओ जाव वणस्सइकाइय त्ति ।

२ प्रश्न–भवसिद्धिय-अपज्जत्त-सुहुम-पुढविकाइयाणं भंते ! कइ कम्मप्पगडीओ पण्णत्ताओ ?

२ उत्तर–एवं एएणं अभिलावेणं जहेव पढमिल्लगं एगिंदियसयं तहेव भवसिद्धियसयं पि भाणियव्वं । उद्देसगपरिवाडी तहेव जाव अचरिमो त्ति । 'सेवं भंते०' ।

॥ पंचमं एगिंदियसयं समत्तं ॥

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! भवसिद्धिक एकेन्द्रिय कितने प्रकार के कहे हैं ?

१ उत्तर–हे गौतम ! भवसिद्धिक एकेन्द्रिय पांच प्रकार के कहे हैं । यथा–पृथ्वीकायिक यावत् वनस्पतिकायिक । इनके चार भेद आदि वक्तव्यता वनस्पतिकायिक पर्यन्त ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२ प्रश्न-हे भगवन् ! भवसिद्धिक अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव के कर्म-प्रकृतियां कितनी कही हैं ?

२ उत्तर-हे गौतम ! प्रथम एकेन्द्रिय शतक के अनुसार भवसिद्धिक शतक भी कहना चाहिये । उद्देशकों की परिपाटी भी उसी प्रकार यावत् अचरम उद्देशक पर्यन्त ।

॥ तेतीसवें शतक का पांचवां अवान्तर शतक सम्पूर्ण ॥

## अवान्तर शतक ६

१ प्रश्न-कइविहा णं भंते ! कण्हलेस्सा भवसिद्धिया एगिंदिया पण्णत्ता- ?

१ उत्तर-गोयमा ! पंचविहा कण्हलेस्सा भवसिद्धिया एगिंदिया पण्णत्ता, तं जहा-पुढविकाइया जाव वणस्सइकाइया ।

भावार्थ-१ प्रश्न-हे भगवन् ! कृष्णलेश्या वाले भवसिद्धिक एकेन्द्रिय जीव कितने प्रकार के कहे हैं ?

१ उत्तर-हे गौतम ! कृष्णलेश्या वाले भवसिद्धिक एकेन्द्रिय पांच प्रकार के कहे हैं । यथा-पृथ्वीकायिक यावत् वनस्पतिकायिक ।

२ प्रश्न-कण्हलेस्सभवसिद्धियपुढविकाइया णं भंते ! कइविहा पण्णत्ता ?

२ उत्तर-गोयमा ! दुविहा पण्णत्ता, तं जहा-सुहुमपुढविकाइया य बायरपुढविकाइया य ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ—२ प्रश्न—हे भगवन् ! कृष्णलेश्या वाले भवसिद्धिक पृथ्वीकायिक जीव कितने प्रकार के कहे हैं ?

२ उत्तर—हे गौतम ! दो प्रकार के कहे हैं। यथा—सूक्ष्म पृथ्वीकायिक और बादर पृथ्वीकायिक।

३ प्रश्न—कण्हलेस्सभवसिद्धियसुहुमपुढविकाइया णं भंते ! कइविहा पण्णत्ता ?

३ उत्तर—गोयमा ! दुविहा पण्णत्ता, तं जहा—पज्जत्तगा य अपज्जत्तगा य। एवं बायरा वि। एएणं अभिलावेणं तहेव चउक्कओ भेओ भाणियव्वो।

भावार्थ—३ प्रश्न—हे भगवन् ! कृष्णलेश्या वाले भवसिद्धिक सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव कितने प्रकार के कहे हैं ?

३ उत्तर—हे गौतम ! दो प्रकार के कहे हैं। यथा—पर्याप्तक और अपर्याप्तक। इसी प्रकार बादर पृथ्वीकायिक के भी दो भेद हैं। इसी अभिलाप से उसी प्रकार चार भेद कहना चाहिये।

४ प्रश्न—कण्हलेस्सभवसिद्धियअपज्जत्तसुहुमपुढविकाइयाणं भंते ! कइ कम्मप्पगडीओ पण्णत्ताओ ?

४ उत्तर—एवं एएणं अभिलावेणं जहेव ओहिउद्देसए तहेव जाव वेदेंति।

भावार्थ—४ प्रश्न—हे भगवन् ! कृष्णलेश्या वाले भवसिद्धिक अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव के कर्म-प्रकृतियां कितनी कही हैं ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

४ उत्तर-हे गौतम ! औधिक उद्देशक के अनुसार इस अभिलाप से यावत् 'वेदते हैं' तक कहना चाहिये ।

५ प्रश्न-कइविहा णं भंते ! अणंतरोववण्णगा कण्हलेस्सा भवसिद्धिया एगिंदिया पण्णत्ता ?

५ उत्तर-गोयमा ! पंचविहा अणंतरोववण्णगा० जाव वणस्सइकाइया ।

भावार्थ-५ प्रश्न-हे भगवन् ! अनन्तरोपपन्नक कृष्णलेश्या वाले भवसिद्धिक एकेन्द्रिय कितने प्रकार के कहे हैं ?

५ उत्तर-हे गौतम ! पांच प्रकार के कहे हैं । यथा-पृथ्वीकायिक यावत् वनस्पतिकायिक ।

६ प्रश्न-अणंतरोववण्णगकण्हलेस्सभवसिद्धियपुढविकाइया णं भंते ! कइविहा पण्णत्ता ?

६ उत्तर-गोयमा ! दुविहा पण्णत्ता, तं जहा-सुहुमपुढविकाइया एवं दुयओ भेओ ।

भावार्थ-६ प्रश्न-हे भगवन् ! अनन्तरोपपन्नक कृष्णलेश्या वाले भवसिद्धिक पृथ्वीकायिक जीव कितने प्रकार के कहे हैं ?

६ उत्तर-हे गौतम ! दो प्रकार के कहे हैं । यथा-सूक्ष्म पृथ्वीकायिक और बादर पृथ्वीकायिक । इस प्रकार दो भेद कहने चाहिये ।

७ प्रश्न-अणंतरोववण्णगकण्हलेस्सभवसिद्धियसुहुमपुढविकाइ-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

याणं भंते ! कइ कम्मप्पगडीओ पण्णत्ताओ ?

७ उत्तर-एवं एएणं अभिलावेणं जहेव ओहिओ अणंतरोववण्ण-उद्देसओ तहेव जाव वेदेंति । एवं एएणं अभिलावेणं एक्कारस वि उद्देसगा तहेव भाणियव्वा जहा ओहियसए जाव 'अचरिमो' त्ति ।

॥ छट्ठं एगिंदियसयं समत्तं ॥

भावार्थ-७ प्रश्न-हे भगवन ! अनन्तरोपपन्नक कृष्णलेश्या वाले भवसिद्धिक सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव के कर्म-प्रकृतियां कितनी कही हैं ?

७ उत्तर-हे गौतम ! अनन्तरोपपन्नक के औधिक उद्देशक के अनुसार, यहां भी यावत् 'वेदते हैं' तक । इसी अभिलाप से औधिक शतक के अनुसार ग्यारह उद्देशक यावत् 'अचरम' उद्देशक पर्यन्त ।

॥ तेतीसवें शतक का छठा अवान्तर शतक सम्पूर्ण ॥

## अवांतर शतक ७

-जहा कण्हलेस्सभवसिद्धिएहिं सयं भणियं एवं णीललेस्स-भवसिद्धिएहि वि सयं भाणियव्वं ।

॥ सत्तमं एगिंदियसयं समत्तं ॥

-कृष्णलेश्या वाले भवसिद्धिक एकेन्द्रिय शतक के अनुसार नीललेश्या वाले भवसिद्धिक एकेन्द्रिय के विषय में भी शतक कहना चाहिये ।

॥ तेतीसवें शतक का सातवां अवान्तर शतक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

## अवांतर शतक ८

–एवं काउलेस्सभवसिद्धिएहि वि सयं ।

॥ अट्ठमं एगिंदियसयं समत्तं ॥

भावार्थ–कापोत लेश्या वाले भवसिद्धिक एकेन्द्रिय के भी इसी प्रकार ।

॥ तेतीसवें शतक का आठवां अवान्तर शतक सम्पूर्ण ॥

## अवान्तर शतक ९

प्रश्न–कइविहा णं भंते ! अभवसिद्धिया एगिंदिया पण्णत्ता ?

उत्तर–गोयमा ! पंचविहा अभवसिद्धिया एगिंदिया पण्णत्ता, तं जहा–पुढविकाइया जाव वणस्सइकाइया । एवं जहेव भवसिद्धियसयं भणियं, [एवं अभवसिद्धियसयं] णवरं णव उद्देसगा चरमअचरम-उद्देसगवज्जा, सेसं तहेव ।

॥ णवमं एगिंदियसयं समत्तं ॥

भावार्थ–प्रश्न–हे भगवन् ! अभवसिद्धिक एकेन्द्रिय कितने प्रकार के कहे हैं ?

उत्तर–हे गौतम ! अभवसिद्धिक एकेन्द्रिय पांच प्रकार के कहे हैं । यथा–पृथ्वीकायिक यावत् वनस्पतिकायिक । भवसिद्धिक शतक के अनुसार अभव-सिद्धिक शतक भी कहना चाहिये, परन्तु यहां 'चरम और अचरम' ये दो उद्देशक छोड़ कर शेष नौ उद्देशक कहना चाहिये । शेष पूर्ववत् ।

विवेचन–अभवसिद्धिक जीव अचरम होते हैं । इसलिये उनमें चरम और

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अचरम' ऐसे दो विभाग नहीं होते। अतएव ये दो उद्देशक छोड़ने से इस शतक में नौ उद्देशक ही होते हैं।

॥ तेतीसवें शतक का नौवां अवान्तर शतक सम्पूर्ण ॥

## अवांतर शतक १०

—एवं कण्हलेस्सअभवसिद्धियएगिंदियसयं पि।

॥ दसमं एगिंदियसयं समत्तं ॥

भावार्थ—इसी प्रकार कृष्णलेश्या वाले अभवसिद्धिक एकेन्द्रिय का शतक भी।

॥ तेतीसवें शतक का दसवां अवान्तर शतक सम्पूर्ण ॥

## अवांतर शतक ११

—णीललेस्सअभवसिद्धियएगिंदियहि वि सयं।

॥ इक्कारसमं एगिंदियसयं समत्तं ॥

भावार्थ—इसी प्रकार नीललेश्या वाले अभवसिद्धिक एकेन्द्रिय का शतक भी कहना चाहिये।

॥ तेतीसवें शतक का ग्यारहवां अवान्तर शतक सम्पूर्ण ॥

## अवांतर शतक १२

—काउलेस्सअभवसिद्धियसयं, एवं चत्तारि वि अभवसिद्धियसयाणि,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णव णव उद्देसगा भवंति, एवं एयाणि बारस एगिंदियसयाणि भवंति ।

॥ बारसमं एगिंदियसयं समत्तं ॥

॥ तेत्तीसइमं सयं समत्तं ॥

–इसी प्रकार कापोत लेश्या वाले अभवसिद्धिक एकेन्द्रिय का शतक भी कहना चाहिये । अभवसिद्धिक के चार शतक हैं और प्रत्येक में नौ-नौ उद्देशक हैं । इस प्रकार कुल मिला कर एकेन्द्रिय के बारह शतक हैं ।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'– कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

॥ तेतीसवें शतक का बारहवाँ अवान्तर शतक सम्पूर्ण ॥

॥ तेतीसवाँ शतक सम्पूर्ण ॥

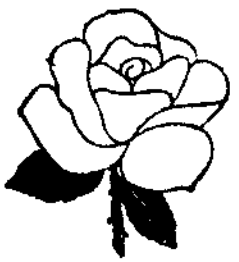

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# शतक ३४

## (श्रेणी शतक)

### अवांतर शतक १–उद्देशक १ विग्रहगति

१ प्रश्न–कइविहा णं भंते ! एगिंदिया पण्णत्ता ?

१ उत्तर–गोयमा ! पंचविहा एगिंदिया पण्णत्ता, तं जहा–पुढवि-काइया जाव वणस्सइकाइया । एवं एएणं चेव चउक्कएणं भेएणं भाणि-यव्वा जाव वणस्सइकाइया ।

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! एकेन्द्रिय कितने प्रकार के कहे हैं ?

१ उत्तर–हे गौतम ! एकेन्द्रिय पांच प्रकार के कहे हैं । यथा–पृथ्वी-कायिक यावत् वनस्पतिकायिक । इस प्रकार पूर्वोक्त (सूक्ष्म, बादर, पर्याप्त और अपर्याप्त) चार भेद यावत् वनस्पतिकायिक पर्यन्त ।

२ प्रश्न–अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइए णं भंते ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पुरच्छिमिल्ले चरिमंते समोहए, समोहणित्ता जे भविए इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पच्चत्थिमिल्ले चरिमंते अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइय-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

त्ताए उववज्जित्तए, से णं भंते ! कइसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा ?

२ उत्तर--गोयमा ! एगसमइएण वा दुसमइएण वा तिसमइएण वा विग्गहेणं उववज्जेज्जा ।

भावार्थ–२ प्रश्न– हे भगवन् ! अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव इस रत्नप्रभा पृथ्वी के पूर्व-दिशा के चरमान्त में मरण-समुद्घात कर के इस रत्नप्रभा पृथ्वी के पश्चिम चरमान्त में अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिकपने उत्पन्न होने के योग्य है, तो वह कितने समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है ?

२ उत्तर–हे गौतम ! एक समय, दो समय अथवा तीन समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है ।

३ प्रश्न--से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ--'एगसमइएण वा दुसमइएण वा जाव उववज्जेज्जा' ।

३ उत्तर--एवं खलु गोयमा ! मए सत्त सेढीओ पण्णत्ताओ, तं जहा--१ उज्जुआयता सेढी २ एगओवंका ३ दुहओवंका ४ एगओखहा ५ दुहओखहा ६ चक्कवाला ७ अद्धचक्कवाला । १ उज्जुआयताए सेढीए उववज्जमाणे एगसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा । २ एगओवंकाए सेढीए उववज्जमाणे दुसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा । ३ दुहओवंकाए सेढीए उववज्जमाणे तिसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा । से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव उववज्जेज्जा ।

भावार्थ–३ प्रश्न–हे भगवन् ! ऐसा क्यों कहा गया कि वह एक समय,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दो समय या तीन समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है ?

३ उत्तर–हे गौतम ! मैंने सात श्रेणियां कही हैं । यथा–१ ऋजुआयता २ एकतोवक्रा ३ उभयतोवक्रा ४ एकतःखा ५ उभयतःखा ६ चक्रवाल और ७ अर्द्धचक्रवाल ।

जो पृथ्वीकायिक जीव ऋजुआयता श्रेणी से उत्पन्न होता है, वह एक समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है । जो एकतोवक्रा श्रेणी से उत्पन्न होता है, वह दो समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है । जो उभयतोवक्रा श्रेणी से उत्पन्न होता है, वह तीन समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है । इस कारण हे गौतम ! एक समय, दो समय या तीन समय की विग्रहगति से उत्पन्न होना कहा है ।

४ प्रश्न–अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइए णं भंते ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पुरच्छिमिल्ले चरिमंते समोहए, समोहणित्ता जे भविए इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पच्चच्छिमिल्ले चरिमंते पज्जत्तसुहुमपुढविकाइयत्ताए उववज्जित्तए से णं भंते ! कइसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा ?

४ उत्तर–गोयमा ! एगसमइएण वा–सेसं तं चेव जाव से तेणट्ठेणं जाव विग्गहेणं उववज्जेज्जा । एवं अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइओ पुरच्छिमिल्ले चरिमंते समोहणावेत्ता पच्चच्छिमिल्ले चरिमंते बादरपुढविकाइएसु अपज्जत्तएसु उववाएयव्वो, ताहे तेसु चेव पज्जत्तएसु ४ । एवं आउकाइएसु चत्तारि आलावगा–१ सुहुमेहिं अपज्जत्तएहिं २ ताहे पज्जत्तएहिं ३ बायरेहिं अपज्जत्तएहिं ४ ताहे पज्जत्त-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एहिं उववाएयव्वो । १ एवं चेव सुहुमतेउकाइएहिं वि अपज्जत्तएहिं २ ताहे पज्जत्तएहिं उववाएयव्वो ।

भावार्थ-४ प्रश्न-हे भगवन् ! अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव, जो रत्नप्रभा पृथ्वी के पूर्व-दिशा के चरमान्त में मरण-समुद्घात कर के इस रत्नप्रभा पृथ्वी के पश्चिम दिशा के चरमान्त में पर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिकपने उत्पन्न होने के योग्य है, हे भगवन् ! वह कितने समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है ?

४ उत्तर-हे गौतम ! वह एक समय, दो समय या तीन समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है इत्यादि पूर्ववत्, यावत् 'इस कारण विग्रहगति से उत्पन्न होता है' पर्यन्त । इस प्रकार अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक का पूर्व चरमान्त में मरण-समुद्घात से मरण हो कर पश्चिम चरमान्त में बादर अपर्याप्त पृथ्वीकायिकपने और वहीं पर्याप्तपने उपपात कहना चाहिये । इस प्रकार अप्कायिक जीव के भी चार आलापक हैं, यथा-सूक्ष्म अपर्याप्त, सूक्ष्म पर्याप्त, बादर अपर्याप्त और बादर पर्याप्त में उपपात कहना चाहिये और इस प्रकार सूक्ष्म तेजस्कायिक अपर्याप्त और पर्याप्त में उपपात कहना चाहिये ।

५ प्रश्न-अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइए णं भंते ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पुरच्छिमिल्ले चरिमंते समोहए समोहणित्ता जे भविए मणुस्सखेत्ते अपज्जत्तबायरतेउकाइयत्ताए उववज्जित्तए से णं भंते ! कइसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा ?

५ उत्तर-सेसं तं चेव । एवं पज्जत्तबायरतेउकाइयत्ताए उववाएयव्वो ४ । वाउकाइएसु सुहुमबायरेसु जहा आउकाइएसु उववाइओ तहा उववाएयव्वो ४ । एवं वणस्सइकाइएसु वि २० ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ-५ प्रश्न-हे भगवन् ! अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव, जो इस रत्न-प्रभा पृथ्वी के पूर्व-दिशा के चरमान्त में मरण-समुद्घात कर के मनुष्य-क्षेत्र में अपर्याप्त बादर तेजस्कायिकपने उत्पन्न हो, तो कितने समय की विग्रह-गति से उत्पन्न होता है ?

५ उत्तर-हे गौतम ! पूर्ववत । इस प्रकार पर्याप्त बादर तेजस्कायिक-पने भी उपपात कहना चाहिये । जिस प्रकार सूक्ष्म और बादर अप्कायिक में उपपात कहा, उसी प्रकार सूक्ष्म और बादर वायुकायिक और वनस्पतिकायिक में भी कहना चाहिये ।

६ प्रश्न-पज्जत्तसुहुमपुढविकाइए णं भंते ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए० ?

६ उत्तर-एवं पज्जत्तसुहुमपुढविकाइओ वि पुरच्छिमिल्ले चरिमंते समोहणावेत्ता एएणं चेव कमेणं एएसु चेव वीससु ठाणेसु उववाएयव्वो जाव बायरवणस्सइकाइएसु पज्जत्तएसु वि ४० । एवं अपज्जत्तबायर-पुढविकाइओ वि ६० । एवं पज्जत्तबायरपुढविकाइओ वि ८० । एवं आउकाइओ वि चउसु वि गमएसु पुरच्छिमिल्ले चरिमंते समोहए, एयाए चेव वत्तव्वयाए एएसु चेव वीसइठाणेसु उववाएयव्वो १६० । सुहुमतेउकाइओ वि अपज्जत्तओ पज्जत्तओ य एएसु चेव वीसाए ठाणेसु उववाएयव्वो ।

भावार्थ-६ प्रश्न-हे भगवन् ! पर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव इस रत्नप्रभा पृथ्वी के इत्यादि पूर्वोक्त प्रश्न ।

६ उत्तर-हे गौतम ! पर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव भी रत्नप्रभा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पृथ्वी के पूर्व चरमान्त में मरण-समुद्घात से मर कर अनुक्रम से इन बीस स्थानों में यावत् बादर पर्याप्त वनस्पतिकायिक तक उपपात कहना चाहिये। इसी प्रकार अपर्याप्त बादर पृथ्वीकायिक और पर्याप्त बादर पृथ्वीकायिक भी कहना चाहिये। इसी प्रकार अप्कायिक जीव के भी चार गमक से पूर्व चरमान्त में समुद्घातपूर्वक मर कर पूर्वोक्त बीस स्थानों में पूर्ववत् वक्तव्यता से उपपात का कथन करना चाहिये। अपर्याप्त और पर्याप्त सूक्ष्म तेजस्कायिक जीव के भी इन बीस स्थानों में पूर्वोक्त रूप से उपपात कहना चाहिये।

७ प्रश्न—अपज्जत्तबायरतेउकाइए णं भंते ! मणुस्सखेत्ते समोहए, समोहणित्ता जे भविए इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पच्चच्छिमिल्ले चरिमंते अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइयत्ताए उववज्जित्तए से णं भंते ! कइसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा ?

७ उत्तर—सेसं तहेव जाव से तेणट्ठेणं०। एवं पुढविकाइएसु चउविहेसु वि उववाएयव्वो, एवं आउकाइएसु चउविहेसु वि, तेउकाइएसु सुहुमेसु अपज्जत्तएसु पज्जत्तएसु य एवं चेव उववाएयव्वो।

भावार्थ—७ प्रश्न—हे भगवन् ! अपर्याप्त बादर तेजस्कायिक जीव, जो मनुष्य क्षेत्र में मरण-समुद्घात कर के रत्नप्रभा पृथ्वी के पश्चिम चरमान्त में अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिकपने उत्पन्न होने के योग्य है, हे भगवन् ! वह कितने समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है ?

७ उत्तर—हे गौतम ! पूर्ववत्। इसी प्रकार अपर्याप्त बादर तेजस्कायिक जीव का चारों प्रकार के पृथ्वीकायिक में, चारों प्रकार के अप्कायिक में तथा अपर्याप्त और पर्याप्त सूक्ष्म तेजस्कायिक जीव में भी उपपात कहना चाहिये।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

८ प्रश्न--अपज्जत्तबायरतेउकाइए णं भंते ! मणुस्सखेत्ते समोहए, समोहणित्ता जे भविए मणुस्सखेत्ते अपज्जत्तबायरतेउकाइयत्ताए उववज्जित्तए सेणं भंते ! कइसमएणं० ?

८ उत्तर--सेसं तं चेव । एवं पज्जत्तबायरतेउकाइयत्ताए वि उववाएयव्वो । वाउकाइयत्ताए य वणस्सइकाइयत्ताए य जहा पुढविकाइएसु तहेव चउक्कएणं भेएणं उववाएयव्वो । एवं पज्जत्तबायरतेउकाइओ वि समयखेत्ते समोहणावेत्ता एएसु चेव वीसाए ठाणेसु उववाएयव्वो । जहेव अपज्जत्तओ उववाइओ, एवं सव्वत्थ वि बायरतेउकाइया अपज्जत्तगा य पज्जत्तगा य समयखेत्ते उववाएयव्वा समोहणावेयव्वा वि २४० । वाउकाइया वणस्सइकाइया य जहा पुढविकाइया तहेव चउक्कएणं भेएणं उववाएयव्वा जाव--

कठिन शब्दार्थ-समयखेत्ते--समय क्षेत्र--मनुष्य क्षेत्र ।

भावार्थ--८ प्रश्न--हे भगवन् ! अपर्याप्त बादर तेजस्कायिक जीव, जो मनुष्य क्षेत्र में मरण-समुद्घात कर के मनुष्य क्षेत्र में अपर्याप्त बादर तेजस्कायिकपने उत्पन्न होने के योग्य है, तो हे भगवन् ! वह कितने समय की विग्रह गति से उत्पन्न होता है ?

८ उत्तर--हे गौतम ! पूर्ववत् । इसी प्रकार पर्याप्त बादर तेजस्कायिकपने भी उपपात कहना चाहिये । जिस प्रकार पृथ्वीकायिक में कहा, उसी प्रकार चार भेदों से वायुकायिकपने और वनस्पतिकायिकपने उपपात कहना चाहिये । इसी प्रकार पर्याप्त बादर तेजस्कायिक का भी मनुष्य क्षेत्र में समुद्घात कर के इन बीस स्थानों में उपपात कहना चाहिये । जिस प्रकार अपर्याप्त का उपपात कहा है, उसी प्रकार सभी पर्याप्त और अपर्याप्त बादर तेजस्कायिक

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

का मनुष्य-क्षेत्र में समुद्घात और उपपात कहना चाहिये। पृथ्वीकायिक उपपात के समान चार-चार भेद से वायुकायिक और वनस्पतिकायिक जीव का उपपात भी कहना चाहिये। यावत्-

९ प्रश्न-पज्जत्तबायरवणस्सइकाइए णं भंते ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पुरच्छिमिल्ले चरिमंते समोहए, समोहणित्ता जे भविए इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पच्चच्छिमिल्ले चरिमंते पज्जत्तबायरवणस्सइकाइयत्ताए उववज्जित्तए से णं भंते ! कइसमइएणं० ?

९ उत्तर-सेसं तहेव जाव से तेणट्ठेणं० । ४००

भावार्थ-९ प्रश्न-हे भगवन् ! पर्याप्त बादर वनस्पतिकायिक जीव, रत्नप्रभा पृथ्वी के पूर्व चरमान्त में मरण-समुद्घात कर के इस रत्नप्रभा पृथ्वी के पश्चिम चरमान्त में बादर वनस्पतिकायिकपने उत्पन्न हो, तो कितने समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है ?

९ उत्तर-हे गौतम ! पूर्ववत् यावत् 'इस कारण ऐसा कहा है' पर्यन्त।

१० प्रश्न-अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइए णं भंते ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पच्चच्छिमिल्ले चरिमंते समोहए समोहणित्ता जे भविए इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पुरच्छिमिल्ले चरिमंते अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइयत्ताए उववज्जित्तए से णं भंते ! कइसमइएणं० ?

१० उत्तर-सेसं तहेव णिरवसेसं। एवं जहेव पुरच्छिमिल्ले चरिमंते सव्वपएसु वि समोहया पच्चच्छिमिल्ले चरिमंते समयखेत्ते य उववाइया, जे य समयखेत्ते समोहया पच्चच्छिमिल्ले चरिमंते समय-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

खेते य उववाइया, एवं एएणं चेव कमेणं पच्चच्छिमिल्ले चरिमंते समयखेते य समोहया पुरच्छिमिल्ले चरिमंते समयखेत्ते य उववाएयव्वा तेणेव गमएणं। एवं एएणं गमएणं दाहिणिल्ले चरिमंते समोहयाणं उत्तरिल्ले चरिमंते समयखेत्ते य उववाओ, एवं चेव उत्तरिल्ले चरिमंते समयखेत्ते य समोहया दाहिणिल्ले चरिमंते समयखेत्ते य उववाएयव्वा तेणेव गमएणं।

भावार्थ-१० प्रश्न-हे भगवन्! अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव, रत्नप्रभा पृथ्वी के पश्चिम चरमान्त में समुद्घात कर के, रत्नप्रभा पृथ्वी के पूर्व चरमान्त में अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिकपने उत्पन्न हो, तो कितने समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है?

१० उत्तर-हे गौतम! पूर्ववत्। पूर्व चरमान्त के सभी पदों में समुद्घात कर के पश्चिम चरमान्त में और मनुष्य-क्षेत्र में तथा जिसका मनुष्य-क्षेत्र में समुद्घातपूर्वक पश्चिम चरमान्त में और मनुष्य-क्षेत्र में उपपात कहा, उसी प्रकार उसी क्रम से पश्चिम चरमान्त में और मनुष्य-क्षेत्र में समुद्घातपूर्वक पूर्व चरमान्त में और मनुष्य-क्षेत्र में उसी गमक से उपपात होता है और इसी प्रकार दक्षिण के चरमान्त से समुद्घातपूर्वक उत्तर के चरमान्त में और मनुष्य-क्षेत्र में उपपात तथा उत्तर चरमान्त में और मनुष्य-क्षेत्र से समुद्घात कर के दक्षिण चरमान्त में और मनुष्य-क्षेत्र में उपपात कहना चाहिये।

११ प्रश्न-अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइए णं भंते! सक्करप्पभाए पुढवीए पुरच्छिमिल्ले चरिमंते समोहए, समोहणित्ता जे भविए सक्करप्पभाए पुढवीए पच्चच्छिमिल्ले चरिमंते अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइयत्ताए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उववज्जित्तए० ?

११ उत्तर-एवं जहेव रयणप्पभाए जाव से तेणट्ठेणं० । एवं एएणं कमेणं जाव पज्जत्तएसु सुहुमतेउकाइएसु ।

भावार्थ-११ प्रश्न-हे भगवन् ! अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव, शर्कराप्रभा पृथ्वी के पूर्व चरमान्त में मरण-समुद्घात कर के शर्कराप्रभा के पश्चिम चरमान्त में अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिकपने उत्पन्न हो० ?

११ उत्तर-हे गौतम ! रत्नप्रभा पृथ्वी के कथनानुसार, यावत् 'इस कारण ऐसा कहा है' पर्यन्त और इस क्रम से यावत् पर्याप्त सूक्ष्म तेजस्कायिक पर्यन्त ।

१२ प्रश्न-अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइए णं भंते ! सक्करप्पभाए पुढवीए पुरच्छिमिल्ले चरिमंते समोहए, समोहणित्ता जे भविए समयखेत्ते अपज्जत्तबायरतेउकाइयत्ताए उववज्जित्तए से णं भंते ! कइसमएणं०-पुच्छा ।

१२ उत्तर-गोयमा ! दुसमइएण वा तिसमइएण वा विग्गहेण उववज्जेज्जा ।

भावार्थ-१२ प्रश्न-हे भगवन् ! अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव, शर्कराप्रभा पृथ्वी के पूर्व चरमान्त में मरण-समुद्घात कर के मनुष्य-क्षेत्र में अपर्याप्त बादर तेजस्कायिकपने उत्पन्न हो, तो वह कितने समय की विग्रहगति से० ?

१२ उत्तर-हे गौतम ! दो अथवा तीन समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१३ प्रश्न-से केणट्ठेणं० ?

१३ उत्तर-एवं खलु गोयमा ! मए सत्त सेढीओ पण्णत्ताओ, तं जहा-१ उज्जुआयता जाव अद्धचक्कवाला । एगओवंकाए सेढीए उववज्जमाणे दुसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा, दुहओवंकाए सेढीए उववज्जमाणे तिसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा, से तेणट्ठेणं० । एवं पज्जत्तएसु वि बायरतेउकाइएसु। सेसं जहा रयणप्पभाए । जे वि बायरतेउकाइया अपज्जत्तगा य पज्जत्तगा य समयखेत्ते समोहणित्ता दोच्चाए पुढवीए पच्चच्छिमिल्ले चरिमंते पुढविकाइएसु चउव्विहेसु, आउकाइएसु चउव्विहेसु, तेउकाइएसु दुविहेसु, वाउकाइएसु चउव्विहेसु, वणस्सइकाइएसु चउव्विहेसु उववज्जंति ते वि एवं चेव दुसमइएण वा तिसमइएण वा विग्गहेण उववाएयव्वा । बायरतेउकाइया अपज्जत्तगा य पज्जत्तगा य जाहे तेसु चेव उववज्जंति ताहे जहेव रयणप्पभाए तहेव एगसमइय-दुसमइय-तिसमइयविग्गहा भाणियव्वा सेसं जहेव रयणप्पभाए तहेव णिरवसेसं । जहा सक्करप्पभाए वत्तव्वया भणिया एवं जाव अहेसत्तमाए वि भाणियव्वा ।

भावार्थ-१३ प्रश्न-हे भगवन् ! क्या कारण है कि वह दो या तीन समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है ?

१३ उत्तर-हे गौतम ! मैंने सात श्रेणियां कही हैं । यथा-ऋजुआयता यावत् अर्द्धचक्रवाल । जो एकतोवक्रा श्रेणी से उत्पन्न होता है, वह दो समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है और जो उभयतोवक्रा श्रेणी से उत्पन्न होता है,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वह तीन समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है। इस कारण हे गौतम ! पूर्वोक्त रूप से कहा है। इसी प्रकार पर्याप्त बादर तेजस्कायिकपने भी। शेष सभी रत्नप्रभा के समान। पर्याप्त और अपर्याप्त बादर तेजस्कायिक जीव मनुष्य-क्षेत्र में समुद्घात कर के शर्कराप्रभा पृथ्वी के पश्चिम चरमान्त में, चारों प्रकार के पृथ्वीकायिक जीवों में, चारों प्रकार के अप्कायिक जीवों में, दो प्रकार के तेजस्कायिक जीवों में, चार प्रकार के वायुकायिक जीवों में और चार प्रकार के वनस्पतिकायिक जीवों में उत्पन्न होते हैं। उनके भी दो या तीन समय की विग्रहगति से उपपात कहना चाहिये। जब पर्याप्त और अपर्याप्त बादर तेजस्-कायिक जीव उन्हीं में उत्पन्न होते हैं, तब उनके लिये रत्नप्रभा पृथ्वी के अनुसार एक, दो या तीन समय की विग्रहगति कहनी चाहिये। शेष सभी रत्नप्रभा के समान। इसी प्रकार शर्कराप्रभा यावत् अधःसप्तम पृथ्वी पर्यन्त जानो।

**विवेचन**-एक स्थान से मर कर दूसरे स्थान पर जाते हुए जीव को मध्य में जो गति होती है, उसे 'विग्रहगति' कहते हैं। वह श्रेणी के अनुसार होती है। श्रेणी सात कही है। जिससे जीव और पुद्गलों की गति होती है, ऐसी आकाश प्रदेश की पंक्ति को 'श्रेणी' कहते हैं। जीव और पुद्गल एक स्थान से दूसरे स्थान पर, श्रेणी के अनुसार ही जा सकते हैं, बिना श्रेणी के गति नहीं होती। श्रेणियाँ सात हैं—

१ ऋज्वायता—जिस श्रेणी के द्वारा जीव ऊर्ध्वलोक आदि से अधोलोक आदि में सीधे चले जाते हैं, उसे 'ऋज्वायता श्रेणी' कहते हैं। इस श्रेणी के अनुसार जाने वाला जीव एक ही समय में गन्तव्य स्थान पर पहुँच जाता है।

२ एकतोवक्रा-जिस श्रेणी से जीव सीधा जा कर वक्रगति प्राप्त करे अर्थात् दूसरी श्रेणी में प्रवेश करे, उसे 'एकतोवक्रा' कहते हैं। इससे जाने वाले जीव को दो समय लगते हैं।

३ उभयतोवक्रा-जिस श्रेणी से जाता हुआ जीव दो बार वक्रगति करे अर्थात् दो बार दूसरी श्रेणी को प्राप्त करे, उसमें जीव को तीन समय लगते हैं। यह श्रेणी आग्नेयी (पूर्व-दक्षिण) दिशा से अधोलोक की वायव्यी (उत्तर-पश्चिम) दिशा में उत्पन्न होने वाले जीव के होती है। पहले समय में वह आग्नेयी दिशा से नीचे की ओर आग्नेयी दिशा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

में जाता है। दूसरे समय में तिर्च्छा पश्चिम की ओर दक्षिण दिशा के कोण अर्थात् नैऋत्य दिशा का ओर जाता है। तीसरे समय में वहाँ से तिर्च्छा हो कर उत्तर पश्चिम कोण अर्थात् वायव्यी दिशा की ओर जाता है। यह तीन समय की गति त्रसनाड़ी अथवा उससे बाहर के भाग में होती है।

४ एकतःखा—जिस श्रेणी से जीव या पुद्गल त्रसनाड़ी के बाएँ पक्ष से त्रसनाड़ी में प्रवेश करे और फिर त्रसनाड़ी से जा कर उसके बाईं ओर वाले भाग में उत्पन्न होते हैं, उसे 'एकतःखा' श्रेणी कहते हैं। इस श्रेणी के एक ओर त्रसनाड़ी के बाहर का आकाश आया हुआ है। आकाश को 'ख' कहते हैं। इसलिये इसका नाम 'एकतःखा' है। इस श्रेणी में एक, दो, तीन या चार समय की वक्रगति होने पर भी क्षेत्र की अपेक्षा उसे पृथक् कहा है।

५ उभतःखा—त्रसनाड़ी से बाहर से बाएँ पक्ष में प्रवेश कर के त्रसनाड़ी से जाते हुए दाहिने पक्ष में जिस श्रेणी में उत्पन्न होते हैं, उसे 'उभतःखा' कहते हैं।

६ चक्रवाल—जिस श्रेणी से परमाणु आदि गोल चक्कर लगा कर उत्पन्न होते हैं, उसे 'चक्रवाल' कहते हैं।

७ अर्द्ध चक्रवाल—जिस श्रेणी से आधा चक्कर लगा कर उत्पन्न होते हैं, उसे 'अर्द्ध चक्रवाल' श्रेणी कहते हैं।

बादर तेजस्काय मनुष्य-क्षेत्र में ही होती है, उसके बाहर उसकी उत्पत्ति नहीं होती, इसलिये उसके प्रश्नोत्तरों में 'मनुष्य-क्षेत्र' कहा है।

पृथ्वीकायिक आदि में प्रत्येक के सूक्ष्म, बादर, पर्याप्त और अपर्याप्त, ये चार-चार भेद होने से बीस भेद होते हैं। इनमें प्रत्येक जीव-स्थान में बीस-बीस गमक होते हैं। इस प्रकार २०×२०=४०० गमक पूर्व-दिशा के चरमान्त की अपेक्षा होते हैं। इसी प्रकार चारों दिशाओं के रत्नप्रभा के १६०० गमक होते हैं और इसी प्रकार प्रत्येक नरक के सोलह सौ-सोलह सौ गमक होते हैं।

शर्कराप्रभा के पूर्व चरमान्त से मनुष्य-क्षेत्र में उत्पन्न होने वाले जीव को समश्रेणी नहीं होती। इसलिये उसमें एक समय की विग्रहगति नहीं होती, दो या तीन समय की होती है।

रत्नप्रभा के पश्चिम चरमान्त में बादर तेजस्काय न होने से सूक्ष्म पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो भेद ही कहे हैं। बादर पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो भेद मनुष्य-क्षेत्र की अपेक्षा कहे हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१४ प्रश्न-अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइए णं भंते ! अहोलोयखेत्तणालीए बाहिरिल्ले खेत्ते समोहए, समोहणित्ता जे भविए उड्ढलोयखेत्तणालीए बाहिरिल्ले खेत्ते अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइयत्ताए उववज्जित्तए से णं भंते ! कइसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा ?

१४ उत्तर-गोयमा ! तिसमइएण वा चउसमइएण वा विग्गहेणं उववज्जेज्जा ।

प्रश्न-से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ-'तिसमइएण वा चउसमइएण वा विग्गहेणं उववज्जेज्जा ?'

उत्तर-गोयमा ! अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइए णं अहोलोयखेत्तणालीए बाहिरिल्ले खेत्ते समोहए, समोहणित्ता जे भविए उड्ढलोयखेत्तणालीए बाहिरिल्ले खेत्ते अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइयत्ताए एगपयरंमि अणुसेढीए उववज्जित्तए से णं तिसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा, जे भविए विसेढीए उववज्जित्तए से णं चउसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा, से तेणट्ठेणं जाव उववज्जेज्जा । एवं पज्जत्तसुहुमपुढविकाइयत्ताए वि, एवं जाव पज्जत्तसुहुमतेउकाइयत्ताए ।

भावार्थ-१४ प्रश्न-हे भगवन् ! अपर्याप्त सूक्ष्मपृथ्वीकायिक जीव, अधोलोक की त्रसनाड़ी के बाहर के क्षेत्र में मरण-समुद्घात कर के ऊर्ध्वलोक की त्रसनाड़ी के बाहर के क्षेत्र में अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिकपने उत्पन्न होने योग्य है, तो हे भगवन् ! वह कितने समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है ?

१४ उत्तर-हे गौतम ! वह तीन या चार समय की विग्रहगति से

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उत्पन्न होता है।

प्रश्न–हे भगवन् ! ऐसा कहने का क्या कारण है कि वह तीन या चार समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है ?

उत्तर–हे गौतम ! जो अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव अधोलोक क्षेत्र की त्रसनाड़ी के बाहर के क्षेत्र में मरण-समुद्घात कर के ऊर्ध्वलोक क्षेत्र की त्रसनाड़ी के बाहर के क्षेत्र में अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिकपने एक प्रतर में अनुश्रेणी (समश्रेणी) में उत्पन्न होने योग्य है, वह तीन समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है और जो विश्रेणी में उत्पन्न होने योग्य है। वह चार समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है। इस कारण हे गौतम ! ऐसा कहा है कि 'तीन या चार समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है।' इस प्रकार जो पर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिकपने यावत् पर्याप्त सूक्ष्म तेजस्कायिकपने उत्पन्न होता है, उसके विषय में भी जानना चाहिये।

१५ प्रश्न–अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइए णं भंते ! अहेलोग जाव समोहणित्ता जे भविए समयखेत्ते अपज्जत्तबायरतेउकाइयत्ताए उववज्जित्तए से णं भंते ! कइसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा ?

१५ उत्तर–गोयमा ! दुसमइएण वा तिसमइएण वा विग्गहेणं उववज्जेज्जा।

प्रश्न–से केणट्ठेणं० ?

उत्तर–एवं खलु गोयमा ! मए सत्त सेढीओ पण्णत्ताओ, तं जहा–१ उज्जुआयता, जाव ७ अद्धचक्कवाला। एगओवंकाए सेढीए उववज्जमाणे दुसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा, दुहओवंकाए सेढीए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उववज्जमाणे तिसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा, से तेणट्ठेणं० । एवं पज्जत्तएसु वि बायरतेउक्काइएसु वि उववाएयव्वो । वाउक्काइय-वणस्सइकाइयत्ताए चउक्एणं भेदेणं जहा आउक्काइयत्ताए तहेव उववाएयव्वो २० । एवं जहा अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइयस्स गमओ भणिओ एवं पज्जत्तसुहुमपुढविकाइयस्स वि भाणियव्वो, तहेव वीसाए ठाणेसु उववाएयव्वो ४० ।

भावार्थ–१५ प्रश्न–हे भगवन् ! जो अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव अधोलोक क्षेत्र की त्रसनाड़ी के बाहर के क्षेत्र में मरण-समुद्घात कर के मनुष्य क्षेत्र में अपर्याप्त बादर तेजस्कायिकपने उत्पन्न हो, तो वह कितने समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है ?

१५ उत्तर–हे गौतम ! वह दो या तीन समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है ।

प्रश्न–हे भगवन् ! क्या कारण है कि वह दो या तीन समय की विग्रह-गति से उत्पन्न होता है ?

उत्तर–हे गौतम ! मैंने सात श्रेणियां कही है । यथा–ऋजवायता यावत् अर्द्ध चक्रवाल । यदि वह जीव एकतोवक्रा श्रेणी से उत्पन्न होता है, तो दो समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है और यदि उभतोवक्रा श्रेणी से उत्पन्न होता है, तो तीन समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है । इस कारण हे गौतम ! पूर्वोक्त कथन है । इस प्रकार पर्याप्त बादर तेजस्कायिक जीव में भी उपपात जानो । अप्कायिक के समान वायुकायिक और वनस्पतिकायिकपने भी चार-चार भेद से उपपात कहना चाहिये । इस प्रकार अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वी-कायिक के गमक के समान पर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक में भी गमक और उसी प्रकार बीस स्थानों में उपपात कहना चाहिये ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१६ प्रश्न–अहोलोयखेत्तणालीए बाहिरिल्ले खेत्ते समोहए, समोहणित्ता० ?

१६ उत्तर–एवं बायरपुढविकाइयस्स वि अपज्जत्तगस्स पज्जत्तगस्स य भाणियव्वं ८०। एवं आउक्काइयस्स चउव्विहस्स वि भाणियव्वं १८०। सुहुमतेउक्काइयस्स दुविहस्स वि एवं चेव २००।

भावार्थ–१६ प्रश्न–हे भगवन् ! अधोलोक क्षेत्र की त्रसनाड़ी के बाहर के क्षेत्र में मरण-समुद्घात कर के० ?

१६ उत्तर–हे गौतम ! पूर्ववत्। इसी प्रकार पर्याप्त और अपर्याप्त बादर पृथ्वीकायिक में और चारों प्रकार के अप्कायिक जीव में तथा पर्याप्त और अपर्याप्त सूक्ष्म तेजस्कायिक जीव में भी इसी प्रकार है।

१७ प्रश्न–अपज्जत्तबायरतेउक्काइए णं भंते ! समयखेत्ते समोहए, समोहणित्ता जे भविए उड्ढलोगखेत्तणालीए बाहिरिल्ले खेत्ते अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइयत्ताए उववज्जित्तए से णं भंते ! कइसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा ।

१७ उत्तर–गोयमा ! दुसमइएण वा तिसमइएण वा चउसमइएण वा विग्गहेणं उववज्जेज्जा ।

प्रश्न–से केणट्ठेणं० ?

उत्तर–अट्ठो जहेव रयणप्पभाए तहेव सत्त सेढीओ। एवं जाव–

भावार्थ–१७ प्रश्न–हे भगवन् ! जो अपर्याप्त बादर तेजस्कायिक जीव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मनुष्यक्षेत्र में मरण-समुद्घात कर के ऊर्ध्वलोक क्षेत्र की त्रसनाड़ी के बाहर के क्षेत्र में अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिकपने उत्पन्न हो, तो कितने समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है ?

१७ उत्तर-हे गौतम ! दो, तीन, या चार समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है ।

प्रश्न-हे भगवन् ! ऐसा क्यों कहा गया कि यावत् चार समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है ?

उत्तर-हे गौतम ! रत्नप्रभा पृथ्वी में सात श्रेणी आदि का जो कथन किया है, वही यहां भी कहना चाहिये । इसी प्रकार यावत्-

१८ प्रश्न-अपज्जत्तबायरतेउकाइए णं भंते ! समयखेत्ते समोहए, समोहणित्ता जे भविए उड्ढलोगखेत्तणालीए बाहिरिल्ले खेत्ते पज्जत्त-सुहुमतेउकाइयत्ताए उववज्जित्तए से णं भंते !० ?

१८ उत्तर-सेसं तं चेव ।

भावार्थ-१८ प्रश्न-हे भगवन् ! जो अपर्याप्त बादर तेजस्कायिक जीव, मनुष्य-क्षेत्र में मरण-समुद्घात कर के ऊर्ध्वलोक क्षेत्र की त्रसनाड़ी के बाहर के क्षेत्र में पर्याप्त सूक्ष्म तेजस्कायिकपने उत्पन्न हो, तो० ?

१८ उत्तर-हे गौतम ! शेष पूर्वोक्त प्रकार से ही ।

१९ प्रश्न-अपज्जत्तबायरतेउकाइए णं भंते ! समयखेत्ते समोहए, समोहणित्ता जे भविए समयखेत्ते अपज्जत्तबायरतेउकाइयत्ताए उववज्जित्तए से णं भंते ! कइसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा ?

१९ उत्तर-गोयमा ! एगसमइएण वा दुसमइएण वा तिसमइएण

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वा विग्गहेणं उववज्जेज्जा ।

प्रश्न-से केणट्ठेणं ?

उत्तर-अट्ठो जहेव रयणप्पभाए तहेव सत्त सेढीओ । एवं पज्जत्त-बायरतेउकाइयत्ताए वि । वाउकाइएसु वणस्सइकाइएसु य जहा पुढवि-काइएसु उववाइओ तहेव चउक्एणं भेदेणं उववाएयव्वो । एवं पज्जत्तबायरतेउकाइओ वि एएसु चेव ठाणेसु उववाएयव्वो । वाउकाइय-वणस्सइकाइयाणं जहेव पुढविकाइयत्ते उववाओ तहेव भाणियव्वो ।

भावार्थ-१९ प्रश्न-हे भगवन् ! जो अपर्याप्त बादर तेजस्कायिक जीव मनुष्य-क्षेत्र में मरण-समुद्घात कर के मनुष्य-क्षेत्र में अपर्याप्त बादर तेजस्-कायिकपने उत्पन्न हो, तो कितने समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है ?

१९ उत्तर-हे गौतम ! एक, दो या तीन समय की विग्रहगति से ।

प्रश्न-हे भगवन् ! क्या कारण है कि यावत् तीन समय० ?

उत्तर-हे गौतम ! रत्नप्रभा पृथ्वी में जैसे सात श्रेणी रूप हेतु कहा, वही यहां भी जानो । इसी प्रकार पर्याप्त बादर तेजस्कायिकपने भी । जिस प्रकार पृथ्वीकायिक में उपपात कहा, उसी प्रकार वायुकायिक और वनस्पति-कायिक जीव में भी चार-चार भेद से उपपात जानना चाहिये । इसी प्रकार पर्याप्त बादर तेजस्कायिक जीव का उपपात भी इन्हीं स्थानों में जानो । जिस प्रकार पृथ्वीकायिक जीव का उपपात कहा, उसी प्रकार वायुकायिक और वनस्पतिकायिक जीव का उपपात भी कहना चाहिये ।

२० प्रश्न-अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइए णं भंते ! उड्ढलोगखेत्त-णालीए बाहिरिल्ले खेत्ते समोहए, समोहणित्ता जे भविए अहेलोग-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

खेत्तणालीए बाहिरिल्ले खेत्ते अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइयत्ताए उववज्जित्तए से णं भंते ! कइसमइएणं० ?

२० उत्तर-एवं ।

भावार्थ-२० प्रश्न-हे भगवन् ! जो अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव, ऊर्ध्वलोक क्षेत्र की त्रसनाड़ी के बाहर के क्षेत्र में मरण-समुद्घात कर के अधोलोक क्षेत्र की त्रसनाड़ी के बाहर के क्षेत्र में अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिकपने उत्पन्न होने योग्य है, वह कितने समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है ?

२० उत्तर-हे गौतम ! पूर्ववत् ।

२१-उड्ढलोगखेत्तणालीए बाहिरिल्ले खेत्ते समोहयाणं अहेलोगखेत्तणालीए बाहिरिल्ले खेत्ते उववज्जयाणं सो चेव गमओ णिरवसेसो भाणियव्वो जाव बायर-वणस्सइकाइओ पज्जत्तओ बायर वणस्सइकाइएसु पज्जत्तएसु उववाइओ ।

भावार्थ-२१-ऊर्ध्वलोक क्षेत्र की त्रसनाड़ी के बाहर के क्षेत्र में मरण-समुद्घात कर के अधोलोक क्षेत्र की त्रसनाड़ी के बाहर के क्षेत्र में उत्पन्न होने के योग्य पृथ्वीकायिकादि के लिए भी वही सम्पूर्ण गमक यावत् पर्याप्त बादर वनस्पतिकायिक जीव का उपपात पर्याप्त बादर वनस्पतिकायिक जीव में भी जानो ।

२२ प्रश्न-अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइए णं भंते ! लोगस्स पुरच्छिमिल्ले चरिमंते समोहए, समोहणित्ता जे भविए लोगस्स पुरच्छिमिल्ले चेव चरिमंते अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइयत्ताए उववज्जित्तए से णं भंते कइसमइएणं विग्गहेणं उववज्जइ ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२२ गोयमा ! एगसमइएण वा दुसमइएण वा तिसमइएण वा चउसमइएण वा विग्गहेणं उववज्जइ ।

प्रश्न–से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ–'एगसमइएण वा जाव उववज्जेज्जा' ?

उत्तर–एवं खलु गोयमा ! मए सत्त सेढीओ पण्णत्ताओ, तं जहा– १ उज्जुआयया जाव ७ अद्धचक्कवाला । उज्जुआययाए सेढीए उववज्जमाणे एगसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा । एगओवंकाए सेढीए उववज्जमाणे दुसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा । दुहओवंकाए सेढीए उववज्जमाणे जे भविए एगपयरंसि अणुसेढी उववज्जित्तए से णं तिसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा, जे भविए विसेढिं उववज्जित्तए से णं चउसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा, से तेणट्ठेणं० जाव उववज्जेज्जा । एवं अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइओ लोगस्स पुरच्छिमिल्ले चरिमंते समोहए, समोहणित्ता लोगस्स पुरच्छिमिल्ले चेव चरिमंते अपज्जत्तएसु पज्जत्तएसु य सुहुमपुढविकाइएसु, सुहुमआउकाइएसु, अपज्जत्तएसु पज्जत्तएसु सुहुमतेउकाइएसु, अपज्जत्तएसु, पज्जत्तएसु य सुहुमवाउकाइएसु, अपज्जत्तएसु पज्जत्तएसु बायरवाउकाइएसु, अपज्जत्तएसु पज्जत्तएसु सुहुमवणस्सइकाइएसु, अपज्जत्तएसु पज्जत्तएसु य बारससु वि ठाणेसु एएणं चेव कमेणं भाणियव्वो । सुहुमपुढविकाइओ पज्जत्तओ–एवं चेव णिरवसेसो बारससु वि ठाणेसु उववाएयव्वो २४।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

**एवं एएणं गमएणं जाव सुहुमवणस्सइकाइओ पज्जत्तओ सुहुमवणस्सइकाइएसु पज्जत्तएसु चेव भाणियव्वो ।**

२२ प्रश्न–हे भगवन् ! जो अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव, लोक के पूर्व चरमान्त में मरण-समुद्घात कर के लोक के पूर्व चरमान्त में अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिकपने उत्पन्न होने योग्य है, तो वह कितने समय की विग्रहगति०?

२२ उत्तर–हे गौतम ! एक दो, तीन, या चार समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है ।

प्रश्न–हे भगवन् ! क्या कारण है कि यावत् चार समय की विग्रहगति०?

उत्तर–हे गौतम ! मैंने सात श्रेणियाँ कही हैं। यथा–ऋज्वायता यावत् अर्द्धचक्रवाल । यदि ऋज्वायता श्रेणी से उत्पन्न होता है, तो एक समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है । यदि एकतोवक्रा श्रेणी से उत्पन्न होता है, तो दो समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है, यदि उभयतोवक्रा श्रेणी से उत्पन्न होता है, तो जो एक प्रतर में अनुश्रेणी (समश्रेणी) से उत्पन्न होने योग्य है, वह तीन समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है और यदि विश्रेणी में उत्पन्न होने योग्य है, तो वह चार समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है । हे गौतम ! इस कारण पूर्वोक्त कथन है । इस प्रकार अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव का लोक के पूर्व चरमान्त में समुद्घात कर के लोक के पूर्व चरमान्त में ही अपर्याप्त और पर्याप्त पृथ्वीकायिक में, अपर्याप्त और पर्याप्त सूक्ष्म अप्कायिक में, अपर्याप्त और पर्याप्त सूक्ष्म तेजस्कायिक में, अपर्याप्त और पर्याप्त सूक्ष्म वायुकायिक में, अपर्याप्त और पर्याप्त बादर वायुकायिक में तथा अपर्याप्त और पर्याप्त सूक्ष्म वनस्पतिकायिक में, इस प्रकार इन बारह स्थानों में क्रमपूर्वक उपपात कहना चाहिये । पर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव का उपपात भी इसी प्रकार बारह स्थानों में कहना चाहिये । इस प्रकार इस गमक से यावत् पर्याप्त सूक्ष्म वनस्पतिकायिक का उपपात पर्याप्त सूक्ष्म वनस्पतिकायिक में भी कहना ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२३ प्रश्न-अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइए णं भंते ! लोगस्स पुरच्छिमिल्ले चरिमंते समोहए, समोहणित्ता जे भविए लोगस्स दाहिणिल्ले चरिमंते अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइएसु उववज्जित्तए से णं भंते ! कइसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा ?

२३ उत्तर-गोयमा ! दुसमइएण वा तिसमइएण वा चउसमइएण वा विग्गहेणं उववज्जइ ।

प्रश्न-से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ?

उत्तर-एवं खलु गोयमा ! मए सत्त सेढीओ पण्णत्ता, तं जहा-१ उज्जुआयया जाव ७ अद्धचक्कवाला । एगओवंकाए सेढीए उववज्जमाणे दुसमइएणं विग्गहेणं उववज्जइ, दुहओवंकाए सेढीए उववज्जमाणे जे भविए एगपयरंमि अणुसेढीओ उववज्जित्तए से णं तिसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा, जे भविए विसेढिं उववज्जित्तए से णं चउसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा से तेणट्ठेणं गोयमा० । एवं एएणं गमएणं पुरच्छिमिल्ले चरिमंते समोहए दाहिणिल्ले चरिमंते उववाएयव्वो जाव सुहुमवणस्सइकाइओ पज्जत्तओ सुहुमवणस्सइकाइएसु पज्जत्तएसु चेव । सव्वेसिं दुसमइओ तिसमइओ चउसमइओ विग्गहो भाणियव्वो ।

भावार्थ-२३ प्रश्न-हे भगवन् ! जो अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव लोक के पूर्व चरमान्त में समुद्घात कर के लोक के दक्षिण चरमान्त में अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिकपने उत्पन्न हो, तो कितने समय की विग्रहगति० ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२३ उत्तर-हे गौतम ! वह दो, तीन या चार समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है।

प्रश्न-हे भगवन् ! किस कारण से कहते हैं कि यावत् चार समय० ?

उत्तर-हे गौतम ! मैंने सात श्रेणियां कही है। यथा-ऋजुआयता यावत् अर्द्धचक्रवाल। यदि वह जीव एकतोवक्रा श्रेणी से उत्पन्न होता है, तो दो समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है। यदि उभयतोवक्रा श्रेणी से एक प्रतर में अनुश्रेणी (समश्रेणी) से उत्पन्न होने योग्य है, तो तीन समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है और यदि विश्रेणी में उत्पन्न होने के योग्य है, तो चार समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है। इस कारण हे गौतम ! पूर्ववत् कथन है। इसी गमक से पूर्व चरमान्त में समुद्घात कर के दक्षिण चरमान्त में उपपात यावत् पर्याप्त सूक्ष्म वनस्पतिकायिक जीव का उपपात पर्याप्त सूक्ष्म वनस्पतिकायिक जीव में भी होता है। इन सभी में दो, तीन या चार समय की विग्रहगति कहनी चाहिये।

२४ प्रश्न-अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइए णं भंते ! लोगस्स पुरच्छिमिल्ले चरिमंते समोहए, समोहणित्ता जे भविए लोगस्स पच्चच्छिमिल्ले चरिमंते अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइयत्ताए उववज्जित्तए से णं भंते ! कइसमइएणं विग्गहेणं उववज्जेज्जा ?

२४ उत्तर-गोयमा ! एगसमइएण वा दुसमइएण वा तिसमइएण वा चउसमइएण वा विग्गहेणं उववज्जेज्जा।

प्रश्न-से केणट्ठेणं० ?

उत्तर-एवं। जहेव पुरिच्छिमिल्ले चरिमंते समोहया पुरच्छि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मिल्ले चेव चरिमंते उववाइया तहेव पुरच्छिमिल्ले चरिमंते समोहया पच्चच्छिमिल्ले चरिमंते उववाएयव्वा सव्वे ।

भावार्थ-२४ प्रश्न-हे भगवन् ! जो अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव लोक के पूर्व चरमान्त में समुद्घात कर के लोक के पश्चिम चरमान्त में अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिकपने उत्पन्न हो, तो वह कितने समय की विग्रहगति से० ?

२४ उत्तर-हे गौतम ! वह एक, दो, तीन या चार समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है ।

प्रश्न-हे भगवन् ! क्या कारण है कि यावत् चार समय की विग्रहगति से० ?

उत्तर-हे गौतम ! पूर्ववत् । जिस प्रकार पूर्व चरमान्त में समुद्घात कर के पूर्व चरमान्त में ही उपपात कहा, उसी प्रकार पूर्व चरमान्त में समुद्घात कर के पश्चिम चरमान्त में सभी का उपपात कहना चाहिये ।

२५ प्रश्न-अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइए णं भंते ! लोगस्स पुरच्छिमिल्ले चरिमंते समोहए, समोहणित्ता जे भविए लोगस्स उत्तरिल्ले चरिमंते अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइयत्ताए उववज्जित्तए से णं भंते० ?

२५ उत्तर-एवं जहा पुरच्छिमिल्ले चरिमंते समोहओ दाहिणिल्ले चरिमंते उववाइओ तहा पुरच्छिमिल्ले समोहओ उत्तरिल्ले चरिमंते उववाएयव्वो ।

भावार्थ-२५ प्रश्न-हे भगवन् ! जो अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव लोक के पूर्व चरमान्त में समुद्घात कर के लोक के उत्तर चरमान्त में अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिकपने उत्पन्न हो, तो वह कितने समय की विग्रहगति से० ?

२५ उत्तर-हे गौतम ! पूर्व चरमान्त में समुद्घात कर के दक्षिण चरमान्त में उपपात कहा, उसी प्रकार पूर्व चरमान्त में समुद्घात कर के उत्तर

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चरमान्त में उपपात कहना चाहिये ।

२६ प्रश्न–अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइए णं भंते ! लोगस्स दाहिणिल्ले चरिमंते समोहए, समोहणित्ता जे भविए लोगस्स दाहिणिल्ले चेव चरिमंते अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइयत्ताए उववज्जित्तए ?

२६ उत्तर–एवं जहा पुरच्छिमिल्ले समोहओ पुरच्छिमिल्ले चेव उववाइओ तहेव दाहिणिल्ले समोहए दाहिणिल्ले चेव उववाएयव्वो, तहेव णिरवसेसं जाव सुहुमवणस्सइकाइओ पज्जत्तओ सुहुमवणस्सइकाइएसु चेव पज्जत्तएसु दाहिणिल्ले चरिमंते उववाएयव्वो, एवं दाहिणिल्ले समोहओ पच्चच्छिमिल्ले चरिमंते उववाएयव्वो । णवरं दुसमइय-तिसमइय-चउसमइय विग्गहो, सेसं तहेव । दाहिणिल्ले समोहओ उत्तरिल्ले चरिमंते उववाएयव्वो जहेव सट्ठाणे तहेव । एगसमइय-दुसमइय-तिसमइय-चउसमइय विग्गहो । पुरच्छिमिल्ले जहा पच्चच्छिमिल्ले, तहेव दुसमइय-तिसमइय-चउसमइय विग्गहो । पच्चच्छिमिल्ले य चरिमंते समोहयाणं पच्चच्छिमिल्ले चेव उववज्जमाणाणं जहा सट्ठाणे ।

भावार्थ-२६ प्रश्न–हे भगवन् ! जो अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव, लोक के दक्षिण चरमान्त में मरण-समुद्घात कर के लोक के दक्षिण चरमान्त में ही अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिकपने उत्पन्न हो तो० ?

२६ उत्तर–हे गौतम ! जिस प्रकार पूर्व चरमान्त में समुद्घात कर के पूर्व चरमान्त में ही उपपात कहा, उसी प्रकार दक्षिण चरमान्त में समुद्घात

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कर के दक्षिण चरमान्त में ही उपपात इत्यादि पूर्ववत् यावत् पर्याप्त सूक्ष्म वनस्पतिकायिक का उपपात पर्याप्त सूक्ष्म वनस्पतिकायिक में दक्षिण चरमान्त पर्यन्त। इसी प्रकार दक्षिण चरमान्त में समुद्घात कर के पश्चिम चरमान्त में उपपात होता है, इनमें दो, तीन या चार समय की विग्रहगति होती है, शेष पूर्ववत्। जिस प्रकार स्वस्थान में कहा, उसी प्रकार दक्षिण चरमान्त में समुद्घात कर के उत्तर चरमान्त में उपपात और एक, दो, तीन या चार समय की विग्रहगति कहनी चाहिये। पश्चिम चरमान्त के समान पूर्व चरमान्त में भी दो, तीन या चार समय की विग्रहगति जाननी चाहिये। पश्चिम चरमान्त में समुद्घात कर के पश्चिम चरमान्त में उत्पन्न होने वाले पृथ्वीकायिक के लिए स्वस्थान के अनुसार यहां भी कहना चाहिये।

उत्तरिल्ले उववज्जमाणाणं एगसमइओ विग्गहो णत्थि, सेसं तहेव। पुरच्छिमिल्ले जहा सट्ठाणे, दाहिणिल्ले एगसमइओ विग्गहो णत्थि, सेसं तं चेव। उत्तरिल्ले समोहयाणं उत्तरिल्ले चेव उववज्जमाणाणं जहेव सट्ठाणे। उत्तरिल्ले समोहयाणं पुरच्छिमिल्ले उववज्जमाणाणं एवं चेव। णवरं एगसमइओ विग्गहो णत्थि। उत्तरिल्ले समोहयाणं दाहिणिल्ले उववज्जमाणाणं जहा सट्ठाणे, उत्तरिल्ले समोहयाणं पच्चच्छिमिल्ले उववज्जमाणाणं एगसमइओ विग्गहो णत्थि, सेसं तहेव, जाव सुहुमवणस्सइकाइओ पज्जत्तओ सुहुमवणस्सइकाइएसु पज्जत्तएसु चेव।

भावार्थ–उत्तर चरमान्त में उत्पन्न होने वाले जीव की एक समय की विग्रहगति नहीं होती। शेष पूर्ववत्। पूर्व चरमान्त स्वस्थान के समान।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दक्षिण चरमान्त में एक समय की विग्रहगति नहीं होती । शेष पूर्ववत् । उत्तर चरमान्त में समुद्घात कर के उत्तर चरमान्त में उत्पन्न होने वाले जीव स्वस्थान के समान है । उत्तर चरमान्त में समुद्घात कर के पूर्व चरमान्त में उत्पन्न होने वाले पृथ्वीकायिकादि भी इसी प्रकार, किन्तु एक समय की विग्रहगति नहीं होती। उत्तर चरमान्त में समुद्घात कर के दक्षिण चरमान्त में उत्पन्न होने वाले जीव भी स्वस्थान के समान है । उत्तर चरमान्त में समुद्घात कर के पश्चिम चरमान्त में उत्पन्न होने वाले जीव के एक समय की विग्रहगति नहीं होती । शेष पूर्ववत्, यावत् 'पर्याप्त सूक्ष्म वनस्पतिकायिक जीव का उपपात पर्याप्त सूक्ष्म वनस्पतिकायिक जीवों में' जानो ।

**विवेचन**—जब कोई स्थावर जीव अधोलोक क्षेत्र की नाड़ी के बाहर पूर्वादि दिशा में मर कर एक समय में त्रसनाड़ी में प्रवेश करता है, दूसरे समय में ऊर्ध्व जाता है और इसके बाद एक प्रतर में पूर्व या पश्चिम दिशा में उत्पत्ति होती है, तब अनुश्रेणी में जा कर तीसरे समय में उत्पन्न होता है । इस प्रकार तीन समय की विग्रहगति होती है । जब कोई जीव त्रसनाड़ी के बाहर वायव्यादि विदिशा में मृत्यु को प्राप्त होता है, तब एक समय में पश्चिम या उत्तर दिशा में जाता है, दूसरे समय में त्रसनाड़ी में प्रवेश करता है, तीसरे समय में ऊँचा जाता है और चौथे समय में अनुश्रेणी में जा कर पूर्वादि दिशा में उत्पन्न होता है । यह चार समय की विग्रहगति होती है । टीकाकार तो पाँच समय की विग्रहगति भी मानते हैं । उनका कथन है कि अधोलोक के कोण में से मर कर ऊर्ध्वलोक के कोण में उत्पन्न होने वाले जीव के पाँच समय की विग्रहगति होती है, किन्तु सिद्धान्त-पक्ष ऐसा नहीं है, क्योंकि अधोलोक के कोण से मर कर ऊर्ध्वलोक के कोण में और ऊर्ध्वलोक के कोण से मर कर अधोलोक के कोण में कोई भी जीव उत्पन्न नहीं होता, क्योंकि लोक-स्वभाव ही ऐसा है ।

जब अपर्याप्त बादर तेजस्कायिक जीव ऊर्ध्वलोक की त्रसनाड़ी के बाहर उत्पन्न होता है, तब दो या तीन समय की विग्रहगति होती है । इसकी घटना इस प्रकार है—बादर तेजस्काय मनुष्य-क्षेत्र में ही होती है । इसलिये एक समय में मनुष्य-क्षेत्र से ऊपर जाता है और दूसरे समय में त्रसनाड़ी से बाहर रहे हुए उत्पत्ति स्थान को प्राप्त होता है। इस प्रकार यह दो समय की विग्रहगति होती है। अथवा एक समय में मनुष्य-क्षेत्र से ऊपर

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जाता है, दूसरे समय में त्रसनाड़ी से बाहर पूर्वादि दिशा में जाता है और तीसरे समय में विदिशा में रहे हुए उत्पत्ति स्थान को प्राप्त होता है।

लोक के चरमान्त में बादर पृथ्वीकायिक, अप्कायिक, तेजस्कायिक और वनस्पतिकायिक जीव नहीं होते, किंतु सूक्ष्म पृथ्वीकायादि पाँचों होते हैं और बादर वायुकाय भी होती है। इन छह के पर्याप्त और अपर्याप्त के भेद से बारह भेद होते हैं। यहाँ लोक के पूर्व चरमान्त से पूर्व चरमान्त में उत्पन्न होने वाले जीव की एक समय से ले कर चार समय तक की विग्रहगति होती है। क्योंकि उसमें अनुश्रेणी और विश्रेणी दोनों होती हैं। पूर्व चरमान्त से दक्षिण चरमान्त में उत्पन्न होने वाले जीव की दो, तीन या चार समय की ही विग्रहगति होती है। वहाँ अनुश्रेणी न होने से एक समय की विग्रहगति नहीं होती। इसी प्रकार विश्रेणी गमन में सर्वत्र दो आदि समय की विग्रहगति ही होती है।

**२७ प्रश्न–कहिं णं भंते ! बायरपुढविकाइयाणं पज्जत्तगाणं ठाणा पण्णत्ता ?**

**२७ उत्तर–गोयमा ! सट्ठाणेणं अट्ठसु पुढवीसु जहा ठाणपए जाव सुहुमवणस्सइकाइया जे य पज्जत्तगा जे य अपज्जत्तगा ते सव्वे एगविहा अविसेसमणाणत्ता सव्वलोगपरियावण्णा पण्णत्ता समणाउसो।**

कठिन शब्दार्थ—अविसेसमणाणत्ता—विशेषता और भिन्नता से रहित।

भावार्थ–२७ प्रश्न–हे भगवन् ! पर्याप्त बादर पृथ्वीकायिक जीव के स्थान कहाँ कहे हैं ?

२७ उत्तर–हे गौतम ! स्वस्थान की अपेक्षा आठ पृथ्वियों हैं इत्यादि प्रज्ञापना सूत्र के दूसरे स्थान पद के अनुसार, यावत् पर्याप्त और अपर्याप्त सभी सूक्ष्म वनस्पतिकायिक जीव एक ही प्रकार के हैं। इनमें कुछ भी विशेषता या भिन्नता नहीं है। हे आयुष्यमन् श्रमण ! वे सर्वलोक में व्याप्त हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२८ प्रश्न-अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइयाणं भंते ! कइ कम्मप्पगडीओ पण्णत्ताओ ?

२८ उत्तर-गोयमा ! अट्ठ कम्मप्पगडीओ पण्णत्ताओ, तं जहा-१ णाणावरणिज्जं जाव ८ अंतराइयं । एवं चउक्कएणं भेएणं जहेव एगिंदियसएसु जाव बायरवणस्सइकाइयाणं पज्जत्तगाणं ।

भावार्थ-२८ प्रश्न-हे भगवन् ! अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव के कर्म-प्रकृतियां कितनी कही हैं ?

२८ उत्तर-हे गौतम ! आठ कर्म-प्रकृतियां कही हैं । यथा-ज्ञानावरणीय यावत् अन्तराय । इस प्रकार चार भेदों से एकेन्द्रिय-शतक के अनुसार यावत् पर्याप्त बादर वनस्पतिकायिक पर्यन्त ।

२९ प्रश्न-अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइया णं भंते ! कइ कम्मप्पगडीओ बंधंति ?

२९ उत्तर-गोयमा ! सत्तविहबंधगा वि, अट्ठविहबंधगा वि, जहा एगिंदियसएसु जाव पज्जत्ता बायरवणस्सइकाइया ।

भावार्थ-२९ प्रश्न-हे भगवन् ! अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव कितनी कर्म-प्रकृतियां बांधते हैं ?

२९ उत्तर-हे गौतम ! सात या आठ कर्म-प्रकृतियां बांधते हैं इत्यादि एकेन्द्रिय-शतक के अनुसार यावत् पर्याप्त बादर वनस्पतिकायिक पर्यन्त ।

३० प्रश्न-अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइया णं भंते ! कइ कम्मप्पगडीओ वेदेंति ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

३० उत्तर-गोयमा ! चोद्दस कम्मप्पगडीओ वेदेंति, तं जहा-णाणावरणिज्जं जहा एगिंदियसएसु जाव पुरिसवेयवज्झं, एवं जाव बायरवणस्सइकाइयाणं पज्जत्तगाणं ।

भावार्थ-३० प्रश्न-हे भगवन् ! अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव कर्म-प्रकृतियां कितनी वेदते हैं ?

३० उत्तर-हे गौतम ! चौदह कर्म-प्रकृतियां वेदते हैं । यथा-ज्ञानावरणीय आदि एकेन्द्रिय-शतक के अनुसार, यावत् पुरुषवेदवध्य कर्म-प्रकृति पर्यन्त । इसी प्रकार यावत् पर्याप्त बादर वनस्पतिकायिक पर्यन्त ।

३१ प्रश्न-एगिंदिया णं भंते ! कओ उववज्जंति ? किं णेरइएहिंतो उववज्जंति० ?

३१ उत्तर-जहा वक्कंतीए पुढविकाइयाणं उववाओ ।

भावार्थ-३१ प्रश्न-हे भगवन् ! एकेन्द्रिय जीव कहां से आ कर उत्पन्न होते हैं० ?

३१ उत्तर-हे गौतम ! प्रज्ञापना सूत्र के छठे व्युत्क्रान्ति पद में पृथ्वीकायिक जीव के समान उपपात कहना चाहिये ।

३२ प्रश्न-एगिंदियाणं भंते ! कइ समुग्घाया पण्णत्ता ?

३२ उत्तर-गोयमा ! चत्तारि समुग्घाया पण्णत्ता, तं जहा-वेयणासमुग्घाए जाव वेउव्वियसमुग्घाए ।

भावार्थ-३२ प्रश्न-हे भगवन् ! एकेन्द्रिय जीव के समुद्घात कितने कहे हैं ।

३२ उत्तर-हे गौतम ! चार समुद्घात कहे हैं । यथा-वेदना समुद्घात यावत् वैक्रिय समुद्घात ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

३३ प्रश्न-एगिंदिया णं भंते ! किं तुल्लट्ठिईया तुल्लविसेसाहियं कम्मं पकरेंति ? तुल्लट्ठिईया वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरेंति ? वेमायट्ठिईया तुल्लविसेसाहियं कम्मं पकरेंति ? वेमायट्ठिईया वेमाय-विसेसाहियं कम्मं पकरेंति ?

३३ उत्तर-गोयमा ! अत्थेगइया तुल्लट्ठिईया तुल्लविसेसाहियं कम्मं पकरेंति, अत्थेगइया तुल्लट्ठिईया वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरेंति, अत्थेगइया वेमायट्ठिईया तुल्लविसेसाहियं कम्मं पकरेंति, अत्थेगइया वेमायट्ठिईया वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरेंति ।

प्रश्न-से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ-'अत्थेगइया तुल्लट्ठिईया जाव वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरेंति' ?

उत्तर-गोयमा ! एगिंदिया चउव्विहा पण्णत्ता, तं जहा-१ अत्थे-गइया समाउया समोववण्णगा २ अत्थेगइया समाउया विसमोववण्णगा ३ अत्थेगइया विसमाउया समोववण्णगा ४ अत्थेगइया विसमाउया विसमोववण्णगा । १ तत्थ णं जे ते समाउया समोववण्णगा ते णं तुल्ल-ट्ठिईया तुल्लविसेसाहियं कम्मं पकरेंति २ तत्थ णं जे ते समाउया विस-मोववण्णगा ते णं तुल्लट्ठिईया वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरेंति ३ तत्थ णं जे ते विसमाउया समोववण्णगा ते णं वेमायट्ठिईया तुल्लविसेसा-हियं कम्मं पकरेंति ४ तत्थ णं जे ते विसमाउया विसमोववण्णगा ते णं वेमायट्ठिईया वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरेंति । से तेणट्ठेणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोयमा ! जाव वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरेंति ।

❀ 'सेवं भंते ! सेवं भंते' ! त्ति २ जाव विहरइ ❀

॥ चोत्तीसइमे सए पढमे एगिंदियसए पढमो उद्देसो समत्तो ॥

भावार्थ–३३ प्रश्न–हे भगवन् ! १ तुल्य (समान) स्थिति वाले एकेन्द्रिय जीव, तुल्य और विशेषाधिक कर्म का बन्ध करते हैं २ अथवा तुल्य स्थिति वाले एकेन्द्रिय जीव, भिन्न विशेषाधिक कर्म-बन्ध करते हैं ३ अथवा भिन्न-भिन्न स्थिति वाले एकेन्द्रिय जीव तुल्य विशेषाधिक कर्म-बन्ध करते हैं और ४ अथवा भिन्न-भिन्न स्थिति वाले एकेन्द्रिय जीव भिन्न विशेषाधिक कर्म-बन्ध करते हैं ?

३३ उत्तर–हे गौतम ! तुल्य स्थिति वाले कुछ एकेन्द्रिय जीव तुल्य और विशेषाधिक कर्म-बन्ध करते हैं । कुछ तुल्य स्थिति वाले एकेन्द्रिय जीव भिन्न-भिन्न विशेषाधिक कर्म-बन्ध करते हैं । कई भिन्न-भिन्न स्थिति वाले एकेन्द्रिय जीव, तुल्य विशेषाधिक कर्म-बन्ध करते हैं और कई भिन्न-भिन्न स्थिति वाले भिन्न-भिन्न विशेषाधिक कर्म-बन्ध करते हैं ।

प्रश्न–हे भगवन् ! ऐसा क्यों कहा कि कितने ही एकेन्द्रिय जीव तुल्य स्थिति वाले यावत् भिन्न-भिन्न विशेषाधिक कर्म-बन्ध करते हैं ।

उत्तर–हे गौतम ! एकेन्द्रिय जीव चार प्रकार के कहे हैं । यथा–१ कई जीव समान आयु वाले और साथ उत्पन्न हुए २ कितने ही समान आयु वाले और विषम उत्पन्न हुए ३ कितने ही विषम आयु वाले और साथ उत्पन्न हुए और ४ कुछ विषम आयु वाले और विषम उत्पन्न हुए । जो समान आयु वाले और समान उत्पत्ति वाले हैं, वे तुल्य स्थिति वाले तुल्य एवं विशेषाधिक कर्म-बन्ध करते हैं । जो समान आयु और विषम उत्पत्ति वाले हैं, वे तुल्य स्थिति वाले विमात्रा विशेषाधिक कर्म-बन्ध करते हैं । जो जीव विषम आयु और समान उत्पत्ति वाले हैं, वे विमात्रा स्थिति वाले तुल्य विशेषाधिक कर्म-बन्ध करते हैं और जो विषम आयु और विषम उत्पत्ति वाले हैं, वे विमात्रा स्थिति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वाले, विमात्रा-विशेषाधिक कर्म-बन्ध करते हैं। हे गौतम ! इस कारण यावत् विमात्रा-विशेषाधिक कर्म-बन्ध करते हैं।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है। हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'–कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं।

**विवेचन**––बादर पृथ्वीकायिकादि जीव, जिस स्थान पर रहता है, वह उसका 'स्वस्थान' कहलाता है। पर्याप्तक और अपर्याप्तक के भेद की विवक्षा जहाँ न हो, वह 'अविशेष' कहलाता है। जिनमें परस्पर नानात्व अर्थात् अन्तर न हो, उसे 'अनानात्व' कहा है।

एकेन्द्रिय में जो वैक्रिय-समुद्घात का कथन किया है, वह वायुकायिक जीवों की अपेक्षा है।

स्थिति और उत्पत्ति की अपेक्षा एकेन्द्रिय जीवों के यहाँ चार भंग कहे हैं और इन्हीं चार भंगों की अपेक्षा चार प्रकार का कर्म-बन्ध कहा है।

## ॥ चौंतीसवें शतक के प्रथम अवांतर शतक का प्रथम उद्देशक सम्पूर्ण ॥

# अवान्तर शतक १ उद्देशक २

**१ प्रश्न–कइविहा णं भंते ! अणंतरोववण्णगा एगिंदिया पण्णत्ता ?**

**१ उत्तर–गोयमा ! पंचविहा अणंतरोववण्णगा एगिंदिया पण्णत्ता, तं जहा–१ पुढविकाइया-दुयाभेओ जहा एगिंदियसएसु जाव बायरवणस्सइकाइया य।**

**भावार्थ**–१ प्रश्न–हे भगवन् ! अनन्तरोपपन्नक एकेन्द्रिय कितने प्रकार के कहे हैं ?

१ उत्तर–हे गौतम ! अनन्तरोपपन्नक एकेन्द्रिय पांच प्रकार के कहे हैं। यथा–पृथ्वीकायिक यावत् वनस्पतिकायिक। प्रत्येक के दो-दो भेद एकेन्द्रिय शतक के अनुसार यावत् बादर वनस्पतिकायिक पर्यन्त।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२ प्रश्न-कहिं णं भंते ! अणंतरोववण्णगाणं बायरपुढविकाइयाणं ठाणा पण्णत्ता ?

२ उत्तर-गोयमा ! सट्ठाणेणं अट्ठसु पुढवीसु, तं जहा-रयणप्पभाए जहा ठाणपए जाव दीवेसु समुद्देसु । एत्थ णं अणंतरोववण्णगाणं बायरपुढविकाइयाणं ठाणा पण्णत्ता, उववाएणं सव्वलोए, समुग्घाएणं सव्वलोए, सट्ठाणेणं लोगस्स असंखेज्जइभागे । अणंतरोववण्णगसुहुमपुढविकाइया एगविहा अविसेसमणाणत्ता सव्वलोए परियावण्णा पण्णत्ता समणाउसो ! । एवं एएणं कमेणं सव्वे एगिंदिया भाणियव्वा, सट्ठाणाइं सव्वेसिं जहा ठाणपए । तेसिं पज्जत्तगाणं बायराणं उववाय-समुग्घाय-सट्ठाणाणि जहा तेसिं चेव अपज्जत्तगाणं बायराणं । सुहुमाणं सव्वेसिं जहा पुढविकाइयाणं भणिया तहेव भाणियव्वा जाव वणस्सइकाइय त्ति ।

कठिन शब्दार्थ--परियावण्णा--व्याप्त ।

भावार्थ-२ प्रश्न-हे भगवन् ! अनन्तरोपपन्नक बादर पृथ्वीकायिक जीव के स्थान कहाँ कहे हैं ?

२ उत्तर-हे गौतम ! स्वस्थान की अपेक्षा आठ पृथ्वियों में, यथा-रत्नप्रभा इत्यादि प्रज्ञापना सूत्र के दूसरे स्थान पद के अनुसार यावत् द्वीपों में और समुद्रों में अनन्तरोपपन्नक बादर पृथ्वीकायिक जीव के स्थान कहे हैं । उपपात और समुद्घात की अपेक्षा वे समस्त लोक में हैं । स्वस्थान की अपेक्षा वे लोक के असंख्यातवें भाग में रहे हुए हैं । अनन्तरोपपन्नक सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव सभी एक प्रकार के हैं और विशेषता तथा भिन्नता रहित हैं ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तथा हे आयुष्मन् श्रमण ! वे सर्वलोक में व्याप्त हैं। यही क्रम सभी एकेन्द्रिय का है। उन सभी के स्वस्थान प्रज्ञापना सूत्र के दूसरे स्थान पद के अनुसार है। पर्याप्त बादर एकेन्द्रिय जीव के उपपात, समुद्घात और स्वस्थान के अनुसार अपर्याप्त बादर एकेन्द्रिय जीव के भी जानना चाहिये और सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव के उपपात, समुद्घात और स्वस्थान के अनुसार सभी सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीव यावत् वनस्पतिकायिक पर्यन्त जानना चाहिए।

३ प्रश्न–अणंतरोववण्णगाणं सुहुमपुढविकाइयाणं भंते ! कइ कम्मप्पगडीओ पण्णत्ताओ ?

३ उत्तर–गोयमा ! अट्ठ कम्मप्पगडीओ पण्णत्ताओ–एवं जहा एगिंदियसएसु अणंतरोववण्णगउद्देसए तहेव पण्णत्ताओ, तहेव बंधंति, तहेव वेदेंति जाव अणंतरोववण्णगा बायरवणस्सइकाइया।

भावार्थ–३ प्रश्न–हे भगवन् ! अनन्तरोपपन्नक सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव के कर्म-प्रकृतियां कितनी कही हैं ?

३ उत्तर–हे गौतम ! आठ कर्म-प्रकृतियां कही हैं इत्यादि एकेन्द्रिय शतक में अनन्तरोपपन्नक उद्देशक के अनुसार। यावत् उसी प्रकार बांधते और वेदते हैं, यावत् अनन्तरोपपन्नक बादर वनस्पतिकायिक पर्यन्त।

४ प्रश्न–अणंतरोववण्णगएगिंदिया णं भंते ! कओ उववज्जंति?

४ उत्तर–जहेव ओहिए उद्देसओ भणिओ तहेव।

भावार्थ–४ प्रश्न–हे भगवन् ! अनन्तरोपपन्नक एकेन्द्रिय जीव, कहां से आ कर उत्पन्न होते हैं ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

४ उत्तर–हे गौतम ! औधिक उद्देशकानुसार ।

५ प्रश्न–अणंतरोववण्णगएगिंदियाणं भंते ! कइ समुग्घाया पण्णत्ता ?

५ उत्तर–गोयमा ! दोण्णि समुग्घाया पण्णत्ता, तं जहा–वेयणा-समुग्घाए य कसायसमुग्घाए य ।

भावार्थ–५ प्रश्न–हे भगवन् ! अनन्तरोपपन्नक एकेन्द्रिय जीव के कितने समुद्घात कहे हैं ?

५ उत्तर–हे गौतम ! दो समुद्घात कहे हैं । यथा–वेदना-समुद्घात और कषाय-समुद्घात ।

६ प्रश्न–अणंतरोववण्णगएगिंदिया णं भंते ! किं तुल्लट्ठिईया तुल्लविसेसाहियं कम्मं पकरेंति–पुच्छा तहेव ?

६ उत्तर–गोयमा ! अत्थेगइया तुल्लट्ठिईया तुल्लविसेसाहियं कम्मं पकरेंति, अत्थेगइया तुल्लट्ठिईया वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरेंति ।

प्रश्न–से केणट्ठेणं जाव वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरेंति ?

उत्तर–गोयमा ! अणंतरोववण्णगा एगिंदिया दुविहा पण्णत्ता, तं जहा–अत्थेगइया समाउया समोववण्णगा, अत्थेगइया समाउया विसमोववण्णगा । तत्थ णं जे ते समाउया समोववण्णगा ते णं तुल्ल-ट्ठिईया तुल्लविसेसाहियं कम्मं पकरेंति । तत्थ णं जे ते समाउया विसमोववण्णगा ते णं तुल्लट्ठिईया वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरेंति ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

से तेणट्ठेणं जाव वेमायविसेसाहियं कम्मं पकरेंति ।

❀ 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति ❀

॥ चोत्तीसइमे सए पढमे एगिंदियसए बीओ उद्देसो समत्तो ॥

भावार्थ—६ प्रश्न—हे भगवन् ! तुल्य स्थिति वाले अनन्तरोपपन्नक एकेन्द्रिय जीव, परस्पर तुल्य, विशेषाधिक कर्म-बन्ध करते हैं० ?

६ उत्तर—हे गौतम ! कई तुल्य स्थिति वाले एकेन्द्रिय जीव, तुल्य विशेषाधिक कर्म-बन्ध करते हैं और कई तुल्य स्थिति वाले एकेन्द्रिय जीव विमात्र-विशेषाधिक कर्म-बन्ध करते हैं ।

प्रश्न—हे भगवन् ! ऐसा क्यों कहा गया कि यावत् भिन्न विशेषाधिक कर्म-बन्ध करते हैं ?

उत्तर—हे गौतम ! अनन्तरोपपन्नक एकेन्द्रिय जीव दो प्रकार के कहे हैं । यथा—कई जीव समान आयु और समान उत्पत्ति वाले होते हैं और कई जीव समान आयु और विषम उत्पत्ति वाले होते हैं । जो समान आयु और समान उत्पत्ति वाले हैं, वे तुल्य स्थिति वाले परस्पर तुल्य विशेषाधिक कर्म-बन्ध करते हैं और जो समान आयु और विषम उत्पत्ति वाले हैं, वे तुल्य स्थिति वाले विमात्र-विशेषाधिक कर्म-बन्ध करते हैं । इस कारण हे गौतम ! यावत् विमात्र-विशेषाधिक कर्म-बन्ध करते हैं ।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'—कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

विवेचन—पहले स्थिति और उत्पत्ति की अपेक्षा चार भंग कहे, उनमें से विषम स्थिति सम्बन्धी अन्तिम दो भंग अनन्तरोपपन्नक जीव में नहीं पाये जाते, क्योंकि अनन्तरोपपन्नकत्व में विषम स्थिति का अभाव है ।

॥ चौंतीसवें शतक के प्रथम अवांतर शतक का दूसरा उद्देशक संपूर्ण ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

## अवान्तर शतक १ उद्देशक ३

१ प्रश्न–कइविहा णं भंते ! परंपरोववण्णगा एगिंदिया पण्णत्ता ?

१ उत्तर–गोयमा ! पंचविहा परंपरोववण्णगा एगिंदिया पण्णत्ता, त जहा–पुढविकाइया–भेओ चउक्कओ जाव वणस्सइकाइय त्ति ।

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! परम्परोपपन्नक एकेन्द्रिय कितने प्रकार के कहे हैं ?

१ उत्तर–हे गौतम ! परम्परोपपन्नक एकेन्द्रिय पांच प्रकार के कहे हैं। यथा–पृथ्वीकायिक आदि और उनके चार-चार भेद यावत् वनस्पतिकायिक पर्यन्त।

२ प्रश्न–परंपरोववण्णगअपज्जत्तसुहुमपुढविकाइए णं भंते ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पुरच्छिमिल्ले चरिमंते समोहए, समोहणित्ता जे भविए इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए जाव पच्चच्छिमिल्ले चरिमंते अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइयत्ताए उववज्जित्तए० ?

२ उत्तर–एवं एएणं अभिलावेणं जहेव पढमो उद्देसओ जाव लोगचरिमंतो त्ति ।

भावार्थ–२ प्रश्न–हे भगवन् ! जो परम्परोपपन्नक अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वी कायिक जीव, रत्नप्रभा पृथ्वी के पूर्व चरमान्त में मरण-समुद्घात कर के रत्नप्रभा पृथ्वी के यावत् पश्चिम चरमान्त में अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिकपने उत्पन्न हो, तो वह कितने समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है ?

२ उत्तर–हे गौतम ! इस अभिलाप से प्रथम उद्देशकानुसार यावत् लोक के चरमान्त पर्यन्त ।

३ प्रश्न–कहिं णं भंते ! परंपरोववण्णगबायरपुढविकाइयाणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ठाणा पण्णत्ता ?

३ उत्तर–गोयमा ! सट्ठाणेणं अट्ठसु पुढवीसु एवं एएणं अभिलावेणं जहा पढमे उद्देसए जाव तुल्लट्ठिईय त्ति ।

'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति ।

॥ चोत्तीसइमे सए पढमे एगिंदियसए तईओ उद्देसो समत्तो ॥

भावार्थ–३ प्रश्न–हे भगवन् ! परम्परोपपन्नक बादर पृथ्वीकायिक जीव के स्थान कहां कहे हैं ?

३ उत्तर–हे गौतम ! स्वस्थान की अपेक्षा आठ पृथ्वियों में और इस अभिलाप से प्रथम उद्देशक के अनुसार यावत् तुल्य स्थिति पर्यन्त ।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'– कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

॥ चौंतीसवें शतक के प्रथम अवांतर शतक का तीसरा उद्देशक सम्पूर्ण॥

## अवांतर शतक 9 उद्देशक ४–११

–एवं सेसा वि अट्ठ उद्देसगा जाव 'अचरमो' त्ति । णवरं अणंतरा अणंतरसरिसा, परंपरा परंपरसरिसा, चरमा य अचरमा य एवं चेव । एवं एए एक्कारस उद्देसगा ।

॥ चोत्तीसइमे सए पढमे एगिंदियसए ४–११ उद्देसा समत्ता ॥

–इसी प्रकार शेष आठ उद्देशक यावत् 'अचरम' पर्यन्त । अनन्तर

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उद्देशक अनन्तर के समान, परम्पर, परम्पर के समान और चरम तथा अचरम भी उसी प्रकार है। ये ग्यारह उद्देशक हुए।

॥ चौंतीसवें शतक के प्रथम अवांतर शतक के ४–११ उद्देशक सम्पूर्ण ॥

॥ एकेन्द्रिय श्रेणी शतक का प्रथम अवान्तर शतक सम्पूर्ण ॥

## अवान्तर शतक २

१ प्रश्न–कइविहा णं भंते ! कण्हलेस्सा एगिंदिया पण्णत्ता ?

१ उत्तर–गोयमा ! पंचविहा कण्हलेस्सा एगिंदिया पण्णत्ता, भेओ चउक्कओ जहा कण्हलेस्सएगिंदियसए जाव वणस्सइकाइयं त्ति।

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! कृष्णलेश्या वाले एकेन्द्रिय जीव कितने प्रकार के कहे हैं ?

१ उत्तर–हे गौतम ! कृष्णलेश्या वाले एकेन्द्रिय पांच प्रकार के कहे हैं। उनके चार-चार भेद एकेन्द्रिय शतक के अनुसार यावत् वनस्पतिकायिक पर्यंत।

२ प्रश्न–कण्हलेस्सअपज्जत्तसुहुमपुढविकाइए णं भंते ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पुरच्छिमिल्ले० ?

२ उत्तर–एवं एएणं अभिलावेणं जहेव ओहिउद्देसओ जाव 'लोग चरिमंते' त्ति। सव्वत्थ कण्हलेस्सेसु चेव उववाएयव्वो।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ-२ प्रश्न-हे भगवन् ! जो कृष्णलेश्या वाला अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव, इस रत्नप्रभापृथ्वी के पूर्व चरमान्त में समुद्घात कर के पश्चिम चरमान्त में उत्पन्न हो, तो वह कितने समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है ?

२ उत्तर-हे गौतम ! औधिक उद्देशक के अनुसार इस अभिलाप से यावत् लोक के चरमान्त तक, सर्वत्र कृष्णलेश्या वालों में उपपात कहना चाहिये ।

३ प्रश्न-कहिं णं भंते ! कण्हलेस्सअपज्जत्तबायरपुढविकाइयाणं ठाणा पण्णत्ता ?

३ उत्तर-एवं एएणं अभिलावेणं जहा ओहिउद्देसओ जाव तुल्लट्ठिइय त्ति । 'सेवं भंते० ।

एवं एएणं अभिलावेणं जहेव पढमं सेढिसयं तहेव एक्कारस उद्देसगा भाणियव्वा ३४-२-११ ।

॥ बिइयं एगिंदियसेढिसयं समत्तं ॥

भावार्थ-३ प्रश्न-हे भगवन् ! कृष्णलेश्या वाले अपर्याप्त बादर पृथ्वीकायिक जीव के स्थान कहाँ कहे हैं ?

३ उत्तर-हे गौतम ! औधिक उद्देशक के इस अभिलाप के अनुसार यावत् 'तुल्य स्थिति वाले' पर्यन्त कहना चाहिये ।

जिस प्रकार प्रथम श्रेणी शतक कहा, उसी प्रकार इसी अभिलाप से कृष्णलेशी श्रेणी-शतक के ग्यारह उद्देशक कहना चाहिये ।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'-कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

## ॥ चौंतीसवें शतक का दूसरा अवान्तर शतक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

## अवान्तर शतक ३–५

–एवं णीललेस्सेहि वि तइयं सयं। काउलेस्सेहि वि सयं। एवं चेव चउत्थं सयं। भविसिद्धियएहि वि सयं पंचमं समत्तं।

॥ चोत्तीसइमे सए ३–५ सयाइं समत्ताइं ॥

भावार्थ–इसी प्रकार नीललेश्या वाले जीव का तीसरा शतक, कापोत-लेश्या वाले का चौथा शतक तथा भवसिद्धिक एकेन्द्रिय जीव का पांचवां शतक है।

॥ चौंतीसवें शतक के ३–५ अवान्तर शतक सम्पूर्ण ॥

---

## अवान्तर शतक ६

१ प्रश्न–कइविहा णं भंते ! कण्हलेस्सा भवसिद्धिया एगिंदिया पण्णत्ता ?

१ उत्तर–एवं जहेव ओहियउद्देसओ।

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! कृष्णलेश्या वाले भवसिद्धिक एकेन्द्रिय जीव कितने प्रकार के कहे हैं ?

१ उत्तर–हे गौतम ! औधिक उद्देशकानुसार।

२ प्रश्न–कइविहा णं भंते ! अणंतरोववण्णा कण्हलेस्सा भव-सिद्धिया एगिंदिया पण्णत्ता ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२ उत्तर-जहेव अणंतरोववण्णउद्देसओ ओहिओ तहेव ।

भावार्थ-२ प्रश्न-हे भगवन् ! अनन्तरोपपन्नक कृष्णलेश्या वाले भवसिद्धिक एकेन्द्रिय जीव कितने प्रकार के कहे हैं ?

२ उत्तर-हे गौतम ! अनन्तरोपपन्नक सम्बन्धी औधिक उद्देशकानुसार ।

३ प्रश्न-कइविहा णं भंते ! परंपरोववण्णा कण्हलेस्सा भवसिद्धियएगिंदिया पण्णत्ता ?

३ उत्तर-गोयमा ! पंचविहा परंपरोववण्णा कण्हलेस्सभवसिद्धियएगिंदिया पण्णत्ता-ओहिओ भेओ चउक्कओ जाव वणस्सइकाइय त्ति ।

भावार्थ-३ प्रश्न-हे भगवन् ! परम्परोपपन्नक कृष्णलेश्या वाले भवसिद्धिक एकेन्द्रिय जीव कितने प्रकार के कहे हैं ?

३ उत्तर-हे गौतम ! परम्परोपपन्नक कृष्णलेश्या वाले भवसिद्धिक एकेन्द्रिय जीव पांच प्रकार के कहे हैं । इस प्रकार औधिक चार-चार भेद यावत् वनस्पतिकायिक पर्यन्त ।

४ प्रश्न- परंपरोववण्ण-कण्हलेस्स-भवसिद्धिय-अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइए णं भंते ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए ?

४ उत्तर-एवं एएणं अभिलावेणं जहेव ओहिओ उद्देसओ जाव लोयचरमंते त्ति । सव्वत्थ कण्हलेस्सेसु भवसिद्धिएसु उववाएयव्वो ।

भावार्थ-४ प्रश्न-हे भगवन् ! जो परम्परोपपन्नक कृष्णलेश्या वाला

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भवसिद्धिक अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव, इस रत्नप्रभा पृथ्वी के पूर्व चरमान्त में मरण-समुद्घात कर के पश्चिम चरमान्त में उत्पन्न हो, तो वह कितने समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है ?

४ उत्तर–हे गौतम ! पूर्ववत्, इस अभिलाप से औधिक उद्देशक के अनुसार लोक के चरमान्त तक कृष्णलेश्या वाले भवसिद्धिक में उपपात होता है ।

५ प्रश्न–कहिं णं भंते ! परंपरोववण्णकण्हलेस्सभवसिद्धियपज्जत्तबायरपुढविकाइयाणं ठाणा पण्णत्ता ?

५ उत्तर–एवं एएणं अभिलावेणं जहेव ओहिओ उद्देसओ जाव 'तुल्लट्ठिइय' त्ति । एवं एएणं अभिलावेणं कण्हलेस्सभवसिद्धियएगिंदिएहि वि तहेव एक्कारसउद्देसगसंजुत्तं छट्ठं सयं ।

॥ चोत्तीसइमे सए छट्ठं सयं समत्तं ॥

भावार्थ–५ प्रश्न–हे भगवन् ! परम्परोपपन्नक कृष्णलेश्या वाले भवसिद्धिक पर्याप्त बादर पृथ्वीकायिक जीव के स्थान कहां कहे हैं ?

५ उत्तर–हे गौतम ! पूर्ववत्, इस अभिलाप से तुल्य स्थिति वाले तक औधिक उद्देशक के अनुसार । इसी प्रकार इस अभिलाप से कृष्णलेश्या वाले भवसिद्धिक एकेन्द्रिय के भी ग्यारह उद्देशक सहित छठा अवान्तर शतक जानो ।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'–– कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

॥ चौंतीसवें शतक का छठा अवान्तर शतक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

## अवान्तर शतक ७–१२

–णीललेस्सभवसिद्धियएगिंदिएसु सयं सत्तमं । एवं काउलेस्स-भवसिद्धियएगिंदिएहि वि अट्ठमं सयं । जहा भवसिद्धिएहिं चत्तारि सयाणि एवं अभवसिद्धिएहि वि चत्तारि सयाणि भाणियव्वाणि । णवरं चरमअचरमवज्जा णव उद्देसगा भाणियव्वा, सेसं तं चेव । एवं एयाइं बारस एगिंदियसेढीसयाइं ।

❀ 'सेवं भंते ! सेवं भंते' ! त्ति जाव विहरइ ❀

॥ एगिंदियसेढीसयाइं समत्ताइं ॥

॥ चउत्तीसइमं एगिंदियसेढिसयं समत्तं ॥

–नीललेश्या वाले भवसिद्धिक एकेन्द्रिय जीव का सातवाँ शतक ३४–७ । इसी प्रकार कापोतलेश्या वाले भवसिद्धिक एकेन्द्रिय जीव का आठवाँ शतक ३४–८ । भवसिद्धिक जीव के चार शतक के अनुसार अभवसिद्धिक एकेन्द्रिय जीव के भी चार शतक कहना चाहिये । परन्तु इनमें चरम और अचरम छोड़ कर शेष नौ उद्देशक कहने चाहिये । शेष पूर्ववत् । इस प्रकार ये बारह एकेन्द्रिय श्रेणी शतक कहे हैं ।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'–– कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

**विवेचन**––इसमें ऋज्वायतादि श्रेणियों की प्रधानता होने से इस चौतीसवें शतक का नाम 'श्रेणी शतक' दिया है ।

॥ चौतीसवें शतक के अवान्तर शतक ७–१२ सम्पूर्ण ॥

# ॥ चौतीसवाँ श्रेणी शतक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# शतक ३५

## (महायुग्म शतक)

### अवांतर शतक १ उद्देशक १

१ प्रश्न–कइ णं भंते ! महाजुग्मा पण्णत्ता ?

१ उत्तर–गोयमा ! सोलस महाजुग्मा पण्णत्ता, तं जहा–१ कड-जुग्मकडजुग्मे २ कडजुग्मतेओगे ३ कडजुग्मदावरजुग्मे ४ कडजुग्म-कलिओगे ५ तेओगकडजुग्मे ६ तेओगतेओगे ७ तेओगदावरजुग्मे ८ तेओगकलिओए ९ दावरजुग्मकडजुग्मे १० दावरजुग्मतेओए ११ दावरजुग्मदावरजुग्मे १२ दावरजुग्मकलिओगे १३ कलिओग-कडजुग्मे १४ कलिओगतेओगे १५ कलिओगदावरजुग्मे १६ कलि-ओगकलिओगे ।

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! महायुग्म कितने कहे हैं ?

१ उत्तर–हे गौतम ! महायुग्म सोलह कहे हैं । यथा–१ कृतयुग्मकृत-युग्म २ कृतयुग्मव्योज ३ कृतयुग्मद्वापरयुग्म ४ कृतयुग्मकल्योज ५ व्योजकृत-युग्म ६ व्योजव्योज ७ व्योजद्वापरयुग्म ८ व्योजकल्योज ९ द्वापरयुग्मकृतयुग्म

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१० द्वापरयुग्मकल्योज ११ द्वापरयुग्मद्वापरयुग्म १२ द्वापरयुग्मकल्योज १३ कल्योज कृतयुग्म १४ कल्योजत्र्योज १५ कल्योजद्वापरयुग्म और १६ कल्योजकल्योज ।

२ प्रश्न–से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ–'सोलस महाजुम्मा पण्णत्ता, तं जहा–कडजुम्मकडजुम्मे जाव कलिओगकलिओगे' ?

२ उत्तर–गोयमा ! १ जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे चउपज्जवसिए, जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया ते वि कडजुम्मा, सेत्तं कडजुम्मकडजुम्मे २ जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे तिपज्जवसिए, जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया कडजुम्मा, सेत्तं कडजुम्मतेओए ३ जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे दुपज्जवसिए, जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया कडजुम्मा, सेत्तं कडजुम्मदावरजुम्मे ४ जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे एगपज्जवसिए, जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया कडजुम्मा, सेत्तं कडजुम्मकलिओगे ५ जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे चउपज्जवसिए, जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया तेओगा, सेत्तं तेओगकडजुम्मे ६ जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे तिपज्जवसिए, जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया तेओगा, सेत्तं तेओगतेओगे ७ जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे दोपज्जवसिए, जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तेओगा, सेत्तं तेओगदावरजुम्मे ८ जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे एगपज्जवसिए, जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया तेओगा, सेत्तं तेओगकलिओगे ९ जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे चउपज्जवसिए, जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया दावरजुम्मा, सेत्तं दावरजुम्मकडजुम्मे १० जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे तिपज्जवसिए, जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया दावरजुम्मा सेत्तं दावरजुम्मतेओए ११ जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे दुपज्जवसिए, जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया दावरजुम्मा, सेत्तं दावरजुम्मदावरजुम्मे १२ जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे एगपज्जवसिए, जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया दावरजुम्मा, सेत्तं दावरजुम्मकलिओगे १३ जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे चउपज्जवसिए जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया कलिओगा सेत्तं कलिओगकडजुम्मे १४ जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे तिपज्जवसिए, जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया कलिओगा सेत्तं कलिओगतेओए १५ जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे दुपज्जवसिए जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया कलिओगा, सेत्तं कलिओगदावरजुम्मे १६ जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे एगपज्जवसिए, जे णं तस्स रासिस्स अवहारसमया कलिओगा,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सेत्तं कलिओगकलिओगे । से तेणट्ठेणं जाव 'कलिओगकलिओगे'।

कठिन शब्दार्थ–अवहारसमया–अपहार समय ।

भावार्थ–२ प्रश्न–हे भगवन् ! सोलह महायुग्म कहने का कारण क्या है ?

२ उत्तर–हे गौतम ! १ जिस राशि में से चार संख्या का अपहार करते हुए चार शेष रहें और उस राशि के अपहार समय भी कृतयुग्म (चार) हो, तो वह राशि 'कृतयुग्मकृतयुग्म' कहलाती है । २ जिस राशि में से चार संख्या के अपहार से अपहृत करते हुए तीन शेष रहें और उस राशि के अपहार समय भी कृतयुग्म हों, तो वह राशि 'कृतयुग्मत्र्योज' कहलाती है । ३ जिस राशि में से चार संख्या के अपहार से अपहृत करते हुए दो शेष रहें और उस राशि के अपहार समय कृतयुग्म हो, तो वह राशि 'कृतयुग्मद्वापरयुग्म' कहलाती है । ४ जिस राशि में से चार संख्या के अपहार से अपहृत करते हुए एक शेष रहें और उस राशि के अपहार समय कृतयुग्म हो, तो वह राशि 'कृतयुग्मकल्योज' कहलाती है। ५ जिस राशि में से चार संख्या के अपहार से अपहृत करते हुए चार शेष रहें और उस राशि के अपहार समय त्र्योज हो, तो वह राशि 'त्र्योजकृत-युग्म' कहलाती है। ६ जिस राशि में से चार के अपहार से अपहृत करते हुए तीन शेष रहें और उस राशि के अपहार समय त्र्योज (तीन) हो, तो वह राशि 'त्र्योजत्र्योज' कहलाती है । ७ जिस राशि में से चार संख्या के अपहार से अपहृत करते हुए दो बचे और उस राशि के अपहार समय त्र्योज हो, तो वह राशि 'त्र्योजद्वापरयुग्म' कहलाती है । ८ जिस राशि में से चार संख्या से अपहृत करते हुए एक बचे और उस राशि के अपहार समय त्र्योज हो, तो वह राशि 'त्र्योजकल्योज' कहलाती है । ९ जिस राशि में से चार सख्या से अपहृत करते हुए चार शेष रहें और उस राशि के अपहार समय द्वापरयुग्म (दो) हो, तो वह राशि 'द्वापरयुग्मकृतयुग्म' कहलाती है । १० जिस राशि में से चार संख्या से अपहृत करते हुए तीन शेष रहें और उस राशि के अपहार समय द्वापरयुग्म हो, तो वह राशि 'द्वापरयुग्मत्र्योज' कहलाती है । ११ जिस राशि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

में से चार संख्या से अपहृत करते हुए दो बचे और उस राशि के अपहार समय द्वापरयुग्म हो, तो वह राशि 'द्वापरयुग्मद्वापरयुग्म' कहलाती है। १२ जिस राशि में से चार संख्या के अपहार से अपहृत करते हुए एक और उस राशि के अपहार समय द्वापरयुग्म हो, तो वह राशि 'द्वापरयुग्मकल्योज' कहलाती है। १३ जिस राशि में से चार संख्या के अपहार से अपहृत करते हुए चार बचे और उस राशि का अपहार समय कल्योज हो, तो वह राशि 'कल्योज-कृतयुग्म' कहलाती है। १४ जिस राशि में से चार संख्या से अपहृत करते हुए तीन शेष रहें और उस राशि का अपहार समय कल्योज हो, तो वह राशि 'कल्योजत्र्योज' कहलाती है। १५ जिस राशि में से चार संख्या के अपहार से अपहृत करते हुए दो बचे और उस राशि का अपहार समय कल्योज हो, तो वह राशि 'कल्योजद्वापरयुग्म' कहलाती है और १६ जिस राशि में से चार संख्या के अपहार से अपहृत करते हुए एक बचा रहे और उस राशि का अपहार समय कल्योज हो, तो वह राशि 'कल्योजकल्योज' कहलाती है। इस कारण हे गौतम ! यावत् कल्योजकल्योज कहा है।

विवेचन-राशि (संख्या) विशेष को 'युग्म' कहते हैं। वह युग्म क्षुल्लक (छोटा) भी होता है और यहान् (बड़ा) भी होता है। इनमें से क्षुल्लक युग्म का वर्णन पहले किया जा चुका है। अब महायुग्म का वर्णन किया जाता है। जिस राशि में से प्रति समय चार-चार के अपहार से अपहृत करते हुए अन्त में चार शेष रहें और अपहार समय भी चार हों, तो वह राशि 'कृतयुग्मकृतयुग्म' कहलाती है। क्योंकि जिस द्रव्य में से अपहरण किया जाता है, वह द्रव्य भी कृतयुग्म है और अपहरण के समय भी कृतयुग्म हैं। अतः यह राशि 'कृतयुग्मकृतयुग्म' कहलाती है। इसी प्रकार दूसरी राशियाँ भी शब्दार्थ से जानना चाहिये। जैसे कि—१६ की संख्या जघन्य कृतयुग्मकृतयुग्म राशि रूप है, क्योंकि उसमें से चार संख्या से अपहार करते हुए अन्त में चार शेष रहते हैं और अपहार समय भी चार होते हैं। कृतयुग्मत्र्योज—जैसे जघन्य से १९ की संख्या में से प्रतिसमय चार का अपहार करते हुए अन्त में तीन शेष रहते हैं और अपहार समय चार होते हैं। इस प्रकार अपहरण किये जाने वाले द्रव्य की अपेक्षा वह राशि त्र्योज है और अपहार समय की अपेक्षा 'कृतयुग्म' है। अतः इस राशि को 'कृतयुग्मत्र्योज' कहते हैं। यहाँ सभी स्थानों पर अपहारक

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समय की अपेक्षा पहला पद है और अपहार किये जाने वाले द्रव्य की अपेक्षा दूसरा पद है। इन सोलह महायुग्मों की जघन्य संख्या इस प्रकार है-(१) १६। (२) १५। (३) १८। (४) १७। (५) १२। (६) १५। (७) १४। (८) १३। (९) ८। (१०) ११। (११) १०। (१२) ९। (१३) ४। (१४) ७। (१५) ६। (१६) ५।

३ प्रश्न-कडजुम्मकडजुम्मएगिंदिया णं भंते ! कओ उववज्जंति ? किं णेरइएहिंतो ० ?

३ उत्तर-जहा उप्पलुद्देसए तहा उववाओ।

भावार्थ-३ प्रश्न-हे भगवन् ! कृतयुग्मकृतयुग्म राशि रूप एकेन्द्रिय जीव कहां से आ कर उत्पन्न होते हैं, क्या नैरयिक से आ कर उत्पन्न होते हैं०?

३ उत्तर-हे गौतम ! उत्पलोद्देशक (शतक ग्यारह उद्देशक एक) के अनुसार।

४ प्रश्न-ते णं भंते ! जीवा एगसमएणं केवइया उववज्जंति ?

४ उत्तर-गोयमा ! सोलस वा, संखेज्जा वा, असंखेज्जा वा, अणंता वा उववज्जंति।

भावार्थ-४ प्रश्न-हे भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ?

४ उत्तर-हे गौतम ! सोलह, संख्यात, असंख्यात या अनन्त उत्पन्न होते हैं।

५ प्रश्न-ते णं भंते ! जीवा समए समए-पुच्छा।

५ उत्तर-गोयमा ! ते णं अणंता समए समए अवहीरमाणा अवहीरमाणा अणंताहिं उस्सप्पिणी-अवसप्पिणीहिं अवहीरंति, णो चेव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णं अवहरिया सिया । उच्चत्तं जहा उप्पलुद्देसए ।

भावार्थ-५ प्रश्न-हे भगवन् ! वे अनन्त जीव समय-समय में एक-एक अपहृत किये जाय, तो कितने काल में अपहृत (खाली) होते हैं ?

५ उत्तर-हे गौतम ! प्रति समय अपहृत किये जाय, और ऐसा करते हुए अनन्त उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी बीत जाय, तो भी वे खाली नहीं होते (किंतु ऐसा किसी ने किया नहीं) । उनकी ऊँचाई उत्पलोद्देशक के अनुसार है।

६ प्रश्न-ते णं भंते ! जीवा णाणावरणिज्जस्स कम्मस्स किं बंधगा, अबंधगा ?

६ उत्तर-गोयमा ! बंधगा, णो अबंधगा । एवं सव्वेसिं आउय-वज्जाणं । आउयस्स बंधगा वा अबंधगा वा ।

भावार्थ-६ प्रश्न-हे भगवन् ! वे एकेन्द्रिय जीव ज्ञानावरणीय कर्म के बन्धक हैं या अबन्धक ?

६ उत्तर-हे गौतम ! वे बन्धक हैं, अबन्धक नहीं । इसी प्रकार आयु-कर्म के अतिरिक्त शेष सभी कर्मों के बन्धक हैं । आयु-कर्म के वे बन्धक भी हैं और अबन्धक भी ।

७ प्रश्न-ते णं भंते ! जीवा णाणावरणिज्जस्स-पुच्छा ।

७ उत्तर-गोयमा ! वेयगा, णो अवेयगा । एवं सव्वेसिं ।

भावार्थ-७ प्रश्न-हे भगवन् ! वे जीव ज्ञानावरणीय कर्म के वेदक हैं या अवेदक ?

७ उत्तर-हे गौतम ! वे वेदक हैं, अवेदक नहीं । इसी प्रकार सभी कर्मों के विषय में जानना चाहिए ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

८ प्रश्न-ते णं भंते ! जीवा किं सातावेयगा, असातावेयगा-पुच्छा ।

*८ उत्तर-गोयमा ! सातावेयगा वा असातावेयगा वा । एवं उप्प-* लुद्देसगपरिवाडी । सव्वेसिं कम्माणं उदई, णो अणुदई । छण्हं कम्माणं उदीरगा, णो अणुदीरगा । वेयणिज्जाउयाणं उदीरगा वा अणुदीरगा वा ।

भावार्थ-८ प्रश्न-हे भगवन् ! वे जीव साता के वेदक हैं या असाता के ?

८ उत्तर-हे गौतम ! वे सातावेदक होते हैं अथवा असातावेदक । उत्पलोद्देशक परिपाटी के अनुसार । वे सभी कर्मों के उदय वाले हैं, अनुदयी नहीं । छह कर्मों के उदीरक हैं, अनुदीरक नहीं । वेदनीय और आयु-कर्म के उदीरक भी हैं और अनुदीरक भी ।

९ प्रश्न-ते णं भंते ! जीवा किं कण्ह-पुच्छा ।

९ उत्तर-गोयमा ! कण्हलेस्सा वा, णीललेस्सा वा, काउलेस्सा वा तेउलेस्सा वा । णो सम्मदिट्ठी, णो सम्मामिच्छादिट्ठी, मिच्छादिट्ठी । णो णाणी, अण्णाणी, णियमं दुअण्णाणी, तं जहा-मइअण्णाणी य सुयअण्णाणी य । णो मणजोगी, णो वइजोगी, कायजोगी । सागारोवउत्ता वा, अणागारोवउत्ता वा ।

भावार्थ-९ प्रश्न-हे भगवन् ! वे जीव कृष्णलेश्या वाले हैं० ?

९ उत्तर-हे गौतम ! वे कृष्णलेश्या, नीललेश्या, कापोतलेश्या और

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तेजोलेश्या वाले हैं । वे सम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि नहीं होते, एक मिथ्यादृष्टि ही होते हैं । ज्ञानी नहीं, अज्ञानी होते हैं । उनमें नियम से दो अज्ञान-मतिअज्ञान और श्रुतअज्ञान होता है । वे मनोयोगी और वचनयोगी नहीं, काययोगी होते हैं । वे साकारोपयुक्त और अनाकारोपयुक्त होते हैं ।

१० प्रश्न-तेसि णं भंते ! जीवाणं सरीरा कइवण्णा-जहा उप्पलुद्देसए सव्वत्थपुच्छा ।

१० उत्तर-गोयमा ! जहा उप्पलुद्देसए ऊसासगा वा, णीसासगा वा, णो उस्सासणीसासगा वा । आहारगा वा अणाहारगा वा । णो विरया, अविरया, णो विरयाविरया । सकिरिया, णो अकिरिया । सत्तविहबंधगा वा अट्ठविहबंधगा वा । आहारसण्णोवउत्ता वा जाव परिग्गहसण्णोवउत्ता वा । कोहकसायी वा, माणकसायी जाव लोभकसायी वा । णो इत्थिवेयगा, णो पुरिसवेयगा, णपुंसगवेयगा । इत्थिवेयबंधगा वा पुरिसवेयबंधगा वा णपुंसगवेयबंधगा वा । णो सण्णी, असण्णी । सइंदिया, णो अणिंदिया ।

भावार्थ-१० प्रश्न-हे भगवन् ! उन एकेन्द्रिय जीवों के शरीर कितने वर्ण के होते हैं, इत्यादि उत्पलोद्देशक के अनुसार सभी प्रश्न करना चाहिये ।

१० उत्तर-हे गौतम ! उत्पलोद्देशकानुसार । उनके शरीर पांच वर्ण, पांच रस, दो गन्ध और आठ स्पर्श वाले होते हैं । वे उच्छ्वास वाले अथवा निःश्वास वाले अथवा नो-उच्छ्वासनिःश्वास वाले होते हैं । आहारक अथवा अनाहारक होते हैं । वे विरत (सर्वविरति) और विरताविरत (देशविरत) नहीं होते, अविरत होते हैं । वे सक्रिय होते हैं, अक्रिय नहीं । वे सात अथवा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आठ कर्म-प्रकृति के बन्धक होते हैं। वे आहार संज्ञा यावत् परिग्रह संज्ञा वाले होते हैं। वे क्रोधकषायी, मानकषायी यावत् लोभकषायी होते हैं। स्त्री-वेदी और पुरुषवेदी नहीं होते, किन्तु नपुंसकवेदी होते हैं। वे स्त्रीवेद बन्धक, पुरुषवेद बन्धक अथवा नपुंसकवेद बन्धक होते हैं। वे संज्ञी नहीं, असंज्ञी होते हैं। वे सइन्द्रिय होते हैं, अनिन्द्रिय नहीं होते।

११ प्रश्न-ते णं भंते ! कडजुम्मकडजुम्मएगिंदिया कालओ केवचिरं होंति ?

११ उत्तर गोयमा ! जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं अणंतं कालं-अणंता उस्सप्पिणीओस्सप्पिणीओ, वणस्सइकाइयकालो। संवेहो ण भण्णइ, आहारो जहा उप्पलुद्देसए, णवरं णिव्वाघाएणं छद्दिसिं, वाघायं पडुच्च सिय तिदिसिं, सिय चउदिसिं, सिय पंचदिसिं, सेसं तहेव। ठिई जहण्णेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं बावीसं वाससहस्साइं। समुग्घाया आदिल्ला चत्तारि। मारणंतियसमुग्घाएणं समोहया वि मरंति, असमोहया वि मरंति। उव्वट्टणा जहा उप्पलुद्देसए।

भावार्थ-११ प्रश्न-हे भगवन् ! वे कृतयुग्मकृतयुग्म राशि रूप एकेन्द्रिय जीव, काल की अपेक्षा कितने काल तक होते हैं ?

११ उत्तर-हे गौतम ! वे जघन्य एक समय और उत्कृष्ट अनन्तकाल, अनन्तउत्सर्पिणी और अवसर्पिणी रूप वनस्पति काल पर्यन्त होते हैं। यहाँ संवेध नहीं कहना। आहार उत्पलोद्देशक के अनुसार, व्याघात रहित छह दिशा का और व्याघात हो, तो कदाचित् तीन, चार या पांच दिशा का आहार लेते हैं। स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट बाईस हजार वर्ष। समुद्घात पहले के चार

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

होते हैं। मारणान्तिक समुद्घात से समवहत अथवा असमवहत हो कर मरते हैं। उद्वर्तना उत्पलोद्देशक के अनुसार जाननी चाहिये।

**विवेचन**–जिन एकेंद्रिय जीवों में से चार-चार का अपहार करते हुए अन्त में चार शेष रहें और अपहार समय भी चार हों, तो वे 'कृतयुग्मकृतयुग्म एकेन्द्रिय' कहलाते हैं।

यहाँ 'उत्पलोद्देशक' का अतिदेश किया गया है, सो यह उत्पलोद्देशक ११ वें शतक का पहला उद्देशक है।

उत्पलोद्देशक में उत्पल (कमल) के जीव का उत्पाद विवक्षित है और वह पृथ्वीकायिकादि दूसरी काय में जावे, पुनः उत्पल में आ कर उत्पन्न हो, तब उसका संवेध होता है, परन्तु यहाँ कृतयुग्मकृतयुग्म राशि रूप एकेन्द्रिय का उत्पाद अधिकृत है और एकेन्द्रिय तो अनंत उत्पन्न होते हैं। उनमें से निकल कर विजातीयकाय में उत्पन्न हो कर पुनः एकेन्द्रियपने उत्पन्न हों, तब संवेध होता है, किन्तु उनका वहाँ से निकलना असम्भवित होने से संवेध नहीं होता। यहाँ जो सोलह कृतयुग्मकृतयुग्म राशि रूप एकेन्द्रिय का उत्पाद कहा है, वह त्रसकाय से आ कर उत्पन्न होने वाले जीव की अपेक्षा है, परन्तु वह वास्तविक उत्पाद नहीं है। क्योंकि एकेन्द्रिय में प्रतिसमय अनंत जीव का उत्पाद होता है। इसलिये यहाँ एकेन्द्रिय की अपेक्षा संवेध असम्भवित होने से नहीं कहा है।

**१२ प्रश्न–अह भंते ! सव्वपाणा जाव सव्वसत्ता कडजुम्मकडजुम्मएगिंदियत्ताए उववण्णपुव्वा ?**

**१२ उत्तर–हंता गोयमा ! असइं अदुवा अणंतखुत्तो।**

**भावार्थ–१२ प्रश्न–हे भगवन्! सभी प्राण यावत् सभी सत्त्व कृतयुग्मकृतयुग्म एकेन्द्रिय रूप से पहले उत्पन्न हुए हैं?**

**१२ उत्तर–हाँ, गौतम! पहले अनेक बार अथवा अनंत बार उत्पन्न हुए।**

**१३ प्रश्न–कडजुम्मतेओयएगिंदिया णं भंते ! कओ उववज्जंति?**

**१३ उत्तर–उववाओ तहेव।**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ–१३ प्रश्न–हे भगवन् ! कृतयुग्मकृतयुग्म ओज राशि के एकेन्द्रिय जीव कहां से आते हैं ?

१३ उत्तर–हे गौतम ! उपपात पूर्ववत् ।

१४ प्रश्न–ते णं भंते ! जीवा एगसमए–पुच्छा ।

१४ उत्तर–गोयमा ! एगूणवीसा वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति, सेसं जहा कडजुम्मकडजुम्माणं जाव अणंतखुत्तो ।

भावार्थ–१४ प्रश्न–हे भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ?

१४ उत्तर–हे गौतम ! उन्नीस, संख्यात, असंख्यात या अनन्त उत्पन्न होते हैं । शेष पूर्ववत्, कृतयुग्मकृतयुग्म राशि एकेन्द्रिय के अनुसार यावत् 'पहले अनेक बार अथवा अनन्त बार उत्पन्न हुए हैं'–पर्यन्त ।

१५ उत्तर–कडजुम्मदावरजुम्मएगिंदिया णं भंते ! कओहिंतो उववज्जंति ?

१५ उत्तर–उववाओ तहेव ।

भावार्थ–१५ प्रश्न–हे भगवन् ! कृतयुग्मद्वापरयुग्म राशि के एकेन्द्रिय जीव कहां से आते हैं ?

१५ उत्तर–हे गौतम ! पूर्ववत् ।

१६ प्रश्न–ते णं भंते ! जीवा एगसमएणं–पुच्छा ।

१६ उत्तर–गोयमा ! अट्ठारस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अणंता वा उववज्जंति, सेसं तहेव जाव अणंतखुत्तो ।

भावार्थ-१६ प्रश्न-हे भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ?

१६ उत्तर-हे गौतम ! एक समय में अठारह, संख्यात असंख्यात या अनन्त उत्पन्न होते हैं । शेष सभी पूर्ववत्, यावत् 'पहले अनन्त बार उत्पन्न हुए हैं' ।

१७ प्रश्न-कडजुम्मकलिओगएगिंदिया णं भंते ! कओहिंतो उववज्जंति ?

१७ उत्तर-उववाओ तहेव । परिमाणं सत्तरस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा सेसं तहेव जाव अणंतखुत्तो ।

भावार्थ-१७ प्रश्न-हे भगवन् ! कृतयुग्मकल्योज राशि एकेन्द्रिय जीव कहां से आते हैं ?

१७ उत्तर-हे गौतम ! पूर्ववत्, परिमाण सत्रह, संख्यात, असंख्यात या अनन्त उत्पन्न होते हैं । शेष पूर्ववत्, यावत् अनन्त बार उत्पन्न हुए हैं ।

१८ प्रश्न-तेओगकडजुम्मएगिंदिया णं भंते ! कओहिंतो उववज्जंति ?

१८ उत्तर-उववाओ तहेव, परिमाणं बारस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति, सेसं तहेव जाव अणंतखुत्तो ।

भावार्थ-१८ प्रश्न-हे भगवन् ! त्र्योजकृतयुग्म राशि एकेन्द्रिय जीव कहां से आ कर उत्पन्न होते हैं ?

१८ उत्तर-हे गौतम ! उपपात पूर्ववत् । परिमाण एक समय में बारह

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संख्यात, असंख्यात या अनन्त उत्पन्न होते हैं। शेष पूर्ववत्, यावत् 'पहले अनेक बार या अनन्त बार उत्पन्न हुए हैं' पर्यन्त।

१९ प्रश्न–तेओयतेओयएगिंदिया णं भंते ! कओहिंतो उववज्जंति ?

१९ उत्तर–उववाओ तहेव। परिमाणं पण्णरस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा सेसं तहेव जाव अणंतखुत्तो। एवं एएसु सोलससु महाजुम्मेसु एक्को गमओ। णवरं परिमाणे णाणत्तं· तेओगदावरजुम्मेसु परिमाणं चोद्दस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति। तेओगकलिओगेसु तेरस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति। दावरजुम्मकडजुम्मेसु अट्ठ वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति। दावरजुम्म-तेओगेसु एक्कारस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उव-वज्जंति। दावरजुम्मदावरजुम्मेसु दस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा। उववज्जंति दावरजुम्मकलिओगेसु णव वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति। कलिओगकडजुम्मे चत्तारि वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति। कलिओगतेओगेसु सत्त वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति। कलिओग-दावरजुम्मेसु छ वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति।

भावार्थ–१९ प्रश्न–हे भगवन्! त्र्योजत्र्योज राशि एकेंद्रिय जीव कहाँ से

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आते हैं ?

१९ उत्तर–हे गौतम ! उपपात पूर्ववत । परिमाण प्रतिसमय पन्द्रह, संख्यात, असंख्यात या अनन्त उत्पन्न होते हैं । शेष पूर्ववत्, यावत् 'पहले अनेक बार अथवा अनन्त बार उत्पन्न हुए हैं' पर्यन्त । इस प्रकार सोलह महायुग्मों का एक ही प्रकार का कथन समझना चाहिये । परिमाण में विशेषता है । यथा–त्र्योजद्वापरयुग्म में परिमाण–चौदह, संख्यात, असंख्यात या अनन्त उत्पन्न होते हैं । त्र्योजकल्योज में तेरह, संख्यात, असंख्यात या अनन्त उत्पन्न होते हैं । द्वापरयुग्मकृतयुग्म में आठ, संख्यात, असंख्यात या अनन्त उत्पन्न होते हैं । द्वापरयुग्मत्र्योज में ग्यारह, संख्यात, असंख्यात या अनन्त उत्पन्न होते हैं । द्वापरयुग्मद्वापरयुग्म में दस, संख्यात, असंख्यात या अनन्त उत्पन्न होते हैं । द्वापरयुग्मकल्योज में नौ, संख्यात, असंख्यात या अनन्त उत्पन्न होते हैं । कल्योजकृतयुग्म में चार, संख्यात, असंख्यात या अनन्त उत्पन्न होते हैं । कल्योजत्र्योज में सात, संख्यात, असंख्यात या अनन्त उत्पन्न होते हैं । कल्योजद्वापरयुग्म में छह, संख्यात, असंख्यात या अनन्त उत्पन्न होते हैं ।

२० प्रश्न–कलिओगकलिओगएगिंदिया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?

२० उत्तर–उववाओ तहेव । परिमाणं पंच वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति । सेसं तहेव जाव अणंतखुत्तो ।

❀ 'सेवं भंते ! सेवं भंते' ! त्ति ❀

॥ पणतीसइमे सए पढमो उद्देसो समत्तो ॥

भावार्थ–२० प्रश्न–हे भगवन् ! कल्योजकल्योज राशि एकेंद्रिय जीव कहां से आते हैं ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२० उत्तर–हे गौतम ! उपपात पूर्ववत् । परिमाण–पांच, संख्यात, असंख्यात या अनन्त उत्पन्न होते हैं । शेष पूर्ववत्, यावत् 'पहले अनेक बार या अनन्त बार उत्पन्न हुए हैं' ।

'हे भगवन ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'– कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

## ॥ पैंतीसवें शतक के प्रथम अवांतर शतक का प्रथम उद्देशक सम्पूर्ण ॥

## अवान्तर शतक १ उद्देशक २

१ प्रश्न–पढमसमयकडजुम्मकडजुम्मएगिंदिया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?

१ उत्तर–गोयमा ! तहेव, एवं जहेव पढमो उद्देसओ तहेव सोलस-खुत्तो बिइओ वि भाणियव्वो, तहेव सव्वं । णवरं इमाणि य दस णाणत्ताणि–१ ओगाहणा जहण्णेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं, उक्कोसेण वि अंगुलस्स असंखेज्जइभागं । २ आउयकम्मस्स णो बंधगा, अबंधगा । ३ आउयस्स णो उदीरगा, अणुदीरगा । ४ णो उस्सामगा, णो णिस्सासगा, णोउस्सासणिस्सासगा । ५ सत्तविह-बंधगा, णो अट्ठविहबंधगा ।

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! प्रथम समय उत्पन्न कृतयुग्मकृतयुग्म राशि एकेन्द्रिय जीव कहां से आते हैं ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१ उत्तर-हे गौतम ! पूर्ववत्, प्रथम उद्देशकानुसार सोलह राशि की अपेक्षा सोलह बार पाठ के कथनपूर्वक दूसरा उद्देशक कहना । शेष पूर्ववत्, किन्तु इनमें दस नानात्व (विशेषताएँ) हैं । यथा-१ अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट भी अंगुल के असंख्यातवें भाग, २ आयु-कर्म के बन्धक नहीं, अबन्धक होते हैं, ३ वे आयु-कर्म के उदीरक नहीं, अनुदीरक होते हैं, ४ वे उच्छ्वास, निःश्वास युक्त नहीं होते किन्तु नोउच्छ्वासनिःश्वास युक्त होते हैं और ५ वे सात प्रकार के कर्म-बन्धक होते हैं, आठ प्रकार के नहीं।

२ प्रश्न-ते णं भंते ! 'पढमसमयकडजुम्मकडजुम्मएगिंदिय' त्ति कालओ केवच्चिरं होइ ?

२ उत्तर-गोयमा ! एक्कं समयं । एवं ठिईए वि । समुग्घाया आदिल्ला दोण्णि । समोहया ण पुच्छिज्जंति । उव्वट्टणा ण पुच्छिज्जइ । सेसं तहेव सव्वं णिरवसेसं । सोलससु वि गमएसु जाव अणंतखुत्तो ।

❀ 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' ३५-१-२ ❀

कठिन शब्दार्थ-आदिल्ला-आदि (पहले) के ।

भावार्थ-२ प्रश्न-हे भगवन् ! प्रथम समय कृतयुग्मकृतयुग्म राशि एकेन्द्रिय जीव कितने काल तक होते हैं ?

२ उत्तर-हे गौतम ! एक समय तक होते हैं । स्थिति भी यही । प्रथम के दो समुद्घात होते हैं । समवहत और उद्वर्तना असम्भव होने से प्रश्न नहीं करना । शेष सोलह महायुग्मों में उसी प्रकार यावत् 'अनन्त बार उत्पन्न हुए हैं' पर्यन्त ।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

विवेचन–एकेन्द्रियपने उत्पन्न हुए जिनको अभी एक समय ही हुआ है और जो कृतयुग्मकृतयुग्म राशि रूप है, ऐसे एकेन्द्रिय जीव को 'प्रथम समय कृतयुग्मकृतयुग्म' एकेन्द्रिय कहते हैं ।

यहाँ पहले की अपेक्षा दस बातों में भिन्नता है। ये जीव प्रथम समयोत्पन्न हैं, इसलिए इनमें जो बातें सम्भवित नहीं होती, उनका अभाव है। जैसे अवगाहना प्रथम उद्देशक में बादर वनस्पति की बड़ी अवगाहना कही गई थी, किन्तु यहाँ प्रथम समयोत्पन्न होने से अवगाहना अल्प होती है। इसी प्रकार दूसरी भिन्नताएँ भी समझनी चाहिये ।

## ॥ पैंतीसवें शतक के प्रथम अवान्तर शतक का दूसरा उद्देशक संपूर्ण ॥

## अवान्तर शतक १ उद्देशक ३–११

**१ प्रश्न–अपढमसमयकडजुम्मकडजुम्मएगिंदिया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?**

**१ उत्तर–एसो जहा पढमुद्देसो सोलसहि वि जुम्मेसु तहेव णेयव्वो जाव कलिओगकलिओगत्ताए जाव अणंतखुत्तो ॥३५–१–३॥**

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! अप्रथम समय के कृतयुग्मकृतयुग्म राशि एकेन्द्रिय जीव कहां से आते हैं ?

१ उत्तर–हे गौतम ! प्रथम उद्देशकानुसार इस उद्देशक में भी सोलह महायुग्मों से निरूपण करना यावत् कल्योजकल्योज राशि से यावत् अनन्त बार उत्पन्न हुए हैं ॥ ३५–१–३ ॥

**१ प्रश्न–चरमसमयकडजुम्मकडजुम्मएगिंदिया णं भंते ! कओ**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हिंतो उववज्जंति ?

१ उत्तर-एवं जहेव पढमसमयउद्देसओ। णवरं देवा ण उववज्जंति, तेउलेस्सा ण पुच्छिज्जंति, सेसं तहेव ॥३५-१-४॥

भावार्थ-१ प्रश्न-हे भगवन् ! चरम समय कृतयुग्मकृतयुग्म राशि एकेन्द्रिय जीव कहां से आते हैं ?

१ उत्तर-हे गौतम ! प्रथम समय उद्देशक के अनुसार। किन्तु यहाँ देव उत्पन्न नहीं होते और तेजोलेश्या विषयक प्रश्न भी नहीं करना चाहिये। शेष पूर्ववत्। ३५-१-४।

१ प्रश्न-अचरमसमयकडजुम्मकडजुम्मएगिंदिया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?

१ उत्तर-जहा अपढमसमयउद्देसो तहेव णिरवसेसो भाणियव्वो। ॥ ३५-१-५ ॥

भावार्थ-१ प्रश्न-हे भगवन् ! अचरम समय के कृतयुग्मकृतयुग्म राशि एकेन्द्रिय जीव कहां से आते हैं ?

१ उत्तर-हे गौतम ! अप्रथमसमय उद्देशक के अनुसार। ३५-१-५।

१ प्रश्न-पढमपढमसमयकडजुम्मकडजुम्मएगिंदिया णं भंते ! कओहिंतो उववज्जंति ?

१ उत्तर-जहा पढमसमयउद्देसओ तहेव णिरवसेसं ॥३५-१-६॥

भावार्थ-१ प्रश्न-हे भगवन् ! प्रथमप्रथम समय के कृतयुग्मकृतयुग्म राशि एकेन्द्रिय जीव कहां से आते हैं ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१ उत्तर-हे गौतम ! प्रथम समय सम्बन्धी उद्देशक के अनुसार।३५-१-६।

१ प्रश्न-पढमअपढमसमयकडजुम्मकडजुम्मएगिंदिया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?

१ उत्तर-जहा पढमसमयउद्देसो तहेव भाणियव्वो ॥३५-१-७॥

भावार्थ-१ प्रश्न-हे भगवन् ! प्रथम-अप्रथम समय के कृतयुग्मकृतयुग्म राशि एकेन्द्रिय जीव कहां से आते हैं ?

१ उत्तर-हे गौतम ! प्रथम समय उद्देशक के अनुसार। ३५-१-७।

१ प्रश्न-पढमचरमसमयकडजुम्मकडजुम्मएगिंदिया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?

१ उत्तर-जहा चरमुद्देसओ तहेव णिरवसेसं ॥ ३५-१-८ ॥

भावार्थ-१ प्रश्न-हे भगवन् ! प्रथम-चरम समय के कृतयुग्मकृतयुग्म राशि एकेन्द्रिय जीव कहां से आते हैं ?

१ उत्तर-हे गौतम ! चरम उद्देशक के अनुसार। ३५-१-८।

१ प्रश्न-पढमअचरमसमयकडजुम्मकडजुम्मएगिंदिया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?

१ उत्तर-जहा बीओ उद्देसओ तहेव णिरवसेसं ॥३५-१-९॥

भावार्थ-१ प्रश्न-हे भगवन् ! प्रथम-अचरम समय के कृतयुग्मकृतयुग्म राशि एकेन्द्रिय जीव कहां से आते हैं ?

१ उत्तर-हे गौतम ! दूसरे उद्देशक के अनुसार। ३५-१-९।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१ प्रश्न–चरमचरमसमयकडजुम्मकडजुम्मएगिंदिया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?

१ उत्तर–जहा चउत्थो उद्देसओ तहेव णिरवसेसं ॥ ३५–१–१०॥

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! चरम-चरम समय के कृतयुग्मकृतयुग्म एकेन्द्रिय जीव कहां से आते हैं ?

१ उत्तर–हे गौतम ! चौथे उद्देशक के अनुसार संपूर्ण । ३५–१–१० ।

१ प्रश्न–चरमअचरमसमयकडजुम्मकडजुम्मएगिंदिया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?

१ उत्तर–जहा पढमसमयउद्देसओ तहेव णिरवसेसं ।

❀ 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति जाव विहरइ । ❀ ३५–१–११

एवं एए एक्कारस उद्देसगा । पढमो तइओ पंचमओ य सरिसगमा, सेसा अट्ठ सरिसगमगा । णवरं चउत्थे अट्ठमे दसमे य देवा ण उववज्जंति । तेउलेस्सा णत्थि ।

॥ पणतीसइमे सए पढमं एगिंदियमहाजुम्मसयं समत्तं ॥

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! चरम-अचरम समय के कृतयुग्मकृतयुग्म राशि एकेन्द्रिय जीव कहां से आते हैं ?

१ उत्तर–हे गौतम ! प्रथम समय के उद्देशक के अनुसार ।३५–१–११।

इस प्रकार ये ग्यारह उद्देशक हैं । इनमें से पहला, तीसरा और पांचवां, ये तीन उद्देशक एक समान पाठ वाले हैं, शेष आठ उद्देशक एक समान हैं, किन्तु चौथा, आठवां और दसवां, इन तीन उद्देशक में देव का

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उपपात और तेजोलेश्या का कथन नहीं करना चाहिये ।

**विवेचन**--जिनको उत्पन्न हुए द्वितीयादि समय हो गये हैं और वे संख्या में कृतयुग्म-कृतयुग्म हैं, ऐसे एकेन्द्रिय जीवों को 'अप्रथम समय कृतयुग्मकृतयुग्म एकेंद्रिय' कहा गया है । इनका कथन सामान्य एकेंद्रियों के समान है । इसलिये प्रथम उद्देशक का अतिदेश किया गया है ।

'चरमसमय' शब्द से यहाँ एकेंद्रियों का मरण समय विवक्षित है और वह उनके परभव आयु का प्रथम समय जानना चाहिये । उस समय में रहे हुए कृतयुग्मकृतयुग्म राशि एकेंद्रियों का कथन प्रथम समय के एकेंद्रियोद्देशक के समान है । उसमें जो दस बातों की विशेषता बताई गई है, वह यहां भी जाननी चाहिये, परन्तु विशेषता यह है कि यहां देव उत्पन्न नहीं होते । अतएव इस उद्देशक में तेजोलेश्या का कथन नहीं करना चाहिये । एकेंद्रियों में तेजोलेश्या तभी पाई जाती है, जब उनमें देव उत्पन्न होते हैं । यहां देवों की उत्पत्ति संभव नहीं है, इसलिये तेजोलेश्या वाले एकेंद्रियों के विषय में प्रश्न नहीं करना चाहिए ।

जिन एकेंद्रिय जीवों का उपर्युक्त चरम समय नहीं हैं, वे 'अचरमसमय कृतयुग्म कृतयुग्म एकेंद्रिय' कहे गये हैं ।

प्रथम समयोत्पन्न और कृतयुग्मकृतयुग्मत्व के अनुभव के प्रथम समय में वर्तमान ऐसे एकेंद्रिय जीव 'प्रथमप्रथम समय कृतयुग्मकृतयुग्म एकेंद्रिय' कहलाते हैं ।

सातवें उद्देशक में प्रथम समयोत्पन्न होते हुए भी कृतयुग्मकृतयुग्म राशि का पूर्वभव में अनुभव किया हुआ होने से वे एकेन्द्रिय जीव 'प्रथमअप्रथम समय कृतयुग्मकृतयुग्म एकेंद्रिय' कहलाते हैं । यहां एकेंद्रियपने की उत्पत्ति के प्रथम समय में वर्तमान और पूर्वभव में कृतयुग्मकृतयुग्म राशि संख्या का अनुभव किया हुआ होने से इन्हें 'अप्रथम समयवर्ती एकेंद्रिय' कहा है ।

कृतयुग्मकृतयुग्म संख्या के अनुभव के प्रथम समयवर्ती और चरमसमय अर्थात् मरण समयवर्ती होने से इन्हें 'प्रथम-चरम समय कृतयुग्मकृतयुग्म एकेंद्रिय' कहा है । इनका कथन आठवें उद्देशक में किया है ।

कृतयुग्मकृतयुग्म संख्या के अनुभव के प्रथम समय में वर्तमान तथा अचरम समय अर्थात् एकेंद्रियोत्पत्ति के प्रथम समयवर्ती एकेंद्रिय जीवों को 'प्रथम-अचरम समय-कृतयुग्मकृतयुग्म एकेंद्रिय' कहा है, क्योंकि इनमें चरमत्व का निषेध है । यदि ऐसा न हो, तो

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दूसरे उद्देशक में कही हुई अवगाहनादि की समानता घटित नहीं हो सकती। अतः नौवें उद्देशक में 'प्रथमअचरम समय कृतयुग्मकृतयुग्म एकेन्द्रियों' का कथन किया है।

कृतयुग्मकृतयुग्म संख्या के अनुभव के चरम अर्थात् अन्तिम समय में वर्तमान और चरम समय अर्थात् मरणसमयवर्ती एकेंद्रियों को 'चरमचरम समय कृतयुग्मकृतयुग्म एकेंद्रिय' कहा है। इनका कथन दसवें उद्देशक में किया है।

कृतयुग्मकृतयुग्म संख्या के अनुभव के चरम अर्थात् अंतिम समय में वर्तमान और अचरमसमय अर्थात् एकेंद्रियोत्पत्ति के प्रथम समयवर्ती एकेंद्रिय जीव 'चरमअचरम समय कृतयुग्मकृतयुग्म एकेंद्रिय' कहलाते हैं। इनका कथन ग्यारहवें उद्देशक में किया है।

पहला, तीसरा और पांचवाँ, इन तीन उद्देशकों का कथन समान है अर्थात् इनमें अवगाहना आदि की विशेषता का कथन नहीं है। शेष आठ उद्देशकों का कथन एक समान है। उनमें अवगाहनादि दस बातों की विशेषता है, किन्तु चौथा, आठवाँ और दसवाँ, इन तीन उद्देशकों में देवोत्पत्ति और तेजोलेश्या का कथन नहीं करना चाहिये।

**॥ पैंतीसवें शतक के प्रथम अवांतर शतक के ३-११ उद्देशक सम्पूर्ण ॥**

**॥ प्रथम अवांतर शतक सम्पूर्ण ॥**

## अवांतर शतक २

**१ प्रश्न-कण्हलेस्सकडजुम्मकडजुम्मएगिंदिया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?**

**१ उत्तर-गोयमा ! उववाओ तहेव, एवं जहा ओहिउद्देसए। णवरं इमं णाणत्तं-ते णं भंते ! जीवा कण्हलेस्सा ? उत्तर-हंता कण्हलेस्सा।**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! कृष्णलेश्या वाले कृतयुग्मकृतयुग्म राशि एकेंद्रिय जीव कहां से आते हैं ?

१ उत्तर–हे गौतम ! उपपात औधिक उद्देशक के अनुसार । विशेष में–

प्रश्न–हे भगवन् ! वे जीव कृष्णलेश्या वाले हैं ?

उत्तर–हां, गौतम ! कृष्णलेश्या वाले हैं ।

२ प्रश्न–ते णं भंते ! 'कण्हलेस्सकडजुम्मकडजुम्मएगिंदिय' त्ति कालओ केवच्चिरं होइ ?

२ उत्तर–गोयमा ! जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं अंतोमुहुत्तं एवं ठिईए वि । सेसं तहेव जाव अणंतखुत्तो । एवं सोलस वि जुम्मा भाणियव्वा ॥ ३५–२–१ ॥

भावार्थ–२ प्रश्न–हे भगवन् ! वे कृष्णलेश्या वाले कृतयुग्मकृतयुग्म राशि एकेंद्रिय जीव काल की अपेक्षा कितने काल तक होते हैं ?

२ उत्तर–हे गौतम ! जघन्य एक समय और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त तक, इसी प्रकार स्थिति भी । शेष पूर्ववत्, यावत् 'अनन्त बार उत्पन्न हुए हैं' तक । इस प्रकार सोलह महायुग्मों का कथन करना चाहिये । ३५–२–१ ।

१ प्रश्न–पढम-समय-कण्हलेस्स-कडजुम्मकडजुम्म-एगिंदिया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?

१ उत्तर–जहा पढमसमयउद्देसओ । णवरं–

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रश्न-ते णं भंते ! जीवा कण्हलेस्सा ?
उत्तर-हंता कण्हलेस्सा, सेसं तं चेव ॥ ३५-२-२ ॥

भावार्थ-१ प्रश्न-हे भगवन् ! प्रथम समय के कृष्णलेश्या वाले कृतयुग्मकृतयुग्म एकेंद्रिय जीव कहां से आते हैं ?

१ उत्तर-हे गौतम ! प्रथम समय के उद्देशक के अनुसार । विशेष में-

प्रश्न-हे भगवन् ! वे जीव कृष्णलेश्या वाले हैं ?

उत्तर-हां, गौतम ! वे जीव कृष्णलेश्या वाले हैं । शेष पूर्ववत् । ३५-२-२ ।

-एवं जहा ओहियसए एक्कारस उद्देसगा भणिया तहा कण्हलेस्ससए वि एक्कारस उद्देसगा भाणियव्वा । पढमो तइओ पंचमो य सरिसगमा, सेसा अट्ठ वि सरिसगमा । णवरं चउत्थ-अट्ठम-दसमेसु उववाओ णत्थि देवस्स ॥ ३५-२-११ ॥

॥ पणतीसइमे सए बिइयं एगिंदियमहाजुम्मसयं समत्तं ॥

-औधिक शतक के ग्यारह उद्देशक के समान कृष्णलेश्या वाले शतक में भी ग्यारह उद्देशक कहना । पहला, तीसरा और पांचवां, ये तीन उद्देशक एक समान हैं, शेष आठ उद्देशक एक समान हैं । विशेष में चौथा, आठवां और दसवां, इन तीन उद्देशकों में देवों की उत्पत्ति नहीं होती ॥ ३५-२-११ ॥

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'-कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

॥ पैंतीसवें शतक का द्वितीय अवांतर शतक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

## अवांतर शतक ३

–एवं णीललेस्सेहि वि सयं कण्हलेस्ससयसरिसं, एक्कारस उद्देसगा तहेव ॥ ३५–३ ॥

॥ पणतीसइमे सए तइयं एगिंदियमहाजुम्मसयं समत्तं ॥

भावार्थ–कृष्णलेश्या शतक के समान नीललेश्या के भी ग्यारह उद्देशक हैं।

## अवांतर शतक ४

–एवं काउलेस्सेहि वि सयं कण्हलेस्ससयसरिसं ॥ ३५–४ ॥

॥ पणतीसइमे सए चउत्थं एगिंदियमहाजुम्मसयं समत्तं ॥

भावार्थ–कृष्णलेश्या शतक के समान कापोतलेश्या शतक है।

## अवांतर शतक ५

१ प्रश्न–भवसिद्धियकडजुम्मकडजुम्मएगिंदिया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?

१ उत्तर–जहा ओहियसयं तहेव। णवरं एक्कारससु वि उद्देसएसु–

प्रश्न–अह भंते ! सव्वे पाणा जाव सव्वे सत्ता भवसिद्धियकडजुम्मकडजुम्मएगिंदियत्ताए उववण्णपुव्वा ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उत्तर-गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे, सेसं तहेव ॥३५-५॥

॥ पणतीसइमे सए पंचमं एगिंदियमहाजुम्मसयं समत्तं ॥

भावार्थ-१ प्रश्न-हे भगवन् ! भवसिद्धिक कृतयुग्मकृतयुग्म राशि एकेन्द्रिय जीव कहां से आते हैं ?

१ उत्तर-हे गौतम ! औधिक शतक के अनुसार। इनके ग्यारह उद्देशकों में-

प्रश्न-हे भगवन् ! क्या सर्वप्राण यावत् सर्वसत्त्व भवसिद्धिक कृतयुग्म-कृतयुग्म राशि एकेन्द्रियपने पहले उत्पन्न हुए हैं।

उत्तर-हे गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है।

## अवांतर शतक ६

१ प्रश्न-कण्हलेस्स-भवसिद्धिय-कडजुम्म-कडजुम्म-एगिंदिया णं भंते ! कओहिंतो उववज्जंति ?

१ उत्तर-एवं कण्हलेस्सभवसिद्धियएगिंदिएहि वि सयं विइय-सयकण्हलेस्ससरिसं भाणियव्वं ॥ ३५-६ ॥

॥ पणतीसइमे सए छट्ठं एगिंदियमहाजुम्मसयं समत्तं ॥

भावार्थ-१ प्रश्न-हे भगवन् ! कृष्णलेश्या वाले भवसिद्धिक कृतयुग्म-कृतयुग्म राशि एकेन्द्रिय जीव कहां से आते हैं ?

१ उत्तर-हे गौतम ! कृष्णलेश्या वाले भवसिद्धिक एकेन्द्रिय के विषय में कृष्णलेश्या के दूसरे शतक के समान यह शतक भी कहना चाहिये।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

## अवांतर शतक ७

–एवं णीललेस्सभवसिद्धियएगिंदियएहि वि सयं ।

।। पणतीसइमे सए सत्तमं एगिंदियमहाजुम्मसयं समत्तं ।।

भावार्थ–इसी प्रकार नीललेश्या वाले भवसिद्धिक एकेन्द्रिय का शतक भी है।

## अवांतर शतक ८

–एवं काउलेस्सभवसिद्धियएगिंदिएहि वि तहेव एक्कारसउद्देसग-संजुत्तं सयं । एवं एयाणि चत्तारि भवसिद्धियसयाणि । चउसु वि सएसु सव्वे पाणा जाव उववण्णपुव्वा ? णो इणट्ठे समट्ठे ।

।। पणतीसइमे सए अट्ठमं एगिंदियमहाजुम्मसयं समत्तं ।।

–इसी प्रकार कापोतलेश्या वाले भवसिद्धिक एकेन्द्रिय जीवों के भी ग्यारह उद्देशक सहित यह शतक है । ये चार शतक भवसिद्धिक जीवों के हैं । इन चारों शतक में 'सर्वप्राण यावत् पहले उत्पन्न हुए हैं ?' इस प्रश्न के उत्तर में 'यह अर्थ समर्थ नहीं है'–जानना चाहिये ।

## अवांतर शतक ९–१२

–जहा भवसिद्धिएहिं चत्तारि सयाइं भणियाइं एवं अभवसिद्धि-एहि वि चत्तारि सयाणि लेस्सासंजुत्ताणि भाणियव्वाणि। सव्वे पाणा०

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तहेव णो इणट्ठे समट्ठे। एवं एयाइं बारस एगिंदियमहाजुम्मसयाइं भवंति।

❀ 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति ❀

॥ पणतीसइमं सयं समत्तं ॥

भावार्थ-जिस प्रकार भवसिद्धिक एकेन्द्रिय के चार शतक कहे, उसी प्रकार अभवसिद्धिक एकेन्द्रिय के भी लेश्या सहित चार शतक कहना चाहिये। 'सर्वप्राण यावत् सर्वसत्त्व पहले उत्पन्न हुए हैं ?' इस प्रश्न के उत्तर में 'यह अर्थ समर्थ नहीं है'-ऐसा जानना चाहिये। इस प्रकार ये बारह एकेन्द्रिय महायुग्म शतक हैं।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है। हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'-कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं।

॥ पैंतीसवें शतक के बारह अवान्तर शतक सम्पूर्ण ॥

# ॥ पैंतीसवाँ शतक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# शतक ३६

## (बेइन्द्रिय महायुग्म शतक)

### अवान्तर शतक १ उद्देशक १

१ प्रश्न–कडजुम्मकडजुम्मबेइंदिया णं भंते! कओ उववज्जंति ?

१ उत्तर–उववाओ जहा वक्कंतीए। परिमाणं सोलस वा संखेज्जा वा उववज्जंति असंखेज्जा वा उववज्जंति। अवहारो जहा उप्पलुद्देसए। ओगाहणा जहण्णेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं, उक्कोसेणं बारस जोयणाइं। एवं जहा एगिंदियमहाजुम्माणं पढमुद्देसए तहेव। णवरं तिण्णि लेस्साओ, देवा ण उववज्जंति। सम्मदिट्ठी वा मिच्छदिट्ठी, णो सम्मामिच्छादिट्ठी। णाणी वा अण्णाणी वा। णो मणजोगी, वयजोगी वा कायजोगी वा।

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन्! कृतयुग्मकृतयुग्म राशि बेइन्द्रिय जीव कहाँ से आते हैं ?

१ उत्तर–हे गौतम! उपपात प्रज्ञापना सूत्र के छठे व्युत्क्रान्ति पद के अनुसार। परिमाण–एक समय में सोलह, संख्यात या असंख्यात उत्पन्न होते हैं। इनका अपहार उत्पलोद्देशक (ग्यारहवें शतक का पहला उद्देशक) के

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अनुसार। अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट बारह योजन। शेष वर्णन एकेन्द्रिय महायुग्म राशि के प्रथम उद्देशकवत्। किन्तु यहां तीन लेश्याएँ होती हैं। ये देवों से नहीं आते। सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टि होते हैं, सम्यग्मिथ्यादृष्टि नहीं होते। वे ज्ञानी अथवा अज्ञानी होते हैं। वे मनयोगी नहीं होते, किन्तु वचनयोगी और काययोगी होते हैं।

२ प्रश्न—ते णं भंते! कडजुम्मकडजुम्मबेइंदिया कालओ केवचिरं होइ?

२ उत्तर—गोयमा! जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं संखेज्जं कालं। ठिई जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं बारस संवच्छराइं। आहारो णियमं छद्दिसिं। तिण्णि समुग्घाया। सेसं तहेव जाव अणंतखुत्तो। एवं सोलससु वि जुम्मेसु।

❀ 'सेवं भंते! सेवं भंते!' त्ति ❀

॥ छत्तीसइमे सए पढमे बेइंदियमहाजुम्मसए पढमो उद्देसओ समत्तो ॥

भावार्थ—२ प्रश्न—हे भगवन्! कृतयुग्मकृतयुग्म राशि बेइन्द्रिय जीव काल की अपेक्षा कितने काल तक होते हैं?

२ उत्तर—हे गौतम! जघन्य एक समय और उत्कृष्ट संख्यात काल तक होते हैं। स्थिति जघन्य एक समय और उत्कृष्ट बारह वर्ष। आहार नियम से छह दिशा का लेते हैं, पहले के तीन समुद्घात होते हैं। शेष पूर्ववत, यावत् वे अनन्त बार पहले उत्पन्न हुए हैं, तक। इस प्रकार सोलह महायुग्म होते हैं।

'हे भगवन्! यह इसी प्रकार है। हे भगवन्! यह इसी प्रकार है'—कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं।

॥ छत्तीसवें शतक के प्रथम अवान्तर शतक का प्रथम उद्देशक सम्पूर्ण॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

## अवान्तर शतक १ उद्देशक २–११

१ प्रश्न–पढमसमयकडजुम्मकडजुम्मवेइंदिया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?

१ उत्तर–एवं जहा एगिंदियमहाजुम्माणं पढमसमयउद्देसए । दस णाणत्ताइं ताइं चेव दस इह वि । एक्कारसमं इमं णाणत्तं णो मणजोगी, णो वयजोगी, कायजोगी । सेसं जहा बेइंदियाणं चेव पढमुद्देसए । 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति । एवं एए वि जहा एगिंदियमहाजुम्मेसु एक्कारस उद्देसगा तहेव भाणियव्वा । णवरं चउत्थ-अट्ठम-दसमेसु सम्मत्त-णाणाणि ण भण्णंति । जहेव एगिंदिएसु पढमो तइओ पंचमो य एक्कगमा सेसा अट्ठ एक्कगमा ।

॥ छत्तीसइमे सए पढमं बेइंदियमहाजुम्मसयं समत्तं ॥

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! प्रथम समयोत्पन्न कृतयुग्म कृतयुग्म राशि बेइन्द्रिय जीव कहाँ से आते हैं ?

१ उत्तर–हे गौतम ! एकेन्द्रिय महायुग्मों का प्रथम समय सम्बन्धी उद्देशक के अनुसार । दस बातों की विशेषता यहां भी है । ग्यारहवीं विशेषता यह है कि वे मनयोगी और वचनयोगी नहीं होते, मात्र काययोगी होते हैं । शेष बेइन्द्रिय के प्रथम उद्देशक के अनुसार । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । एकेन्द्रिय महायुग्मों के ग्यारह उद्देशक के समान यहां भी कहना चाहिये, किन्तु चौथा, आठवां और दसवां, इन तीन उद्देशकों में सम्यक्त्व और ज्ञान नहीं होता । एकेन्द्रिय के समान पहला, तीसरा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

और पांचवां, ये तीन उद्देशक एक समान हैं। शेष आठ उद्देशक एक समान हैं।

॥ छत्तीसवें शतक का प्रथम बेइन्द्रिय महायुग्म शतक सम्पूर्ण ॥

## अवान्तर शतक २

१ प्रश्न–कण्हलेस्सकडजुम्मकडजुम्मबेइंदिया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?

१ उत्तर–एवं चेव। कण्हलेस्सेसु वि एक्कारसउद्देसगसंजुत्तं सयं। णवरं लेस्सा, संचिट्ठणा, ठिई जहा एगिंदियकण्हलेस्साणं।

॥ छत्तीसइमे सए बिइयं बेइंदियमहाजुम्मसयं समत्तं ॥

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! कृष्णलेश्या वाले कृतयुग्मकृतयुग्म राशि बेइन्द्रिय जीव कहां से आते हैं ?

१ उत्तर–हे गौतम ! पूर्ववत् । कृष्णलेश्या वाले जीवों के ग्यारह उद्देशक सहित शतक जानना चाहिये। विशेष में लेश्या संचिट्ठाणा (कायस्थिति काल) स्थिति, कृष्णलेश्या वाले एकेन्द्रिय जीवों के समान है।

## अवान्तर शतक ३

–एवं णीललेस्सेहि वि सयं।

॥ छत्तीसइमे सए तइयं बेइंदियमहाजुम्मसयं समत्तं ॥

भावार्थ–इसी प्रकार नीललेश्या वाले बेइन्द्रिय जीवों का शतक है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

## अवांतर शतक ४

–एवं काउलेस्सेहि वि ।

॥ चउत्थं बेइंदियं महाजुम्मसयं समत्तं ॥

–इसी प्रकार कापोतलेश्या वाले बेइन्द्रिय का शतक है ।

## अवांतर शतक ५–८

१ प्रश्न–भवसिद्धियकडजुम्मकडजुम्मबेइंदिया णं भंते !० ?

१ उत्तर–एवं भवसिद्धियसया वि चत्तारि तेणेव पुव्वगमएणं णेयव्वा । णवरं सव्वे पाणा० ? णो इणट्ठे समट्ठे । सेसं तहेव ओहियसयाणि चत्तारि ।

'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति

॥ छत्तीसइमे सए अट्ठमं बेइंदियमहाजुम्मसयं समत्तं ॥

१ प्रश्न–हे भगवन् ! भवसिद्धिक कृतयुग्मकृतयुग्म राशि बेइन्द्रिय० ?

१ उत्तर–हे गौतम ! पूर्वोक्त पाठ से भवसिद्धिक जीवों के चार शतक जानो । विशेष में प्रश्न–सर्वप्राण भूत-जीव-सत्त्व यावत् अनन्त बार उत्पन्न हुए ? उत्तर–'ऐसा नहीं है' । शेष पूर्ववत् । ये चार औधिक शतक हुए ।

## अवांतर शतक ९–१२

–जहा भवसिद्धियसयाणि चत्तारि एवं अभवसिद्धियसयाणि चत्तारि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भाणियव्वाणि । णवरं सम्मत्त-णाणाणि णत्थि, सेसं तं चेव । एवं एयाणि बारस बेइंदियमहाजुम्मसयाणि भवंति ।

❀ 'सेवं भंते ! सेवं भंते' ! त्ति ❀

॥ बेइंदियमहाजुम्मसयाइं समत्तं ॥

॥ छत्तीसइमं सयं समत्तं ॥

—जिस प्रकार भवसिद्धिक बेइन्द्रिय जीवों के चार शतक कहे, उसी प्रकार अभवसिद्धिक बेइन्द्रियों के भी चार शतक कहने चाहिये । इनमें सम्यक्त्व और ज्ञान नहीं होता । शेष पूर्ववत् । ये बारह बेइन्द्रिय महायुग्म शतक हैं ।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'—कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

॥ छत्तीसवें शतक के बारह अवांतर शतक सम्पूर्ण ॥

# ॥ छत्तीसवां शतक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# शतक ३७

## (तेइन्द्रिय महायुग्म)

१ प्रश्न–कडजुम्मकडजुग्मतेइंदिया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?

१ उत्तर–एवं तेइंदिएसु वि बारस सया कायव्वा बेइंदियसय-सरिसा । णवरं ओगाहणा जहण्णेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं, उक्को-सेणं तिण्णि गाउयाइं । ठिई जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं एकूण-वण्णं राइंदियाइं, सेसं तहेव ।

'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति

॥ तेइंदियमहाजुम्मसया समत्ता ॥

॥ सत्ततीसइमं सयं समत्तं ॥

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! कृतयुग्मकृतयुग्म राशि तेइन्द्रिय जीव कहां से आते हैं ?

१ उत्तर–हे गौतम ! बेइन्द्रिय शतक के समान तेइन्द्रिय जीवों के भी बारह शतक हैं । विशेष में अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट तीन गाऊ । स्थिति जघन्य एक समय और उत्कृष्ट ४९ रात्रि-दिन की होती है । शेष पूर्ववत् ।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'–कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

## ॥ सैंतीसवाँ शतक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# शतक ३८

## (चौरिंद्रिय महायुग्म शतक)

—चउरिंदिएहि वि एवं चेव बारस सया कायव्वा । णवरं ओगाहणा जहण्णेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं, उक्कोसेणं चत्तारि गाउयाइं । ठिई जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं छम्मासा । सेसं जहा बेइंदियाणं ।

❋ 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति ❋

॥ चउरिंदियमहाजुम्मसया समत्ता ॥

॥ अट्ठतीसइमं सयं समत्तं ॥

—इसी प्रकार चौरिन्द्रिय जीवों के भी बारह शतक कहने चाहिये । विशेष में अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट चार गाऊ । स्थिति जघन्य एक समय और उत्कृष्ट छह मास । शेष बेइन्द्रियों के समान ।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'—कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

## ॥ अड़तीसवाँ शतक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# शतक ३९

## [असंज्ञी पंचेंद्रिय महायुग्म शतक]

१ प्रश्न–कडजुम्मकडजुम्मअसण्णिपंचिंदिया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?

१ उत्तर–जहा बेइंदियाणं तहेव असण्णिसु वि बारस सया कायव्वा । णवरं ओगाहणा जहण्णेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं, उक्कोसेणं जोयणसहस्सं । संचिट्ठणा जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं पुव्वकोडीपुहुत्तं । ठिई जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं पुव्वकोडी, सेसं जहा बेइंदियाणं । ❁ 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति ❁

॥ असण्णिपंचिंदियमहाजुम्मसया समत्ता ॥

॥ एगूणयालीसइमं सयं समत्तं ॥

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! कृतयुग्मकृतयुग्म राशि असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय जीव कहाँ से आते हैं ?

१ उत्तर–हे गौतम ! बेइन्द्रिय शतक के समान असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय जीवों के भी बारह शतक करना । विशेष में अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट एक हजार योजन । संचिट्ठणा (काय स्थिति) जघन्य एक समय उत्कृष्ट पूर्वकोटि-पृथक्त्व । स्थिति (भव स्थिति) जघन्य एक समय उत्कृष्ट पूर्वकोटि । शेष पूर्ववत् बेइन्द्रिय जीवों के समान है ।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'— कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

## ॥ उनचालीसवाँ शतक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# शतक ४०

## (संज्ञी महायुग्म शतक)

### अवांतर शतक १

१ प्रश्न–कडजुम्मकडजुम्मसण्णिपंचिंदिया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?

१ उत्तर–उववाओ चउसु वि गईसु । संखेज्जवासाउयअसंखेज्जवासाउयपज्जत्तअपज्जत्तएसु य ण कओ वि पडिसेहो जाव 'अणुत्तरविमाण' त्ति । परिमाणं अवहारो ओगाहणा य जहा असण्णिपंचिंदियाणं ।

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! कृतयुग्मकृतयुग्म राशि संज्ञी पञ्चेन्द्रिय जीव कहां से आ कर उत्पन्न होते हैं ?

१ उत्तर–हे गौतम ! चारों गतियों से आते हैं । संख्यात वर्ष और असंख्यात वर्ष की आयु वाले, पर्याप्त और अपर्याप्त जीवों से आते हैं । निषेध किसी गति का भी नहीं है, यावत् अनुत्तर विमान पर्यन्त । परिमाण, अपहार और अवगाहना असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय के समान ।

२–वेयणिज्जवज्जाणं सत्तण्हं पगडीणं बंधगा वा अबंधगा वा, वेयणिज्जस्स बंधगा, णो अबंधगा । मोहणिज्जस्स वेयगा वा अवेयगा वा, सेसाणं सत्तण्ह वि वेयगा, णो अवेयगा । सायावेयगा वा असाया-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वेयगा वा । मोहणिज्जस्स उदयी वा अणुदयी वा, सेसाणं सत्तण्ह वि उदयी, णो अणुदयी । णामस्स गोयस्स य उदीरगा, णो अणुदीरगा, सेसाणं छण्ह वि उदीरगा वा अणुदीरगा वा । कण्हलेस्सा वा जाव सुक्कलेस्सा वा । सम्मदिट्ठी वा, मिच्छादिट्ठी वा, सम्मामिच्छादिट्ठी वा । णाणी वा अण्णाणी वा, मणजोगी, वयजोगी, कायजोगी । उवओगो, वण्णमाई, उस्सासगा वा णीसासगा वा, आहारगा य जहा एगिंदियाणं, विरया य अविरया य विरयाविरया य । सकिरिया, णो अकिरिया ।

भावार्थ—२—वे जीव वेदनीय के अतिरिक्त सात कर्म-प्रकृतियों के बन्धक अथवा अबन्धक होते हैं। वेदनीय के तो बन्धक ही होते हैं, अबन्धक नहीं होते। मोहनीय कर्म के वेदक अथवा अवेदक होते हैं। शेष सात कर्म-प्रकृतियों के वेदक होते हैं, अवेदक नहीं होते। वे साता वेदक अथवा असाता वेदक होते हैं। मोहनीय कर्म के उदयी अथवा अनुदयी होते हैं, शेष सात कर्म-प्रकृतियों के उदयी होते हैं, अनुदयी नहीं। नाम और गोत्र कर्म के उदीरक होते हैं, अनुदीरक नहीं। शेष छह कर्म-प्रकृतियों के उदीरक अथवा अनुदीरक होते हैं। वे कृष्णलेशी यावत् शुक्ललेशी होते हैं। वे सम्यग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि या सम्यग्-मिथ्यादृष्टि होते हैं। वे ज्ञानी अथवा अज्ञानी होते हैं। वे मनोयोगी, वचनयोगी और काययोगी होते हैं। उनमें उपयोग, वर्णादि, उच्छ्वासक, निःश्वासक और आहारक का कथन एकेन्द्रियों के समान है। वे विरत, अविरत और विरता-विरत होते हैं। वे सक्रिय होते हैं, अक्रिय नहीं होते।

३ प्रश्न—ते णं भंते ! जीवा किं सत्तविहबंधगा वा अट्ठविह-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बंधगा वा छव्विहबंधगा वा एगविहबंधगा वा ?

३ उत्तर-गोयमा ! सत्तविहबंधगा वा जाव एगविहबंधगा वा ।

भावार्थ-३ प्रश्न-हे भगवन् ! क्या वे जीव सप्तविध कर्म बन्धक, अष्टविध कर्मबन्धक, षड्विध कर्म-बन्धक या एकविध कर्म-बन्धक होते हैं ?

३ उत्तर-हे गौतम ! वे सप्तविध कर्म-बन्धक यावत् एकविध कर्म-बन्धक होते हैं ।

४ प्रश्न-ते णं भंते ! जीवा किं आहारसण्णोवउत्ता जाव परिग्गहसण्णोवउत्ता वा, णोसण्णोवउत्ता वा ? सव्वत्थ पुच्छा भाणियव्वा ।

४ उत्तर-गोयमा ! आहारसण्णोवउत्ता जाव णोसण्णोवउत्ता वा । कोहकसायी वा जाव लोभकसायी वा, अकसायी वा । इत्थीवेयगा वा पुरिसवेयगा वा णपुंसगवेयगा वा अवेयगा वा । इत्थिवेयबंधगा वा पुरिसवेयबंधगा वा णपुंसगवेयबंधगा वा अबंधगा वा । सण्णी, णो असण्णी । सइंदिया, णो अणिंदिया । संचिट्ठणा जहण्णेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं सागरोवमसयपुहुत्तं साइरेगं । आहारो तहेव जाव णियमं छद्दिसिं । ठिई जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं । छ समुग्घाया आदिल्लगा । मारणंतियसमुग्घाएणं समोहया वि मरंति, असमोहया वि मरंति । उव्वट्टणा जहेव उववाओ, ण कत्थइ पडिसेहो जाव अणुत्तरविमाण त्ति ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ-४ प्रश्न-हे भगवन ! वे जीव आहारसंज्ञोपयुक्त यावत् परिग्रह संज्ञोपयुक्त या नोसंज्ञोपयुक्त होते हैं ? इस प्रकार सर्वत्र प्रश्न करना चाहिये ।

४ उत्तर-हे गौतम ! वे आहारसंज्ञोपयुक्त यावत् नोसंज्ञोपयुक्त होते हैं । वे क्रोधकषायी यावत् लोभकषायी अथवा अकषायी होते हैं । वे स्त्रीवेदक, पुरुषवेदक, नपुंसकवेदक अथवा अवेदक होते हैं । वे स्त्रीवेद-बन्धक, पुरुषवेद-बन्धक, नपुंसकवेद-बन्धक या अबन्धक होते हैं । वे संज्ञी होते हैं, असंज्ञी नहीं । वे सइन्द्रिय होते हैं, अनिन्द्रिय नहीं होते । इनकी संचिट्ठणा (संस्थिति काल) जघन्य एक समय और उत्कृष्ट सातिरेक सागरोपम शतपृथक्त्व होती है । आहार के विषय में पूर्ववत् यावत् नियम से छह दिशा का आहार होता है । स्थिति जघन्य एक समय और उत्कृष्ट तेतीस सागरोपम होती है । प्रथम के छह समुद्घात होते हैं । मारणांतिक समुद्घात से समवहत हो कर भी मरते हैं और असमवहत भी मरते हैं । उद्वर्तना का कथन उपपात के समान है, कहीं भी निषेध नहीं, यावत् अनुत्तर विमान तक ।

५-अह भंते ! सव्वपाणा जाव अणंतखुत्तो । एवं सोलसु वि जुम्मेसु भाणियव्वं जाव अणंतखुत्तो । णवरं परिमाणं जहा बेइंदियाणं, सेसं तहेव ॥ ४०-१ ॥

भावार्थ-५ प्रश्न-हे भगवन् ! सभी प्राण, भूत, सत्त्व, यहां यावत् पहले अनन्त बार उत्पन्न हुए हैं ?

५ उत्तर-हे गौतम ! पहले अनेक बार अथवा अनन्त बार उत्पन्न हुए हैं । इस प्रकार सोलह युग्मों में यावत् पहले अनन्त बार उत्पन्न हुए हैं । परिमाण बेइन्द्रियों के समान । शेष पूर्ववत् । ४०-१ ।

६ प्रश्न-पढमसमयकडजुम्मकडजुम्मसण्णिपंचिंदिया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

६ प्रश्न-उववाओ, परिमाणं आहारो जहा एएसिं चेव पढमोद्देसए । ओगाहणा बंधो वेयो वेयणा उदयी उदीरगा य जहा बेइंदियाणं पढमसमयाणं, तहेव कण्हलेस्सा वा जाव सुक्कलेस्सा वा । सेसं जहा बेइंदियाणं पढमसमइयाणं जाव अणंतखुत्तो । णवरं इत्थिवेयगा वा पुरिसवेयगा वा णपुंसगवेयगा वा, सण्णिणो णो असण्णिणो, सेसं तहेव । एवं सोलससु वि जुम्मेसु परिमाणं तहेव सव्वं ॥ ४०-२ ॥

-एवं एत्थ वि एक्कारस उद्देसगा तहेव, पढमो तइओ पंचमो य सरिसगमा, सेसा अट्ठ वि सरिसगमा । चउत्थ-अट्ठम-दसमेसु णत्थि विसेसो कायव्वो ।

* 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति *

॥ चत्तालीसइमे सए पढमं सण्णिपंचिंदियमहाजुम्मसयं समत्तं ॥

भावार्थ-६ प्रश्न-हे भगवन् ! प्रथम समय के कृतयुग्मकृतयुग्म राशि संज्ञी पञ्चेन्द्रिय जीव कहाँ से आते हैं ?

६ उत्तर-हे गौतम ! उपपात, परिमाण और आहार प्रथम उद्देशक के अनुसार । प्रथम समय के बेइन्द्रिय जीवों के समान अवगाहना, बन्ध, वेद, वेदना, उदयी, उदीरक जानना चाहिए । कृष्णलेशी यावत् शुक्ललेशी भी उसी प्रकार । शेष प्रथम समयोत्पन्न बेइन्द्रिय के समान यावत् 'पहले अनन्त बार उत्पन्न हुए हैं।' वे स्त्रीवेदी, पुरुषवेदी या नपुंसकवेदी होते हैं । संज्ञी और असंज्ञी इत्यादि पूर्ववत् । इसी प्रकार सोलह युग्मों में जानना चाहिये । परिमाण आदि वक्तव्यता पूर्ववत् । ४०-२ ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

यहां भी ग्यारह उद्देशक है । पहला, तीसरा और पांचवां उद्देशक एक समान हैं और शेष आठ उद्देशक एक समान हैं तथा चौथा, आठवां और दसवां, इन तीन उद्देशकों में किसी प्रकार की विशेषता नहीं है ।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'-कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

**विवेचन**–उपशांत मोहादि जीव वेदनीय के अतिरिक्त सात कर्मों के अबन्धक होते हैं । शेष जीव यथासम्भव बन्धक होते हैं । केवली अवस्था से पहले सभी संज्ञी जीव संज्ञी पञ्चेन्द्रिय कहलाते हैं और वहां तक वे अवश्य वेदनीय कर्म के बन्धक ही होते है, अबन्धक नहीं होते । इनमें से सूक्ष्म-सम्पराय गुणस्थान तक संज्ञी पञ्चेन्द्रिय मोहनीय कर्म के वेदक होते हैं और उपशांत मोहादि जीव अवेदक होते हैं । उपशांत मोहादि जो संज्ञी पञ्चेन्द्रिय होते हैं, वे मोहनीय के अतिरिक्त सात कर्म-प्रकृतियों के वेदक होते हैं, अवेदक नहीं होते । यद्यपि केवलज्ञानी चार अघाती कर्म-प्रकृतियों के वेदक होते हैं, परन्तु वे इन्द्रियों के उपयोग रहित होने से पंचेन्द्रिय और संज्ञी नहीं कहलाते, अनिन्द्रिय और नोसंज्ञीनोअसंज्ञी कहलाते हैं ।

सूक्ष्म-सम्पराय गुणस्थान तक मोहनीय कर्म के उदय वाले होते हैं और उपशांत मोहादि अनुदय वाले होते हैं । वेदकपन और उदय, इन दोनों में यह अन्तर है कि अनुक्रम से और उदीरणाकरण के द्वारा उदय में आये हुए (फलोन्मुख बने हुए) कर्म का अनुभव करना वेदकत्व है और अनुक्रम से उदय में आये हुए कर्म का अनुभव करना उदय कहलाता है ।

अकषाय अर्थात् क्षीणमोह गुणस्थान तक सभी संज्ञी पंचेन्द्रिय नामकर्म और गोत्र-कर्म के उदीरक होते हैं । शेष छह कर्म-प्रकृतियों के यथासम्भव उदीरक और अनुदीरक होते हैं । उदीरणा का क्रम इस प्रकार हैं–छठे प्रमत्त गुणस्थान तक सामान्य रूप से सभी जीव आठ, सात या छह कर्म के उदीरक होते हैं और जब आयु आवलिका मात्र शेष रह जाता है, तब वे आयु के अतिरिक्त सात कर्मों के उदीरक होते हैं । अप्रमत्त आदि चार गुण-स्थानवर्ती जीव वेदनीय और आयु के अतिरिक्त छह कर्मों के उदीरक होते हैं । जब सूक्ष्म-सम्पराय आवलिका मात्र शेष रहता है, तब मोहनीय, वेदनीय और आयु के अतिरिक्त पांच कर्मों के उदीरक होते हैं । उपशांत मोह गुणस्थानवर्ती जीव इन्हीं पांच कर्मों के उदीरक होते हैं । क्षीणकषाय गुणस्थानवर्ती जीव का काल आवलिका मात्र शेष होता है, तब नामकर्म और गोत्रकर्म के उदीरक होते हैं । सयोगी गुणस्थानवर्ती जीव भी इसी प्रकार उदीरक होते हैं और अयोगी गुणस्थानवर्ती जीव अनुदीरक होते हैं ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कृतयुग्मकृतयुग्म राशि संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों का अवस्थिति काल जघन्य एक समय है, क्योंकि समय के बाद संख्यान्तर होने का संभव है और उत्कृष्ट सातिरेक सागरोपम शत-पृथक्त्व है, क्योंकि इसके बाद वे संज्ञी पंचेन्द्रिय नहीं होते।

संज्ञी पंचेन्द्रियों में पहले के छह समुद्घात होते हैं। सातवां केवली-समुद्घात तो केवलज्ञानियों में होता है और वे अनिन्द्रिय होते हैं।

## ॥ चालीसवें शतक का पहला अवांतर शतक सम्पूर्ण ॥

## अवान्तर शतक २

१ प्रश्न–कण्हलेस्सकडजुम्मकडजुम्मसण्णिपंचिंदिया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?

१ उत्तर–तहेव जहा पढमुद्देसओ सण्णीणं। णवरं बंधो वेओ उदयी उदीरणा लेस्सा बंधग-सण्णा कसाय-वेयबंधगा य एयाणि जहा बेइंदियाणं। कण्हलेस्साणं वेओ तिविहो, अवेयगा णत्थि। संचिट्ठणा जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्त-मब्भहियाइं। एवं ठिईए वि। णवरं ठिईए अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं ण भण्णंति। सेसं जहा एएसिं चेव पढमे उद्देसए जाव अणंतखुत्तो। एवं सोलससु वि जुम्मेसु। 'सेवं भंते ०।

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! कृष्णलेश्या वाले कृतयुग्मकृतयुग्म राशि संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव कहां से आते हैं ?

१ उत्तर–हे गौतम ! संज्ञी के प्रथम उद्देशक के अनुसार। विशेष में–

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बन्ध, वेद, उदय, उदीरणा, लेश्या, बन्धक, संज्ञा, कषाय और वेद-बन्धक, इन सभी का कथन बेइन्द्रिय के समान। कृष्णलेशी संज्ञी के तीनों वेद होते हैं, अवेदक नहीं होते। संचिट्ठणा जघन्य एक समय और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त अधिक तेतीस सागरोपम और स्थिति भी इसी प्रकार। स्थिति में अन्तर्मुहूर्त अधिक नहीं कहना चाहिये। शेष प्रथम उद्देशक के अनुसार यावत् 'पहले अनन्त बार उत्पन्न हुए हैं। इस प्रकार सोलह युग्म में जानना चाहिये। ४०–२–१।

२ प्रश्न–पढमसमयकण्हलेस्सकडजुम्मकडजुम्मसण्णिपंचिंदिया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?

२ उत्तर–जहा सण्णिपंचिंदियपढमसमयउद्देसए तहेव णिरवसेसं। णवरं–

प्रश्न–ते णं भंते ! जीवा कण्हलेस्सा ?

उत्तर–हंता कण्हलेस्सा, सेसं तं चेव। एवं सोलससु वि जुम्मेसु। 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति। एवं एए वि एक्कारस वि उद्देसगा कण्हलेस्ससए। पढम-तइय-पंचमा सरिसगमा, सेसा अट्ठ वि एक्कगमा।

❀ 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति ❀

॥ चत्तालीसइमे सए बिइयं सण्णिमहाजुम्मसयं समत्तं ॥

भावार्थ–२ प्रश्न–हे भगवन् ! प्रथम समय के कृष्णलेशी कृतयुग्मकृतयुग्म राशि संज्ञी पञ्चेन्द्रिय जीव कहां से आते हैं ?

२ उत्तर–हे गौतम ! प्रथम समय के संज्ञी पञ्चेन्द्रियों के उद्देशक के अनुसार। विशेष में–

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रश्न—हे भगवन् ! क्या वे जीव कृष्णलेश्या वाले हैं ?

उत्तर—हाँ, गौतम ! वे कृष्णलेश्या वाले हैं । शेष पूर्ववत् । इस प्रकार सोलह युग्म जानों । ४०—२—२ ।

इस प्रकार कृष्णलेश्या शतक में ग्यारह उद्देशक हैं । पहला, तीसरा और पांचवां, ये तीन उद्देशक एक समान हैं और शेष आठ उद्देशक एक समान हैं ।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'—कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

**विवेचन**—यहाँ कृष्णलेश्या का संचिट्ठणा-काल सातवीं नरक पृथ्वी के नैरयिक की उत्कृष्ट स्थिति और पूर्वभव के अन्तिम परिणाम की अपेक्षा अन्तर्मुहूर्त मिला कर, अन्तर्मुहूर्त अधिक तेतीस सागरोपम होता है ।

## ॥ चालीसवें शतक का दूसरा अवान्तर शतक सम्पूर्ण ॥

## अवांतर शतक ३

—एवं णीललेस्सेसु वि सयं । णवरं संचिट्ठणा जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं दस सागरोवमाइं पलिओवमस्स असंखेज्जइभाग-मब्भहियाइं । एवं ठिईए । एवं तिसु उद्देसएसु, सेसं तं चेव ।

❀ 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति ❀

॥ चत्तालीसइमे सए तइयं सण्णिमहाजुम्मसयं समत्तं ॥

भावार्थ—नीललेश्या वाले जीवों के भी इसी प्रकार । विशेष में—संचिट्ठणा-काल जघन्य एक समय और उत्कृष्ट पल्योपम के असंख्यातवें भाग अधिक दस सागरोपम । स्थिति भी इसी प्रकार समझना चाहिये । इसी प्रकार पहले, तीसरे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

और पाँचवें, इन तीन उद्देशकों के विषय में भी जानना चाहिये । शेष पूर्ववत् ।

**विवेचन**--पाँचवी नरक पृथ्वी के ऊपर के प्रतर में पल्योपम के असंख्यातवें भाग अधिक दस सागरोपम का उत्कृष्ट आयु है और वहाँ तक नील-लेश्या है । यहां पूर्वभव के अन्तिम अन्तर्मुहूर्त का पल्योपम के असंख्यातवें भाग में ही समावेश कर दिया है । इस कारण उस अन्तर्मुहूर्त का पृथक् कथन नहीं किया है ।

## ।। चालीसवें शतक का तीसरा अवान्तर शतक सम्पूर्ण ।।

# अवांतर शतक ४

**-एवं काउलेस्ससयं पि । णवरं संचिट्ठणा जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं तिण्णि सागरोवमाइं पलिओवमस्स असंखेज्जइभागमब्भहियाइं । एवं ठिईए वि, एवं तिसु वि उद्देसएसु, सेसं तं चेव ।**

**❀ 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति ❀**

## ।। चत्तालीसइमे सए चउत्थं सण्णिमहाजुम्मसयं समत्तं ।।

**भावार्थ**--इसी प्रकार कापोत-लेश्या के विषय में भी शतक है । विशेष में--संचिट्ठणा काल जघन्य एक समय और उत्कृष्ट पल्योपम के असंख्यातवें भाग अधिक तीन सागरोपम । स्थिति भी इसी प्रकार तथा इसी प्रकार तीनों उद्देशक जानो । शेष पूर्ववत् ।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'--कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

**विवेचन**--तीसरी नरक पृथ्वी के ऊपर के प्रतर में रहने वाले नैरयिक की स्थिति पल्योपम के असंख्यातवें भाग अधिक तीन सागरोपम की है और वहीं तक कापोत-लेश्या

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

है। इसलिये यह पूर्वोक्त स्थिति घटित हो सकती है।

## ।। चालीसवें शतक का चौथा अवान्तर शतक सम्पूर्ण ।।

# अवांतर शतक ५

–एवं तेउलेस्सेसु वि सयं। णवरं संचिट्ठणा जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं दो सागरोवमाइं पलिओवमस्स असंखेज्जइभागमब्भहियाइं। एवं ठिईए वि। णवरं णोसण्णोवउत्ता वा। एवं तिसु वि उद्देसएसु, सेसं तं चेव।

✻ 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति। ✻

## ।। चत्तालीसइमे सए पंचमं सण्णिमहाजुम्मसयं समत्तं ।।

भावार्थ–तेजोलेश्या में भी इसी प्रकार शतक हैं। विशेष में–संचिट्ठणा काल जघन्य एक समय और उत्कृष्ट पल्योपम के असंख्यातवें भाग अधिक दो सागरोपम है। स्थिति भी इसी प्रकार, किन्तु यहां नोसंज्ञोपयुक्त भी होते हैं। इस प्रकार तीनों उद्देशकों में भी समझना चाहिये। शेष पूर्ववत्।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है। हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'–– कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं।

विवेचन––यहाँ तेजोलेश्या की जो उत्कृष्ट स्थिति कही है, वह ईशान देवलोक के देवों की उत्कृष्ट स्थिति की अपेक्षा है।

## ।। चालीसवें शतक का पांचवां अवान्तर शतक सम्पूर्ण ।।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

## अवांतर शतक ६

—जहा तेउलेस्सासयं तहा पम्हलेस्सासयं पि। णवरं संचिट्ठणा जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं दस सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं। एवं ठिईए वि। णवरं अंतोमुहुत्तं ण भण्णइ, सेसं तं चेव। एवं एएसु पंचसु सएसु जहा कण्हलेस्सासए गमओ तहा णेयव्वो जाव अणंतखुत्तो। 'सेवं भंते०।

॥ चत्तालीसइमे सए छट्ठं सण्णिमहाजुम्मसयं समत्तं ॥

भावार्थ—तेजोलेश्या शतक के समान पद्मलेश्या का शतक है। संचिट्ठणा काल जघन्य एक समय और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त अधिक दस सागरोपम है। स्थिति भी इतनी ही है। इसमें अन्तर्मुहूर्त अधिक नहीं कहना चाहिये। शेष पूर्ववत्। इस प्रकार इन पांच शतकों में, कृष्णलेश्या शतक के समान गमक जानना चाहिये, यावत् 'पहले अनन्त बार उत्पन्न हुए हैं'।

विवेचन—पद्मलेश्या की उत्कृष्ट स्थिति, ब्रह्मदेवलोक के देवों की उत्कृष्ट स्थिति की अपेक्षा पूर्वभव के अन्तिम अन्तर्मुहूर्त सहित दस सागरोपम कही है।

॥ चालीसवें शतक का छट्ठा अवान्तर शतक सम्पूर्ण ॥

## अवांतर शतक ७

—सुक्कलेस्ससयं जहा ओहियसयं। णवरं संचिट्ठणा ठिई य जहा कण्हलेस्ससए, सेसं तहेव जाव अणंतखुत्तो। 'सेवं भंते०।

॥ चत्तालीसइमे सए सत्तमं सण्णिमहाजुम्मसयं समत्तं ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ-शुक्ललेश्या शतक भी औधिक शतक के समान है। संचिट्ठणा काल और स्थिति कृष्णलेश्या शतक के समान। शेष पूर्ववत्, यावत् पहले अनन्त बार उत्पन्न हुए हैं।

विवेचन-शुक्ललेश्या की स्थिति पूर्वभव के अन्तिम अन्तर्मुहूर्त सहित अनुत्तर देवों की उत्कृष्ट तेतीस सागरोपम की स्थिति की अपेक्षा जाननी चाहिये।

## ॥ चालीसवें शतक का सातवां अवान्तर शतक सम्पूर्ण ॥

## अवान्तर शतक ८

१ प्रश्न-भवसिद्धियकडजुम्मकडजुम्मसण्णिपंचिंदिया णं भंते! कओ उववज्जंति?

१ उत्तर-जहा पढमं सण्णिसयं तहा णेयव्वं भवसिद्धियाभिलावेणं। णवरं-

प्रश्न-सव्वपाणा०?

उत्तर-णो इणट्ठे समट्ठे, सेसं तहेव। सेवं भंते!०।

॥ चत्तालीसइमे सए अट्ठमं सण्णिमहाजुम्मसयं समत्तं ॥

भावार्थ-१ प्रश्न-हे भगवन्! कृतयुग्मकृतयुग्म राशि भवसिद्धिक संज्ञी पञ्चेन्द्रिय जीव कहाँ से आ कर उत्पन्न होते हैं?

१ उत्तर-हे गौतम! प्रथम संज्ञी शतक के अनुसार भवसिद्धिक के आलापक से यह शतक जानना चाहिये। विशेष में-

प्रश्न-हे भगवन्! क्या सभी प्राण-भूत-जीव-सत्त्व यहां पहले उत्पन्न हुए हैं?

उत्तर-हे गौतम! यह अर्थ समर्थ नहीं है। शेष पूर्ववत्।

## ॥ चालीसवें शतक का आठवां अवान्तर शतक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

## अवान्तर शतक ९

१ प्रश्न–कण्हलेस्सभवसिद्धियकडजुम्मकडजुम्मसण्णिपंचिंदिया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?

१ उत्तर–एवं एएणं अभिलावेणं जहा ओहियकण्हलेस्ससयं ।

॥ चत्तालीसइमे सए णवमं सण्णिमहाजुम्मसयं समत्तं ॥

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! कृष्णलेशी भवसिद्धिक कृतयुग्मकृतयुग्म राशि संज्ञी पञ्चेन्द्रिय जीव कहां से आते हैं ?

१ उत्तर–हे गौतम ! कृष्णलेश्या वाले औधिक शतक के अनुसार ।

॥ चालीसवें शतक का नौवां अवान्तर शतक सम्पूर्ण ॥

## अवान्तर शतक १०

–एवं णीललेस्सभवसिद्धिए वि सयं । 'सेवं भंते !०

॥ चत्तालीसइमे सए दसमं सण्णिमहाजुम्मसयं समत्तं ॥

भावार्थ–नीललेश्या वाले भवसिद्धिक शतक भी इसी प्रकार है ।

॥ चालीसवें शतक का दसवाँ अवान्तर शतक सम्पूर्ण ॥

## अवांतर शतक ११–१४

–एवं जहा ओहियाणि सण्णिपंचिंदियाणं सत्त सयाणि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भणियाणि, एवं भवसिद्धिएहि वि सत्त सयाणि कायव्वाणि । णवरं सत्तसु वि सएसु सव्वपाणा जाव णो इणट्ठे समट्ठे, सेसं तं चेव ।

॥ चत्तालीसइमे सए चोद्दसमं सण्णिमहाजुम्मसयं समत्तं ॥

भावार्थ-संज्ञी पञ्चेन्द्रिय जीवों के सात औघिक शतक कहे हैं, उसी प्रकार भवसिद्धिक जीवों के भी कहने चाहिये । सातों शतक में 'सर्व प्राण यावत् उत्पन्न हुए हैं' ? उत्तर-'यह अर्थ समर्थ नहीं है' । शेष पूर्ववत् ।

॥ चालीसवें शतक के ११-१४ अवान्तर शतक सम्पूर्ण ॥

## अवान्तर शतक १५

१ प्रश्न-अभवसिद्धियकडजुम्मकडजुम्मसण्णिपंचिंदिया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?

१ उत्तर-उववाओ तहेव अणुत्तरविमाणवज्जो । परिमाणं, अवहारो, उच्चत्तं, बंधो, वेदो, वेदणं, उदओ, उदीरणा य जहा कण्हलेस्ससए । कण्हलेस्सा वा जाव सुक्कलेस्सा वा । णो सम्मदिट्ठी, मिच्छादिट्ठी, णो सम्मामिच्छादिट्ठी । णो णाणी, अण्णाणी-एवं जहा कण्हलेस्ससए । णवरं णो विरया, अविरया, णो विरयाविरया । संचिट्ठणा ठिई य जहा ओहिउद्देसए । समुग्घाया आदिल्लगा पंच । उव्वट्टणा तहेव अणुत्तर विमाणवज्जं । सव्वपाणा० जाव णो इणट्ठे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समट्ठे, सेसं जहा कण्हलेस्ससए जाव अणंतखुत्तो। एवं सोलससु वि जुम्मेसु। 'सेवं भंते ०

भावार्थ-१ प्रश्न-हे भगवन् ! अभवसिद्धिक कृतयुग्मकृतयुग्म राशि संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव कहां से आते हैं ?

१ उत्तर-हे गौतम ! अनुत्तर विमानों को छोड़ कर शेष सभी स्थान से। परिमाण, अपहार, ऊँचाई, बन्ध, वेद, वेदन, उदय और उदीरणा कृष्णलेश्या शतक के समान हैं। वे कृष्णलेशी यावत् शुक्ललेशी होते हैं। वे सम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि नहीं होते, मात्र मिथ्यादृष्टि हैं। ज्ञानी नहीं, अज्ञानी हैं। सब कृष्णलेशी शतक के अनुसार। विशेष में वे विरत और विरताविरत नहीं होते, अविरत होते हैं। संचिट्ठणा काल और स्थिति औधिक उद्देशक के अनुसार। प्रथम के पांच समुद्घात होते हैं। उद्वर्तना अनुत्तर विमानों के अतिरिक्त पूर्ववत् जाननी चाहिये।

प्रश्न-हे भगवन् ! क्या सभी प्राण यावत् सत्त्व पहले यहां उत्पन्न हुए हैं ?

उत्तर-हे गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं। शेष कृष्णलेश्या शतक के अनुसार, यावत् 'पहले अनन्त बार उत्पन्न हुए हैं' पर्यन्त। इस प्रकार सोलह युग्म जानना चाहिये।

२ प्रश्न-पढमसमयअभवसिद्धियकडजुम्मकडजुम्मसण्णिपंचिंदिया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?

२ उत्तर-जहा सण्णीणं पढमसमयउद्देसए तहेव। णवरं सम्मत्तं, सम्मामिच्छत्तं, णाणं च सव्वत्थ णत्थि, सेसं तहेव। 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति। एवं एत्थ वि एक्कारस उद्देसगा कायव्वा पढम-तइय-पंचमा एक्कगमा, सेसा अट्ठ वि एक्कगमा। 'सेवं भंते ! सेवं भंते !'

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

त्ति । अभवसिद्धियमहाजुम्मसयं समत्तं ।

॥ चत्तालीसइमे सए पण्णरसमं सण्णिपंचिंदियमहाजुम्मसयं समत्तं ॥

भावार्थ–२ प्रश्न–हे भगवन् ! प्रथम समय के अभवसिद्धिक कृतयुग्म-कृतयुग्म राशि संज्ञी पंचेंद्रिय जीव कहां से आते हैं ?

२ उत्तर–हे गौतम ! प्रथम समय के संज्ञी उद्देशक के अनुसार, किन्तु सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और ज्ञान सर्वत्र नहीं होता । शेष पूर्ववत् । यहां भी ग्यारह उद्देशक है । इनमें से पहला, तीसरा और पांचवां, ये तीन उद्देशक एक समान हैं और शेष आठ उद्देशक एक समान हैं ।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'–कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

॥ चालीसवें शतक का पन्द्रहवां अवांतर शतक सम्पूर्ण ॥

## अवांतर शतक १६

१ प्रश्न–कण्हलेस्सअभवसिद्धियकडजुम्मकडजुम्मसण्णिपंचिंदिया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?

१ उत्तर–जहा एएसिं चेव ओहियसयं तहा कण्हलेस्ससयं पि । णवरं–

प्रश्न–ते णं भंते ! जीवा कण्हलेस्सा ?

उत्तर–हंता कण्हलेस्सा । ठिई, संचिट्ठणा य जहा कण्हलेस्सा-सए सेसं तं चेव । 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति । बिइयं अभवसिद्धिय-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

महाजुम्मसयं ।

॥ चत्तालीसइमे सए सोलसमं सण्णिमहाजुम्मसयं समत्तं ॥

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! कृष्णलेश्या वाले अभवसिद्धिक कृतयुग्म-कृतयुग्म राशि संज्ञी पंचेंद्रिय जीव कहां से आते हैं ?

१ उत्तर–हे गौतम ! औधिक शतक के अनुसार कृष्णलेश्या शतक भी जानो । विशेष में–

प्रश्न–हे भगवन् ! वे जीव कृष्णलेश्या वाले हैं ?

उत्तर–हां, गौतम ! वे कृष्णलेश्या वाले हैं । इनकी स्थिति और संचिट्ठणा काल कृष्णलेश्या शतक के अनुसार । शेष पूर्ववत् ।

॥ चालीसवें शतक का सोलहवां अवांतर शतक सम्पूर्ण ॥

## अवांतर शतक १७–२१

–एवं छहि वि लेस्साहिं छ सया कायव्वा जहा कण्हलेस्ससयं । णवरं संचिट्ठणा ठिई य जहेव ओहियसए तहेव भाणियव्वा । णवरं सुक्कलेस्साए उक्कोसेणं एक्कतीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं । ठिई एवं चेव । णवरं अंतोमुहुत्तं णत्थि जहण्णगं, तहेव सव्वत्थ सम्मत्त-णाणाणि णत्थि । विरई विरयाविरई अणुत्तरविमाणोववत्ति-एयाणि णत्थि । सव्वपाणा० (जाव) णो इणट्ठे समट्ठे । 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति । एवं एयाणि सत्त अभवसिद्धियमहाजुम्मसया भवंति । 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति । एवं एयाणि एक्कवीसं सण्णिमहाजुम्म-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सयाणि । सव्वाणि वि एकासीइमहाजुम्मसयाइं समत्ताइं ।

॥ चत्तालीसइमं सण्णिमहाजुम्मसयं समत्तं ॥

—जिस प्रकार कृष्णलेश्या का शतक कहा, उसी प्रकार छहों लेश्या के छह शतक कहना चाहिये । संचिट्ठणा काल और स्थिति का कथन औधिक शतक के अनुसार कहना चाहिये । किंतु शुक्ललेश्या का उत्कृष्ट संचिट्ठणा काल अन्तर्मुहूर्त अधिक इकत्तीस सागरोपम होता है और स्थिति पूर्वोक्त ही होती है, किंतु जघन्य अन्तर्मुहूर्त अधिक नहीं कहनी चाहिये । सर्वत्र सम्यक्त्व और ज्ञान नहीं होता । विरति, विरताविरति और अनुत्तर विमानोत्पत्ति भी नहीं होती ।

प्रश्न—हे भगवन् ! सभी जीव यावत् सत्त्व यहां पहले उत्पन्न हुए हैं ?

उत्तर—हे गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं ।

इस प्रकार ये सात अभवसिद्धिक महायुग्म शतक हैं । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । इस प्रकार इक्कीस संज्ञी पंचेन्द्रिय महायुग्म शतक कहे हैं । सभी मिला कर ८१ महायुग्म शतक सम्पूर्ण हुए ।

विवेचन—अभव्य संज्ञी पंचेन्द्रिय की शुक्ललेश्या की स्थिति अन्तर्मुहूर्त अधिक इकतीस सागरोपम कही है । वह पूर्वभव के अन्तिम अन्तर्मुहूर्त सहित नौवें ग्रैवेयक की इकत्तीस सागरोपम की उत्कृष्ट स्थिति की अपेक्षा जाननी चाहिये । अभव्य जीव उत्कृष्ट नौवें ग्रैवेयक तक उत्पन्न होते हैं और वहां शुक्ललेश्या होती है ।

एकेंद्रिय, बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौरिन्द्रिय और असंज्ञी पंचेन्द्रिय, इन पांच के प्रत्येक के बारह-बारह महायुग्म शतक हैं । संज्ञी पंचेन्द्रिय के इक्कीस महायुग्म शतक हैं । इस प्रकार सभी मिला कर ये ८१ महायुग्म शतक हुए ।

॥ चालीसवें शतक के १७-२१ अवांतर शतक सम्पूर्ण ॥

# ॥ चालीसवाँ शतक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# शतक ४१

## (राशि-युग्म शतक)

### उद्देशक १

१ प्रश्न–कइ णं भंते ! रासीजुम्मा पण्णत्ता ?

१ उत्तर–गोयमा ! चत्तारि रासीजुम्मा पण्णत्ता, तं जहा–कड-जुम्मे जाव कलिओगे ।

प्रश्न–से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ–'चत्तारि रासीजुम्मा पण्णत्ता, तं जहा–जाव कलिओगे' ?

उत्तर–गोयमा ! जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे चउपज्जवसिए सेत्तं रासीजुम्मकडजुम्मे, एवं जाव जे णं रासी चउक-एणं अवहारेणं एगपज्जवसिए सेत्तं रासीजुम्मकलिओगे, से तेणट्ठेणं जाव कलिओगे ।

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! राशि-युग्म कितने कहे हैं ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१ उत्तर-हे गौतम ! राशि-युग्म चार कहे हैं । यथा-कृतयुग्म, त्र्योज, द्वापरयुग्म और कल्योज ।

प्रश्न-हे भगवन् ! ऐसा क्यों कहा कि राशि-युग्म चार कहे हैं । यथा-कृतयुग्म यावत् कल्योज ?

उत्तर-हे गौतम ! जिस राशि में से चार-चार का अपहार करते हुए अन्त में चार शेष रहें, उस राशि-युग्म को 'कृतयुग्म' कहते हैं, यावत् जिस राशि में से चार-चार का अपहार करते हुए अन्त में एक शेष रहे, उस राशि युग्म को 'कल्योज' कहते हैं । इस कारण हे गौतम ! यावत् कल्योज कहलाता है ।

२ प्रश्न-रासीजुम्मकडजुम्मणेरइया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?

२ उत्तर-उववाओ जहा वक्कंतीए ।

भावार्थ-२ प्रश्न-हे भगवन् ! कृतयुग्म राशि नैरयिक कहां से आते हैं ?

२ उत्तर-हे गौतम ! उपपात प्रज्ञापना सूत्र के छठे व्युत्क्रान्ति पद के अनुसार ।

३ प्रश्न-ते णं भंते ! जीवा एगसमएणं केवइया उववज्जंति ?

३ उत्तर-गोयमा ! चत्तारि वा अट्ठ वा बारस वा सोलस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा उववज्जंति ।

भावार्थ-३ प्रश्न-हे भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ?

३ उत्तर-हे गौतम ! चार, आठ, बारह, सोलह, संख्यात या असंख्यात उत्पन्न होते हैं ।

४ प्रश्न-ते णं भंते ! जीवा किं संतरं उववज्जंति, णिरंतरं उववज्जंति ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

४ उत्तर-गोयमा ! संतरं पि उववज्जंति, णिरंतरं पि उववज्जंति। संतरं उववज्जमाणा जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं असंखेज्जा समया अंतरं कट्टु उववज्जंति। णिरंतरं उववज्जमाणा जहण्णेणं दो समया, उक्कोसेणं असंखेज्जा समया अणुसमयं अविरहियं णिरंतरं उववज्जंति।

भावार्थ-४ प्रश्न-हे भगवन् ! वे जीव सान्तर उत्पन्न होते हैं, या निरन्तर ?

४ उत्तर-हे गौतम ! वे सान्तर भी उत्पन्न होते हैं और निरन्तर भी। यदि सान्तर उत्पन्न होते हैं, तो जघन्य एक समय और उत्कृष्ट असंख्यात समय का अन्तर कर के उत्पन्न होते हैं। निरन्तर उत्पन्न होते हुए जघन्य दो समय और उत्कृष्ट असंख्यात समय तक निरन्तर अनुसमय अविरहित उत्पन्न होते हैं।

५ प्रश्न-ते णं भंते ! जीवा जं समयं कडजुम्मा तं समयं तेओगा, जं समयं तेओगा तं समयं कडजुम्मा ?

५ उत्तर-णो इणट्ठे समट्ठे।

भावार्थ-५ प्रश्न-हे भगवन् ! वे जीव जिस समय कृतयुग्म राशि होते हैं, उसी समय त्र्योज राशि होते हैं और जिस समय त्र्योज राशि होते हैं, उसी समय कृतयुग्म राशि होते हैं।

५ उत्तर-हे गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं।

६ प्रश्न-जं समयं कडजुम्मा तं समयं दावरजुम्मा, जं समयं दावरजुम्मा तं समयं कडजुम्मा ?

६ उत्तर-णो इणट्ठे समट्ठे।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ-६ प्रश्न-हे भगवन् ! जिस समय वे कृतयुग्म होते हैं, उस समय द्वापरयुग्म होते हैं और जिस समय द्वापरयुग्म होते हैं, उस समय कृतयुग्म होते हैं ?

६ उत्तर-हे गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं ।

७ प्रश्न-जं समयं कडजुम्मा तं समयं कलिओगा, जं समयं कलिओगा तं समयं कडजुम्मा ?

७ उत्तर-णो इणट्ठे समट्ठे ।

भावार्थ-७ प्रश्न-हे भगवन् ! जिस समय कृतयुग्म राशि होते हैं, उस समय कल्योज राशि होते हैं और जिस समय कल्योज राशि होते हैं, उस समय कृतयुग्म राशि होते हैं ?

७ उत्तर-हे गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं ।

८ प्रश्न-ते णं भंते ! जीवा कहिं उववज्जंति ?

८ उत्तर-गोयमा ! से जहा णामए पवए पवमाणे-एवं जहा उववायसए जाव 'णो परप्पओगेणं उववज्जंति' ।

भावार्थ-८ प्रश्न-हे भगवन् ! वे जीव किस प्रकार उत्पन्न होते हैं ?

८ उत्तर-हे गौतम ! जैसे कोई कूदने वाला इत्यादि इकत्तीसवें शतक के प्रथम उपपात उद्देशक के अनुसार, यावत् वे आत्म-प्रयोग से उत्पन्न होते हैं, पर-प्रयोग से नहीं ।

९ प्रश्न-ते णं भंते ! जीवा किं आयजसेणं उववज्जंति, आय-अजसेणं उववज्जंति ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

९ उत्तर–गोयमा ! णो आयजसेणं उववज्जंति, आयअजसेणं उववज्जंति ।

कठिन शब्दार्थ–आयजसेणं–आत्म-यश से–अपने संयम से ।

भावार्थ–९ प्रश्न–हे भगवन् ! वे जीव आत्म-यश (आत्म-संयम) से उत्पन्न होते हैं अथवा आत्म-अयश (आत्म-असंयम) से उत्पन्न होते हैं ?

९ उत्तर–हे गौतम ! वे आत्म-यश से उत्पन्न नहीं होते, आत्म-अयश से उत्पन्न होते हैं ।

१० प्रश्न–जइ आयअजसेणं उववज्जंति किं आयजसं उवजीवंति, आयअजसं उवजीवंति ?

१० उत्तर–गोयमा ! णो आयजसं उवजीवंति, आयअजसं उवजीवंति ।

भावार्थ–१० प्रश्न–हे भगवन् ! यदि वे आत्म-अयश से उत्पन्न होते हैं, तो आत्म-यश से जीवन चलाते हैं अथवा आत्म-अयश से जीवन-निर्वाह करते हैं ?

१० उत्तर–हे गौतम ! वे आत्म-यश से जीवन-निर्वाह नहीं करते, परन्तु आत्म-अयश से करते हैं ।

११ प्रश्न–जइ आयअजसं उवजीवंति किं सलेस्सा, अलेस्सा ?

११ उत्तर–गोयमा ! सलेस्सा, णो अलेस्सा ।

भावार्थ–११ प्रश्न–हे भगवन् ! यदि वे आत्म-अयश से जीवन-निर्वाह करते हैं, तो वे सलेशी होते हैं अथवा अलेशी ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

११ उत्तर–हे गौतम ! वे सलेशी होते हैं, अलेशी नहीं होते ।

१२ प्रश्न–जइ सलेस्सा किं सकिरिया, अकिरिया ?

१२ उत्तर–गोयमा ! सकिरिया, णो अकिरिया ।

भावार्थ–१२ प्रश्न–हे भगवन् ! यदि वे सलेशी होते हैं, तो सक्रिय होते हैं अथवा अक्रिय ?

१२ उत्तर–हे गौतम ! वे सक्रिय होते हैं, अक्रिय नहीं होते ।

१३ प्रश्न–जइ सकिरिया तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झंति जाव अंतं करेंति ?

१३ उत्तर–णो इणट्ठे समट्ठे ।

भावार्थ–१३ प्रश्न–हे भगवन् ! यदि वे सक्रिय होते हैं, तो उसी भव में सिद्ध होते हैं यावत् सभी कर्मों का अन्त करते हैं ?

१३ उत्तर–हे गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं ।

१४ प्रश्न–रासीजुम्मकडजुम्मअसुरकुमारा णं भंते ! कओ उववज्जंति ?

१४ उत्तर–जहेव णेरइया तहेव णिरवसेसं, एवं जाव पंचिंदियतिरिक्खजोणिया । णवरं वणस्सइकाइया जाव असंखेज्जा वा अणंता वा उववज्जंति, सेसं एवं चेव । मणुस्सा वि एवं चेव जाव 'णो आयजसेणं उववज्जंति, आयअजसेणं उववज्जंति' ।

भावार्थ–१४ प्रश्न–हे भगवन् ! कृतयुग्म राशि असुरकुमार कहाँ से आते हैं ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१४ उत्तर–हे गौतम ! नैरयिक के समान असुरकुमार भी जानो। इसी प्रकार यावत् पंचेंद्रिय तिर्यंच-योनिक पर्यन्त, परन्तु वनस्पतिकायिक असंख्यात अथवा अनन्त उत्पन्न होते हैं। शेष पूर्ववत्। इसी प्रकार मनुष्य के विषय में भी, यावत् वे आत्म-यश से उत्पन्न नहीं होते, आत्म-अयश से होते हैं।

१५ प्रश्न–जइ आयअजसेणं उववज्जंति, किं आयजसं उवजीवंति, आयअजसं उवजीवंति ?

१५ उत्तर–गोयमा ! आयजसं पि उवजीवंति, आयअजसं पि उवजीवंति।

भावार्थ–१५ प्रश्न–हे भगवन् ! यदि वे आत्म-अयश से उत्पन्न होते हैं, तो आत्मयश से जीवन चलाते हैं अथवा आत्म-अयश से ?

१५ उत्तर–हे गौतम ! वे आत्म-यश से जीवन चलाते हैं और आत्म-अयश से भी।

१६ प्रश्न–जइ आयजसं उवजीवंति किं सलेस्सा, अलेस्सा ?

१६ उत्तर–गोयमा ! सलेस्सा वि अलेस्सा वि।

भावार्थ–१६ प्रश्न–हे भगवन् ! यदि वे आत्म-यशपूर्वक जीवन चलाते हैं, तो वे सलेशी होते हैं अथवा अलेशी ?

१६ उत्तर–हे गौतम ! वे सलेशी भी होते हैं और अलेशी भी।

१७ प्रश्न–जइ अलेस्सा किं सकिरिया, अकिरिया ?

१७ उत्तर–गोयमा ! णो सकिरिया, अकिरिया।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ-१७ प्रश्न-हे भगवन् ! यदि वे अलेशी होते हैं, तो सक्रिय होते हैं अथवा अक्रिय ?

१७ उत्तर-हे गौतम ! वे सक्रिय नहीं होते, अक्रिय होते हैं।

१८ प्रश्न-जइ अकिरिया तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झंति जाव अंतं करेंति ?

१८ उत्तर-हंता सिज्झंति जाव अंतं करेंति।

भावार्थ-१८ प्रश्न-हे भगवन् ! यदि वे अक्रिय होते हैं, तो उसी भव से सिद्ध होते हैं, यावत् सर्व दुःखों का अन्त करते हैं ?

१८ उत्तर-हां, गौतम ! वे सिद्ध होते हैं, यावत् सर्व दुःखों का अन्त करते हैं।

१९ प्रश्न-जइ सलेस्सा किं सकिरिया, अकिरिया ?

१९ उत्तर-गोयमा ! सकिरिया, णो अकिरिया।

भावार्थ-१९ प्रश्न-हे भगवन् ! यदि वे सलेशी होते हैं, तो सक्रिय होते हैं अथवा अक्रिय ?

१९ उत्तर-हे गौतम ! वे सक्रिय होते हैं, अक्रिय नहीं होते।

२० प्रश्न-जइ सकिरिया तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झंति जाव अंतं करेंति ?

२० उत्तर-गोयमा ! अत्थेगइया तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झंति जाव अंतं करेंति, अत्थेगइया णो तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झंति जाव अंतं करेंति ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ–२० प्रश्न–हे भगवन् ! यदि वे सक्रिय होते हैं, तो उसी भव में सिद्ध होते हैं, यावत् सभी दुःखों का अन्त करते हैं ?

२० उत्तर–हे गौतम ! कितने ही उसी भव में सिद्ध होते हैं, यावत् सभी दुःखों का अन्त करते हैं और कितने ही उसी भव में सिद्ध नहीं होते, यावत् सभी दुःखों का अन्त नहीं करते ।

२१ प्रश्न–जइ आयअजसं उवजीवंति किं सलेस्सा, अलेस्सा ?

२१ उत्तर–गोयमा ! सलेस्सा, णो अलेस्सा ?

भावार्थ–२१ प्रश्न–हे भगवन् ! यदि वे आत्म-अयश जीवन वाले हैं, तो सलेशी होते हैं या अलेशी ?

२१ उत्तर–हे गौतम ! वे सलेशी होते हैं, अलेशी नहीं होते ।

२२ प्रश्न–जइ सलेस्सा किं सकिरिया, अकिरिया ?

२२ उत्तर–गोयमा ! सकिरिया, णो अकिरिया ।

भावार्थ–२२ प्रश्न–हे भगवन् ! यदि वे सलेशी होते हैं, तो सक्रिय होते हैं अथवा अक्रिय ?

२२ उत्तर–हे गौतम ! वे सक्रिय होते हैं, अक्रिय नहीं होते ।

२३ प्रश्न–जइ सकिरिया तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झंति जाव अंतं करेंति ?

२३ उत्तर–णो इणट्ठे समट्ठे ।

वाणमंतर-जोइसिय-वेमाणिया जहा णेरइया ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

❀ 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति ❀

॥ इक्कचत्तालीसइमे रासीजुम्मसए पढमो उद्देसओ समत्तो ।

भावार्थ-२३ प्रश्न-हे भगवन् ! यदि वे सक्रिय होते हैं, तो उसी भव में सिद्ध होते हैं, यावत् सभी दुःखों का अन्त करते हैं ?

२३ उत्तर-हे गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं ।

वाणव्यन्तर, ज्योतिषी और वैमानिक देव का कथन नैरयिक के समान है ।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है'-कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

विवेचन-युग्मशब्द, युगलवाचक भी है । अतः उसके साथ 'राशि' विशेषण लगाया गया है । जो राशि-युग्म हो और कृतयुग्म परिमाण हो, उन्हें राशि-युग्म कृतयुग्म कहते हैं ।

यश का हेतु 'संयम' है । इसलिये यहाँ कारण में कार्य का उपचार कर के संयम को 'यश' शब्द से कहा है । सभी जीवों की उत्पत्ति आत्म-अयश अर्थात् आत्म-असंयम से ही होती है, क्योंकि उत्पत्ति में सभी जीव अविरत होते हैं ।

॥ इकतालीसवें शतक का प्रथम उद्देशक सम्पूर्ण ॥

# शतक ४१ उद्देशक २

१ प्रश्न-रासीजुम्मतेओयणेरइया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?

१ उत्तर-एवं चेव उद्देसओ भाणियव्वो । णवरं परिमाणं तिण्णि वा सत्त वा एक्कारस वा पण्णरस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उववज्जंति । संतरं तहेव ।

भावार्थ-१ प्रश्न-हे भगवन् ! राशि-युग्म में त्र्योज राशि नैरयिक कहाँ से आ कर उत्पन्न होते हैं ?

१ उत्तर-हे गौतम ! पूर्ववत् उद्देशक कहना चाहिये । परिमाण-तीन, सात, ग्यारह, पन्द्रह, संख्यात या असंख्यात उत्पन्न होते हैं । सान्तर पूर्ववत् ।

२ प्रश्न-ते णं भंते ! जीवा जं समयं तेओगा तं समयं कड-जुम्मा, जं समयं कडजुम्मा तं समयं तेओगा ?

२ उत्तर-णो इणट्ठे समट्ठे ।

भावार्थ-२ प्रश्न-हे भगवन् ! वे जीव जिस समय त्र्योज राशि होते हैं, उस समय वे कृतयुग्म राशि होते हैं और जिस समय कृतयुग्म राशि होते हैं, उस समय वे त्र्योज राशि होते हैं ?

२ उत्तर-हे गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं ।

३ प्रश्न-जं समयं तेओगा, तं समयं दावरजुम्मा, जं समयं दावरजुम्मा तं समयं तेओगा ?

३ उत्तर-णो इणट्ठे समट्ठे । एवं कलिओगेण वि समं, सेसं तं चेव जाव वेमाणिया । णवरं उववाओ सव्वेसिं जहा वक्कंतीए ।

❀ 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति ४१-२ ❀

॥ बीओ उद्देसो समत्तो ॥

भावार्थ-३ प्रश्न-हे भगवन् ! वे जीव जिस समय त्र्योज राशि होते हैं, उस समय द्वापरयुग्म राशि होते हैं और जिस समय द्वापरयुग्म राशि होते हैं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उस समय क्योज राशि होते हैं ?

३ उत्तर-हे गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं । कल्योज राशि के साथ भी इसी प्रकार । शेष पूर्ववत् यावत् वैमानिक पर्यन्त । सभी का उपपात प्रज्ञापना सूत्र के छठे व्युत्क्रान्ति पद के अनुसार ।

॥ इकतालीसवें शतक का दूसरा उद्देशक सम्पूर्ण ॥

# शतक ४१ उद्देशक ३

१ प्रश्न-रासीजुम्मदावरजुम्मणेरइया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?

१ उत्तर-एवं चेव उद्देसओ । णवरं परिमाणं दो वा छ वा दस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा वा उववज्जंति, संवेहो ।

भावार्थ-१ प्रश्न-हे भगवन् ! राशि युग्म में द्वापरयुग्म राशि नैरयिक कहाँ से आ कर उत्पन्न होते हैं ?

१ उत्तर-हे गौतम ! उद्देशक पूर्ववत् । परिमाण-दो, छह, दस, संख्यात या असंख्यात उत्पन्न होते हैं । संवेध भी जानना चाहिये ।

२ प्रश्न-ते णं भंते ! जीवा जं समयं दावरजुम्मा तं समयं कडजुम्मा, जं समयं कडजुम्मा तं समयं दावरजुम्मा ?

२ उत्तर-णो इणट्ठे समट्ठे । एवं तेओएण वि समं, एवं कलिओगेण वि समं । सेसं जहा पढमुद्देसए जाव वेमाणिया ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति ४१–३

॥ तईओ उद्देसो समत्तो ॥

भावार्थ–२ प्रश्न–हे भगवन् ! वे जीव जिस समय द्वापरयुग्म होते हैं, उस समय कृतयुग्म होते हैं अथवा जिस समय कृतयुग्म होते हैं, उस समय द्वापरयुग्म होते हैं ?

२ उत्तर–हे गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं । इस प्रकार त्र्योज राशि और कल्योज राशि के साथ भी जानो । शेष प्रथम उद्देशक के अनुसार यावत् वैमानिक पर्यन्त ।

॥ इकतालीसवें शतक का तीसरा उद्देशक सम्पूर्ण ॥

## शतक ४१ उद्देशक ४

१ प्रश्न–रासीजुम्मकलिओगणेरइया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?

१ उत्तर–एवं । णवरं परिमाणं–एक्को वा पंच वा णव वा तेरस वा संखेज्जा वा असंखेज्जा उववज्जंति, संवेहो ।

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! राशि-युग्म में कल्योज राशि नैरयिक कहां से आते हैं ?

१ उत्तर–हे गौतम ! पूर्ववत् । परिमाण एक, पांच, नौ, तेरह, संख्यात या असंख्यात उत्पन्न होते हैं । संवेध पूर्ववत् ।

२ प्रश्न–ते णं भंते ! जीवा जं समयं कलिओगा तं समयं कड-जुम्मा, जं समयं कडजुम्मा तं समयं कलिओगा ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२ उत्तर–णो इणट्ठे समट्ठे । एवं तेओएण वि समं, एवं दावर-जुम्मेण वि समं । सेसं जहा पढमुद्देसए जाव वेमाणिया ।

❀ 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति ४१–४ ❀

॥ चउत्थो उद्देसो समत्तो ॥

भावार्थ–२ प्रश्न–हे भगवन् ! वे जीव जिस समय कल्योज राशि हैं, उस समय कृतयुग्म राशि होते हैं और जिस समय कृतयुग्म राशि होते हैं, उस समय कल्योज राशि होते हैं ?

२ उत्तर–हे गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं । इसी प्रकार त्र्योज और द्वापरयुग्म के साथ भी जानो । शेष प्रथमोद्देशक के समान यावत् वैमानिक पर्यन्त ।

॥ इकतालीसवें शतक का चौथा उद्देशक सम्पूर्ण ॥

## शतक ४१ उद्देशक ५

१ प्रश्न–कण्हलेस्सरासीजुम्मकडजुम्मणेरइया णं भंते ! कओ उववज्जंति ।

१ उत्तर–उववाओ जहा धूमप्पभाए, सेसं जहा पढमुद्देसए । असुरकुमाराणं तहेव, एवं जाव वाणमंतराणं । मणुस्साण वि जहेव णेरइयाणं 'आयअजसं उवजीवंति ।' अलेस्सा, अकिरिया, तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झंति एवं ण भाणियव्वं सेसं जहा पढमुद्देसए ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

❀ 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति ४१-५ ❀

॥ पंचमो उद्देसो समत्तो ॥

भावार्थ-१ प्रश्न-हे भगवन् ! राशि-युग्म में कृतयुग्म राशि कृष्णलेश्या वाले नैरयिक कहां से आ कर उत्पन्न होते हैं ?

१ उत्तर-हे गौतम ! धूमप्रभा पृथ्वी के समान उपपात है, शेष पूर्ववत् प्रथमोद्देशक के अनुसार । असुरकुमार के विषय में भी इसी प्रकार यावत् वाणव्यन्तर पर्यन्त । नैरयिक के समान मनुष्य का वर्णन है वे आत्म-असंयम युक्त जीवन-निर्वाह करते हैं । अलेशी, अक्रिय और उसी भव में सिद्ध होने का कथन नहीं करना चाहिये । शेष प्रथमोद्देशक के समान है ।

॥ इकतालीसवें शतक का पांचवां उद्देशक सम्पूर्ण ॥

# शतक ४१ उद्देशक ६-८

-कण्हलेस्सतेओएहि वि एवं चेव उद्देसओ । ४१-६ ।

॥ छट्ठो उद्देसो समत्तो ॥

भावार्थ-कृष्णलेश्या वाले राशि-युग्म में त्र्योज-राशि नैरयिक आदि भी पूर्ववत् ।

-कण्हलेस्सदावरजुम्मेहिं एवं चेव उद्देसओ । ४१-७ ।

॥ सत्तमो उद्देसो समत्तो ॥

भावार्थ-द्वापरयुग्म राशि कृष्णलेश्या वाले नैरयिक आदि का उद्देशक भी इसी प्रकार ।

-कण्हलेस्सकलिओएहि वि एवं चेव उद्देसओ । परिमाणं संवेहो य जहा ओहिएसु उद्देसएसु । 'सेवं भंते० । ४१-८ ।

॥ अट्ठमो उद्देसो समत्तो ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ–कृष्णलेश्या वाले कल्योज राशि नैरयिक आदि का उद्देशक भी इसी प्रकार। परिमाण और संवेध औधिक उद्देशक के अनुसार जानो।

–जहा कण्हलेस्सेहिं एवं णीललेस्सेहि वि चत्तारि उद्देसगा भाणियव्वा णिरवसेसा। णवरं णेरइयाणं उववाओ जहा वालुयप्पभाए, सेसं तं चेव। 'सेवं भंते०। ४१–९–१२॥ ९–१२ उद्देसा समत्ता॥

भावार्थ–कृष्णलेश्या वाले जीवों के अनुसार नीललेश्या वाले जीवों के भी चार उद्देशक सम्पूर्ण कहना चाहिये, परन्तु वालुकाप्रभा के समान नैरयिक का उपपात जानना चाहिये। शेष पूर्ववत्।

–काउलेस्सेहि वि एवं चेव चत्तारि उद्देसगा कायव्वा। णवरं णेरइयाणं उववाओ जहा रयणप्पभाए, सेसं तं चेव। ४१–१६। ॥ १३–१६ उद्देसा समत्ता॥

भावार्थ–कापोतलेश्या के भी इसी प्रकार चार उद्देशक करना चाहिये। नैरयिक का उपपात रत्नप्रभा पृथ्वी के समान। शेष पूर्ववत्।

१ प्रश्न–तेउलेस्सरासीजुम्मकडजुम्मअसुरकुमारा णं भंते! कओ उववज्जंति?

१ उत्तर–एवं चेव। णवरं जेसु तेउलेस्सा अत्थि तेसु भाणियव्वं। एवं एए वि कण्हलेस्सासरिसा चत्तारि उद्देसगा कायव्वा॥ १७–२० उद्देसा समत्ता।

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन्! राशि-युग्म में कृतयुग्म राशि तेजोलेश्या वाले असुरकुमार कहाँ से आते हैं?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१ उत्तर–हे गौतम ! पूर्ववत्, किन्तु जिनमें तेजोलेश्या पाई जाती हो, उन्हीं के कहना । इस प्रकार कृष्णलेश्या के समान चार उद्देशक जानो ।

–एवं पम्हलेस्साए वि चत्तारि उद्देसगा कायव्वा । पंचिंदिय-तिरिक्खजोणियाणं मणुस्साणं वेमाणियाण य एएसिं पम्हलेस्सा, सेसाणं णत्थि ॥ २१–२४ उद्देसा समत्ता ॥

भावार्थ--इसी प्रकार पद्मलेश्या के भी चार उद्देशक जानो । पंचेन्द्रिय तिर्यंच, मनुष्य और वैमानिक देव में पद्मलेश्या होती है, शेष में नहीं होती ।

–जहा पम्हलेस्साए एवं सुक्कलेस्साए वि चत्तारि उद्देसगा कायव्वा । णवरं मणुस्साणं गमओ जहा ओहिउद्देसएसु, सेसं तं चेव । एवं एए छसु लेस्सासु चउवीसं उद्देसगा, ओहिया चत्तारि, सव्वे ते अट्ठावीसं उद्देसगा भवंति । 'सेवं भंते०' ॥ २५–२८ उद्देसा समत्ता ॥

भावार्थ--पद्मलेश्या के अनुसार शुक्ललेश्या के भी चार उद्देशक करना चाहिये, परन्तु मनुष्य के लिये औधिक उद्देशक के अनुसार है । शेष पूर्ववत् । इस प्रकार छह लेश्याओं के चौबीस उद्देशक होते हैं और चार औधिक उद्देशक हैं । ये सभी मिला कर अट्ठाईस उद्देशक होते हैं ।

१ प्रश्न–भवसिद्धियरासीजुम्मकडजुम्मणेरइया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?

१ उत्तर–जहा ओहिया पढमगा चत्तारि उद्देसगा तहेव णिरवसेसं एए चत्तारि उद्देसगा । ४१–३२ ।

२ प्रश्न–कण्हलेस्सभवसिद्धियरासीजुम्मकडजुम्मणेरइया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२ उत्तर–जहा कण्हलेस्साए चत्तारि उद्देसगा भवंति तहा इमे वि भवसिद्धियकण्हलेस्सेहि वि चत्तारि उद्देसगा कायव्वा । ४१–३६।

३–एवं णीललेस्सभवसिद्धिएहि वि चत्तारि उद्देसगा कायव्वा । ४१–४० ।

४–एवं काउलेस्सेहि वि चत्तारि उद्देसगा । ४१–४४ ।

५–तेउलेस्सेहि वि चत्तारि उद्देसगा ओहियसरिसा । ४१–४८ ।

६–पम्हलेस्सेहि वि चत्तारि उद्देसगा । ४१–५२ ।

७–सुक्कलेस्सेहि वि चत्तारि उद्देसगा ओहियसरिसा एवं एए वि भवसिद्धिएहि वि अट्ठावीसं उद्देसगा भवंति । ४१–५६ ।

॥ २९–५६ उद्देसा समत्ता ॥

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! भवसिद्धिक राशि-युग्म में कृतयुग्म राशि नैरयिक कहां से आते हैं ?

१ उत्तर–हे गौतम ! पहले चार औधिक उद्देशक के अनुसार यहां भी चार उद्देशक सम्पूर्ण जानना चाहिये । २९–३२ ।

२ प्रश्न–हे भगवन् ! राशि-युग्म में कृतयुग्म राशि कृष्णलेश्या वाले भवसिद्धिक नैरयिक कहां से आते हैं ?

२ उत्तर–हे गौतम ! कृष्णलेश्या के चार उद्देशक के समान भवसिद्धिक कृष्णलेश्या वाले जीवों के भी चार उद्देशक जानना चाहिये । ३३–३६ ।

३–इसी प्रकार नीललेश्या वाले भवसिद्धिक जीवों के भी चार उद्देशक जानना चाहिये । ३७–४० ।

४–इसी प्रकार कापोतलेश्या वाले भवसिद्धिक जीवों के भी चार उद्देशक जानना चाहिये । ४१–४४ ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

५-इसी प्रकार तेजोलेश्या वाले भवसिद्धिक जीवों के भी औधिक के समान चार उद्देशक हैं। ४५-४८।

६-इसी प्रकार पद्मलेश्या वाले भवसिद्धिक जीवों के भी चार उद्देशक हैं। ४९-५२।

७-शुक्ललेश्या वाले भवसिद्धिक जीवों के भी औधिक के समान चार उद्देशक जानो। इस प्रकार भवसिद्धिक जीवों के ये अट्ठाईस उद्देशक होते हैं। ५३-५६।

१ प्रश्न-अभवसिद्धियरासीजुम्मकडजुम्मणेरइया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?

१ उत्तर-जहा पढमो उद्देसगो। णवरं मणुस्सा णेरइया य सरिसा भाणियव्वा। सेसं तहेव। 'सेवं भंते०। एवं चउसु वि जुम्मेसु चत्तारि उद्देसगा।

२ प्रश्न-कण्हलेस्स-अभवसिद्धिय-रासीजुम्मकडजुम्म-णेरइया णं भंते ! कओ उववज्जंति।

२ उत्तर-एवं चेव चत्तारि उद्देसगा।

३-एवं णीललेस्स-अभवसिद्धिय-रासीजुम्मकडजुम्म-णेरइयाणं चत्तारि उद्देसगा।

४-काउलेस्सेहि वि चत्तारि उद्देसगा।

५-तेउलेस्सेहि वि चत्तारि उद्देसगा।

६-पम्हलेस्सेहि वि चत्तारि उद्देसगा।

७-सुक्कलेस्सअभवसिद्धिए वि चत्तारि उद्देसगा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एवं एएसु अट्ठावीसाए वि अभवसिद्धियउद्देसएसु मणुस्सा णेरइयगमेणं णेयव्वा । 'सेवं भंते० । एवं एए वि अट्ठावीसं उद्देसगा । ४१–८४ । ५७–८४ उद्देसा समत्ता ।

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! कृतयुग्म राशि अभवसिद्धिक नैरयिक कहां से आते हैं ?

१ उत्तर–हे गौतम ! प्रथम उद्देशक के अनुसार । विशेष में–मनुष्य और नैरयिक का कथन समान जानो । शेष पूर्ववत् । ५७–६० ।

२ प्रश्न–हे भगवन् ! राशि-युग्म में कृतयुग्म राशि कृष्णलेश्या वाले अभवसिद्धिक नैरयिक कहां से आते हैं ?

२ उत्तर–हे गौतम ! पूर्ववत् चार उद्देशक जानो । ६१–६४ ।

३–इसी प्रकार नीललेश्या वाले कृतयुग्म राशि अभवसिद्धिक जीवों के चार उद्देशक जानो । ६५–६८।

४–इसी प्रकार कापोतलेश्या वाले अभवसिद्धिक जीवों के भी चार उद्देशक है । ६९–७२ ।

५–तेजोलेश्या वाले अभवसिद्धिक जीवों के भी ऐसे ही चार उद्देशक जानो । ७३–७६ ।

६–पद्मलेश्या वाले अभवसिद्धिक जीवों के भी चार उद्देशक हैं । ७७–८०।

७–शुक्ललेश्या वाले अभवसिद्धिक जीवों के भी चार उद्देशक हैं । ८१–८४।

इस प्रकार अभवसिद्धिक जीवों के ये अट्ठाईस उद्देशक होते हैं । इनमें मनुष्य का कथन नैरयिक के अभिलाप के समान जानो ।

॥ इकतालीसवें शतक के ५७–८४ उद्देशक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१ प्रश्न–सम्मदिट्ठीरासीजुम्मकडजुम्मणेरइया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?

१ उत्तर–एवं जहा पढमो उद्देसओ। एवं चउसु वि जुम्मेसु चत्तारि उद्देसगा भवसिद्धियसरिसा कायव्वा। 'सेवं भंते०।

२ प्रश्न–कण्हलेस्ससम्मदिट्ठीरासीजुम्मकडजुम्मणेरइया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?

२ उत्तर–एए वि कण्हलेस्ससरिसा चत्तारि वि उद्देसगा कायव्वा। एवं सम्मदिट्ठीसु वि भवसिद्धियसरिसा अट्ठावीसं उद्देसगा कायव्वा। 'सेवं भंते० जाव विहरइ। ८५–११२ उद्देसा समत्ता।

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! राशि-युग्म में कृतयुग्म राशि सम्यग्दृष्टि नैरयिक कहां से आते हैं ?

१ उत्तर–प्रथम उद्देशक के समान यह उद्देशक भी है। ऐसे ही चारों युग्म में भवसिद्धिक के समान चार उद्देशक करना। ८५–८८।

२ प्रश्न–हे भगवन् ! राशि-युग्म में कृतयुग्म राशि कृष्णलेश्या वाले सम्यग्दृष्टि नैरयिक कहां से आते हैं ?

२ उत्तर–यहां भी कृष्णलेश्या वाले के समान चार उद्देशक करना। इस प्रकार सम्यग्दृष्टि जीवों के भी भवसिद्धिक जीवों के समान अट्ठाईस उद्देशक कहना।

१ प्रश्न–मिच्छादिट्ठीरासीजुम्मकडजुम्मणेरइया णं भंते ! कओ उववज्जंति ?

१ उत्तर–एवं एत्थ वि मिच्छादिट्ठीअभिलावेणं अभवसिद्धिय-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सरिसा अट्ठावीसं उद्देसगा कायव्वा। 'सेवं भंते०। ११३–१४० उद्देसा समत्ता।

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन्! राशि-युग्म में कृतयुग्म राशि मिथ्यादृष्टि नैरयिक कहाँ से आते हैं?

१ उत्तर–यहां भी मिथ्यादृष्टि के अभिलाप से अभवसिद्धिक जीवों के समान अट्ठाईस उद्देशक जानना चाहिये।

१ प्रश्न–कण्हपक्खियरासीजुम्मकडजुम्मणेरइया णं भंते! कओ उववज्जंति?

१ उत्तर–एवं एत्थ वि अभवसिद्धियसरिसा अट्ठावीसं उद्देसगा कायव्वा। 'सेवं भंते० १४१–१६८ उद्देसा समत्ता।

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन्! राशि-युग्म में कृतयुग्म राशि कृष्णपाक्षिक नैरयिक कहां से आते हैं?

१ उत्तर–यहां भी अभवसिद्धिक के समान अट्ठाईस उद्देशक कहना।

१ प्रश्न–सुक्कपक्खियरासीजुम्मकडजुम्मणेरइया णं भंते! कओ उववज्जंति?

१ उत्तर–एवं एत्थ वि भवसिद्धियसरिसा अट्ठावीसं उद्देसगा भवंति। एवं एए सव्वे वि छण्णउयं उद्देसगसयं भवंति रासीजुम्मसयं। जाव सुक्कलेस्सा सुक्कपक्खियरासीजुम्मकलिओगवेमाणिया जाव जइ सकिरिया तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झंति जाव अंतं करेंति? (उत्तर) णो इणट्ठे समट्ठे। 'सेवं भंते! सेवं भंते!' त्ति॥ १६९–१९६॥

भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिण-पया-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हिणं करेइ, करेत्ता वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी–'एवमेयं भंते ! तहमेयं भंते ! अवितहमेयं भंते ! असंदिद्धमेयं भंते ! इच्छियमेयं भंते ! पडिच्छियमेयं भंते ! इच्छिय-पडिच्छियमेयं भंते ! सच्चे णं एसमट्ठे, जे णं तुब्भे वयह' त्ति कट्टु अपूइवयणा खलु अरिहंता भगवंतो, समणं भगवं महावीरं वंदइ, णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ । रासीजुम्मसयं समत्तं ।

## ॥ इगचत्तालीसमं सयं समत्तं ॥

कठिन शब्दार्थ—छण्णउयं—छियानवे (९६), अवितहं—अवितथ—सत्य, असंदिद्धं—असंदिग्ध—सन्देह रहित, इच्छियं—इच्छित (इष्ट), पडिच्छियं—प्रतीच्छित, अपूइवयणा—पवित्र वचन वाले ।

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! राशि-युग्म में कृतयुग्म राशि शुक्ल-पाक्षिक नैरयिक कहां से आते हैं ?

१ उत्तर–यहां भवसिद्धिक के समान अट्ठाईस उद्देशक हैं । इस प्रकार सभी मिला कर १९६ उद्देशक का राशि-युग्म शतक होता है । यावत्—

प्रश्न–हे भगवन् ! शुक्ललेश्या वाले शुक्लपाक्षिक कल्योज राशि वैमानिक यावत् जो सक्रिय हैं, वे उसी भव में सिद्ध हो जाते हैं यावत् सभी दुःखों का अन्त करते हैं ?

उत्तर–हे गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं ।

भगवान् गौतम, श्रमण भगवान् महावीर स्वामी को तीन बार आदक्षिण-प्रदक्षिणा करते हैं । आदक्षिण-प्रदक्षिणा कर के वन्दन नमस्कार करते हैं । वन्दन-नमस्कार कर के इस प्रकार बोले—"हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे भगवन् ! यह उसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह अवितथ-सत्य है । हे भगवन् ! यह असंदिग्ध-सन्देह रहित है। हे भगवन् ! यह इच्छित है । हे भगवन् ! यह प्रतीच्छित-विशेष रूप से इच्छित (स्वीकृत) है । हे भगवन् ! यह इच्छित-प्रतीच्छित है । हे भगवन् ! यह अर्थ सत्य है, जैसा आप कहते हैं । अरिहन्त भगवन्त पवित्र वचन वाले होते हैं । अरिहन्त भगवन्त अपूर्व वचन वाले होते हैं अर्थात् अरिहन्त भगवन्तों की वाणी पवित्र और अपूर्व होती है ।" ऐसा कह कर श्रमण भगवान् महावीर स्वामी को पुनः वन्दन-नमस्कार करते हैं। वन्दन-नमस्कार कर के संयम और तप से अपनी आत्मा को भावित करते हुए विचरते हैं ।

॥ राशि-युग्म शतक सम्पूर्ण ॥

# उपसंहार

सव्वाए भगवईए अट्ठतीसं सयं १३८ सयाणं, उद्देसगाणं १९२५ ।

चुलसीय सयसहस्सा पयाण पवरवरणाणदंसीहिं ।
भावाभावमणंता पण्णत्ता एत्थमंगंमि ॥ १ ॥
तवणियमविणयवेलो जयइ सदा णाणविमलविउलजलो ।
हेउसयविउलवेगो संघसमुद्दो गुणविसालो ॥ २ ॥

भगवती सूत्र के सभी मिला कर १३८ शतक होते हैं और १९२५ उद्देशक हैं ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उत्तम (सर्व श्रेष्ठ) ज्ञान और दर्शन के धारक महापुरुषों ने इस अंग में चौरासी लाख पद कहे हैं तथा विधि रूप और निषेध रूप अनन्त (अपरिमित) भाव कहे हैं ॥ १ ॥

तप, नियम और विनय रूप जिसकी वेला है तथा निर्मल और विपुल ज्ञान रूपी जल जिसमें भरा हुआ है, जो सकड़ों हेतु रूप महान् वेग वाला है और जो गुणों से विशाल है, ऐसा संघ रूपी समुद्र जय को प्राप्त होता है ॥२॥

शतकों का परिमाण इस प्रकार है-एक से ले कर बत्तीसवें शतक तक किसी भी शतक में अवान्तर शतक नहीं है। तेतीसवें शतक से ले कर उनचालीसवें शतक तक सात शतकों में प्रत्येक में बारह-बारह अवान्तर शतक हैं। इस प्रकार ये ८४ शतक हैं। चालीसवें शतक में २१ अवान्तर शतक हैं। इकतालीसवें शतक में अवान्तर शतक नहीं हैं। इन सभी को मिलाने से १३८ (३२+८४+२१+१=१३८) शतक होते हैं। पहले शतक से ले कर इकतालीसवें शतक तक के उद्देशकों को मिलाने से सभी १९२५ उद्देशक होते हैं† ।

इस सम्पूर्ण भगवती सूत्र में पदों की संख्या चौरासी लाख कही है। इस सम्बन्ध में टीकाकार कहते हैं कि यह पदों की गणना किस प्रकार की है, इस विषय में कुछ भी नहीं कहा जा सकता। पदों का यह स्वरूप विशिष्ट सम्प्रदायगम्य है।

णमो गोयमाईणं गणहराणं, णमो भगवईए विवाहपण्णत्तीए,
णमो दुवालसंगस्स गणिपिडगस्स ॥ १ ॥
कुम्मसुसंठियचलणा, अमलियकोरंटवेंटसंकासा ।
सुयदेवया भगवई, मम मतितिमिरं पणासेउ ॥ २ ॥

† शतकों के प्रारम्भ में दी गई संग्रहणी गाथाओं के अनुसार तो उद्देशकों की संख्या १९२३ ही होती है, किन्तु यहां इस गाथा में १९२५ बताई है। बीसवें शतक के १२ उद्देशक गिने जाते हैं, परन्तु प्रस्तुत वांचना में पृथ्वीकाय, अप्काय, तेउकाय इन तीनों का सम्मिलित एक (छठा) उद्देशक ही उपलब्ध होने से दस ही उद्देशक हैं। इस प्रकार दो कम हो जाने से गिनती १९२३ ही आती है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पण्णत्तीए आइमाणं अट्ठण्हं सयाणं दो दो उद्देसगा उद्दिसिज्जंति। णवरं चउत्थे सए पढमदिवसे अट्ठ, बिइयदिवसे दो उद्देसगा उद्दिसिज्जंति। णवमाओ सयाओ आरद्धं जावइयं जावइयं एइ तावइयं तावइयं एगदिवसेणं उद्दिसिज्जइ, उक्कोसेणं सयं पि एगदिवसेणं, मज्झिमेणं दोहिं दिवसेहिं सयं, जहण्णेणं तिहिं दिवसेहिं सयं। एवं जाव वीसइमं सयं। णवरं गोसालो एगदिवसेणं उद्दिसिज्जइ, जइ ठिओ एगेण चेव आयंबिलेणं अणुण्णज्जइ। अहण्णं ठिओ आयंबिलेणं छट्ठेणं अणुण्णवइ। एक्कवीस-बावीस-तेवीसइमाइं सयाइं एक्केकदिवसेणं उद्दिसिज्जंति। चउवीसइमं सयं दोहिं दिवसेहिं छ छ उद्देसगा। पंचवीसइमं दोहिं दिवसेहिं छ छ उद्देसगा। बंधिसयाइं अट्ठसयाइं एगेणं दिवसेणं, सेढिसयाइं बारस एगेणं, एगिंदियमहाजुम्मसयाइं बारस एगेणं, एवं बेइंदियाणं बारस, तेइंदियाणं बारस, चउरिंदियाणं बारस एगेणं, असण्णिपंचिंदियाणं बारस, सण्णिपंचिंदियमहाजुम्मसयाइं एक्कवीसं एगदिवसेणं उद्दिसिज्जंति, रासीजुम्मसयं एगदिवसेणं उद्दिसिज्जइ॥

वियसियअरविंदकरा, णासियतिमिरा सुयाहिया देवी।
मज्झं पि देउ मेहं, बुहविबुहणमंसिया णिच्चं॥ १॥

सुयदेवयाए पणमिमो, जीए पसाएण सिक्खियं णाणं।
अण्णं पवयणदेवी, संतिकरी तं णमंसामि॥ २॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सुयदेवया य जक्खो, कुंभधरो बंभसंति वेरोट्टा ।
विज्जा य अंतहुंडी, देउ अविग्घं लिहंतस्स ॥ ३ ॥

॥ सिरिविवाहपण्णत्ति समत्ता ॥

भावार्थ–गौतमादि गणधरों को नमस्कार हो । भगवती व्याख्याप्रज्ञप्ति को नमस्कार हो । द्वादशांगगणपिटक को नमस्कार हो ॥ १ ॥

कछुए के समान सुसंस्थित चरण वाली, अम्लान (नहीं मुरझाई हुई) कोरण्ट वृक्ष की कलि के समान, भगवती श्रुत-देवी मेरे मति अज्ञान का विनाश करे ॥ २ ॥

व्याख्याप्रज्ञप्ति के पहले के आठ शतकों के दो-दो उद्देशकों का उद्देश (उपदेश-वाचन) एक-एक दिन में किया जाता है । परंतु चौथे शतक के आठ उद्देशकों का कथन पहले दिन किया जाता है और दूसरे दिन दो उद्देशकों का कथन किया जाता है । नौवें शतक से आगे जितना-जितना ग्रहण किया जा सके, उतना-उतना एक-एक दिन में उपदिष्ट करना चाहिये । उत्कृष्ट एक दिन में एक शतक का भी उपदेश किया जा सकता है, मध्यम दो दिन में और जघन्य तीन दिन में एक शतक का उपदेश करना चाहिये । इस प्रकार नौवें शतक से ले कर बीसवें शतक तक जानना चाहिये, किन्तु पन्द्रहवें गोशालक शतक का एक दिन में वांचन करना चाहिये । यदि शेष रह जाय, तो दूसरे दिन आयम्बिल कर के वांचन करना चाहिये । यदि फिर भी शेष रह जाय, तो तीसरे दिन आयम्बिलछट्ठ (आयम्बिल का बेला) कर के वांचन करना चाहिये । इक्कीसवें, बाईसवें और तेईसवें शतक का एक-एक दिन में वांचन करना चाहिये । चौबीसवें शतक के छह-छह उद्देशक प्रति दिन वांच कर सम्पूर्ण करना चाहिये । इसी प्रकार पच्चीसवें शतक के भी छह-छह उद्देशक प्रतिदिन वांच कर दो दिन में सम्पूर्ण करना चाहिये । बन्धी-शतक आदि आठ शतकों का वांचन एक दिन में, श्रेणी-शतकादि बारह शतकों का वांचन एक दिन में, एकेन्द्रिय के बारह महायुग्म शतकों का वांचन एक दिन में करना चाहिये । इसी प्रकार

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौरिन्द्रिय और असंज्ञी-पञ्चेन्द्रिय के बारह-बारह शतकों का वांचन तथा संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय के इक्कीस महायुग्म शतकों का और राशि-युग्म शतकों का वांचन एक-एक दिन में करना चाहिये ।

जिसके हाथ में विकसित कमल है, जिसने अज्ञान का नाश किया है और जिसको बुध (पण्डित) तथा विबुधों (देवों) ने सदा नमस्कार किया है, ऐसी श्रुताधिष्ठित देवी मुझे बुद्धि दे ॥ १ ॥

जिसकी कृपा से ज्ञान की शिक्षा मिली है, उस श्रुत-देवता को नमस्कार करता हूँ और शान्ति करने वाली प्रवचन देवी को भी नमस्कार करता हूँ ॥२॥

श्रुतदेवता, कुम्भधरयक्ष, ब्रह्मशान्ति वैरोटयादेवी विद्या और अन्त हुण्डी लेखक के लिये अविघ्न प्रदान करे अर्थात् उसके कार्य में कोई विघ्न न आवे ॥ ३ ॥

# ॥ भगवती सूत्र सम्पूर्ण ॥

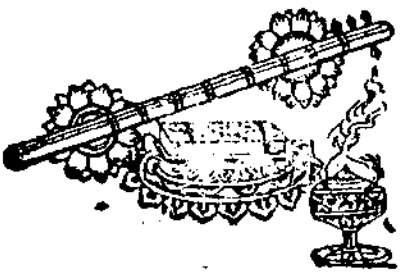

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# भगवती सूत्र की हुण्डी--अकारानुक्रम से

( संग्राहक—श्री धीसूलालजी पितलिया, सिरियारी )


| अ विषय | शतक | उद्देशक | भाग | पृष्ठ |
|---|---|---|---|---|
| असंवृत्त-संवृत्त अनगार के सिद्ध होने न होने | १ | १ | १ | ९४—१०१ |
| असंयती अव्रती किस कारण से देव होते हैं | १ | १ | १ | १०१—१०९ |
| अन्तक्रिया वर्णन पर प्रज्ञापना पद २० का निर्देश | १ | २ | १ | १५१—१५२ |
| असंयत भव्य द्रव्य-देवादि १४ प्रकार के जीव देवों में कहाँ तक उत्पन्न होते हैं | १ | २ | १ | १५२—१५९ |
| असंज्ञी के आयुष्य का भेद विचार | १ | २ | १ | १५९—१६२ |
| अप्काय-स्नेहकाय का गिरना आदि | १ | ६ | १ | २८२—२८५ |
| अठारह पापों के सेवन व त्याग का परिणाम (श. १२ उ. २ भाग ४ पृ. १९९०—९१ भी) | १ | ९ | १ | ३३०—३३२ |
| अगुरु-लघु और गुरु-लघु का विचार | १ | ९ | १ | ३३०—३३९ |
| अप्रत्याख्यान क्रिया अव्रत की अपेक्षा राजा-रंक को समान लगती है | १ | ९ | १ | ३५३— ५४ |
| अस्थिर, स्थिर, बाल, पंडित, बालत्व-पंडितता | १ | ९ | १ | ३६०— ६१ |
| अभिगम पांच का वर्णन | २ | ५ | १ | ४७८— ७९ |
| अस्तिकाय पांच का वर्णन | २ | १० | १ | ५१२—५३२ |
| असुरकुमारों का निवास स्थान, तिरछी आदि गति गमन हेतु, वैमानिक अप्सराओं से गमनाधिकार | ३ | २ | २ | ६०६— १४ |
| असुरकुमार कितने काल से व किसकी सहायता से ऊर्ध्वगमन करते हैं आदि वर्णन | ३ | २ | २ | ६१४— १६ |
| असुरकुमारों के उर्ध्वगमन के हेतु | ३ | २ | २ | ६४८— ५० |
| अन्तक्रिया (अयोगी) अकंप अवस्था में होती है, घास के पूले, जलबिंदु व नावा का दृष्टांत | ३ | ३ | २ | ६५६— ६५ |
| अवधिज्ञानी साधु द्वारा देव विमान वृक्षादि देखने की चौभंगिया | ३ | ४ | २ | ६७०— ७३ |


Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

| विषय | शतक | उद्देशक | भाग | पृष्ठ |
|---|---|---|---|---|
| अनगार की वैभारगिरि उल्लंघने आदि की शक्ति, मायी साधु विकुर्वणा करता है, अमायी नहीं उनका आहार व आराधना वर्णन | ३ | ४ | २ | ६८१--६८६ |
| अनगार की स्त्री आदि की विकुर्वणा की शक्ति और उनकी गति | ३ | ४ | २ | ६८६--६९६ |
| अमाई सम्यग्दृष्टि द्वारा विकुर्वित नगरादि यथार्थ देखे जाते हैं, मिथ्यादृष्टि विपरीत देखता है | ३ | ६ | २ | ६९७--७०५ |
| असुरादि देवों पर कितने-कितने अधिपति देव हैं ? | ३ | ८ | २ | ७२७— ३८ |
| अढ़ाई द्वीप का रात्रि-दिवस आदि समय विभाग | ५ | १ | २ | ७५६— ७४ |
| अग्निकाय के संयोग से अन्यकाय भी अग्निकाय के शरीर कहे जाते हैं | ५ | २ | २ | ७८१— ८५ |
| अनुत्तर विमानवासी अपने स्थान से ही केवली से वार्त्तालाप करते हैं | ५ | ४ | २ | ८२४— २६ |
| अनुत्तर विमानवासी देव उपशांत-वेदी | ५ | ४ | २ | ८२५— २६ |
| अल्प-दीर्घ, शुभ-अशुभ आयु-बन्ध के कारण | ५ | ६ | २ | ८३९— ४५ |
| अग्निकाय (तत्काल प्रदीप्त) महाकर्मी व हीन होता है, क्रमशः अल्पतर कर्म वाला होता है | ५ | ६ | २ | ८५१— ५२ |
| अभ्याख्यानी उसी प्रकार के कर्म बाँधता है | ५ | ६ | २ | ८६२— ६३ |
| अनंत व परित्त रात्रि-दिवस किस हेतु है | ५ | ९ | २ | ९२१—९२७ |
| अविशुद्ध-विशुद्ध लेश्या वाले देवों के जानने न जानने संबंधी १२ भांगे | ६ | ९ | २ | १०६३— ६६ |
| अनाहारक व अल्पाहारक जीव कब होता है | ७ | १ | ३ | १०७८— ८० |
| अकाम (अनिच्छा से) प्रकाम (तीव्र इच्छा से) निकरण (शक्ति के अभाव से) वेदना | ७ | ७ | ३ | १.१७८— ८२ |
| अप्रत्याख्यान क्रिया हाथी व कुंथु को समान | ७ | ८ | ३ | ११८६— ८७ |
| असंवृत (प्रमत्त) अनगार की विकुर्विणा का वर्णन | ७ | ९ | ३ | ११८८— ९० |
| अग्नि जलाने वाले की अपेक्षा बुझाने वाला अल्पकर्मी है | ७ | १० | ३ | १२२५—२८ |


Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

| विषय | शतक | उद्देशक | भाग | पृष्ठ |
|---|---|---|---|---|
| अचित्त तेजोलेश्या के पुद्गल प्रकाश करते | ७ | १० | ३ | १२२८— ३० |
| अकृत्य स्थान सेवित साधु-साध्वी के आलोचना के विचारों से आराधना | ८ | ६ | ३ | १३९९—१४०५ |
| अन्यतीर्थिकों द्वारा स्थविर साधुओं को असंयतादि कहना | ८ | ७ | ३ | १४१५— २८ |
| अन्तर्द्वीपों का वर्णन | ९ | ३—३० | ४ | १५७६— ७८ |
| (श. १० उ. ७ भा. ४ पृ. १८४१—४२ भी) | | | | |
| असोच्चा और सोच्चा केवली का अधिकार | ९ | ३१ | ४ | १५७९—१६१४ |
| अश्व के फेफड़े की वायु के खू खू शब्द | १० | ३ | ४ | १८०६— ७ |
| अस्तिकाय के लक्षण, गुण तथा तत्स्वरूप लोक | १३ | ४ | ५ | २१८८— ९३ |
| अस्तिकाय के प्रदेशों की परस्पर स्पर्शना | १३ | ४ | ५ | २१९३—२२०९ |
| अस्तिकाय के प्रदेशों की अवगाहना, स्थानाधिकार | १३ | ४ | ५ | २२१०—२२२२ |
| अंतर सहित या रहित नैरयिकादि का उत्पाद व उद्वर्तन | १३ | ६ | ५ | २२२७ |
| अनन्तरोपपन्नक, परम्परोपपन्नक निर्गत, अनिर्गत | १४ | १ | ५ | २२८०— ८७ |
| अग्नि में जीवों का गमन, जलने न जलने संबंधी | १४ | ५ | ५ | २३१०— १५ |
| अनुत्तर विमानवासी देवों का अवधिज्ञान अनन्त मनोद्रव्य वर्गणा युक्त | १४ | ७ | ५ | २३२७— २८ |
| अनुत्तरोपपातिक देव कहे जाने के कारण | १४ | ७ | ५ | २३३८— ४० |
| अंतर-रत्नप्रभादि पृथ्वियों देवलोक, सिद्ध शिला आदि का | १४ | ८ | ५ | २३४१— ४४ |
| अम्बड परिव्राजक के शिष्यों का वर्णन, १०० घरों में पारणा, उववाई का निर्देश | १४ | ८ | ५ | २३४७— ४८ |
| अव्याबाध देव कहे जाने के कारण | १४ | ८ | ५ | २३४९— ५० |
| अत्ता, अनत्ता ईर्ष्यादि पुद्गलों का दंडकापेक्षा | १४ | ९ | ५ | २३५६— ५८ |
| अग्निकाय का वायुकाय से संबंध व स्थिति | १६ | १ | ५ | २५०४— ६ |
| अधिकरण अधिकरणी संबंधी जीवों का अल्पबहुत्व | १६ | १ | ५ | २५०८— १७ |


Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

| विषय | शतक | उद्देशक | भाग | पृष्ठ |
|---|---|---|---|---|
| अवग्रह (आज्ञा) पंचक | १६ | २ | ५ | २५१९—२१ |
| अलोक में महर्द्धिक देव भी हाथ आदि नहीं पसार सकता | १६ | ८ | ५ | २५८४—८५ |
| अवधिज्ञान के भेदादि पर प्रज्ञापना पद ३३ का निर्देश | १६ | १० | ५ | २५८८—८९ |
| अठारह पाप स्थान यावत् अनाकार उपयोग युक्त वही जीव और जीवात्मा है | १७ | २ | ५ | २६०७—१२ |
| अठारह पाप स्थान आदि जीव-अजीव द्रव्यों में कुछ जीव के उपभोग में आते हैं, कुछ नहीं | १८ | ४ | ६ | २६९३—९५ |
| अनगार तलवार आदि अस्त्रधारा को अवगाहन करें, पर छिन्न-भिन्न नहीं होते | १८ | १० | ६ | २७५०—५१ |
| अवगाहना के ४४ बोलों की अल्पाबहुत्व | १९ | ३ | ६ | २७८१—८५ |
| अवसर्पिणी काल कहाँ है और कहाँ नहीं है ? | २० | ८ | ६ | २९००— २ |
| अल्पबहुत्व-गति, इंद्रिय, काय जीव, पुद्गलादि तथा आयुष्य कर्म के बंधक अबंधकादि | २५ | ३ | ७ | ३२५८—६२ |
| अस्तिकाय चार व जीवास्तिकाय के मध्य-प्रदेशों की अवगाहना | २५ | ४ | ७ | ३३३३—३५ |
| **(आ)** | | | | |
| आत्मारंभादि चार के जीवादि आश्रित प्रश्न | १ | १ | १ | ८३—९१ |
| आवासों की संख्या। (श. ६ उ. ६ भाग २ पृ. १०२४ तथा श. २५ उ. ३ भाग ७ पृ. ३२ ५५ पर भी) | १ | ५ | १ | २२२—२७ |
| आधाकर्मी वस्तु के सेवन का फल। (श. ७ उ. ८ भाग ३ पृ. ११८७ पर भी) | १ | ९ | १ | ३५४—५८ |
| आयुष्य सहित जीव परभव में उत्पन्न होता है | ५ | ३ | २ | ७९०—९३ |
| आत्म, अनन्तर, परम्पर आगम ये प्रमाण के अन्तर्गत हैं | ५ | ४ | २ | ८१९—२१ |
| आधाकर्मादि दस सदोष स्थान सेवन का फल | ५ | ६ | २ | ८५८—८६१ |


Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

| विषय | शतक | उद्देशक | भाग | पृष्ठ |
|---|---|---|---|---|
| आचार्य-उपाध्याय अपने कर्त्तव्य का पालन करते हुए कितने भवों में मोक्ष जाते हैं ? | ५ | ६ | २ | ८६१--८६२ |
| आरंभ परिग्रह आश्रित २४ दण्डकों का वर्णन | ५ | ७ | २ | ८८४-- ९० |
| आहार वर्णन पर प्रज्ञापना पद २८ का निर्देश | ६ | २ | २ | ९४४ |
| आयुष्य बंध जाति, नाम आदि के छः भेद | ६ | ८ | २ | १०५१- ५६ |
| आहार ग्रहण करने के क्षेत्र | ६ | १० | २ | १०७४ |
| आयुष्य बंध अनाभोग अवस्था में ही होता है | ७ | ६ | ३ | ११५३ |
| आशीविषाधिकार | ८ | २ | ३ | १२८८--९६ |
| आराधना-अधिकार | ८ | १० | ३ | १५४१--४७ |
| आलोचना से आराधना व अनालोचक के विचार | ८ | ६ | ३ | ११९९-१४०५ |
| आत्मा के आठ भेदों का परस्पर संबंध व अल्प-बहुत्व | १२ | १० | ४ | २१०५--१५ |
| आत्मा से ज्ञानादि का भेदाभेद | १२ | १० | ४ | २११५—१७ |
| आत्मा, नो आत्मा, अव्यक्तादि रत्नप्रभा से सिद्धशिला तक तथा परमाणु से अनन्तप्रदेशी स्कंध तक के भांगे | १२ | १० | ४ | २११७--३२ |
| आहार सचित्त आदि पर प्रज्ञापना पद २८ का निर्देश | १३ | ५ | ५ | २२२६ |
| आत्मा भाषा, मन व काय स्वरूप है या नहीं | १३ | ७ | ५ | २३४५--५४ |
| आहार-त्यागी मुनि के आहार का वर्णन | १४ | ७ | ५ | २३३६--३८ |
| आत्मकृत दुःख वेदना आदि वर्णन | १७ | ४ | ५ | २६२७--२९ |
| आहार रूप से ग्रहण किए पुद्गलों का असंख्यातवां भाग ग्रहित होता है, अनन्तवाँ भाग त्याज्य होता, उन पर शयनादि नहीं होता | १८ | ३ | ६ | २६९०--९१ |
| आकाश के भेद व उनमें जीव-अजीव विचार | २० | २ | ६ | २८३४--३६ |
| **(इ)** | | | | |
| इहभव, परभव, उभयभव आश्रित ज्ञानादिक का विचार | १ | १ | १ | ९२--९४ |


Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

| विषय | शतक | उद्देशक | भाग | पृष्ठ |
|---|---|---|---|---|
| **(ई)** | | | | |
| ईर्यापथिकी और सांपरायिकी में से एक क्रिया लगती है | १ | १० | १ | ३७१—७४ |
| इंद्रिय अधिकार प्रज्ञापना का निर्देश | २ | ४ | १ | ४५७—५८ |
| इंद्र, सामानिक, त्रायस्त्रिंश, लोकपाल आदि तथा कुरुदत्त अनगार की ऋद्धि आदि का वर्णन | ३ | १ | २ | ५५३—६६ |
| ईशानेंद्र (तामलीतापस के जीव) का वर्णन | ३ | १ | २ | ५६७—९५ |
| इंद्रों के आत्म-रक्षक | ३ | ६ | २ | ७०६—७ |
| इंद्रों के विषयाधिकार पर जीवाभिगम का निर्देश | ३ | ६ | २ | ७३२—३४ |
| इंद्रों की परिषदाएँ | ३ | १० | २ | ७३४—३८ |
| ईर्यापथिकी और सांपरायिकी क्रिया किस के लगती है (श. ७ उ. ७ भाग ३ पृ. ११६८-६९ में भी) | ७ | १ | ३ | १०९३—९५ |
| इंगाल, धूम, संयोजना दोष का वर्णन | ७ | १ | ३ | १०९५—९९ |
| इंद्र, लोकपाल व ८८ महाग्रहों की अग्रमहिषियों तथा सौधर्म सभा में मैथुन-क्रिया | १० | ५ | ४ | १८१९—३९ |
| इंद्रादि के भोग भोगने के लिए विकुर्वणा | १४ | ६ | ५ | २३२१—२६ |
| ईशानेंद्र की सुधर्मा सभा का वर्णन | १७ | ५ | ५ | २६२६—३० |
| ईर्या-शोधन करते हुए भावितात्मा अनगार के पैर नीचे पंचेंद्रिय जीव भी मर जाय, तो भी ईर्यापथिकी क्रिया लगती है | १८ | ८ | ६ | २७३६—३७ |
| इंद्रिय उपचयादि पर प्रज्ञापना का निर्देश | २० | ४ | ६ | २८४४ |
| **(उ)** | | | | |
| उत्पत्ति विरह काल पर प्रज्ञापना का निर्देश | १ | १० | १ | ३७४ |
| उश्वास निःश्वास पर चौबीस दण्डक | २ | १ | १ | ३७७—८५ |
| उद्योत-अंधकार का चौबीस दण्डक आश्रित वर्णन | ५ | ९ | २ | ९१५—१९ |
| उष्ण ऋतु में अल्पाहारी होते हुए भी वनस्पति शोभित क्यों होती है ? | ७ | ३ | ३ | ११३०—३२ |


Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

| विषय | शतक | उद्देशक | भाग | पृष्ठ |
|---|---|---|---|---|
| उत्पल, कमल आदि का अधिकार | ११ | १–८ | ४ | १८४३— ७२ |
| उदायन राजा व उनके पुत्र अभीचिकुमार का वर्णन | १३ | ६ | ५ | २२३१— ४५ |
| उन्माद के दोनों भेद चौबीस दण्डकों में | १४ | २ | ५ | २२८७— ९१ |
| उपयोग व पश्यता के भेदों पर प्रज्ञापना का निर्देश | १२ | ७ | ५ | २५७१— ७३ |
| उदायी व भूतानंद नामक हाथियों के चार भव | १७ | १ | ५ | २१९४— ६५ |
| उपधि, परिग्रह व प्रणिधान के भेद-प्रभेद | १८ | ७ | ६ | २७१५— ३० |
| (ऋ) | | | | |
| ऋषभदत्त-देवानंदा वर्णन | ९ | ३३ | ४ | १६९०—१७०४ |
| (ए) | | | | |
| एकान्त बाल, एकान्त पंडित तथा बालपंडिताद का आयुष्य बंध | १ | ८ | १ | ३११— ३१५ |
| एक समय में एक ही वेद वेदन का अधिकार | २ | ५ | १ | ४५९— ६२ |
| एक जीव एक समय में एक ही वेदना वेदता है, आयुष्य बंध पर जाल का दृष्टान्त | ५ | ३ | २ | ७८७— ७९० |
| एवंता मुनिवर का वर्णन | ५ | ४ | २ | ८०५— ९ |
| एवंभूत व अनेवंभूत वेदना का अधिकार | ५ | ५ | २ | ८३३— ३६ |
| एक आकाश प्रदेश में जघन्य उत्कृष्ट जीव-प्रदेश और सभी जीवों की अल्प-बहुत्व टीका में निगोद छत्तीसी का वर्णन | ११ | १० | ४ | १९११— १४ |
| एक भी प्राणी के दण्ड से निवृत जीव एकान्त बाल नहीं, बालपण्डित है, आदि | १७ | २ | ५ | २६०७— १० |
| एजना शैलेशी अवस्था में नहीं होती, भेद प्रभेद | १७ | ३ | ५ | २६१५— १८ |
| एकेंद्रिय में समाहार व समलेश्याएँ संबंधी प्रश्न | १७ | १२ | ५ | २६४०— ४२ |
| एकाभवावतारी पृथ्वी, पानी, वनस्पति में है | १८ | ३ | ६ | २६७४— ७९ |
| एकेंद्रिय शतक, अन्तर शतक १२, एकेंद्रियों के कर्म-बंधन, वेदन आदि | ३३ | १२४ | ७ | ३६६१— ८३ |
| एकेंद्रिय श्रेणी-शतक | ३४ | १२–३ | ७ | ३६८४—३७२९ |


Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

| विषय | शतक | उद्देशक | भाग | पृष्ठ |
|---|---|---|---|---|
| **(क)** | | | | |
| कांक्षा मोहनीय कर्म के बंधन, वेदन, हेतु उदीरणा तथा अस्तित्वादि | १ | ३ | १ | १६३—२०२ |
| कर्म-प्रकृति पर प्रज्ञापना पद २३ का निर्देश | १ | ४ | १ | २०३— ५ |
| कर्म-वेदने के दो भेद-प्रदेश व अनुभाग | १ | ४ | १ | २१०— १४ |
| केवली ही सिद्ध होते हैं, छद्मस्थादि नहीं, केवली ही अलमत्थु (पूर्ण) है। (श. ५ उ. ५ भाग २ पृ. ८३२-३६ पर भी, तथा श. ७ उ. ८ भाग ३ पृ. ११८२-८३ पर भी है) | १ | ४ | १ | २१६—२२१ |
| कषाय की स्थिति, अवगाहना आदि १० द्वारों पर २४ दण्डक निरूपण | १ | ५ | १ | २२७— ३७ |
| क्रियाएँ प्राणातिपातादि जीवों को स्पर्शी हुई, | १ | ६ | १ | २६४— ६९ |
| क्रियाएँ मृगवध, अग्नि-प्रज्वलन, पुरुष-वधादि | १ | ८ | १ | ३१६— २५ |
| कालास्यवेषि अनगार के पंचमहाव्रतादि प्रश्न | १ | ९ | १ | ३४४— ५१ |
| क्रिया के ५ भेद, प्रभेद, क्रिया व वेदना का अनुक्रम, प्रमाद व योग से श्रमण-निर्ग्रंथों को क्रिया लगती है। मंडितपुत्र के प्रश्न | ३ | ३ | १ | ६५१— ५६ |
| केवली के सर्वगत शब्द ज्ञानादि, छद्मस्थ के इंद्रियगोचर | ५ | ४ | २ | ७९४—७९८ |
| केवलियों के हास्य-निद्रादि नहीं, छद्मस्थों के | ५ | ४ | २ | ७९८—८०२ |
| केवली चरमशरीरी को स्वयं जानते हैं, छद्मस्थ सुन कर जानता है | ५ | ४ | २ | ८१७— १९ |
| केवली चरमकर्म व चरमनिर्जरा को स्वयं जानते हैं | ५ | ४ | २ | ८२१— २४ |
| केवलियों के प्रकृष्ट मन वचन को कुछ देव जानते हैं | ५ | ४ | २ | ८२१— २४ |
| केवली केवलज्ञान से जानते है, इंद्रियों से नहीं (श. ६ उ १० भाग २ पृ. १०७५ पर भी है) | ५ | २ | २ | ८२६— २८ |


Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

| विषय | शतक | उद्देशक | भाग | पृष्ठ |
|---|---|---|---|---|
| केवलियों के हाथ आदि से अवगाहित प्रदेशों को पुनः न अवगाह सकना | ५ | ४ | २ | ८२८— ३० |
| कुलकर, तीर्थंकर का वर्णन समवायांग निर्देश | ५ | ५ | २ | ७३६— ३९ |
| क्रियाएँ आरंभिकी आदि, चोरी की हुई वस्तु को शोधते हुए को तथा खरीदने-बेचने वालों को कितनी क्रियाएँ लगती है | ५ | ६ | २ | ८४५— ५१ |
| क्रियाएँ कायिकी आदि, पुरुष, धनुष, शरीर आदि को कितनी लगती है | ५ | ६ | २ | ८५२— ५६ |
| काल (समय आदि) का वर्तन मनुष्य-क्षेत्र में ही | ५ | ९ | २ | ९१९— २१ |
| करण ४ का चौबीस दण्डक संबंधी वर्णन | ६ | १ | २ | ९३८— ४१ |
| कर्म-पुद्गलों के सर्वतः बंध व निर्जरा पर वस्त्र का उदाहरण | ६ | ३ | २ | ९४५— ९५६ |
| कर्म के भेद जघन्य व उत्कृष्ट स्थिति, अबाधाकाल | ६ | ३ | २ | ९५७— ५९ |
| कर्म-प्रकृतियाँ वेद से चरमाचरम तक कौन कितनी बांधता है | ६ | ३ | २ | ९६०— ७६ |
| कालाश्रित जीवादि सप्रदेशी हैं या अप्रदेशी | ६ | ४ | २ | ९७७— ९५ |
| कृष्णराजियों का वर्णन | ६ | ५ | २ | १०११— १८ |
| काल (गणनीय-उपमेय) वर्णन, आरों का स्वरूप | ६ | ७ | २ | १०३३— ४४ |
| कर्म रहित जीव की गति तुम्बे का दृष्टान्त | ७ | १ | ३ | १०८७— ९१ |
| कर्म सहित जीव ही दुःखों से व्याप्त होता है ग्रहण, उदीरणा, वेदनादि | ७ | १ | ३ | १०९१— ९३ |
| कर्कश वेदनीय अकर्कशवेदनीय का बंध | ७ | ६ | ३ | ११५३— ५६ |
| काम-भोगों का रूपी-अरूपी आदि स्वरूप | ७ | ७ | ३ | ११६९— ७५ |
| कोणिक राजा को शक्रेंद्र, चमरेंद्र की सहायता | ७ | ९ | ३ | ११९०—१२१३ |
| कालोदायी की पंचास्तिकाय संबंधी चर्चा व प्रतिबोध | ७ | १० | ३ | १२१४— २१ |
| क्रिया वर्णन प्रज्ञापना पद २२ का निर्देश | ८ | ४ | ३ | १३७३— ७४ |


Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

| विषय | शतक | उद्देशक | भाग | पृष्ठ | |
|---|---|---|---|---|---|
| कर्मादान वर्णन | ८ | ५ | ३ | १३८६— | ९१ |
| क्रियाएँ-औदारिकादि शरीर आश्रित लगने वि. | ८ | ६ | ३ | १४०७— | १५ |
| कर्म-प्रकृतियों में परीषहों का समवतार | ८ | ८ | ३ | १४५१— | ६२ |
| कर्म के अनन्त अविभागी परिच्छेदों से जीव प्रदेश आवेष्ठित-परिवेष्ठित है | ८ | १० | ३ | १५५२— | ५६ |
| कर्मों की परस्पर नियमा व भजना | ८ | १० | ३ | १५५६— | ६५ |
| काल के प्रमाणादि चार भेद-प्रभेद | ११ | ११ | ४ | १९१५— | २३ |
| कषायों से बंध और फल | १२ | १ | ४ | १९८३— | ८५ |
| क्रोधादि के पर्यायवाची नाम | १२ | ५ | ४ | २०४६— | ५० |
| कर्म से ही जीव और जगत नानारूप में है | १२ | ५ | ४ | २०५९— | ६० |
| कर्म-प्रकृतियों पर प्रज्ञापना सूत्र का निर्देश | १३ | ८ | ५ | २३६२— | ६३ |
| केवली और सिद्धों का ज्ञान समान है | १४ | १० | ५ | २३६२— | ६७ |
| क्रियाएँ—लोहारी कर्म संबंधी | १६ | १ | ५ | २५०६— | ८ |
| कर्म 'वेदावेद,' वेदा बंध, बंधावेद, पर प्रज्ञापना का निर्देश (श. ६ उ. ९ भा. २ पृ. १०५९-६० पर भी है) | १६ | ३ | ५ | २५२६— | २८ |
| कायोत्सर्ग रहे मुनि का अर्श छेदन में क्रिया | १६ | ३ | ५ | २५२८— | ३१ |
| कोष्ठादि पुड़ों को इधर-उधर ले जाते हुए गंध के पुद्गलों का बहना | १६ | ६ | ५ | २५७०— | ७१ |
| क्रियाएँ तालफल-मूलादि को हिलाने आदि में | १७ | १ | ५ | २५९५— | २६०० |
| क्रियाएँ शरीर इंद्रियों व योगबंध से | १७ | १ | ५ | २६०१— | ३ |
| क्रियाएँ प्राणातिपातादि पाँच, जीवों को स्पर्शी हुई, अवगाहन की हुई, उसी समय उसी क्षेत्र उसी प्रदेश में लगने विषयक | १७ | ४ | ५ | २६२४— | २७ |
| कार्तिक सेठ (शक्रेन्द्र) का पूर्वभव | १८ | २ | ६ | २६६५— | ७४ |
| केवलियों के अंतिम निर्जरा के पुद्गलों को छद्मस्थ जानता है और आहार रूप से ग्रहण करता है | १८ | ३ | ६ | २६८०— | ८१ |


Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

| विषय | शतक | उद्देशक | भाग | पृष्ठ |
|---|---|---|---|---|
| कषाय वर्णन प्रज्ञापना का निर्देश | १८ | ४ | ६ | २६९३—९५ |
| केवली यक्षावेष्ठित नहीं होते, वे निर्दोष भाषा ही बोलते हैं | १८ | ७ | ६ | २७१४—१५ |
| करणों (द्रव्यादि शरीर, इंद्रियादि) का वर्णन | १९ | ९ | ६ | २८२१—२५ |
| कतिसंचितादि व छवकसमज्झियादि का वर्णन | २० | १० | ६ | २९२२—४० |
| कर्म बंधन (बंधी शतक) का वर्णन | २६ | १--११ | ७ | ३५४९—८९ |
| कर्म-करण (करी शतक, करिसु शतक) वर्णन | २७ | १--११ | ७ | ३५९०—९२ |
| कर्म-समर्जक शतक वर्णन | २८ | १--११ | ७ | ३५९३—९९ |
| क्षीण भोगी, (दुर्बल-शरीरी) मनुष्य भी भोग त्याग से ही त्यागी कहे जाते हैं | ७ | ७ | ३ | ११७५—७८ |
| क्षेत्रातिक्रान्तादि दोषों का वर्णन | ७ | १ | ३ | १०९९-११०१ |
| **(ख)** | | | | |
| खेचर तिर्यञ्च पंचेंद्रिय का योनि वर्णन जीवाभिगम का निर्देश | ७ | ५ | ३ | ११४७—४९ |
| **(ग)** | | | | |
| गर्भ में जीव की इंद्रिय सहित-रहित उत्पत्ति | १ | ७ | १ | २९६—३०२ |
| गर्भ में उत्पन्न होते ही आहार किसका ? माता-पिता के अंग, स्थिति आदि गर्भ वर्णन | १ | ७ | १ | ३०२—३१० |
| गर्भ में मर कर नारकी या देव होने का वर्णन | १ | ७ | १ | ३०४—३०८ |
| गर्भ में जीव को सुख-दुःखादि माता के समान शुभाशुभ वर्णादि होने के कारण, सीधा, उलटा, तिरछा उत्पन्न होना | १ | ७ | १ | ३०८— १० |
| गर्भ स्थिति, जल मनुष्य तिर्यंच की काय भवस्थ । गर्भकाल, कितने का पुत्र हो सकता है, मैथुन में असंयम बुरे का दृष्टान्त | २ | ५ | १ | ४६२— ६७ |
| गोशालक का सिद्धान्त, श्रावक का आचार | ८ | ५ | ३ | ११८६—९१ |
| गतिप्रपात पर प्रज्ञापना का निर्देश | ८ | ७ | ३ | १४२६—२८ |


Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

| विषय | शतक | उद्देशक | भाग | पृष्ठ |
|---|---|---|---|---|
| गुरु आदि के प्रत्यनीक का वर्णन | ८ | ८ | ३ | १४२८— ३१ |
| गांगेय अनगार के प्रश्न भययुक्त | ९ | ३२ | ४ | १६१४— ८९ |
| गर्भ में उत्पन्न होते हुए ही जीव के वर्णादि (श. २० उ. ३ भाग ६ पृ. २८४१–४३ में भी है) | १२ | ५ | ४ | २०५३— ५९ |
| गोलंगूलादि प्राणियों का नरक गमन | १२ | ८ | ४ | २०८२— ८५ |
| गौशालक का विस्तृत वर्णन | १५ | • | ५ | २३६८–२५०२ |
| गंगदत्त कृत वंदनादि व उनके पूर्व भव | १६ | ५ | ५ | २५४३— ५२ |
| गुड़ आदि द्रव्यों में निश्चय व व्यवहार से वर्णादि निरूपण | १८ | ६ | ६ | २७०८— १० |
| गौतमस्वामी द्वारा अन्यतीर्थियों से वाद और विजय, प्रभु द्वारा प्रशंसा | १८ | ८ | ६ | २७३७— ४५ |
| गम्मा शतक (चौबीसवाँ) चौबीस दण्डक के उत्पादादि का वर्णन | २४ | १–२४ | ६ | २९७८–३१९३ |
| गणिपिटक (द्वादशांग) अनुयोगविधि | २५ | ३ | ७ | ३२५७— ५८ |
| **(च)** | | | | |
| चलमाणे चलिए आदि ९ बोल, चौबीस दण्डक के जीवों की स्थिति, श्वासोश्वास आहार परिणमन चयोपचय उदीरणा वेदना और निर्जरादि ४५ द्वारों का वर्णन | १ | १ | १ | २१— ८३ |
| चलमाणे अचलिए आदि अन्यतीर्थियों की मान्यता का उत्तर | १ | १० | १ | ३६२— ६८ |
| चमरेंद्र की राजसभा व चमरचंचा राजधानी | २ | ८ | १ | ५०३—५११ |
| चमरेंद्र का पूर्वभव सोधर्मस्वर्ग में उत्पात, वीर शरण | ३ | २ | २ | ६१७— ३७ |
| चमरेंद्र, शक्र, चक्र आदि की गति आदि | ३ | २ | २ | ६३७— ४५ |
| चमरेंद्र द्वारा वीरवंदन नृत्यादि प्रदर्शन | ३ | २ | २ | ६४५— ५० |
| चौदहपूर्वी की शक्ति १ को १००० दिखा सकता है | ५ | ४ | २ | ८३०— ३२ |
| चंद्रमा का वर्णन | ५ | ९ | २ | ९२९— ३० |


Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

| विषय | शतक | उद्देशक | भाग | पृष्ठ |
|---|---|---|---|---|
| चौबीस दण्डक के जीव कहाँ आयुष्य बाँधते, भोगते व महावेदना वेदते हैं | ७ | ६ | ३ | ११४९— ५२ |
| चरमाचरम पर प्रज्ञापना का निर्देश | ८ | ५ | ३ | १३७१— ७२ |
| चंद्र शशि तथा सूर्य को आदित्य कहने के कारण | १२ | ६ | ४ | २०६५— ६६ |
| चमरेंद्र का चमरचंचा आवास | १३ | ६ | ५ | २२२७— ३१ |
| चौबीस दण्डक के जीवों में सत्कारादि योग्यता | १४ | ३ | ५ | २२९७—२३०२ |
| चौबीस दण्डक में ईष्ट-अनिष्ट शब्दादि का अनुभव | १४ | ५ | ५ | २३१६— १८ |
| चौबीस दण्डक के जीवों का आहार | १४ | ६ | ५ | २३२०— २१ |
| चैतन्य कृत कर्म वर्णन | १६ | २ | ५ | २५२४— २६ |
| चलना के भेद-प्रभेद | १७ | ३ | ५ | २६१८— २१ |
| चौबीस दण्डकों में जीवों की उत्पत्ति, गति उ. ९ में भव्य, उ. १० में अभव्य, उ. ११ में सम्यग्दृष्टि, उ. १२ में मिथ्यादृष्टि | २५ | ८–१२ | ७ | ३५४०— ४८ |
| (छ) | | | | |
| छठे आरे का वर्णन | ७ | ६ | ३ | ११५८— ६७ |
| छद्मस्थ दस स्थानों को सर्वथा नहीं जानते | ८ | २ | ३ | १२९६— ९७ |
| छद्मस्थ के समुद्घात पर प्रज्ञापना का निर्देश | १३ | १० | ५ | २२७२— ७४ |
| छद्मस्थ साधु अपने कर्म-लेश्या को नहीं जानते पर तद्युक्त जीव को जानते हैं। कर्म योग्य लेश्या पुद्गल प्रकाशित होते हैं | १४ | ९ | ५ | २३५४— ५६ |
| (ज) | | | | |
| जीव और पुद्गलों के संबंध पर नाव का दृष्टांत | १ | ६ | १ | २८०— ८२ |
| जिस लेश्या में जीव काल करता है, उसी में उत्पन्न होता है | ३ | ४ | २ | ६७९— ८१ |
| जीवों के कर्मोपचय मनादि प्रयोगों से और वस्त्र के पुद्गलोपचय दोनों प्रकार से | ६ | ३ | २ | ९४९— ५६ |
| जीवों के सुख या दुःखादि को कोई निकाल कर नहीं बता सकता | ६ | १० | २ | १०६६— ६९ |


Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

| विषय | शतक | उद्देशक | भाग | पृष्ठ |
|---|---|---|---|---|
| जीव-चैतन्य की एकता, जीव के प्राणों की पृथक्ता तथा भव्य-अभव्य | ६ | १० | २ | १०६९— ७१ |
| जीवों के सुख-दुःखादि वेदने का वर्णन | ६ | १० | २ | १०७२— ७३ |
| जीव द्रव्य से शाश्वत भाव से अशाश्वत है | ७ | २ | ३ | ११२८— ३० |
| जीव द्रव्यार्थिक नय से शाश्वत पर्यायार्थिक नय से अशाश्वत है | ७ | ३ | ३ | ११४३— ४५ |
| जीव हाथी व कुंथुए का समान है। राजप्रश्नीय सूत्र का निर्देश | ७ | ८ | ३ | ११८२— ८३ |
| जीव के शरीर और अवयवों के बीच में रहे आत्म-प्रदेशों को अग्नि आदि कोई बाधा नहीं होती (श. १८ उ. ७ भाग ६ पृ. २७२९-३० में भी) | ८ | ३ | ३ | १३७९— ७० |
| जीव के प्रदेश लोकाकाश के प्रदेशों जितने हैं | ८ | १० | ३ | १५५१— ५२ |
| जीवादि पुद्गल-पुद्गली तथा सिद्ध पुद्गल | ८ | १० | ३ | १५६५— ६७ |
| जम्बूद्वीप कहाँ है ? जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति का निर्देश | ९ | १ | ४ | १५७२— ७३ |
| जमाली वर्णन | ९ | ३३ | ४ | १७०५— ७१ |
| जागरिका तीन का वर्णन | १२ | १ | ४ | १९८२— ८३ |
| जयन्ति श्राविका के प्रश्न | १२ | २ | ४ | १९८६— ९८ |
| ज्योतिषियों व तदंतरगत व्यन्तर व भवनपतियों के काम-भोगों का वर्णन | १२ | ६ | ४ | २०६७— ७० |
| जीव ने पूरे लोक में अनन्त बार जन्म-मरण किया है, सभी स्थान व सभी जीवों से संबंध कर चुका है। बकरियों के बाड़े का दृष्टांत | १२ | ७ | ४ | २०७०— ८१ |
| जीव एक समय में सुखी, एक समय में दुःखी | १४ | ४ | ५ | २३०५— ६ |
| जृंभक देवों के भेद, स्थिति, निवास, कोप आदि | १४ | ८ | ५ | २३५१— ५४ |
| जरा शारीरिक शोक मानसिक का वर्णन | १६ | २ | ५ | २५१७— १९ |


Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

| विषय | शतक | उद्देशक | भाग | पृष्ठ |
|---|---|---|---|---|
| जीवों के पापकर्मों के बंध की अपेक्षा भेद है । धनुष का दृष्टान्त | १८ | ३ | ६ | २६८८— ९० |
| जुम्मा (युग्म) चार का जीवादि २६ संबंधी वर्णन | १८ | ४ | ६ | २६९५— ९९ |
| जीव जिस गति में रहता है, उसी के आयुष्य का वेदन करता है तथा परभव का आयुष्य सन्मुख करता है | १८ | ५ | ६ | २७०४— ५ |
| जिनान्तर २३, सात जिनांतरों में कालिक सूत्रों का विच्छेद | २० | ८ | ६ | २१०४— ६ |
| जंघाचारण विद्याचारण की शीघ्र गति | २० | ९ | ६ | २९११— १८ |
| जीव के १४ भेद, उनके जघन्य उत्कृष्ट योग | २५ | १ | ७ | ३१९७—३२०६ |
| जीव द्रव्य अनन्त है | २५ | २ | ७ | ३२०६— ८ |
| जीव, अजीव द्रव्यों से शरीर आदि १४ निष्पन्न करता है । असंख्य लोक में अनन्त द्रव्य हैं | २५ | २ | ७ | ३२०८— १२ |
| जीव द्वारा शरीरादि रूप से ग्रहीत स्थित, अस्थित पुद्गलों का द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव | २५ | २ | ७ | ३२१२— १७ |
| जुम्मा चार का द्रव्य प्रदेश, अवगाहना स्थिति और पर्याय का तत्संबंधी वर्णन | २५ | ४ | ७ | ३२६२— ८० |
| जुम्मा (क्षुल्लक युग्मादि) का उत्पाद आदि वर्णन | ३१ | १–२८ | ७ | ३६४०— ५७ |
| जुम्मा का उद्वर्तना वर्णन | ३२ | १–२८ | ७ | ३६५८— ६० |
| **अन्तर शतक** | | | | |
| जुम्मा (एकेंद्रियादि महायुग्म) | १२ | ३५ | १३२ | ७ ३७३०— ५८ |
| " बेइंद्रियादि " | १२ | ३६ | १३२ | ७ ३७५९— ६४ |
| " तेइंद्रियादि " | १२ | ३७ | १३२ | ७ ३७६५ |
| " चउरिंद्रिय " | १२ | ३८ | १३२ | ७ ३७६६ |
| " असंज्ञी पंचेंद्रिय " | १२ | ३९ | १३२ | ७ ३७६७ |
| " संज्ञी पंचेंद्रिय " | १२ | ४० | २३१ | ७ ३७६८— ८६ |
| " राशि युग्म वर्णन | ० | ४१ | १९६ | ७ ३७८७—३८१४ |


Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

| विषय | शतक | उद्देशक | भाग | पृष्ठ |
|---|---|---|---|---|
| **(त)** | | | | |
| तुंगिया नगरी के श्रावकों का वर्णन, प्रश्नोत्तर | २ | ५ | १ | ४६८— ४९१ |
| तथारूप के श्रमण माहन की सेवा का फल | २ | ५ | १ | ४९१— ४९५ |
| तमस्काय का स्वरूप | ६ | ५ | २ | ९९९—१०११ |
| तथारूप के संयती-असंयती को दान देने का फल | ८ | ६ | ३ | १३९२— ९५ |
| त्रायस्त्रिंशक देव वर्णन | १० | ४ | ४ | १८०९— १९ |
| तमस्काय । ईशानेन्द्र का तमस्करण कारण | १४ | २ | ५ | २२९३— ९५ |
| तुल्यता के भेद-प्रभेद | १४ | ७ | ५ | २३२९— ३६ |
| तीर्थंकर और तीर्थ का स्वरूप | २० | ८ | ६ | २९०३— ५ |
| तप के भेद-प्रभेद | २५ | ७ | ७ | ३५००—३५४० |
| **(द)** | | | | |
| देश से देश व आधे से आधा उत्पन्न होने व आहार लेने सम्बन्धी प्रश्नोत्तर | १ | ७ | १ | २८६— ९२ |
| देव कुछ समय तक लज्जा व जुगुप्सा के कारण आहार नहीं लेते | १ | ७ | १ | २९२— २९६ |
| देव चार प्रकार के व उनके स्थानादि वर्णन पर प्रज्ञापना का निर्देश । कल्पविमानों के आधार के लिए जीवाभिगम का निर्देश | २ | ७ | १ | ५००— ५०३ |
| देव नोसंयती है । देवों की भाषा अर्द्धमागधी है | ५ | ४ | २ | ८१४— १७ |
| देवलोक चार प्रकार के । श. ८ उ. ५ भाग ३ पृ. १३८७–९१ पर तथा श. १० उ. ८ भाग ६ पृ. २९०८–९ पर भी है | ५ | ९ | २ | ९२७— २९ |
| देवों की पुद्गलों को ग्रहण कर के विकुर्वणा करने की शक्ति, भिन्न वर्णादि रूप से परिणमन | ६ | ९ | २ | १०६०— ६३ |
| देवों के शुद्ध-अशुद्ध लेश्या व उपयोग रहित या सहित जानने न जानने संबंधी १२ भांगे | ६ | ९ | २ | १०६३— ६६ |
| दीपक नहीं जलता, अग्नि जलती है | ८ | ६ | ३ | १४०६— ७ |


Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

| विषय | शतक | उद्देशक | भाग | पृष्ठ |
|---|---|---|---|---|
| द्वीप-समुद्रों में ज्योतिषियों की संख्या पर जीवाभिगम का निर्देश | ९ | २ | ४ | १५७३— ७५ |
| दिशाएँ व उनमें रहे जीवादि पदार्थों का वर्णन | १० | १ | ४ | १७८३— ८९ |
| देव आत्म-ऋद्धि से ४–५ आवास तक ही जा सकते हैं। मध्य होकर निकलने की क्षमता | १० | ३ | ४ | १८००— ६ |
| देव स्थिति, ऋषिभद्र पुत्र का प्रभु कथित आगामी भव वर्णन | ११ | १२ | ४ | १९६०— ६६ |
| देव (महर्द्धिक) चव कर सर्प, हाथी, मणि, वृक्षादि में उत्पन्न हो कर प्रतिष्ठा प्राप्त कर मनुष्य बन कर मोक्ष जा सकते हैं | १२ | ८ | ४ | २०८२— ८५ |
| देवावासों में लेश्यादि बोल वालों के उत्पन्न होने आदि की संख्या व लेश्याओं के शुभाशुभ होने का वर्णन। देवों में दृष्टि | १३ | २ | ५ | २१५९— ७४ |
| दिशाओं का प्रारंभ, वृद्धि व संस्थान आदि वर्णन | १३ | ४ | ५ | २१८५— ८८ |
| देवता वृष्टि क्यों व कैसे करते हैं ? | १४ | २ | ५ | २२९१— ९३ |
| देवों का मुनियों से वर्त्ताव व उनके मध्य गमन | १४ | ३ | ५ | २२९५— ९७ |
| देवों के सहस्र रूपों की भाषा एक ही कही जाती है | १४ | ९ | ५ | २३५७— ५८ |
| द्वीपकुमार उदधि, दिशा, स्तनित आदि के समाहारादि का कुछ वर्णन | १६ | ११–१४ | ५ | २५८९— ९२ |
| देव रूपी से अरूपी व अरूपी से रूपी नहीं कर सकता | १७ | २ | ५ | २६१२— १५ |
| दो देव (एक ही आवास के) मनोज्ञ व अमनोज्ञ विकुर्वणा क्यों दिखाई देते हैं | १८ | ५ | ६ | २७००— २ |
| दो देवों (एक ही आवास के) में एक इच्छानुसार विकुर्वणा कर लेता है दूसरा इच्छा के विपरीत क्यों | १८ | ५ | ६ | २७०५— ७ |
| देवों की विकुर्वणा से संग्राम वर्णन | १८ | ७ | ६ | २७२९— ३१ |
| देवासुर संग्राम में देव स्पर्शित तृणादि भी शस्त्र रूप बन जाते हैं | १८ | ७ | ६ | २७३०— ३१ |


Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

| विषय | शतक | उद्देशक | भाग | पृष्ठ |
|---|---|---|---|---|
| देव रुचकवर द्वीप तक चौतरफ पर्यटन करते हैं, आगे जाते तो हैं, पर पर्यटन नहीं करते | १८ | ७ | ६ | २७३०— ३१ |
| देवों के कर्मांशों का क्षय काल आदि | १८ | ७ | ६ | २७३१— ३५ |
| द्वीप समुद्र वर्णन पर जीवाभिगम का निर्देश | १९ | ६ | ६ | २८०५— ६ |
| देवों के आवासों का वर्णन | १९ | ७ | ६ | २८०७— १० |
| (ध) | | | | |
| धान्यों का कालमान | ६ | ७ | २ | १०३१— ३३ |
| धर्मास्तिकायादि तीनों पर बैठना, सोना नहीं हो सकता, दीपक का दृष्टांत | १३ | ४ | ५ | २२२१— २३ |
| धर्माधर्म स्थिति अपेक्षा वर्णन, धर्माधर्म पर कोई बैठ या सो सकता है क्या | १७ | २ | ५ | २६०५— ७ |
| धर्मास्तिकाय आदि पाँचों के पर्यायवाची नाम | २० | २ | ६ | २८३६— ४१ |
| (न) | | | | |
| नमस्कार मंत्र, राजगृह नगर, प्रभु-देशना, गौतमस्वामी का वर्णन | १ | १ | १ | १— २० |
| नैरयिक नरक में उत्पन्न होते हैं, इस पर प्रज्ञापना का निर्देश | ४ | ९ | २ | ७४४— ४५ |
| नैरयिक चार सौ-पाँच सौ योजन तक खचाखच भरे रहते हैं, उनकी विकुर्वणा आदि पर जीवाभिगम का निर्देश | ५ | ६ | २ | ८५६— ५८ |
| नरक तथा देवलोकों के नीचे गृह-मेघादि वर्णन देवों के सातवीं नरक के नीचे जाना इस पाठ से भी प्रमाणित होता है | ३ | ८ | २ | १०४४— ५० |
| नैरयिक दस प्रकार की वेदना वेदते हैं | ७ | ८ | ३ | ११८४— ८६ |
| नरकादि में लेश्यादि ३९ बोल वालों के उत्पन्न होने की संख्या तथा शुभाशुभ लेश्या | १३ | १ | ५ | २१३६— ५८ |
| नरकावास किस नरक से किसके बड़े हैं, आदि | १३ | ४ | ५ | २१७५— ८१ |


Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

| विषय | शतक | उद्देशक | भाग | पृष्ठ |
|---|---|---|---|---|
| नैरयिक पृथ्व्यादि पाँचों का अनिष्ट स्पर्शानुभव | १३ | ४ | ५ | २१७५— ८१ |
| नरकों की परस्पर अपेक्षाकृत लम्बाई, चौड़ाई | १३ | ४ | ५ | २१७५— ८१ |
| नरकावासों के पास वाले पृथ्वीकायादि महाकर्म महावेदना वाले है | १३ | ४ | ५ | २१८१ |
| नारकी जीव पुद्गलों व संज्ञाओं का अनिष्टादि परिणाम अनुभव करते हैं | १४ | ३ | ५ | २३०२— ३ |
| नैरयिकों में मिथ्यात्वी की महाकर्म समकिती को अल्प | १८ | ५ | ६ | २७०२— ३ |
| नरक, देवलोक व सिद्धशिला के नीचे के द्रव्यों में वर्णादि २० बोल | १८ | १० | ६ | २७५२— ५४ |
| निर्वृत्ति-जीव, इंद्रिय, कर्मादि का वर्णन | १९ | ८ | ६ | २८१०— २१ |
| निगोद के भेदों पर जीवाभिगम का निर्देश | २५ | ५ | ७ | ३३४८ |
| निर्ग्रंथादि पाँच के भेदादि ३६ द्वार | २५ | ६ | ७ | ३३५१—३४३८ |
| नरक पृथ्वी वर्णन, जीवाभिगम का निर्देश | १२ | ३ | ४ | १९९८—२००० |
| **(प)** | | | | |
| परमाणु पुद्गल, स्कंध और जीव शाश्वत हैं | १ | ४ | १ | २१४— १५ |
| पृथ्वी (नरक) के वर्णन पर जीवाभिगम का निर्देश | २ | ३ | १ | ४५४— ५६ |
| प्रमत्त-अप्रमत्त संयत की स्थिति | ३ | ३ | २ | ६६५— ६७ |
| प्रमाण के भेदों पर अनुयोगद्वार सूत्र का निर्देश | ५ | ४ | २ | ८१९— २१ |
| परमाणु पुद्गलादि का एजनादि कंपन, असिधारा अवगाहन | ५ | ७ | २ | ८६४— ६८ |
| परमाणु सार्द्ध, समध्य व सप्रदेशी हैं क्या ? | ५ | ७ | २ | ८६८— ७० |
| परमाणु आदि के परस्पर स्पर्शना संबंधी नौ भंग | ५ | ७ | २ | ८७०— ७६ |
| परमाणु आदि की स्थिति, कंपन, अकंपन, अंतरकाल | ५ | ७ | २ | ८७७— ८४ |
| पुद्गलों के द्रव्य, क्षेत्र, अवगाहन तथा भाव स्थान | ५ | ७ | २ | ८८२— ८४ |
| पुद्गलों के द्रव्यादि आश्रित सप्रदेशी अप्रदेशी आदि | ५ | ८ | २ | ८९३—९०२ |
| प्रत्याख्यानादि का ज्ञान व उनके द्वारा आयुष्य बंधन | ६ | ४ | २ | ९९५—९९९ |


Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

| विषय | शतक | उद्देशक | भाग | पृष्ठ |
|---|---|---|---|---|
| प्रत्याख्यान के भेद-प्रभेद आदि | ७ | २ | ३ | ११०९—२८ |
| पापकर्म दुःख का हेतु, निर्जरा सुख का कारण है | ७ | ८ | ३ | ११८३—८६ |
| पाप व कल्याण के विपाक पर विष व औषधि मिश्रित पकवान का उदाहरण। कालोदायी का | ७ | १० | ३ | १२२१—२५ |
| पुद्गल के प्रयोगादि भेद-प्रभेद | ८ | १ | ३ | १२३२—५४ |
| पुद्गल के वर्णादि पांच परिणाम, द्रव्य प्रदेशादि | ८ | १० | ३ | १२५४—८७ |
| पुरुष, ऋषि आदि की घात करने वाला कितने जीवों का घातक | ९ | ३४ | ४ | १७७१—७६ |
| पृथ्वी आदि पाँचों का उच्छ्वास रूप से ग्रहण होना व उससे लगने वाली क्रिया | ९ | ३४ | ४ | १७७७—८१ |
| पुद्गल परिव्राजक का वर्णन | ११ | १२ | ४ | १९६६—७० |
| पुद्गलों के संयोग-वियोग के भंग | १२ | ४ | ४ | २०००—३१ |
| पुद्गल परावर्तन अधिकार | १२ | ४ | ४ | २०३१—४५ |
| परिचारणा। प्रज्ञापना का निर्देश | १३ | ३ | ५ | २१७४—७५ |
| पृथ्वीकाय आदि का परस्पर अवगाहन | १३ | ४ | ५ | २२१५—२१ |
| परमदेवावास अप्राप्त अनगार की गति। देवों में भावलेश्या ही परिवर्तित होती है | १४ | १ | ५ | २२७६—७८ |
| पुद्गलों का एक समय रूक्ष, एक समय अरूक्ष, एक समय रूक्षारूक्ष आदि परिणमन | १४ | ४ | ५ | २३०३— ५ |
| परमाणु पुद्गल द्रव्य से शाश्वत भाव से अशाश्वत हैं | १४ | ४ | ५ | २३०६— ८ |
| परमाणु का द्रव्य-क्षेत्रादि से चरमाचरम | १४ | ४ | ५ | २३०६— ८ |
| परिणमन स्वरूप पर प्रज्ञापना का निर्देश | १४ | ४ | ५ | २३०८— ९ |
| परिणत हुए पुद्गलों को परिणत कहना | १६ | ५ | ५ | २५४३—५२ |
| परमाणु की एक समय में लोकांत से लोकांत तक गति | १६ | ८ | ५ | २५८२—८३ |
| प्रथम-अप्रथम तथा चरमाचरम वर्णन | १८ | १ | ६ | २६४८—६४ |
| परमाणु आदि में वर्ण, गंधादि (श. २० उ. ५ भाग ६ पृ. २८४५ में भी है) | १८ | ६ | ६ | २७१०—१३ |


Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

| विषय | शतक | उद्देशक | भाग | पृष्ठ |
|---|---|---|---|---|
| पुद्गलों (परमाणु आदि) के ज्ञानाज्ञान व देखना न देखना | १८ | ८ | ६ | २७४२— ४५ |
| परमाणु पुद्गलादि की वायुकाय के साथ स्पर्शना | १८ | १० | ६ | २७५१— ५४ |
| पृथ्वी आदि के ४–५ जीव साधारण शरीर नहीं बांधते। उनमें लेश्यादि के १५ बोल | १९ | ३ | ६ | २७७१— ८५ |
| पृथ्वी आदि में कौन सूक्ष्म व कौन बादर है ? | १९ | ३ | ६ | २७८५— ८९ |
| पृथ्वी आदि के शरीर की सूक्ष्मता पर चक्रवर्ती की दासी का दृष्टान्त | १९ | ३ | ६ | २७९०— ९१ |
| पृथ्वी आदि के स्पर्श का दुःख। वृद्ध का दृष्टान्त | १९ | ३ | ६ | २७९१— ९३ |
| प्राणातिपातादि आत्मा से भिन्न परिणत नहीं होते | २० | ३ | ६ | २८४१— ४३ |
| परमाणु द्रव्यादि चार का स्वरूप | २० | ५ | ६ | २८८६— ८८ |
| पृथ्वी, पानी, वायुकाय के जीव उत्पन्न हो कर आहार लेते हैं (श. १७ उ. ६–११ में भी) | २० | ६ | ६ | २८८९— ९५ |
| पूर्वों का ज्ञान वीरशासन में १००० वर्ष तथा अन्य शासनों में संख्यात-असंख्यातकाल रहा | २० | ८ | ६ | २९०६— ७ |
| प्रवचन-प्रवचनी तथा कुलों में सिद्ध होने का वर्णन | २० | ८ | ६ | २९०७— ८ |
| परमाणु आदि का द्रव्यादि कृतयुग्मादि तथा साद्यादि का विस्तृत वर्णन | २५ | ४ | ७ | ३२६२—३३३३ |
| पर्यवों के भेदों पर प्रज्ञापना का निर्देश | २५ | ५ | ७ | ३३३६— |
| प्रतिसेवनादि वर्णन | २५ | ७ | ७ | ३४४८—३४९२ |
| प्रायश्चित्त के दस भेद | २५ | ७ | ७ | ३४९८—३५०० |


## (ब)


| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| बंध-ईर्यापथिक व सांपरायिक | ८ | ८ | ३ | १४३५— ५१ |
| बंध-प्रयोगादि का विस्तृत वर्णन (बंध छत्तीसी) | ८ | ९ | ३ | १४६९—१५३७ |
| बलिंद्र की सुधर्मा सभा व बलिचंचा राजधानी | १६ | ९ | ५ | २५८६— ८८ |
| बंध-द्रव्य व भाव उनके भेद-प्रभेद | १८ | ३ | ६ | २६८५— ८८ |


Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

| विषय | शतक | उद्देशक | भाग | पृष्ठ |
|---|---|---|---|---|
| बादर अग्निकाय के जीव जघन्य उत्कृष्ट आयु वाले समान हैं। कोई सूक्ष्म के समान मानते हैं | १८ | ४ | ६ | २६९५— ९९ |
| बेइंद्रियादि ४–५ जीव मिल कर साधारण शरीर नहीं बाँधते हैं तदाश्रित लेश्यादि बोल | २० | १ | ६ | २८२८— ३० |
| बंध-प्रयोगादि तीन व उनका विस्तृत वर्णन | २० | ७ | ६ | २८९६—२९०० |
| **(भ)** | | | | |
| भाषा वर्णन पर प्रज्ञापना का निर्देश | २ | ६ | १ | ४९९— ५०० |
| भिक्षु-प्रतिमा पर दशाश्रुतस्कंध सूत्र का निर्देश | १० | २ | ४ | १७९७— ९९ |
| भाषा (व्यवहार भाषा) के १२ भेद | १० | ३ | ४ | १८०६— ९ |
| भव्यद्रव्यादि ५ देवों का वर्णन | १२ | ९ | ४ | २०८६—२१०५ |
| भावदेव भवनपति आदि की अल्पाबहुत्व पर जीवाभिगम का निर्देश | १२ | ९ | ४ | २१०२—२१०५ |
| भक्त-प्रत्याख्यानी अनगार का आहार | १४ | ७ | ५ | २३३६— ३८ |
| भाव ६ प्रकार के (श. २५ उ. ५ भाग ७ में भी) | | | | |
| भव्य-द्रव्य नरकादि चौबीस दंडकों का वर्णन, स्थिति | १८ | ९ | ६ | २७४५— ५० |
| **(म)** | | | | |
| मोहनीय कर्म के उदय से उपस्थान व अपक्रमणादि | १ | ४ | १ | २०७— १० |
| मृतादि अनगार का वर्णन | २ | १ | १ | ३८५— ९० |
| महा तपोतीर-प्रभव नामक गरम पानी का झरना | २ | ५ | १ | ४९५— ९८ |
| महाशुक्र के दो देवों का शिष्यों की सिद्धि विषयक प्रश्न | ५ | ४ | २ | ८०९— ८१४ |
| महावेदना व महानिर्जरादि पर वस्त्र का दृष्टान्त प्रशस्त निर्जरा ही श्रेष्ठ है | ६ | १ | २ | ९३२— ३४ |
| मारणांतिक समुद्घात एक या दो बार कर के उत्पन्न होने व आहार लेने का वर्णन | ६ | ६ | २ | १०२५— ३० |
| महाशिलाकंटक संग्राम का वर्णन | ७ | ९ | ३ | ११९०— ९९ |
| मरण-आवीचि आदि के ५ भेद-प्रभेद | १३ | ७ | ५ | २२५४— ६२ |


Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

| विषय | शतक | उद्देशक | भाग | पृष्ठ |
|---|---|---|---|---|
| महावीर स्वामी द्वारा गौतम स्वामी को आश्वासन, चिरकालीन संबंध | १४ | ७ | ५ | २३२६— २९ |
| मार्कंदी पुत्र व उनके प्रश्न | १८ | ३ | ६ | २६७४— ९१ |
| मद्रुक श्रावक का वर्णन | १८ | ७ | ६ | २७२०— २८ |
| महास्रवादि के सौलह भंगों की दण्डकापेक्षा पृच्छा | १९ | ४ | ६ | २७९४–२८०१ |
| महाकर्मादि के चौबीस दण्डक पर आयुष्य आश्रित प्रश्न | १९ | ५ | ६ | २८०१— ५ |
| महाव्रत ४ तथा ५ की प्ररूपणा वर्तमान अवसर्पिणी की चौबीसी | २० | ८ | ६ | २९०३— ५ |
| **(य)** | | | | |
| योनि वर्णन पर प्रज्ञापना का निर्देश | १० | २ | ४ | १७९३— ९७ |
| **(र)** | | | | |
| रोह अनगार के लोकालोक संबंधी प्रश्न | १ | ६ | १ | २६९— ७६ |
| राजगृह नगर किसे कहते हैं ? | ५ | ९ | १ | ९१४— १५ |
| रथमूसल संग्राम का वर्णन | ७ | ९ | ३ | ११९९–१२१३ |
| रूपी अरूपी वस्तु का वर्णन | १२ | ५ | ४ | २०४६— ५९ |
| राहु (पर्व व नित्य) के विमानादि का वर्णन | १२ | ६ | ४ | २०६०— ६६ |
| **(ल)** | | | | |
| लेश्याधिकार पर प्रज्ञापना का निर्देश (श. २५ उ. १ भाग ७ पृ. ३१९६ में भी है) | १ | २ | १ | १४२— ४५ |
| लोकांतिक स्पर्शना | १ | ६ | १ | २६१— ६४ |
| लोक स्थिति के आठ प्रकारों का वर्णन | १ | ६ | १ | २७६— ८० |
| लवण समुद्र के चतुर्दशी आदि को बढ़ने-घटने | ३ | ३ | २ | ६६८— ६९ |
| लोकपालों (शक्र के) का वर्णन | ४ | १–८ | २ | ७३९— ४३ |
| लोकपालों (ईशानेंद्र के) के चार विमान व चार राजधानियां | ४ | १–८ | २ | ७३९— ४३ |
| लेश्याओं के परस्पर परिणमन पर प्रज्ञापना का निर्देश (श. १९ उ. १ भाग ६ पृ. २७६९ पर भी) | ४ | १० | २ | ७४६— ४९ |


Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

| विषय | शतक | उद्देशक | भाग | पृष्ठ |
|---|---|---|---|---|
| लवण समुद्र के विष्कंभादि पर जीवाभिगम का निर्देश | ५ | २ | २ | ७८५—८६ |
| लोकांतिक देवों का वर्णन | ६ | ५ | २ | १०१८—२३ |
| लवणादि समुद्र व द्वीपों का वर्णन, संख्या आदि | ६ | ८ | २ | १०५६—५९ |
| लोक संस्थान | ७ | १ | ३ | १०८१—८२ |
| लेश्या वाले नैरयिकादि के कर्मों की न्यूनाधिकता | ७ | ३ | ३ | ११३४—३७ |
| लोकालोकस्वरूप के अन्तर्गत निगोद छत्तीसी है | ११ | १० | ४ | (टीका में) |
| लोक, अधोलोक आदि का मध्य भाग | १३ | ४ | ५ | २१८२—८४ |
| लोक का सम, संक्षिप्त व वक्रभाव कहाँ है ? | १३ | ४ | ५ | २२२३—२४ |
| लोक संस्थान व अल्पाबहुत्व | १३ | ४ | ५ | २२२४—२५ |
| लेश्या (भाव) ही देवों में पलटती है, द्रव्य नहीं | १४ | १ | ५ | २२७६ |
| लवसप्तम सर्वार्थसिद्ध के देव कहे जाते हैं | १४ | ७ | ५ | २३३८—४० |
| लोक महत्ता तथा चरमान्तों में जीवाजीवादि | १६ | ८ | ५ | २५७३—८२ |
| लेश्या वर्णन पर प्रज्ञापना का निर्देश | १९ | २ | ६ | २७७०—७१ |

(व)

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| व्यन्तर देवों के आवासों का वर्णन | १ | १ | १ | ८१—८३ |
| विग्रह गति-अविग्रह गति का वर्णन | १ | ७ | १ | २९२—९६ |
| वीर्य (लब्धि व करण) सहित या रहित जीवादि वर्णन | १ | ८ | १ | ३२६—२९ |
| वायुकाय का उच्छ्वास । कायस्थान | २ | १ | १ | ३८२—८५ |
| वायु-विकुर्वणा तथा बादल के रूप | ३ | ४ | २ | ६७३—७९ |
| वायु के दिशा, विदिशा द्वीप समुद्रादि में चलने के प्रकार | ५ | २ | २ | ७७४—८१ |
| वृद्धि हानि अवस्थित तथा सोपचयादि का जीवादि आश्रित वर्णन | ५ | ८ | २ | ९०२—१३ |
| वेदना व निर्जरा की चौभंगी उदाहरण सहित | ६ | १ | २ | ९३२—३८ |
| वनस्पतिकाय किस ऋतु में कम व अधिक आहार लेती है तथा मूल से बीज पर्यन्त भेद | ७ | ३ | ३ | ११३०—३४ |
| वेदना व निर्जरा का वर्णन | ७ | ३ | ३ | ११३७—४३ |


Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

| विषय | शतक | उद्देशक | भाग | पृष्ठ |
|---|---|---|---|---|
| वरुण नागनत्तुआ व उसके बालमित्र का वर्णन | ७ | ९ | ३ | १२०३— १३ |
| वनस्पति, संख्यात, असंख्यात व अनंतजीवी, भेद-प्रभेद | ८ | ३ | ३ | १३६७— ६९ |
| व्यवहार के ५ भेद | ८ | ८ | ३ | १४३२— ३४ |
| वृक्ष मूलादि को हिलाने से वायुकाय को लगने वाली क्रियाएँ | ९ | ३४ | ४ | १७७८— ८१ |
| वीचि (कषाय) अवीचिमान साधु को रूप निरीक्षण करते लगती हुई क्रिया | १० | २ | ४ | १७९१— ९३ |
| वेदना वर्णन पर प्रज्ञापना का निर्देश (श. १९ उ. ५ भाग ६ में भी) | १० | २ | ४ | १७९३— ९७ |
| विग्रहगति एकेंद्रिय में ४ तथा शेष में १, २, ३ समयों की | १४ | १ | ५ | २२७८— ८० |
| वीचि-अवीचि द्रव्यों का आहार चौबीस दण्डक पर | १४ | ६ | ५ | २३२०— २१ |
| वर्षा जानने के लिए हाथ फैलाने वाले को क्रियाएँ | १६ | ८ | ५ | २५८३— ८४ |
| व्यन्तर देव के समाहारादि | १९ | १० | ६ | २८२६ |
| वनस्पति वर्ग वर्णन २१, २२ २३ तीन शतकों में | २१ | ८० | ६ | २९४२— ७४ |
| व्युत्सर्ग के भेद-प्रभेद | २५ | ७ | ७ | ३५३७— ४० |
| **(श)** | | | | |
| श्रमण-निर्ग्रंथों का लाघव। क्रोधादि का अभाव प्रशस्त है तथा कांक्षा प्रदोष क्षीण होने से मोक्ष जाते हैं | १ | ९ | १ | ३३९— ४१ |
| शक्रेंद्र के विमानों से ईशानेंद्र के विमान कुछ ऊँचे हैं | ३ | १ | २ | ५९५— ९६ |
| शक्र-ईशानेन्द्र का मिलन, आलाप-संलाप तथा विवाद निर्णय | ३ | १ | २ | ५९६— ६०१ |
| श्रमणोपासक को सामायिक में भी सांपरायिकी क्रिया | ७ | १ | २ | १०८२— ८३ |
| श्रावक वनस्पति की हिंसा का त्यागी हो, तो पृथ्वीकाय खोदते हुई वनस्पति की हिंसा से व्रत भंग नहीं | ७ | १ | ३ | १०८३— ८५ |
| श्रावक श्रमण-माहनों को दान देता हुआ समाधि प्राप्त करता है यावत् सिद्ध होता है | ७ | १ | ३ | १०८५— ८७ |


Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

| विषय | शतक | उद्देशक | भाग | पृष्ठ |
|---|---|---|---|---|
| शस्त्रातीत, शस्त्र परिणत, एषित वेषित आदि आहार वर्णन (आहार के ४२ दोष) | ७ | १ | ३ | ११०१— ९ |
| श्रावक व्रत के ४९ व ७३५ भांगों का वर्णन | ८ | ५ | ३ | १३७८— ८६ |
| श्रुत शील की चौभंगी | ८ | १० | ३ | १५३७— ४१ |
| शरीर वर्णन पर प्रज्ञापना का निर्देश | १० | १ | ४ | १७९० |
| शक्रेंद्र की सुधर्मा सभा आदि का वर्णन | १० | ६ | ४ | १८३९— ४१ |
| शिव राजर्षि चरित्र | ११ | ९ | ४ | १८७४— ९६ |
| शंख-पुष्कली वर्णन | १२ | १ | ४ | १९७१— ८५ |
| शीघ्र गति का उदाहरण सहित वर्णन | १४ | १ | ५ | २२७८— ८० |
| शाल वृक्षादि की एकावतारता | १४ | ८ | ५ | २३४५— ४७ |
| शक्र शक्ति मस्तक छेदन संबंधी वर्णन | १४ | ८ | ५ | २३४९— ५० |
| श्रमण-निर्ग्रंथों की दैविक सुखों से तुलना | १४ | ९ | ५ | २३५९— ६२ |
| शक्रेंद्र की सावद्य निरवद्य भाषा व भव्यत्व आदि | १६ | २ | ५ | २५२१— २४ |
| श्रमण-निर्ग्रंथों को उपवासादि से हुए कर्म क्षय का वर्णन | १६ | ४ | ५ | २५३१— ३७ |
| शक्रेंद्र द्वारा संभ्रान्त होकर पूछे आठ प्रश्न व शीघ्र गमन | १६ | ५ | ५ | २५३७— ४३ |
| श्रेणी वर्णन | २५ | ३ | ७ | ३२४४— ५३ |
| श्रेणियाँ ७ तथा जीव पुद्गल अनुश्रेणी से गति करते हैं | २५ | ३ | ७ | ३२५३— ५६ |
| शरीर वर्णन पर प्रज्ञापना का निर्देश | २५ | ४ | ७ | ३२८० |
| **(स)** | | | | |
| स्वकृत दुःख-सुख व आयु वेदन | १ | २ | १ | ११०— १४ |
| सम शरीर आहार उच्छ्वास आदि | १ | २ | १ | ११४— ३६ |
| संसार संस्थान (संचिट्ठन) काल | १ | २ | १ | १४५— ५१ |
| सूर्य उदय-अस्त होते समय की समान दूरी | १ | ६ | १ | २५८— ६१ |
| समान वयादि के दो पुरुषों की हार-जीत का कारण | १ | ८ | १ | ३२५— २६ |
| स्कंध वर्णन और प्रश्नोत्तर | २ | १ | १ | ३९०— ४५० |
| समुद्घात के भेदादि पर प्रज्ञापना का निर्देश | २ | २ | १ | ४५०— ५३ |
| समय-क्षेत्र वर्णन पर जीवाभिगम का निर्देश | २ | ९ | १ | ५११— १२ |


Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

| विषय | शतक | उद्देशक | भाग | पृष्ठ |
|---|---|---|---|---|
| सनत्कुमारेंद्र का स्वरूप | ३ | १ | २ | ६०१— ५ |
| संसारी जीवों के भेदों, सम्यक्त्व-मिथ्यात्व क्रिया | ७ | ४ | ३ | ११४५— ४७ |
| साता-असाता वेदनीय कैसे बाँधते हैं | ७ | ६ | ३ | ११५६— ५८ |
| संज्ञा १० का चौबीस दण्डक की अपेक्षा वर्णन | ७ | ८ | ३ | ११८३— ८६ |
| सामायिक में बैठे श्रावक के चुराए भांड की गवेषणा | ८ | ५ | ३ | १३७४— ७८ |
| साधु को अन्य स्थविरों के लिए दिए आहारादि और उनके न मिलने पर क्या करना | ८ | ६ | ३ | १३९५— ९९ |
| सूर्य पृथ्वी से समान ऊँचा है फिर भी दूर निकट दिखाई क्यों देता है ? | ८ | ८ | ३ | १४६०— ६९ |
| सिद्धि किस संहनन में होती है, सिद्धगंडिका | ११ | ९ | ४ | १८९४— ९६ |
| सुदर्शन सेठ.....पूर्व-भव का महाबल चरित्र | ११ | ११ | ४ | १९१५— ६० |
| साधु की नाना-नाना प्रकार की विकुर्वणा, शक्ति, गति, आराधना आदि | १३ | ९ | ५ | २२६३— ७२ |
| सूर्योदय को देख कर गौतम स्वामी द्वारा किए गए प्रश्न | १४ | ९ | ५ | २३५८— ५९ |
| स्वप्न अधिकार | १६ | ६ | ५ | २५५२— ७० |
| संवेग-निर्वेद आदि का अंतिम फल मोक्ष | १७ | ३ | ५ | २६२१— २३ |
| सोमिल ब्राह्मण के यात्रा आदि के प्रश्न | १८ | १० | ६ | २७५४— ६७ |
| सोपक्रम-निरूपक्रम आयुष्य वर्णन | २० | १० | ६ | २९१८— २० |
| स्व-पर निरूपक्रम से तथा आत्म-ऋद्धि कर्म प्रयोग से उत्पत्ति, मरण | २० | १० | ६ | २९२०— २२ |
| सम-विषम योगी वर्णन | २५ | १ | ७ | ३१९८—३२०६ |
| संस्थान ६ व ५, रत्नप्रभादि संस्थान, प्रदेश अवगाह तथा संस्थान के प्रदेशादि कृतयुग्मादि | २५ | ३ | ७ | ३२१७— ४४ |
| सेजन निरेजना का सिद्ध संसारी जीव आश्रित वर्णन | २५ | ४ | ७ | ३२८०— ८३ |
| संयत वर्णन के ३६ द्वार | २५ | ७ | ७ | ३४४१— ९१ |
| समाचारी के १० भेद | २५ | ७ | ७ | ३४९६— ९८ |
| समवसरण शतक | ३० | १–११ | ७ | ३६०८— ४८ |


Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

| विषय | शतक | उद्देशक | भाग | पृष्ठ |
|---|---|---|---|---|
| (ह) | | | | |
| हरिणेगमेषी देव द्वारा गर्भ-संहरण वर्णन | ५ | ४ | २ | ८०२— ५ |
| हेतु-अहेतु पंचक | ५ | ७ | २ | ८९०— ९२ |
| (ज्ञ) | | | | |
| ज्ञान-अज्ञान व ज्ञानादि लब्धि वर्णन | ८ | २ | ३ | १२९८—१३४४ |


## ।। भगवती सूत्र की हुंडी सम्पूर्ण ।।

प्रथम के ३२ शतकों में व ४१ वे शतक में अवान्तर शतक नहीं है। शतक ३३ से ३९ तक के ७ शतकों में १२-१२ अवान्तर शतक हैं। शतक ४० में २१ अवान्तर शतक हैं। इस प्रकार भगवती सूत्र के १३८ शतक होते हैं। (३३+१२×७=८४+२१=१३८) संग्रहणी गाथा के यंत्रानुसार उद्देशक १९२३ हैं, परंतु अधिकतर १९२५ माने जाते हैं। कारण यह है कि १२ वें शतक के १२ उद्देशक गिने जाते हैं। परन्तु प्रस्तुत वाचना (आगमोदय समिति) में पृथ्वी, अप्, वायु का सम्मिलित छट्ठा उद्देशक होने से १० हैं, इस प्रकार १९२३ उद्देशक होते हैं।

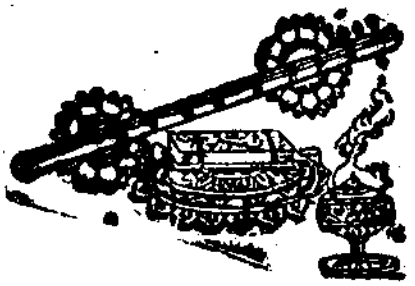

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

# संघ के अन्य प्रकाशन

| क्रं. | नाम | मूल्य |
|---|---|---|
| १. | अंगपविट्ठसुत्ताणि भाग १ | १४-०० |
| २. | अंगपविट्ठसुत्ताणि भाग २ | ४०-०० |
| ३. | अंगपविट्ठसुत्ताणि भाग ३ | ३०-०० |
| ४. | अंगपविट्ठसुत्ताणि संयुक्त | ८०-०० |
| ५. | अनंगपविट्ठसुत्ताणि भाग १ | ३५-०० |
| ६. | अनंगपविट्ठसुत्ताणि भाग २ | ४०-०० |
| ७. | अनंगपविट्ठसुत्ताणि संयुक्त | ८०-०० |
| ८. | अनुत्तरोववाइय सूत्र | ३-५० |
| ९. | आयारो | ८-०० |
| १०. | सूयगडो | ६-०० |
| ११. | उत्तरज्झयणाणि(गुटका) | १०-०० |
| १२. | दसवेयालिय सुत्तं (गुटका) | ५-०० |
| १३. | णंदी सुत्तं (गुटका) | अप्राप्य |
| १४. | चउछेयसुत्ताइं | १५-०० |
| १५. | आचारांग सूत्र भाग १ | २५-०० |
| १६. | अंतगडदसा सूत्र | १०-०० |
| १७-१९. | उत्तराध्ययनसूत्र भाग १,२,३ | ४५-०० |
| २०. | आवश्यक सूत्र (सार्थ) | १०-०० |
| २१. | दशवैकालिक सूत्र | १०-०० |
| २२. | जैन सिद्धांत थोक संग्रह भाग १ | १०-०० |
| २३. | जैन सिद्धांत थोक संग्रह भाग २ | १०-०० |
| २४. | जैन सिद्धांत थोक संग्रह भाग ३ | १०-०० |
| २५. | जैन सिद्धांत थोक संग्रह भाग ४ | १०-०० |
| २६. | जैन सिद्धांत थोक संग्रह संयुक्त | १५-०० |
| २७. | पन्नवणा सूत्र के थोकड़े भाग १ | ८-०० |
| २८. | पन्नवणा सूत्र के थोकड़े भाग २ | १०-०० |
| २९. | पन्नवणा सूत्र के थोकड़े भाग ३ | १०-०० |
| ३०-३२. | तीर्थंकर चरित्र भाग १,२,३ | १४०-०० |
| ३३. | मोक्ष मार्ग ग्रन्थ भाग १ | ३५-०० |
| ३४. | मोक्ष मार्ग ग्रन्थ भाग २ | ३०-०० |
| ३५-३७. | समर्थ समाधान भाग १,२,३ | ५७-०० |
| ३८. | सम्यक्त्व विमर्श | १५-०० |
| ३९. | आत्म साधना संग्रह | २०-०० |
| ४०. | आत्म शुद्धि का मूल तत्वत्रयी | २०-०० |
| ४१. | नवतत्वों का स्वरूप | १३-०० |
| ४२. | अगार-धर्म | १०-०० |
| ४३. | Saarth Saamaayik Sootra | १०-०० |
| ४४. | तत्त्व-पृच्छा | १०-०० |
| ४५. | तेतली-पुत्र | ४५-०० |
| ४६. | शिविर व्याख्यान | १२-०० |
| ४७. | जैन स्वाध्याय माला | १८-०० |
| ४८. | सुधर्म स्तवन संग्रह भाग १ | २२-०० |

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

| क्रं. | नाम | मूल्य |
|---|---|---|
| ४९. | सुधर्म स्तवन संग्रह भाग २ | १५-०० |
| ५०. | सुधर्म चरित्र संग्रह | १०-०० |
| ५१. | लोंकाशाह मत समर्थन | १०-०० |
| ५२. | जिनागम विरुद्ध मूर्त्ति पूजा | १५-०० |
| ५३. | बड़ी साधु वंदना | १०-०० |
| ५४. | तीर्थंकर पद प्राप्ति के उपाय | ५-०० |
| ५५. | स्वाध्याय सुधा | ७-०० |
| ५६. | आनुपूर्वी | १-०० |
| ५७. | सुखविपाक सूत्र | २-०० |
| ५८. | भक्तामर स्तोत्र | २-०० |
| ५९. | जैन स्तुति | ६-०० |
| ६०. | सिद्ध स्तुति | ३-०० |
| ६१. | संसार तरणिका | ७-०० |
| ६२. | आलोचना पंचक | २-०० |
| ६३. | विनयचन्द चौबीसी | १-०० |
| ६४. | भवनाशिनी भावना | २-०० |
| ६५. | स्तवन तरंगिणी | ५-०० |
| ६६. | सामायिक सूत्र | १-०० |
| ६७. | सार्थ सामायिक सूत्र | ३-०० |
| ६८. | प्रतिक्रमण सूत्र | ३-०० |
| ६९. | जैन सिद्धांत परिचय | ३-०० |
| ७०. | जैन सिद्धांत प्रवेशिका | ४-०० |
| ७१. | जैन सिद्धांत प्रथमा | ४-०० |
| ७२. | जैन सिद्धांत कोविद | ३-०० |
| ७३. | जैन सिद्धांत प्रवीण | ४-०० |
| ७४. | तीर्थंकरों का लेखा | १-०० |
| ७५. | जीव-धड़ा | २-०० |
| ७६. | १०२ बोल का बासठिया | ०-५० |
| ७७. | लघुदण्डक | ३-०० |
| ७८. | महादण्डक | १-०० |
| ७९. | तेतीस बोल | २-०० |
| ८०. | गुणस्थान स्वरूप | ३-०० |
| ८१. | गति-आगति | १-०० |
| ८२. | कर्म-प्रकृति | १-०० |
| ८३. | समिति-गुप्ति | २-०० |
| ८४. | समकित के ६७ बोल | २-०० |
| ८५. | पच्चीस बोल | ३-०० |
| ८६. | नव-तत्त्व | ६-०० |
| ८७. | सामायिक संस्कार बोध | ४-०० |
| ८८. | मुखवस्त्रिका सिद्धि | ३-०० |
| ८९. | विद्युत् सचित्त तेऊकाय है | ३-०० |
| ९०. | धर्म का प्राण यतना | २-०० |
| ९१. | सामण्ण सड्ढिधम्मो | अप्राप्य |
| ९२. | मंगल प्रभातिका | १.२५ |
| ९३. | कुगुरु गुर्वाभास स्वरूप | ४-०० |

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org